बाल गीत साहित्य

(इतिहास एवं समीक्षा)

निरंकार देव सेवक



उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ

BVP → 1925
8/2/18

47/66

बालगीत साहित्य

(इतिहास एवं समीक्षा)

हिन्दी समिति ग्रन्थमाला : 238

बालगीत साहित्य

(इतिहास एवं समीक्षा)

लेखक

निरंकारदेव सेवक

सम्पादक

प्रो० उषा यादव

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

(हिन्दी समिति प्रभाग)

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन

6-महात्मा गांधी मार्ग,

डॉ० सुधाकर अदीब
निदेशक
उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान,
लखनऊ।

प्रथम संस्करण : 1983
द्वितीय संस्करण (संशोधित/परिवर्द्धित) : 2013

प्रतियाँ : 500

मूल्य : ₹ 245=00

ISBN : 978-93-82175-17-9

मुद्रक
प्रकाश पैकेजर्स
257, गोलागंज, लखनऊ।

प्रकाशकीय

कहा जाता है कि बाल गीत लिखे नहीं जाते, अपने आप लिख जाते हैं। वात्सल्य और आत्मीयता के किसी क्षण में शब्द स्वतः ही होठों पर आ जाते हैं और रचनाकार के साथ-साथ संवेदनशील अभिभावक व पाठक सभी इसकी मोहकता में खो जाते हैं। हिन्दी बाल गीतों की गौरवशाली परम्परा है लोरियों से लेकर शिशु गीत और फिर किशोर वय के लिए बालगीत सभी की लयात्मकता निश्चय ही बाल मन को गहरे प्रभावित करती है यह प्रसन्नता का विषय है कि हिन्दी में बाल गीत बड़ी संख्या में लिखे गये। बाल गीतों की परम्परा के ध्वज वाहकों के दृष्टि अत्यन्त निश्च्छल, आत्मीय और व्यापक थी। बाल साहित्यकार अपनी रचनाओं के माध्यम से बच्चों के भावी जीवन का मार्ग तो प्रशस्त करते ही हैं साथ ही ऐसा प्रतीत होता है मानों वे उस पल को स्वयं भी जी रहे हों।

सुप्रसिद्ध बाल साहित्यकार निरंकार देव सेवक ने लम्बे कालक्रम में बाल गीतों को जिस तरह जिया है, उसे शब्द दिये हैं, वह स्तुत्य है। वास्तव में आधुनिक बालगीत परम्परा उनके योगदान को याद किये बिना पूरी ही नहीं होती। डॉ0 निंरकार देव सेवक ने महत्त्वपूर्ण सम्पूर्ण बालगीत साहित्य को दृष्टिगत रखते हुए 'बाल गीत साहित्य (इतिहास एवं समीक्षा) जैसी पुस्तक के माध्यम से गागर में सागर भरने का प्रयास किया है। पुस्तक के द्वितीय संस्करण को और अधिक उपयोगी बनाने के लिए संस्थान द्वारा इसके संशोधन/परिवर्द्धन का निर्णय लिया गया। वरिष्ठ बाल साहित्यकार डॉ0 उषा यादव ने इस कार्य में हमें जो महत्त्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया उसके प्रति हम कृतज्ञ हैं। चौदह अध्यायों में विभक्त पुस्तक बालगीत साहित्य (इतिहास एवं समीक्षा) के महत्त्वपूर्ण अध्याय हैं- बाल स्वभाव, बड़ों की कविता और बालगीत, अलिखित बालगीत, शिशुगीत साहित्य, चाँद तारों के बालगीत, लोरियाँ, प्रभाती और पालने के गीत, हिन्दी बालगीत साहित्य के इतिहास की भूमिका, हिन्दी बालगीत साहित्य का इतिहास, हिन्दी के राष्ट्रीय बालगीत, बालगीतों की शिक्षा एवं रचना शिक्षा, लोकगीतों में बालगीत, हिन्दी और अंग्रेजी बालगीत, भारतीय भाषाओं में बालगीत साहित्य

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के समिति प्रभाग की प्रकाशन योजना के अन्तर्गत बाल गीत साहित्य (इतिहास एवं समीक्षा) पुस्तक का द्वितीय संस्करण (संशोधित/परिवद्धित) प्रकाशित करते हुए हम अत्यन्त प्रमुदित हैं। आशा है यह यह द्वितीय संस्करण भी पाठकों के बीच पूर्व की भाँति सराहा जायेगा।

डॉ0 सुधाकर अदीब
निदेशक

निवेदन

मानव मन में जब पहली-पहली बार संगीत की कोपल फूटी होगीं तो वह सम्भवतः लोरी या किसी शिशुगीत के रूप में रही होगी। प्रायः बाल गीतों में जितनी स्वाभाविकता दिखती है, उसे शब्दों में वर्णित नहीं किया जा सकता। इनका सीधा असर उस बाल मन पर गहरे पड़ता है जो मनोरंजन के साथ-साथ सीखने के लिए हमेशा तत्पर रहता है। कहा जाता है कि बच्चों में सीखने की उत्सुकता सबसे अधिक होती है और यह हमारा दायित्व है कि हम बचपन की इस मूलभूत विशेषता को कौशल के साथ विकसित कर सकें उनकी उत्सुकता को पुष्पित-पल्लवित करने में सहयोग करें। यह सौभाग्य का विषय है कि हिन्दी सहित सभी भारतीय भाषाओं का बाल साहित्य हमेशा से इस कसौटी पर खरा उतरता रहा है और चाहे कहानियाँ हों। या गीत, नाटक हों या अन्य विधाओं की रचनाएँ सभी की भरी-पुरी परम्परा रही है। देश-दुनियाँ के किसी भी वरिष्ठ रचनाकार को लें, किसी न किसी दौर में उन्होंने बाल साहित्य न केवल रचा अपितु उनका लेखन उपयोगी भी रहा। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि बाल साहित्य को अपनाने में बचपन कभी पीछे नहीं रहा और मानो आँख खोलते ही इसकी उपयोगिता से परिचित हो गया हो। किलकारियों वाली लोरियों की उम्र से लेकर किशोर वय तक बाल साहित्य के कई स्तर हैं और ऐसे में एक रचनाकार को न केवल बाल रचनाओं की स्तरीयता का ध्यान रखना होता है अपितु इसके दौरान उसके सामने सम्बन्धित बाल पाठकों की आवश्यकता भी महत्त्वपूर्ण रहती है। बचपन किसी भी उम्र का हो, उसके लिए बाल साहित्य का महत्त्व निर्विवाद है। इससे उसके भावी जीवन की नींव पड़ती है और ऐसे में बाल साहित्य को पर्याप्त संरक्षण देना समय की माँग है।

हिन्दी में बाल साहित्य को स्तरीय पहचान देने में जिन महान रचनाकारों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है उनमें निरंकार देव सेवक का नाम अत्यंत आदर से लिया जाता है। उन्होंने न केवल बाल साहित्य की विभिन्न विधाओं में कई दशकों तक लोकप्रिय और उपयोगी लेखन किया अपितु बाल गीत साहित्य (इतिहास एवं समीक्षा) जैसी पुस्तक लिखकर समूचे बाल साहित्य परिदृश्य को महत्त्वपूर्ण बना दिया है। उन्होंने इस पुस्तक में जिस तरह से बाल स्वभाव से लेकर लोरियों/शिशुगीत और बालगीतों का वर्गीकरण किया है, उनके इतिहास पर प्रकाश

डाला है और विशेषकर राष्ट्रीय बालगीतों को रेखांकित किया है, उसमें उनका जागरूक समीक्षक भी सामने आता है। पुस्तक में निरंकार देव सेवक जी ने जिस तरह अंग्रेजी सहित अन्य भारतीय भाषाओं के बाल साहित्य का अवगाहन किया है, उससे उनके व्यापक दृष्टिकोण और गहरी समीक्षक दृष्टि पर प्रकाश पड़ता है। यही कारण है कि इस उपयोगी पुस्तक बाल गीत साहित्य (इतिहास एवं समीक्षा) का पहला संस्करण पाठकों के बीच अत्यन्त लोकप्रिय रहा। पुस्तक के दूसरे संस्करण के प्रकाशन पर विचार करते समय यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि पुस्तक को वर्तमान संदर्भ से जोड़ते हुए पुस्तक संशोधित-परिवर्द्धित की जाय। पुस्तक के संशोधन/परिवर्द्धन का गुरुत्तर दायित्व सुप्रसिद्ध बाल साहित्यकार डॉ० उषा यादव ने सहर्ष स्वीकार करते हुए बड़ी निष्ठा और तत्परता से इसे पूर्ण किया हम उनके प्रति हृदय से आभारी हैं। 'बालगीत साहित्य' (इतिहास एवं समीक्षा), पुस्तक का दूसरा (संशोधित/परिवर्द्धित) संस्करण आप सबके सामने है। आशा है कि जागरूक पाठकों के बीच यह द्वितीय संस्करण भी अपनी पूर्ववर्ती यशस्वी पहचान के अनुरूप स्थान बनायेगा ।

उदय प्रताप सिंह
कार्यकारी अध्यक्ष

प्रथम संस्करण की प्रस्तावना

बालगीत साहित्य लिखा नहीं जाता अपने आप लिख जाता है। इसका अर्थ यह नहीं कि उसके लिखने वाले में कोई दिव्य या ईश्वरीय प्रतिभा होती है। बच्चे अपने लिए लिखे गये बालगीतों को वर्षों तक गाते दुहराते ही नहीं, मांजते और संवारते रहते हैं तब वह उनके लिए उपयुक्त बन पाते हैं। अंग्रेजी के जिन लोकप्रिय गीतों को आज हम जिस रूप में देखते हैं वह अब से सौ दो सौ वर्ष पहले जब लिखे गये थे बिल्कुल उसी रूप में नहीं थे। लोकप्रियता ही सफल बालगीतों की सच्ची कसौटी है और बार-बार गाये दुहराये जाने से उनके रूप में कुछ न कुछ परिवर्तन हो ही जाता है। बच्चे खेल-खेल में भी अपने लिए कुछ बालगीत स्वयं गढ़ लिया करते हैं। कुछ बालगीत उन्हें लोकगीतों में से भी मिल जाते हैं। इस प्रकार चेष्टा करके लिखे हुए बालगीतों में से कुछ ही बच्चों द्वारा अपनाये जाकर वास्तव में बालगीत साहित्य बन पाते हैं।

बालगीतों के अध्ययन में मेरी रुचि बनारस विश्वविद्यालय के टीचर्स ट्रेनिंग कालेज में पढ़ते समय उत्पन्न हुई थी। मैंने अपने विशेष अध्ययन का विषय 'बालगीतों की शिक्षा' लिया था। मैं अपने कालेज के अधिक अध्ययनशील छात्रों में नहीं था। छमाही परीक्षा में बैठा तो मैंने एक अक्षर भी नहीं पढ़ा था। परीक्षा कक्ष में बैठा कापी बन्द किए प्रश्न पत्र पर एक कविता लिख रहा था 'तुम बनो किताबों के कीड़े हम खेल रहे मैदानो में।' प्रिंसिपल मलकानी मुझे देखते हुए पास से निकले और बोले - 'तुम कुछ नहीं कर रहे हो। मैं तुम्हारी सब कविता भुला दूँगा।' प्रो. सुब्रह्मण्यम जब कापियां जांच कर लाये तो कक्षा में सबको दिखाते हुए बोले - 'यह एक छात्र है जिसने एक शब्द भी कापी पर नहीं लिखा।' सारे छात्र जोर से खिलखिला कर हँस पड़े। तभी उन्होंने गम्भीर होकर कहा- "लेकिन मैं ऐसे छात्र को पसन्द करता हूँ। वह कम से कम ईमानदार है। उसने कुछ नहीं पढ़ा इसलिए कुछ नहीं लिखा। पर तुममें से बहुतों ने पढ़ा कुछ नहीं और बहुत कुछ लिख कर मेरा समय व्यर्थ बरबाद किया।" उस परीक्षा के बाद मैंने अध्ययन प्रारम्भ किया और दिन रात पढ़ा। सबको बहुत आश्चर्य हुआ जब मैंने वार्षिक परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

ट्रेनिंग कालेज में पंडित सीताराम चतुर्वेदी और मनोविज्ञान के सुप्रसिद्ध लेखक पं. लालजीराम शुक्ल मुझसे बड़ा स्नेह करते थे। शुक्ल जी तो अक्सर मेरे कमरे में आते या मुझे अपने घर ले जाकर घंटों बातें किया करते थे। मेरी बालगीतों की रचना और उनके अध्ययन में रुचि इन्हीं दो गुरुजनों के आशीर्वाद का फल था जिसे लेकर मैं बनारस से लौटा था।

उसके दो वर्ष बाद ही मैंने अध्यापन कार्य से अवकाश ग्रहण कर लिया और वकालत शुरू कर दी। पर बालगीतों में रुचि के जो कीड़े मेरे मस्तिष्क में उत्पन्न हो चुके थे वह बढ़ते ही रहे। स्कूलों, कालेजों में कवि सम्मेलनों में मैं बुलाया जाता था और वहाँ यह आग्रह भी चलता था कि मैं अपनी बच्चों के लिए लिखी कविताएँ सुनाऊँ। पर मुझे यह देखकर बड़ा दुख होता था कि वहाँ जो छोटे-छोटे बच्चे सुनाने के लिए स्वयं कविताएँ रचकर लाते थे वह दर्शन और राजनीति के बड़े गम्भीर विषयों पर हुआ करती थीं। मेरी यह समझ में नहीं आता था कि बच्चे अपनी सहज सरल भावनाओं के अनुरूप बालगीत उन्मुक्त भाव से क्यों नहीं लिख पाते। मैंने एक बार उनसे कहा भी था- "ऐसा लगता है तुम्हारे हाथ पैर तो छोटे रह गये, पर सिर हाथी के सिर के समान बड़ा हो गया।"

वकालत के व्यस्त व्यवसाय में बच्चों का साथ और बाल साहित्य से सम्बन्धित विषयों का अध्ययन छूट सा गया। पर मस्तिष्क के कीड़ों ने पीछा न छोड़ा। और जब जो समय मिला बच्चों के लिए कुछ लिखता ही रहता था। इन्दौर से निकलने वाली 'वीणा' मासिक में एक लेख भी बाल साहित्य पर लिख दिया था। तभी एक दिन मेरे एक पुराने मित्र पं. महेश्वरदयाल शर्मा मुझसे मिलने आये। वह उ.प्र. के शिक्षा विभाग के एक उच्च पदाधिकारी थे और उन दिनों विभाग की ओर से निकलने वाली एक त्रैमासिक पत्रिका 'शिक्षा' का संपादन भी कर रहे थे। वह अधिकांश अंग्रेजी में एक मोटी किताब जैसी निकलती थी। उन्होंने मुझसे कहा- 'तुम बाल साहित्य तो लिखते हो बाल साहित्य पर भी कुछ क्यों नहीं लिखते?' उनके कहने से मैंने एक दो लेख लिखे। वह पसन्द किए गये। फिर तो कई लेख मैंने लिखे। उसके बाद ही यह विचार मन में आया कि इस विषय पर एक पुस्तक ही क्यों न लिख दी जाये।

बनारस का छूटा हुआ अध्ययन फिर पीछे लग गया। मैंने हिन्दी साहित्य के कई इतिहास पढ़े पर बाल साहित्य पर किसी में कुछ भी लिखा न मिला। लोक गीतों के अनेक संकलन देखे पर किसी में अलग से कोई बालगीत नहीं मिले। बालगीतों का इतिहास लिखने के लिए मुझे तथ्यों को खोजकर अपना रास्ता स्वयं बनाना पड़ा। ब्रज, अवधी और भोजपुरी के लोकगीतों में पाये जाने वाले बालगीतों को मित्रों की सहायता से उपलब्ध किया और उन पर अपनी समझ से लेखनी चला दी। पटना के श्री नारायण भक्त और अलीगढ़ के श्री सत्य प्रकाश गोस्वामी इस काम में मेरे बड़े सहायक हुए थे।

मैं उस पुस्तक में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन पर भी अलग-अलग लेख देना चाहता था। पर बंगला को छोड़कर- जिसे मैं प्रणव कुमार बंद्योपाध्याय की सहायता से थोड़ा बहुत सीख चुका था - गुजराती, मराठी, तमिल, तेलुगु आदि सभी भाषाएँ मेरे लिए काला अक्षर भैंस बराबर थीं। मैंने उन भाषाओं की अंग्रेजी में उपलब्ध साहित्य के इतिहास की पुस्तकें पढ़कर देखीं पर किसी में बालसाहित्य के विषय में कुछ भी लिखा न मिला। कोव्वुर (आंध्र प्रदेश) के ओरियण्टल कालेज के प्रिंसिपल श्री के. वी. एन. आप्पा राव, जिनके कालेज में जब मैं वहाँ एक बार धर्म विज्ञान समन्वय सम्मेलन में गया था तो कविता पाठ कर आया था, उन्होंने पत्राचार द्वारा ही तेलुगु के बालगीतों के बारे में मुझे कुछ जानकारी दी और बड़ी खोज के बाद सूरत के श्री बल्लभ दास अक्कड़ ने अपने गुजराती साहित्य सम्मेलन के बाल साहित्य परिषद् के अध्यक्षीय भाषण की हस्तलिखित प्रति मेरे पास भेज दी। मैंने एन.एम. देसाई से उसे पढ़वाकर सुना और सामग्री इधर-उधर से ले देकर तेलुगु और गुजराती भाषाओं में बालसाहित्य के विषय में लेख लिखे।

मैंने अपने लेखों को एक पुस्तक की पाण्डुलिपि के रूप में तैयार किया तो मेरे मित्र डा. राकेश गुप्त और डा. आर. के. अवस्थी कहने लगे 'यह तुमने बिल्कुल नये विषय पर इतना काम किया है। इस पर तो तुम्हें किसी विश्वविद्यालय से डाक्टरेट मिल सकती है।' मैंने हँसकर कह दिया - 'मैं किसी कालेज में प्राध्यापक तो हूँ नहीं कि मेरी पदोन्नति हो जाये। डॉक्टर बन जाने

से वकील को कौन फीस अधिक दे देगा।'

मेरी वह पुस्तक सन् 1966 में किताब महल, इलाहाबाद से छपी थी। इस विषय पर हिन्दी में पहली पुस्तक होने के कारण उसने कई लोगों को बाल साहित्य पर शोध कार्य करने की प्रेरणा दी। पर वह इतनी अधूरी थी और उसमें इतनी त्रुटियां थीं कि उसे एक बार फिर से लिखना आवश्यक था। इस बीच मुझे बाल साहित्य सम्बन्धी अनेक सम्मेलनों एवं सेमिनारों में भाग लेने के लिए भुवनेश्वर, कलकत्ता, गोहाटी, मैसूर, मद्रास, त्रिवेन्द्रम, कोचीन, इलाहाबाद, दिल्ली, लखनऊ, पटना आदि स्थानों में जाने का अवसर मिला। हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं के बालसाहित्यकारों के सम्पर्क में आया और उनसे विचार विनिमय कर लाभान्वित हुआ। उनमें से सर्वश्री कल्वि गोपाल कृष्णन, अल वलियप्पा, अब्राहम जोसफ, के. एम. मैथ्यू, नाग मुथैय्या, डा. डी. पी. पटनायक, विनोद कानूनगो 'मौमाछि', समर चटर्जी, दुर्गा प्रसाद पटनायक, उत्पल होम राय, रसिक पुत्तिगे, सुधाकर प्रभु, महेन्द्र भानावत, मनोरमा जफा, शंकर पिल्लै, बी. सुमथ कुमारी, अनन्त पै, बी. के. विश्वम्भरन आदि को मैं नहीं भूल सकता।

मुझे इस पुस्तक को लिखने में सर्वश्री रामेश्वर गुरु 'कुमार हृदय', क्षेमचन्द्र सुमन, प्रेम नारायण गौड़, जहीर कुरैशी, मोहन चन्द्र मंटन से जो सहायता मिली है उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। प्रकाशन की व्यवस्था के लिए मैं श्री विनोद चन्द्र पाण्डेय को धन्यवाद देता हूँ। मेरी पुत्र वधू पूनम, एम.ए. ने पाण्डुलिपि तैयार करने में जो सहायता दी है उसके लिए उसे क्या धन्यवाद दूँ?

निरंकार देव सेवक

द्वितीय संस्करण की सम्पादकीय

एक बालगीतकार और एक बालकाव्य समीक्षक, दोनों ही रूपों में श्री निरंकार देव सेवक का हिन्दी बालकविता को अप्रतिम प्रदेय है। पर तीस वर्षो के लंबे अंतराल में उनका महाकाय ग्रंथ 'बालगीत साहित्य : इतिहास और समीक्षा' (संस्करण 1983) अद्यतन किये जाने की अपेक्षा रखता था। यह दायित्व उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ ने मुझे सौंपा, इसके लिए सर्व प्रथम मैं हिन्दी संस्थान के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ।

सेवकजी के ग्रंथ को अद्यतन करते हुए मेरी यथासंभव चेष्टा रही कि उनकी मूल संवेदना, स्वर और चिंतन-धारा को कहीं खंडित न होने दूं। इसीलिए मैंने ऐसे स्थलों को यथावत रखा है। हाँ, उत्तर आधुनिकता और भूमंडलीकरण के प्रभाव से हिन्दी बालकविता में जो नव्यता-बोध आया, उसका समाहार भी जरूरी था। सूचना प्रौद्योगिकी और तकनीक के जबरदस्त विस्फोट ने परिवर्तन की जो युगान्तरकारी लहर आज सर्वत्र प्रवहमान की, उसने बालस्वभाव तक को आमूल बदल दिया है। इसीलिए आज के संकटग्रस्त बचपन की बोलती हुई तस्वीर बनकर हिन्दी बालकविता ने अपनी धमाकेदार प्रस्तुति की है। लोरियां, शिशुगीत, राष्ट्रीयगीत, चांद-तारों के गीत समय के प्रभाव से अछूते नहीं रहे हैं। समकालीन बालकवियों ने पूरी ईमानदारी से इस बदलाव के रंगारंग चित्रों को कविता की पटी पर उकेरा है। सामयिकता बोध से जुड़ने के लिए मैंने ऐसे बिंदुओं का गंभीरतापूर्वक संस्पर्श किया है। निश्चय ही इससे पुस्तक का आयाम बढ़ा है।

एक बात और।

सेवकजी ने पुस्तक का नाम बालगीत साहित्य अवश्य रखा, पर उन्होंने सम्पूर्ण बालकविता की बात कही है। यह बालकविता नाम ही आज सर्वस्वीकृत हो चुका है। बालकविता, यानी एक ऐसा लहराता समन्दर, जिसमें शिशुगीत, बालगीत, किशोर कविता, पद्यकथा, लोरी, लोकगीत, अलिखित गीत आदि लोल लहरियां अपना राशि-राशि फेनिल और नयनाभिराम सौंदर्य विकीर्ण कर रही हैं। लय-ताल और छंद का ध्यान रखते हुए जो बालकविता लिखी जाती है, वही बालगीत है। हर बालकविता को हम बालगीत नहीं कह सकते, पर हर बालगीत को बालकविता में अन्तर्भुक्त अवश्य कर सकते हैं। चूंकि गीत बच्चों को सहज ही कंठस्थ हो जाते हैं, इसलिए इसके महत्व को सदैव निर्विवाद रूप से स्वीकारा गया है। पर आज से 30-35 वर्ष पूर्व 'बालगीत' शब्द को लेकर हिंदी बालकवियों

के मन में जो व्यामोह था, वह आज खत्म हो चुका है। पद्य में सृजित बालसाहित्य का सर्वमान्य नाम 'बालकविता' ही अब ग्रहीत है। मैंने इसी परिप्रेक्ष्य में हिंदी बालकविता के विगत तीस वर्षो का वैभव समेटा है। हाँ, विस्तार भय से पद्य जीवनी, पद्यकथा, पद्य नाटिका आदि को अपने विवेचना क्षेत्र से बाहर ही रखा है।

ध्यानाकर्षण का एक अन्य बिन्दु भी है। सेवकजी की पुस्तक में हिन्दी बालकविता को ऐतिहासिक विकास क्रम के अनुसार स्वतंत्रता पूर्व काल तथा स्वातंत्र्योत्तर काल में विभक्त किया गया है। इसीलिए सन् 1960 के बाद के जन्म तक के कवियों को उन्होंने स्वातंत्र्योत्तर काल में लिया। चूंकि मुझे पुस्तक में समकालीन बालकवियों के उल्लेख के लिए एक तीसरा खंड 'अद्यतन काल' निर्मित करना पड़ा, अतएव मैंने सेवकजी के इतिहास से स्वातंत्र्योत्तर काल के परवर्ती कवियों को भी तीसरे खंड में समायोजित किया है। ऐसा करना मैंने इसलिए आवश्यक समझा, क्योंकि इन कवियों का संपूर्ण रचना-सौष्ठव बाद में ही निखरकर सामने आया है। मैंने कोई भी नाम पुस्तक से हटाया नहीं है, मात्र परिवर्द्धन सहित स्थान परिवर्तन किया है।

जहाँ तक अन्य भारतीय भाषाओं की बालकविता की बात है, मैंने सेवकजी के विवरण को स्थान-स्थान पर अद्यतन करने के साथ-साथ इस अध्याय की पूर्णता के लिए कुछ नई भाषाएँ, यथा- राजस्थानी, वोडो, मणिपुरी, कोंकणी आदि भी जोड़ी हैं। निश्चय ही इससे पुस्तक की उपादेयता बढ़ी है।

निश्चय ही यह एक जिम्मेदारी भरा काम था, जिसे मैं अपने पति डा. राजकिशोर सिंह के सहयोग के बिना कदाचित पूरा नहीं कर पाती। पर मेरी संपूर्ण लेखन-यात्रा में चूंकि उनका अनवरत सहयोग रहा, इसलिए मैं इसे अपना अधिकार समझकर मात्र औपचारिक धन्यवाद नहीं दूंगी। पुस्तक का टंकण यश कम्यूनिकेशन आगरा के श्री योगेश एवं श्री यशपाल ने जिस श्रम के साथ किया, उसके लिए उन्हें हार्दिक धन्यवाद। उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ के कार्यकारी अध्यक्ष माननीय श्री उदयप्रताप सिंह, निदेशक डॉ0 सुधाकर अदीब, बालवाणी के सम्पादक श्री अनिल मिश्र एवं प्रकाशन अधिकारी डॉ0 अमिता दुबे के प्रति भी मैं हृदय से आभारी हूँ।

बुद्ध पूर्णिमा 2013

उषा यादव
नॉर्थ ईदगाह कॉलोनी,
आगरा-282010

विषय सूची

1 : बाल स्वभाव

मनोवैज्ञानिक पीठिका

बच्चा क्या होता है इसे समझे बिना उसके स्वभाव को भी ठीक-ठीक नही समझा जा सकता। प्रत्येक बच्चा अपने जन्म से ही अपने आप में सम्पूर्ण एक स्वतन्त्र मनुष्य होता है। देखने में वह कितना ही निर्बल, निस्सहाय और क्षमतारहित मालूम हो पर उसमें वह सब शक्तियाँ विद्यमान होती हैं जो किसी भी पूर्ण विकसित मनुष्य में हो सकती हैं। माता-पिता का यह अभिमान कि उन्होंने उसे बनाया है एक ऐसा भ्रम है जिससे बड़ा दूसरा और कोई भ्रम नहीं हो सकता। वह तो उसके निर्माण में उस सम्पूर्ण सृष्टि के द्वारा माध्यम के रूप में प्रयोग कर लिए जाते हैं जिसका एक अंग होते हुए भी वह अपने आपमें पूर्ण होता है।

अपने सम्पूर्ण और स्वतंत्र अस्तित्व के रूप में ही प्रत्येक बच्चा अपने विकास की एक प्रक्रिया लिए हुए होता है। मस्तिष्क उसके भौतिक शरीर का एक भाग होता है और अन्य शारीरिक अवयवों की भाँति उसका भी विकास होता रहता है। विकास की एक निश्चित अवस्था तक न तो वह किसी को पहचानता है न कोई उसे, पर उस अवस्था तक पहुँचने के बाद वह अपने सबसे निकट रहने वाले माता-पिता ही नहीं उस समस्त वातावरण से पहचान बनाने लगता है जिसमें वह रहता है। उसका यह पहचान बनाना उसे अपने अस्तित्व का बोध कराने के लिए नितान्त आवश्यक होता है। वह अपने पास या दूर की प्रत्येक वस्तु को देखना और समझना चाहता है। ऐसा करना उसके अपने विकास में सहायक होता है और उसी से उसे इस असीम सृष्टि में अपनी अलग स्वतन्त्र सत्ता का अनुभव होता है। वह देखता है कि अपने आप में पूर्ण और स्वतन्त्र होते हुए भी कुछ परिस्थितियाँ हैं जो उसे घेरे रहती है। उनमें वह बन्धन का अनुभव करता है और उनका ज्ञान प्राप्त करके ही उसे उस बन्धन में भी स्वतन्त्रता का अनुभव होता है। इसीलिए उसकी जिज्ञासा और स्वतन्त्रता की प्रवृत्ति में मूलतः कोई अन्तर नही होता। वह प्रवृत्ति उसके भौतिक अस्तित्व से मिले उसके अपने स्वभाव का एक अभिन्न अंग होती है।

बड़े लोग उसके इस प्राकृतिक स्वभाव को अपने-अपने दृष्टिकोण से देखते हैं। उसका भौतिक अस्तित्व जिसका एक अभिन्न अंग उसका स्वभाव होता है, एक सतत् विकासशील प्रक्रिया होने के कारण वह उन देखने वालों को सदा एक ही रूप में दिखाई नहीं दे सकता और उनके अपने पहले से बने दृष्टिकोणों के कारण भी उनके देखने के परिणामों में काफी अन्तर हो जाता है। किसी बच्चे के मन

में कब, क्यूँ और कैसे क्या भाव उठता है, वह कब, क्यूँ और कैसे कोई इच्छा या कल्पना करने और सुखी या दुखी होने लगता है, इसका ठीक-ठाक अध्ययन कुशल से कुशल मनोवैज्ञानिक अपनी पूरी क्षमता का उपयोग करके ठीक-ठीक नहीं कर पाते है। हमारे यहाँ इस सम्बन्ध में अकबर बीरबल की एक कहानी कही जाती है।

एक दिन भारत सम्राट अकबर के दरबार में बीरबल निश्चित समय से कुछ देर में पहुँचे। अकबर उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। आते ही उन्होंने देर से आने का कारण पूछा। बीरबल ने कहा 'घर में एक छोटा बच्चा रूठ गया था उसे मनाने में इतनी देर लग गई।' अकबर ने झुंझला कर कहा 'जरा से बच्चे को बहलाने में इतनी देर लग गई? तुम झूठ बोलते हो' बीरबल ने कहा 'नहीं जहाँपनाह! यदि आपको विश्वास न हो तो मैं बच्चा बन जाता हूँ आप मुझे मना कर देख लीजिए।' अकबर ने कहा 'अच्छी बात है बच्चे को बहलाने में कितनी देर लगती है।' बीरबल बच्चे की तरह मचल कर ऊँ ऊँ करके रोने लगे। अकबर ने पूछा 'बच्चे क्यों रोते हो?' बीरबल ने उसी प्रकार ऊँ ऊँ करते हुए कहा 'मैं गन्ना लूँगा।' अकबर ने एक गन्ना मंगाकर बीरबल को दे दिया, फिर भी उनका रोना बन्द न हुआ। अकबर ने कहा 'बच्चे अब क्यों रोते हो।' बीरबल ने उसी प्रकार रोते हुए कहा 'गन्ने को छील दो।' अकबर ने तुरन्त चाकू लेकर गन्ने को छील दिया। बीरबल का रोना फिर भी बन्द न हुआ। अकबर ने पूछा 'बच्चा अब क्यों रोते हो?' बीरबल ने उसी प्रकार रोते-रोते कहा 'इसे काट दो।' अकबर ने गन्ने को काट कर टुकड़े-टुकड़े कर दिया, मगर बीरबल का रोना फिर भी जारी रहा। अकबर ने फिर प्रश्न किया 'गन्ना काट दिया अब तुम क्यों राते हो?' बीरबल ने वैसे ही ऊँ ऊँ करते हुए कहा 'इन टुकड़ों को जोड़ दो।' अकबर यह सुनते ही खिल-खिलाकर हँस पड़े और बोले 'सच कहते हो बीरबल रूठे हुए बच्चे को मनाना बहुत मुश्किल काम है। उसके मन में कब क्या भाव क्यों उठता है इसे बड़े-बड़े विद्वान भी नहीं समझ पाते।'

इस कहानी में कोई सच्चाई हो या न हो पर हम इस परिणाम पर अवश्य पहुँचते हैं कि बच्चे के मन को समझ कर उसको बहलाने से अधिक कठिन और कोई दूसरा काम नहीं हो सकता। बाल साहित्यकार यही काम करता है और बाल मनोविज्ञान का अध्ययन उस काम में उसकी किसी सीमा तक ही सहायता कर सकता है।

बाल स्वभाव का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किये बिना श्रेष्ठ बालगीतसाहित्य लिखा ही नहीं जा सकता। जो बड़े यह नहीं जानते कि बच्चों के मन में किन परिस्थितियों में किस प्रकार की भावनायें उठती हैं, कब कैसी-कैसी कल्पनायें वह करते हैं वह स्वयं अपनी भावनाओं और कल्पनाओं के आधार पर बालगीत रच सकते हैं पर बच्चे भी उसमें रस ले सकेंगे यह कहना कठिन है। बड़े मनुष्य की अपनी भावनायें और कल्पनायें ही बच्चों का स्वभाव समझने के मार्ग में सबसे बड़ी बाधायें होती हैं। किसी मनुष्य का मन शून्य की स्थिति में कभी नहीं रहता, कुछ न कुछ भावनायें, विचार या कल्पनायें उसके मन में हर समय विद्यमान रहती है। उन्हीं को लेकर वह बच्चों के मन की भावनाओं और कल्पनाओं को समझने की चेष्टा करता है। बहुधा ऐसा करना रंगीन चश्मा लगाकर आकाश को देखने के समान होता है और अपनी भावनाओं के अनुसार बच्चों की भावनाओं को देखने से हम कभी-कभी ऐसे गलत परिणामों पर पहुँच जाते हैं जो वस्तुस्थिति के सर्वथा प्रतिकूल होते हैं। अपने मन को पूर्णतया वश में करके कल्पना के सहारे कुछ मनुष्य अपने को दूसरों की स्थिति में रखकर उनकी भावनाओं को ठीक-ठीक समझ लेते हैं। कवियों में यह गुण पाया जाता है इसलिए उनसे हम यह आशा करते हैं कि वह जब किसी दूसरे की भावनाओं का चित्रण करेंगे तो सत्य के निकट होगा। कवियों में यदि यह क्षमता न हो तो वे कविता लिख ही नहीं सकते। मैथिलीशरण गुप्त में यदि यशोधरा के प्रति हार्दिक सहानुभूति न होती और वह कल्पना के द्वारा उसके मन की भावनाओं को अच्छी तरह न समझ गये होते तो यशोधरा नामक काव्य की रचना कर ही नहीं पाते। इसी प्रकार बच्चों के लिए लिखने वाले कवियों के लिए बच्चों से सच्ची सहानुभूति रखकर कल्पना शक्ति के द्वारा उनकी भावनाओं को समझ लेना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

यूँ तो बालक ही क्या किसी भी अवस्था के मनुष्य के स्वभाव का अध्ययन करने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है पर विशेष रूप से बाल स्वभाव के अध्ययन में तो बहुत कठिनाइयाँ होती हैं। मनोवैज्ञानिक अध्ययन को सुलभ बनाने के लिए अध्ययन के विषय मनुष्य में आत्म निरीक्षण की शक्ति का होना नितान्त आवश्यक होता है। बालक आत्म निरीक्षण कर ही नहीं सकते इसलिए उनके स्वभाव के अध्ययन में हम एक बहुत बड़े सहायक तत्व से वंचित रह जाते हैं।

दूसरों की भावनाओं को समझने की चेष्टा करने वाले में स्वयं भी आत्म निरीक्षण की शक्ति होना चाहिए, उसी के द्वारा वह दूसरों की भावनावृत्तियों को

अपनी भावनावृत्तियों की कसौटी पर कस कर ठीक-ठीक समझ सकता है। बालक के स्वभाव का अध्ययन हम तब करते हैं जब हम स्वयं बालक नहीं रहते, इसलिए वह कसौटी ही हमारे पास नहीं होती जिसके आधार पर हम उसकी भावनावृत्तियों को समझ सकें। यह अध्ययन तभी ठीक प्रकार से किया जा सकता है जब अध्ययनकर्ता अभ्यास करके स्वयं बालकों जैसी भावनावृत्तियां अपने मन में धारण कर सकने में समर्थ हो। एक प्रौढ़ व्यक्ति अपने को किसी दूसरे प्रौढ़ व्यक्ति की स्थिति में आसानी से रखकर उसके मनोभावों को कल्पना के सहारे समझ सकता है पर बचपन की अधिकतर बातें मनुष्य बड़ा होकर भूल जाता है इसलिए उसे अपने को बालक की स्थिति में रखकर उसकी मनोभावनाओं को समझने में विशेष कठिनाई होती है।

प्रौढ़ व्यक्ति अपने मन की बात स्वयं अपने मुख से और अपनी चेष्टाओं से कह देता है, उससे उसकी मानसिक स्थिति का ज्ञान आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। पर बालक किसी बात का अनुभव अपने मन में बहुत गहराई से करते हुये भी उसे शब्दों और चेष्टाओं के द्वारा व्यक्त नहीं कर पाते। वे बड़ों के सामने अपने अनुभवों के पिटारे को खोलने में संकोच भी करते हैं। प्रायः देखने में आता है कि छोटे बच्चे जहाँ आजादी से मनमाने खेल-खेल रहे हों वहाँ यदि कोई बड़ी आयु का व्यक्ति पहुँच जाता है तो वह खेलना बन्द कर देते हैं। वे किसी बड़े के सामने अपने मन की बात स्पष्ट खोलकर तब तक नहीं रखते जब तक वे उसे अपना परम सखा या मित्र ही न समझ लें।

आधुनिक सभी मनोवैज्ञानिकों ने किसी व्यक्ति के स्वभाव का अध्ययन करने में दो बातों का ज्ञान आवश्यक माना है। एक तो उस व्यक्ति के वंशानुक्रम का ज्ञान, दूसरे उस वातावरण या उन परिस्थितियों का ज्ञान जिनमें वह रहता हो। सभ्य सुसंस्कृत माता-पिता के बच्चे भी प्रायः सभ्य, सुसंस्कृत ही होते हैं पर यह भी देखा जाता है कि सभ्य सुसंस्कृत माता-पिता से उत्पन्न बच्चे यदि बुरी संगत में पड़ जाते हैं तो उनमें अपने माता-पिता के जैसे गुण नहीं आते। वैज्ञानिक सत्य यही है कि प्रत्येक बालक अपने माता-पिता से केवल अपना भौतिक शरीर प्राप्त करता है। शरीर के विभिन्न अंगों की शक्तियाँ या दुर्बलतायें कुछ अंशों में वंशानुक्रमगत कही जा सकती है क्योंकि जन्म के बाद तुरन्त ही वह उनका विकास या ह्रास अपनी परिस्थितियों के प्रभाव से प्रारम्भ कर देता है। मन और बुद्धि की सारी विशेषतायें मनुष्य में परिस्थितियों व वातावरण के प्रभाव से ही आती है। माता-पिता जिन्होंने उसे जन्म

दिया होता है और जिनके गुण वह अपनाता या ठुकराता है वह भी उसके लिए उन परिस्थितियों का ही काम करते हैं, जिनमें उसका विकास होता है। बालक अपने व्यक्तित्व का विकास करने के उद्देश्य से अपनी परिस्थितियों से प्रतिक्षण किए जाने वाले संघर्ष और सामन्जस्य के प्रभाव से निर्मित होता है।

बालक आयु में ज्यों-ज्यों बढ़ता जाता है उसके स्वभाव में परिस्थितियों व वातावरण के प्रभाव का स्वरूप निखरता जाता है। कभी उसमें हमें विद्रोह और संघर्ष के दर्शन होते हैं और कभी सामन्जस्य के। इन्हीं दोनों के बीच उसके राग, द्वेष, ईर्ष्या, प्रेम, सुख, दुःख इत्यादि के भाव सुस्थिर होते जाते हैं। बाल स्वभाव का अध्ययन करने के लिए आयु की दृष्टि से उसके मनोविकास की अवस्थाओं का ज्ञान प्राप्त कर लेना भी आवश्यक है।

रैवरेन्ड जी. एच. डिक्स ने अपनी 'चाइल्ड स्टडी' पुस्तक में बालक की आयु को मनोविकास के क्रम से पाँच भागों में बाँटा है -

1. शिशु काल - यह तीसरी वर्ष की आयु तक रहता है।
2. बचपन - आठवीं या नवीं वर्ष की आयु तक।
3. पूर्व किशोर अवस्था - ग्यारह या बारह वर्ष की आयु तक।
4. उत्तर किशोर अवस्था - चौदह वर्ष की आयु तक।
5. कुमार अवस्था - बीस वर्ष की आयु तक।

डिक्स महोदय ने यह भी स्वीकार किया है कि इन अवस्थाओं के बीच कोई अमिट रेखायें नहीं होतीं। बालक विशेष परिस्थितियों में इन रेखाओं का अतिक्रमण करते हुए भी पाये जाते हैं और एक अवस्था से दूसरी अवस्था में पहुँचने पर एक संक्रान्ति काल तो प्रत्येक बालक की आयु में रहता ही है।

मनोविज्ञान के अध्ययन में सुविधा की दृष्टि से डमविल ने बचपन को विकास की चार अवस्थाओं में विभाजित किया है। पहली अवस्था ढाई वर्ष की आयु से छः-सात वर्ष की आयु तक होती है। इस समय में बालक का ध्यान शारीरिक चेष्टाओं और क्रियाओं की ओर सबसे अधिक रहता है। वह ऐसे खेल खेलना पसन्द करता है जो एकांत में ही सुख देने वाले हों, किसी से स्पर्धा करने की भावना उसमें नहीं रहती। इस अवस्था में बालक की कल्पना शक्ति बहुत सजीव और प्रत्यक्ष ज्ञान बहुत स्पष्ट होता है। वह डंडे को अपने पैरों के बीच दबाकर यह अनुभव करता है कि वह घोड़े पर सवार है। अनुकरण की प्रवृत्ति भी उसमें होती है। वह खेल-खेल में अपने बड़ों की तरह अनुकरण करने लगता है। लड़कियाँ गुड़ियों के खेल में अपनी माता, चाची, ताई इत्यादि के कामों का अनुकरण करती हैं। वस्तुओं और

घटनाओं के विषय में क्यों, कहाँ, कैसे इत्यादि प्रश्न उठाकर जानने की इच्छा भी उनमें बहुत प्रबल होती है।

दूसरी अवस्था छः सात वर्ष की आयु से नौ वर्ष की आयु तक होती है। इसमें बालक में ध्यान जमाने की शक्ति बढ़ जाती है, वह किसी कार्य में दक्षता पाने की ओर भी लालायित होने लगता है, उसके विचारों का क्षेत्र भी पहले से अधिक विस्तृत हो जाता है, वह दूसरे देशों के लोगों के बारे में जानने और महापुरुषों की जीवनियों को पढ़ने या सुनने में भी मन लगाता है, खेल में स्पर्धा की भावना भी प्रारम्भ हो जाती है, और वह अपने समवयस्क साथियों के बीच में सुख का अनुभव करता है।

तीसरी अवस्था ग्यारह वर्ष की आयु से चौदह वर्ष की आयु तक रहती है। इस अवस्था में समाज में रहने की इच्छा बलवती हो जाती है, स्पर्धा की भावना भी अकेले नहीं वरन् एक दल का आधार लेकर व्यक्त होने लगती है। कभी-कभी अप्राकृतिक दबाव के कारण विद्रोह और क्रान्ति की भावना भी बच्चों के मन में उठने लगती है। बालक में अपनत्व का भाव भी बढ़ता है, और वह पत्थर, तस्वीरें, टिकट इत्यादि इकट्ठे करने लगता है। उसे अपनी बुद्धि का प्रयोग करके कोई काम करने में आनन्द आता है। इसीलिए इस आयु के बालक पहेलियाँ बुझाने में आनन्द लेते हैं। उनकी अनुकरण की प्रवृत्ति भी एक नया रूप धारण करने लगती है। वह अपने परिवार के परिचित और देखे सुने लोगों का ही अनुकरण नहीं करते बल्कि दूर के कुछ विशेष व्यक्तियों की बातों का अनुकरण करने लगते हैं। उनकी रुचि वीरता और साहसपूर्ण गाथाओं और रहस्यपूर्ण कहानियों में बढ़ती है, वे इतिहास और भूगोल की बातों का ज्ञान भी प्राप्त करने लगते हैं। भाषा के नये-नये शब्दों का ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा उनमें जाग्रत हो जाती है। उनकी स्मरण शक्ति भी बढ़ जाती है और वह एक ही विषय पर कुछ देर तक ध्यान जमाकर सोचने भी लगते हैं।

चौथी अवस्था चौदह वर्ष के बाद प्रारम्भ होती है। उसका सम्बन्ध बालगीत साहित्य से नहीं होता क्योंकि बड़ों के लिए लिखी कविताओं से भी उनका मनोरंजन होने लगता है।

उपर्युक्त अवस्थाओं के मनोविकास के अध्ययन के आधार पर कुछ तथ्य हमें ऐसे प्राप्त होते हैं जिन पर थोड़ा विचार कर लेना आवश्यक है। प्रत्येक प्राणी की भाँति बालकों में भी जन्म से ही सुख-दुःख अनुभव करने की क्षमता विद्यमान

होती है। अपनी अनुकूल परिस्थितियों में वह प्रसन्न रहते हैं और प्रतिकूल परिस्थितियों में रोते हैं। अनुकूल परिस्थितियाँ उनको कहते हैं जिनमें वे किसी शारीरिक या मानसिक कष्ट का अनुभव नहीं करते। यूं तो बालक को आरम्भ से सभी कुछ अपने प्रतिकूल दिखाई देता है। वह अपने माता-पिता को भी अपना नहीं समझता, पर इस छोटी अवस्था में भी उसमें दो मनोवेग बहुत प्रबल होते हैं - एक क्रोध का और दूसरा भय का। बच्चे को प्रतिकूल परिस्थिति में क्रोध आता है और उसी से कभी-कभी उसमें भय की भावना उत्पन्न होती है। उसे यदि बचपन से ही अधिक सुरक्षित रखकर मनोवेगों को व्यक्त होने का अवसर नही दिया जाता तो वह ऐसी मानसिक दुर्बलता का शिकार हो जाता है जो जीवन भर उसे सताती रहती है। इसलिये बच्चों की देख-भाल भी उतनी ही करना चाहिए जितनी उसके स्वाभाविक विकास के पथ में साधक हो।

बच्चों का प्रत्यक्ष ज्ञान प्रारम्भ में नहीं के बराबर होता है। कल्पना, पूर्वानुभव और विवेचना शक्ति के अभाव में वह प्रत्यक्ष ज्ञान भी पहले अपने संवेगों के द्वारा ही प्राप्त करता है। अंधेरे कमरे में लटके हुए ओवरकोट को वह भूत समझकर उससे डरने लगता है पर वही ओवरकोट जब वह अपने पिता को पहने हुए देखता है तो उसके मन का भय निकल जाता है। धीरे-धीरे वह अपने घर के अन्दर और बाहर, आस-पास की वस्तुओं तथा माता-पिता, सगे सम्बन्धियों आदि को देखकर प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने लगता है। पहले उसका वह ज्ञान स्थूल पदार्थों के ज्ञान तक ही सीमित होता है। उदाहरण के लिय परियों की कहानी की परी उसकी अपनी माता, बहन या देखी हुई किसी दूसरी स्त्री से भिन्न नहीं लगती। जो लोग बच्चों के प्रत्यक्ष ज्ञान की सीमाओं से परिचित नहीं होते वह उनसे ठीक से बात भी नहीं कर सकते।

बच्चों का मन बहुत चंचल होता है। वे किसी विषय पर थोड़ी देर के लिए भी अपने चित्त को एकाग्र नहीं कर सकते। उनमें कौतूहल व जिज्ञासा की प्रवृति इतनी प्रबल होती है कि वे सदैव नई-नई वस्तुओं को देखने, समझने और उनके विषय में जानकारी प्राप्त करने को लालायित रहते हैं। चटकीली, चमकदार, रंग-बिरंगी वस्तुओं और लय की ओर वह विशेष रूप से अधिक आकर्षित होते हैं, गद्य की अपेक्षा गीत उन्हें अधिक आकर्षित करता है वे अपने मकान या कक्षा के सामने वाली सड़क पर तेजी से जाती हुई मोटर या बस को उत्सुकतापूर्वक देखे बिना नही रह सकते। शिक्षा और उपयुक्त साहित्य की ओर उनकी रुचि को मोड़कर उन्हें एकाग्रचित्त होना सिखाया जा सकता है पर यह शिक्षा और साहित्य इस प्रकार के होने चाहिए

कि उन्हें अपनी रुचि को मोड़ने में किसी भी प्रकार के कष्ट का अनुभव न हो, क्योंकि ऐसा होने से उनके स्वाभाविक, मानसिक विकास की गति अवरुद्ध हो जाती है। बालक के विषय में यह भी एक सत्य है कि वह जिस विषय पर अपना ध्यान केन्द्रित करता है, उसे बहुत बारीकी से देखता है। प्रौढ़ एक साथ कई विषयों की ओर ध्यान दे सकता है पर बालक एक समय में एक ही विषय पर अपना ध्यान केन्द्रित रख सकता है, इसलिए जिन बाल-गीतों में बच्चों के स्वभाव की इन विशेषताओं का ध्यान रखा जाता है, वही बच्चों को अधिक प्रिय होते हैं।

प्रौढ़ व्यक्तियों की अपेक्षा बच्चों में कल्पना शक्ति कई गुना अधिक होती है। वे अपने अल्प ज्ञान की कमी को कल्पना के द्वारा पूरा करने का प्रयत्न करते हैं, इसीलिये आकाश में बादलों को देखकर वे उसमें हाथी, घोड़े, मकान ही नहीं दो लड़ते हुए भालुओं तक की कल्पना कर लिया करते हैं। अकेला बालक प्रायः अपने खिलौनों को ही काल्पनिक साथियों के नामों से पुकारने लगता है और उसमें से किसी को तनिक भी क्षति पहुँचने पर उसी प्रकार कष्ट का अनुभव करता है जैसे कोई बड़ा अपने किसी सगे सम्बन्धी की क्षति पर कष्ट का अनुभव करता है। बड़ों की अपेक्षा बच्चों में अधिक कल्पना शक्ति होने का एक कारण यह भी है, कि बड़े तर्क और विवेक बुद्धि से अपनी जिज्ञासा को तुरन्त शांत कर देने की क्षमता रखते हैं किन्तु बच्चों के पास वह तर्क व विवेक बुद्धि नहीं होती, इसीलिए वह उसे शांत करने के लिये नई-नई कल्पनाओं से काम ले लिया करते हैं। अत्यधिक कल्पना-प्रधान होने के कारण ही काल्पनिक-कथा, कहानियाँ या कवितायें पढ़ने-सुनने में उनकी रुचि अधिक होती है। वह उन कविता-कहानियों में मेंढक, बिल्ली, बन्दर आदि तक को मनुष्यों की तरह बातचीत और व्यवहार करते देखकर प्रसन्न होते हैं। प्राचीन विद्वान बालकों के स्वभाव की इन विशेषताओं से भली-भांति परिचित थे, इसीलिए हमें पंचतन्त्र और ईसप की कहानियों में पशुओं की बातचीत और व्यवहार की बातें बहुतायत से मिलती हैं। सुप्रसिद्ध शिक्षा विशेषज्ञ मैडम माण्टेसरी बच्चों को अत्यधिक कल्पना-प्रधान साहित्य देने के विरुद्ध थीं। उनका कहना था "बालक काल्पनिक कथाओं को पढ़ने से बड़े होकर भी कल्पना में ही विचरण करते रहने की आदत वाले हो जाते हैं। वह संसार के प्रत्यक्ष का सामना डटकर करने के बजाय उससे दूर भागने लगते हैं और उसके फलस्वरूप एक प्रकार की भीरुता का भाव सदा के लिये उनके हृदय में घर कर लेता है।" पर समुचित कल्पना-शक्ति के विकास के बिना कोई बालक बड़ा होकर सफल वैज्ञानिक, डाक्टर या इंजीनियर भी नहीं बन सकता। कल्पना-शक्ति उनके मानसिक संतुलन को बनाये रखने में भी सहायक होती है।

बच्चे स्वभाव से ही स्वतन्त्रताप्रिय होते हैं। बड़े आदमियों के सामाजिक कायदे-कानूनों के साँचों में ढले हुए व्यक्तित्व तो एक दूसरे से बहुत कुछ मिलते-जुलते हो सकते हैं। वह परिस्थितियों व घटनाओं पर एक ही प्रकार की प्रतिक्रिया व्यक्त करके एक सी भाषा बोल सकते हैं पर बच्चे इंसानियत के अतिरिक्त और किसी सांचे में ढले हुए नहीं होते। वह न हिन्दू होते हैं, न मुसलमान; न ईसाई, न बौद्ध; न जैन, न चीनी, जापानी, हिन्दुस्तानी, रूसी या पाकिस्तानी। उनके विकास की गति को न कोई धर्मोपदेश रोक सकते हैं, न धर्म ग्रन्थ, न दण्ड प्रक्रिया संहितायें, न संविधान और न संसार की सेनायें, पुलिस, जज या मजिस्ट्रेट। रूसो ने कहा था- प्रत्येक मनुष्य जन्म से स्वतन्त्र होता है। लॉक का भी कहना था कि प्रत्येक बालक अपने आप में स्वाधीन और स्वतन्त्र होता है। धर्मावलम्बियों का भी यही विचार है कि बालक भगवान का रूप होता है और भगवान किसी बन्धन में नहीं रहते। मिस्टर होम्स ने लिखा है "प्रत्येक शिशु में ईसा मसीह छिपा हुआ रहता है - वह जन्म से ही ईश्वर बनने की शक्ति लेकर पैदा होता है।"

बड़े लोग अपनी इच्छाओं, आकांक्षाओं, आदर्शों, विश्वासों और मान्यताओं को अच्छा समझकर बच्चों पर जबरदस्ती लाद देना चाहते हैं। वह उन्हें या तो कट्टर हिन्दू बना देना चाहते हैं, या पक्का मुसलमान, या हिन्दुस्तानी या पाकिस्तानी। उनकी सारी शक्ति इसी बात में लगी रहती है कि वह उन्हें दूसरा गाँधी, लेनिन, राम, कृष्ण, सुभाष या नेहरू बना दें। उनके सारे शिक्षा विभाग और वेतन भोगी अध्यापक इसी प्रयत्न में लगे रहते हैं और वह सब इसे अपना ईश्वर प्रदत्त अधिकार समझते हैं और कर्तव्य भी; पर उनका यह प्रयत्न उसी प्रकार का होता है जैसे एक दो किलो का भार उठाने की शक्ति रखने वाले हाथ पर यदि बीस किलो का भार रख दिया जाये तो उसकी हड्डी जरूर टूट जायेगी।

अपने व्यक्तित्व के स्वभाविक विकास के प्रयत्न में एक क्षण भी न खोकर निरन्तर लगे रहने वाले बच्चे के मन पर बड़ों के उन सारे प्रयत्नों की क्या प्रतिक्रिया होती है इस पर ध्यान देने की न किसी को फुरसत होती है, न जरूरत। परिणाम यह होता है कि स्वतन्त्रता प्रिय बालक विद्रोही हो उठता है और वह वैसा ही नहीं बनना चाहता जैसा वह उसे बनाना चाहते हैं। यही कारण है कि उनके सारे अथक प्रयत्नों, धार्मिक संस्थाओं, नियम विधानों और सेना पुलिस वालों के होते हुए भी बालक बड़े होकर वह नहीं बन पाते जो वह उन्हें बनाना चाहते थे। गाँधी अनुयायी सत्य और अहिंसा के सिद्धान्तों के विरूद्ध आचरण करने वाले और नेहरू के अनुयायी

बर्नाडशॉ का कहना था कि संसार में सबसे बड़ा गर्भपात करने वाला वह व्यक्ति होता है जो बच्चे के स्वाभाविक चरित्र को किसी अन्य दिशा में मोड़ देने का प्रयत्न करता है।

खलील जिब्रान ने कहा है तुम उन्हें (बच्चों को) अपना प्यार दे सकते हो विचार नहीं। तुम उनके शरीर में रह सकते हो आत्मा में नहीं। तुम उनके जैसा बनने का प्रयत्न कर सकते हो पर उन्हें अपने जैसा बनाने की चेष्टा मत करो।

बच्चों के प्रिय चाचा नेहरू ने एक स्थान पर लिखा है – "संसार भर में बच्चों की एक बहुत बड़ी सेना है जो बाह्य रूपसे बोलियों, कपड़ों आदि में कई तरह से एक दूसरे से भिन्न हैं किन्तु फिर भी वे सब एक से हैं .... वे आपस में वर्ग, जाति, धर्म, स्तर का भेद भाव नहीं मानते। वे अपने माता-पिता से भी अधिक बुद्धिमान होते हैं। पर जैसे-जैसे वे बड़े होते जाते हैं दुर्भाग्यवश उनका प्राकृतिक रूप बड़ों की शिक्षा और व्यवहार से ढक दिया जाता है।"

बच्चों को कुछ बनाने का काम थोड़ा बहुत अगर कोई कर सकता है तो वह उन्हें लिखकर दिया जाने वाला साहित्य। अच्छा साहित्य किसी को कुछ बनाने का आग्रह नहीं करता। बाल साहित्य बच्चे के व्यक्तित्व में डूब कर स्वयं बच्चा बनकर लिखा जाता है, उसमें बच्चे की मनोभावनायें, इच्छा-आकांक्षायें और कल्पनायें प्रतिबिम्बित होती हैं। इसलिए बच्चा स्वाभाविक रूप से उसे अपनाकर स्वयं अपने विकास के पथ को प्रशस्त करता हुआ चलता रह सकता है पर शर्त यही है कि साहित्य के द्वारा चालाकी से कोई बात बालक के मन में थोपी न गयी हो।

सामयिक चिंतन

सृजन और अन्वेषण बालक का स्वभाव है। उनकी जिज्ञासाएं अनंत होती हैं। कई दफा बड़ों को अप्रसन्न करके भी बालक किसी वस्तु की तोड़-फोड़ करके उसके रहस्य से भिज्ञ होने की चेष्टा करता है। सृजन का आनंद भी उसके लिए अनिर्वचनीय है। मिट्टी या प्लास्टिक से खेलते हुए वह किसी वस्तु को पहले एक रूप देता है, फिर उसे बिगाड़कर दूसरा और फिर उसे भी बिगाड़कर नया रूप तब तक देता रहता है, जब तक संतुष्ट न हो जाये। घर बनाने का खेल उसे बहुत भाता है, फिर चाहे वह मिट्टी का हो या प्लास्टिक के ब्लॉक्स का। इसके द्वारा बच्चा बनाना, बिगाड़ना, सामान एकत्र करना, दिमाग में खाका बनाना, मिलकर काम करना, दोस्तों के सुझावों पर अमल करना तथा चुन-चुनकर घर को सुंदर बनाने के उपकरणों का इस्तेमाल करना आदि कौशल को खेल-खेल में सीखकर जीवन

को गढ़ने की दिशा में प्रवृत्त होता है। पर आजकल मिट्टी के घरौंदे बनाने का सुख भी बच्चे के पास कहाँ रह गया है? माता-पिता उसके समक्ष खिलौनों की रंगारंग दुनिया जरूर प्रस्तुत कर देते हैं, पर उनसे थोड़ी देर खेलने के बाद बच्चा ऊब जाता है। एक सप्राण बालक आखिर कितनी देर निर्जीव खिलौने के साथ जी बहलायेगा? टेलीविजन, वीडियो गेम व रोंयेदार-मुलायम भालू-कुत्ते का युग है आज, जो रचनात्मकता के स्थान पर एलर्जी व आंख की कमजोरी ही उपजाते हैं। बच्चों को निरंतर बाहरी वस्तुएं थमाते रहने से उनकी आंतरिक सृजन की शक्ति तो बाधित होती ही है, वे एकरसता से प्रसूत ऊब और घुटन भी झेलते हैं।

अपने सहज कौतूहलशील बाल स्वभाव के कारण बच्चा सतत क्रियाशील रहना चाहता है। उसे व्यस्त रखने के लिए माता-पिता कभी-कभी बने-बनाये चित्रों में रंग भरना, शिशुगीत याद कराना, दिमागी कसरत द्वारा दिखाये गये चित्र के अनुसार ब्लॉक्स को रूपाकार देना आदि सीमित दायरों के खेलों का भी इस्तेमाल करते हैं, पर दो-चार बार खेलने के बाद बच्चा इनसे भी ऊब जाता है। दूसरी तरफ धूल-मिट्टी में तल्लीन भाव से खेलते हुए बच्चे घंटों नहीं ऊबते। खुला परिवेश पाकर वे स्फूर्ति से भरे हुए सारा दिन खेल सकते हैं। सच तो यह है कि बच्चों को बंद कमरे में बैठाकर, खिलौने देकर रचनात्मकता नहीं सिखाई जा सकती, क्योंकि इससे उनका चिंतन भी सीमाबद्ध हो जायेगा। खुला माहौल पाकर वे न केवल मुक्त परिंदों की तरह उड़ना और तितलियों की तरह रंगावेष्टित होना सीखेंगे, बल्कि अपने जीवन में भी नये रंग भरने की कला से परिचित होंगे। टेलीविजन की कार्टून फिल्म, दोस्तों के साथ मनाई जाने वाली जन्मदिन की पार्टियां और मॉल्स में जाकर खरीदारी ऐसे काम हैं, जो उन्हें व्यस्त तो रख सकते हैं, पर यह अफीमी नशा उनके भावी जीवन के लिए अंततः दुखदायी ही सिद्ध होगा। इसलिए समकालीन जीवन-शैली का तकाजा है कि बच्चों को मौलिक सृजन की दिशाएं और छूट प्रदान करने में माता-पिता न तो दुविधाग्रस्त हों और न लापरवाही दिखायें। तभी बच्चों को दिनोंदिन नीरस, उबाऊ और बोझिल होती जिंदगी से बचाया जा सकता है और आस-पास के परिवेश के प्रति उन्हें जागरुक बनाया जा सकता है। लोक कथाओं और लोक ज्ञान-विज्ञान से जोड़ने पर हम आज के वैश्वीकरण के युग के बच्चों को भी सहज नैसर्गिक उल्लास दे सकते हैं और बाल स्वभाव को ऊब और घुटन से बचा सकते हैं। आज बच्चे जिस संत्रास को झेल रहे हैं, उसकी हम और आप कल्पना भी नहीं कर सकते। सरोज परमार की 'बच्चे' शीर्षक इस कविता में उसकी झलक देखिये –

न तारे, न परियां
न फूल, न तितलियां
रह गईं हथौड़े की चोट-सी
चुनौतियां
कम्प्यूटर के विध्वंसक खेल की।
गायब है खिलखिलाता, झगड़ता
मासूम जमावड़ा।
गुम हुआ है इस दौर में
गिल्ली-डंडा, कंचे, किलकिल-कांटा
तीन टांग की दौड़।
किसी साजिश के तहत
पीठ पर टंग गये बेरहम बस्ते
और बदल लिये हैं मायने
चांद, सूरज, बारिश, बादल, परिन्दों ने।
उनके रचना संसार पर काबिज
हो गया शक्तिमान
कार्टून फिल्म देखते, झेलते
कार्टून हो चले हैं बच्चे
उनकी झोली में भर गई है
ऊब, जिद और उकताहट
कोई जिन्न निगल रहा है बचपन
रास आने लगा निपट अकेलापन
अब कोमल सपने नहीं बुन पा रहे बच्चे
अपनी राह नहीं चुन पा रहे बच्चे।

वैश्वीकरण के वर्तमान युग में पैसा ही वह धुरी बन गया है, जिसके इर्द-गिर्द मनुष्य के सारे कार्यकलाप संचालित होते हैं। ऐसी स्थिति में अमीर-गरीब के बीच की खाई बढ़ गई है और इसका सबसे ज्यादा असर बच्चों पर पड़ा है। आज देश की आबादी में एक तिहाई संख्या 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों की है। इनमें वे बच्चे भी शामिल हैं, जो फुटपाथ पर अपना जीवन-यापन करने के लिए अभिशप्त हैं, जो तमिलनाडु के पटाखों के कारखानों में अपना बचपन दांव पर लगाते हैं, फीरोजाबाद के चूड़ियों के कारखानों में अपना बचपन गंवाते हैं और दिल्ली-

मुम्बई जैसे महानगरों में ज़री का काम करते हुए खुद को तबाह करते हैं। इन्हें घरेलू नौकर के रूप में अपनी दासता की कहानी को समय के पृष्ठ पर आंसुओं की स्याही से लिखते हुए भी देखा जा सकता है। बाल श्रम को गैरकानूनी कहने की बात इसलिए बेमानी हो जाती है, क्योंकि गैरकानूनी तो रिश्वत लेना, गबन करना और कालाबाजारी करना भी है, पर व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में हमने इसे युगीन सच्चाई मानकर परम इतमीनान से पचा लिया है और अब हमें इसमें कुछ भी गलत या अनुचित नजर नहीं आता है। वर्तमान हालात में बहुत बदल गया है बाल स्वभाव। अशोक चक्रधर की 'बूढ़े बच्चे' शीर्षक कविता में गन्ने की भांति पेरे जाते बचपन का यह चित्र देखिये -

फेरी वाले, चूड़ी वाले
फल वाले, ठेले वाले
शरबत, पतंग वाले
पालिश वाले, मालिश वाले
जरदोजी, कढ़ाई वाले
वरक कूटते हैं ये, मिठाई भी बनाते हैं
बावर्ची हैं, दिनभर रोटियां पकाते हैं।
नैतिक शिक्षको
देश के रक्षको,
इस फसल को नष्ट होने से बचाओ
और, समय से पहले हो गये
इन बूढ़ों को बच्चा बनाओ।

क्या ऐसे श्रम की चक्की में पिसने वाले बच्चों के सहज-नैसर्गिक बाल स्वभाव के अक्षुण्ण रहने की कल्पना की जा सकती है? स्थिति की गंभीरता तब और बढ़ जाती है, जब हम संपन्न वर्ग के बच्चे को भी एक अलग किस्म का संत्रास झेलते हुए देखते हैं। संपन्न वर्ग के इस बच्चे को अपने घर से विद्यालय तक जो वातानुकूलित सुविधाएं मिलती हैं, उनकी वजह से वह सर्दी-गर्मी-बरसात जैसे मौसमी बदलाव तक से अनजान है। गुजरात के एक स्कूल की अभी हाल में घटी घटना इस विद्रूप की साक्षी है। कक्षा में बच्चों को 'गरीब परिवार' विषय पर निबंध लिखने को दिया गया। एक बच्चे ने अपनी कापी पर लिखा - एक परिवार था। उसमें सब गरीब थे। पापा गरीब थे। मम्मी गरीब थी। रसोइया गरीब था। ड्राइवर गरीब था। माली गरीब था। यहाँ तक कि बच्चों को संभालने वाली आया भी गरीब थी।

'गरीब' शब्द के यथार्थ से कितना अनभिज्ञ है आज का संपन्न परिवार का बच्चा, यह बात उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट है। हमारी भौतिक समृद्धि, चतुर्मुखी प्रगति, सुख-सुविधाएं और वर्तमान जीवन-शैली आज के बच्चे को जीवन की वास्तविकता से बहुत दूर खींच ले गई है। लैपटॉप के जादुई सम्मोहन में बंधा हुआ बच्चा न गरीब की भूख को समझता है और न उसके प्रति द्रवित ही होता है। उसके स्वभाव में जो एकाकीपन आ गया है, इसके चलते वह समाज से कटता जा रहा है। जाहिर है, बाल स्वभाव में यह परिवर्तन चिंतनीय है।

आज बच्चे के ऊपर बस्ते के बोझ से कहीं ज्यादा भार अभिभावकों की अपेक्षाओं पर खरा उतरने का है। माता-पिता के ये दुराग्रह इतने प्रबल हो गये हैं कि उन्हें अपने बच्चे के जीवन में किस्से-कहानियों की पुलक और खेल के मैदान की धमा-चौकड़ी, वक्त की बरबादी ही नज़र आती है। उनका सपना यही है कि उनका बच्चा अपनी तेज रफ्तार से बाकी बच्चों को पीछे छोड़कर इतना आगे बढ़ जाये कि अकूत पैसा और ताकत बटोर सके। इस लक्ष्य तक पहुंचने की चेष्टाओं को ही बच्चे की सफलता का पैमाना मान लिया गया है। इसमें बच्चे के स्वभाव, रुचि, इच्छा-आकांक्षा, सोच और क्षमता का कोई दखल नहीं होता। माता-पिता के पैमाने पर सटीक उतरने वाला बच्चा सफल, अन्यथा असफल। बच्चों पर अपनी महत्वाकांक्षाएं थोपना कितना उचित है, माता-पिता इस मुद्दे पर सोचना तक नहीं चाहते और इसीलिए उनकी ज्यादती के चलते आज बाल-मन और बाल-स्वभाव दोनों प्रभावित हुए हैं।

बच्चों के स्वतंत्र अस्तित्व को स्वीकार करने वाले परिवार आज भी गिने-चुने हैं। उनके ऊपर अपनी महत्वाकांक्षाएं थोपने की झोंक में माता-पिता बिल्कुल ही भूल जाते हैं कि वे उन्हें एक सुविधासंपन्न जीवन तो दे रहे हैं, किंतु समय नहीं दे पा रहे हैं और जो समय बच्चों के लिए निकाला भी जा रहा है, उसमें संस्कार तो बिल्कुल ही नहीं दे पा रहे हैं। बच्चा उपदेश से नहीं, अनुकरण से सीखता है। यही बाल स्वभाव है। माता-पिता के आचरण का अनुकरण ही तो वह करेगा। यदि दस वर्ष के एक बच्चे के जन्मदिन पर उसके पिता लैपटॉप लेकर अपने स्टडी रूम में चाय के प्याले के साथ घुस गये हैं और मां पड़ोस की किटी पार्टी में गई हुई हैं, तो बच्चे के मनोभावों की सहज ही कल्पना की जा सकती है। एक मल्टीनेशनल कम्पनी में काम करने वाले माता-पिता बच्चे को सम्पन्न जीवन तो दे देते हैं, पर उसके मन की बात सुनने के लिए अवकाश के दो पल नहीं

चूंकि माता-पिता के पास समय नहीं, शायद इसीलिए बच्चे पढ़ाई से विरक्त हो उठते हैं। कहीं वे माता-पिता के मनमुताबिक परीक्षाफल न दिखा पाने की लज्जा से मौत को गले लगाते हैं तो कहीं अपनी मनोवेदना भुलाने के लिए ड्रग्स की अंधेरी-भयावह गुफाओं में पैठते चले जाते हैं। पोर्नोग्राफी, एम.एम.एस, एस.एम.एस, ब्लू फिल्म आदि ने आज बच्चों की मानसिकता को इतना विकृत कर दिया है कि न तो हिंसा से उन्हें भय लगता है और न सेक्स से दूरी बनाने की संकल्पशक्ति ही उनमें रहती है। परिणामस्वरूप स्कूली जीवन से ही वे इन गलत रास्तों पर बढ़ जाते हैं बच्चों की बढ़ी हुई स्वेच्छाचारिता को देखकर माता-पिता प्रायः शिकायतें करते नहीं थकते। उन्हें आपत्ति है, सुबह उठने में रोजाना बच्चों की आनाकानी से, रात को देर तक टेलीविजन या कम्प्यूटर से चिपके रहने की प्रवृत्ति से, छोटे-मोटे घरेलू कामों तक में टालमटोल करने की आदत से, हर बात में मनमानी करने के स्वभाव से। और यह स्थिति सीमातीत हो जाने पर माता-पिता हथियार डाल देते हैं कि बच्चे से कुछ कहना-सुनना ही बेकार है।

वैश्वीकरण के वर्तमान युग में सूचना प्रौद्योगिकी और तकनीक के जादुई सम्मोहन ने बाल स्वभाव को बेतरह प्रभावित किया है। बच्चों का नन्हा-सा कोमल बाल-मन फंतासियों के तिलस्मी संसार से रु-बरु होकर एकदम चकित-विस्मित हो उठा है। एक वक्त वह था, जब बच्चा किसी छड़ी को घोड़ा बनाकर घर भर में कुदकता फिरता था। अपनी कल्पना के बल पर वह मिट्टी के घरौंदे में सारी सुविधाएँ एकत्र करने की चेष्टा करता था और एक वक्त आज का है, जब हैरीपॉटर, जुरासिक पार्क और नार्निया जैसी परी कथाओं को सिनेमा के पर्दे पर देखकर उसे अपनी कल्पनाओं को उड़ने के लिए पंख देने की कोई आवश्यकता नहीं रहती। यहाँ तो उन्हें अपनी फंतासियों और सपनों को रंगों में उतरता देखकर विस्मित-उल्लसित भर होना है। इस जादुई यथार्थ को वे बड़ों की भांति सिनेमा हॉल से बाहर निकलने के बाद भूल नहीं पाते। उनके सपनों में परियों, बादलों और सतरंगे इंद्रधनुष की जगह रक्त, भयावह आकृतियां, तलवारें, बंदूकें और चीखें इस डरावने अंदाज में फैल-पसर जाती हैं कि बाल स्वभाव की सरलता-निश्छलता को गुम होते देर नहीं लगती।

इसमें संदेह नहीं कि इंटरनेट सूचनाओं और ज्ञान का साझा भंडार है। तकनीकविदों की राय में यह बच्चों के लिए शैक्षणिक और रचनात्मक बुलंदियों तक पहुंचाने वाला उपकरण है। पर इसके अच्छे-बुरे, दोनों किस्म के प्रभाव हैं। एक ओर इसने बच्चों को बौद्धिक रूप से समृद्ध किया है, तो दूसरी ओर भटकाव के रास्ते

पर भी बढ़ाया है। इस संबंध में किये गये शोध और परीक्षण के चौंकाने वाले नतीजे सामने आये हैं। इंटरनेट के ज्यादा इस्तेमाल से बच्चों में मोटापा बढ़ा है, रक्त में शर्करा की मात्रा बढ़ी है और रक्तचाप में भी उल्लेखनीय बढ़त दर्ज़ की गई है। टेक्नोलॉजी ने आज खेल की जो नई परिभाषा गढ़ी है, वह खुले आसमान के नीचे खेले जानेवाले गिल्ली-डंडा, फुटबॉल, विष-अमृत और चोर-सिपाही जैसे भाग-दौड़ के पारम्परिक खेलों से बिल्कुल अलग है। तकनीक की जादुई दुनिया मनोरंजन के नित नये उपकरण लेकर हर रोज आ रही है। मोबाइल गेम्स के झुनझुने ने बच्चों को कम्प्यूटर आधारित डिजिटल गेम्स भले ही मुहैया करा दिये हों, पर खेलने का मूल मकसद सक्रियता और ऊर्जा से बहुत दूर कर दिया है। इसलिए बच्चों के हित में यह जरूरी है कि तकनीक प्रदत्त खेलों और पारम्परिक खेलों के बीच संतुलन स्थापित किया जाये। अंततः बच्चों की सेहत हमारी प्राथमिक जरूरत है, जिसे किसी भी कीमत पर नज़रअंदाज नहीं किया जा सकता।

निश्चय ही बदलते दौर में परिवार और समाज में बच्चे की भूमिका बदली है। बाजारवादी एवं वस्तुवादी सोच ने उसे बचपन की खुशगवार वादियों से बहुत दूर भी कर दिया है। 'हम दो, हमारे दो' के नारे की जगह अब परिवार में एक ही बच्चे (चाहे वह लड़का हो या लड़की) का चलन पनपने लगा है। संयुक्त परिवार तो पहले ही खत्म हो चुके हैं। ऐसे में बच्चा सिर्फ स्वार्थपरता ही तो सीखेगा। इसीलिए उसमें रिश्तों के प्रति, मानवीय मूल्यों के प्रति संवेदनाएं प्रायः चुक गई हैं। आज का युग पिछले युग की अपेक्षा अधिक प्रतिस्पर्धात्मक तो है ही, संवादहीनता का युग भी है। माता-पिता से खुलकर अपने मन की बात न कह सकने के कारण बच्चे अवसादग्रस्त होते भी देखे गये हैं। कितने बवाल लगे हुए हैं एक नन्हे की मासूम जान के साथ, इसे मोहम्मद फहीम ने कुछ इस तरह बयान किया है -

पढ़ने बैठूं तो दादाजी
कहते ला दे पान
दीदी कहतीं, जा रे मुन्ना
ला दे यह सामान।
नन्हा हूं कुछ कह न पाता
खाता सबसे मात
आखिर क्यों न सुनता कोई
मेरे मन की बात?

कोई सुने या न सुने, लेकिन यह तय है कि बालक के मन की बात को बाल साहित्य ने बड़ी संजीदगी से सुना और समझा है। इक्कीसवीं सदी के बालक के वैज्ञानिक सोच और अनुभूतिप्रवण मन की उसने गहरी परख की है। उसे पता है कि बालक ही राष्ट्रीय चिंतन की इकाई है और उसकी अवज्ञा करके कोई राष्ट्र फल-फूल नहीं सकता। बच्चा जिस घर में रहता है, वह ईंट-पत्थरों से निर्मित छत और चहारदीवारी भर नहीं है, इंसानी जज़्बात, आपसी प्यार और विश्वास ही उसे 'घर' बनाते हैं। इसलिए बचपन से ही देश के नौनिहालों में उच्च सांस्कृतिक मूल्यों और स्नेहिल व्यवहार का बीजारोपण जरूरी है। इसमें संदेह नहीं कि आज की हिन्दी बालकविता में आज का बच्चा अपनी सभी समस्याओं, क्षमताओं और संभावनाओं के साथ एक विराट चित्रफलक पर उपस्थित है। इस चित्र में हिंदी के बाल कवियों द्वारा अभी और सजीव रंग भरे जायेंगे, यह तय है।

2 : बड़ों की कविता और बालगीत

कविता, चित्रकला और संगीत का जीवन से बहुत गहरा व अटूट सम्बन्ध है। जीवन व्यक्ति का हो या समाज का इनके बिना अभिव्यक्ति नहीं पा सकता। कला और जीवन की तरह ही व्यक्ति और समाज के जीवन का भी घनिष्ट सम्बन्ध है। सामाजिक वातावरण का प्रभाव ज्ञात या अज्ञात रूप में कला की अभिव्यक्ति पर पड़ता है। मनुष्य जो कुछ देखता है, उसे कविता में शब्दों और कला में तूलिका द्वारा चित्रित कर देता है और जो भाव उसके मन में अभिव्यक्ति पाने के लिये उमड़ते हैं उन्हें वह कविता या संगीत के माध्यम से स्वर शब्दों में व्यक्त कर संतोष का अनुभव करता है। संगीत और कविता दोनों मुख से उच्चरित होकर व्यक्त होते हैं और कानों से सुने जाकर मन को द्रवित या प्रभावित करते हैं। गीत उस कविता का ही दूसरा नाम है जो संगीत के स्वरों में गति, लय, स्वर के साथ गाई जा सके। पर प्रत्येक गाई जा सकने वाली कविता को गीत नहीं कहा जा सकता। गीत में मनुष्य के अपने निजी सुख-दुःख की अनुभूति व्यक्त होती है। महादेवी वर्मा ने गीत की परिभाषा इस प्रकार की है – “गीत व्यक्तिगत सीमा में तीव्र सुखदायक अनुभूति का वह शब्द रूप है, जो अपनी ध्वन्यात्मकता में गेय हो सके।” गीतकाव्य विषय-प्रधान नहीं विषयी-प्रधान होता है। उसमें कवि की व्यक्तिगत अनुभूति ही आत्माभिव्यक्ति का विषय बन जाती है। उसमें जितना भावों का उद्वेग होता है, उतना विचारों का नहीं। दार्शनिक एवं सैद्धान्तिक विचारों की गतिविधि गीत के सौन्दर्य को नष्ट कर देती है।

कविता का भाव क्षेत्र बहुत व्यापक व निस्सीम है। संसार में मनुष्य जो कुछ देख-सुन, सोच-समझ या कल्पना कर सकते हैं, वह सब उनकी कविता का विषय हो सकते हैं। आज तक संसार में जो कुछ भी देखा, सुना या सोचा-समझा गया है उस सबको कविता के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता है और आगे जहाँ तक मनुष्य की कल्पना जा सकती है, वह सब उसके भाव क्षेत्र में समा सकता है। सारे सामाजिक सम्बन्ध, मान्यतायें, मर्यादायें, आदर्श, धर्म, सिद्धान्त, आर्थिक तथा राजनैतिक मूल्यों और प्रकृति जगत के नाना रूपों तथा उनके क्रिया-कलापों को काव्य जगत की सीमा में समाया जा सकता है। पर गीतों की परिधि इतनी व्यापक तथा विस्तृत नहीं होती। गीत में कवि के अन्तर्जगत का चित्रण ही सम्भव हो सकता है। जिन भावों का कवि ने कभी स्वयं अनुभव नहीं किया उन्हें वह गीत के रूप में व्यक्त नहीं कर सकता। गीत की रचना के लिए पहली शर्त ही यह है कि कवि

के हृदय में एक दर्द, टीस, सिहरन या पुलकन ऐसी हो जिससे बिना गीत गाये उससे रहा ही न जा सके। गीत मन की एक विशेष स्थिति में अपने आप ध्वनित होते हैं। प्रयत्न से एक-एक शब्द जोड़कर रखने और उन्हें अलंकारों का परिधान पहनाने से गीत नहीं लिखा जा सकता। गीत सामाजिक नियम और मर्यादा के बन्धन भी स्वीकार नहीं करते। जो छटपटाहट, बेचैनी या प्रफुल्लता कवि के मन में होती है, वह सारे विचारपूर्ण बन्धनों से मुक्त होकर व्यक्त हो जाना चाहती है। मीरा यदि लोक, लाज, कुल की मर्यादा का ध्यान रखती तो भक्ति में तल्लीन होकर मधुर गीत नहीं गा सकती थी। कबीर, तुलसी और सूर के जिन गीतों में उनके सिद्धान्त या दार्शनिक विचार इत्यादि का पुट जितना कम है, वह उतने ही मधुर हैं। गीत में कवि की अंतरात्मा के स्वर झंकृत होते हैं, उनमें वर्ण्य-विषय और कवि की भावना का ऐसा तादात्म्य हो जाता है कि दोनों को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। रचना की दृष्टि से गीत लिखना कविता लिखने की अपेक्षा कहीं अधिक कठिन साधना का काम है। कम प्रतिभा और अधिक अभ्यास के बल पर कविता लिखकर महाकवि केशवदास बना जा सकता है पर अपने सुख-दुःख के अनुभवों और विशेष प्रतिभा के बिना गीत नहीं लिखे जा सकते।

कविता की अनेक परिभाषायें पूर्व और पश्चिम के विद्वानों ने की है। अंग्रेजी के कवि वर्डसवर्थ ने उसे 'तीव्र मनोभावों का अनायास उफान', कालरिज ने 'संगीतमय भाव', शैली ने 'शाश्वत सत्य में ढालकर व्यक्त किया हुआ जीवन का प्रतिरूप' तथा वाल्टेयर ने 'आत्मा का संगीत' कहा है। भारत वर्ष में प्राचीन-काल से ही कविता की जितनी सूक्ष्म विवेचना की गई है, उतनी शायद ही किसी दूसरे देश के साहित्य में मिलती हो। संस्कृत के आचार्य प्राचीनकाल से कविता की व्याख्या करते आये हैं। किसी ने रीति को, किसीने वक्रोक्ति को और किसी ने अलंकार को काव्य की आत्मा माना है। आचार्य विश्वनाथ का रस को काव्य की आत्मा मानते हुए कहना है – 'वाक्यम् रसात्मकं काव्यम्' अर्थात रसात्मक वाक्य ही काव्य है और हिन्दी में आज तक यही सर्वमान्य मत रहा है। काव्य के रस से प्राप्त होने वाले आनन्द को आचार्यो ने ब्रह्मानन्द सहोदर कहा है। नाट्य शास्त्र के आचार्य भरतमुनि ने रस निष्पत्ति के विषय में लिखा है – 'विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः' अर्थात रसनिष्पत्ति विभाव, अनुभाव और संचारी के योग से होती है। उनके इस कथन के आधार पर शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत, शान्त और वात्सल्य, दस रस माने जाते हैं। यूँ तो यह सभी रस बालगीतों में भी हो सकते हैं, पर वात्सल्य रस से बालगीतों का विशेष सम्बन्ध है। छोटे बच्चों के प्रति होने वाले प्रेम

से इस रस की उत्पत्ति होती है। कवि जब कविता लिखता है, तो उसके मन में कुछ भावों का उद्वेग होता है, वह वर्ण्यविषय से कुछ ऐसा तादात्म्य स्थापित कर लेता है कि उसे उसके अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु का ध्यान उस समय नहीं रहता। कवि उस समय मन की एक ऐसी स्थिति में होता है, कि वह जैसा चाहता है वैसा बन जाता है। मजदूर होते हुये भी वह महलों की बातें करने लग सकता है। अपनी उस समय की मनोभावनाओं को वह शब्द-शक्ति के द्वारा व्यक्त करके दूसरों के लिये भी सुलभ बना देता है। सहृदय पाठक या श्रोताओं के मन में भी वैसी ही भावनायें उठने लगती हैं। साधारणीकरण की इसी प्रक्रिया में जो व्यक्ति अपनी भावनाओं के साथ जितना अधिक तादात्म्य कर सकता है, वह उतना ही सरस काव्य लिख सकता है।

बालगीतों के क्षेत्र में प्रतीकों के प्रयोग के लिये कोई स्थान नहीं है। बालगीत जिन बच्चों के लिए लिखे जाते हैं उनके लिए सांकेतिक भाषा सहज सुबोध नहीं होती। यह ठीक है कि बच्चों की कल्पना की गति बहुत तीव्र होती है और वह अनहोनी व असम्भव कल्पनायें भी कर सकते हैं। दैत्य के सिर पर सींग और परियों के पंख प्राचीन काल से उनके साहित्य में आते रहे हैं, पर अपनी अनहोनी कल्पनाओं और किसी दूसरे की कल्पनाओं को समझ सकने की प्रक्रियाओं में अन्तर होता है। अपनी असंगत कल्पनायें निराधार होते हुये भी मनोरंजक लग सकती हैं पर दूसरे की कल्पनायें युक्तिसंगत होते हुए भी सदैव समझ में नहीं आ सकतीं। इसलिए बड़ों द्वारा बच्चों की कविता में लाये जाने वाले नए बिम्ब, नए प्रतीक, नए प्रयोग और नए भावबोध बच्चों को स्वाभाविक रूप से ग्राह्य नहीं हो सकते, वह उन्हें अपने ऊपर आरोपित समझ कर उनसे दूर भागने का प्रयत्न कर सकते हैं।

बच्चे छोटी-छोटी लयात्मक तुकबन्दियाँ तो जोड़ सकते हैं पर स्वयं अपने लिये गीतों की रचना नहीं कर पाते इसलिए उनके लिए उपयुक्त बालगीत लिखने का कार्य बड़ों को करना पड़ता है। बाल स्वभाव के पारखी, बच्चों की रुचियों, भावनाओं और कल्पनाओं को अच्छी तरह से समझने वाले ही बालगीत लिख सकते हैं। उनमें अपने मन का बच्चों के मन से तादात्म्य स्थापित करने की शक्ति का होना आवश्यक होता है। यह तादात्म्य करते समय बड़ों की बड़ी-बड़ी बातों का कोई संस्कार उनके मन पर नहीं होना चाहिए।

किसी कविता को गीत की संज्ञा देने के लिये उसमें गेय तत्व और स्वानुभूति की अभिव्यक्ति होना भी आवश्यक है। गेय तत्व बड़ों और बच्चों के गीतों में समान

रूप से पाये जाते हैं। बालगीत राग-रागिनियों में बाँधकर संगीत के स्वर-लय के आधार पर भले ही न गाये जा सकें पर बच्चे उन्हें अपनी तरह से स्वर के उतार चढ़ाव के साथ गा सकते हैं। स्वानुभूति की अभिव्यक्ति की दृष्टि से बड़ों के गीत और बालगीतों में बहुत अन्तर होता है। बड़ों के गीतों की प्रेरणा कवि को स्वयं अपनी अनुभूतियों से मिलती है। उसे अपने मन में उठने वाली भावनाओं का उफान गीतों में व्यक्त करने के लिए विवश कर देता है पर बालगीतों को रचने की प्रेरणा कवि को स्वयं उसकी अपनी अनुभूतियों से नहीं मिलती, वह बच्चों की भावनाओं से प्रेरणा ग्रहण करके कोई बालगीत लिखता है। बच्चों की दुनियां ही बड़ों की दुनियां से सर्वथा भिन्न होती है। उसके नदी, पहाड़, सागर, फूल, पत्ते, पशु, पक्षी, मनुष्य और उनके आचरण, व्यवहार के तरीके और रस्म, रीति-रिवाज कुछ भी वैसे नहीं होते, जैसे बड़ों की दुनियां के होते हैं। बच्चे जिस कौतूहलपूर्ण दृष्टि से सृष्टि के पदार्थो को देखते हैं बड़ों के पास वह दृष्टि नहीं होती, उनके लिए प्रयत्न करके भी उस दृष्टि को प्राप्त करना कठिन होता है। बच्चों का कोई लेखक या कवि जब तक अपने बड़े होने के सारे अहम् को भूल कर उस दुनियां को बच्चों की दृष्टि से देखते हुये स्वयं बच्चा बनकर अनुभव न करने लगे तब तक वह बालगीत लिख ही नहीं सकता। उसका वह अनुभव उसका अपना नहीं होता क्योंकि उसके लिये वह बच्चों की एक दूसरी दुनियां का अनुभव होता है। तब बालगीतों में कवि की अपनी निजी अनुभूति की अभिव्यक्ति कैसे सम्भव हो सकती है? फिर भी क्योंकि बच्चों का कवि बच्चों की दुनियाँ में उनकी इच्छाओं, आकांक्षाओं, मनोभावों और कल्पनाओं में अपने को इतना खो देता है कि उसकी अपनी इच्छाओं, आकांक्षाओं, मनोभावों व कल्पनाओं का कोई अस्तित्व ही नहीं रह जाता। इसीलिए वह उस दूसरी दुनियां की भी जिन बातों की अभिव्यक्ति करता है वह उसकी अपनी दुनियां की बातों की अभिव्यक्ति की तरह ही सहज व स्वाभाविक होती हैं। बच्चों की दुनियां में वह अपने को जितना कम खो पाता है उतनी ही रस की कमी उसके लिखे बालगीतों में रह जाती है।

पर बहुत छोटी आयु के बच्चे तो यह भी नहीं जानते कि कविता किस चिड़िया का नाम है। कविता का आनन्द लेने के लिए न तो उन्हें कोई समारोह जैसा वातावरण चाहिये, न कोई मानसिकता की पृष्ठभूमि। बड़ों को एक बालगीत की यह दो पंक्तियां गद्यात्मक और सपाटबयानी से अधिक और कुछ नहीं लग सकतीं-

बिल्ली के घर बिल्ली आई
कलकत्ता से दिल्ली आई

पर बालगीत की उपरोक्त दो पंक्तियों को यदि बच्चों की दृष्टि से देखा जाये तो उन्हें उनमें कविता का वही रस प्राप्त होता है जो किसी बड़े को अपनी भावपूर्ण कविता में। बड़ों के बनाये हुये रस सिद्धान्त बच्चों की कविता पर लागू नहीं होते।

संगीताचार्यो के गुरु स्वामी हरिदास से एक बार किसी ने पूछा था - "संगीत में सबसे अधिक आनन्द किसे आता है?" तो उन्होंने उत्तर दिया था - "बच्चों को।" तब क्या इसका यह तात्पर्य है कि बच्चे राग-रागिनियों में स्वरों के उतार-चढ़ाव, गति, लय, तान, स्थायी, अन्तरा आदि से परिचित होते हैं? संगीत की तरह कविता के कलापक्ष के विषय में भी कोई पूर्व ज्ञान बच्चों को नहीं होता फिर भी वह उसमें रस लेते हैं। बच्चे जब कोयल को एक निश्चित अन्तराल से बार-बार कू ऊ ऊ करते सुनते हैं तो प्रफुल्लित होकर स्वयं भी वैसे ही कू ऊ कू ऊ करने लगते हैं। उनके छुक छुक छुक छुक करके चलती हुई रेलगाड़ी के स्वर में भी वही आनन्द आता है, जो किसी बड़े को कोई अच्छी कविता पढ़ने या सुनने में। इसका अर्थ है कि कविता या संगीत का वह कोई और तत्व भी है जो बच्चों को उनकी ओर अधिक आकर्षित करके बड़ों की अपेक्षा अधिक आनन्द देता है। राग-रागिनियां, ताल, तान, स्थायी, अन्तरा, वाक्यविन्यास और अलंकार तो संगीत और कविता के वह बाह्य आडम्बर हैं जिनसे जानकार बड़े लोग ही उनमें आनन्द या रस की प्राप्ति कर सकते हैं।

बच्चों के लिये कविता में रस का आधार भौतिक है और वह उनके भौतिक अस्तित्व से ही सम्बन्ध रखता है। मनुष्य प्रकृति और सारे भौतिक पदार्थो में सब कुछ एक नियम क्रमबद्ध रूप से घटित होना ही उनकी लयबद्धता है। बच्चा अपने जन्म के बाद सृष्टि की उस लयबद्धता से नया-नया अलग अस्तित्व में आया हुआ होता है इसलिए धार्मिक लोग उसे भगवान का रूप कहते हैं। उसके अस्तित्व का यह आग्रह होता है कि वह सृष्टि की उसी लयबद्धता के अनुसार चले। कविता या संगीत में भी एक लयबद्धता होती है, इसलिए बच्चा उसकी ओर आकर्षित होता है और उसमें आनन्द या रस प्राप्त करता है। यही कविता में बच्चों के रस प्राप्त करने का भौतिक आधार है। स्वामी हरिदास ने इसी ओर संकेत करके यह कहा होगा कि बच्चों को संगीत में सबसे अधिक आनन्द आता है। जेम्स नामक विचारक का भी तात्पर्य यही था कि सृष्टि और कविता की लय या नियम-क्रमबद्धता एक व्यवस्था लाकर उसके विवेकशील बनाने का प्रयत्न करती है, इसीलिये बच्चे को उनमें रस या सुख प्राप्त होता है। बड़ा होकर मनुष्य प्रकृति की नियम-क्रमबद्धता या लय

के प्रतिकूल भी आचरण करने लगता है। वह कभी-कभी तो स्वयं अपनी बनाई हुई कृत्रिम परिस्थितियोंवश ऐसा आचरण करने लगता है जो प्रकृति की लयबद्धता के प्रतिकूल ही होता है और फिर धीरे-धीरे उसी का अभ्यस्त हो जाता है। इसीलिए प्रायः यह देखा जाता है कि सरस से सरस संगीत या कविता किसी बड़े मनुष्य को तनिक भी प्रभावित नहीं करती - 'भैंस के आगे बीन बजाई, भैंस खड़ी पगुराय'। पर शिशुओं या अबोध बच्चों में से कोई भी ऐसा नहीं होता जिसे सृष्टि या कविता की लयात्मकता से सुख का अनुभव न होता हो। बच्चों में जो संवेदनशीलता, उसके प्रति स्वाभाविक रूप से पाई जाती है, वह बड़ों में नहीं, इसीलिए बड़ों के संगीत और कविता को रोचक बनाने के लिए वाद्य यन्त्रों, अलंकारों आदि की सहायता ली जाती है। उनके बिना बहुत से बड़ों को संगीत संगीत और कविता कविता लगती ही नहीं। बच्चों की कविता और सृष्टि की लयबद्धता में अन्योन्याश्रित संबंध है। जीवन के प्रारम्भ में ही सृष्टि की लयबद्धता से यह परिचय बच्चों को भविष्य में विवेकशील बनाने वाला और जीवन को व्यवस्थित और अनुशासित बनाने में बड़ा उपयोगी होता है। जिस जाति के बच्चों को जीवन के प्रारम्भ में ही शिशु या बालगीत नहीं मिल पाते वह भविष्य में बड़े होकर मुश्किल से ही संतुलित विचारों वाले बन सकते हैं।

कवि जिस प्रकार किसी भी चरित्र नायक के विषय में कविता लिखते समय उसकी भावनाओं को समझकर उन्हें सच्चाई और ईमानदारी से व्यक्त करने का प्रयत्न करता है उसी प्रकार बालगीतों में वह बच्चों की भावनाओं और कल्पनाओं को व्यक्त करता है। कोई कवि यदि राम के वन गमन या दशरथ की मनोव्यथा का वर्णन करे तो वह जितना अधिक दशरथ के दुःख को आत्मसात कर सकेगा उतनी ही सफलता उसे व्यक्त करने में मिलेगी। इसी प्रकार जो कवि बच्चों की भावनाओं और कल्पनाओं को जितना आत्मसात कर सकेगा, उतने ही अच्छे बालगीत वह लिख सकेगा। दूसरे की भावनाओं को व्यक्त करने वाली कविता में गेय तत्व होते हुए भी हम उसे गीत नहीं कह सकते। इस दृष्टि से बालगीत वास्तव में कविता ही होता है गीत नहीं, पर हिन्दी में बच्चों की कविता के लिये बालगीत शब्द अब इतना प्रचलित हो चुका है कि उसे कोई दूसरा नाम दे सकना कठिन है। बच्चों की भावनाओं की दृष्टि से यह गीत तीन श्रेणियों के हो सकते हैं - एक वह जो बच्चों की भावनाओं के बहुत निकट हैं; दूसरे वह जो बच्चों की भावनाओं से बहुत दूर हैं; तीसरे वह जो इन दोनों श्रेणियों के बीच के हों पर इन तीनों श्रेणियों के बालगीत कविता ही हैं। गीत तो केवल उन्हें कहा जा सकता है जिन्हें बच्चों ने स्वयं अपनी

बरसो राम धड़ाके से।
बुढ़िया मर गयी फाके से।।

लोरियां और प्रभातियां भी बालगीत ही कही जाती हैं, पर उनमें बच्चों के नहीं माताओं के मनोभाव व्यक्त होते हैं। स्वर-लय से गायी जाने के कारण वे बच्चों का मनोरंजन करती हैं इसलिये हम उन्हें बालगीतों के अन्तर्गत मान लेते हैं। हम उन्हें वात्सल्य रस के गीत तो कह सकते हैं पर बालगीत नहीं।

बालगीत और वात्सल्य रस के गीतों में यह अन्तर है कि बालगीत में बच्चे स्वयं अपनी भावनायें व्यक्त देखकर प्रसन्न होते हैं और यह सोचते हैं कि उनके पास यदि शब्द होते तो इसी प्रकार के गीत लिख देते। वे उन्हें बार-बार पढ़ना और दोहराना चाहते हैं और अक्सर याद कर लेते हैं। पर जिस गीत में बच्चों के प्रति बड़ों का स्नेह, मोह, ममता व्यक्त किये गये हों उसे वात्सल्य रस की कविता तो कहा जा सकता है, बालगीत नहीं। वात्सल्य रस का स्थायी भाव स्नेह माना गया है। सूरदास के अनेक पद जैसे 'सुतमुख देख यसोदा फूलीं' या 'जसोदा हरि पालने झुलावैं' बालगीत नहीं कहे जा सकते।

हिन्दी में नये शब्दों और नये प्रयोगों के शौकीन कुछ कवि बालगीतों पर सपाटबयानी का आरोप लगाकर आलोचना करते हैं। उनकी समझ से बच्चों की कविता के क्षेत्र में भी वैसे ही नये प्रयोग होना चाहिये जैसे बड़ों की कविता में छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद तथा अगीत या अकविता के नाम पर होते रहे हैं। पर वह शायद न बच्चों की रुचि को जानते हैं न उनके शब्द भण्डार की सीमा को। बच्चों के लिए तो सपाटबयानी वाले बालगीतों के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार के बालगीत लिखे ही नहीं जा सकते।

बड़ों की कविता की तरह अतुकान्त केंचुआ या रबड़ छन्द में भी बालगीत नहीं लिखे जा सकते। उनमें लयात्मकता हो तो भी बच्चे उनकी लय को पकड़ नहीं पाते। हिन्दी में ऐसे जो दो-तीन प्रयोग हुये हैं वह भी असफल ही रहे हैं।

यहाँ बालगीत और बालोपयोगी कविता के अन्तर पर कुछ विचार कर लेना भी अप्रासंगिक न होगा। उपयोगी और ललित कलाओं को सदा अलग-अलग करके देखा गया है। कविता एक ललित कला है जबकि सोने से आभूषण गढ़ना एक उपयोगी कला। बाल कविता को हम ललित और उपयोगी दोनों दृष्टियों से देख सकते हैं। उसके विषय में हमारे भारतीय समाज में दो दृष्टिकोण हमेशा से पाये जाते रहे हैं - कुछ बाल कवितायें बच्चों की दृष्टि से वस्तु जगत को देखकर स्वयं बालक बनकर लिखी जाती हैं और कुछ कवितायें इस दृष्टि से लिखी जाती हैं कि बच्चे

उनसे कुछ ज्ञान या शिक्षा प्राप्त करें या उनसे उन्हें कुछ प्रेरणा या उपदेश मिलें, और उनके सामने जीवन के कुछ आदर्श निश्चित हो सकें। पहले प्रकार की कविताओं में बाल मन की सरल-स्वाभाविक जिज्ञासाओं, इच्छा-आकांक्षाओं और कल्पनाओं को उनकी सी सरल भाषा में ही व्यक्त किया जाता है और उनके मनोरंजक होने में ही उनकी रचना की सार्थकता रहती है। पर दूसरे प्रकार की कविता जब तक प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से बच्चों के चरित्र निर्माण में सहायक नहीं होती, वह बच्चों के लिये निरर्थक समझी जाती है। पहले प्रकार की कविता बच्चों के मन की भावनाओं के साथ चलती है और दूसरे प्रकार की कविता उनके हित साधन या ज्ञान बढ़ाने के उद्‌देश्य को लेकर। उसमें बच्चे को कोई अनगढ़ वस्तु समझ लिया जाता है जिसे किसी भी रूप में गढ़कर प्रस्तुत कर देना कवि का उद्‌देश्य होता है। पहले प्रकार की कविता में बच्चे को कोई वस्तु नहीं एक व्यक्तित्ववान मनुष्य समझा जाता है। वह उसके व्यक्तित्व को कोई नया मोड़ देने या उसे किसी साँचें में ढालने के उद्‌देश्य से नहीं लिखी जाती। इसलिये हम सोद्देश्य कविता को बालोपयोगी और केवल मनोरंजन के लिये लिखी गयी कविता को बालगीत कह सकते हैं। पहली एक उपयोगी कला की प्रतीक है और दूसरी ललित कला की।

बड़ों के साहित्य में जैसे किसी धार्मिक, राजनीतिक या दार्शनिक विचार का प्रचार करने वाले किसी कवि को हम श्रेष्ठ कवि की श्रेणी में तब तक नहीं रख सकते जब तक हम उस विचार के समर्थक न हों। इसी प्रकार बच्चों को अपनी दृष्टि से किसी विशेष प्रकार का श्रेष्ठ मनुष्य बनाने का प्रचार करने वाले बच्चों के किसी कवि को हम श्रेष्ठ तब तक नहीं कह सकते जब तक मनुष्य की श्रेष्ठता के विषय में हमारा भी वैसा ही विचार न हो। ललित कला के क्षेत्र में श्रेष्ठ कविता हमेशा वही मानी गयी है जिसमें कही हुई बात मनुष्य मात्र के मन की अपनी जैसी बात हो, न कि किसी विशेष प्रकार के श्रेष्ठ माने जाने वाले व्यक्ति विशेष मनुष्य के मन की जैसी बात। आर्यसमाजी विचारों से प्रेरित होकर कविता लिखने वालों को केवल आर्यसमाजी विचारों के लोग ही श्रेष्ठ और महान कवि मान सकते हैं, मूर्ति पूजा में विश्वास करने वाले सनातनधर्मी नहीं। लेनिन के कहने के अनुसार कवि मनुष्य की आत्मा का इन्जीनियर होता है पर वह आत्मा, किसी विशेष रंग रूप या आकार-प्रकार के मनुष्य की नहीं, मनुष्यमात्र की होती है।

बच्चे स्वयं इस बात का निर्णय नहीं कर पाते कि उनके लिए क्या उपयोगी है और क्या नहीं। इसलिए बालकविता की उपयोगिता का निर्णय एकपक्षीय उन बड़ों का होता है जो बच्चों के हित और अनहित के विषय में कुछ निश्चित विचार

रखने का दावा करते हैं। बच्चे तो उसे ही अपनी कविता कह सकते हैं जो उनके लिए उपयोगी हो या न हो पर उन्हें अच्छी लगने वाली हो। होता यह है कि समाज के नेता जिन्हें श्रेष्ठता का प्रमाण पत्र दे देते हैं वही बच्चों की अपनी कवितायें मानी जाने लगती हैं। पर किसी झूठ को यदि हजार बार कहा जाये तब भी वह झूठ ही रहता है।

बच्चों और बड़ों के लिए कविता में उनकी रचना प्रक्रिया की दृष्टि से कोई विशेष अन्तर नहीं होता। जैसे बड़ों का कोई श्रेष्ठ कवि एक सत्य को उजागर करके या सौन्दर्य की सृष्टि करके उसे वैसा ही छोड़ देता है कि उसका पाठक या श्रोता जो चाहे वह प्रेरणा उससे ग्रहण करले, वैसे ही कोई श्रेष्ठ बालगीत का लेखक इससे अधिक कुछ नहीं करता। एक प्रसिद्ध लेखक फिलिस फेनर के शब्दों में आप बच्चों को बेवकूफ नहीं बना सकते। लिनियम स्मिथ ने भी एक स्थान पर कहा है कि बाल साहित्य सामान्य साहित्य से असंबद्ध आकाश में विद्यमान नहीं होता, वह सामान्य साहित्य का ही एक अंग होता है। बड़ों का कोई भी साहित्य पहले से उपयोगिता का निर्णय करके नहीं लिखा जाता, उसका उद्देश्य केवल सत्य को उजागर करना और सौन्दर्य की सृष्टि कर पाठकों का मनोरंजन करना होता है। तब फिर आवश्यक मान कर कैसे चला जा सकता है कि बच्चों के लिए जो गीत लिखे जायें वह उनके लिए उपयोगी भी हों। जेम्स रीब्ज ने इस सम्बन्ध में स्वयं अपने अनुभव के आधार पर कहा है - "बच्चों के लेखक के लिये यह आवश्यक है कि वह अपनी अनुभूति को बच्चे के मन से, उसकी दृष्टि से देखे। मैं किन्हीं सैद्धान्तिक निष्कर्षो को लेकर नहीं चला हूँ बल्कि मैंने यही आवश्यक समझा है कि मैं बच्चे की दृष्टि से देखूँ, बच्चे के कानों से सुनूँ, बच्चे के मन से कल्पना करूँ और कुछ हद तक बच्चे के मन से महसूस करूँ, और इस समस्त प्रक्रिया में परिपक्व लेखक के तकनीकी अनुभव का प्रयोग करूँ।"

बालोपयोगी कविता बच्चों के अपने बालगीतों की तुलना में उस झूठे सिक्के के समान है जो कुछ समय तक बच्चों में प्रचलित भले ही रहे, कभी न कभी उसे चलन से निकाल बाहर अवश्य किया जायेगा। डॉ. मस्तराम कपूर का इस सम्बन्ध में ठीक ही कहना है कि वयस्क समाज खुलेआम बच्चे के साथ धोखा करता है। उसे बचपन में हर कहानी-कविता के माध्यम से बताया जाता है कि झूठ बोलना पाप है, चोरी करना बुरा है, खुशामद करना अच्छा नही, ईमानदारी और सच्चाई बड़ी चीज हैं आदि; पर वह जीवन में कभी इन उपदेशों पर अमल नहीं कर पाता।

इस धोखे के प्रथम साक्षात्कार पर ही उसके मन में वयस्क पीढ़ी के प्रति विद्रोह की भावना पैदा हो जाती है और वह शाश्वत बन जाती है।

यह ठीक है कि बच्चों की कविता बड़ों के द्वारा हमेशा सप्रयास लिखी जाती है क्योंकि उसके लेखक स्वयं बच्चे तो होते नहीं कि बच्चे की भावनायें स्वाभाविक रूप से उनके मन में स्वतः उठा करें। बच्चों के प्रति उनका अगाध प्रेम ही उनमें वह क्षमता पैदा करता है जिससे वह बच्चों के लिये लिखते समय बच्चा बन जाते हैं। ऐसा तो प्रत्येक कवि को बड़ों के लिये लिखते समय भी करना पड़ता है। यशोधरा या उर्मिला बनकर लिखनेवाला ही उनके मन की व्यथा का सफल चित्रण कर सकता है पर बड़ों की कविता लिखने वाला अपनी यशोधरा या उर्मिला बन पाने की कमी को शब्द विन्यास या अलंकार आदि के द्वारा किसी न किसी रूप में पूरा कर सकता है, बच्चों के लिये लिखने में उस कमी को पूरा करने वाली कोई कारीगरी काम नहीं आती। बच्चों के लिये लिखते समय तो उसे पूर्ण रूप से बच्चा बनना ही पड़ेगा।

बच्चों के लिए सप्रयास लिखने का यह अर्थ नहीं है कि बड़े यह अधिकार अपने आप ही प्राप्त कर लें कि बच्चों के लिए क्या लिखना उपयोगी होगा और क्या नहीं। यह अधिकार तो सदा बच्चों का ही रहेगा कि वह अपने लिये लिखे जाने वाले साहित्य में से किसे अपनाते हैं और किसे नहीं। जिस दिन उनका यह अधिकार छिन जायेगा, उनके स्वाभाविक विकास की गति अवरुद्ध हो जायेगी और उनके लिये लिखा जाने वाला साहित्य विज्ञापन या प्रचार मात्र होकर रह जायेगा।

कुछ लोगों का यह भी कहना है कि ईसप और पंचतन्त्र की कहानियों में शिक्षा और उपदेश हैं फिर भी वे संसार का सर्वश्रेष्ठ बाल साहित्य मानी जाती हैं। इससे मनोरंजक और उपयोगी बाल साहित्य का अन्तर समाप्त नहीं हो जाता। इन दोनों कथा कहानियों के लेखकों का मुख्य उद्देश्य बच्चों का मनोरंजन करना ही था। दूसरे, गीत और कथा कहानियों को हम समकक्ष नहीं रख सकते। गीतों का स्वानुभूति निरूपक और इसलिये मनोरंजक होना ही आवश्यक है। शिक्षा या उपदेश की बात से गीत बच्चों के लिये बोझिल हुये बिना नहीं रहते। इसके अतिरिक्त बाल साहित्य कहानियों के रूप में हो या कविता के, वह बच्चों की भावनाओं की सार्वभौमिकता के आधार पर ही लिखा जा सकता है। उपदेश या शिक्षा की बात बीच में आते ही लेखक को प्रायः किसी विशेष काल या परिस्थितियों के जाल में फंसकर रह जाना पड़ता है। ईसप और पंचतन्त्र की कहानियों में शिक्षा और ज्ञान की जो बातें किसी न किसी रूप में आ भी गयी हैं वह सार्वभौमिक और सर्वकालिक हैं। किसी देश

में किसी समय झन्डा उठाने या देश के लिये अपना शीश कटा देने की बात किसी विशेष काल और परिस्थिति में तो बच्चों के लिये उपयोगी समझी जा सकती हैं पर सब समयों और सब देशों में सब परिस्थितियों के लिये नहीं। जन्म और स्वभाव से ही बच्चे का सम्बन्ध सारी सृष्टि और समस्त मानव समाज से होता है और बच्चों का जो कवि उस सम्बन्ध की पकड़ नहीं रखता, और अपने ही सीमित देश काल की परिस्थितियों से बंधा रहता है, वह कभी बच्चों का सफल कवि नहीं हो सकता। भुवनेश्वर में होने वाले एक बाल साहित्य सम्मेलन में वहाँ के शिक्षा निदेशक श्री बी. दास ने अपने भाषण में कहा था कि बच्चों के लिए कौन सा साहित्य ठीक है और कौन सा नही, इसका निर्णय हम बड़े लोग आज कैसे कर सकते हैं, इसका निर्णय तो बच्चे ही स्वयं वयस्क होकर करेंगे; जब वे इस बात पर विचार करेंगे, कि जो साहित्य बचपन में उन्हें पढ़ने को दिया गया था वह उन्हें वह बनाने में कहाँ तक सहायक हुआ था जो वे अब हैं। इस दृष्टि से भी बच्चों में मानवीय गुणों का विकास करने वाला साहित्य ही उनका अपना साहित्य हो सकता है। मानवीय गुण क्या हैं - इसे किसी भी प्रकार से अपनी दृष्टि को सीमित करके नहीं देखा जा सकता। मनुष्य समाज, सभ्यता, संस्कृति आदि का निर्माता ही नहीं, ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में अपार शक्ति और क्षमता का केन्द्र है और उसी मनुष्य के बालरूप के लिये बालगीत रचे जाते हैं, इसलिये उन पर किन्हीं विशेष मान्यताओं या वैज्ञानिक सत्य के अधूरे ज्ञान की छाप लगाकर उन्हें बच्चों के लिये उपयोगी बताने का प्रश्न हीं नहीं उठता।

बड़ों का यह निर्णय कि कौन से बालगीत बच्चों के लिये उपयोगी हो सकते हैं और कौन से नहीं, उन्हीं बच्चों के लिये हो सकता है जो इतने छोटे हों कि भाषा भी ठीक से न समझ सकें, और बड़ों को ही पढ़-पढ़ कर सुनाना पड़े, जैसे लोरियां सुनने वाले बच्चे स्वयं नहीं समझ सकते कि उनके लिये कौन सी लोरियां उपयुक्त हैं या जिन बच्चों का भाषा-ज्ञान वर्णमाला के अक्षरों तक ही सीमित है उन्हें सुनाये जाने वाले गीतों का चयन बड़ों को ही करना होगा। पर यह चयन या निर्णय करते समय भी उन्हें इस बात का ध्यान रखना होगा कि कौन सी लोरियां और बालगीत बच्चों का मनोरंजन कर सकेंगे। मनोरंजन के अतिरिक्त और कोई दूसरा उपयोग उनका हो ही नहीं सकता।

उपयोगी और मनोरंजक बालगीतों के इस अन्तर को समझे बिना न तो बालगीतों की रचना की जा सकती है और न मूल्यांकन। पर बालोपयोगी कवितायें

मनोरंजक होती ही न हों ऐसी बात भी नहीं है। बच्चों में ज्यों-ज्यों समझ आती जाती है वह अपने लिये जिज्ञासा को शान्त करने वाली ज्ञानवर्धक या कुछ करने की प्रेरणा देने वाली कवितायें स्वयं ही पसन्द करके ग्रहण करने लगते हैं। तब भी उनकी उपयोगिता के विषय में निर्णय लेने का उनका अपना अधिकार उनसे छिनकर उन बड़ों के पास नहीं पहुँचता जो अपनी पूर्वनिश्चित मान्यतायें और पूर्वाग्रहों की दृष्टि से देखकर बच्चों के लिये उनकी उपयोगिता का कुछ का कुछ अर्थ लगा लेते हैं। प्लेटों का कहना था "शिक्षा केवल मनोरंजन के माध्यम से ही दी जानी चाहिए। जिस शिक्षा से बच्चों को आनन्द न मिले उसका न दिया जाना ही अच्छा है।"

पं. रामनरेश त्रिपाठी ने जो बात अपने समय की कविता के विषय में कही थी वह आज के बालगीत कहे जाने वाले साहित्य पर भी लागू होती है। उन्होंने कहा था "आज की हिन्दी कविता की ओर जब हम ध्यान देते हैं तो बहुत निराश होना पड़ता है, कोरी तुकबन्दी को कविता का नाम दिया जा रहा है, बक को कोयल और कौवे को मोर बताया जा रहा है........ आज की कविता में काव्य के गुण न होने से पढ़ते समय ऐसा जान पड़ता है कि मानों जीभ के मैदान पर शब्द लट्टू चला रहे हैं।" आज के बहुत से बालगीतों को पढ़कर बच्चों को भी ऐसा ही मालूम होता है, क्योंकि उनमें बच्चों की भावनाओं का अभाव दिखाई देता है।

21 वीं सदी में बडों की कविता एवं बालगीत

आज 21 वीं सदी में बड़ों की कविता और बालगीत का क्या रूप है, उनमें क्या साम्य-वैषम्य है, यह जानने के लिए उनके संक्षिप्त विकास-क्रम को देखना जरूरी है। दोनों ने ही अपने उदयकाल से लेकर अब तक एक लंबा सफर तय किया है। हालांकि उत्तरआधुनिक युग में कविता के अंत की घोषणा हुई, पर वह आज भी जीवित एवं सतत प्रवहमान है। उसकी सार्थकता पर भी कई बार सवाल उठाये गये। धूमिल ने 'संसद से सड़क तक' में प्रश्न किया, "जब इससे चोली बन सकती है / न चोंगा / तब आपै कहो / इस ससुरी कविता को / जंगल से जनता तक / ढोने से क्या होगा?" इसके विपरीत छविनाथ मिश्र ने कविता को ईश्वर से भी बड़ा बताते हुए कहा, "कविता जब किसी पक्ष में / या किसी के खिलाफ / अपनी पूरी अस्मिता से खड़ी होती है / तब वह ईश्वर से भी बड़ी होती है।" हरिजोशी ने "साहित्य के प्रासाद की महारानी है कविता" कहकर यदि उसकी आरती उतारी, तो रामदरश मिश्र ने दम तोड़ती संवेदनाओं के वैश्वीकरण के वर्तमान युग में उसे नई सुबह का संवाहक बताया -

टूटे तारों से हिलते हैं यहाँ-वहाँ रिश्ते-नाते
शब्द ठहर जाते सहसा इक-दूजे में आते-जाते
फिर भी जाने क्यों लगता कल धरती छंदमयी होगी
कविता बोली मत उदास हो, कल फिर नई सुबह होगी।

भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र (सन् 1850-1885) ने ब्रजभाषा काव्य के वर्चस्व को तोड़ते हुए साहित्य-क्षेत्र में खड़ी बोली की प्राण-प्रतिष्ठा की। पर उस संक्रांति काल में ब्रजभाषा ही कविता की भाषा रही और गद्य-लेखन में खड़ी बोली का प्रयोग शुरू हुआ। तदुपरांत 20 वीं सदी के आरंभ में आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' के संपादक के रूप में खड़ी बोली को ही गद्य-पद्य की भाषा बनाने पर जोर दिया। परिणाम स्वरूप श्रीधर पाठक, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' और मैथिलीशरण गुप्त ने खड़ी बोली कविता को रुचिपूर्वक अपनाकर नई ऊंचाइयां दीं। हरिऔध का 'प्रियप्रवास' खड़ी बोली हिन्दी का पहला महाकाव्य है। श्रीधर पाठक ने बड़ों के साथ बच्चों के लिए भी कविताएं लिखीं और यहीं से बालकविता अस्तित्व में आई।

हिन्दी कविता ने द्विवेदी युग के पश्चात् छायावाद युग (सन् 1918-1936) में प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी की चतुष्टयी पाकर प्रेम, सौंदर्य व रहस्यवाद के नये गवाक्ष खोले। प्रगतिवाद युग (सन् 1936-1943) में नागार्जुन, दिनकर, भगवतीचरण वर्मा, केदारनाथ अग्रवाल आदि की वाणी में मुखरित होकर वह सामाजिक यथार्थ से जुड़ी। प्रयोगवाद युग (सन् 1943-1952) में अज्ञेय, भारत भूषण अग्रवाल, प्रभाकर माचवे और धर्मवीर भारती ने उसे दमित कामभावना, क्षणवाद, बौद्धिकता जैसी प्रयोगशील प्रवृत्तियों से जोड़ा। नई कविता (सन् 1952-1962) के कलेवर में वह लघुमानव की प्रतिष्ठा, अतिबौद्धिकता आदि बिंदुओं के माध्यम से नव्यता-बोध को प्रदर्शित करने में सफल हुई।

सन् 1960-62 के बाद तो हिंदी कविता में काव्यान्दोलनों की बाढ़-सी आ गई। ये आंदोलन आस्थावादी तथा अनास्थावादी धाराओं से अनुप्रणित रहे। आस्थावादी धारा के प्रमुख आंदोलन एवं उनके उन्नायकों के नाम इस प्रकार हैं - सनातनी सूर्योदयी कविता (वीरेंद्र कुमार जैन), अगली कविता (डा. ओमानंद रु. सारस्वत), सहज कविता (डा. रवींद्र भ्रमर), निर्दिशामयी कविता (सत्यदेव राजवंश), विचार कविता (डा. नरेंद्रमोहन और डा. महीप सिंह), नवगीत (ओम प्रभाकर), साठोत्तरी कविता (सलिल गुप्त), आज की कविता (हरीश भादानी), ताजी कविता (लक्ष्मीकांत वर्मा), अधुना कविता (ओमप्रकाश भाटिया 'अराज'), अत्याधुनिक कविता (डा. कुमार विमल), अपरम्परा कविता (राजेंद्र कुमार) आदि।

अनास्थावादी धारा के प्रमुख काव्यान्दोलनों व उनके उन्नायकों के नाम हैं- अकविता (जगदीश गुप्त), भूखी कविता (राजकमल चौधरी), विद्रोही पीढ़ी (केशरी प्रसाद चौरसिया), अभिशप्त पीढ़ी (मदन मोहन तरूण), श्मशानी पीढ़ी (निर्भय मल्लिक), लिंग्वादलमोतवादी कविता (शिवचंद्र शर्मा), अस्वीकृत कविता (श्रीराम शुक्ल), अनागरिक कविता (अलख नारायण), नकार कविता (सुशील कुमार), अगीत (रंगनाथ मिश्र), अनकविता (मुद्राराक्षस), युयुत्सा कविता (शलभ रामसिंह), प्रतिबद्ध कविता (बलवीर) तथा प्रतिश्रुत पीढ़ी (डा. रणजीत) आदि।

प्रबंध और मुक्तक शैली तो हिंदी कविता में आरम्भ से ही विद्यमान रही, पर साठोत्तरी कविता में अनेक नये काव्य रूप भी सामने आये, जिन्हें हम मिथक काव्य, लंबी कविता, दोहा-सतसई, नवगीत, हाइकु तथा हिंदी ग़ज़ल के नाम से जान सकते हैं। मिथक काव्य का उपजीव्य पुराण अथवा ऐतिहासिक गाथाएँ रहीं। किसी प्राचीन प्रसंग या पुराकथा को मिथकीय प्रतीकात्मकता के माध्यम से युगीन प्रासंगिकता देकर इन्हें लिखा गया। सन् 1961 में रामधारी सिंह 'दिनकर' की 'उर्वशी' से लेकर सन् 2005 के माधव कौशिक के 'लौट आओ पार्थ' के मध्य अनेक सुंदर मिथक काव्य रचे गये। लंबी कविता में सामाजिक सरोकार अथवा जीवन के विशिष्ट अनुभवों को विचार या संवेदना के द्वारा मुखर किया गया। धूमिल की 'मोचीराम', लीलाधर जगूड़ी की 'बलदेव खटिक', नागार्जुन की 'हरिजन गाथा' इस कोटि की कुछ महत्वपूर्ण रचनाएं हैं। यही नहीं, रीतियुगीन परंपरा की 'दोहा-सतसई' शैली भी वर्तमान युग में खूब लोकप्रिय हुई। डा. ए.वी. सिंह, डा. किशोर काबरा, डा. सारस्वत मोहन मनीषी तथा यतीन्द्रनाथ राही इस क्षेत्र के अन्य महत्वपूर्ण नाम हैं।

गीतिकाव्य की जो परंपरा छायावाद युग के बाद थम-सी गई थी, वह भी साठोत्तरी कविता में पुनर्जीवित हुई। हिंदी के मधुर-भावसंकुल गीतों में निश्छल अनुभूतियों की आवेगमयी अभिव्यंजना है, भावना का पूर्ण संवलित स्वरूप है और तदनुरूप कोमल-कांत पदावली है। रागात्मकता इन गीतों का प्राण और संगीत इनका कलेवर है। हिन्दी के गीतिकाव्य की प्रमुख विशेषताएं हैं - वैयक्तिकता, आवेग दीप्ति, हार्दिकता, रागात्मक अन्विति, संगीतात्मकता, प्रवाह और संक्षिप्तता। इसके सशक्त हस्ताक्षरों में वीरेंद्र मिश्र, रवींद्र भ्रमर, रामदरश मिश्र, देवेंद्र शर्मा 'इन्द्र', नीरज, अश्वघोष, शांति सुमन, सोम ठाकुर, बुद्धिनाथ मिश्र, यतीन्द्रनाथ राही आदि उल्लेखनीय हैं। पिछले कुछ दशकों में जापानी हाइकु काव्य से प्रभावित होकर हिंदी कवियों ने भी हाइकु कविताएं लिखी हैं। तीन पंक्तियों के हाइकु में क्रमशः 5, 7, 5 वर्ण होते हैं। सन् 1985 में प्रकाशित डा. भगवतशरण अग्रवाल का 'शाश्वत क्षितिज' नामक हाइकु संग्रह काफी चर्चित रहा।

कुछ अन्य हाइकु रचनाकार हैं – मुकेश रावल, धनंजय चौहान, गोवर्धन शर्मा आदि। इसी प्रकार हिंदी ग़ज़ल भी समकालीन हिंदी कविता में खूब फल-फूल रही है। सामयिक राजनीति और सामाजिक विसंगतियों पर चोट करने का उद्देश्य लेकर यह विधा सामने आई है। सन् 1975 में प्रकाशित दुष्यंत कुमार का 'साये में धूप' यथेष्ट चर्चित रहा। उदयभानु हंस, वीरेंद्र कुंवर, अश्वघोष, राजेश रेड्डी आदि ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण काम किया है।

बात अब बालकविता की।

पिछले 30-40 वर्षों में बड़ों की कविता के परिप्रेक्ष्य में यदि हिन्दी बालगीत पर एक सरसरी निगाह डाली जाये, तो कई महत्वपूर्ण तथ्य हमारा ध्यान खींचते हैं। पहली बात तो यह है कि आज 'बालगीत' की जगह 'बालकविता' सर्वस्वीकृत नाम है। पत्र-पत्रिकाओं में यही शब्द प्रायः व्यवहृत होता है। आज से 30-40 साल पहले, संभवतः नवीनता के व्यामोह में, कविगण अपनी कविताओं को बालगीत कहने लगे। पर इन दोनों शब्दों को समानार्थी मानना हमारी भूल होगी। हर बालकविता को बालगीत नहीं कहा जा सकता। वैयक्तिकता, आवेगदीप्ति, हार्दिकता, रागात्मकता, संगीतात्मकता, प्रवाह और संक्षिप्तता जैसे गीति काव्य के गुण जिस बाल कविता में हैं, सिर्फ वही बालगीत का दरज़ा पा सकती है। इसीलिए आज गीति शैली में लिखे गये बालगीत ही गीत कहलाते हैं, अन्यान्य शैलियों में रची गई कविताओं को बालगीत नहीं कहा जाता। हाँ, आयुवर्ग के अनुसार बालकविता को तीन भागों में अवश्य विभक्त किया गया है – शिशुगीत, बालकविता एवं किशोर कविता। शिशुगीत इसलिए गीत हैं, क्योंकि उनमें गीतों का संपूर्ण मार्दव है। बालकविता के व्यापक क्षेत्र में बालगीत, पद्यकथाएं, दोहे, गजल, हाइकु आदि समाहित हैं। किशोर कविता तो किशोर-मन की भाव-भूमि पर आधृत है ही। आज की बालकविता का यह एक सर्वमान्य ढाँचा है।

दूसरी बात यह है कि बड़ों की कविता में जितनी तेजी से और जितने ज्यादा बदलाव हुए, उतने बाल कविता में नहीं हुए। आज भी आप किसी बाल पत्रिका को उठाकर देख लीजिये, आधी से ज्यादा कविताएं पुरानी काट की ही मिलेंगी। देश को लेकर वही रूटीन किस्म की कविताएं, वही चिड़िया-तोता-गिलहरी-तितली, वही होली-दीवाली, वही जाड़ा-गर्मी-बरसात और वही घर-स्कूल। जाहिर है, ये बच्चों के जाने-पहचाने, पसंदीदा बिम्ब हैं और इसीलिए बाल कविता इन्हें ही ज्यादा से ज्यादा भुनाने की कोशिश करती है। पर इन विषयों पर आज से 30-40 साल पहले ही बाल कवियों ने इतनी स्तरीय रचनाएं लिखी हैं कि विषयों का यह पिष्ट-पेषण अब

इन पारंपरिक विषयों में कुछ नया जोड़ने की, इन्हें प्रासंगिक बनाने की सामर्थ्य सिर्फ गिने-चुने कवियों में होती है। इसीलिए थोक के भाव लिखी गई बाकी कविताएं बालसाहित्य को दोयम दर्जे का सिद्ध करती हैं और उसके अवमूल्यन के लिए उत्तरदायी बनती हैं। तभी नव्यता-बोध की तरफ बालकवियों का ध्यान गया है और विज्ञान, पर्यावरण, हरितक्रांति, बालमनोविज्ञान, लड़की का महत्व, बालक का दैनंदिन जीवन जैसे विषय बालकविता में जुड़े हैं। यह नव्यता-बोध स्वागतयोग्य है। और इसने बाल कविता को नये शिखर दिये हैं। आज जब तीन वर्ष के बच्चे की उंगलियां कम्प्यूटर के 'माउस' से खेलने लगी हैं और 'ब्लॉग' तक से वह जुड़ गया है, तो निश्चय ही उसने सूचनाओं के जगत में प्रवेश ले लिया है। पारंपरिक विषयों के साथ नव्यता-बोध से जुड़े विषयों ने समकालीन बालकविता को आज एक नया कलेवर दिया है।

पहले बालकविता बालक के विशुद्ध मनोरंजन के अभिप्राय से लिखी जाती रही है, लेकिन आज ऐसा नहीं है। सच तो यह है कि आज बालकविता तो क्या, बालक के जीवन से ही मनोरंजन कपूर की तरह उड़ चुका है। दो-सवा दो साल का होते ही जिस बच्चे को 'प्लेग्रुप स्कूल' में भेज दिया गया हो, नानी-दादी की गोद में बैठकर कहानियां सुनने का सुख जिसने न जाना हो, मां की मीठी लोरियां जिसके कानों में न पड़ी हों, उसके जीवन में मनोरंजन रह ही कहाँ गया? बस्ते के बोझ से त्रस्त जो बच्चा हमारे इर्द-गिर्द सांस ले रहा है, उस पर बचपन से ही माता-पिता की महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति का भार डाल दिया जाता है। जाने-अनजाने, चाहे-अनचाहे आज का बच्चा उस आधुनिकताबोध का अंग बनता जा रहा है, जो व्यक्तिस्वातंत्र्य से प्रसूत है और समाज से कटी हुई है। फलतः बचपन से ही एकाकीपन के दंश को झेलने वाला बच्चा मनोरंजन की दुनिया को कैसे पहचानेगा? वह मनोरंजन जो आजसे 25-30 साल पहले के बच्चों को मेले-ठेले के रूप में मुहय्या था, नुमाइश-सर्कस के रूप में उपलब्ध था और हमउम्र साथियों के साथ खुले मैदानों में किस्म-किस्म के खेलों से प्राप्त था, आज का बच्चा उससे वंचित है। आतंकवाद के साये तले पलने वाली प्रौढ़ पीढ़ी ही जब महाकुम्भ के पर्व पर हरिद्वार-संगम के गंगास्नान से कतराती है और बम्ब विस्फोट जैसी किसी आकस्मिक विपत्ति के भय से वहाँ जाते हुए डर जाती है, तो बच्चा सिर्फ टेलीविजन के परदे पर कुम्भ स्नान के चित्र से ही तो परिचित होगा। उसके वास्तविक सुख में अवगाहन करने का आनंद कैसे पायेगा?

बालिकाओं के संसार पर ही एक दृष्टि डालकर देखिये, कितनी बच्चियां गुड़िया की शादी रचाती नजर आयेंगी? कदाचित्, एक भी नहीं। फिर विवाह के बाद

गुड़िया की विदाई जैसे संवेदनशील विषय पर रची गई बालकविता भी उनके मन का कैसे अनुरंजन करेगी? इसलिए जब बच्चों के दैनंदिन जीवन से ही मनोरंजन विलुप्त हो गया है, होली-दीवाली जैसे पर्व भी 'हाईटेक' हो जाने के कारण बाजार से एक किलो मिठाई मंगवाकर खानापूर्ति के रूप में मनाये जाने लगे हैं और बड़े-बड़े मंदिरों में हजार-दो हजार ही नहीं, लाखों की रकम भेजकर अपने नाम से पूजा करवाकर सम्पन्न होने लगे हैं, तो मात्र मनोरंजन के लक्ष्य को लेकर चलने वाला बालसाहित्य बच्चों के दिल के तारों को कैसे छू सकेगा? घर हो या विद्यालय, आज बच्चे के जीवन से हास्य-विनोद के प्रसंग कृष्णपक्ष के चंद्रमा की भांति घटते-घटते अमावस की रात की भांति पूर्ण विलुप्त हो चुके हैं। अतएव हमें पहले संकटग्रस्त बचपन को बचाना होगा। बालक के जीवन में मनोरंजन का सहज-नैसर्गिक उल्लास लाना होगा। उसे ताली बजाते हुए खिलखिलाकर हंसना सिखाना होगा। तभी बाल कविता में मनोरंजन को प्रधान तत्व के रूप में बालक ग्रहण कर सकेगा।

आज की बालकविता में मनोरंजन बनाम उपदेश का प्रश्न भी बेमानी हो चुका है। इसे सर्वमान्य रूप से मान लिया गया है कि बच्चों को कोरी उपदेशपरक कविताएँ नहीं देनी चाहिए। 'सच बोलो', 'ईमानदार बनो', 'लोभ से परे रहो' जैसे सैद्धांतिक जीवनमूल्य आज अपनी चमक खो चुके हैं। अपने चतुर्दिक परिव्याप्त भ्रष्टाचार को टेलीविजन के परदे और अखबारों की सुर्खियों में खुली आंखों से देखने वाला बच्चा आज घपले-घोटालों से अपरिचित नहीं रहा है। जब वह घर में बैठकर मोबाइल पर मित्र से बात करते पिता के मुंह से शहर से बाहर होने की बात सुनता है, तो उसके नन्हे बाल-मन पर गहरा धक्का लगता है। उसके मन पर अवस्थित पिता की आदर्श प्रतिमा पता नहीं कब और कैसे किरचों-किरचों में बंट जाती है। वह आहत होकर सोचता है कि उसके पिता का चरित्र और कक्षा में पढ़ाया जाने वाला पाठ 'सच बोलो', दोनों इतने विरोधाभासी क्यों हैं? वक्त ने आज के बच्चे को उम्र से ज्यादा समझदार बना दिया है। उपदेश का 'लालीपॉप' थमाकर आप उसे ज्यादा देर तक भ्रमित नहीं रख सकते। बच्चा कोरे उपदेश से नहीं, अनुकरण से सीखता है। माता-पिता और गुरु का गरिमामंडित रूप उसे स्वतः उस आदर्श के पथ पर ले जायेगा, जो हमारा अभिप्रेत है। बालकविता में कोरी उपदेशपरकता देखकर उसे वितृष्णा ही होगी। उपदेश हो भी, तो हवा में रिली-मिली सुवास जैसा हो, जो बालक के अंतःकरण को तरोताजा कर सके।

बड़ों की कविता और बालकविता में एक बड़ा अंतर यह है कि बड़ों की कविता विचार अथवा संवेदना किसी भी पक्ष से जुड़ी हो सकती हैं, पर नन्हा बाल-

मन सिर्फ भावना के उद्दाम वेग को पहचानता है, इसलिए उसके लिए लिखी जाने वाली कविता मस्तिष्क को कुरेदकर नहीं लिखी जा सकती। उसे सिर्फ हृदय के स्तर पर बच्चा बनकर ही लिखा जा सकता है। इसीलिए बाल मनोविज्ञान को आज की बालकविता में एक महत्वपूर्ण तत्व के रूप में ग्रहीत किया गया है। बाल-मन, बालजीवन और बाल संसार से जुड़ी बालकविता ही बच्चों के मन को आंदोलित और अनुरंजित कर पाती है।

एक बात और।

बड़ों की कविता जैसी प्रयोगशीलता भले ही बालकविता में न हो, पर शिल्पगत नव्यतर बोध उसमें भी पर्याप्त मात्रा में है। सीधी-सादी बालकविताओं के साथ-साथ शिशुगीत, बालगीत, पद्यकथाएं, दोहे, कुंडलियां, गजल, हाइकु जैसी शैलियों में भी उसे लिखा गया है। ये शैलियां अधुनातन और प्राचीन दोनों कालों में विद्यमान हैं। संपूर्णता के आग्रह के कारण हम इन्हें यहाँ एक साथ देख रहे हैं। जहाँ तक शिशुगीत की बात है, भाषा की सरलता, रसात्मकता एवं ध्वन्यात्मकता उसके लिए जरूरी है, तभी एक अबोध शिशु भी उससे रसमग्न हो सकेगा। उदाहरण के लिए चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक' का चार पंक्तियों का यह शिशुगीत देखें -

चिड़िया रानी आओ ना
अपना गीत सुनाओ ना
मैं तो खाती हलुवा-पूड़ी
तुम भी आकर खाओ ना।

इस शिशुगीत पर प्रकाश मनु की टिप्पणी दृष्टव्य है, "मैंने अपने जीवन में यह गीत बच्चों के मुंह से सैकड़ों बार सुना होगा। हालांकि शायद ही किसी बच्चे को इसके लेखक का नाम पता हो। एक अच्छी रचना की कसौटी ही यह है कि वे लेखक के नाम के सहारे नहीं चलतीं, बच्चों के दिलों में अपना घर बनाती हैं।"

हिंदी में अच्छे बालगीतों की कमी नहीं है। निजता, रागात्मकता और निश्छल अनुभूतियों की मधुर, भावसंकुल प्रतीति दामोदर अग्रवाल के इस बालगीत में किसी मलय समीर की भांति छन-छन कर आती हुई हमें भिगो देती है -

कुछ रंग भरे फूल
कुछ खट्टे-मीठे फल
थोड़ी बांसुरी की धुन
थोड़ा जमुना का जल

एक सोना जड़ा दिन
एक रुपों भरी रात
एक फूलों भरा गीत
एक गीतों भरी बात
कोई ला के मुझे दे!
एक छाता छांव का
एक धूप की घड़ी
एक बादलों का कोट
एक दूब की छड़ी
कोई ला के मुझे दे!
एक छुट्टी वाला दिन
एक अच्छी-सी किताब
एक मीठा-सा सवाल
एक नन्हा-सा जवाब
कोई ला के मुझे दे!

जहाँ तक पद्यकथाओं की बात है, वे हिन्दी में बहुत लिखी गई हैं, हालांकि आज कम मात्रा में लिखी जा रही हैं। शकुन्तला सिरोठिया, सोहनलाल द्विवेदी, रामवचन सिंह आनंद, निरंकारदेव सेवक, द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी, चंद्रपालसिंह यादव 'मयंक' तथा शम्भूप्रसाद श्रीवास्तव इस विधा के अग्रणी रचनाकारों में हैं।

बालकाव्य के अंतर्गत दोहे भी लिखे गये हैं। हालांकि बच्चे अपनी पाठ्य पुस्तक में कबीर, रहीम, बिहारी आदि के दोहे पढ़ते हैं, पर स्वतंत्र रूप में भी उनके लिए दोहों का लेखन हुआ है। उदाहरण के लिए रामानुज त्रिपाठी का यह दोहा देखिए -

जाड़े के दिन आ गये बदल-बदल कर रूप
कभी घिरा कुहरा घना कभी खिल गई धूप।

कामता प्रसाद गुरु का यह दोहा भी दर्शनीय है -

घर में पूजित मूर्ख है, ग्राम मध्य ग्रामेश
राजा अपने देश में, पंडित देश-विदेश।

कुण्डलियों ने आज बालकाव्य में लुप्तप्राय विधा का रूप ले लिया है, पर गिरधर की कुण्डलियां बच्चे अब भी चाव से पढ़ते हैं -

बिना विचारे जो करे सो पाछे पछताय

काम बिगारे आपनो जग में होत हंसाय
जग में होत हंसाय चित्त में चैन न पावे
खान-पान-सम्मान-राग-रंग मनहि न भावे
कह गिरधर कविराय दुःख कछु टरत न टारे
खटकट है चित मांहि करे जो बिना विचारे।

अजय जनमेजय की सर्दी पर यह कुण्डलिया देखिए -

कांपा ये थर-थर बदन, गयी हाड़ तक शीत
हारा छप्पर फूस का, गया कुहासा जीत
गया कुहासा जीत, न घर से निकलो बाहर
पड़ी पहाड़ी बर्फ, बिछा दी मानो चादर
क्या राजा क्या रंक, बदन को सबने ढांपा
बैठा बंदर पेड़, करे क्या थर-थर कांपा।

बच्चों के लिए गजल शैली में भी मनभावन कविताएं लिखी गई हैं। बाल गजल को रेखांकित करने के लिए निरंकारदेव सेवक का यह उदाहरण पर्याप्त है-

हमको लड्डू कचौड़ी गरम चाहिए
और सोने को बिस्तर नरम चाहिए
पढ़ने-लिखने को कहती तो है मां, मगर
पहले कापी, किताबें, कलम चाहिए
एक चींटी के बच्चे ने मुझसे कहा
नन्हे मुन्नों पे करना रहम चाहिए
पापा बोले कि बेटा बड़े अब हुए
करना शैतानियां तुमको कम चाहिए।

जापानी काव्य विधा हाइकु को हिंदी बालकविता ने बहुत कम अपनाया है। तीन पंक्तियों में क्रमशः 5, 7, 5 वर्णों के इस हाइकु को नलिनी कांत की इन पंक्तियों में देखा जा सकता है -

पंख पसारे
चांदी के लाल परी
तुम आ जाओ।
सोने-हीरे के
पहन के झुमके

हिंदी बालकविता में पहेलियां भी लिखी गई हैं। अमीर खुसरो से लेकर आज तक ये पहेलियां लिखी जा रही हैं। बच्चे इनमें बहुत रस लेते हैं। घमंडीलाल अग्रवाल की यह विज्ञान पहेली देखिये -

रखो जेब में मुझको चाहे, या कि बैग में डालो
जब करनी हो बात किसी से, झटपट मुझे निकालो। (उत्तर - मोबाइल)

उमाकांत मालवीय की 'लोटा ऊपर लोटा' का सौंदर्य देखिए -

लोटा ऊपर लोटा/लोटा नीचे लोटा
बोल जमूरे मेरे/निरा अकल का मोटा।
राही रहा पियासा/गदहा रहा उदासा
सीधी बात पते की/क्योंकि नहीं था लोटा।
भूत नहीं क्यों भागा/मन में डर क्यों जागा
सीधी बात पते की/क्योंकि नहीं था सौटा।
मिला नहीं गुब्बारा/लौटा क्यों बंजारा
सीधी बात पते की/क्योंकि टका था खोटा।

इसी तरह हिंदी में कव्वाली भी मिलती है, लेकिन यह विधा बालकविता में ज्यादा लोकप्रिय नहीं है। बच्चे अपने विद्यालय के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में कव्वाली को बहुत पसंद करते हैं, इसलिए हिंदी बालकवियों को इस ओर ध्यान देना चाहिए। उमाकांत मालवीय की एक कव्वाली 'हम टेढ़े मेढ़े हैं तो क्या' देखिए -

लड़के - हम टेढ़े-मेढ़े भी हैं तो क्या
लड्डू हैं घी के।
लड़कियां - तुम ऊंची दूकानों वाले
पकवान निरे फीके।
लड़के - हो लाख भले चूहाखानी
पर चुहिया से डरती।
मरने से पहले डरपोकों की
सौ मौतें मरतीं।
पूछो इन जीने वालों से
यूं क्या होगा जी के, हम टेढ़े-मेढ़े......
लड़कियां - तुम सौ मुक्कों में पापड़ तोड़ो
तीस मार खां जी
बस पानी पड़े बताशे जैसे

गल जाते 'प्रा' जी
हम मरने वाले नहीं, भले
कोसो पानी पी के, तुम ऊंची......

लड़के – जनमी लड़की, पर फैशन में
बनती भाई साहब
इन लड़केनुमा लड़कियों से
क्या होगा भी या रब
जैसे बिल्ली के भाग खुले हैं
टूट गये छींके, हम टेढ़े-मेढ़े......

लड़कियां – जनमे लड़के, पर फैशन में
तुम हीरोइन बनते
इन लड़कीनुमा बालकों से
क्या होगा भी भंते
मूली के पत्ते देख जिन्हें
आ जती हैं छींके, तुम ऊंची......

लड़के – तुम प्यारी प्यारी बहना हो
हम बीरन हैं जी के

लड़कियां – तुम प्यारे-प्यारे बीरन
भैया दोयज के टीके।

निश्चय ही हिन्दी बालकविता का अपना एक अलग रंग है, तेवर है। 21वीं सदी की बालकविता में नये शिखर तलाशने की पूरी संभावनाएं भरी हैं।

3 : अलिखित बालगीत

पृथ्वी पर जिन पौधों को बड़े यत्न से उगा कर क्रम से काट-छाँट कर सजाया जाता है उन पर खिले फूलों की छटा आकर्षक होती है, पर वह वन-फूल भी कम आकर्षक और अपनी नैसर्गिक छटा में कम लुभावने नहीं होते जो बिना किसी के सींचे-सँवारे पौधों पर अपने-आप खिल जाया करते हैं। साहित्यिक गीत प्रत्येक पढ़े-लिखे सुरुचिसम्पन्न व्यक्ति का मनोरंजन करते हैं पर लोकगीत जिनमें न कोई आकर्षक शब्द-विन्यास होता है, न अलंकार और न भाषा सौष्ठव, वह अधिकांश जनता के गलहार बन शोभा बढ़ाते रहते हैं। लोक गीतों में मनोभाव जिस सरल स्वाभाविक और मार्मिक ढंग से व्यक्त हमें मिलते हैं उनके सामने साहित्यिक गीतों का रस ही फीका पड़ जाता है। इसी प्रकार जो बालगीत बड़ों के द्वारा लिखे जाते हैं और सुन्दर-सुन्दर पत्रिकाओं और पुस्तकों में प्रकाशित होकर नन्हे-मुन्नों का मनोरंजन करते हैं उनसे वह बालगीत कम मनोरंजक नहीं होते जिन्हें बच्चे स्वयं सरल तुकबन्दियों के रूप में बिना किसी प्रयास के गढ़ लिया करते हैं। बच्चों के मन की धड़कन सबसे स्पष्ट रूप में उन्हीं में सुनाई पड़ती है। इसलिये वह उन्हें पुस्तकों और पत्रिकाओं में प्रकाशित बालगीतों से भी अधिक प्रिय लगते हैं।

बच्चों के समाज में ऐसे अनेक बालगीत प्रचलित मिलते हैं जिनके रचयिता या रचना-काल के विषय में हमें कोई ज्ञान नहीं। किसी पुस्तक के पन्ने पर सुन्दर चित्र बना कर जो कभी प्रकाशित नहीं किये गये, पर जो परम्परा से बाल-समाज में प्रचलित हैं। वह किसी पाठशाला या कक्षा में उन्हें कभी पढ़ाये नहीं गये और न उन्हें किसी ने परीक्षा का भय दिखाकर बेंत मार-मार कर याद कराया। पर जो बच्चों को अपने आप कहीं न कहीं से सुनने को मिल गये और सुनते ही याद हो गये हैं। वह उन्हें बार-बार दुहराते और गाकर सुनाते हैं। उन्हें गाते-दुहराते समय उनके शरीर का रोम-रोम रस से सराबोर हो जाता है। उनके बड़े अध्यापकों या अभिभावकों को उनमें कोई रस भले ही न मिले पर बच्चों के मन के असली भाव गीत वही होते हैं। कोई भी युक्तिसंगत कल्पना या मनोभाव न होते हुए भी बच्चों को उनमें अपने मन का पूरा भाव व्यक्त या कल्पना चित्रित मिल जाती है।

हिन्दी में लोक गीतों की तरह इन बच्चों द्वारा अपने मनोरंजन के लिए अपने आप गढ़ लिये जाने वाले बालगीतों के संचय या संकलन की ओर कभी ध्यान नहीं दिया गया। बच्चों को अपने प्राणों से अधिक प्यार करने वाले बड़ों के समाज में यह अप्रकाशित बालगीत यदि प्राचीन काल से संकलित किये जाते रहे

होते तो नैसर्गिक साहित्य का एक कितना बड़ा कोष हमारे पास होता। समय-समय के बच्चों के मन के स्वर उनसे झंकृत होते और हमें उनकी परिस्थितियों, कल्पनाओं और भावनाओं के अनेक सुन्दर-सुन्दर चित्र उनके द्वारा उपलब्ध हुए होते। हम उनके द्वारा यह समझ सकते कि किन विशेष परिस्थितियों में पल कर वह बड़े हुये, उनकी क्या-क्या प्रतिक्रियायें उनके भोले मन पर हुईं और उन्होंने किस प्रकार की भाषा में उन्हें व्यक्त किया।

संसार में जब लिखने-पढ़ने और प्रकाशित करने के साधनों का अभाव था तो नैसर्गिक बालगीत ही बच्चों की साहित्यिक भूख को तृप्त किया करते थे। यह नैसर्गिक बालगीत प्रत्येक समाज और समय के बच्चों में किसी न किसी रूप में प्रचलित रहे होंगे। आज भी हम इन्हें गाँव-गाँव और नगर-नगर में प्रत्येक वर्ग और समाज के छोटे बच्चों में प्रचलित देखते हैं। भारत देश का कोई भी भू-भाग ऐसा नहीं हो सकता जहाँ के बच्चे कुछ न कुछ तुकबन्दियों को समय-समय पर अपने उत्साह-उमंगों के क्षणों में गाते या दोहराते न रहे हों। अपने वातावरण, पक्षियों, पेड़ों, फूलों, फसलों, कपड़ों, खेल-खिलौनों, अभिभावकों और अध्यापकों से सम्बन्धित ऐसी अनेक भावभरी पद्यात्मक पंक्तियाँ आज भी हमें खोजने से प्राप्त हो सकती हैं जिनकी भाषा कैसी भी हो, कोई युक्तिसंगत अर्थ-भाव उनमें मिलता हो या नहीं, पर जो बच्चों के मनोरंजन के मुख्य विषय हैं। इन पद्य पंक्तियों में या जिन्हें हम बच्चों के बालगीत भी कह सकते हैं, अपने विशेष वातावरण का प्रभाव विशेषरूप से परिलक्षित होना अत्यन्त स्वाभाविक है। बच्चे अपनी दृष्टि की सीमा से बाहर कल्पना की सहायता से दूर की वस्तुओं को देखकर समझ नहीं सकते। उनकी भावनाओं का विस्तार भी ऐसा नहीं होता कि दूरस्थ अपरिचितों से वह कोई रागात्मक सम्बन्ध स्थापित कर सकें। आदर्श और सिद्धान्तों की बात भी वह नहीं जानते। अतएव उनके अल्पज्ञान के आधार पर जिन आस-पास की वस्तुओं को वह देखते-सुनते-जानते हैं उन्हीं से प्रेरणा पाकर उत्तेजना या उत्साह के समय वह ऐसी पंक्तियाँ गढ़ दिया करते हैं जो उनके अलिखित साहित्य का रूप धारण कर लिया करती हैं।

बच्चों के यह अलिखित नैसर्गिक बालगीत यदि ध्यानपूर्वक देखा जाये तो उनकी शारीरिक चेष्टाओं की प्रेरणाओं के आधार पर अधिक लिखे गये हैं। उनकी भावमयता और गीतात्मकता के साथ-साथ जहाँ उनमें शारीरिक चेष्टाओं को उत्तेजित करने की शक्ति होती है वहाँ पर वह बच्चों के लिये और भी अधिक रोचक लगते हैं। बच्चे परिस्थितियों का ज्ञान सबसे पहले देख-सुन और समझ कर उतना प्राप्त

नहीं करते, जितना शारीरिक चेष्टाओं और संस्पर्श के आधार पर प्राप्त करते हैं। वह जिस वस्तु को देखते हैं, उसे हाथ में लेकर, तोड़ कर, नोच कर या खोल कर भी देखना चाहते हैं। देखने मात्र से उनकी जिज्ञासा शान्त नहीं होती। बड़े लोग फूल को बाग में खिला हुआ देख कर ही प्रसन्न हो सकते हैं पर बच्चे इस प्रसन्नता के साथ-साथ उसे तोड़ कर हाथ में लेने की स्वाभाविक इच्छा को रोक नहीं सकते। भले ही वह उसे डाली पर से तोड़ कर तुरन्त नोच-नाच कर धरती पर फेंक दें। बाल कृष्ण के चाँद को देखकर उसे पकड़ लेने के लिये मचलने की बात साहित्य में प्रसिद्ध है। शारीरिक चेष्टायें करने की प्रवृत्ति उनमें इतनी तीव्र और स्वाभाविक होती है कि वह कभी-कभी निरर्थक ही उछलते-कूदते, घूमते-झूमते और चलते-फिरते थकते नहीं। उनकी इस प्रकार की चेष्टाओं से ही उनके गढ़े हुए उस बालगीत साहित्य का निर्माण होता है जो न कभी छपता है न प्रकाशित होता है पर निरन्तर गाया-दुहराया जाने के कारण वह धीरे-धीरे बच्चों के समाज में फैल जाता है और शताब्दियों तक उनका मनोरंजन करता रहता है। इस साहित्य को यदि हम चाहें तो बच्चों के शारीरिक श्रम से स्वतः उत्पन्न साहित्य भी कह सकते हैं।

खड़ी बोली हिन्दी में भी बहुत-सी ऐसी बालगीतों की पंक्तियाँ हमें मिलती हैं जो पता नहीं कब से बाल-समाज में प्रचलित रही हैं और आज भी वह पुरानी नहीं हुई है। बादलों को देख कर कृषिप्रधान देश भारतवर्ष में बड़ों को ही नहीं बच्चों को भी बहुत प्रसन्नता होती है। वर्षा ऋतु के सांगोपांग विशद वर्णनों से बड़ों के काव्य साहित्य के अनेक ग्रन्थ भरे हुये हैं। निराला का बादलराग नाम से प्रसिद्ध गीत तो हिन्दी ही नहीं विश्व साहित्य की एक अमूल्य निधि है। लिखित और प्रकाशित बालगीत साहित्य में भी बादलों और वर्षा से प्रेरित होकर बहुत से गीत मिलते हैं-

क्या सुन्दर वर्षा ऋतु आई, लगती है सब को सुखदाई।
मेढक टर्र टर्र चिल्लाते, झींगुर झनन झनन झन गाते।।
काले काले बादल आये, सागर से जल भर भर लाये।
रिमझिम रिमझिम पानी बरसा, आज खुलेगा नहीं मदरसा।।

पर जो स्वाभाविक मनोभावों की तीव्र कल्पना मिश्रित अभिव्यक्ति हम अलिखित बालगीतों की इन दो पंक्तियों में पाते हैं वैसी हमें लिखित बालगीत साहित्य में देखने को नहीं मिलती -

बरसो राम धड़ाके से।
बुढ़िया मर गई फाके से।।

इन पंक्तियों का एक-एक शब्द ध्यान देने योग्य है। बादल का कहीं नाम

भी नहीं लिया गया और उसे राम कहकर सम्बोधित किया गया है। राम सब जानते हैं सर्व शक्तिमान हैं। वह बंजर धरती को हरा-भरा एक क्षण में कर सकते हैं। गरमी से तपी हुई धरती को जल से सींच कर फसलों को उगाने वाले बादल के लिए उन सर्वशक्तिमान राम से अधिक उपयुक्त और कौन-सा सम्बोधन हो सकता है। बादल के बरसने का भाव रिम-झिम, झर-झर, धरड़-धरड़ आदि आदि शब्दों से कविता में व्यक्त किया जाता है पर धड़ाके शब्द में जो भाव भरा हुआ है वह इनमें से किसी भी शब्द में नहीं। धड़ाका शब्द का साधारण अर्थ जोर का शोर होता है। बादल जोर का शोर करके तो बरसते ही हैं और जब मूसलाधार पानी बरसता है तो बरसने का शोर और भी अधिक होता है। अतएव बरसने के लिये साहित्यिक शब्द न होते हुए भी वर्षा के शोर का सारा भाव धड़ाके शब्द से व्यक्त हो जाता है। दूसरा संकेत इस शब्द के प्रयोग से यह भी मिलता है कि बादल निस्संकोच निर्भय होकर बरसें।

बादल से बरसने को कहते समय और भी प्रकार से अनुनय-विनय की जा सकती थी। धरती सूरज की गरमी से तप कर बेहाल हो रही है, खेत सूखे और पेड़ पौधे मुरझाये पड़े हैं, गरमी के मारे पशु-पक्षियों और जीव-जन्तुओं को पल भर चैन नहीं, उनके प्राण संकट में हैं इत्यादि। पर बालक की कल्पना इधर-उधर की सब वस्तुओं की ओर नहीं जाती। उसने सुन रक्खा है कि बादल न बरसने से नाज पैदा नहीं होता, लोग भूखों मरने लगते हैं और मरने वालों में सबसे पहले बूढ़े और बुढ़िया मरते हैं जो बहुत कमजोर होते हैं। इसलिये उसने बादल से यह कहा कि बुढ़िया फाके से मरी जा रही है। फाका इसलिए कि बरसात न होने से फसलें सूखी पड़ी हैं, नाज होने की आशा नहीं। इस भावभरी उक्ति को सुन कर पत्थर के देवता का मन भी पिघल कर पानी हो सकता है। जल से भरे बदलों की तो बात ही क्या है। दुर्बल बुढ़िया पर भला कौन तरस नहीं खायेगा। छोटे बच्चे इन पंक्तियों को जितने प्रेम और उत्साह से वर्षा आने से पूर्व चिल्ला-चिल्ला कर गाते-दुहाराते हैं वह देखते ही बनता है।

बच्चों के इन अलिखित गीतों में कुछ ऐसे हैं जिनमें भावों का कोई पारस्परिक तारतम्य नहीं है फिर भी वह बच्चों का पर्याप्त मनोरंजन करते हैं ऐसा ही एक बालगीत है –

हाथी घोड़ा पालकी।
जय कन्हैया लाल की।।

इसे बच्चे गाँव-गाँव में जोर-जोर से उछल-कूद कर गाते हैं। जहाँ पालकी की तरह झूलने वाली वस्तु को उन्होंने देखा यह पंक्तियाँ उन्हें याद हो आती हैं। पालकी के साथ हाथी और घोड़े का उल्लेख करने में तारतम्य इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं कि यह तीनों सवारियाँ हैं जिन पर चढ़ना उन्हें अच्छा लग सकता है। पर इन सब के साथ 'जय कन्हैया लाल की' या 'जय गिरधर गोपाल की' कह देने से ऊपर की पंक्ति से भावों का कोई साम्य नहीं बैठता। कन्हैया या गिरधर गोपाल का जब विवाह हुआ होगा तो बरात के जुलूस में भले ही हाथी, घोड़े और पालकी एक साथ रहे हों उन्हें ही देख कर कदाचित यह कल्पना की गई हो। या किसी की बरात को देख कर इस प्रकार की कल्पना की जा सकती है और कन्हैया लाल या गिरधर गोपाल के नाम उसके दूल्हा के प्रतीक समझ कर यों ही ले लिये गये हों। आधुनिक काल के बहुत-से बच्चे छोटी-छोटी झंडियाँ हाथ में लिये भारत माता या महात्मा गाँधी की जय बोलते हुए मिल सकते हैं। उनकी ही जैसी किसी भावना से प्रेरित होकर उपर्युक्त बालगीत की पंक्तियाँ गढ़ी गई होंगी।

निम्नलिखित बालगीत में भी गोपी चन्दर कहने का कोई भाव समझ में आ सकना कठिन है -

भरा समन्दर
गोपी चन्दर
बोल मेरी मछली कितना पानी
कितना पानी
कितना पानी।

इस बालगीत को बच्चे गली या खुले मैदान में यह कल्पना करके गाते हैं कि वहाँ सर्वत्र पानी भरा हुआ है और गहरा समन्दर है। बच्चे किसी वस्तु के अभाव में भी उसकी कल्पना करके उसकी वास्तविकता का अनुभव जितनी तीव्रता से करते हैं उतनी तीव्रता से बड़े लोग नहीं कर पाते हैं। उपर्युक्त पंक्तियों को गाते हुए वह सचमुच यह समझने लगते हैं कि वह बीच समुद्र में हैं। बार-बार डुबकी मार कर ऊपर उठते हुए वह चिल्लाते रहते हैं कितना पानी, कितना पानी, कितना पानी। तभी कुछ दूसरे बच्चे घुटनों, कमर, गरदन और सिर के ऊपर क्रमशः हाथ रख कर चिल्लाना प्रारम्भ कर देते हैं इतना पानी, इतना पानी, इतना पानी। चिल्लाने, उठने-बैठने और हाथ-पाँव हिलाने व आँखों तथा मुखाकृतियों से अपने मनोभावों को व्यक्त करते हुये वह बहुत देर तक इस खेल को खेलते रहते हैं। पर भरासमन्दर के साथ गोपी चन्दर कह देने का अर्थ स्पष्ट नहीं होता। बच्चों

ने चीर हरण के चित्रों में गोपियों को जल में खड़े देखा होगा इसलिये जल के खेल में गोपियों की याद हो आना सम्भव हो सकता है पर गोपी चन्दर कैसे कहा गया यह बड़ों के समझ के बाहर की बात है। सम्भव है समन्दर की तुक जोड़ने के लिये ही ऐसा कह दिया गया हो।

पहले के समय में तख्तियों पर नेजे की कलम और खरिया से लिखवा कर बच्चों को लिखने का अभ्यास कराया जाता था। मोटी कलम से लिखने के कारण छोटी-सी तख्ती तनिक सी देर में पूरी भर जाती थी। प्रत्येक बच्चे को उसे धोकर फिर साफ करके तैयार करना पड़ता था। लिखने का क्रम अधूरा टूट जाने के कारण उन्हें तख्ती के सूखने की जल्दी होती थी पर वह सूखती तो अपने समय से ही। अतएव इस बीच के खाली समय को बिताने के लिये बच्चों ने एक विचित्र गीत गढ़ लिया है -

सूख सूख पट्टी
चन्दन गट्टी
राजा आया
महल चुनाया
झंडा गाड़ा
बजा नगाड़ा
रानी गई रूठ
पट्टी गई सूख।

इस बालगीत में पट्टी सूखने और रानी के रूठने का कोई सम्बन्ध नहीं पर कल्पना में जब राजा आ ही गया तो राजा के साथ जितनी भी बातें सम्बन्धित हैं उन सभी का वर्णन इस बालगीत में हो सकता था और इस बालगीत की विशेषता ही यह है कि इसमें दो-दो तुकबन्दियाँ जोड़ कर कितनी ही देर तक गाया जा सकता है जब तक पूरी पट्टी सचमुच सूख न जाये। अन्तिम दो पंक्तियों में राजा के सम्बन्ध से ही रानी के रूठ जाने की ओर संकेत किया गया है। रूठने से सारे काम बिगड़ जाते हैं। बालगीत का प्रसंग इससे अधिक नहीं चलता और वहीं उसका अन्त हो जाता है। बात को कहने का कैसा सरल मनोवैज्ञानिक ढंग इसमें अपनाया गया है। साहित्यिक या कवि होने का अभिमान लेकर लिखे गये किसी बालगीत में वह रोचकता नहीं आ सकती जो इसमें विद्यमान है।

बच्चों की दृष्टि को साधारण मनुष्यों की अपेक्षा असाधारण मनुष्य अधिक आकर्षित करते हैं। लंगड़े, लूले, अपंग, अधिक दुर्बल, पतले या अधिक मोटे,

बौने या अधिक लम्बे मनुष्य उन्हें विशेष आकर्षण के विषय लगते हैं और वह उन्हें केवल देखते ही नहीं रह जाते उनके मन में उन्हें देखकर दया, सहानुभूति या व्यंग्य-विनोद के भाव भी जागृत होते हैं। इसीलिये सर्कस की विचित्र वेष-भूषा वाले और पैरों में बाँस बाँध कर चलने वाले या दूसरे काम करने वाले बौनों को देखकर जितना आनन्द छोटे बच्चों को आता है उतना बड़ों को नहीं। यों ही कहीं किसी असाधारण रूप से मोटे आदमी को देखकर बच्चों के लिये अपनी हँसी रोक पाना कठिन हो जाता है। इसीलिए उनमें एक गीत की यह दो पंक्तियाँ बहुत दिनों से प्रचलित चली आई हैं -

मोटे लाला पिलपिले।
बहू को लेके गिर पड़े।।

पहली पंक्ति में एक भाव को व्यक्त किया गया है पर दूसरी पंक्ति में बहू को लेकर गिर पड़ने की बात बच्चों के मस्तिष्क में कैसे आई इसे कह सकना कठिन है। घर के बड़े-बूढ़े प्रायः छोटे बच्चों से उनके जल्दी ब्याह करने, सुन्दर चन्दा-सी बहू ब्याह कर लाने, उसे पालकी या मोटर पर बैठाने या खाना खिलाने इत्यादि की बातें किया करते हैं। किसी बहुत मोटे आदमी को देख कर कोई बच्चा इसी प्रकार की सुनी-सुनाई बातों के प्रभाव से उसकी बहू की कल्पना करता है। बार-बार दोहराये जाते रहने के कारण अब वह पंक्तियाँ प्रत्येक थोड़े भी मोटे कक्षा या स्कूल के सहपाठी की हँसी बनाने के लिये प्रयोग में आने लगी हैं। पर यहाँ प्रश्न यह उठता है कि ऐसे बालगीत गाने-दोहराने के लिए बच्चों को बढ़ावा देना कहाँ तक उचित है। बच्चों के लिये बड़ों द्वारा निश्चित आचार संहिता के यह प्रतिकूल है। ऐसे गीत गाने से बच्चों में सुरुचि उत्पन्न नहीं होती और न उनकी भावनायें ही परिष्कृत होती हैं। उचित-अनुचित का प्रश्न उठाना बड़ों की दृष्टि से अपनी जगह ठीक है। उनका यह कर्तव्य भी है कि उन्हें गन्दी बातें न सीखने दें। पर यह काम बच्चों को नकारात्मक आदेश देने या ताड़ना से नहीं होगा। उनकी भद्दी हँसी-मजाक की प्रवृत्ति को यदि रोकना है तो शिष्ट सभ्य हँसी-मजाक के गीत रच कर देना होगा।

कभी-कभी बच्चे अपने बहुत निकट होने वाले को ही अपनी तुकबन्दियों का शिकार बना लिया करते हैं। सुनते हैं ब्रिटिश शासन काल में एक स्कूल के हेड मास्टर थे टेम्पिलटन। वह बच्चों पर बहुत कठिन अनुशासन रखते थे और स्कूल की घन्टी बज चुकने के बाद बच्चों का स्कूल में आना उन्हें किसी प्रकार भी सहा नहीं था। बच्चे भय और आतंक के मारे उनसे कुछ कह तो सकते नहीं

थे पर उस कठोर अनुशासन के विरुद्ध मनोभावनाओं को दबा कर रख सकना भी उनके वश की बात नहीं थी। अतएव उन्होंने अपनी विद्रोही मनोभावना को व्यक्त करने के लिए एक तुकबन्दी गढ़ ली –

घंटी बोली टन टन टन।
उसमें निकले टेम्पिल टन।।
टेम्पिल टन ने मारी लात।
उल्टी कुर्सी मेज दवात।।

यह तो कहना कठिन है कि इन पंक्तियों को जब टेम्पिलटन महोदय ने सुना होगा तो वह बच्चों के देर में जाने पर अपना सारा आक्रोश भूल गये होंगे क्योंकि शायद वह हिन्दुस्तानी भाषा ही इतना नहीं पढ़े होंगे कि इन पंक्तियों का अर्थ समझ सकें। पर बच्चों को इस रचना को बार-बार दुहराते रहने में कितना सुख मिलता होगा इसकी कल्पना ही की जा सकती है। यह भी हो सकता है कि बच्चे टेम्पिलटन के प्रति अपने जिस क्रोध को कक्षा में बिल्कुल न जाकर प्रकट करते उसका परिष्कार हो गया होगा और वह हँसी-हँसी में इन्हीं पंक्तियों को गाते हुए कक्षा में ठीक समय से पहुँचने लगे होंगे।

इसी प्रकार एक और बाल गीत में बच्चों की भावनाओं का बड़ा मनोवैज्ञानिक चित्रण हमें मिलता है। जिस गली के बच्चे एक साथ मिलकर पैदल ही या किसी एक सवारी पर स्कूल जाते हैं वह घर से निकल कर स्कूल पहुँच जाने की शीघ्रता में यह सहन नहीं कर सकते कि उनका कोई साथी चलने की तैयारी में देर लगाये। जब किसी को देर लगती है तो उनके मन में उस पर क्रोध का भाव आना भी स्वाभाविक ही है। ऐसे ही किसी क्रोध के क्षण में एक लड़की शान्ती को देर करते हुए देख कर उन्होंने निम्नलिखित पंक्तियाँ गढ़ ली होंगी –

शान्ती मन मान्ती।
कहना क्यों नहीं मानती।।
पण्डित जी बुलाने आए।
बस्ता क्यों नहीं बाँधती।।

शान्ती को मन मानती कहकर उन्होंने अपना पूरा क्रोध उसके ऊपर प्रकट कर दिया है और जब बच्चों ने इन पंक्तियों को बार-बार गाया होगा तो निश्चय ही शान्ती का देर करना छूट गया होगा।

शैतान लड़के प्रायः अकारण भी जब उन्हें कोई दूसरा नहीं मिलता तो अपने सुपरिचित गुरुजनों से ही हँसी-मजाक करने की चेष्टा करते हैं। इस हँसी-मजाक का सब से सरल ढंग यह होता है कि वह किसी के नाम को ही बिगाड़ कर

लेने लगें। ऐसे ही किसी व्यंग्य विनोद के क्षण में किसी शैतान लड़के ने पंडित जी को पंडाख्ता कहते हुए एक पंक्ति कही होगी "पंडित जी पंडाख्ता" फिर इसी पर कुछ और शैतान लड़कों की जंगली कल्पना कुलाचें मारने लगी होगी और दूसरी पंक्ति बनी होगी "गोली मारी फाखता।" स्वच्छन्द कल्पना की उड़ान फिर भी न रुकी तो किसी ने कह दिया होगा "गोली गई रेल में" जब तीन पंक्तियां इस प्रकार बन गईं तो एक चौथी पंक्ति को भी किसी ने जोड़ दिया होगा "पंडित जी गए जेल में"। इस प्रकार चार ऊटपटाँग पंक्तियों का एक बाल गीत बन गया -

पण्डित जी पण्डाखता।
गोली मारी फाखता।।
गोली गई रेल में।
पण्डित जी गये जेल में।।

इन चारों पंक्तियों में कोई युक्तिसंगत भाव नहीं व्यक्त किया गया है, न चारों को मिला कर पढ़ने से किसी निश्चित भाव का बोध होता है। पर बच्चों के मनोरंजन के लिए यह अर्थहीन पंक्तियाँ भी वह काम करती हैं जो समझदारी, होशियारी से लिखा हुआ कोई रसपूर्ण बालगीत।

हरिद्वार के छोटे-छोटे बच्चों को मैंने स्वयं गलियों में चीख-चीख कर चिल्लाते सुना है -

बोलो गंगाजी की जै।
लड्डू चार कचौरी छै।।

हरिद्वार गंगा का नगर है। गंगा के बिना उसका कोई महत्व नहीं। कदम कदम पर वहाँ भक्तों के मुँह से गंगा माई या गंगा मैया की जय और स्तुति गान सुनने को मिलते हैं। अतएव छोटे बच्चे भी इस वातावरण में आप से आप चिल्लाने लगते हैं बोलो गंगाजी की जै। पर बच्चे स्वाभाविक रूप से किसी भावभरी बात या अन्य किसी वस्तु की बजाय अपने खाने-पीने की वस्तुओं को ही सबसे अधिक प्यार करते हैं। खेलने के खिलौने के प्रति भी उनका प्यार दूसरे नम्बर पर ही आता है। हरिद्वार में जगह-जगह ब्राह्मण पंडे जिमाये जाते हैं और उन्हें लड्डू, पूरी, कचौरी खाने को दी जाती हैं इसलिए बच्चों को खाने की वस्तुओं में उनका ही ध्यान हो जाना भी नितान्त स्वाभाविक है। जै की तुक छै से जोड़ी जा सकती है और वह कचौरी या पूरी ही हो सकती है जो परोसे में गिन कर दी जाती हैं। अतएव बच्चों ने लड्डू चार कचौरी छैः कह कर इस तुकबन्दी को पूरा कर लिया होगा।

किसी विशेष भू-भाग नहीं भारत वर्ष के प्रायः सभी भू-भागों के बच्चों में प्रचलित एक अलिखित गीत की दो पंक्तियाँ हैं -

एक जानवर ऐसा।
जिसकी दुम पर पैसा।

यह बच्चों के मन में सरल कौतूहल और जिज्ञासा उत्पन्न करने के लिये दो अत्यन्त भावपूर्ण पंक्तियाँ हैं। मोर के पंखों पर बने गोल-गोल रंगीन चिन्हों की उपमा पैसे से देकर बच्चों को मोर का बोध कराया गया है। देखने में यह पंक्तियाँ पहेली जैसी लगती है पर जिन बच्चों ने मोर या मोर का चित्र देखा है उन्हें इनका भावग्रहण करने में तनिक भी देर नहीं लगती। कुछ बच्चों ने इन्हीं पंक्तियों को बरसात के दिनों में बार-बार चमक कर छिप जाने वाले जुगनू पर घटित करके इस प्रकार बना लिया है -

एक जानवर ऐसा।
जिसकी दुम में गैसा।

जुगनू को जिन्होंने पास से देखा है वह यह समझते हैं कि उसकी दुम में होने वाली चमक की कितनी सजीव कल्पना उसे गैस कह देने से की जा सकती है। गैस को गैसा कह देना छन्द शास्त्र की दृष्टि से कोई अनहोनी बात नहीं। संस्कृत में किसी कवि ने कहा है 'अपि माषं मषं कुर्यात छन्दो भंगं न कारयेत्' अर्थात् माष को चाहे मष कर दिया जाए पर छन्द भंग नहीं करना चाहिए और तुलसीदास ने तो रामचरित मानस में ऐसा पूरी स्वतन्त्रता के साथ किया है।

इसी प्रकार और भी बहुत से अलिखित बालगीतों की पंक्तियाँ हैं जिन्हें बच्चे मनोरंजन के लिए खेल-खेल में गाते-दुहराते रहे हैं। बच्चों का एक खेल 'कोड़ाजमाल साई' होता है जिसमें बच्चे एक घेरा बना कर बैठ जाते हैं। एक लड़का हाथ में कपड़े का एक हंटर लिए हुए सब के पीछे-पीछे घूमता है। वह किसी एक के पीछे उस हंटर को चुपके से रख देता है। घेरे में से कोई बच्चा यदि पीछे मुड़ कर देखता है तो वह उसी हंटर की मार खाता है। इसी भाव को लेकर बच्चे इस खेल में जब बारी-बारी से हंटर लेकर घूमते हैं तो इन पंक्तियों को दुहराते जाते हैं- 'कोड़ा जमाल साई पीछे देखा मार खाई'। यह कोड़ा जमाल साई क्या है इसे तो कोई इतिहास की खोज करने पर ही बता सकता है। पर जमाल साई जमाल शाही का बिगड़ा हुआ रूप है जिसका अर्थ होता है शहंशाह की जमाल (प्रताप या तेज) धारण करने वाला।

बच्चों का एक खेल कबड्डी भारतवर्ष में बहुत प्रसिद्ध है। अब भी यह बड़े उत्साह-उमंग के साथ खेला जाता है। इस खेल में बच्चों के दो दल एक सीमा-रेखा के दोनों और डट कर खड़े हो जाते हैं। एक दल का एक बालक कुछ ऊटपटाँग शब्द बोलता हुआ सीमा को पार कर दूसरी ओर जाता है और दूसरे दल के लोग उसे घेर कर पकड़ लेने का प्रयत्न करते हैं। वह यदि किसी को छू कर फिर अपनी सीमा में लौट जाता है तो उसका दल अपनी पराजय स्वीकार कर लेता है। जो एक व्यक्ति सीमा का उल्लंघन करके दूसरे की सीमा में जाता है वह कुछ अनोखी पंक्तियाँ कहता जाता है -

छल कबड्डी आल ताल
मेरी मूछें लाल लाल
मर गये बिहारी लाल

इन पंक्तियों का कोई अर्थ न हो पर खेल में एक समा बाँध देती हैं। बिहारीलाल यहाँ किसी विशेष बिहारीलाल नाम के व्यक्ति के लिए प्रयुक्त नहीं हुआ है। प्रत्येक वह व्यक्ति जो छुआ जा कर खेल से निकाल दिया जा सकेगा बिहारी लाल नामधारी हो सकता है और उसके मर जाने का अर्थ भी चिता संजोकर मरजाने का नहीं है। मर जाने का अर्थ खेल से बहिष्कृत हो जाना ही है।

बच्चों का एक ऐसा ही बाल गीत है -

दुन्दी लाल
चने की दाल
उड़ गई चुटिया
नैनीताल
सर पर रह गये
बाल ही बाल

यह बालगीत कब और कैसे बना लिया होगा यह कहना कठिन है पर भावों का कोई तारतम्य न होते हुए भी यह बच्चों का उतना ही मनोरंजन करता है जितना कोई भी भावपूर्ण बालगीत।

इसी प्रकार 'चूहाभाग बिल्ली आई' तथा 'तेरी धूप मेरी छाया' बच्चों के खेलों के बालगीतों की ही प्रथम पंक्तियाँ हैं। नव दुर्गा के दिनों में जब उत्तर प्रदेश, राजस्थान और पंजाब के कुछ प्रदेशों के बच्चे टेसू को हाथ में लिए शाम के समय घर-घर गाते फिरते हैं तो इस प्रकार के बालगीत गाते हैं जिनकी पंक्तियाँ हैं -

टेसू राजा आए द्वार।
खोलो रानी झनन किवार।। इत्यादि

अथवा

आसमान में उड़ी पतंग।
जिसमें नौ सौ नब्बे रंग।।

बच्चों में बहुत प्राचीन एक दो पंक्तियों की कविता और है जिसे बच्चों के मुख से प्रायः सुना जाता है -

खेलोगे कूदोगे होगे खराब।
पढ़ोगे लिखोगे होगे नवाब।

यह पंक्तियाँ इस बात को प्रकट करने वाली है कि जब देश में नवाबों का शासनकाल था बच्चे यह समझते थे कि पढ़ने-लिखने से ही वह नवाब के समान प्रतापी शासक हो सकते हैं और खेलने-कूदने में मन लगाने से वह खराब हो जायेंगे। इन्हीं पंक्तियों को शैतान बालक उलट कर इस प्रकार से दुहराते पाये जाते हैं -

पढ़ोगे लिखोगे होगे खराब।
खेलोगे कूदोगे होगे नवाब।।

वैसे भी आजकल खेल-जगत में कीर्तिमान स्थापित करने वालों को पैसा और प्रतिष्ठा इतनी मिलती है कि खेल-कूद में अव्वल रहकर नवाब बनने यानी शान-शौकत से संपन्न हो जाने की बात भी गलत नहीं है। पर पढ़-लिखकर खराब बनने की बात किसी भी दशा में नहीं स्वीकारी जा सकती, क्योंकि विद्या कभी व्यक्ति के लिए अहितकर नहीं होती।

बच्चों के लिए लिखी जाने वाली लोरियों के क्षेत्र में भी बहुत सी पंक्तियाँ ऐसी हैं जो जाने कब से बाल-समाज में प्रचलित चली आई हैं। आज भी वह उनकी लोरियों के लिए बहुत उपयुक्त और प्रेरणा देने वाली पंक्तियाँ हैं। उदाहरण के लिये हम इन पंक्तियों को ले सकते हैं -

निंदिया कहाँ देर तू ने लगाई

या

चन्दा मामा दूर के।
बड़े पकाये बूर के।। इत्यादि

अलिखित बाल गीतों की यह परम्परा समाज में सदा से प्रचलित रही है और जब तक मनुष्य समाज संगठित रूप में पृथ्वी तल पर विद्यमान है हमारे समाज में प्रचलित रहेंगी। जो कुछ यत्न करके लिखा जाता है, पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित

होता है या पुस्तकों में संकलित होकर सामने आता है केवल वही बालगीत साहित्य नहीं है। बालगीतों का क्षेत्र लिखित बालगीतों के क्षेत्र से कहीं अधिक व्यापक और भरा-पूरा है और जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है अलिखित बालगीतों का क्षेत्र अपने अलग-अलग वर्ग, समाज और सीमाओं के प्रभाव से अलग-अलग रूप लिए हुए होता है। आवश्यकता यह है कि हम उस अलिखित बालगीत साहित्य का उसी प्रकार से संकलन अध्ययन करें जैसे हमने लोकगीत साहित्य का किया है। बिना इसके हमारा बालगीत साहित्य अधूरा ही रहेगा।

4 : शिशुगीत साहित्य

हिन्दी में बाल कविता दो नामों से जानी जाती है - शिशु गीत और बाल गीत। बंगाली भाषा में बाल गीतों को शिशु कविता कहा जाता है और जो कवितायें बहुत छोटी आयु के बच्चों के लिए लिखी जाती हैं उन्हें छड़ा गीत। छड़ा गीतों में ही वह लोरियां भी आ जाती हैं जो मातायें बच्चों को पालने में झुलाते या सुलाते समय भाव-विभोर होकर गाया करती हैं। अंग्रेजी में बहुत छोटे बच्चों के लिए लिखी कविताओं को नर्सरी राइम्स कहते हैं और उनसे बड़े बच्चों के लिए लिखी जाने वाली कविताओं को बाल कविता। शिशु गीत हों, छड़ा गीत या नर्सरी राइम्स, वह व्यक्तिपरक शिशु की भावना से प्रेरित होकर ही लिखे जा सकते हैं। सामूहिक या सामाजिक भावना शिशुओं में होती ही नहीं। इसलिए वह राष्ट्र प्रेम की हो या विश्व प्रेम की, उससे प्रेरित होकर वह नहीं लिखे जा सकते। शिशुओं में 'स्व' बहुत प्रधान होता है और उसी की अभिव्यक्ति उनके लिए लिखे गीतों में हो सकती है।

शिशु और बाल गीतों के अन्तर को समझने के लिये हमें सबसे पहले शिशु और बालक के बीच की आयु के अन्तर को समझना होगा। शिशु की आयु सीमा मनोवैज्ञानिकों ने 5 वर्ष की आयु तक मानी है। पर कुछ दूसरे मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि बालक के मानसिक विकास के क्रम में आयु की कोई सीमाएँ निर्धारित नहीं की जा सकतीं क्योंकि प्रत्येक बच्चे का मानसिक विकास अलग-अलग अपने ढंग से होता है। कोई बालक 5 वर्ष की आयु में ही 7-8 वर्ष के बालक की तरह समझदार हो जाता है और कोई बालक 7-8 वर्ष का हो जाने के बाद भी 5 वर्ष का ही बना रहता है। शिशु और बालगीतों की विवेचना की दृष्टि से हमें दोनों आयु वर्ग के बच्चों के बीच आयु की कोई रेखा तो खींचना ही होगी, चाहे वह कल्पित ही क्यों न हो। इसलिए यदि हम यह देखकर चलें कि 2-3 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए लोरियों की उपयोगिता रहती है, उसके बाद वे भाषा और शब्द संकेतों को समझने लगते हैं; आगे के 3-4 वर्षो तक उन्हें लिखा हुआ कुछ भी पढ़कर सुनाया जा सकता है तो उन वर्षो में जो गीत उनको सुनाने के लिए रचकर दिये जायें उन्हें शिशुगीत कहा जा सकता है।

5-6 वर्ष की आयु तक का बच्चा अपने आस-पास के वातावरण में जो कुछ देखता सुनता है उसी के आधार पर उसके मन में कुछ जिज्ञासायें उत्पन्न होती हैं, वह कुछ कल्पनायें करता, कुछ धारणायें बनाता और प्राप्त अनुभवों का उपयोग करना चाहता है। प्रत्येक बालक की परिस्थितियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं। कोई बालक

जिसका जन्म सभ्रांत नागरिक परिवार में होता है वह रेडियो, कूलर, फ्रिज और टेलीविजन अपने घर में देखता है। मोटर और वायुयान जैसे यातायात के साधनों से भी वह उसी आयु में परिचित हो जाता है। पर गाँव में किसी किसान के घर में जन्मा बच्चा तो हल, बैलगाड़ी और मिट्टी के तेल का दिया ही अपने घर में देखता है। उन परिस्थितियों से ही बच्चे की मानसिकता का निर्माण प्रारम्भ होता है। फिर भी पेड़-पौधे, फूल-पत्ती, तितली, बिल्ली, कुत्ता, चूहा, चाँद तारे, सूरज, बादल, धूप, पानी और अनेक पशु-पक्षी आदि ऐसे होते हैं जो समान रूप से सब बच्चों को प्रभावित करने लगते हैं। कुछ से उनके रागात्मक सम्बन्ध जुड़ते, कुछ से वह घृणा करते और कुछ से भयभीत भी होने लगते हैं। पर उस काल में उनके मनोवेगों में कोई स्थिरता नहीं होती है। वह क्षण में कुछ और क्षण में कुछ मालूम होने लगते हैं। धीरे-धीरे उनके मन में स्थिरता आती है और वह अपने परिचय के सीमित संसार में ही सुख-संतोष का अनुभव करने लगते हैं। शिशु और बाल दोनों आयु वर्ग के बच्चों के अनुभव, ज्ञान और मनोवेगों की स्थिरता के आधार पर ही हम शिशु और बाल गीतों के बीच की विभाजन रेखा की कल्पना कर सकते हैं।

बच्चों के भाषा-ज्ञान के आधार पर भी शिशु और बालगीतों में होने वाले अन्तर को समझा जा सकता है। आचार्य कृष्णविनायक फड़के का कहना था कि दो वर्ष की आयु तक के बच्चे का भाषा भंडार लगभग दो सौ शब्दों तक सीमित होता है। पर उसके बाद वह इतनी तेजी से बढ़ता है कि तीसरे वर्ष में वह एक हजार शब्द का हो जाता है। वह शब्द सारे हिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रों में अपने आंचलिक परिवेश और उच्चारण की भिन्नतायें लिए हुए अधिकतर एक से होते होंगे। भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय ने विशेषज्ञों की एक समिति गठित करके 500 और 2000 शब्दों की ऐसी दो सूचियाँ तैयार कराई थीं जिनकी सहायता से प्राथमिक शालाओं के बच्चों के लिये पुस्तकें तैयार की जा सकें। शिशु आयु वर्ग से आगे बाल आयु वर्ग के बच्चों के शब्द भंडार कितने बड़े और भरे पूरे होंगे इसका अनुमान दो वर्ष की आयु के बाद शब्द भंडार बढ़ने की रफ्तार को देखकर लगाया जा सकता है और इसी आधार पर शिशु और बाल गीतों के बीच की रेखा की कल्पना की जा सकती है। बच्चों के लिए कम शब्दों में अधिक बातें गीतों के माध्यम से ही कही जा सकती हैं। इसलिए जब बच्चा गद्य की भाषा में अपेक्षाकृत अधिक रुचि लेने लगे तो समझ लेना चाहिये कि वह शैशवावस्था को पार कर बाल्यावस्था में पहुँच गया है। इस अवस्था में भी गीतों में उसकी रुचि समाप्त नहीं हो जाती है।

पर वह कथा कहानियों में भी वैसी ही रुचि लेने लगता है और गीत ही उसके मनोभावों को छूने के लिये अधिक उपर्युक्त हों ऐसी बात नहीं रह जाती।

शैशवावस्था में बच्चे का शब्द ज्ञान उसके द्वारा सुने हुए शब्दों के रूप में ही होता है। लिखित रूप में वह शब्दों से बहुत कम परिचित होता है। वर्णमाला के अक्षरों की पहचान और उनके संयोग से बने कुछ थोड़े से शब्दों को ही वह लिखित रूप से समझ सकता है। पर बाल्यावस्था में पहुँचकर उसका लिखित रूप में शब्दों की पहचान का दायरा अपेक्षाकृत काफी विस्तृत हो जाता है और उसके शब्द-भंडार में तेजी से वृद्धि होने लगती है।

शिशुगीत बच्चों को मौखिक रूप में ही दिये जा सकते हैं। इससे शिशुगीतकारों का लेखकीय उत्तरदायित्व बहुत अधिक बढ़ जाता है। एक ओर तो उनका रचा हुआ शिशु गीत बच्चों को रुचिकर लगने वाला होना चाहिए। दूसरी ओर वह जिन हाथों में होकर बच्चों तक पहुंचेगा उन विभिन्न रुझानों और रुचियों के लोगों में से अधिकांश को संतुष्ट करने वाला होना चाहिए। क्योंकि यदि वह बच्चों को रुचिकर न हुआ तो वह उसे सुनने के बाद भी ग्रहण नहीं करेंगे। बड़ों के लिए लिखने वाले गीतकारों को अपना पाठक या श्रोतावर्ग जितनी आसानी से मिल जाता है उतना शिशु गीतकारों को नहीं। इसके अतिरित वयस्कों के गीतकार अपने पाठक वर्ग की रुचियों और मनोवृत्तियों को जितनी आसानी से जान सकते हैं उतनी आसानी से शिशु गीत गीतकार अपने पाठक या श्रोता वर्ग की रुचियों और मनोवृत्तियों को नहीं जान सकते। शिशु स्वभाव से ही बहुत चंचल होते हैं, उनका व्यक्तित्व बड़ा उलझन भरा होता है। वे अपना ध्यान किसी बात पर अधिक समय तक केन्द्रित नहीं रख सकते और स्वाभिमान उनमें बड़ों की अपेक्षा कहीं अधिक कूट-कूट कर भरा होता है। ऐसे पाठकों को गीतों के माध्यम से अपनी ओर आकर्षित करना कितना कठिन काम है इसलिए बहुत थोड़े शिशु गीत ही अपने पाठकों और श्रोताओं की रुचि की कसौटी पर खरे उतर पाते हैं। पर जो खरे उतर पाते हैं वह फिर परिवारों में बड़ों द्वारा अपने बच्चों और फिर बच्चों के बच्चों को सुनाये जाने लगते हैं और फिर उनके सुनाने की परम्परा सी बन जाती है। अंग्रेजी के अनेक शिशु गीत सैकड़ों वर्षो से बच्चों को सुनाये जाते रहे हैं। इस प्रकार पीढ़ी दर पीढ़ी सुनाये जाते रहने से उनके रूप में कभी-कभी यत्किंचित परिवर्तन भी हो जाता है और वह एक ऐसा सर्वग्राह्य सा रूप प्राप्त कर लेते है। कि फिर उसमें कोई परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं रहती। इस प्रकार से देखें तो अच्छे और लोकप्रिय शिशुगीतों की संरचना में प्रायः परम्परा का भी बड़ा हाथ होता है।

शिशुगीत कुछ ऐसे भी होते हैं जिनकी आवश्यकता बच्चों को अक्षर ज्ञान कराने के साथ-साथ ही होने लगती है। आज के सुविधा प्राप्त परिवारों में 3 वर्ष की आयु से बच्चों को अक्षर ज्ञान कराया जाने लगता है। उस समय उनके लिये रचे जाने वाले गीत वस्तुओं का बोध कराने के उद्देश्य से रचे गये दो-दो सरल तुकबन्दियों के रूप में हो सकते हैं। उनमें रोचकता हो तो बच्चे उन्हें तुरन्त याद भी कर लेते हैं जैसे 'ऐ' से 'ऐनक' का बोध कराने के लिए रचा गया यह शिशु गीत -

ऐनक दिखा रही है शान।
चढ़ी नाक पर पकड़े कान।।

शिशुगीतों का विस्तृत पाठक वर्ग इतना रुचि वैचित्र्य पूर्ण होता है कि अक्सर बड़े लेखकों ने अपनी बड़ी-बड़ी महत्वपूर्ण बातों को शिशुगीत के रूप में ढाल कर इस प्रकार से कह दिया है कि बड़ों को उनमें उतना ही आनन्द आता है जितना छोटे-छोटे बच्चों को। अंग्रेजी की एक बहुत प्रसिद्ध नर्सरी राइम है 'ओल्ड मदर हबर्ड वेन्ट टु ए कबर्ड' (बूढ़ी मां हबर्ड अलमारी तक गई)। इस राइम में यह वर्णन है कि जब उसे अलमारी में अपने कुत्ते को खिलाने के लिए कुछ नहीं मिला तो वह जगह-जगह दौड़ती फिरी। वह रोटी बनाने वाले, परचूनी और फल विक्रेता इत्यादि के पास गई। यह शिशुगीत उस समय लिखा गया था जब इंग्लैंड के राजा हेनरी अष्टम ने अपने मन्त्री वूल्जे को चांसलर (धर्म गुरू) के पद से हटा दिया था और संसार का धर्म गुरू पोप उसे उस पद पर आसीन बनाये रखने के लिए यूरोप के अनेक राजाओं के पास सहायता के लिए भागता फिरा था। उस नर्सरी राइम की 'ओल्ड मदर हबर्ड' वह पोप ही है। इसलिए बड़ों को शिशु गीत में वही आनन्द आता है जो अपने लिए किसी भी गीत में आ सकता है, और बच्चों को तो उसमें आनन्द आता ही है। इसी प्रकार जब भारत प्रसिद्ध इन्दिरा गाँधी ने दक्षिण में चिकमंगलूर चुनाव क्षेत्र से लोकसभा की सदस्यता के लिए चुनाव लड़ा था तो हिन्दी भाषी क्षेत्रों में उस विचित्र से लगने वाले नाम के नगर की बहुत चर्चा होने लगी थी। चुनाव में उन्होंने अपने प्रतिद्वन्दी को परास्त कर दिया था। तभी हिन्दी में यह शिशुगीत रच दिया गया था -

एक नगर है चिकमंगलूर, वहां बहुत से हैं लंगूर।
एक बार जब मियां गफूर, गये वहां खाने अंगूर।
बिल्ली एक निकल आई, वह तो थी उनकी ताई।
टांग पकड़ कर पटकी दी, जय हो बिल्ली बाई की।

शिशुगीतों में कविता के भाव या कला पक्ष का रंचमात्र चमत्कार न होते हुए भी वह कौन सी विशेषता होती है जिसके कारण वह इतने लोकप्रिय हो जाते हैं, यह जानने के लिए हम अंग्रेजी के दो सर्वाधिक लोकप्रिय शिशुगीतों की व्याख्या करके देख सकते हैं। वह दो शिशुगीत हैं -

जैक एंड जिल वेन्ट अप ए हिल
टु फेच ए पेल आफ वाटर
जेक फेल डाउन एंड ब्रोक हिज क्राउन
एंड जिल केम टंबलिंग आफटर।

(जैक और जिल एक पहाड़ी पर एक बाल्टी पानी लेने गये। जैक गिर गया और उसके सिर में चोट आई और जिल उसके पीछे लुढ़कते हुए नीचे आया।) दूसरा गीत है -

बा! बा! ब्लैक शीप हैव यू एनी वुल
यस सर! यस सर! थ्री बैग्ज फुल।
वन फार माई मास्टर एंड वन फार माई डेम
एंड नन फार दि लिटिल ब्वाय हू क्राहज इन दि लेन।

('ऐं! काली भेड़! क्या तेरे पास कुछ ऊन है?' 'हां जनाब! हां जनाब! मेरे पास तीन थैले भर ऊन है। एक थैला मेरे मालिक के लिए है, एक थैला मालकिन के लिए। लेकिन उस बच्चे के लिए कुछ नहीं है जो गली में रोता है।')

इनमें से पहिले शिशुगीत में एक छोटी सी घटना का वर्णन मात्र है। इस वर्णन से जो एक सम्पूर्ण चित्र बच्चे के मन पटल पर बनता है वह इतना स्पष्ट और बच्चे की दृष्टि में देखने में आकर्षक है कि बच्चा उसे देखता ही रह जाता है। वह उसे अपने मन में उतार लेना चाहता है। जैक और जिल की गतिशीलता उसे अच्छी लगती है। स्वभाव से ही विनोदप्रिय बच्चे यों भी जब किसी को फिसलकर लुढ़कते हुए देखते हैं तो हंस पड़ते हैं। बच्चे की सरल भावना के अनुरूप चित्र की रोचकता के साथ-साथ शब्द लालित्य भी इस गीत में ऐसा है कि बच्चे को उच्चारण सुख भी प्राप्त होता है। शिशु गीतों के द्वारा और भी बहुत से चित्र बच्चे को दिखाये जा सकते हैं। पर इस बात को ध्यान में रखना होगा कि किस चित्र में बच्चे की रुचि रहेगी। फिर इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि उसका वर्णन इस प्रकार से किया जाये कि बच्चे का ध्यान उस पर से हटकर कहीं इधर-उधर न होने पाये। एक-एक शब्द चुनकर इस प्रकार से रक्खा जाये कि वह एक भी शब्द कहीं अनावश्यक भर्ती का न हो।

दूसरे शिशुगीत में बच्चा एक रोयें वाली गुदगुदी भेड़ को देखकर उससे प्रश्न कर बैठता है - 'क्या तुम्हारे पास थोड़ी ऊन है?' इससे बच्चे को अपने मनोभाव की अभिव्यक्ति का सुख मिलता है। प्रश्न का उत्तर पाने की इच्छा होना स्वाभाविक ही है और भेड़ की ओर से जब उसे ठीक-ठीक उत्तर मिल जाता है कि 'हां-हां तीन थैले भर ऊन है। एक मेरे मालिक के लिए, एक मेरी मालकिन के लिए पर उस छोटे बच्चे के लिए एक भी नहीं जो गली में रोता है' तो बालक सन्तुष्ट ही नहीं हो जाता बल्कि अन्तिम पंक्ति उसे गुदगुदा भी देती है। वह सोचता था कि भेड़ कहेगी - तीन में से एक थैला छोटे बच्चे के लिये है। पर उसे लगता है भेड़ ने अन्तिम पंक्ति की बात उसे चिढ़ाने के लिये कही है और वह मन ही मन प्रसन्न होकर रह जाता है। एक छोटे से परिवार से सम्बद्ध होने का अनुभव सुख भी उसे इस गीत से प्राप्त होता है।

लयात्मकता तो इन दोनों गीतों की वह विशेषता है ही जिसमें बच्चे बहते चले जा सकते हैं। यदि उनमें कही हुई बात साधारण बोल-चाल की गद्य भाषा में कह दी गई होती तो कदाचित उन्हें बिल्कुल भी आकर्षित न करती। यह दोनों शिशुगीत बाल मन की गहराई में उतर कर बड़े स्वाभाविक ढंग से रच दिए गये मालूम होते हैं। कृत्रिमता उनमें कहीं लेशमात्र को भी नहीं है। इसी में उनकी लोकप्रियता का रहस्य छिपा हुआ है। शिशुगीतों पर इसी प्रकार से विचार करने से प्रत्येक गीत की लोकप्रियता के रहस्य को समझा जा सकता है।

बच्चों के भाषा ज्ञान में वृद्धि के साथ-साथ उन्हें शब्दों से खिलवाड़ करने में बड़ा आनन्द आता है। वह अक्सर शब्दों को तोड़-मरोड़ कर उच्चारण से या एक शब्द में कोई दूसरा असंगत शब्द जोड़कर बहुत खुश होते हैं। अक्सर एक सी ध्वनि उत्पन्न करने वाले शब्दों का बार-बार प्रयोग करने से उनका बड़ा मनोरंजन होता है। अंग्रेजी की एक नर्सरी राइम का अर्थ कुछ भी न हो पर उसमें 'प' अक्षर का प्रयोग बड़ी सुन्दरता से किया गया है -

पीटर पाइपर पिक्ड ए पेक आफ पिकिल्ड पेपर्स
ऐ पेक आफ पिकिल्ड पेपर्स पीटर पाइपर पिक्ड
इफ पीटर पाइपर पिक्ड एक पेक आफ पिकिल्ड पेपर्स
व्हेर इज़ द पेक आफ पिकिल्ड पेपर्स पीटर पाइपर पिक्ड।

हिन्दी में इस प्रकार के शिशुगीत अभी तक कम ही लिखे गये हैं। अक्सर निरर्थक शब्दों से बनी हुई अर्थहीन तुकबन्दियाँ भी उनका बड़ा मनोरंजन करती हैं। उन्हें अंग्रेजी में नानसेंस राइम्स कहते हैं। हिन्दी में ऐसी अर्थहीन तुकबन्दियां भी

अधिक नहीं है। आचार्य अज्ञात ने ऐसी कुछ तुकबन्दियां लिखने में अच्छी सफलता प्राप्त की है। उनकी एक तुकबन्दी है -

हरी मिर्च का किला बनाया, धनियां का दरवाजा
बैगन की झट तोप लगाई, लड़े नकलची राजा।

शिशुगीतों के आकार के विषय में भी यहाँ कुछ विचार कर लेना असंगत न होगा। बहुत से लोग शिशुगीतों की पहचान ही उनके छोटेपन से करते हैं, और चार-चार, छेः-छेः पंक्तियों के छोटे-छोटे गीतों को ही शिशुगीत मानते हैं। इसी आधार पर जापानी हाइकू शैली में तीन-तीन पंक्तियों के शिशुगीत लिखने के कुछ प्रयास हिन्दी में किये जाने लगे हैं पर आकार में छोटापन ही शिशुगीतों की पहचान हो यह बात कुछ युक्तिसंगत नहीं लगती। शिशुगीत दो से लेकर बीस और इससे भी अधिक पंक्तियों तक के हो सकते हैं। अगर किसी गीत में भाव और भाषा की दृष्टि से शिशु वर्ग के बच्चों का मन रमाने की क्षमता है तो वह कितना ही बड़ा हो पर रहेगा शिशुगीत ही। अंग्रेजी में कई बड़े-बड़े गीत नर्सरी राइम्स की श्रेणी में ही रक्खे गये हैं। उपरोक्त 'ओल्ड मदर हबर्ड' ही लगभग सौ पंक्तियों का एक गीत है। उसकी रचना प्रत्येक चार पंक्तियों में मूल भाव से सम्बद्ध एक अलग भाव रखकर कुछ इस प्रकार से की गई है कि बच्चे का मन ऊबता नहीं। बच्चा उसे जहाँ से भी सुने या पढ़े एक भाव का पूरा आनन्द ले सकता है।

हिन्दी में शिशुगीतों की रचना यों तो जब से बालगीत लिखे जाने लगे तभी से प्रारम्भ हो गई थी। पंडित श्रीधर पाठक के ही तोता, मैना, बतख, मोर आदि कई गीतों को शिशुगीतों की श्रेणी में लिया जा सकता है। उनके समकालीन कई अन्य कवियों गुणाकर, हरिऔध, आदि ने भी शिशुगीत लिखने का प्रयास किया है। पर बालगीतों से एक सर्वथा अलग विधा मानकर शिशुगीत लिखने का प्रयास तो स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के काल में ही किया गया। शिशुगीत नाम ही अधिक पुराना नहीं है। उसका प्रयोग सबसे पहले कब किया गया यह निश्चित रूप से बताना तो कठिन है। पर बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में 'शिशु' और 'बाल सखा' नाम के दो पत्रों के प्रकाशन से यह तो प्रकट होता ही है कि लोगों का ध्यान शिशु और बालक में अन्तर करके लिखने की ओर जाने लगा था। डॉ. श्रीप्रसाद ने अपने एक लेख में सन् 1933 में बालसखा में प्रकाशित एक शिशुगीत का उल्लेख करके यह दर्शाने की चेष्टा की है कि स्वतन्त्रता पूर्व काल में ही शिशुगीत लिखे जाने लगे थे। इससे भी बहुत पहले 'शिशु' मासिक पत्र की पुरानी फाइलों में ऐसे बहुत से गीत प्रकाशित मिल सकते हैं जिन्हें शिशुगीत नाम भले ही न दिया गया

हो, पर थे वह शिशुगीत ही। क्रमशः 1949 और 1953 में प्रकाशित पंडित सोहन लाल द्विवेदी की दो पुस्तकों 'शिशु भारती' और 'बाल भारती' नामों से यह प्रकट होता है कि उनका ध्यान शिशुओं और बालकों की कविताओं के अन्तर की ओर गया था। पर उनकी 'शिशु भारती' में दो चार को छोड़कर शिशु वर्ग के बच्चों के लिए कोई उपयुक्त गीत नहीं हैं। उसके अधिकांश गीत शिशु वर्ग को पार कर गये बच्चों के लिये लिखे मालूम होते हैं। उसका एक गीत 'चिड़ियां' इतना लम्बा है कि बच्चे इसे आदि से अन्त तक पढ़ते या सुनते रहने का धैर्य ही नहीं ला सकते। फिर भी उसकी यह चार पंक्तियां यदि चुनकर अलग से एक स्थान पर रख दी जायें तो एक अच्छे शिशुगीत का काम दे सकती हैं -

फुदक-फुदक कर आतीं चिड़ियाँ
चूं चूं चूं चूं गातीं चिड़ियाँ
फर फर पर फैलातीं चिड़ियाँ
फुर फुर फुर उड़ जातीं चिड़ियाँ

स्वतन्त्रता पूर्व के काल में द्विवेदी जी के अतिरिक्त और कई कवि ऐसे हुये हैं जिन्होंने विशेष रूप से शिशु आयु वर्ग के बच्चों के लिये लिखने की ओर ध्यान दिया था। उनमें डा. विद्या भूषण 'विभु', ठाकुर श्रीनाथसिंह और स्वर्ण सहोदर प्रमुख हैं। डॉ. विभु की बबुआ, ता, चन्दा आदि कई पुस्तकें तो विशेष रूप से शिशुओं के लिये लिखी हुई हैं। उनके कई गीत जैसे - 'हाथी झूम झूम झूम', 'हिल हिल मिलते' इत्यादि बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुये थे। स्वर्ण सहोदर की 'चगन मगन', 'गिनती के गीत' और 'नटखट हम' भी इसी प्रकार की पुस्तकें हैं। चगन मगन के गीत उन्होंने मात्रा विहीन शब्दों को आधार बनाकर लिखे हैं। ठाकुर श्रीनाथ सिंह की 'पिपहरी' और 'खेल घर' पुस्तकों में कई गीत और कुछ गीतों के अंश ऐसे हैं जो शिशुगीत ही कहे जायेंगे।

हिन्दी में शिशु गीतों और बालगीतों में होने वाले अन्तर को वर्ष 1980 तक स्पष्ट रूप से समझा नहीं गया और इसका प्रत्यक्ष प्रमाण रहीं कुछ ऐसी पुस्तकें जिनका नाम तो रख दिया गया बालगीत, पर वास्तव में वह थीं शिशुगीतों की पुस्तकें। जैसे शेरजंग गर्ग की 'सुमन बालगीत' और प्रयाग शुक्ल की 'सरस्वती बालगीत' पुस्तकों में सब के सब शिशुगीत हैं इसलिए उनके नाम 'सुमन शिशुगीत' और 'सरस्वती शिशुगीत' होना चाहिए थे। इसी प्रकार हरिश्चन्द्र की पुस्तक 'शिशुगीत' के गीत शिशुगीत से उतने ही दूर हैं जितने आदमी के सिर से सींग। उसकी अनेक रचनायें तो बालोपयोगी भी नहीं बल्कि किशोरोपयोगी गीतों की श्रेणी की हैं। मजदूर, किसान, सूरज का दुश्मन, मशाल आदि शिशुगीतों के उपयुक्त विषय ही नहीं हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद तो हिन्दी में जैसे शिशुगीतों की बाढ़ सी आ गई। अनेक बाल साहित्यकार बिना यह सोचे समझे कि शिशुगीत लिखना बाल गीत लिखने से भी कहीं अधिक कठिन काम है धड़ल्ले से शिशुगीत लिखने लगे। बाल पत्र-पत्रिकाओं ने बढ़ावा देकर अनेक नये शिशुगीतकार तैयार किए। कुछ लोगों का यह विचार है कि तत्कालीन 'पराग' सम्पादक आनन्द प्रकाश जैन ने इस काम में पहल की, पर यह सत्य नहीं है। शिशुगीत उसके बहुत पहले से ही हिन्दी के अनेक दैनिक पत्रों के रविवारीय अंकों और 'पराग' में भी छपने लगे थे। ऊपर शिशुगीत लिखने को बालगीत लिखने से भी कठिन कार्य जो कहा गया है वह इसलिए कि कोई भी वयस्क अध्ययन, अभ्यास और स्वयं अपने बचपन की याद की सहायता से बालक तो आसानी से बन सकता है, पर चंचल शिशु मन की थाह पाना और अपने शैशव की बातों को याद कर शिशु बन पाना अत्यन्त दुस्तर कार्य हैं और फिर अपनी भावनाओं में ही शिशु बनना आसानी से हर एक के वश की बात नहीं होती। श्रीमती शकुन्तला सिरोठिया ने अपने एक लेख में ठीक ही कहा है - 'शिशु गीत लिखना बाल गीत लिखने से कहीं अधिक कठिन काम है।'

शिशु गीतों की जो पुस्तकें हिन्दी में प्रकाशित होकर वर्ष 1980 तक सामने आईं, जिसमें बच्चों का हित के बजाय अहित ही अधिक हुआ होगा। कुछ थोड़ी सी जिन्हें हम वास्तव में शिशु गीतों की अच्छी पुस्तकें कह सकते हैं यह हो सकती हैं - शान्ता संत की 'बबुआ के बोल', विष्णुकांत पांडेय की 'वीणा गाये हँसे विनोद', 'मीठे मीठे प्यारे गीत', बालस्वरूप राही की 'दादी अम्मा, मुझे बताओ', शेरजंग गर्ग की 'सुमन बाल गीत', प्रयाग शुक्ल की 'सरस्वती बाल गीत', ओम प्रकाश सिंघल की 'शिशु गीत' भाग 1, 2, 3 सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की 'बतूता का जूता', 'महंगू की टाई', डॉ. श्रीप्रसाद की 'खेलो और गाओ', 'तक तक धिन', बच्चन की 'जन्म दिन की भेंट', शिव गोविन्द त्रिपाठी की 'चूँ चूं कुतरम', नारायणलाल परमार की 'बचपन की बांसुरी', सरोजनी अग्रवाल की 'हंसते गाते बाल गीत', जय प्रकाश भारती की 'झुनझुना', राम वचन सिंह आनन्द की 'गाओ गीत सुनाओ गीत' सेवकजी की 'दूध जलेबी', 'बिल्लों के गीत', 'नन्हें मुन्ने गीत' तथा मनोहर वर्मा द्वारा संपादित 'दूंगी तुझे बताशा'। इनमें से कई तो प्रकाशित भी इतनी सुन्दर सचित्र हुई हैं कि उन्हें श्रेष्ठतम शिशु गीतों की पुस्तकों की श्रेणी में रक्खा जा सकता है। यहाँ अशोक रंजन सक्सेना की एक पुस्तक 'छोटे-छोटे गीत' का भी उल्लेख आवश्यक मालूम होता है। उसमें चित्र एक भी नहीं है। न कोई सजधज है, पर गीत इतने अच्छे हैं कि अप्रैल से जुलाई तक उसके दो संस्करण निकालना आवश्यक हो गया।

'छिः साल की छोकरी', 'आलू की पकौड़ी दही के बड़े', 'छुट्टी हुई खेल की', 'राजा बेटा निकला घर से', 'मुर्गा बोला कुकड़ूँ कूं', 'चन्दा मामा दूर के', 'तोता बोलो सीताराम', 'मेरी गुड़िया कुछ तो बोल', 'बतूता का जूता', 'चिड़िया ओ चिड़िया कहाँ है तेरा घर', 'हाथी राजा कहाँ चले', 'लाल टमाटर! लाल टमाटर!' 'दाना खाने गाना गाने आती है वह चिड़िया', 'राम नगर से राजा आया', 'भालू की माँ बोली कालू! आज तुझे नहला दूं', 'फोन उठाकर कुत्ता बोला', 'भरा समन्दर गोपी चन्दर', 'अगर मगर', 'चम चम चम चम चमक रहे हैं आसमान में तारे', 'बिल्ली के घर बिल्ली आई', 'एक पेड़ पर दो बन्दर थे दोनों नटखट', 'चूं चूं कुतरम', 'जुगनू भाई जुगनू भाई कहाँ चले' आदि कुछ ऐसे बाल गीत हैं जो बच्चों में लोकप्रियता अर्जित कर चुके हैं।

हिन्दी के अनेक शिशुगीतों में वह सब विशेषतायें और गुण विद्यमान हैं जिनकी अपेक्षा किसी अच्छे शिशु गीत से की जा सकती है। बच्चा एक चिड़िया को बार-बार आते जाते देखता है। कितनी स्वाभाविक है उसकी यह जिज्ञासा -

चिड़िया ओ चिड़िया कहाँ है तेरा घर
उड़ उड़ आती है जहां से फर फर
उड़ उड़ जाती है जहां को फर फर।

उसकी इस जिज्ञासा का समाधान कितनी सरलता से आगे की पंक्तियों में कर दिया गया है -

इमली के एक बड़े घने पेड़ पर
घास फूस तिनकों का बना मेरा घर
उड़ उड़ आती हूं वहीं से फर फर
उड़ उड़ जाती हूं वहीं को फर फर।

इस प्रकार अंग्रेजी के 'बाबा ब्लैक शीप' की तरह का यह एक बड़ा रोचक शिशु गीत बन जाता है।

निरंकारदेव सेवक के शिशुगीत 'हाथी राजा' में सड़क पर जाते हुए एक हाथी को देखकर बच्चा जब उससे बात करने को उत्सुक हो उठता है, तो उसे अपने घर भी निमंत्रित करता है। पर इतने बड़े हाथी के घर आकर कुर्सी पर बैठने की कल्पना उसे गुदगुदाये बिना नहीं रहती -

हाथी राजा कहाँ चले?
सूंड हिलाते कहाँ चले?
पूंछ हिलाते कहाँ चले?

मेरे घर आ जाओ ना
हलुआ-पूरी खाओ ना!
आओ बैठो कुर्सी पर
कुर्सी बोली चर-चर-चर।

इसी प्रकार सेवकजी ने 'लाल टमाटर' शिशुगीत में एक बच्चे और टमाटर के बीच होने वाले संवाद में एक शिशु का समूचा मनोविज्ञान उभर आया है -

'लाल टमाटर, लाल टमाटर, मैं तो तुमको खाऊंगा।'
'अभी न खाओ मैं कुछ दिन में और अधिक पक जाऊंगा।'
'लाल टमाटर, लाल टमाटर, मुझको भूख लगी भारी।'
'भूख लगी है तो तुम खा लो यह गाजर-मूली सारी।'
'लाल टमाटर, लाल टमाटर, मुझको तो तुम भाते हो।'
'तुमको जो अच्छा लगता है, उसको तुम क्यों खाते हो?'
'लाल टमाटर, लाल टमाटर, अच्छा तुम्हें न खाऊंगा,'
'मगर तोड़कर डाली पर से अपने घर ले जाऊंगा।'

कुछ शिशुगीत अपनी गीतात्मकता और लयात्मकता के कारण ही इतने रोचक हो जाते हैं कि यदि उनके भाव और भाषा सरल हों, तो बच्चे उन्हें अपनाकर गाना-गुनगुनाना पसंद करते हैं। ऐसे गीतों में डॉ. विद्याभूषण विभु का गीत 'हाथी झूम झूम झूम' के अतिरिक्त डॉ. श्रीप्रसाद के 'हाथी चल्लम चल्लम' और 'दाना खाने गाना गाने आती है यह चिड़िया' गीत बहुत अच्छे बन पड़े हैं।

हिन्दी के श्रेष्ठ शिशुगीतकारों में स्वर्गीय रामकृष्ण शर्मा खद्दर जी, स्व. सत्य प्रकाश कुलश्रेष्ठ, श्री कन्हैया लाल मत्त और श्री मंगरूराम मिश्र के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। सत्यप्रकाश कुलश्रेष्ठ अलीगढ़ के पास ग्रामीण अंचल के निवासी थे। उन्होंने अपना जीवन ही गांव के बच्चों की शिक्षा को समर्पित कर रक्खा था। उन्होंने बहुत से सुन्दर शिशुगीत और बालगीत लिखे हैं। उनका एक हस्तलिखित संकलन सेवक जी को किसी तरह प्राप्त हो गया था। उनका एक शिशुगीत है जो थोड़ी ग्रामीणता लिए हुए भी बड़ा रोचक है -

बन्दर गया खेत में भाग
चुट्टर मुट्टर तोड़ा साग।
आग जलाकर चट्टर मट्टर
साग पकाया खद्दर बद्दर
सापड़ सूपड़ खाया खूब

पोंछा मुंह उखाड़कर दूब
चलनी बिछा, ओढ़कर सूप
डटकर सोये बन्दर भूप।

रामकृष्ण शर्मा खद्दर जी भी शिशु शिक्षा के लिए एक समर्पित व्यक्तित्व थे। उन्होंने अनेक शिशु विद्यालयों की स्थापना की और अन्त में बिरला बाल मन्दिर पिलानी में प्रधानाध्यापक हो गये थे। शिशु मनोविज्ञान को वह बहुत अच्छी तरह समझते थे। उन्होंने अपने आस-पास के बच्चों के लिये ही कुछ बड़े मधुर शिशु गीत लिखे हैं। जो किसी पत्र-पत्रिका में भी कभी प्रकाशित नहीं हुए। उनकी भी हस्तलिखित प्रति से उदाहरणार्थ दो गीत यहाँ प्रस्तुत हैं -

(क) छैः साल की छोकरी। सिर पर रक्खे टोकरी
टोकरी में आम हैं। नहीं बताती दाम है।
नहीं बताती नाम है।
दाम नाम क्या पूछना। हमें आम है चूसना।

(ख) आलू की पकौड़ी दही के बड़े
मुन्नी की चुन्नी में तारे जड़े।
मूंग की मगौड़ी कलमी बड़े
मंगू की छत पर दो बन्दर लड़े।
खस्ता कचौड़ी कांजी के बड़े
गप्पू जी फिसले तो औंधे पड़े।

सारिका के सम्पादक श्री मंगरू राम मिश्र सन् 60 के आसपास जब 'पराग' के सम्पादकीय विभाग में थे तो उन्होंने कुछ अच्छे शिशुगीत लिखे थे जो पराग में तो प्रकाशित हुए पर पुस्तक रूप में नहीं। इसी प्रकार कन्हैयालाल मत्त बहुत वर्षो से अच्छे शिशुगीत लिखते रहे हैं पर उनकी एक भी पुस्तक प्रकाशित होकर सामने नहीं आई। बाद में मत्त जी की अनेक पुस्तकों का प्रकाशन भी हुआ।

हिन्दी शिशुगीतों पर प्रारम्भ से ही अंग्रेजी की नर्सरी राइम्स और बंगाली के छड़ा गीतों का प्रभाव रहा है। शकुन्तला सिरोठिया की 'शिशु गीत माला' और आचार्य अज्ञात की 'नन्हें मुन्ने गीत' पुस्तकें तो अंग्रेजी नर्सरी राइम्स के पद्यानुवाद ही हैं। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का यह शिशु गीत भी बा बा ब्लैक शीप नर्सरी राइम का अनुवाद है -

बा बा भेड़ कलूटी, ऊन है भई ऊन
हाँ हाँ भाई जान थैले भर भर तीन

'छैः साल की छोकरी', 'आलू की पकौड़ी दही के बड़े', 'छुट्टी हुई खेल की', 'राजा बेटा निकला घर से', 'मुर्गा बोला कुकड़ूँ कूं', 'चन्दा मामा दूर के', 'तोता बोलो सीताराम', 'मेरी गुड़िया कुछ तो बोल', 'बतूता का जूता', 'चिड़िया ओ चिड़िया कहाँ है तेरा घर', 'हाथी राजा कहाँ चले', 'लाल टमाटर! लाल टमाटर!' 'दाना खाने गाना गाने आती है वह चिड़िया', 'राम नगर से राजा आया', 'भालू की माँ बोली कालू! आज तुझे नहला दूं', 'फोन उठाकर कुत्ता बोला', 'भरा समन्दर गोपी चन्दर', 'अगर मगर', 'चम चम चम चम चमक रहे हैं आसमान में तारे', 'बिल्ली के घर बिल्ली आई', 'एक पेड़ पर दो बन्दर थे दोनों नटखट', 'चूं चूं कुतरम', 'जुगनू भाई जुगनू भाई कहाँ चले' आदि कुछ ऐसे बाल गीत हैं जो बच्चों में लोकप्रियता अर्जित कर चुके हैं।

हिन्दी के अनेक शिशुगीतों में वह सब विशेषतायें और गुण विद्यमान हैं जिनकी अपेक्षा किसी अच्छे शिशु गीत से की जा सकती है। बच्चा एक चिड़िया को बार-बार आते जाते देखता है। कितनी स्वाभाविक है उसकी यह जिज्ञासा -

चिड़िया ओ चिड़िया कहाँ है तेरा घर
उड़ उड़ आती है जहां से फर फर
उड़ उड़ जाती है जहां को फर फर।

उसकी इस जिज्ञासा का समाधान कितनी सरलता से आगे की पंक्तियों में कर दिया गया है -

इमली के एक बड़े घने पेड़ पर
घास फूस तिनकों का बना मेरा घर
उड़ उड़ आती हूं वहीं से फर फर
उड़ उड़ जाती हूं वहीं को फर फर।

इस प्रकार अंग्रेजी के 'बाबा ब्लैक शीप' की तरह का यह एक बड़ा रोचक शिशु गीत बन जाता है।

निरंकारदेव सेवक के शिशुगीत 'हाथी राजा' में सड़क पर जाते हुए एक हाथी को देखकर बच्चा जब उससे बात करने को उत्सुक हो उठता है, तो उसे अपने घर भी निमंत्रित करता है। पर इतने बड़े हाथी के घर आकर कुर्सी पर बैठने की कल्पना उसे गुदगुदाये बिना नहीं रहती -

हाथी राजा कहाँ चले?
सूंड हिलाते कहाँ चले?
पूंछ हिलाते कहाँ चले?

मेरे घर आ जाओ ना
हलुआ-पूरी खाओ ना!
आओ बैठो कुर्सी पर
कुर्सी बोली चर-चर-चर।

इसी प्रकार सेवकजी ने 'लाल टमाटर' शिशुगीत में एक बच्चे और टमाटर के बीच होने वाले संवाद में एक शिशु का समूचा मनोविज्ञान उभर आया है -

'लाल टमाटर, लाल टमाटर, मैं तो तुमको खाऊंगा।'
'अभी न खाओ मैं कुछ दिन में और अधिक पक जाऊंगा।'
'लाल टमाटर, लाल टमाटर, मुझको भूख लगी भारी।'
'भूख लगी है तो तुम खा लो यह गाजर-मूली सारी।'
'लाल टमाटर, लाल टमाटर, मुझको तो तुम भाते हो।'
'तुमको जो अच्छा लगता है, उसको तुम क्यों खाते हो?'
'लाल टमाटर, लाल टमाटर, अच्छा तुम्हें न खाऊंगा,'
'मगर तोड़कर डाली पर से अपने घर ले जाऊंगा।'

कुछ शिशुगीत अपनी गीतात्मकता और लयात्मकता के कारण ही इतने रोचक हो जाते हैं कि यदि उनके भाव और भाषा सरल हों, तो बच्चे उन्हें अपनाकर गाना-गुनगुनाना पसंद करते हैं। ऐसे गीतों में डॉ. विद्याभूषण विभु का गीत 'हाथी झूम झूम झूम' के अतिरिक्त डॉ. श्रीप्रसाद के 'हाथी चल्लम चल्लम' और 'दाना खाने गाना गाने आती है यह चिड़िया' गीत बहुत अच्छे बन पड़े हैं।

हिन्दी के श्रेष्ठ शिशुगीतकारों में स्वर्गीय रामकृष्ण शर्मा खद्दर जी, स्व. सत्य प्रकाश कुलश्रेष्ट, श्री कन्हैया लाल मत्त और श्री मंगरूराम मिश्र के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। सत्यप्रकाश कुलश्रेष्ठ अलीगढ़ के पास ग्रामीण अंचल के निवासी थे। उन्होंने अपना जीवन ही गांव के बच्चों की शिक्षा को समर्पित कर रक्खा था। उन्होंने बहुत से सुन्दर शिशुगीत और बालगीत लिखे हैं। उनका एक हस्तलिखित संकलन सेवक जी को किसी तरह प्राप्त हो गया था। उनका एक शिशुगीत है जो थोड़ी ग्रामीणता लिए हुए भी बड़ा रोचक है -

बन्दर गया खेत में भाग
चुट्टर मुट्टर तोड़ा साग।
आग जलाकर चट्टर मट्टर
साग पकाया खद्दर बद्दर
सापड़ सूपड़ खाया खूब

पोंछा मुंह उखाड़कर दूब
चलनी बिछा, ओढ़कर सूप
डटकर सोये बन्दर भूप।

रामकृष्ण शर्मा खद्दर जी भी शिशु शिक्षा के लिए एक समर्पित व्यक्तित्व थे। उन्होंने अनेक शिशु विद्यालयों की स्थापना की और अन्त में बिरला बाल मन्दिर पिलानी में प्रधानाध्यापक हो गये थे। शिशु मनोविज्ञान को वह बहुत अच्छी तरह समझते थे। उन्होंने अपने आस-पास के बच्चों के लिये ही कुछ बड़े मधुर शिशु गीत लिखे हैं। जो किसी पत्र-पत्रिका में भी कभी प्रकाशित नहीं हुए। उनकी भी हस्तलिखित प्रति से उदाहरणार्थ दो गीत यहाँ प्रस्तुत हैं -

(क) छैः साल की छोकरी। सिर पर रक्खे टोकरी
टोकरी में आम हैं। नहीं बताती दाम है।
नहीं बताती नाम है।
दाम नाम क्या पूछना। हमें आम है चूसना।

(ख) आलू की पकौड़ी दही के बड़े
मुन्नी की चुन्नी में तारे जड़े।
मूंग की मगौड़ी कलमी बड़े
मंगू की छत पर दो बन्दर लड़े।
खस्ता कचौड़ी कांजी के बड़े
गप्पू जी फिसले तो औंधे पड़े।

सारिका के सम्पादक श्री मंगरू राम मिश्र सन् 60 के आसपास जब 'पराग' के सम्पादकीय विभाग में थे तो उन्होंने कुछ अच्छे शिशुगीत लिखे थे जो पराग में तो प्रकाशित हुए पर पुस्तक रूप में नहीं। इसी प्रकार कन्हैयालाल मत्त बहुत वर्षो से अच्छे शिशुगीत लिखते रहे हैं पर उनकी एक भी पुस्तक प्रकाशित होकर सामने नहीं आई। बाद में मत्त जी की अनेक पुस्तकों का प्रकाशन भी हुआ।

हिन्दी शिशुगीतों पर प्रारम्भ से ही अंग्रेजी की नर्सरी राइम्स और बंगाली के छड़ा गीतों का प्रभाव रहा है। शकुन्तला सिरोठिया की 'शिशु गीत माला' और आचार्य अज्ञात की 'नन्हें मुन्ने गीत' पुस्तकें तो अंग्रेजी नर्सरी राइम्स के पद्यानुवाद ही हैं। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का यह शिशु गीत भी बा बा ब्लैक शीप नर्सरी राइम का अनुवाद है -

बा बा भेड़ कलूटी, ऊन है भई ऊन
हाँ हाँ भाई जान थैले भर भर तीन

एक मुन्ना राजा का, एक मुन्नी रानी का
पर जो रोता गली में, उसके लिए नहीं एक भी।

बंगाली छड़ा गीतों में सामाजिक और पारिवारिक परिस्थितियों के कुछ बहुत अच्छे चित्र, भालू, बन्दर आदि प्रतीकों के सहारे चित्रित मिलते हैं। हिन्दी में विष्णु कांत पांडे और श्रीप्रसाद आदि अनेक कवियों ने बहुत से उसी प्रकार के वस्तुस्थितियों का चित्रण करने वाले शिशु गीत लिखे हैं। डॉ. श्रीप्रसाद का एक गीत है –

ढम ढम ढम ढम ढोल बजाता कूद कूद कर बन्दर
छम छम घुंघरू बांध नाचता भालू मस्त कलन्दर
कुहू कुहू कू कोयल गाती मीठा मीठा गाना
मुर्गे की शादी में है बस दिन भर मौज उड़ाना।

इसी प्रकार का गीत विष्णुकांत पांडेय का है –

रिमझिम रिमझिम बूंदें नाचें, बन्दर नाचे छम छम छम
ताता थैया भालू नाचे, जुगनू नाचे चम चम चम।
थिरक थिरक कर मोर नाचते सोन चिरैया छूम छनन छनन
ठुमुक ठुमुक कर गुड़िया नाचे, नाच नाच उठता है मन।

विष्णुकांत पांडेय का 'बंदर की सैर' शिशुगीत भी अपनी मोहकता में बेजोड़ है –

मोटर पर चढ़ बंदर निकला
करने सैर-सपाटा
चौराहे पर खड़ी पुलिस को
उसने रुक कर डांटा।
बेवकूफ हट जा आगे से
आती मेरी गाड़ी
दबकर मर जायेगा नाहक,
कैसा निपट अनाड़ी।

बात शिशुगीतों की हो और सर्वेश्वर की 'बबूता का जूता' याद न आये, ऐसा नहीं हो सकता। एक साधारण विषय की असाधारण प्रस्तुति की जो कला सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के पास है, उसी के चलते यह रचना अविस्मरणीय बन चुकी है-

इब्नबतूता/पहन के जूता/निकल पड़े तूफान में
थोड़ी हवा नाक में घुस गई/थोड़ी घुस गई कान में
कभी नाक को कभी कान को/मलते इब्नबतूता

इसी बीच में निकल पड़ा/उनके पैरों का जूता
उड़ते-उड़ते जूता उनका/जा पहुंचा जापान में
इब्नबतूता खड़े रह गये/मोची की दूकान में।

दृश्य-बिम्ब की अभिनव योजना ने इस गीत को अपने ढंग का अकेला बना दिया है। बच्चों को लगता है, जैसे वे इन पंक्तियों को न सिर्फ कानों से सुन रहे हैं, अपितु आंखों से मंच पर अभिनीत होते हुए भी देख रहे हैं। दृश्य-विधान 'क्लाइमेक्स' पर तब पहुंच जाता है, जब इब्नबतूता के पांव से निकले जूते का उड़ते-उड़ते जापान पहुंचना और उनका मोची की दूकान पर भौंचक खड़ा रह जाना दृष्टिगत होता है। इसी प्रकार का उनका एक सुंदर शिशुगीत 'महँगू की टाई' है, जिसमें सामयिक संदर्भों को कविता के कलेवर में कवि ने जिस कौशल से टांका है, उसकी दाद देनी पड़ती है। बढ़ती मंहगाई, बेरोजगारी की पृष्ठभूमि में महँगू की टाई का दो पाई में भी न बिक पाना विषाद के रंग को गहरा देता है और शिशु गीतों में व्यंग्य के समावेश के सर्वेश्वर दक्ष चितेरे बन जाते हैं -

महँगू ने महँगाई में
पैसे फूंके टाई में
फिर भी मिली न नौकरी
औंधे पड़े चटाई में!
गिट-पिट करके हार गये
टाई ले बाजार गये
दस रुपये की टाई उनकी
बिकी नहीं दो पाई में।

खिलंदड़े शिशुगीत लिखने में कन्हैयालाल 'मत्त' को जो महारत थी, उसकी वजह से उनके शिशुगीत बच्चों को हंसाने-गुदगुदाने में सफल रहे। शायद यही वह गुण है, जिसके चलते ये गीत बड़ी सहजता से बच्चों की जुबान पर चढ़ जाते हैं। एक उदाहरण देखिए -

चुन्नू-मुन्नू गए बजार
वहाँ मिले पेटूमल यार
पेटूमल ने तोंद बढ़ाई
हलवाई पर हुई चढ़ाई
भर-भर थाल कचौड़ी खाई
तीन किलो खा गए अचार
मगर न आई एक डकार।

शकुन्तला सिरोठिया लोरियों के क्षेत्र में तो ख्यातिलब्ध रहीं ही, बाल काव्य की दूसरी दिशाओं में भी उन्होंने अपनी प्रतिभा से प्रभावित किया। उन्हें एक ऐसा मातृ हृदय मिला था, जो बड़ी करीबी से बच्चों के हर क्रीड़ा-कौतुक को निरखता-परखता था और फिर अवसर मिलते ही कागज पर उतारे बिना नहीं रहता है। उनके निम्न शिशु में लयात्मकता और चित्रोपमता का मणि-कांचन संयोग अद्भुत दीप्ति उपजा रहा है –

ढुम्मुक-ढुम, भई ढुम्मुक ढुम
'मैं हूं राजा नौकर तुम।'
'चू चू बात गलत कहते हो
मैं हूं राजा नौकर तुम।'
मंटू-बंटू दोनों भाई
दोनों में ही हुई लड़ाई
गिर गए दोनों ढुम्मुक ढुम
पिट गए दोनों धुम्मुक धुम।

'पराग' के शिशु-गीतों के प्रकाशन के दौरान जो नाम हमें बहुतायत से दिखाई दिया और बार-बार विमुग्ध करता रहा, वह है चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक'। उनके शिशु गीतों में सहज ही कंठस्थ हो जाने वाला गुण प्रभूत मात्रा में रहा। सुप्रसिद्ध बाल साहित्यकार श्री चक्रधर नलिन ने 'सागर से गहरे, हिमालय से ऊंचे मयंकजी' शीर्षक एक आलेख में एक रोचक घटना का विवरण दिया है। वर्ष 1997 ई. में कानपुर के एक विद्यालय में बच्चों के बीच काव्य-पाठ का आयोजन होते समय संयोजक ने शर्त रखी कि जिस बाल कवि की अभी सुनाई रचना की कुछ पंक्तियों को यदि दस बच्चे सुना देंगे, तो कवि एवं बालकवृंद को विशेष रूप से सम्मानित किया जायेगा। इस अवसर पर मयंकजी की कविता 'मैंने बहुत मिठाई खाई' ने यह शर्त जीतकर प्रमाणित कर दिया कि उसमें बच्चों की जुबान पर तुरंत चढ़ जाने वाला गुण है और शायद यही एक अच्छे शिशुगीत की सबसे बड़ी विशेषता है। 'मिस्टर मच्छर' में भी उनकी भाषा की यही सरलता और रवानगी हमें देखने को मिलती है –

मिस्टर मच्छर रात-रात भर
गाना गाते भन-भन-भन
उनका गाना बड़ा सुहाना
लेकिन उनसे डरते हम।
कभी नाक में, कभी कान में

वह चुटकी ले लेते हैं
मच्छरदानी में घुसकर हम
उनको चमका देते हैं।
वह बाहर से झूम-झूम कर
सा रे गा मा गाते हैं
हम अंदर लेटे-लेटे ही
मुक्का उन्हें दिखाते हैं।

डॉ. राष्ट्रबंधु के शिशुगीतों में अपना एक अलग रंग और तेवर है। 'मन चंगा तो कठौती में गंगा' की जानी-मानी लोकोक्ति को उन्होंने एक सुंदर शिशुगीत का रूप प्रदान कर दिया है –

कहा बंदरिया ने बंदर से / चलो नहाएं गंगा
बच्चों को छोड़ेंगे घर में / होने दो हुड़दंगा।
बंदर और बंदरिया दोनों / भाग-भाग कर आए
किंतु घाट पर डंडे के बल / दोनों गए भगाए।
बंदर बोला चलो दौड़कर / यहाँ मचा है दंगा
मन चंगा तो भरी कठौती / बन जाती है गंगा।

हाथी पर शिशुगीत लिखने में बालकवियों में होड़ लगी रही। कदाचित् यह ऐसा विषय था, जिसमें ध्वन्यात्मकता का समाहार स्वतः और बड़ी खूबसूरती से हो जाता था। तभी तो डॉ. विद्याभूषण विभु और डॉ. श्रीप्रसाद की कविताओं की परम्परा में प्रयाग शुक्ल की 'धम्मक धम्मक' ने भी अपनी प्रविष्टि दर्ज़ कराई –

धम्मक धम्मक आता हाथी/धम्मक धम्मक जाता हाथी
अपनी सूंड़ उठाता हाथी/अपनी सूंड़ गिराता हाथी
अपने कान झुकाता हाथी/अपनी पूंछ हिलाता हाथी
जब पानी में जाता हाथी/भर-भर सूंड़ नहाता हाथी
कितने केले खाता हाथी/यह तो नहीं बताता हाथी।

यह शिशुगीत गत्यात्मकता में अपनी मिसाल नहीं रखता। हाथी का धम्मक-धम्मक चाल से आना-जाना, हाथी का सूंड़ उठाना और गिराना, हाथी का कान झुकाना एवं पूछ हिलाना, तालाब के पानी में पहुंचने पर सूंड़ से पानी भर-भर के नहाना और चाव से अनगिनत केले खा जाना एक ऐसा गत्यात्मक चित्र है, जो बच्चों की आंखों के सामने हाथी के संपूर्ण कार्य व्यापार साकार कर देता है। हाथी पर लिखे जाने वाले शिशुगीतों में विषय की समानता के बावजूद इस गीत की अपनी अलग पहचान है।

बच्चों की दुनिया अपनी जिन रंगारंग छवियों से हमें विमुग्ध करती है, उसमें एक यह है कि उनमें बात को बढ़ा-चढ़ाकर कहने की आदत होती है। जो बच्चा अपनी कल्पना की आंखों से दादाजी की छड़ी में घोड़े को देख लेता है, वह किसी घटना को जब ब्योरेवार बताने बैठता है, तो न जाने कितना कुछ अपने मन से जोड़ता चला जाता है। तभी तो सीताराम गुप्त का 'कार पड़ी बीमार' शिशुगीत बाल मन के अनुरूप ढलने में पीछे नहीं रहा है –

गप्पीमल ने गप्प लड़ाई
खुली लाटरी, भाई
आज हमारे घर पर उससे
नई कार है आई,
भीड़ जमा जब हुई देखने
गप्पीजी की कार
गप्पी बोले, अस्पताल में
कार पड़ी बीमार।

शेरजंग गर्ग ने सिर्फ चार पंक्तियों के एक शिशुगीत 'मौजीराम-फौजीराम' में अपनी कला की ऐसी बानगी दिखाई है, जिस पर वाहवाही लूटने में वह सफल रहे हैं –

लड्डू खाते मौजीराम
लड़ने जाते फौजीराम
मौजी को है काम हराम
फौजी को आराम हराम।

प्रेमचंद्र गोस्वामी का शिशुगीत 'राशन कार्ड' सामयिक जीवन की जटिलता और संघर्षशीलता की पृष्ठभूमि पर लिखा गया है। तभी तो उसमें बढ़ती महँगाई के चलते बंदरलाल के राशन के दफ्तर में जाने का उल्लेख है –

राशन के दफ्तर में जाकर
बोले बंदर लाल
भाव चढ़ गए इतने, जिसकी
मिलती नहीं मिसाल!
अब चोरी से भोजन पाना
बहुत हो गया हार्ड
जल्दी से बनवा दो भाई
मेरा राशन कार्ड।

पर शिशुगीत न तो वातावरण और परिस्थितियों के प्रभाव से रचे जाते हैं न बड़ों की समझ या दूसरी भाषाओं की प्रेरणा से। उनमें तो शिशुओं की अपनी भावनायें, जिज्ञासायें और प्रतिक्रियाएं आपसे आप मुखरित होती हैं। सच्चा शिशुगीत तो शिशु की उस आत्मा से निकलता है जो विश्व के सब शिशुओं की आत्मा होती है। परिस्थितियां भिन्न होने से उसके बाह्य रूप भिन्न हो सकते हैं पर उसकी मूल आत्मा में कोई अन्तर नहीं हो सकता। इसीलिए हैगर्ड ने एक स्थान पर कहा था "जीवन के प्रारम्भ में ही बच्चों को शिशु गीत देकर हम उसका सम्बन्ध उस सृष्टि से जोड़ देते हैं जो सर्वत्र नियम क्रमबद्ध है।" बच्चे के मानसिक विकास में जितनी उपयोगिता शिशुगीत की हो सकती है उतनी बाल साहित्य की किसी भी अन्य विधा बाल कहानी, बाल गीत, नाटक, जीवनी या ज्ञानवर्द्धक किसी में लिखे साहित्य में नहीं। शिशु गीतों को सुन-सुन कर बच्चे अपनी उच्छृंखल भावनाओं को संतुलित करना आप से आप सीखते हैं और यह उनके भविष्य के जीवन में उन्हें आत्मानुशासित और आत्मविश्वासी बनाने में बड़ा उपयोगी होता है। सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक फ्रायड का कहना था कि मनुष्य को जीवन में जो कुछ बनना होता है वह पाँच वर्ष तक की आयु में बन चुकता है। शिशु गीत साहित्य लगभग इसी आयु तक के बच्चों के लिए रचा जाता है।

5 : चाँद-तारों के बालगीत

आकाश के चाँद-तारे अनादि काल से मनुष्यों के लिए कौतूहल और जिज्ञासा का विषय रहे हैं। संसार की विभिन्न भाषाओं के साहित्य में कवियों ने हजारों-लाखों प्रकार की कल्पनाएं की हैं। वैज्ञानिक अनुसंधानों के आधार पर चाँद-तारों के विषय में अनेक तथ्य उपलब्ध होते हुए भी संसार के मनुष्यों में अनेक धारणाएं और विश्वास अनादि काल से ही प्रचलित हैं। यह तो संसार के मनुष्यों का एक सर्वमान्य विश्वास-सा है कि चाँद-तारे अपनी गतिविधि से मनुष्य के भाग्य का निर्माण करते हैं। इसी प्रकार तारों के विषय में भी यह विश्वास भारतवर्ष में बहुत प्रचलित है कि प्रत्येक अच्छे कार्य करने वाला व्यक्ति मृत्यु के उपरांत तारा बनकर आकाश में चमकने लगता है और मोक्ष पद प्राप्त कर लेने के कारण पुनर्जन्म के बंधन से छूट जाता है।

चन्द्रमा के उद्भव के विषय में भी अमृतमंथन की कथा के अनुसार देव-दानवों के संपूर्ण शक्ति से मंदराचल पर्वत को घुमाकर क्षीर सागर का मंथन करने पर सागर के गर्भ से प्रकाशयुक्त चन्द्रमा प्रकट हुआ। इसके बाद लक्ष्मी भी सागर से निकलीं। इस किवदंती के आधार पर अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने 'चँदा मामा' शीर्षक बालगीत लिखा है –

मेरे प्यारे बड़े दुलारे। ऐ मेरी आँखों के तारे।।
आ मैं तेरा जी बहलाऊँ। तुझे अनूठी बात बताऊँ।।
जो है दूध समुद्र कहाता। कढ़ीं उसी से लक्ष्मी माता।।
प्यारा चान्द चान्दनी वाला। उसमें से ही गया निकाला।।
इसी लिए दोनों मन भाये। जग में भाई बहन कहाये।।
जगत पिता जो माना जाता। वह लछमीपति है कहलाता।।
इस नाते हैं सभी उमगते। चन्दा को मामा हैं कहते।।

बड़ों की तरह बच्चों के साहित्य में भी हमें चाँद-तारों के विषय में अनेक विश्वास अभिव्यक्त मिलते हैं। चन्द्रमा में जो मैदानों और पहाड़ों के कारण पृथ्वी पर से देखने में काले-काले धब्बे मालूम होते हैं उनके आधार पर की गई अनेक कल्पनायें साहित्य में परम्परा से चली आई हैं। कहीं उन्हें सागर की परछाईं कहा गया है और कहीं बच्चों को प्रिय लगने वाला चंचल खरगोश। कहीं यह कल्पना की गई है कि चन्द्रमा में एक बुढ़िया रहती है, जो जब चाँद आकाश में निकलता है तो बैठी सूत कातती हुई दिखाई देती है और कहीं चंद्रमा में उन धब्बों को देख कर एक हरी-हरी घास चरने वाले हिरन की कल्पना की गई है।

प

अयोध्या सिंह उपाध्याय ने इसी कल्पना के आधार पर एक बच्चे के मुख से कहलवाया है –

मेरे पास चाँद तू आ जा।
आकर अपना खाना खा जा।।
मुझको अपना हिरन दिखा जा।
मीठी-मीठी बात सुना जा।।

या

चन्दा मामा दौड़े आओ।
दूध कटोरा भर कर लाओ।।
उसे प्यार से मुझे पिलाओ।
मुझ पर छिड़क चांदनी जाओ।।
मैं तेरा मृग छौना लूँगा।
उसके साथ हँसूं खेलूंगा।।
उसकी उछल कूद देखूंगा।
उसको चाटूंगा चूमूंगा।। इत्यादि

सेवकजी ने अपने एक बाल गीत में चाँद में रहने वाली बुढ़िया की कल्पना को इस प्रकार व्यक्त किया है –

बूढ़ी माई, बूढ़ी माई।
उतर चाँद से नीचे आई।।
मुन्ना के घर दावत खाई।
लड्डू पूरी खीर मलाई।।
सारी चीजों को खा पीकर।
वह चल दी उड़ कर अपने घर।।
हमने उसको आते देखा।
हमने उसको जाते देखा।।
अब हम भी उड़ कर जायेंगे।
उसके घर दावत खायेंगे।।

चन्द्रमा संसार से सब देशों और सब स्थानों से एक ही रूप में सबको दिखाई देता है और सबको उसे देख कर एक ही प्रकार की प्रेरणा प्राप्त होती है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। हिन्दी में चन्द्रमा पुल्लिंग है अंग्रेजी में वह स्त्रीलिंग

माना जाता है। इंग्लैण्ड में अधिक सर्दी पड़ने और अधिकतर रातों के कुहरे से ढके रहने के कारण वहाँ के बच्चों के लिए चन्द्रमा उतना अधिक आकर्षण का विषय नहीं है जितना भारतीय बच्चों के लिये है। इसीलिये अंग्रेजी बाल साहित्य में न तो चन्द्रमा विषयक इतने अधिक बाल गीत लिखे गये हैं जितने हिन्दी या अन्य भारतीय भाषाओं में और न कल्पनाओं की वैसी रंगीनी ही उनमें आ पाई है। भारतवर्ष तो मानो चन्द्रमा और चांदनी के लिये ही बना हो। इतना खुला हुआ साफ चन्द्रमा कम ही देशों के आकाश में दिखाई देता होगा। यहाँ की शरद पूर्णिमा की रात तो विशेष आकर्षक होती है। इसी प्रकार चैत की चांदनी रातें भी भारत वर्ष में अत्यन्त सुहावनी और मादक हुआ करती है। बच्चों के बहुत से खेल ऐसे हैं जो केवल चांदनी रातों में ही खेले जाते हैं। बन तीती, शाह चोर, ढाई ढप्पा और धूप छाया बच्चे प्रायः रात में चाँद निकल आने पर ही खेला करते हैं।

हिन्दी में बाल गीतों की लिखने की प्रेरणा देने वाले चन्द्रमा को अत्यन्त प्राचीन काल से चन्दा मामा कहा जाता है। घर की स्त्रियों का अपने भाइयों के प्रति प्रेम और उसके कारण अपने बच्चों को प्रिय लगने वाले चांद को अपने भाई का प्रतीक बना कर एक काल्पनिक सुख का अनुभव करना ही इसका मनोवैज्ञानिक कारण हो सकता है। चन्द्रमा के प्रति बच्चों के मन में होने वाले स्वाभाविक आकर्षण का वर्णन हमें प्राचीन साहित्य में भी मिलता है। सूरदास ने अपने अनेक पदों में इसका वर्णन किया। उनका एक पद है –

बार बार जसुदा सुत बोधति आउ चन्द तोहि लाल बुलावै।
मधु मेवा पकवान मिठाई आपुन खैहैं तोहिं खवावै।।
हाथहि पर तोहिं लीन्हें खेले नहिं कबहूं धरती बैठावै।
जल भाजन कर लै जु उठावति मैं याही तनु धरितू आवै।।
जल पुट आनि धरनि पर राख्यो गति आन्यो वह चन्द्र दिखावै।
सूरदास प्रभु हंसि मुस्काने बार बार दोऊ कर नावै।।

इसी प्रकार आधुनिक हिन्दी बाल गीतों में बच्चों के चन्द्रमा को देख कर उत्सुकतापूर्वक अपने पास बुला लेने के मनोभाव बड़े सुन्दर ढंग से व्यक्त किये गये हैं। ऊपर हम पं. अयोध्या सिंह उपाध्याय के एक बाल गीत का उद्धरण दे ही आये हैं। शकुन्तला सिरोठिया जी अपने एक बाल गीत में इसी प्रकार बच्चे की ओर से आग्रह करती हैं –

झाँक रहा बादल से चन्दा अम्मा उसे बुला ले तू।

तुझको ही वह देख रहा हैअपने पास सुला ले तू।।
सुबह उठेंगे एक साथ फिर मिल कर दोनों खेलेंगे।
जो कुछ भी खाने को देगी बाँट बाँट कर ले लेंगे।।

पर इससे भी अधिक भावभरा बाल गीत श्रीमती शान्ति अग्रवाल का है जिसमें एक बच्चा मां से बुलाने को कहने के बजाय सीधा चन्द्रमा से आने के लिये कहता है और उसे माखन रोटी खिलाने का ही नहीं नानी से परियों की कहानियां सुनवाने का भी लालच देता है -

चन्दा आओ माखन रोटी तुमको खूब खिलाऊँगा।
अपनी नानी से परियों की कथा तुम्हें सुनवाऊँगा।।

अपनी सबसे प्रिय दो वस्तुओं - माखन रोटी और नानी के मुख से कही गई परियों की कहानियाँ चन्द्रमा को अर्पण कर देने का वचन देने के बाद उसे ध्यान आता है कि जाड़े की इस रात में यदि चाँद सचमुच आकाश से उतर कर नीचे आ गया तो उसे अपने पास ही सुलाने का भी उसे प्रबन्ध करना होगा -

सुनते सुनते तुम सो जाना, ले लेना मेरा बिस्तर।
तुमको रोज मिठाई दूंगा फिर तुम मत जाना ऊपर।।
लाल लाल गद्दा है मेरा और रजाई है मोटी।
पंच रंगे रेशम की मेरे पास दुलाई है छोटी।।

इस पर भी जब चन्द्रमा पास आने का नाम नहीं लेता तो वह कहता है -

मुझको छोटा जान कहो क्या मेरे पास न आते हो।
कहीं न तुमसे लड़ बैठूं क्या इसीलिए घबराते हो।।

वह फिर लालच देता है -

आओ अपने हाथी घोड़े रथ मोटर तुमको दूँगा।
अपनी फूलों की बगिया में साथ तुम्हारे खेलूँगा।।

खाने पीने की वस्तुओं के अतिरिक्त अपनी सबसे प्रिय वस्तु खिलौना भी उसे अर्पित करने का लालच देने के बाद फिर बच्चे के पास लालच देने के लिए और कोई अपनी प्रिय वस्तु नहीं रहती। यह शान्ति जी का कवि बच्चा कलाप्रेमी होने के साथ-साथ यह भी जानता है कि चन्द्रमा को बादलों में छिप जाना अधिक अच्छा लगता है। इसीलिए वह अन्त में कहता है -

चन्दा, अम्मा ने तकिये पर बादल खूब बनाये हैं।
आँख मिचौनी करने वाले तारे भी छिटकाये हैं।।
यदि तुमको अच्छा लगता हो बादल दल में छिप जाना।

तो आओ मेरे तकिये के बादल दल में छिप जाना।।

बच्चे की मनोभावनाओं का इतना स्वाभाविक और मधुर चित्रण जैसा कि इस बाल गीत में है वैसा हमें कम ही देखने को मिलता है।

चन्द्रमा को जैसे भी हो अपने पास बुला लेने की यह भावना बच्चे की स्वयं चन्द्रमा तक पहुँच जाने की भावना के रूप में भी कुछ बाल गीतों में व्यक्त हुई है। श्री अशोक एम.ए. ने इसे अपने निम्नलिखित बाल गीत में व्यक्त किया है –

चन्दा मामा चन्दा मामा अपने पास बुलाओ।
मुझे बिठा कर अपने रथ में नभ की सैर कराओ।।
चन्दा मामा जल्दी से अब मुझे दिखाओ तारे।
चमक रहे हैं दमक रहे हैं लगते हैं जो प्यारे। इत्यादि

बच्चों की चाँद तक पहुंचने की इसी भावना को श्री विष्णु कान्त पाण्डेय ने इस प्रकार से व्यक्त किया है –

दौड़ो चुन्नू, आओ मुन्नू कर लो अब तुम सब तैयारी।
देखो नभ के चन्दा मामा के घर जाने की अब है बारी।।
अब तुम भी नभ में जा सकते हो, राकेट बनाया जाता।
आसमान के चन्दा जैसा नभ में चाँद उड़ाया जाता।
चन्दा मामा खुश हैं तुमको हँस कर गले लगायेंगे वे।
चन्द्र लोक की अच्छी चीजें तुमको खूब खिलायेंगे वे।।

यह बाल गीत उन बड़े और समझदार बच्चों के लिये है जो यह जानते हैं कि राकेट में बैठ कर अन्तरिक्ष में उड़ा जाता है, और अब कृत्रिम चाँद बना कर उड़ाये जाने लगे हैं।

हिन्दी के कुछ बाल गीतों में चन्दा मामा के साथ एक मामी की भी कल्पना की गई है। प्रत्येक मामा की एक जीवन सहचरी होती है। जिसे मामी कहा जाता है तो चन्दा मामा के साथ भी एक मामी होगी ही। श्री बाबू लाल शर्मा 'प्रेम' ने यह कल्पना पूनम मामी के नाम से की है –

चन्दा मामा पूनम मामी, मामी मेरी बड़ी सुहानी।
रोज उतर परियों के रथ पर दूध नदी में भरती पानी।।
तुम्हीं कहो माँ बड़े सबेरे कहाँ ठहरती नींद नयन में।
मुझे जगा देना मां जब चन्दा मामा चमकें आंगन में।।
चन्दा मामा पूनम मामी, दोनों हैं दुनिया में नामी।

माँ इनके जैसा ही उजला मैं हूंगा इनका अनुगामी।।
क्या मां यह दोनों सब को ही प्यारे लगते हैं बचपन में।
मुझे जगा देना माँ जब चन्दा मामा चमके आँगन में।।

पूनम मामी की कल्पना निस्सन्देह बहुत मधुर है पर इस गीत में बाल स्वभावोचित सरलता और कोमलता की कमी है। पं. रामनरेश त्रिपाटी ने निम्नलिखित बाल गीत में मामी की कल्पना निशा के रूप में की है –

चन्दा मामा गये कचेहरी घर में रहा न कोई।
मामी निशा अकेली घर में कब तक रहती सोई।।
चली घूमने साथ न लेकर कोई सखी सहेली।
देखी उसने सजी सजाई सुन्दर एक हवेली।
आगे सुन्दर पीछे सुन्दर सुन्दर दायें बायें।
नीचे सुन्दर ऊपर सुन्दर सुन्दर सभी दिशायें।।
देख हवेली की सुन्दरता फूली नहीं समाई।
आओ नाचें उसके जी में यह तरंग उठ आई।।
पहले वह सागर पर नाची फिर नाची जंगल में।
नदियों पर नालों पर नाची पेड़ों की ओझल में।।
फिर पहाड़ पर चढ़ चुपके से वह चोटी पर नाची।
चोटी से उस बड़े महल की छत पर जाकर नाची।।
वह थी ऐसी मस्त हो रही आगे क्या गति होती।
टूट न जाता हार कहीं जो बिखर न जाते मोती।।
टूट गया नौलखा हार जब मामी रानी रोती।
वहीं खड़ी रह गई छोड़ कर यों ही बिखरे मोती।।
पाकर हाल दूसरे ही दिन चन्दा मामा आये।
कुछ शरमा कर खड़ी हो गई मामी मुंह लटकाये।।
चन्दा मामा बहुत भले हैं बोले क्यों हैं रोती।
दीया ले कर घर से निकले चले बीनने मोती।।

इस बाल गीत में अन्धेरी रात के आने, तारों के चमकने और चन्द्रमा के उदय होने की कल्पना एक सांगोपांग कथानक के रूप में बहुत सुन्दर की गई है। कल्पना की बात को इतने मनोवैज्ञानिक और रोचक ढंग से प्रस्तुत किया गया है कि कोई भी बच्चा इसे रुचि से पढ़े बिना नहीं रह सकता। इसीलिए यह बाल गीत चन्द्रमा और चाँदनी से सम्बन्धित हिन्दी बाल गीतों में अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है और इस विषय पर लिखे गये श्रेष्ठतम बालगीतों की पंक्ति में रखा जा

सकता है।

हिन्दी बालगीतों में कुछ और भी बहुत सुन्दर कल्पनायें चन्द्रमा के विषय में की गई हैं। चन्द्रमा पर पड़ने वाले सूर्य के प्रकाश के कारण पूरा चाँद आकाश में चमकता हुआ हमें प्रतिदिन दिखाई नहीं देता है। वह उस प्रकाश के क्षेत्र के अनुसार ही प्रतिदिन घटता-बढ़ता हुआ मालूम होता है। इसी घटने-बढ़ने की बात को लेकर श्री द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी ने निम्नलिखित बालगीत लिखा है -

एक बार की बात चन्द्रमा बोला अपनी माँ से।
कुर्त्ता एक नाप का मेरी मां मुझको सिलवा दे।।
नंगे तन बारहों मास मैं यों ही घूमा करता।
गर्मी वर्षा जाड़ा हरदम बड़े कष्ट से सहता।।

इस बाल गीत में यह कल्पना की गई है कि चन्द्रमा एक बालक है। वह गर्मी, वर्षा, जाड़े में बारहों महीने नंगा रह कर कष्ट सहन करता है इसलिये अपनी नाप का कुर्ता सिलवा देने के लिये अपनी माँ से कहता है। चन्द्रमा के विषय में यह बालक के कुर्ता सिला देने की कल्पना कोई सिद्धहस्त कवि ही बच्चों के लिये कर सकता है। फिर भी यह कल्पना ऐसी है जिसे बच्चे आसानी से समझ सकते हैं। बालक चन्द्रमा की बात सुन कर माँ उसे उत्तर देती है -

माँ हंस कर बोली सिर पर रख हाथ चूम कर मुखड़ा।
बेटा खूब समझती हूं मैं तेरा सारा दुखड़ा।।
लेकिन तू तो एक नाप में कभी नहीं रहता है।
पूरा कभी कभी आधा बिलकुल न कभी दिखता है।।

अन्त में बालक चन्द्रमा अपनी माँ से प्रसन्न होकर कहता है -

आ हा मां फिर तो हर दिन की मेरी नाप लिवा दे।
एक नहीं पूरे पन्द्रह तू कुरते मुझे सिला दे।।

'चन्द्रमा का कुर्ता' शीर्षक एक कविता सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि श्री रामधारी सिंह दिनकर के नाम से लिखी हुई इस रूप में मिलती है -

हठ कर बैठा चाँद एक दिन माता से यह बोला
सिलवा दे माँ मुझे ऊन का मोटा एक झंगोला
सन सन चलती हवा रात भर जाड़े से मरता हूं।
ठिठुर ठिठुर कर किसी तरह यात्रा पूरी करता हूं
आसमान का सफर और यह मौसम है जाड़े का
न हो अगर तो ला दो कुर्ता ही कोई भाड़े का।

बच्चे की सुन बात कहा माता ने – 'अरे सलोने
कुशल करें भगवान, लगें मत तुझको जादू टोने।
जाड़े की तो बात ठीक है पर मैं तो डरती हूं
एक नाप में कभी नहीं तुझको देखा करती हूँ।
कभी एक अंगुल भर चौड़ा कभी एक फुट मोटा
बड़ा एक दिन हो जाता है और किसी दिन छोटा
घटता बढ़ता रोज किसी दिन ऐसा भी करता है
नहीं किसी की आँखों को तू दिखलाई पड़ता है।
अब तू ही यह बता नाप तेरी किस रोज लिवायें
सी दें एक झंगोला जो हर रोज बदन में आये।

एक ही शीर्षक और विषय वस्तु को लेकर रची गई यह दोनों कवितायें अलग-अलग दो उपरोक्त कवियों के नाम से उत्तर प्रदेश और बिहार के भिन्न-भिन्न स्कूलों के बालकों को पाठ्य पुस्तकों में पढ़ाई जाती रही है। दोनों में अद्भुत भाव साम्य है। कदाचित दिनकर की कविता पहले लिखी गई थी। इसलिए माहेश्वरी जी ने अपनी कविता का भाव उसी से लिया होगा। पर 'चन्द्रमा के कुर्ते' शीर्षक से एक कविता उड़िया के सुप्रसिद्ध कवि फकीर मोहन की लिखी हुई भी मिलती है। वह उड़ीसा के बच्चों में लोकप्रिय भी बहुत हुई। सम्भव है दिनकर और माहेश्वरी जी दोनों की कविताओं का भाव उड़िया से ही हिन्दी में आया हो।

आकाश में चन्द्रमा को देखते हुये जब बच्चे पृथ्वी पर चलते हैं तो चाँद भी उन्हें अपने साथ-साथ चलता हुआ मालूम होता है। वह जब रुक जाते हैं तो उन्हें मालूम होता है चाँद भी रुक गया है। बच्चों को इस बात में बड़ा कौतूहल होता है। वह यह समझते हैं कि चन्द्रमा सचमुच ही उनके साथ चलता या रुकता है। श्री आर.सी. प्रसाद सिंह बच्चों के इसी कौतूहल के आधार पर लिखे हुए एक बाल गीत में कहते हैं –

हमारे साथ देखो तो अरी मां चाँद चलता है।
निशा की गोद में मानों चपल बालक मचलता है।।
जिधर जाते उधर ही हम उसे हंसता खड़े पाते।
लजाता है नहीं वह तो तनिक भी सामने आते।।
न देखा था कभी ऐसा विनोदी धृष्ट सा बालक।
अरे वह मांगता हमसे कलम पेन्सिल घड़ी पुस्तक।।

तनिक भी हम जहां उछले वहां वह भी उछलता है।
हमारे साथ देखो तो अरी माँ चाँद चलता है।

किन्तु इस बाल गीत में निशा की गोद की कल्पना बच्चों के लिए कुछ कठिन है। चाँद के सामने आते लजाने की बात भी बच्चे साधारणतया अपने मन से नहीं सोच सकते। चाँद को लगातार अपनी ओर देखते रहने के कारण बच्चों का यह कहना कि वह हम से कलम, पेंसिल, पुस्तक मांग रहा है, बहुत स्वाभाविक कल्पना है। इससे ज्ञात होता है कि कवि को बाल मनोविज्ञान का अच्छा ज्ञान है।

चन्द्रमा की तरह ही तारों के विषय में भी बहुत से बाल गीत हिन्दी में लिखे गये हैं। पण्डित अयोध्या सिंह उपाध्याय ने अपने तारे शीर्षक बाल गीत में तारों के विषय में अनेक कल्पनायें की हैं -

बिखरे मोती न्यारे हैं, या चमकीले तारे हैं।।
सुथरी नीली चादर पर, सुन्दर फूल पसारे हैं।।
नीले किसी चंदोवे में, बूटे सजे संवारे हैं।।
या सुरमई बिछौने में, टंके अमोल सितारे हैं।।
सरग बाग के पौधों के, चमक रहे फल सारे हैं।।
या है दहकी आग कहीं, फैल रहे अंगारे हैं।। इत्यादि

हरिऔध जी के इस गीत की भाँति और भी अनेक कल्पनायें तारों के विषय में की जा सकती हैं। किन्तु इस बालगीत की सब कल्पनायें बच्चों के अपने मन की कल्पनायें हैं, यह कहना कठिन है। इसी प्रकार डॉ. सुधीन्द्र एम.ए. ने तारों पर एक बालगीत लिखा है जो बहुत प्रसिद्ध हुआ है -

ओ किसने गिरा दिये हैं यह मधुर दही के छींटे।
धो अम्मा इन्हें नहीं तो आते ही होंगे चींटे।।
फैला दी ऊपर किसने मेरी दादी की साड़ी।
है किसने यहाँ लगाई सुन्दर फूलों की बाड़ी।।
किसने बिखेर डाले ये मेरे अनार के दाने।
चिड़ियों ने यदि देखा तो वह आ जायेंगी खाने।।
किसने बिखेर दी जा कर बादल में मेरी खीलें।
यदि इन्हें देख पायें तो आ अभी बीन ले चीलें।। इत्यादि

पर इस बाल गीत की तारों के विषय में सारी कल्पनायें बच्चों की अपनी नहीं। मालूम होता है कवि ने बच्चों के लिये लिखने के उद्देश्य से स्वयं अपनी विचित्र कल्पनाओं को बाल गीत के रूप में बाँध दिया है।

तारों पर एक सुन्दर बाल गीत पण्डित सोहनलाल द्विवेदी का लिखा हुआ है –

प्यारे प्यारे तारे चमको। नीचे चमको ऊपर चमको।।
नभ पर चमको, भू पर चमको। नदी और लहरों में चमको।।
तुम लहरों लहरों में चमको। दूर करो दुनिया के तम को।।
प्यारे प्यारे तारे चमको। रहने दो न कहीं अंधियाली।।
फैलाओ घर घर उजियाली। रहे न कोई कोना खाली।।
रोज मनाओ तुम दीवाली। लाख लाख दीपों से दमको।।
प्यारे प्यारे तारे चमको। चमको चमक लिये तुम ऐसे।।
हीरे जैसे मोती जैसे। चमको ऐसे नील गगन में।।
जैसे फूल खिले हों बन में। अपनी चमक लुटाओ हमको।।
प्यारे प्यारे तारे चमको।। इत्यादि

इस बाल गीत की अधिकतर कल्पनायें बाल स्वभावोचित और सरल हैं। पर तारे को चमकने का आदेश देने की बात कोई बड़ा ही सोच सकता है बच्चे नहीं। कवि ने शायद ऐसा इसलिए कहा है कि वह बच्चों को भी तारों के समान चमकने का आदेश देना चाहता है। इसीलिये उसने इस बाल गीत के अन्त में यह कहा ही है –

दिखलाओ बच्चों को सपना। प्यारा देश हमें हो अपना।।
तुम-से ही बच्चे बन जायें। जगमग जगमग ज्योति जगायें।।
जी भर प्यार करें हम तुमको। प्यारे प्यारे तारे चमको।।

तारे बच्चों की कविता के लिये एक ऐसा विषय हैं जिन पर बाल गीतों का लिखा जाना कभी समाप्त नहीं हो सकता। तारों के सम्बन्ध में इतनी अधिक कल्पनायें की जा सकती हैं कि जितने भी बाल गीत उनसे प्रेरणा पाकर लिखे जायें थोड़े हैं। बच्चों के मन में उठने वाली तारों के विषय में कितना ही बातें कही जायें फिर भी एक विचित्र प्रकार की कौतूहल और जिज्ञासा का भाव सदा बना रहेगा। प्रत्येक बच्चा तारों को देख कर उन तक पहुँचना और उन्हें सुन्दर फूलों की तरह चुन कर या चमकीले पत्थरों की तरह उठा कर अपने साथ ले आना चाहताहै। इसी मनोभाव को सेवकजी ने निम्नलिखित बालगीत में व्यक्त किया है-

नन्हें नन्हें प्यारे प्यारे। आसमान में बिखरे तारे।।
चुन्नू मुन्नू टुन्नू सारे। इनको गिनते गिनते हारे।।
चमक रहे हैं चम चम चम चम। इनके पास पहुंच जाते हम।।

तोड़ तोड़ कर जेबों में भर। हम उन सबको ले आते घर।।
हम उनसे घर द्वार सजाते। नहीं रात में दीप जलाते।।
तारों के उजियाले में पढ़। हम सबसे आगे जाते बढ़।।
पूरा पाठ याद हो जाता। कौन हमें तब डाँट बताता।।
प्यार हमें करते टीचर जी। जिनका नाम सुभाष मुकरजी।।

आकाश गंगा और ध्रुव तारा भी तारों से ही सम्बन्धित दो ऐसे विषय हैं जिन पर बच्चों की कल्पनाओं के अनुरूप सुन्दर बाल गीत लिखे जा सकते हैं। पर आकाश गंगा पर हमें एक भी सुन्दर बाल गीत हिन्दी में लिखा हुआ नहीं मिलता। 'ध्रुवतारा' पर एक बाल गीत पं. सोहनलाल द्विवेदी का लिखा हुआ है –

सब तारे नभ पर चलते हैं किन्तु न चलता ध्रुवतारा।
सब तारे प्रण से टलते हैं किन्तु न टलता ध्रुवतारा।।
सब तारे भय से डरते हैं किन्तु न डरता ध्रुवतारा।
आसमान में लगा अचल आसन तम हरता ध्रुवतारा।।

किन्तु तारों का कौन सा वह प्रण है जिससे ध्रुव तारे के न टलने की बात इस बाल गीत में कही गई है या कौन सा भय है जिससे तारे डरते हैं, यह बच्चे इस बाल गीत को पढ़ कर नहीं समझ सकते। इसलिये इसे इस विषय पर लिखा उनके लिये मनोवैज्ञानिक दृष्टि से रोचक बालगीत नहीं कहा जा सकता। अपने प्रण पर अटल रहने की शिक्षा इससे बच्चों को अवश्य दी जा सकती है।

महादेवी वर्मा के शब्दों में – 'आज का बालक अणु युग का बालक है। निश्चित रूप से वह हमसे अधिक जीवन की कठिनाइयाँ प्रारम्भ से ही देख चुका है। हमारे युग में चन्दा मामा उतरा करते थे थाली में, पानी में। परन्तु अब वह जानता है कि वहाँ तक पहुँचा जासकता है। वातावरण में जो ज्ञान है, वातावरण में जो विज्ञान फल गया है बालक उससे अपरिचित नहीं है।'

और अब तो वैसे अंतरिक्ष कोई अजूबा नहीं रह गया है। भारत की कल्पना चावला इन्हीं रहस्यों के भेदन के सिलसिले में सदा के लिए अंतरिक्ष में गुम होकर इतिहास में अमर हो गई। सुनीता विलियम्स ने अंतरिक्ष पर सबसे ज्यादा समय तक चहलकदमी का रिकार्ड अभी वर्ष 2012 में बनाया है। ऐसी स्थिति में चाँद-तारों की दुनिया का वैज्ञानिक सच बच्चों की आंखों के सामने है। तदपि इसके समानान्तर वह कल्पना लोक भी मौजूद है, जो उन्हें आज भी अपने चंदा मामा के साथ उसी रागात्मक ऊष्मा से जोड़े हुए है, जिससे पुराने समय से बच्चे जुड़े हुए है। यही कारण है कि चाँद-तारों को लेकर आज भी बाल गीतों के क्षेत्र में अभिनव कल्पनाओं

का दौर जारी है। प्रभाकर माचवे की 'चाँद' और बाल स्वरूप राही की 'चन्दा मामा की शान' ऐसी कविताएं हैं, जो चन्द्रमा के पारम्परिक चित्रण से इतर नई जमीन तलाशती नज़र आती हैं। इन दोनों कविताओं में भी अपनी रवानगी और चंचल-चुहल भरे अंदाज़ के कारण राही जी की कविता बाजी मार ले जाती है। पहले प्रभाकर माचवे की कविता देखिए -

चंदा मामा, अब हम तेरा घर भी जान गए!
अब वो गप्पें नहीं चलेंगी
बुढ़िया-चरखा / हिरन-रेंडियर / या स्याही का धब्बा!
अब तेरी क्या दाल गलेगी / गोल हो गया डब्बा!
चंदा मामा अब हम तेरा / तेवर पहचान गए!
नहीं रहे तुम अब मामाजी / दूर देश के गोल-गोल लामाजी!
नहीं रहे अब नन्हे-मुन्ने / जाओ पहन भी लो कुर्ता-पाजामाजी!
चंदा मामा अब हम तेरा जादू सारा जान गए!

यह कविता अपनी लयात्मकता में व्याघात के कारण बच्चों से कुछ दूर चली जाती है, जबकि राहीजी की कविता सीधे बाल मन से निकलकर अपने चुहल भरे अंदाज से अत्यंत मनमोहक बन जाती है -

चंदा मामा कहो तुम्हारी
शान पुरानी कहाँ गई?
कात रही थी बैठी चरखा
बुढ़िया नानी कहाँ गई?
सूरज से रोशनी चुराकर
चाहे जितनी भी लाओ
हमें तुम्हारी चाल पता है
अब मत हमको बहकाओ!
है उधार की चमक-दमक यह
नकली शान निराली है,
समझ गए हम चंदामामा
रूप तुम्हारा जाली है।

सचमुच चन्द्रमा को लेकर बच्चे के मन में अब कोई संशय या भ्रम जैसी स्थिति नहीं है। वैज्ञानिक अनुसंधानों ने उसे चन्द्रमा के यथार्थ से परिचित करा दिया है। पर चाँद को लेकर की जाने वाली पारम्परिक कल्पनाएं भी अपने जादुई सम्मोहन

से बाल-मन को मोहती है। इसीलिए भगवती प्रसाद द्विवेदी के 'चंदा से' शीर्षक बालगीत में बच्चा आमने-सामने खड़ा होकर साफ शब्दों में चुनौती देता है -

चाँद, तुम्हारे झांसे में, हम बच्चे कभी न आएंगे।
दूध-भात लाने का, करते हो बस झूठा वादा
बच्चों को छलने का, यह तेरा है चोर इरादा
बैठ चांदनी में तेरे संग, कभी न गप्प लड़ाएंगे।
कभी तुम्हारा बढ़ते जाना, फिर नित घटते जाना
छूमंतर-सा गायब होकर, तम में हमें छकाना
हर अचरज के पीछे के, सच का हम पता लगाएंगे।
तेरे घर में बुढ़िया नानी, चक्की नहीं चलाती
ना चरखा वाली दादी ही, हमको पास बुलाती
अब कोरी कल्पना नहीं, सच से हम नित टकराएंगे।
चंद्रलोक में टीले-पत्थर, नहीं वहाँ है रस्ता
पल भर जीना मुश्किल, फिर भी तू है कैसे हंसता?
मुश्किल में मुसकाने की, तेरी आदत अपनाएंगे।

अंततः बच्चा समझ लेता है कि चाँद से जुड़ी किंवदंतियां कितनी भी मिथ्या हों, पर संकटों में मुस्काने की उसकी अच्छी आदत को सीखने में संकोच कैसा?

सचमुच चाँद का जादू आज भी बाल-मन के सिर पर चढ़कर बोलता है। अपने नटखट-शरारती अंदाज़ में हरीश निगम की 'मामी कहाँ हमारी' कविता में जब एक छोटा बच्चा अदेखी मामी को लेकर नाना अटकलें लगाता है, तो उसके सवालों का उत्तर देने में शायद चाँद मामा को भी पसीना आ जायेगा -

चंदा मामा! चंदा मामा
मामी कहाँ हमारी?
रोज अकेले आते हो
मामी को ना लाते हो
सच्ची-सच्ची बात बताओ
ऐसी क्या लाचारी?
क्या वो काली-काली है
शायद नखरे वाली है
या फिर उनकी ठीक समय पर
होती ना तैयारी?

या वो मस्त कलंदर हैं?
परियों जैसी सुंदर हैं!
सोच रहे तुम लग जाएगी
उनको नज़र हमारी।

इस बालगीत का शब्द-शब्द उस नटखट-शरारती बच्चे के हृदय से निकला है, जिसे चंदा मामा से मामी के बारे में अपने नाना अनुमान व्यक्त करते खासा मज़ा आ रहा है। सामान्य-सी बात है, मामी को जब अपने साथ लाने में मामा को आपत्ति है, तो इसकी कोई वजह निश्चित रूप से होनी चाहिए। या तो मामी इतनी काली-कलूटी हैं उन्हें लाने में मामा को शर्म लगती है, या मामी इतनी नखरे वाली हैं कि उनके नखरे उठाते हुए बेचारे मामा परेशान हो जाते हैं। मामी की लेटलतीफी भी एक वजह हो सकती है कि समय पर वह तैयार होकर निकल ही न पाती हों। लेकिन इसके बाद बच्चे के सोचने की दिशा बदल जाती है। मामी के अवगुणों को ही वह उनकी अनुपस्थिति की वजह क्यों माने? यह भी तो संभव है कि परियों जैसी सुंदर मामी को चंदा मामा ही इस डर से साथ न लाते हों कि कहीं उन्हें किसी की नजर न लग जाए? सचमुच कविता की संवेदना और उसका शिल्प दोनों ही यहाँ इतने मनोरम है कि चंद्रमा को लेकर लिखी जाने वाली कविताओं में यह अपने ढंग की अलग छवि रखती है।

एक ऐसा ही विशिष्ट अंदाज दामोदर अग्रवाल के पास है, जो 'चांद और तारों का गीत' रचते समय एक ऐसे कल्पना-लोक की सृष्टि करता है, जिसका कोई तोड़ जल्दी-जल्दी दूसरा बाल कवि नहीं प्रस्तुत कर सकेगा -

घेर चांद को चांदी जैसे तारे निकले हैं
आज इकट्ठे ही सारे के सारे निकले हैं।

नीला-नीला आसमान का / महल बनाया है
हर तारा है कमरा, उसको / खूब सजाया है
खुली-खुली-सी खिड़की है, गलियारे निकले हैं।

जैसे परियां आ जाती हैं / कथा-कहानी में
झांक रहे तारे वैसे ही / नीचे पानी में
कमल खिले हैं या जल से गुब्बारे निकले हैं।

नीचे से ऊपर तक सारा / चांदी-सोना है

धुला-धुला-सा उनसे ही सब / कोना-कोना है
कहीं-कहीं कुछ बादल भी कजरारे निकले हैं।

चन्द्रमा का आकर्षण हिन्दी बाल कविता में इतने उद्दाम वेग से विद्यमान है कि आज भी उसे लेकर ढेरों बाल कविताएं लिखी जा रही हैं। रमेश रंजक की 'चंदा मामा दूर के' कविता में यह नया बिम्ब देखिए -

सीढ़ी-सीढ़ी चढ़ते जाते
धीरे-धीरे बढ़ते जाते
इतने बढ़ जाते हैं जैसे
फुलके हों तंदूर के।

मो. फहीम की 'सुन लो चंदा मामा' में चाँद को आगाह किया गया है कि दुनिया के लोग उनके घर में घुसने वाले हैं और घर, बाजार, होटल बनाकर उनका जीना दुश्वार कर देने वाले हैं -

इसीलिए कहता हूं मामा / मानो मेरी बात
दुनिया को न पड़ो दिखाई / दे दो सबको मात
छिपने की न जगह मिले तो / मेरे घर आ जाओ
बैठ हमारे संग मजे से / हलवा-पूरी खाओ।

और प्रकाश मनु की 'आओ चाँद' में तारों की महफिल में, घूंघट काढ़कर, ठुमक-ठुमक कर नाचता चाँद बच्चों को इसलिए विलक्षण लगेगा, क्योंकि भारतीय लोकमानस में चाँद को पुल्लिंग माना गया है -

नीले नभ का घूंघट लेकर
सब तारों को न्योता देकर
एक बार तो नाच दिखा दो
धा-धिन, ता-ता थैया चाँद।

आज भी न सिर्फ चाँद, अपितु तारों ने बाल कविता में अपनी खास जगह बनाये रखी है। चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक' की 'तारे' का पूर्वार्द्ध पारम्परिक अंदाज़ में होने पर भी उत्तरार्द्ध उस बाल-मन तक पहुंच गया है, जिसका क्रीड़ा-कौतुक हमें बरबस मोह लेता है -

झिलमिल-झिलमिल करते तारे
आहा लगते कितने प्यारे!
मानो बिखर गए है मोती

या हैं अनगिनती जंजीरें
टूटीं, फैल गए सब हीरे!
सारी रात चमकते हैं ये
दम-दम खूब दमकते हैं ये!
देख सभी का मन ललचाता
कोई नहीं इन्हें गिन पाता!
आसमान पर मैं जा पाता
तो इनको बटोर कर लाता!
सभी साथियों को मैं देता
अपना भी डिब्बा भर लेता!
घर में फिर सबको दिखलाता
सब पर अपनी शान जमाता!

आसमान पर जाकर तारों को बटोरकर ले आने की कल्पना बालकों की संग्रह वृत्ति की सूचक है, तो साथियों को खुले हाथों उन्हें बांटने की उदारता दिखाना अपने आपमें कोई छोटी बात नहीं है। एक नन्हे बालक की यह विशालहृदयता वाकई प्रशंसनीय है। फिर, आत्मप्रदर्शन का भाव भी बच्चे में कम नहीं होता। इसी के चलते वह तारों से भरा डिब्बा घर ले जाकर सबको दिखाने और सब पर अपनी शान जमाने के आनंद को भी लूटना चाहता है। इससे पता चलता है कि मयंकजी की बाल-मन में कितनी गहरी पैठ रही है।

बात चाँद-तारों की हो और सूरज का ज़िक्र न आये, तो अपूर्णता का अहसास होता है। पर हिंदी बाल कविता में तो पूरा अंतरिक्ष ही उभर कर आया है। राजनारायण चौधरी की 'अंतरिक्ष में जाऊंगा' इसी भाव-भूमि पर आधृत है। सच तो यह है कि चौधरी जी ने अपनी अन्य कविताओं, यथा-चांद, चंदा मामा, इंद्र धनुष जी, कितने तारे, सूरज और 'सूरज धूप उगाना जी' में एक अभिनव अंतरिक्ष-लोक ही सिरज दिया है। 'चांद' कविता में उनकी यह कल्पना कितनी रमणीय है-

ला तारों के लड्डू नित
हमको खूब खिलाता चाँद।

सच तो यह है कि खाना और खेलना ही बच्चों के मनोनुकूल काम होते हैं। 'बादलजी' कविता में राजनारायण चौधरी ने बादलों को जिस तरह खेलते दिखाया है, उससे भला कौन बच्चा असम्पृक्त रह सकेगा -

बड्डी-बड्डी / चित्त-कबड्डी / खेल रहे हैं बादलजी

आंधी और / बवंडर सबको / झेल रहे हैं बादलजी
हाथी, भेड़ / बकरियां बनकर / दौड़ रहे हैं बादलजी
ऊंचे-ऊंचे / महल बना, फिर / तोड़ रहे हैं बादलजी।

बालस्वरूप राही की 'सूरज का रथ' में रंग-संयोजन और रेखांकन ने कविता को एक ऐसे सजीव चित्र में परिणत कर दिया है, जिसे देखकर दृष्टि वहीं बंध-सी जाती है –

सूरज का रथ बड़ा निराला
जुते हुए हैं घोड़े सात।
घोड़ा एक लाल भड़कीला
घोड़ा एक हरा चमकीला
घोड़ा एक चमाचम पीला
एक बड़ा ही गहरा नीला
एक आसमानी बर्फीला
एक जामुनी छैल-छबीला
एक संतरे-सा चटकीला
हर घोड़ा बेहद फुर्तीला
बड़े नियम से ये चलते हैं
सुनते नहीं किसी की बात।

सिर्फ बहिरंग ही नहीं, सूरज के रथ के इन घोड़ों के कार्यकलाप भी अद्भुत हैं। ये घोड़े ऐसे करामाती हैं कि ऋतु परिवर्तन के साथ इनकी चाल बदल जाती है –

सर्दी में दौड़ें ये सरपट
गर्मी में करते कुछ झंझट
पी जाते हैं नदियाँ गटगट
कुछ जल भाप बनाते झटपट
कहीं गिराते ओले पटपट
बादल से कहते-पीछे हट
पर्वत से करते हैं खटपट
सातों ही घोड़े हैं नटखट
इनको रोक नहीं पाती है

लयात्मकता के जादू ने राहीजी की इस कविता को जो ऊंचाई दे दी है, वह बेमिसाल है। सचमुच कविता बच्चों की हो या बड़ों की, उसमें 'अंदाज-ए-वयां' का अपना खास महत्व है। बालस्वरूप राही जब किसी विषय को उठाते हैं, तो डूबकर उसे चित्रित करते हैं और यही कोशिश उनकी कविता को विशिष्ट बना देती है।

सचमुच चाँद-तारों की दुनिया ने हिंदी बालकविता को ऐसा अनूठा कैनवास दिया है, जिस पर उकेरे गये चित्र हमेशा कुछ नयापन लिये रहते हैं। सूरज-चांद-सितारे तो बाल कविता का शृंगार है ही, बादल और परीलोक उसका अन्य आकर्षक पक्ष हैं। विज्ञान और कल्पना के दो छोरों ने हिंदी बाल कविता को जीवंतता दी है। आज 21वीं सदी का बालक सूचनाओं के युग में प्रविष्ट हो चुका है, तदपि परीलोक से उसका आकर्षण टूटा नहीं है। परियां आज भी उसे इसलिए भाती हैं क्योंकि उसकी कल्पनाओं को उड़ान उन्हींसे मिलती है।

अनंत प्रसाद 'रामभरोसे' की कविताएँ 'सूरज' व 'परी' इसी वैज्ञानिक सच और कल्पना की दुनिया के युगल कगारों से जुड़ी हैं। इसी भाव भूमि पर लिखी गई कुछ अन्य बाल कविताएँ हैं - नरेन्द्र गोयल की 'बादल', 'सूरज', चंदा मामा, मो. साजिद खान की 'सूरज सोया है', आर.पी. सारस्वत की 'नभ के तारे', अजय जनमेजय की 'उड़नपरी', विनीता जोशी की 'चंदा मामा', नागेश पाण्डेय 'संजय' की 'सूरज दादा' तथा कृष्ण शलभ की 'सुनता नहीं हमारी सूरज', 'चंदा' तथा 'सूरज की चिट्ठी'। 'सूरज की चिट्ठी' में बच्चों के सूरज काका से किये गये सवाल उतने ही मासूमियत भरे हैं, जितना मासूम बचपन होता है -

सूरज काका मिली आपकी
चिट्ठी किरनों वाली
जो मैंने पूछा था इसमें
कुछ भी लिखा नहीं है
वैसे धूप आज से पहले
बोलो कहाँ रही है?
क्या होगा जो कभी किसी ने
काका धूप चुरा ली?

और फिर सूरज के रथ के सात घोड़ों के आकार-प्रकार को लेकर भी पूछा जाने वाला प्रश्न जब अनुत्तरित रह जाता है, तो बालक की खीझ स्वाभाविक है -

"इस सवाल पर भी क्यों ओढ़ी
चादर चुप्पी वाली?"

शलभ जी की 'चंदा' में भी बच्चे के मन का यही कौतूहल और अबोध अंदाज़ प्रकट हुआ है -

मन से घटते-बढ़ते हो
क्या सवाल हल करते हो
ऐसा भी करके दिखलाओ
इक दिन, दिन में ही आ जाओ।

परी लोक पर अपेक्षाकृत कम बाल कविताएं लिखी गई हैं। उषा यादव की 'परियों का नाच' में यह विषय उठाया गया है -

छम-छम-छम-छम नाचीं परियां परी लोक में खूब।
सिर पर थी मेघों की छतरी पांव तले थी दूब।
इधर हवाएं सर-सर चलतीं उधर चांदनी झरती।
रह-रहकर उन सबके मन में नई उमंगें भरती।
चाँद ढले तक रहीं नाचतीं वे मस्ती में डूब।
लाल, हरे, पीले पंखों को बार-बार लहराएँ।
इन्द्रधनुष के रंगों जैसी परियां शोभा पाएँ।
गाते और नाचते उनको कभी न होती ऊब।

सचमुच यह एक ऐसी मोहक-मनभावन दुनिया है, जिससे बच्चों को कभी ऊब नहीं होती। इसीलिए सूरज-चाँद-तारों पर हिंदी बाल कविता के शुरूआती दौर से ही बाल गीत लिखे गये हैं और आज भी लिखे जा रहे हैं। कुछ अन्य अनूठी कल्पनाएं भी दृष्टव्य हैं जैसे दिविक रमेश की 'थकता तो होगा ही सूरज' की ये पंक्तियां -

थकता तो होगा ही सूरज
रोज सवेरे / इतने गट्ठर बांध रोशनी / लाता है / चोटी तक ढोकर
थकता तो होगा ही सूरज!

इसी तरह सूर्य कुमार पाण्डेय का 'सूरज का गीत' भी रंगारंग कल्पनाओं का पिटारा है -

बिना डोर के उड़ता नभ में सूरज है कनकौवा
शाम हुई लेकर उड़ जाये इसको काला कौवा।

सूरज एक पान का पत्ता जब यह दुनिया खाये
बिना सुपारी-कत्था, मुखड़ा लाल-लाल हो जाये।
सूरज लाल रंग का लट्टू नाच दिखाये दिनभर
कोई नहीं रोक सकता है इसको यहाँ पकड़कर।
सूरज एक आग की भट्टी दुनिया जिसमें लक्कड़
सुलगा करती रोज सबेरे कहते लाल बुझक्कड़।

चन्द्रमा के काले धब्बे को लेकर बाल कवि बैरागी ने अपने गीत 'चांद में धब्बा' में क्या ही विलक्षण अंदाज़ में कहा है -

गोरे-गोरे चाँद में धब्बा
दिखता है जो काला-काला,
उस धब्बे का मतलब हमने
बड़े मजे से खोज निकाला।
वहाँ नहीं है गुड़िया-बुढ़िया
वहाँ नहीं बैठी है दादी,
अपनी काली गाय सूर्य ने
चंदा के आंगन में बांधी।

शंभूप्रसाद श्रीवास्तव ने अपने 'लाखों में एक' बालगीत में चाँद को उजाले के प्रेरक के रूप में देखा है -

आसमान में लाखों तारे, लेकिन उनको कौन निहारे
उगकर सारी रात चमकते, मगर अंधेरा मिटा न सकते
एक अकेला चंदा आकर, अपनी किरणों को फैलाकर
सबकी आंखें शीतल करता, सबके मन में अमृत भरता
यह दुनिया भी बहुत बड़ी है, इंसानों से भरी पड़ी है
हर कोई है नन्हा तारा, बनकर चांद करो उजियारा।

सत्यदेव आजाद की 'प्यारे चंदा मामा' में बच्चे को कौतूहल है कि एक अकेला चंदा सबकी मम्मी का भाई कैसे हो गया?

त्रिलोक महावर ने 'दूध भरे दूधिया कटोरे, चंदा मामा गोरे-गोरे' कहकर चांद का अत्यंत भव्य और आकर्षक बिम्ब उत्कीर्ण किया है, तो सुरेंद्र विक्रम की 'मामा अपनी छुट्टी समझो' में उस बचपन को याद किया गया है जब बच्चे के रोने पर दादी उसे बहलाते हुए कहती थी कि चुप हो जाओ तो चंदा मामा

दूध भरा कटोरा लायेगा। बच्चा चुप हो जाता था। पर दूध भरे कटोरे का इंतज़ार आखिर कब तक? बच्चा खीझकर कहता है –

चलो, चलो, अब बहुत हो चुका, वही पुराना वादा कोरा
चंदा मामा, कहो कहाँ है, दूध-भात का भरा कटोरा।
अगर नहीं तुम जल्दी आये, कल से अपनी छुट्टी समझो
कभी नहीं हम बात करेंगे, मामा अपनी कुट्टी समझो!

रमेश तैलंग की 'डरता चाँद' बालकविता में एक बच्चे के मन का यह संदेह भी कितना मासूम है –

आसमान पर ही रहता क्यों, नीचे नहीं उतरता चाँद
मां, बतलाओ क्यों मुझसे, हर रात ठिठोली करता चाँद
मैंने कहा, एक दिन मेरे, आंगन में भी आ जाओ
दूध-भात की खीर बनी है, मीठी-मीठी खा जाओ
पर लगता है मेरे जैसे, छुटकू से भी डरता चाँद।

हिंदी बाल कविता को सूरज-चांद-सितारों को लेकर अभिनव कल्पनाओं से संयुक्त बालगीतों की निरन्तर प्रतीक्षा रहेगी।

6 : लोरियाँ, प्रभाती और पालने के गीत

लोरी उन गीतों को कहते हैं जो नन्हें मुन्नों को सुनाने के लिए गाये जाते हैं। लोरी शब्द संस्कृत के लोल शब्द का अपभ्रंश हैं जिसका अर्थ होता है हिलाना डुलाना या थपथपाना। मातायें अपने बच्चों को गोद में लेकर, कन्धे पर डाल कर या पालने में लिटाकर थपथपी देकर सुलाती हैं और उनकी आँखों में नींद को बुलाने के लिए मुख से मधुर शब्दों में कुछ ऐसे गीत सुनाती हैं जिन्हें सुनकर बच्चों को जल्दी ही नींद आ जाती है। यह गीत पारिवारिक वातावरण से प्रेरित होते हैं और उनमें माता के हृदय की ममता और निर्मल वात्सल्य की सरल स्वाभाविक अभिव्यक्ति होती है। प्रायः संध्या के समय ही यह गीत गाये जाते हैं। इसलिए उनमें सूरज डूबने से लेकर आकाश में चांद निकलने और तारों के छिटकने तक के प्राकृतिक दृश्यों के सजीव चित्रण भी मिलते हैं। मातायें उन गीतों में अपने भोले-भाले बच्चों के भविष्य के विषय में तरह-तरह की कोमल कल्पनायें किया करती हैं। वह उनके भय, आशंका, हर्ष, प्रसन्नता आदि का ध्यान करके उनकी भावनाओं को सुनिश्चित करने और उन्हें सोने की प्रेरणा देने का प्रयत्न करती हैं। हिन्दी में सोने के गीतों के समान ही बच्चों को सोते से जगाने के भी बहुत से गीत लिखे गये हैं। सूरदास के एक गीत की पंक्ति है –

जागिए बृजराज कुंवर कमल कुसुम फूले

इन जगाने के गीतों में भी लोरियों के समान ही माताओं के मन में बच्चों के प्रति होने वाली स्वाभाविक ममता की अभिव्यक्ति होती है। उनके द्वारा भी मातायें बच्चों की सरल भावनाओं के अनुरूप उनके भविष्य के विषय में तरह-तरह की कल्पनायें किया करती हैं। वह सोचती हैं कि उनका मुन्ना बड़ा होकर संसार में यश, धन, मान कमायेगा, वह पढ़ लिखकर विद्वान बनेगा इत्यादि। अवकाश के समय बच्चे को पालने में झुलाते हुए भी मातायें इसी प्रकार की कोमल भावनाओं को व्यक्त करने वाले गीत गाया करती हैं। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य गीत भी इस प्रकार के होते हैं जिनका विशेष उपयोग बच्चों को सुलाने, जगाने या पालने पर झुलाने के समय ही नहीं होता फिर भी वह बच्चों की तुतली बातों को सुन उनके क्रिया-कलापों को देखकर अपनी प्रसन्नता को व्यक्त करने के लिए गाये जाते हैं। हिन्दी बाल गीत साहित्य में लोरियों की कोई निश्चित परिभाषा न बन पाने के कारण ऐसे सब गीतों को हम लोरियों के अन्तर्गत ले सकते हैं जिनमें माताओं की बच्चों के प्रति ममता के साथ-साथ सद्भावनाओं की अभिव्यक्ति हुई हो। लोरियों की सबसे प्रमुख

विशेषता यह है कि उन्हें संगीत के स्वरों में गाया जा सके। माताओं के हृदय की ममता और सद्भावना की अभिव्यक्ति होते हुए भी यदि उन्हें गाया नहीं जा सकता तो लोरियों और अन्य कविताओं में कोई अन्तर नहीं रहता। बाल गीत और लोरियों में यह अन्तर होता है कि बाल गीत में बच्चों की अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है और लोरियों में बच्चों के लिए माता की ममता और सद्भावनाओं की। लोरियों को बाल गीतों की श्रेणी में इसलिए रख लिया जाता है कि वे बच्चों के लिये ही लिखी या गाई जाती हैं और बच्चों की मनोभावनाओं को छू कर उनका मनोरंजन करती हैं। अधिकांश नन्हें-मुन्ने बच्चे लोरियों के प्रत्येक शब्द और अक्षर का ठीक-ठीक अर्थ नहीं समझ पाते। पर वह उन्हें गाया जाता हुआ सुन कर प्रसन्न अवश्य होते हैं और उनके द्वारा सुलाये या जगाये जाने में एक अनिर्वचनीय सुख का अनुभव करते हैं। मानवीय संगीत का सबसे पहला परिचय बच्चों को लोरियों के स्वरों के द्वारा ही होता है। बच्चों की महत्वाकांक्षायें और आशायें भी मातायें प्रायः स्वयं अपनाकर लोरियों के माध्यम से व्यक्त करने में सफल होती हैं। भाषा की दृष्टि से लोरियाँ बाल गीतों की तरह ही सरल और स्वाभाविक होती है। बाल गीत जिस प्रकार बच्चों के मन में स्वयं उत्पन्न होते हैं उसी प्रकार लोरियाँ भी माताओं के मन से स्वयं फूट निकलती हैं। अच्छी लोरियों की पहचान ही यह है कि वह प्रयास से न लिखी गई हों। उनमें एक ऐसी स्वाभाविक सरलता विद्यमान हो कि वह अबोध बच्चों के कोमल हृदयों को आकर्षित कर सकें। कृत्रिमता और सजावट आ जाने से उनमें कविता की गन्ध आने लगती है और वह लोरियाँ नहीं रहतीं। पारिवारिक होने के कारण लोरियों का विषय-क्षेत्र बाल गीतों की अपेक्षा बहुत सीमित होता है। बाल गीत बच्चे के परिचित या कल्पना-क्षेत्र में आजाने वाले किसी भी विषय पर लिखे जा सकते हैं। पर लोरियाँ नन्हें-मुन्ने को सुलाने, जगाने या झुलाने की विशेष परिस्थितियों और माताओं की ममताऔर सद्भावनाओं की प्रेरणा के आधार पर ही लिखी जा सकती है। उनमें बड़ों की-सी बड़ी-बड़ी बातें भी अक्सर की जा सकती है क्योंकि वह माताओं के मन की उपज होती हैं और उन्हें माताओं के बड़प्पन के प्रभाव से सर्वथा अछूता भी नहीं रखा जा सकता।

भारतवर्ष में लोरियों की परम्परा बहुत पुरानी है। आज भी गाँवों में अनपढ़ और अनजान मातायें परम्परा से प्राप्त कुछ ऐसी लोरियों की पंक्तियां सुनाती हुई पाई जाती हैं जिनके मौलिक रूप और रचना-काल के विषय में कुछ भी निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है। बहुत सी लोरियाँ या उनकी पंक्तियाँ उनकी अपनी मनगढ़न्त भी हुआ करती हैं। लोक गीतों की तरह उन पंक्तियों का भी चयन किया जा सकता

है। हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में बाल गीतों की तरह लोरियों के भी आदि कवि सूरदास ही माने जाते हैं। उन्होंने बाल कृष्ण को सुलाने जगाने के लिये ऐसे सुन्दर गीत लिखे हैं जिनकी-सी कोमलता हमें अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलती -

मेरे लाल की आउ निदरिया काहे न आन सुलावै।
तू काहे न बेगि सी आवै तोको कान्ह बुलावै।।

अंग्रेजी में लोरियों को 'ललेबीज' कहते हैं और हिन्दी लोरियों की तरह न तो अंग्रेजी में ललेबीज की बहुतायत है और न उनमें वह मार्मिकता और स्वाभाविकता ही है जो हिन्दी लोरियों में मिलती है। अंग्रेज मातायें अपने नन्हें-मुन्नों से भारतीय माताओं की अपेक्षा कम प्यार नहीं करतीं। पर उनका रहन-सहन, समाज-संगठन और पारिवारिक जीवन कुछ इस प्रकार का है कि बच्चों के प्रति ममता का प्रदर्शन वह भारतीय माताओं की तुलना में कर ही नहीं सकतीं।

भारतीय माता अपने बच्चे के लिये त्याग और तप करने में अंग्रेज माता से कहीं अधिक बढ़-चढ़ कर होती है। फूहड़ से फूहड़ भारतीय मां शीत की कठिन रात में बच्चे के बिस्तर पर मूत्र त्याग कर देने पर सहर्ष बच्चे को सूखे भाग में सुला कर स्वयं गीले में पड़ रहना स्वीकार कर लेती हैं पर अंग्रेज माताओं में त्याग की ऐसी भावना नहीं होती। इन्हीं सब कारणों से अपने बच्चे के प्रति अंग्रेज माँ की अपेक्षा भारतीय माँ का सम्बन्ध अधिक ममतापूर्ण और मधुर होता है। माँ के इस सम्बन्ध की ही अभिव्यक्ति लोरियों और ललेबीज में होती है। अंग्रेजी ललेबीज में हमें वह माधुर्य और सहज स्वाभाविक स्नेहपूर्ण भावनाओं की अभिव्यक्ति नहीं मिलती जो भारतीय लोरियों में मिलती है।

आधुनिक खड़ी बोली में लोरियों का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। बाल गीतकारों में सबसे पहले लोरी लिखने में पं. अयोध्या सिंह उपाध्याय ने अपनी रुचि दिखाई है। उनकी लिखी एक लोरी है -

आरी नींद लाल को आजा। उसको करके प्यार सुलाजा।
तुझे लाल हैं ललक बुलाते। अपनी आँखों पर बिठलाते।।
तेरे लिये बिछाई पलकें। बढ़ती ही जाती हैं ललकें।।
क्यों तू है इतनी इठलाती। आ आ मैं हूं तुझे बुलाती।।
गोद नींद की है अति प्यारी। फूलों से है सजी संवारी।।
उसमें बहुत नरम मन भाई। रुई की है पहल जमाई।।
बिछे बिछौने हैं मखमल के। बड़े मुलायम सुन्दर हलके।।
जो तू चाह लाल उसकी कर। तो तू सोजा आँख मूंदकर।।

मीठी नीदों प्यारे सोना। सोने की पुतली मत खोना।।
उसकी करतूतों के ही बल। ठीक-ठीक चलती है तन कल।।

लोरियों के आवश्यक तत्वों की दृष्टि से इसमें वह सब गुण मौजूद हैं जो किसी लोरी को रोचक बनाते हैं। कवि ने इसे माता के अन्तरतम में बैठ कर लिखा है। पर वह कलात्मकता के प्रति अपने मोह का संवरण सर्वथा नहीं कर पाया है। अन्तिम दो पंक्तियाँ तो पुकार-पुकार कर कह रही हैं कि हम अनावश्यक हैं।

लोरियाँ लिखना वास्तव में पुरुषों का काम भी नहीं है। माताओं के ही मनोभाव उनमें व्यक्त होते हैं और वही उन्हें गाती हैं। पुरुष प्रयत्न करके भी भावों की वह कोमलता और कल्पनाओं की वह बारीकी नहीं ला सकते, जिनके आधार पर मधुर और सरस लोरियाँ लिखी जाती हैं। हिन्दी की आधुनिक कवयित्रियों में से बहुत कम ने लोरियाँ लिखने की ओर कुछ ध्यान दिया है। श्रीमती महादेवी वर्मा, तोरन देवी शुक्ल 'लली', रामेश्वरी देवी 'चकोरी' इत्यादि ने तो बच्चों के लिए कुछ लिखा ही नहीं (महादेवी जी छायावाद के आधार स्तम्भों में से एक हैं। कुछ बाल कविताएं लिखने के बावजूद बालकाव्य उनका पसंदीदा क्षेत्र नहीं रहा।) जिन कवयित्रियों ने बच्चों के लिये बाल गीत लिखे भी हैं उनमें सबसे प्रमुख श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान ने भी लोरियाँ लिखने की ओर कोई रुचि नहीं दिखाई। उनका जीवन राजनैतिक और सामाजिक अधिक था अतएव उनके बाल गीतों में भी हम सामाजिक चेतना का प्रभाव स्पष्ट देख सकते हैं। कुछ बाल गीतों में उन्होंने माँ की स्वाभाविक ममता का बहुत सुन्दर और मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है जैसे एक कविता है 'मेरी बिटिया रानी' –

मैं बचपन को बुला रही थी बोल उठी बिटिया मेरी।
नन्दन बन सी फूल उठी वह छोटी सी कुटिया मेरी।।
'मां ओ' कहकर बुला रही थी मिट्टी खाकर आई थी।
कुछ मुँह में कुछ लिये हाथ में मुझे खिलाने लाई थी।।
मैंने पूछा यह क्या लाई? बोल उठी वह - मां काओ।
फूल फूल मैं उठी खुशी से मैंने कहा - तुम्हीं खाओ।।

लोरी के आवश्यक तत्व इसमें विद्यमान न होने के कारण हम इसे कविता या बालगीत ही कह सकते हैं लोरी नहीं। श्रीमती विद्यावती कोकिल ने कुछ सुन्दर लोरियाँ लिखी हैं। उदाहरणार्थ हम यहाँ एक प्रस्तुत करते हैं –

निंदिया बहुत ललन को प्यारी।
अपने प्राणों का दीपक कर जीवन की कर बाती,

सिरहाने बैठी बैठी हूं कब से उसे जगाती,
भभक उठी है छाती मेरी आँखें हैं कुछ भारी।
निंदिया बहुत ललन को प्यारी।
कभी हँसाने से न हँसा वह ऐसा असमझ भोरा,
सोते सोते हँसा नींद में मेरा कौन निहोरा,
प्रति दिन मन मारे रह जाती कितनी उत्सुकता-री।
निंदिया बहुत ललन को प्यारी।
कौन कथा कह कर ना जाने परियाँ उसे हँसातीं,
मेरी कथा लड़खड़ाती सी चुम्बन में रह जाती,
मैं रह जाती हूं कहने को मन ही मन कुछ हारी।
निंदिया बहुत ललन को प्यारी।

इस गीत में लोरियों में सबसे अधिक अपेक्षित गेय तत्व विद्यमान है। माँ की ममता और बच्चों को सोते से जगाते समय के मनोभाव और अपनी चेष्टाओं की असफलता का अच्छा चित्रण इसमें किया गया है। लेकिन कोकिल जी के अध्यात्म विषयक विचारों के कारण इस लोरी में एक ऐसा भारीपन आ गया है कि अभिव्यक्ति की स्वाभाविकता नष्ट हो गई है। प्राणों का दीपक और जीवन की बाती करने की बात साधारणतया स्त्रियाँ लोरी गाते समय नहीं सोचतीं और बच्चे को देर तक जगाते रहने की चेष्टा के बाद भी उनकी छाती न तो भभक उठती है और न आँखें भर आती हैं। किसी स्त्री का कोई बच्चा ऐसा भोला भी कभी न होगा जो जगाते में कभी हँसे ही न। अवचेतन मन के दर्शन का बहुत अधिक प्रभाव कोकिल जी पर है इसलिये उन्होंने इस लोरी में बच्चे को नींद में ही हँसते हुए देखा है। आध्यात्मिक दृष्टि से इस लोरी का अच्छा विवेचन किया जा सकता है और आत्मा-परमात्मा के विषय में विचार करने वाले बड़े इसमें रस भी ले सकते हैं पर लोरियों में जो मातृ-हृदय के सरल स्वाभाविक उद्गार व्यक्त होना चाहिए उनकी दृष्टि से इसे हम श्रेष्ठ लोरियों की पंक्ति में नहीं रख सकते।

मेरठ की सुप्रसिद्ध समाजसेवी कवयित्री और लेखिका श्रीमती कमला चौधरी ने भी कुछ सुन्दर लोरियाँ लिखी हैं। 'चित्रों में लोरियाँ' नाम से उनकी एक सुन्दर पुस्तक भी छपी थी। उनकी लोरियों में एक स्वाभाविकता के साथ-साथ पढ़ने या सुनने वाले बच्चे के मन को अपनी ओर आकर्षित करने की शक्ति भी है। पर उन्होंने जीवन के अन्य कार्य-क्षेत्रों में अधिक उलझ जाने के कारण अधिक लोरियाँ नहीं लिखीं या वह प्रकाशित होकर सामने नहीं आईं। श्रीमती सुमित्रा कुमारी सिन्हा

ने बाल गीतों के साथ-साथ कुछ लोरियाँ भी लिखी हैं। उनमें पारिवारिक जीवन और माँ की भावनाओं का बड़ा रोचक चित्रण है। श्रीमती शान्ति अग्रवाल, कामिनी दीदी आदि बाल गीत लेखिकाओं ने लोरियों के क्षेत्र को बिलकुल अछूता ही छोड़ रखा है। लोरियाँ लिख कर हिन्दी में जिन्होंने सबसे अधिक यश अर्जित किया वह श्रीमती शकुन्तला सिरोठिया हैं। उनकी लोरियों का क्षेत्र व्यापक भी है और माँ के मन की ममता और भावनाओं की कोमलता का उनमें अच्छा चित्रण हुआ है। उनकी एक बहुत प्रसिद्ध लोरी है -

चाँदनी की चादर उढ़ाऊं तुझे मोहना।
सोजा मेरे लालना।।
सूरज भी सो गया, पन्छी भी सो गये,
डालों की गोदी में फूल सभी खो गये।
तू भी चुप सो जा झुलाऊं तुझे पालना।
सोजा मेरे लालना।।

इस छोटी-सी लोरी में कल्पना की कोई ऊँची उड़ान नहीं। किन्तु माँ की बच्चे को सुलाते समय की स्वाभाविक भावना सरल गीतमय शैली में व्यक्त हुई है। सूरज और पंछियों के सो जाने और पत्तों की गोद में फूलों के न दिखाई देने का उल्लेख करके एक ऐसा वातावरण कुशल कवि ने प्रस्तुत कर दिया है कि उस वातावरण में बच्चे को भी सो जाने की प्रेरणा देना नितान्त स्वाभाविक लगता है। इस समय ही बच्चे से यह कहना कि मैं तुझे पालना झुलाती हूँ मनोभाव को पराकाष्ठा तक पहुँचा देता है। भावना की इतिश्री कार्य में ही होती है। सुलाने के लिये झुलाने से अधिक उपयुक्त और कोई कार्य हो ही नहीं सकता। इन सब बातों के साथ ही इसमें गजब का गेय तत्व विद्यमान है। इसलिए शकुन्तला जी की इस लोरी को श्रेष्ठतम लोरियों की श्रेणी में रखा जा सकता है।

उनकी ही एक दूसरी लोरी है -

चन्दा प्यारे आ जाओ। नींद रंगीली ले आओ।
चाँद लोक की परियाँ भेजो, भेजो मृग का छौना,
मुन्ना मेरा सोने जाता लगे न इसको टोना,
पलना सोने का लाओ। चन्दा प्यारे आ जाओ।
नीले रंग के पलने में हों तारे टँके सुनहले,
किरणों की हो डोरी उसमें झुमके नीले पीले,
लोरी मीठी गा जाओ। चन्दा प्यारे आ जाओ।।

इस लोरी में बच्चे को सोने के लिए प्रेरित करते समय वह चाँद से रंगीली नींद को कर आकाश में निकल आने को कहती हैं। चन्द्रमा के साथ चन्द्र लोक की परियों और चन्द्रमा में रहने वाले मृग छौना का ध्यान आना भी स्वाभाविक है। पर चन्द्रमा के उदित होने से जिस बात की आशंका माँ को हो सकती है उसे टोना न लगने का उल्लेख करके कवयित्री ने इस लोरी को माँ के हृदयों को बड़े मार्मिक ढंग से स्पर्श करने वाला बना दिया है। इसके अतिरिक्त सोने के पलंग, सुनहरा तारा, किरणों की डोरी और नीले पीले झुमकों का उल्लेख होने से माँ की ममता के साथ माँ जिन सुन्दर-सुन्दर वस्तुओं की कल्पना कर सकती है उनका वर्णन भी रोचक ढंगसे हो गया है। प्रत्येक माता अपने बच्चे को अधिक से अधिक ऐश्वर्य-सुख से मंडित देखना चाहती है और इच्छा करती है कि उसका बच्चा सबसे अधिक सुख आराम से रहे। माँ की इसी भावना की बहुत सुन्दर अभिव्यक्ति इसमें हुई है।

शकुन्तला जी की लिखी लोरियों की एक विशेषता यह भी है कि उन्होंने केवल बेटों के लिए ही लोरियाँ नहीं लिखीं। ऐसा करना मनोविज्ञान के अनुसार अधिक स्वाभाविक होता क्योंकि स्त्रियों का आकर्षण अपने बेटों के प्रति बेटियों की अपेक्षा अधिक होता है। शकुन्तला जी ने अपनी राजदुलारी मुन्नी को सुलाने के लिए भी सुन्दर लोरियाँ लिखी हैं - एक यहां प्रस्तुत है -

आँख बन्द कर राजदुलारी तुझे सुनाऊं लोरी।
लाल मुनइयां चिड़िया पालूं,
आम डाल पर पलना डालूं,
रेशम की दे डोरी।
तुझे सुनाऊं लोरी।।
लहंगा चुनरी तुझे मंगाऊं,
चाँद सितारों से जड़वाऊं,
सो जा मुन्नी मेरी।
तुझे सुनाऊं लोरी।।

कवयित्रियों में कोई भी दूसरी कवयित्री हमें ऐसी नहीं मिलती जिसने ऐसी मर्मस्पर्शी और मधुर लोरियाँ लिखी हों जैसी शकुन्तला सिरोठिया जी ने लिखी हैं। हिन्दी के सुप्रसिद्ध बाल गीतकार अशोक एम.ए. की धर्म पत्नी श्रीमती लक्ष्मी देवी चन्द्रिका ने भी कुछ सुन्दर लोरियाँ लिखी हैं पर उनमें कल्पनाओं की वह रंगीनी

और भावों की वह मार्मिकता नहीं है जो शकुन्तला जी की लोरियों में हमें मिलती हैं - उनकी एक लोरी यहाँ प्रस्तुत है -

सो जा ललना- सो जा ललना।
माँ की गोदी तेरा घर है,
तेरा घर है तेरा घर है,
फिर क्यों तेरे मन में डर है,
सोने चान्दी का है पलना।
सो जा ललना सो जा ललना।।
मीठी मीठी नींद बुला दूँ,
थपकी देदे तुझे सुला दूं,
कभी न रोना और मचलना।
चन्दा आया, चन्दा आया,
साथ बहुत से तारे लाया,
मीठा दूध कटोरा लाया,
अच्छे पथ पर ही तुम चलना।
सो जा ललना, सो जा ललना।

यों तो लोरी में माँ अपने बच्चे के विषय में कोई भी कल्पना या भावना व्यक्त कर सकती है किन्तु बच्चा बड़ा होकर अच्छे पथ पर चले यह माँ के मन में समाज के प्रभाव से आई हुई भावना है। अच्छा पथ कौन सा है इसे समाज ही बड़ा होकर उसे बतायेगा। लोरी में माँ की सामाजिक भावना की अपेक्षा अपनी निजी भावना की अभिव्यक्ति ही अधिक मधुर लगती है। सामाजिकता लिए हुए होने के कारण शिक्षा का अभाव भी लोरी गाते समय माँ के मन में नहीं आ सकता। इस लोरी में चन्द्रिका जी ने बच्चे को आदेश दिया है कभी न रोना और मचलना पर वह तो बच्चे के स्वाभाविक गुण हैं। इसलिए कोई बच्चा इस लोरी में दिये गये आदेश को खुश होकर स्वीकार कैसे कर सकता है।

हिन्दी के बाल कवियों में राजस्थान के श्री शम्भू दयाल सक्सेना ने सबसे अधिक लोरियाँ लिखी हैं। 'शिशु लोरी', 'पालना', 'चन्द्र लोरी', 'रेशम झूला', 'मधु लोरी' और 'आरी निंदिया' इत्यादि नामों से उनकी लिखी लोरियों के कई संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी लोरियों में एक भारतीय परिवार के रहने वाली नारी की बच्चे के प्रति कोमल भावनायें उपयुक्त शब्दों में व्यक्त हुई हैं। उनकी एक लोरी

आरी निंदिया, आरी निंदिया
सपने भर भर ला री निंदिया।।
सोता है भैया पलने में।
तारों को दे जा री निंदिया।
प्यारी निंदिया, प्यारी निंदिया।
चन्दा को संग ला री निंदिया।।
मुन्ना के फुलके गालों पर,
फूलों की छवि प्यारी, निंदिया।
ओरी ऐसी वैसी निंदिया।।
तेरी ऐसी तैसी निंदिया।
है तू निपट अनारी निंदिया।।
ओरी निंदिया, आरी निंदिया।
माथे पर दे जा री बिंदिया।।

कवि ने इस लोरी में बच्चे का पलने में सोने और उसके गालों पर फूलों की छवि छाने का वर्णन किया है और नींद से सपने और चन्द्रमा ले कर आने का आग्रह भी किया है किन्तु नींद के लिए "तेरी ऐसी तैसी" जैसे अपशब्द भी कह दिये हैं। नींद को देर तक बुलाने पर भी न आने से अक्सर माताओं को क्रोध आ जाता है। पर उस क्रोध की अभिव्यक्ति लोरी में अच्छी नहीं लगती। यदि क्रोध की वह भावना उलाहने के रूप में सुन्दर ढंग से कही गई होती तो रोचक भी लग सकती थी पर "तेरी ऐसी तैसी" कहने से जिस उद्देश्य से लोरी गाई जाती है वह भी पूरा नहीं होता। बच्चा तो इस प्रकार की क्रोधावेश की बात को सुन कर बजाय सोने के जग ही पड़ेगा।

उनकी लिखी बहुत सी लोरियों में केवल शब्द चित्र उतार कर रख दिये गये हैं। पर कहीं-कहीं माँ के मन की भावुकता को साधारण परिवार के वातावरण में व्यक्त करके इतना सुन्दर रूप दिया है कि कोई चमत्कार या मार्मिक अभिव्यंजना उनमें न होते हुए भी वह हृदय को आकर्षित करती हैं -

कहाँ गई तू ओरी निंदिया मुँह से जो नहिं बोलै।
कब से मेरा छगन मगन हो तुझे बुलाता डोलै।।
बाबा लौट खेत से आये दादा दूर नगर से।
तू तो भी रह गई कहां री आती कौन डगर से।।
नाना ने दो धावन भेजे तुझे बुलाने को री।

विलम कहां तू रही बावरी गाती गाती लोरी।।
मुँह माँगा देने को नानी दादी तुझे बुलाये।
भइया के पलकों पर आ जा सैनों से समझाये।।

इसी प्रकार पालना के गीतों में भी सक्सेना जी ने मधुर पारिवारिक सम्बन्धों के चित्र प्रस्तुत किये हैं। पालने के गीत उन गीतों को कहते हैं जो मातायें बच्चों को पालने पर झुलाते समय गाया करती हैं। उनमें मातायें अपने मन की प्रसन्नता, सन्तोष, सुख और बच्चों के रूप सौन्दर्य का वर्णन करती हैं। सक्सेना जी का एक पालने का गीत है –

हिंडोला झूलें लाल हमारे।
हँस हँस मौसी उसे झुलाये मामी आ पुचकारे।।
झोंका एक बुआ का झूलो भइया कुँवर सलोने।
झूला दूसरा लो नानी का फिर झूले कब होने।।
दादी का भी झोंका ले लो चूम रही जो मुख है।
यह जीवन कांटों का प्याला जिसमें दुख ही दुख है।।
बचपन पर ही माँ के मोहन तुम्हें सुनाये लोरी।
फिर पग पग पर आने को हैं घड़ियां पाहुर थोरी।।

इस पालना के गीत में कवि ने जीवन के अनुभवों के आधार पर एक कटु यथार्थ कहने के आवेश में इस सत्य को सर्वथा भुला दिया है कि मातायें किसी भी स्थिति में न तो अपने बच्चे के अशुभ भविष्य की कल्पना कर सकती हैं और न उसे पालने में झुलाते हुए शुभ समय में अपने मन में दुःख ही ला सकती है। मुख की तुक दुःख से जोड़ने के बाद से इस गीत का सारा माधुर्य ही समाप्त हो जाता है। मातायें इस प्रकार के गीतों में भी टोना करने, बलायें उतारने या आने-जाने वाले अनिष्ट की शंका से अपने बच्चों को बचाने के लिए अन्य उपायों की चर्चा तो कर सकती हैं पर जीवन दुःख ही दुःख से भरा है, और भविष्य के जीवन में पग-पग पर मुसीबतें आनेवाली हैं इस प्रकार की बातों पर स्वाभाविक रूप से उनका ध्यान नहीं जा सकता।

लोरियों का क्षेत्र हिन्दी में वास्तव में उपेक्षित रहा है। सर्वश्री पं. राम नरेश त्रिपाठी, स्वर्ण सहोदर, सोहन लाल द्विवेदी, विद्याभूषण विभु आदि प्रमुख बालगीत लेखकों में से किसी ने भी लोरियां लिखी ही नहीं। ठा. श्री नाथ सिंह और श्री राम सिंहासन सहाय 'मधुर' ने इस ओर कुछ ध्यान अवश्य दिया है। बालगीतकार कवियों में श्री राष्ट्रबन्धु ने एक सुन्दर लोरी लिखी है "कन्तक थैयाँ घुनूँ मनैयाँ"–

कंतक थैयाँ धुनूं मनइयाँ।
चंदा भागा पइयाँ पइयाँ।।
यह चन्दा हलवाहा है नीले नीले खेत में।
बिलकुल सैंत मैंत में, रत्नों भरे खेत में।।
किधर भागता लइयाँ पइयाँ,
कन्तक थैयाँ घूनुं मनइयाँ,
अन्धकार है घेरता टेढ़ी आँखें हेरता।
चान्द नहीं मुँह फेरता, राकेट को है टेरता।।
मुन्नू को लूँगा मैं कइयाँ,
कन्तक थैयाँ धुनूं मनइयाँ,
मिट्टी के महलों के राजा ताली तेरी बुढ़िया बाजा।
छोटा छोटा छोकरा, सिर पर रक्खे टोकरा।।
राम बनाये डोकरा,
बने डोकरा करूँ बलइयाँ।
कन्तक थैयाँ धुनूँ मनइयाँ।।

इस लोरी में कुछ-कुछ लोक गीतों जैसा आनन्द आता है। कन्तक थैयाँ घुनूँ मनइयाँ, लइयाँ, पइयाँ, कइयाँ, बलइयाँ तथा सैंत मैत, हेरना टेरना इत्यादि बहुत से शब्द सीधे लोक भाषा से लिये गए हैं। पहले दो छन्दों में केवल वर्णन है और चान्द के राकेट को टेरने की बात कह कर कवि ने नवीन युग की वैज्ञानिक उन्नति की ओर संकेत किया है पर लोरी की आत्मा जो माँ की ममता होती है उसकी अभिव्यक्ति केवल अन्तिम छन्द की कुछ पंक्तियों में हुई है – "छोटा-छोटा छोकरा राम बनाये डोकरा। बने डोकरा करूँ बलइयाँ।"

लोरी को अन्य बालगीतों से अलग करने वाला तत्व माँ की ममता और उसके मन की वह भावनायें हैं जो स्वभावतः बच्चे के प्रति रहती है। वातावरण और परिस्थितियों की सहायता से कवि उन्हीं भावनाओं को आकर्षक रूप देकर व्यक्त करता है। इसलिये वातावरण और परिस्थितियों का चित्रण लोरी के मुख्य वर्ण्यविषय नहीं। उनका उपयोग केवल इसलिए किया जाता है कि उस पृष्ठभूमि पर माँ की ममता का चित्र सुन्दर उतर सके। लोरी लिखते समय कवि के सामने दो विशेष कठिनाइयाँ होती हैं – एक तो यह कि उसका काम केवल उन भावनाओं या कल्पनाओं को व्यक्त करना होता है जो माँ के मन में अपने बच्चे के प्रति रहती हैं। माँ का हृदय बच्चे के प्रति ममता का एक अथाह सागर होता है अतएव जो कवि इस

अथाह सागर में जितना कुशलतापूर्वक गोते लगा सकता है उतने ही भाव-रत्न वह बाहर निकाल कर ला सकता है। माँ के हृदय-सागर में गोते लगाने के लिए यह आवश्यक होता है कि गोताखोर माँ को प्यार करे। माँ को प्यार करने का अर्थ होता है माँ और बच्चा दोनों को समान मनोवेग से प्यार करे। इसीलिए अधिकतर लोरी लिखने वाले पुरुष कवि की पहिली कठिनाई माँ और बच्चा दोनों को एक साथ प्यार करने की होती है। दूसरी कठिनाई लोरी लिखने वाले कवि के लिये यह होती है कि उसे लोरी में माँ की भावनाओं और कल्पनाओं को ऐसे सरल और सहज स्वाभाविक रूप में व्यक्त करना पड़ता है जिससे छोटे से छोटा अबोध बालक भी उससे प्रभावित हो सके। यह काम बहुत कुछ तो लोरी की गीतात्मकता से पूरा हो जाता है पर अगर लोरी में माँ के हृदय में उठने वाली ऊँची-ऊँची कल्पनायें और बड़ी-बड़ी भावनायें अलंकारिक ढंग से कठिन भाषा में व्यक्त कर दी जायें और उसमें गीतात्मकता हो तो भी उस अभिव्यक्ति का उपयोग लोरी के रूप में नहीं किया जा सकता। लोरी में सरल भावों की सरलतम अभिव्यक्ति होती है तभी वह मनोरंजक और प्रभावशालिनी लग सकती है। इसके लिए लोरी के लेखक को बाल मन की भी उसी तरह थाह लेनी होती है जैसे माँ के मन की।

साधारण बाल गीतों को लिखने में यह दोहरी कठिनाई कवि के सामने नहीं होती। उन्हें लिखते समय उसे केवल बच्चे के मन में प्रवेश करके बच्चों की कल्पनाओं और भावनाओं को अपनाना पड़ता है।

हिन्दी के बालगीतकारों में बिहार के श्री ब्रज़किशोरनारायण ने भी बड़ी भावपूर्ण लोरियाँ लिखी हैं। "आ री निंदियाँ" नाम से उनकी लोरियों का एक संग्रह प्रकाशित हो चुका है। उनकी लोरियों में एक ऐसी सरल स्वाभाविकता विद्यमान मिलती है जिससे ज्ञात होता है कि वह सिद्धहस्त कलाकार की कृति है। उनकी दो लोरियाँ हम उदाहरणार्थ यहाँ प्रस्तुत करते हैं -

मेरी बिटिया सो जा सो जा,
कुत्ता तबला बजा रहा है,
नाच रही है बिल्ली।
कुत्ता जायेगा कलकत्ता,
बिल्ली आये दिल्ली।
घोड़ा बाबू ढोल बजाये,
बछड़ा जी सारंगी।

खाते हैं नारंगी।
मेरी बिटिया सोजा सोजा।।

दूसरी लोरी है –

सोओगे तो पैसा दूँगी,
सोओ मेरे लाल।
बूढ़ा मेढक गाल बजाता,
टर टर टर टर टर।
बाघराम हैं पानी पीते,
सर सर सर सर सर।
बड़ी मेढकी रोटी खाती छोटी खाती भात।
बूढ़े मेढ़क ने छोटी को मारी कस कर लात।।
छोटी गिर गई छप्प,
सोओ मेरे लाल।

इन लोरियों से प्रकट होता है कि कवि को बाल मन की भावनाओं का अच्छा ज्ञान है। बच्चे जब कहानियाँ समझने लगते हैं तो लोरियों को छोड़ कर कहानियाँ सुनते-सुनते भी सो जाते हैं। कहानियों में उन्हें माँ को ममता की अभिव्यक्ति नहीं मिलती पर उन्हें सुन कर उसके मन को जो शान्ति मिलती है उससे ही उन्हें नींद आ जाती है। पर कहानियाँ अवस्था में अपेक्षाकृत बड़े बच्चों को सुलाने के लिए ही काम में लाई जाती हैं। नारायण जी की इन लोरियों में भी बच्चों की कल्पनाओं को उभार कर मन को शान्त करके सुलाने की कहानियों जैसी बात हमें मिलती है। 'मेरी बिटिया सोजा सोजा' या 'सोओ मेरे लाल', अन्य पंक्तियों के साथ इस प्रकार से जुड़े हुए हैं जैसे शेष सब पंक्तियों से उनका कोई सम्बन्ध ही न हो।

निरंकार देव सेवक ने अपने "मुन्ना के गीत" तथा "चिड़ियां गातीं तेरा राग" नामक पुस्तकों में कुछ लोरियाँ लिखी हैं। निम्नलिखित लोरी एक स्त्री द्वारा बच्चे को कन्धे पर डाले शाम के समय थपकियाँ देकर सुलाने का प्रयत्न करते हुए गाने की कल्पना करके लिखी गई है –

मेरा मुन्ना बड़ा सयाना,
शाम हुये सो जाता है।
ऊधम नहीं मचाता है।।
बिल्लो रानी यहाँ न आना अब तुम शोर मचाने को।
चूहे वह बैठी है बिल्ली तुझे पकड़े ले जाने को।।

मेरा मुन्ना तुम दोनों के झगड़े से घबराता है।
सांझ हुए सो जाता है।।
मेरा मुन्ना बड़ा सयाना ऊधम नहीं मचाता है।
ऊधम नहीं मचाता है।।
बन्दर बाबा खों खों करके फिर न उतरना आँगन में।
मुन्ना के हाथों का लड्डू छीन न ले जाना छन में।।
मेरा मुन्ना अब आंगन में नहीं नाचता गाता है।
सोने में सुख पाता है।।
मेरा मुन्ना बड़ा सयाना सांझ हुए सो जाता है।
ऊधम नहीं मचाता है।।
चन्दा मामा तुम क्यों आये छत पर चढ़ मुस्काने को।
सब छोटे छोटे बच्चों को सुन्दर सपन दिखाने को।।
मेरा मुन्ना अभी तुम्हारी आहट से अकुलाता है।
तुमको नहीं बुलाता है।।
मेरा मुन्ना बड़ा सयाना साँझ हुये सो जाता है।
ऊधम नहीं मचाता है।।

पालने के गीतों में भी मातायें अपनी ही भावनाओं को व्यक्त करती हैं। बच्चे को देख-देख कर अनेक प्रकार की कल्पनायें और भावनायें उनके मन में उठती हैं। बच्चे के पालने में सो जाने के बाद भी वह पालने को झोंका देती रहती है जिससे उसके रुक जाने से बच्चे की आँख न खुल जाये। पर माँ की कल्पना उस समय भी अपनी गति से उड़ती रहती है। इसी भाव को सेवक जी ने निम्न लिखित पालने के गीत में व्यक्त किया है -

मुन्ना झूले पालना।
धीरे धीरे धीरे डोल,
मुन्ना झूले पालना।
मुन्ना बहुत बहुत रोया,
चुप हो अभी अभी सोया,
चुहिया यहाँ न चूँ चूँ बोल
मुन्ना झूले पालना।।
सुन्दर देख रहा सपना,

टामी! दरवाजा मत खोल
मुन्ना झूले पालना।।
सो कर जब यह जागेगा,
खाने को कुछ मांगेगा,
रक्खूं माखन मिसरी घोल
मुन्ना झूले पालना।।

पालने के गीतों में माताओं की सब प्रकार की भावना और कल्पनायें व्यक्त की जा सकती है पर उनमें माधुर्य तभी आता है जब वह माँ की शुभाकांक्षा और ममता की प्रेरणा से उत्पन्न हों। कन्हैयालाल मत्त ने भी अनेक सुंदर लोरियां लिखीं, जिनमें एक 'झूले मेरा ललना' इस प्रकार है –

"कलियों की गलियां, गंध भरा कोना
झूले मेरा ललना सुंदर-सलोना।
रेशम की डोरी चंदन का पलना
परियों की लुक-छिप, सपनों की छलना
चंदा-सा मुखड़ा काला दिठौना।
मलमल की गद्दी मखमल का तकिया
चांदी की चादर सोने की बखिया
अलकों में जादू पलकों में टोना
झूले मेरा ललना सुंदर-सलोना।"

आज 21 वीं सदी की हिन्दी बाल कविता को भी लोरियों-प्रभातियों ने संपन्न बनाया है। लोरियों के प्रति बाल कवियों का ध्यान आकृष्ट करने में इधर हाल में प्रकाशित नेशनल बुक ट्रस्ट, दिल्ली की 'लोरियां' की महत्वपूर्ण भूमिका रही। इस पुस्तक की भूमिका में प्रकाशकीय वक्तव्य है –

"आज संयुक्त परिवार टूट रहे हैं और बच्चे अकेले होते जा रहे हैं। आज अधिकांश माताएं एक भी लोरी नहीं गुनगुना सकतीं। लोरियां धीरे-धीरे पुरानी पीढ़ी के साथ ही लुप्त होती जा रही हैं और हो सकता है कि निकट भविष्य में लोरियां हमेशा-हमेशा के लिए खो जाएं। इसी चिंता को लेकर नेशनल बुक ट्रस्ट ने लोरियों की एक पुस्तक प्रकाशित करने का निर्णय लिया।"

लोरियां गाकर बच्चे को सुलाने का आज की व्यस्त माताओं के पास न समय है और कदाचित् उमंग भी नहीं। तदपि लोरियां-लेखन में बाल कवियों की रुचि इधर काफी बढ़ी है। जगदम्बा चोला ने अनेक ऐसी लोरियां लिखी हैं, जो सिनेमा

के गीतों से कहीं-न-कहीं प्रभावित प्रतीत होती हैं। उदाहरण के लिए उनकी 'तुझे चांद कहूं या सूरज' लोरी देखिए –

तुझे चांद कहूं या सूरज
तुझे दीप कहूं या तारा
मेरा नाम करेगा रोशन
जग में मेरा राजदुलारा।
मेरे सपने सजे हैं तुझसे
मेरी आंखों के तारे
मेरी दुनिया रोशन तुझसे
तुझे ला दूं चांद सितारे
तुझे मुन्ना कहूं या राजा
तू बेटा मेरा प्यारा।
अब सो जा मेरे मुन्ना
मैं तुझे सुनाऊं गाना
थपकी दे लोरी गाऊं
तुझे सपना आए सुहाना
तुझे लाल कहूं या उजाला
मेरे घर का उजियारा।

जगदंबा चोला की कुछ लोरियों का पूर्वार्द्ध पारंपरिक लोरियों से लिया गया है और बाद में उन्होंने उसे आगे बढ़ाया है। उनकी इस कोटि की लोरियों में 'चंदा मामा दूर के, पुए पकाएं बूर के' तथा 'लल्ला-लल्ला लोरी, दूध भरी कटोरी, दूध में बताशा, लल्ला करे तमाशा' आती हैं। इन लोरियों में संगीतात्मकता और माधुर्य भरा हुआ है और इसीलिए ये लोरी के उद्देश्य को बखूबी पूरा करती हैं।

विनोदचंद्र पाण्डेय 'विनोद' की एक सुंदर लोरी 'मुन्ना सोजा' है। यह लोरी वातावरण-चित्रण द्वारा बच्चे की निंदियाई आंखों को सपनों के लोक में पहुंचाने का न केवल वादा करती है, अपितु अपनी लयात्मकता के कारण उसमें सफल भी होती है –

"सो जा, सो जा, मुन्ना सो जा।
आई पास रात की रानी
तुम्हें सुनाने मधुर कहानी
परियां उतर रहीं धरती पर

सपनों की दुनिया में खो जा।
हंसते नभ में चंदा मामा
पहने चमचम जोड़ा जामा
थपकी देते टिमटिम तारे
गला फाड़ मत रो, चुप हो जा।
सोए फूल मूंदकर आंखें
तितली नहीं खोलती पांखें
चिड़ियों ने ले लिया बसेरा
तू भी भार नींद का ढोजा।"

शकुन्तला कालरा की लोरियों में मां की ममता और शिशु के प्रति समूचा लाड़-दुलार छलक रहा है। शिशु कैसा भी काला-कलूटा हो, मां की आंखें उसे सदैव मोहक-आकर्षक ही देखती हैं और इसीलिए दिठौना लगाकर मां उसे बुरी नज़र से बचाना चाहती है। इसी भाव से प्रेरित होकर शकुन्तला जी ने 'सो जा कान्हा श्याम सलोना' शीर्षक इस लोरी की सर्जना की है –

सो जो कान्हा, श्याम सलोना।
कोमल-कोमल लोना-लोना
नटखट, चंचल ज्यों मृगछौना
सो जा कान्हा, श्याम सलोना।
चंदन पलना नरम बिछौना
चमके जैसे चांदी-सोना
सो जा कान्हा, श्याम सलोना।
सुंदर मुख पर लगा दिठौना
नजर लगे ना जादू-टोना
सो जा कान्हा, श्याम सलोना।

प्रकाश मनु की 'बिटिया रानी सोएगी' में चिड़िया और कोयल से एक मां अपनी बिटिया रानी को विभिन्न राग-रागिनियां सुनाकर सुलाने का आग्रह करती है। सचमुच नींद आने में देर होती देखकर मां अधीर होने लगती है और चाहती है कि जल्दी ही उसकी बिटिया सोकर सपनों की मीठी दुनिया में खो जाये –

"बहुत हुई है उछल-कूद, अब
बिटिया रानी सोएगी
अब तो बिटिया सोएगी।

खाकर बिस्कुट, पीकर दुद्धू
बिटिया रानी सोएगी।
आ जा, आ जा, चिड़िया आ जा
थोड़ी मीठी तान सुना जा।
आ जा, आ जा, तोते राजा
अपना टें-टें राग सुना जा।
कू-कू करती कोयल आ जा
लेकर अपना मीठा बाजा।
तू बिटिया को जरा सुला जा,
झूले में तू उसे सुला जा।
निंदिया अब उतरेगी धीरे
पलने में हंसती-गाती रे।
सोएगी तब सपनों में वह
मीठे गुनगुन सपनों में वह
चंदा-तारों की छैंया में
खोएगी फिर वह सपनों में।"

लोरियों का एक पूरा संसार आज के बाल गीतकारों ने सृजित कर दिया है। इसी क्रम में उषा यादव की लोरियों की चर्चा की जा सकती है, जिनमें आकार की लघुता के भीतर माता के लाड़-प्यार का अथाह समन्दर हिलोरें ले रहा है। 'तू सो जा, मेरी लाडली' में मां के हाथों की थपकियों का स्वर बखूबी सुना जा सकता है -

तू सो जा, हाँ सो जा, मेरी लाडली,
मेरे घर की बगिया की नन्ही कली!
सपनों की दुनिया पुकारे तुझे
वो दुनिया बड़ी ही सुहानी-भली।
परियों के बच्चों के संग खेलना
तू भी उनके जैसी है नाजों-पली।
नयन मूंद झट से, न अब बात कर,
सोया शहर, सोई है हर गली।

इस छोटी-सी लोरी में एक पूरा दृश्य-विधान रच दिया गया है। कुछ ऐसा ही असर 'चंदन का पालना' शीर्षक चार पंक्तियों की निम्न लोरी में भी देखा जा

सकता है, जहाँ लोक-जीवन की धड़कनों का स्पन्दन है -

चंदन का पालना, रेशम की डोर
मोतियन की झालर, गोटे की कोर
पालने पे नाचे सतरंगा मोर
सो जा रे लालना, मत कर शोर।

भगवती प्रसाद द्विवेदी ने भी 'निंदिया आ री' तथा 'सो जा ओ बिटिया रानी' जैसी अपनी लोरियों में बिटिया की आंखों में समा जाने के लिए निंदिया से बारम्बार मनुहार की है। इससे जाहिर हो जाता है कि लोरियों के प्रति बाल गीतकारों का रुझान बढ़ा है और आशा की जा सकती है कि भविष्य में और ज्यादा तादात में अच्छी लोरियां सामने आयेंगी। पर सिर्फ खानापूरी के लिए लोरी लिखना पर्याप्त नहीं है। इसके लिए मातृ हृदय पाना एक अनिवार्य शर्त है और शायद हर कलमकार इसे पूरी नहीं कर सकता है। इसलिए एक भेड़चाल के तहत लोरियों पर अपनी गिद्ध दृष्टि डालना न सिर्फ बाल कविता के लिए नुकसानदेह रहेगा, बल्कि रचनाकार की लुब्धता को दरशाकर उसे भी निचले पायदान पर पहुंचा देगा। बेहतर यही है कि लोरियां जितनी भी लिखी जायें, कसौटी पर स्वयं को खरा सोना ही साबित करने वाली हों।

लोरियों और प्रभातियों में प्रधान अन्तर यही है कि लोरियाँ बच्चों को सुलाने और प्रभातियां उन्हें जगाने के लिए गाई जाती हैं। प्रभाती में सूर्योदय के कुछ समय पूर्व से कुछ समय बाद तक का वर्णन होता है। तब तक सब जग उठ कर अपने-अपने काम में लग जाते हैं। प्रातः काल का समय वैसे भी अपने वातावरण से नई स्फूर्ति उमंग नई-नई प्रेरणायें देने वाला और उत्साह बढ़ाने वाला होता है। सूर्य की सुनहरी किरणें आ कर संसार को स्वर्ण-सा जगमगा देती हैं। फूल कली खिल रही होती हैं। शीतल पवन बह रहा होता है और चिड़ियाँ अपने-अपने घोंसलों से बाहर आ कर चहचहाने लगती हैं। ऐसे समय में मातायें अपने नन्हें-मुन्नों से बिस्तर छोड़ने को कहतीं और उनके भविष्य के जीवन के नये-नये सपने देखा करती हैं। संध्या के समय जो एक प्रकार की गम्भीरता वातावरण में परिव्याप्त रहती है वह प्रातःकाल नहीं होती। प्रभातियों का भाव क्षेत्र लोरियों से अधिक व्यापक और यथार्थ से अधिक निकट होता है। प्रभातियों में मातायें अपने मन की सुकोमल भावनायें ही नहीं वीरता, साहस और उत्साह की बातें भी कह सकती हैं जिनसे उनके बच्चों में वैसे ही भाव जागृत हों। बच्चों को जगाते समय प्रभातियाँ गाने का उतना रिवाज नहीं है जितना सुलाते समय लोरियाँ गाने का। फिर भी प्रभातियां या जागरण के

गीत हिन्दी में लोरियों से कम नहीं लिखे गये हैं। लोरियों के समान ही प्रभातियों के भी आदि कवि सूरदास ही हैं। खड़ी बोली में लिखी गई प्रभातियां हमें आधुनिक काल में ही मिलती हैं। यह प्रभातियां किसी एक राग, स्वर या लय में आबद्ध करके नहीं लिखी गई है। भिन्न-भिन्न स्वरों, लयों, राग-रागिनियों में भिन्न-भिन्न प्रकार के भावों की प्रेरणा से लिखी हुई प्रभातियां हिन्दी में हमे मिलती हैं। कुछ कवियों ने प्रभाती की मूल भावना का राष्ट्रीय चेतना और विकास की भावना से सामंजस्य स्थापित करने की चेष्टा भी की है। जैसे कि पं. सोहनलाल द्विवेदी का यह गीत है –

उठो उठो
पत्ती डोली चिड़ियाँ बोलीं,
हुआ सबेरा उठो उठो।
छाई लाली क्या ही आली,
मिटा अन्धेरा उठो उठो।
आलस त्यागो प्यारे जागो,
आँखें खोलो उठो उठो।
देखो झाँकी भारत माँ की,
जय जय बोलो, उठो उठो।

एक दूसरा गीत अब्दुल रहमान सागरी का है –

जागो और जगाओ।
बीत चुकीं आलस की घड़ियाँ,
जाग उठीं अब सोई चिड़ियाँ,
जागे फूल खिलीं अब कलियाँ,
तुम भी जागो आओ।
जागो और जगाओ।।
जाग रहा है कोना कोना,
फिर अपना यह कैसा सोना,
क्या सोकर है सब कुछ खोना,
उठो होश में आओ।
जागो और जगाओ।।
जागे तुर्क जगे जापानी,
संभल चुके हैं अब ईरानी,

तुमको है कैसी हैरानी,
आगे कदम बढ़ाओ।
जागो और जगाओ।।

राष्ट्रीय भावना की दृष्टि से यह एक सुन्दर गीत है। प्रातः काल का वर्णन भी इसमें किया गया है। पर प्रभाती की मूल प्रेरणा माता की बच्चे के प्रति सद्भावना होती है। उसका इस गीत में अभाव है।

श्री शम्भू दयाल सक्सेना का एक प्रभात गीत है –

लाल, बीत गई रात उठो हो गया प्रभात
फूल गये फूल पात, कुंज किरण सारे।
कल कल छल छल प्रपात गुंजत मिल मधुपवात
हरी दूब ओस स्नात, मौन कौन धारे।
मैया ले दूध भात बैठी तन मन सिहात
जागो जागो सुगात कान में पुकारे।

इस गीत में यदि अन्तिम दो पंक्तियाँ न होती तो यह प्रभात का वर्णन करने वाला एक साधारण गीत होता। अन्तिम पंक्तियों में माता के दूध भात ले कर बैठे होने की जो बात कही गई है उससे मातृ हृदय की ममता फूटी पड़ती है। सक्सेना जी का एक दूसरा प्रभात गीत है –

पलकें खोलो, रैन सिरानी।
बाबा चले खेत को हल ले सखियाँ भरतीं पानी।।
बहुयें घर घर छाछ बिलोतीं गातीं गीत मथानी।
चरखे के संग गुन गुन करती सूत कातती नानी।।
मंगल गाती चील चिरैया आस्मान फहरानी।
रोम रोम में रमी लाडली जीवन ज्योत सुहानी।।
आलस छोड़ो, उठो न सुखदे! मैं तब मोल बिकानी।
पलकें खोलो हे कल्याणी।।

इस गीत में सीधे ढंग से माता की मनोभावना की अभिव्यक्ति नहीं है किन्तु जिन बातों को लेकर प्रभात का वर्णन किया गया है वह सब ऐसी बातें हैं जिनसे माँ अपने बच्चों के मन में परिवार के प्रति प्रेम और सद्भावना का भाव जगाने में सफल हो जाती है।

हिन्दी के अन्य कवियों के लिखे अच्छे प्रभात गीत हमें नहीं मिलते। यों प्रातः काल की सुन्दर छवि का वर्णन करते हुए बच्चों को जगने का आदेश बहुत

गीतों में किया गया। पर उनमें माता के हृदय की बच्चों के प्रति होने वाली कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति के अभाव के कारण हम उन्हें बाल गीत कह सकते हैं प्रभाती या प्रातः गीत नहीं। लोरी या प्रभाती जैसी गीतात्मकता भी उन बाल गीतों में नहीं है। उदाहरण के लिये एक बालगीत है –

सूरज निकला मिटा अन्धेरा।
रात गई अब हुआ सबेरा।।
लड़को तुम भी आँखें खोलो।
छोड़ बिस्तरा टट्टी हो लो।।
अपने हाथ पांव मुंह धोलो।
कपड़े पहिन बाग में डोलो।।
पूरब में लाली सी देखो।
सूरज की थाली सी देखो।।
किरनें कैसी चमक रही हैं।
सोने जैसी दमक रही हैं।
चिड़ियां सब चहचहा रही हैं।
मीठी बोली सुना रही हैं।। इत्यादि

इस बालगीत में सबेरे के समय का सुन्दर वर्णन है और बच्चों को बिस्तरा छोड़ने का आदेश भी। माता की ममता की अभिव्यक्ति का इसमें सर्वथा अभाव है। इसमें बच्चों को सिखाने के उद्देश्य से कुछ बातें कही गई हैं जो लोरियाँ या प्रभात गीतों में जरा भी अपेक्षित नहीं होतीं। लोरियों और प्रभात गीतों की-सी गीतात्मकता भी हमें इसमें नहीं मिलती। इसलिये इसे साधारण बाल गीत के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

गीतात्मकता प्रभाती का एक विशेष गुण है और इस दृष्टि से माता के वात्सल्यपूर्ण हृदय की अभिव्यंजना न होते हुए भी कभी-कभी प्रकृति का वर्णन कर देने मात्र से गीत में प्रभाती-जैसा आभास होने लगता है। एक ऐसी ही प्रभाती लाला जगदल पुरी की लिखी हुई है –

जागो जागो जागो निकली पहली किरन सबेरे की।
हुआ सबेरा जागा कौआ।
मिटा अन्धेरा भागा हौआ।।
सूरज की भट्ठी का सोना असली किरन सबेरे की।
जागो जागो जागो निकली पहली किरण सबेरे की।।

जिसको पहली किरन छू गई।
उस पर मानों सुधा चू गई।।
नई उमंगों वाली मस्त सुनहली किरन सबेरे की।
जागो जागो जागो निकली पहली किरण सबेरे की।।
फूल फूल पर किरन चमकती।
धूल धूल पर किरन चमकती।।
पानी की लहरों में दौड़ी पगली किरन सबेरे की।
जागो जागो जागो निकली पहली किरण सबेरे की।।

इस गीत में आदि से अन्त तक प्रकृति का चित्रण है। और यह चित्रण इतना सजीव है कि प्रातः काल का पूरा दृश्य आँखों के सामने आ प्रस्तुत होता है। माँ की अपनी कही हुई कोई बात इसमें "जागो जागो" कहने के अतिरिक्त नहीं है। गीतात्मकता तो कूट-कूट कर भरी है। लय और ध्वनि से ही ऐसा प्रतीत होता है कि किरन नाच-नाच कर यह गीत गा रही है। इस गीत में कोई ऐसी बात भी नहीं कही गई जिससे यह साधारण बाल गीत या राष्ट्रीय बाल गीत की श्रेणी में रखा जा सके। अतएव हम इस प्रकार की रचना को प्रभाती गीतों की श्रेणी में ही ले सकते हैं।

सेवक जी ने भी अपने मुन्ना के गीतों में कई प्रभातियाँ लिखी हैं उनमें से एक यहाँ प्रस्तुत की जाती है -

मुन्ना की आंख खुली प्रात हुआ मेरा।
इसके सोने तक तो रात रही मेरी।
घिरी रही आँखों में अमा की अंधेरी।।
खुलते ही आंख लगा झाँकने सवेरा।
मुन्ना की आंख खुली प्रात हुआ मेरा।।
चिड़ियों ने राग मधुर गाया मन भाया।
बरगद के पीछे से सूर्य निकल आया।।
किरनों ने आ मेरा घर आंगन घेरा।
मुन्ना की आंख खुली प्रात हुआ मेरा।।
मैं अपने मुन्ना को गोद लिये घूमूं।
बार बार हाथ माथ गाल अधर चूमूं।।
दृष्टि रहे जब तक मैं देखूं मुख तेरा।
मुन्ना की आंख खुली प्रात हुआ मेरा।।

लोरियों और प्रभात गीतों का महत्व हमारे आज के व्यस्त सामाजिक जीवन से धीरे-धीरे उठता जा रहा है। आज इस मशीन युग में माताओं को इतना अवकाश नहीं कि वह मानवीय भावनाओं से प्रेरित होकर उनका उपयोग बच्चों को सुलाने और जगाने के लिये कर सकें। फिर भी जब तक प्रत्येक बालक की जननी उसकी माँ है और माँ का सहज स्वाभाविक स्नेह अपनी सन्तान के प्रति है, बाल गीत साहित्य से लोरियों और प्रभातियों का सर्वथा लोप नहीं हो सकता।

कुछ अच्छी प्रभातियां हिंदी बाल कविता के शुरूआती दौर में भी लिखी गई हैं, जिन पर विचार करना जरूरी है। श्रीधर पाठक की 'उठो भई, उठो' में एक समूचा बाल जीवन अपनी नाना बंकिम-सरल छवियों सहित समूर्त हो उठा है। उस समय बच्चों का रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूषा, आचार-विचार कैसे थे, उन्हें कवि ने एक स्नेहमयी माता की निगाह से ही देखा है और इसीलिए यह प्रभाती एक सुशील बालक के स्वरूप को उद्घाटित करने में भी सफल रही है -

हुआ सवेरा जागो भैया
खड़ी पुकारे प्यारी मैया।
हुआ उजाला छिप गए तारे
उठो मेरे नयनों के तारे।
चिड़िया फुर-फुर फिरती डोलें
चोंच खोलकर चों-चों बोलें।
मीठे बोल सुनावे मैना
छोड़ों नींद खोल दो नैना।

इसके बाद यह कविता बच्चे से उठकर झटपट मुंह धुलवा लेने, आंखों में काजल डलवा लेने, कंघी से सिर के बाल कढ़वा लेने और देह पर उजली धोती बंधवा लेने की बात भी कहती है। सब बच्चों से एक साथ बैठकर कुछ खाने और दूध पीने की बात कहना संयुक्त परिवार की स्थिति भी जतलाता है। वर्ष 1915 की 'सरस्वती' में प्रकाशित अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' की 'जागो प्यारे' एक ऐसी प्रभाती है, जिसे अपनी पाठ्य पुस्तक में पढ़कर कई पीढ़ियों ने सस्वर गाया होगा और आज भी न जाने कितने कंठों में यह प्रभाती समाई होगी -

उठो लाल अब आंखें खोलो,
पानी लाई हूं, मुंह धो लो।
बीती रात, कमल-दल फूले,
उनके ऊपर भौंरे झूले।

चिड़ियां चहक उठीं पेड़ों पर
बहने लगी हवा अति सुंदर।
नभ में न्यारी लाली छाई
धरती ने प्यारी छवि पाई।
भोर हुआ, सूरज उग आया
जल में पड़ी सुनहरी छाया।
ऐसा सुंदर समय न खोओ
मेरे प्यारे अब मत सोओ।

इस प्रभाती में भी मातृ स्नेह की व्यंजना 'पानी लाई हूं, मुंह धो लो' में हुई है। चूंकि बच्चा नींद और आलस्य के वशीभूत होकर उठने में विलंब करता है, इसलिए स्वाभाविक रूप से मां उसके कानों में प्राकृतिक सौंदर्य के शब्द उड़ेलकर उसे जल्दी जगाना चाहती है। मनोरंजन एम.ए. की 'जागो भैया' भी इसी भाव-भूमि की रचना है, जो 'शोर मचाती है गौरेया, हुआ सवेरा जागो भैया' कहकर बच्चे की निंदियाई आंखों के सामने प्रभात का मनोरम दृश्य प्रस्तुत करके उसे शय्या छोड़ने के लिए प्रेरित करती है। एक सुंदर प्रभाती सरोजिनी कुलश्रेष्ठ ने 'प्रभाती' शीर्षक से ही लिखी है, जो इस प्रकार है -

फूलों ने पांखें खोली हैं
तुम भी अपनी आंखें खो लो,
ये धुल गईं ओस के जल से
तुम भी अपनी आंखें धो लो।
फूल खिले कितने सुंदर हैं
तुम भी अब सुंदर बन जाओ
रंग-बिरंगे वस्त्र पहनकर
तुम भी एक फूल बन जाओ।
खिलो इन्हीं से, खेलो इनसे
ऐसे ही तुम हंसो-हंसाओ
अपनी गंध उड़ाकर तुम भी
फूलों जैसा गौरव पाओ।

यहाँ मातृहृदय की अभिलाषा का सुंदर चित्र है जो अपने बच्चे के सुन्दर और यशस्वी जीवन की मंगल कामना से आपूरित है।

उषा यादव की 'भोर की बेला' एक ऐसी प्रभाती है, जिसमें प्रातः कालीन

परिवेश के साथ घर-घर में मचती बच्चों की धमा-चौकड़ी की सूचना देते हुए एक मां अपने सोये हुए बच्चे को जगा रही है -

अपने रथ को लगा हांकने
यह सूरज अलबेला है,
उठो, भोर की बेला है।
बागों में कलियां जागीं
निंदियाई गलियां जागीं
खड़-खड़ करता हुआ घूमने
लगा दूध का ठेला है,
उठो, भोर की बेला है।
नभ में फैल गई लाली
हवा चल रही मतवाली
नियत समय स्कूल न पहुंचे
होगा बड़ा झमेला है,
उठो, भोर की बेला है।
खुलीं फूल की पंखुड़ियां
जाग गये गुड्डे गुड़ियां
धमा चौकड़ी करते सारे
घर-घर उतरा मेला है,
उठो, भोर की बेला है।

आजकल ढाई-तीन साल का बच्चा तक प्ले ग्रुप स्कूल भेज दिया जाता है। अब पहले की तरह पांच साल की उम्र में बच्चे का विद्यारम्भ संस्कार नहीं होता है। अतः एक नन्हे बाल-मन पर कितना बोझ है, उसे भी यह प्रभाती जतलाती है।

7 : हिन्दी बालगीतों का वर्गीकरण

बाल गीतों का वर्गीकरण आवश्यकता और रुचि के अनुसार अनेक आधारों पर किया जा सकता है और प्रत्येक मनुष्य को अलग-अलग परिस्थिति और रुचि होने के कारण बाल गीतों की श्रेष्ठता के बारे में भी लोगों के अलग-अलग मत हो सकते हैं किन्तु यदि हम बच्चों की दृष्टि से बाल गीतों को देखें तो बच्चों की मानसिक स्थिति, समझ, कल्पना-शक्ति इत्यादि को ध्यान में रखते हुए बाल गीतों की श्रेष्ठता के विषय में साधारणतः जिन परिणामों पर अलग-अलग पहुंचेंगे उनमें अधिक भिन्नता नहीं हो सकती और इसी दृष्टि से यदि हम हिन्दी में अब तक लिखे गये बाल गीतों का एक सुन्दर संचयन करना चाहें तो हमारे वर्गीकरण के आधार निम्नलिखित हो सकते हैं –

१. **आयु** -- तीन वर्ष की आयु से लेकर 12 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए लिखे गये गीत बाल गीतों की श्रेणी में आते हैं। इससे अधिक आयु के बच्चों को पढ़ने के लिए सरल कवितायें भी दी जा सकती हैं। बच्चों के मानसिक विकास, कल्पना और बुद्धि को ध्यान में रखते हुये तीन से 12 वर्ष तक की आयु को 4 वर्गों में विभाजित किया जा सकता है –

1. तीन से पांच वर्ष तक की आयु के बच्चे,
2. पांच से सात वर्ष तक की आयु के बच्चे,
3. सात से नौ वर्ष तक की आयु के बच्चे,
4. नौ से बारह वर्ष तक की आयु के बच्चे।

इन चारों वर्गों के बच्चों की कल्पना और बुद्धि के विकास के स्तर भिन्न-भिन्न होते हैं। तीन से पांच वर्ष तक के बच्चों की मनोभावनायें अस्पष्ट और दृष्टि अपने आस-पास के व्यक्तियों और वस्तुओं तक ही सीमित होती है। पांच से सात वर्ष के बच्चे में कौतूहल और जिज्ञासा की भावना अधिक होती है। सात से नौ वर्ष तक का बच्चा वस्तुस्थितियों में पारस्परिक सम्बन्ध को समझने की चेष्टा करता है और ९ से 12 वर्ष तक का बच्चा अपने को समाज का एक अंग समझने लगता है और ऐसा समझने में उसे सुख अनुभव होता है।

हिन्दी में आयु के इस वर्गीकरण को दृष्टि में रखते हुए बहुत कम कवियों ने लिखने का प्रयत्न किया है। अच्छे बाल गीत लिखने के लिये यह आवश्यक है कि लिखने वाला यह समझ सके कि किस आयु के बच्चों के लिये वह लिख रहा है। इस सम्बन्ध में कुछ लोगों का यह भी कहना है कि आयु वर्गों की सीमा में

बंध कर बाल साहित्य नहीं लिखा जा सकता क्योंकि बहुतसे बच्चों की बौद्धिक आयु उनकी वास्तविक आयु से कम या अधिक हो सकती है।

२. रस -- प्रत्येक बालगीत का उद्देश्य पाठक या श्रोता के मन में रस की निष्पत्ति करना होता है। बाल पाठक या श्रोता के मन में इस रस निष्पत्ति की प्रक्रिया भले ही वह होती हो जो काव्यशास्त्रियों ने काव्य सिद्धान्त या मनोवैज्ञानिकों ने अपने ग्रन्थों में वर्णित की है। किन्तु बच्चों के कोमल और निश्छल हृदयों पर किसी बात का किन परिस्थितियों में किन कारणों से क्या प्रभाव पड़ता है यह एक अलग अध्ययन और व्याख्या का विषय है। जो आलंबन, उद्दीपन, संचारी या व्यभिचारी भाव बड़ों के हृदय में किसी विशेष रस की अनुभूति करा देते हैं यह आवश्यक नहीं कि वह सब भाव बच्चों के हृदय में भी रसानुभूति के लिये आवश्यक हों। बच्चे अपने मन के बादशाह होते हैं और क्या बात उन्हें कब हंसा या रुला सकती है यह अधिकतर उनके मन की अपनी स्थिति पर अधिक निर्भर होती है।

काव्यशास्त्र में वर्णित अनेक रस बालगीतों के लिये अनावश्यक और बच्चों की दृष्टि से अर्थहीन होते हैं। बच्चों को प्रिय लगने वाले प्रमुख रस पांच ही हैं- (1) हास्य, (2) वीर, (3) शान्त, (4) अद्‌भुत, (5) वात्सल्य। श्रृंगार जो रसराज कहलाता है उसके लिये बालगीत साहित्य में कोई विशेष महत्व का स्थान नहीं हो सकता और करुण जिसे एक ही मूल रस बहुत से काव्यमर्मज्ञ मानते हैं उसका भी भारतीय बाल-साहित्य में कोई स्थान नहीं है। विदेशी बालसाहित्य में हमें कारुणिक प्रसंगों पर रचित बालगीत प्रायः मिल जाते हैं पर भारतीय कला का दृष्टिकोण सदा आशावादी होने के कारण हिन्दी साहित्य में कारुणिक प्रसंगों को लेकर बाल गीत लिखे ही नहीं गये हैं।

३. विषय -- हिन्दी बालगीतों का एक वर्गीकरण गीतों के विषयों के आधार पर भी किया जा सकता है। बड़ों के लिये लिखी जाने वाली कविताओं में विषयों की कोई सीमा नहीं। किसी भी विषय पर कुछ भी लिखा जा सकता है। बच्चों के लिये लिखे जाने वाले गीतों के विषय में यह तो नहीं कहा जा सकता कि उनके विषयों की कुछ निश्चित सीमायें हैं, उनके बाहर जा कर अन्य विषयों पर बाल गीत लिखे ही नहीं जा सकते। किन्तु बच्चों के लिये बाल गीत लिखने पर भाव और भाषा के चुनाव की स्वयं अपने इतनी अधिक सीमायें हैं कि यह तो कहा ही जा सकता है कि बच्चों के लिये अपरिचित और अनभिज्ञ विषयों पर बाल गीत नहीं लिखे जा सकते। बच्चे अपने सीमित अनुभव ज्ञान के कारण उन्हीं विषयों पर लिखे गये

हों। विषयों की दृष्टि से बाल गीतों के वर्गीकरण अनेक प्रकार से किये जा सकते हैं। मोटे तौर से निम्नलिखित वर्गीकरण में हिन्दी में अब तक लिखे गये सब बाल गीत आ सकते हैं -

(क) **बच्चों के प्रतिदिन के सम्बन्ध में आने वाली वस्तुओं से सम्बन्धित विषयों पर लिखे गये बालगीत** : इस वर्ग में घर, पैसा, पुस्तक, खाने-पीने की अनेक वस्तुयें, चाचा, ताऊ, भाई इत्यादि आते हैं जिनसे उनका रागात्मक सम्बन्ध अपनेआप स्थापित हो जाता है।

इन विषयों को भी वह वहीं तक समझ सकते हैं जहाँ तक उनके अपने अनुभव-ज्ञान की सीमा है।

(ख) **बच्चों के परिचय सम्बन्ध में आने वाले जीव-जन्तु, पशु-पक्षियों से सम्बन्धित विषयों पर लिखे गये बालगीत** : इस वर्ग में घरों में पले तोता, कुत्ता, बिल्ली, गाय, बकरी तथा मच्छर, मक्खी, चींटी इत्यादि से लेकर शेर, भेड़िया, लोमड़ी, गीदड़, अजगर इत्यादि तक वह जीव-जन्तु भी आ जाते हैं, जिन्हें बच्चों ने देखा भले ही न हो पर चित्रों में देखने और उसी तरह के दूसरे जीव-जन्तु देखे हुए होने के कारण वे सहज ही उनकी कल्पना कर सकते हैं। जानवर गतिवान होने के कारण बच्चों के आकर्षण के प्रमुख विषय होते हैं। उनका चलना, फिरना, हिलना, डुलना या रेंगना देख कर उन्हें जितना कौतूहल होता है बड़ों को उतना नहीं होता। जानवरों के विषय में नित नई कल्पनायें करने में उन्हें बहुत आनन्द आता है। वे उनके विषय में अधिक से अधिक जानना चाहते हैं। उनसे अपने मन के प्रेम, करुणा, क्रोध इत्यादि के सम्बन्ध स्थापित करते हैं और उनके वीरता, साहस, बुद्धिमत्ता के गुण अपने में धारण करने का प्रयत्न करते हैं। उनकी बोलियों की नकल करते हैं। बच्चों की कल्पना को विकसित करने में जानवर जितने सहायक होते हैं उतने कोई भी निर्जीव पदार्थ नहीं होते। हिन्दी में जीव-जन्तु और पशु पक्षियों से सम्बन्धित विषयों पर लिखे थोड़े से ही बाल गीत हैं और वह थोड़े से ही जानवर हैं जिन पर वह लिखे गये। मछली, तितली, बन्दर, बिल्ली, चूहा, घोड़ा आदि विषयों पर ही अधिकतर बाल गीत लिखे मिलते हैं। इस क्षेत्र में लिखने वालों के लिये बहुत बड़ा खुला मैदान है पर लिखने से पहले विभिन्न जीव-जन्तुओं के विषय में पर्याप्त जानकारी प्राप्त करने की आवश्यकता है और इससे भी अधिक उनके यथार्थ या काल्पनिक सम्पर्क में आने से उत्पन्न होने वाली बच्चों के मन की स्थिति के अध्ययन की आवश्यकता है। भारतवर्ष की लोकप्रिय पुरानी पुस्तक पंचतन्त्र जानवरों के आधार पर लिखी गई कहानियों की ही पुस्तक है। वह इस क्षेत्र में लिखने वालों

को पर्याप्त प्रेरणा दे सकती है। पर जीव-जगत के विषय में वैज्ञानिक ज्ञान अब पहले से बहुत अधिक बढ़ गया है इसलिये उसके अध्ययन की आवश्यकता है।

(ग) पेड़-पौधों और फल-फूलों पर लिखे गये बालगीत : भारतवर्ष में इतने अधिक प्रकार के पेड़-पौधे फल-फूल होते हैं कि बच्चे उन सबसे परिचित नहीं हो सकते, फिर भी सुन्दर खिले हुए फूलों और देखने में अच्छे लगने वाले फलों को देख कर उन्हें प्रसन्नता होती ही है। उस प्रसन्नता को व्यक्त करने के लिये अच्छे बाल-गीत लिखे जा सकते हैं पर हिन्दी में ऐसे गीतों की संख्या बहुत कम है।

(घ) आकाश, तारे, चाँद, सूर्य, हवा, पृथ्वी, जल, नदी, सागर, मैदान, पहाड़ से सम्बन्धित विषयों पर लिखे गये बालगीत : इन सब वस्तुओं से बच्चों का कोई रागात्मक सम्बन्ध नहीं होता। पर उन्हें देख कर कौतूहल और जिज्ञासा के भाव उनके मन में अवश्य उत्पन्न होते हैं। वह जानना चाहते हैं कि यह सब है क्या? जिन बच्चों ने पहाड़ और सागर नहीं देखे होते वह उनके विषय में तरह-तरह की कल्पनायें अपने मन में करते हैं। हिन्दी में इन विषयों में सबसे अधिक बाल गीत चांद और तारों पर लिखे हुए मिलते हैं। चाँद पर जितने अधिक और जितने सुन्दर बाल गीत हिन्दी में मिलते हैं उतने योरूप या अमरीका की किसी भी भाषा में देखने को नहीं मिलेंगे पर चन्द्रमा पर पहुंचने के वैज्ञानिक प्रयासों ने अब उन बहुत सी कल्पनाओं को निराधार सिद्ध कर दिया है जो बच्चे अब तक करते आये थे। उन्हें स्वयं अब वह कल्पनायें पुरानी और बचकानी लगने लगी हैं इसलिये इस विषय पर लिखने वालों को अब ऐसी कल्पनाओं के आधार पर लिखना चाहिये जैसी बच्चे करने लगे हैं या आगे करने लगेंगे। इस वर्ग के अन्य विषयों पर भी और अधिक लिखने की आवश्यकता है।

(ङ) खेल-खिलौनों और खेलों से सम्बन्धित बालगीत : बचपन में बच्चों को खेल-खिलौने बहुधा अपने सगे सम्बन्धियों और खाने-पीने की चीजों से भी अधिक प्रिय लगने वाले होते हैं। वह खेल-खेल में उनसे बातें करते हैं जैसे बड़े दूसरे बड़ों से बातें किया करते हैं। सपनों में खिलौने उन्हें अक्सर दिखाई देते हैं। भारत वर्ष में लकड़ी, मिट्टी, कागज, कपड़ा और प्लास्टिक के तरह-तरह के खिलौने बनते हैं। पहले इंग्लैंड और जापान से तरह-तरह के रबड़ और टीन के बने खिलौने हमारे देश में आया करते थे पर अब अपने देश में ही इतनी तरह से खिलौने इतनी बहुतायत से बनने लगे हैं कि विदेशी खिलौनों की आवश्यकता ही नहीं। फिरभी खिलौनों से बच्चे विभिन्न देशों की वेश-भूषा तथा सूरत-शक्ल का आभास पाते हैं। अक्सर रिवाज और सभ्यता की झलक भी खिलौनों में आ जाती है इसलिये जैसे

बड़ों के लिये पुस्तकों का आदान-प्रदान विभिन्न देशों से खुला रहता है वैसे ही खिलौनों का आदान-प्रदान भी अधिक रहे तो अच्छा है। जो खिलौने बच्चों को इतने अधिक प्रिय होते हैं उन पर लिखे गये बाल गीत भी बच्चों को उतने ही प्रिय क्यों नहीं होंगे?

इसी प्रकार बच्चे जो तरह-तरह के खेल रुचि और लगन के साथ खेला करते हैं उनसे सम्बन्धित बाल गीत भी बच्चों को बहुत प्रिय होते हैं। बच्चों के विभिन्न खेलों के विषयों पर हिन्दी में बहुत से बाल गीत लिखे गये हैं।

(च) ऋतुओं और प्राकृतिक दृश्यों से सम्बन्धित बालगीत : इस वर्ग के गीतों में बच्चों को कोई विशेष आनन्द नहीं आता। यह अधिकतर शान्त रस प्रधान होते हैं। पर बड़े यह समझते हैं कि बच्चों को ऋतुओं और प्राकृतिक दृश्यों के सौन्दर्य का बोध कराने के लिये इस प्रकार के बाल गीत भी लिख कर देने की आवश्यकता है। बच्चों के पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादक तो यह समझते हैं कि किसी विशेष ऋतु के आगमन पर किसी सुन्दर से सुन्दर बाल गीत को हटा कर उस ऋतु से सम्बन्धित एक निकृष्ट बाल गीत को भी प्रकाशित कर देना उनका प्रथम कर्तव्य है। बच्चे ऋतुओं और प्राकृतिक दृश्यों को भी स्वयं अपने तन-मन पर पड़ने वाले प्रभाव की दृष्टि से देखते हैं इसलिये बच्चों के लिए इन विदेशी (बाहरी) विषयों पर यदि बाल गीत लिखे भी जायें तो उनमें प्रधानता उनकी अपनी मनोभावनाओं की ही रहना चाहिये तभी वह उनके लिये रोचक बन सकते हैं।

(छ) अभिनेय या प्रयाण बालगीत : बच्चे अपने स्वभाव से अत्यन्त चंचल होते हैं। वह शान्त मौन मुद्रा में एक स्थान पर अधिक समय तक बैठे नहीं रह सकते। उन्हें हर समय उछल-कूद, तोड़-फोड़, दौड़-भाग में अधिक आनन्द आता है इसलिये वह बाल गीत उन्हें बहुत प्रिय लगते हैं जिन्हें बच्चे अभिनय के साथ-साथ खेल करते हुए गा सकें। शिक्षा की दृष्टि से ऐसे गीत बच्चों के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होते हैं और बच्चे उनके भाव को अधिक रुचि से हृदयंगम कर लेते हैं। अभिनय की प्रवृत्ति भी बच्चों में स्वाभाविक होती है। वह भावनात्मक दृष्टि से बड़ों की अपेक्षा कहीं जल्दी अपने को दूसरे की स्थिति में रख कर वैसा ही अनुभव करने लगते हैं। इसलिये बच्चों की मनोभावनाओं के परिष्कार और उनमें सुरुचि और सद्भावना के विकास के लिए ऐसे गीतों की बड़ी उपयोगिता है। अपनी चुस्त पोशाक और फुर्तीली चाल-ढाल के कारण बच्चे समाज में जिन व्यक्तियों को देखते हैं उनमें से सिपाही या सैनिक उन्हें विशेष रूप में आकर्षित करते हैं। सैनिक शब्द से ही उन्हें एक अपेक्षाकृत अधिक गतिवान व्यक्ति का बोध होता है। जब वह यह

जानते हैं कि सिपाही देश का रक्षक होता है तो उनका यह आकर्षण और भी अधिक बढ़ जाता है और जब वह कहीं सिपाहियों को परेड करते हुए देखते हैं तब तो उनकी इच्छा होती है कि वह भी उनकी तरह ही परेड में चलें। दूसरी ओर वह बड़े जिनके ऊपर बच्चों के विकास का भार होता है वह भी चाहते हैं कि देश के बच्चे बलिष्ठ और फुर्तीले तथा अपने देश की रक्षा करने वाले सिपाही या सैनिक बनें। इस दृष्टि से प्रयाण गीतों का बच्चों के लिये बहुत महत्व है। वे बच्चों को न केवल संयत रूप से गतिवान बनाने में सहायक होते हैं बल्कि जीवन में महत्वपूर्ण कार्य करने की प्रेरणा भी देते हैं। हिन्दी में अभिनेय और प्रयाण गीतों का बहुत अभाव है। जो प्रयाण गीत लिखे भी गये हैं वह भाव और भाषा दोनों दृष्टियों से बच्चों की अपेक्षा बड़ों के लिये अधिक उपयुक्त मालूम होते हैं।

(ज) सामूहिक गीत या सहगान : सामूहिक गीत या सहगान उन गीतों को कहते हैं जिन्हें अनेक बच्चे मिल कर एक साथ गाते हैं। जैसे प्रयाण गीत गाकर बच्चे अनेक बच्चों के साथ मिल कर चलने का आनन्द पा लेते हैं वैसे ही सामूहिक गीत या सहगान गा कर उन्हें सबके साथ मिलकर अपने मनोभावों को व्यक्त करने के सुख का अनुभव होता है। मनुष्य के मनोभावों का साझीदार कोई व्यक्ति बने इससे अधिक सुख की बात उसके लिए कोई दूसरी नहीं होती। अनेक बच्चे जब एक साथ मिल कर एक गीत का पाठ करते हैं तो उनके हृदय में एक ऐसा आत्म विश्वास पैदा होता है जो उन्हें भविष्य के सामाजिक जीवन में बहुत बल देता है। एकता और सहकारिता की भावनाओं का विकास भी उनके मन में होता है और सामूहिक गीतों से जो एक विशेष लाभ होता है वह यह कि बच्चे स्वरों का उतार-चढ़ाव और संतुलन आसानी से सीख जाते हैं। हिन्दी में सामूहिक बाल गीतों का भी बहुत अभाव है और इसका मुख्य कारण यह है कि हमारे देश में संगीत एक व्यक्तिगत साधना की वस्तु माना जाता है। हमारे समाज में विशेष अवसरों के अतिरिक्त पश्चात्य समाजों की तरह मिल कर कोरस या बैलड संगीत की परम्परा नहीं है। स्कूलों में भी बच्चों को सामूहिक गान के लिये कम ही प्रेरित किया जाता है। प्रार्थना या विशेष उत्सवों पर गाये जाने वाले वन्दे मातरम् तथा जन-गण मन गाने के अतिरिक्त स्कूल के बच्चों को प्रायः सामूहिक गान के अवसर बहुत कम मिल पाते हैं। वैसे हमारे देश के जन-जीवन में आल्हा, कजली, मल्लाहों के गीत, जन गीत इत्यादि सामूहिक रूपसे गाने की परम्परा प्राचीन काल से चली आई है पर हमारे साहित्य और स्कूली शिक्षा के क्षेत्र में इस परम्परा का सर्वाधिक अभाव है। सामूहिक गानों के लिये उपयक्त कोई विशेष छन्द नहीं होते। विषय और भाव के अनुरूप बहुत

से गीत ऐसे हो सकते हैं जिन्हें बच्चे सामूहिक रूप से गा सकते हैं किन्तु जब तक बच्चों को सामूहिक गान गाने की शिक्षा और प्रेरणा नहीं दी जायेगी तब तक अच्छे सामूहिक बाल गीत लिखने को कवि प्रेरित भी कैसे हो सकते हैं?

(झ) राष्ट्रीय बालगीत : राष्ट्रीय-गीत बच्चों में देश-प्रेम, एकता और स्वाभिमान की भावना भरने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। यद्यपि यह निर्विवाद सत्य है कि राष्ट्रीयता की भावना बच्चों की स्वानुभूति से निःसृत उनकी स्वाभाविक भावना नहीं होती है। अपने समाज की देखा-देखी वह अन्य अनेक भावनाओं की तरह इस भावना को भी अपना भले ही लें पर होती यह उनके बड़ों की दी हुई भावना ही है। हिन्दी के राष्ट्रीय बाल गीतों में अधिकांश वह हैं जो बड़ों के गाने के लिए लिखे गये थे पर अपेक्षाकृत सरल भाषा में लिखे गये होने के कारण बच्चों ने उन्हें अपना लिया है। हिन्दी के प्रायः सभी कवियों ने राष्ट्रीयता की भावना से प्रेरित होकर गीत लिखे हैं पर बच्चों के मानसिक स्तर पर उतर कर उनकी मनोभावना के अनुरूप विशेष रूप से बच्चों के लिये कम ही बाल गीत लिखे गये हैं। राष्ट्रीय बाल गीत लिखने के लिए यह आवश्यक नहीं कि भारत वर्ष, भारत माता या भारत देश पर ही सब गीत लिखे जायें। भारत वर्ष के किसी भू-भाग का कोई विशेष पहाड़, नदी, तालाब या इमारत इत्यादि को लेकर भी सुन्दर राष्ट्रीय भावना को विकसित करने वाले बाल गीत लिखे जा सकते हैं।

४. शिक्षा की दृष्टि से वर्गीकरण : बालगीतों के वर्गीकरण का चौथा आधार शिक्षा की दृष्टि से माना जा सकता है। बाल गीतों की रचना का प्रमुख उद्देश्य बच्चों का मनोरंजन करना होता है। इस सत्य की अवलेहना नहीं की जा सकती किन्तु शिक्षाशास्त्री उनकी रचना का एक दूसरा उद्देश्य भी मानते हैं और वह है बच्चों की शिक्षा। शिक्षा के अन्तर्गत बच्चों के समस्त मानसिक और बौद्धिक तथा शारीरिक विकास की शिक्षा आ जाती है। उन लोरियों को भी हम इसी दृष्टि से किए गए वर्गीकरण के अन्तर्गत ले सकते हैं क्योंकि वह उनके मन को कोमल कल्पनाओं से भर कर उनकी मनोवृत्तियों को उभारने वाली होती है। बच्चे उन्हें सुन कर सोने या जागने के लिए प्रेरित होते हैं। यह हमारे देश का दुर्भाग्य ही है कि हमारे घरों में लोरियों का अधिक उपयोग नहीं किया जाता। कोमल शिशुओं की भावनाओं और कल्पनाओं को स्थिर करने के लिए लोरियों का सुन्दर उपयोग किया जा सकता है। हिन्दी के अनेक बाल गीतकारों ने लोरियाँ लिखने का प्रयास किया है पर अच्छी लोरियाँ तभी लिखी जा सकती हैं जब लिखने वाले के पास एक माता का सच्चा हृदय हो।

शिक्षा की दृष्टि से बालगीतों का वर्गीकरण हम निम्नलिखित पांच रूपों में कर सकते हैं –

(क) कल्पना को बिकसित करने वाले बालगीत : बालकों के मानसिक विकास की शिक्षा के क्षेत्र में कल्पना के विकास का एक महत्वपूर्ण स्थान है जो शिक्षा बच्चों को 2 + 2 = 4 बता कर समाप्त हो जाती है उसे प्राप्त करके बच्चा एक स्वस्थ मन वाला मनुष्य कभी नहीं बन सकता। बाल गीत यदि क्लिष्ट कल्पना और बच्चों की पहुंच से दूर की कल्पना से मुक्त हों तो वह बच्चों की कल्पनाओं के विकास में बहुत सहायता करते हैं। बच्चों की कल्पनाओं के रूप भी वैज्ञानिक उन्नतियों और सामाजिक परिवर्तनों के कारण परिवर्तित होते रहते हैं। हिन्दी में कल्पना प्रधान बाल गीत लिखे गए हैं पर नवीन कल्पनाओं की अभिव्यक्ति उनमें कम ही देखने को मिलती है। प्रायः एक विषय पर कई कवियों द्वारा लिखे गये सब बाल गीतों में एक ही सी कल्पना अभिव्यक्त मिलती है। बच्चे पुरानी पिटी-पिटाई कल्पनाओं को ही बार-बार दुहराना नहीं चाहते। उनमें ताजगी भरने के लिये सदा नई-नई कल्पनाओं की आवश्यकता होती है। यदि उन्हें पुरानी परम्परागत कल्पनायें ही मिलती रहेंगी तो उनसे उनका कुछ भी मानसिक विकास नहीं हो सकता। कल्पना करने में बच्चे बड़ों की अपेक्षा कहीं अधिक तेज होते हैं। वह अपने भाव और वस्तु-जगत के अज्ञान की पूर्ति कल्पना से कर लिया करते हैं। दूसरे बड़ों की तरह यथार्थ से टकराते-टकराते उनकी कल्पनायें कुण्ठित नहीं हुई होती। इसलिये बच्चों के लिये नई कल्पनाओं से ओत-प्रोत नये-नये बाल गीत नित्यप्रति मिलना चाहिए। बच्चों को जितनी नई कल्पनायें चाहिए उनको देखते हुए हिन्दी में अच्छे बाल गीत बहुत कम हैं।

(ख) मनोभावनाओं को परिष्कृत करने वाले बालगीत : गीतों का उद्देश्य ही मनोरंजन के साथ-साथ पाठक को प्रत्यक्ष जगत से उठा भाव जगत में पहुंचा कर उसके मनोभावों को परिष्कृत कर देना है। प्राचीन काव्यशास्त्री अरस्तू ने नाटक की व्याख्या करते हुए वस्तु जगत से भाव जगत में पहुंचकर मनोभावनाओं के परिष्कृत होने का बड़ा विशद वर्णन अपनी पुस्तक में किया है। वह गीत गीत ही नहीं जो पाठक को भाव जगत तक न ले जा सके। शिक्षा का उद्देश्य भी बच्चों की उलझी हुई कुण्ठित मनोभावनाओं को सुलझा कर उन्हें परिष्कृत मनोभावनाओं वाला स्वस्थ मन का मनुष्य बना देना होता है। इसलिये जिन बाल गीतों में बच्चों की मनोभावनाओं को परिष्कृत कर देने की क्षमता है वह शिक्षा के उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति में अत्यन्त उपयोगी हो सकते हैं। वस्तु जगत की प्रत्यक्ष कठोरता के कारण जो मानसिक गुत्थियाँ, दबी हुई इच्छायें, कुण्ठित वासनायें बच्चों के मन में घर कर लेती है, उन्हें दूर

करने में अच्छे बालगीत बहुत सहायक होते हैं। मानसिक गुत्थियों के न रहने और मनोभावनाओं का निरन्तर परिष्कार होते रहने से ही बालक सुदृढ़ इच्छाशक्ति वाला, साहसी, विवेकशील मनुष्य बनता है। भावनाओं का परिष्कार करने की दृष्टि से लिखे गये बाल गीतों में बालकों का मनोरंजन करने की क्षमता होना चाहिये। यह क्षमता उनमें तभी आ सकती हैं जब वह बच्चों के कोमल मन में बैठ कर एवं बच्चा बन कर लिखे जायें। बड़ी आयु में बालक बन जाना एक साधना के बिना नहीं हो सकता। निरन्तर प्रयास करके यह साधना की जाती है। हिन्दी बाल गीतों के लेखकों में इस साधना का बहुत अभाव है। हिन्दी में बाल गीतों के लेखक तीन प्रकार के पाये जाते हैं। एक तो वह धुरन्धर साहित्यिक और कवि हैं जिनकी कलम का लोहा हिन्दी जगत पहले ही स्वीकार कर चुका है। ऐसे साहित्यिक और कवियों ने बच्चों के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वाह करने के विचार से या यों ही शौकिया कभी कुछ बच्चों के लिए भी लिख दिया है। दूसरे, स्कूलों या कालिजों में हिन्दी के वह अध्यापक हैं जो हिन्दी में सुन्दर बालगीतों के अभाव से त्रस्त हैं। कहीं कुछ न मिलने पर वह स्वयं ही बाल गीत लिखने लगे। उनमें प्रतिभा का अभाव है और बाल मनोविज्ञान का भी उन्हें अधकचरा ही ज्ञान है। तीसरे, वह कवि यशः प्रार्थी नवयुवक कलाकार हैं जिनकी बड़ों के लिये लिखी कवितायें समाज में आदर नहीं पातीं, अच्छी पत्र-पत्रिकाओं में छापी नहीं जातीं। इसलिये वह सरल भाषा में कुछ कवितायें बच्चों के लिए लिख देते हैं। बच्चों के पत्र-पत्रिकाओं में वह छप जाती हैं और उन्हें आत्मसन्तोष का सुख मिल जाता है। इसलिये बहुत अधिक लिखा जाने और प्रकाशित होने पर भी बच्चों की मनोभावनाओं का परिष्कार करने वाले अच्छे बाल गीतों का अभाव ज्यों का त्यों बना हुआ है। आवश्यकता इस बात की है कि कुछ प्रतिभावान् कवि केवल बाल साहित्य ही को अपनी प्रतिभा का क्षेत्र बनायें तथा अध्ययन, मनन और साधना के बल पर बच्चों का मनोरंजन करने वाले अच्छे से अच्छे बाल गीत लिख कर दें।

(ग) सद्भावनाओं को विकसित करने वाले बालगीत : बच्चों के प्रति सद्भावना हुए बिना बड़े लोग बच्चों के लिये लिखने की प्रेरणा ही नहीं प्राप्त कर सकते। यह सद्भावना जब अपनी सीमा का अतिक्रमण कर जाती है तो वही बड़े बच्चों का मनोरंजन करने वाले बाल गीत लिखने के बजाय उन्हें शिक्षा या उपदेश देने वाले गीत लिखने लगते हैं पर जिन बाल गीतों में मनोरंजन का अंश जितना ही कम होता है उतना ही कम वह बच्चों की सद्भावनाओं को विकसित करने में समर्थ होते हैं। बाल गीतों में इसलिये एक संतुलन बनाये रखने की आवश्यकता होती है

जिससे बच्चों का मनोरंजन भी हो जाये और उनमें सद्भावनाओं का विकास भी हो सके। यह कार्य एक ऐसे तंग रास्ते से गुजरने के समान है जिस पर दोनों ओर गिरने का भय निरन्तर बना रहता है। जो कवि गीत लिखते समय इस रास्ते से साफ निकल जाते हैं वही स्वस्थ मनोरंजन के साथ-साथ सद्भावनाओं के विकसित करने वाले बाल गीत लिख सकते हैं। सद्भावनाओं का विकास करने की भावना बाल गीतों में इतनी अप्रत्यक्ष और छिपी हुई होना चाहिए कि बालक को यह आभास ही न हो कि उसे उनके द्वारा कुछ सिखाया या रहा है। मनोरंजन के साथ शिक्षा को सब आधुनिक शिक्षा-शास्त्री शिक्षा की सर्वोत्तम प्रणाली मानते हैं और बाल गीतों के द्वारा यह कार्य अत्यन्त सरलता से किया जा सकता है। हिन्दी में ऐसे बाल गीत बहुतायत से लिखे गये हैं जिनमें बच्चे के लिये कोई न कोई हितोपदेश की बात कही गई है जिससे बच्चों में सद्भावनाओं का उदय हो पर उनमें से अधिकांश में लेखक का व्यक्तित्व प्रच्छन्न नहीं रह सका है। कुछ बाल गीतों को पढ़ने से तो ऐसा लगता है कि लेखक ने यदि थोड़ा भी संयत और संतुलित रहने का प्रयत्न किया होता तो वह बहुत सुन्दर बाल गीत बन सकते थे और कुछ में लेखक का शिक्षक या उपदेशक का रूप इतना उग्र हो कर सामने आ गया है कि ऐसे बाल गीतों को बाल साहित्य से निकाल ही देना पड़ेगा। प्रार्थना के बाल गीत भी इसी वर्ग के बाल गीतों में आते हैं पर उनमें से अधिकतर बच्चों में आत्महीनता की जड़ जमाने वाले होते हैं। बच्चों को वही प्रार्थना या विनय के गीत पढ़ने को देना चाहिए जो उनमें आत्म विश्वास उत्पन्न करने वाले हों।

(घ) **ज्ञानवर्द्धन करने वाले बालगीत** : ज्ञानवर्द्धन गीतों का उद्देश्य कभी भी नहीं हो सकता। गीत हृदय की रागात्मक वृत्ति का स्फुरण है। उसका ज्ञान-विज्ञान की किसी बात से कोई सम्बन्ध नहीं। जो गीत पाठक या श्रोता के मन में उसी भावुकता को जन्म दे सके जो उसे लिखते समय लेखक के मन में विद्यमान थी वह उतना ही सफल गीत है। पर अन्य गीतों से बाल गीतों की स्थिति कुछ भिन्न है। जिस अवस्था के बच्चों के लिये बाल गीत लिखे जाते हैं वह उनके ज्ञानार्जन की प्रारम्भिक अवस्था होती है। दूसरे यह भी सत्य है कि अज्ञानी अबोध होने के कारण जिस किसी वस्तु या भाव की जानकारी उनके सामने आती है वह उनका ज्ञानवर्द्धन करने वाली ही होती है। इसलिये बाल गीतों से भी बच्चों का ज्ञानोपार्जन तो होता ही है। प्रश्न यह है कि बाल गीतों द्वारा ज्ञानोपार्जन की सीमा का क्षेत्र क्या है। ज्ञान तो संसार में निस्सीम और अपार है पर बच्चों के लिये उतने ही ज्ञान की आवश्यकता है जितना उनकी समझ के पिटारे में समा सके। बाल मनोवैज्ञानिक

और शिक्षाशास्त्री ही यह समझ सकते हैं कि किस बच्चे को किस-किस बात का ज्ञान कराया जा सकता है जिससे उसे अपच होने का कोई भय न हो। बाल गीतों के द्वारा जब यह ज्ञान प्रदान किया जाये तो सद्‌भावनाओं को विकसित करने वाले गीतों की तरह यह आवश्यक है कि उनमें मनोरंजन का ऐसा पुट हो कि बच्चे को अपनी समझ पर जरा भी जोर न देना पड़े और उसके ज्ञान में वृद्धि हो जाये। उनमें अभिव्यक्ति का ढंग इतना आकर्षक और रोचक होना चाहिए कि बच्चा उनकी ओर आकर्षित हुए बिना रह ही न सके।

(ङ) प्रेरणादायक बाल गीत : शिक्षा की दृष्टि से बाल गीतों को बच्चों को प्रेरणा देने वाला भी होना चाहिए। शिक्षा का उद्देश्य ही बच्चों को प्रेरित करके अच्छा नागरिक, अच्छा मनुष्य बनाना है। इसलिये बाल गीतों का केवल बच्चों में सद्‌भावनायें भरने वाला होना ही पर्याप्त नहीं। उन्हें बच्चों को सत्कर्म करने के लिये प्रेरित करने वाला भी होना चाहिए। ऊपर जिन प्रयाण गीतों, सामूहिक गीतों, राष्ट्रीय गीतों आदि का वर्णन किया जा चुका है वह सब इसी वर्ग के गीतों में आते हैं। अतएव उनके विषय में यहाँ और अधिक कुछ कहना आवश्यक नहीं है पर एक प्रकार के बालगीत और भी हैं जिन पर विचार करना आवश्यक है। उनमें से वह बालगीत हैं जो लोरियों के नाम से प्रसिद्ध हैं। लोरियाँ उन गीतों को कहते हैं जो मातायें अपने भोले अबोध शिशुओं को रात को सोने या सवेरे जगाने के अवसर पर सुनाया करती हैं। यह गीत शिशु स्वयं नहीं गाते पर इन गीतों को गाकर मातायें शिशुओं का मन बहलाना और अपने मन की बात उसी अबोधता से कह देना चाहती हैं जैसे छोटे बच्चे अपने खिलौने से वार्तालाप किया करते हैं। अबोध शिशु इन गीतों के भावार्थ बिल्कुल भी नहीं समझते पर उनकी स्वर लहरी और माताओं के गाते समय की भावभंगिमा उनके मन पर कुछ ऐसे प्रभाव अवश्य छोड़ देती है जिनसे वे उन्हें अधिकाधिक सुनने के लिये उत्सुक और लालायित रहा करते हैं। लोरियों के प्रति यह मोह ही उन्हें कुछ बड़े होकर बालगीतों की ओर आकर्षित करता है और शिशु की सीमा पार कर चुकने के बाद भी लोरियों को पढ़ने-सुनने में उन्हें आनन्द आता है और उनमें कही-सुनी हुई बातों से उन्हें प्रेरणा मिलती है। लोरियों का मुख्य उद्देश्य शिशुओं को सोने और जगाने की प्रेरणा देने वाला होने के कारण ही लोरियों को प्रेरणादायक गीतों के वर्ग में भी लिया जा सकता है। लोरियों का उचित उपयोग विशेष रूप से कन्याओं की शिक्षा के सम्बन्ध में किया जा सकता है। हिन्दी में अनेक लेखक-लेखिकाओं ने बहुत सुन्दर लोरियाँ लिखी हैं पर स्त्री शिक्षा के अभाव और सामाजिक जीवन की अनेक जटिलताओं और कुंठाओं के कारण

लोरियों का उचित उपयोग नहीं हो पा रहा है तथा शिशु और छोटे बच्चे प्रायः उस प्रेरणा से वंचित ही रह जाते हैं जो लोरियाँ या बालगीत उन्हें दे सकते हैं।

वर्गीकरण की दृष्टि से बालगीत के उद्देश्य, उपयोगिता और आवश्यकता इत्यादि विषयों पर और अनेक तरीकों से भी विचार किया जा सकता है किन्तु बाल गीतों के सम्बन्ध में मूल तत्व की बात एक ही है वह यह कि बालगीत बच्चों का केवल मनोरंजन करने के लिये होते हैं और इसलिए यह अपनी अनेकरूपता में भी एक ही हैं।

४ : हिन्दी बालगीत साहित्य के इतिहास की भूमिका

गोस्वामी तुलसीदास ने अपनी एक चौपाई में कहा है –

जो प्रबंध नहिं बुध आदरहीं
सो श्रम व्यर्थ बाल कवि करहीं।

हिन्दी में बड़े-बड़े विद्वानों की कुछ ऐसी ही धारणा बाल कवियों के विषय में रही है। बाल गीत बड़ों के लिए लिखे ही नहीं जाते तो वह अपने लिए लिखे गये साहित्य को छोड़ कर उनका आदर कर ही कैसे सकते हैं। पूर्वाग्रहों से ग्रसित बड़ों में इतनी सहृदयता ही कहाँ होती है कि वह सीधी सरल भाषा में कही गई बात से लगने वाले बाल गीतों में कोई रस ले सकें। बाल गीत तो अबोध बच्चों के लिए लिखे जाते हैं। इसलिए तुलसीदास की उपरोक्त चौपाई की पंक्तियों को उन पर घटित करके इस प्रकार पढ़ा जा सकता है –

अबुध न जो प्रबंध आदरहीं
जो श्रम व्यर्थ बाल कवि करहीं।

अबोध जनों द्वारा अपनाये या आदर किए जाने की वस्तु होने के कारण हिन्दी में बाल गीत साहित्य का इतिहास लिखने में अनेक कठिनाइयां हैं। हिन्दी साहित्य के किसी इतिहास में चाहे वह पं. रामचन्द्र शुक्ल का लिखा हुआ हो या डॉ. रामकुमार वर्मा का, बाल गीतों का कोई उल्लेख कहीं नहीं मिलता। उनकी कोई समीक्षा समालोचना भी कभी कहीं नहीं की गई। हिन्दी के अनेक बाल गीतकार जिन्होंने जीवन में बच्चों के लिए लिखने के अतिरिक्त और कुछ लिखा ही नहीं था ऐसे भुला दिए गये कि उनके जीवन वृत्त, रचनाकाल, प्रेरणा स्रोत आदि के विषय में कोई जानकारी प्राप्त करना असम्भव सा हो गया है। दूसरी कठिनाई यह भी है कि अधिकतर कवियों ने बच्चों के लिए अपने जीवन के किसी विशेष काल में ही लिखा। बचपन या युवावस्था में वह कुछ बचकाने गीत या कवितायें लिखते रहे। बाद में वह जब या तो बड़ों के कवि के रूप में प्रतिष्ठित हो गये या जीवन के अन्य कार्य व्यापारों में जा फंसे तो बच्चों के लिए लिखना छोड़ ही दिया। बहुत ही कम कवि ऐसे हैं जो अपने बचपन, जवानी या बुढ़ापे का कोई भी ख्याल न करते हुए जीवन भर बच्चों के लिए लिखते ही रहे हों। ऐसी दशा में किस कवि ने किन वर्षों में अपने बाल गीतों की रचना की थी इसका पता लगाना कोई सरल कार्य नहीं है। बहुत से कवियों की रचनाओं का प्रकाशन भी प्रायः लिखने के वर्षों बाद हुआ है। इसलिए प्रकाशन से भी उसका रचनाकाल निश्चित नहीं किया जा सकता।

हिन्दी में बच्चों के लिए लिखी जाने वाली कविता को कब बाल गीत कहा जाने लगा इसे जानने के लिए कोई निश्चित प्रमाण हमारे पास नहीं है। बच्चों के पुराने कवियों श्रीधर पाठक, कामता प्रसाद गुरू, अयोध्या सिंह उपाध्याय, सुखराम चौबे गुणाकर आदि में से किसी ने भी अपनी बच्चों के लिए लिखी कविताओं को बाल गीत नहीं कहा है। श्रीधर पाठक ने अपनी बाल कवितायें बड़ों के लिए लिखी गई एक पुस्तक 'मनोविनोद' के बाल विलास खण्ड में प्रकाशित कराई थीं। पं. देवीदत्त शुक्ल ने अपने संकलन का नाम बाल कवितावली ही रक्खा था। कन्हैया लाल मत्त की 41 में प्रकाशित एक पुस्तक 'लोरियाँ और बाल गीत' हमें अवश्य ऐसी मिलती हैं जिसमें बाल गीत शब्द का प्रयोग हुआ है और इससे हम यही अनुमान लगा सकते हैं कि उसके प्रकाशन से कुछ वर्ष पूर्व से बाल कविता को बाल गीत कहा जाने लगा होगा।

हिन्दी के संदर्भ ग्रन्थों, साहित्य के इतिहासों या अन्य पुस्तकों में बाल कविता या बाल गीतों का कोई भी उल्लेख न मिलने से यह सहज ही समझा जा सकता है कि बाल गीत साहित्य का एक क्रमबद्ध इतिहास लिखना कितना दुस्तर कार्य है। इतिहास लेखन की दृष्टि से बाल गीतों के उद्भव या विकास के तीन स्रोत हो सकते हैं। पहला, लोक गीतों में पाये जानेवाले बाल गीत। लोक गीत परम्परा द्वारा सजाये संवारे जाते हुए सैकड़ों साल से समाज में प्रचलित पाये जाते हैं। इसलिए जब तक अन्तरसाक्ष्य से ही कुछ पता न चले हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते कि कोई लोक गीत कब रचा गया था। दूसरे, प्रचलित लोक गीतों में बाल गीतों को अलग करके अभी तक उनका अध्ययन भी नहीं हुआ है। दूसरा बाल गीतों का स्रोत वह सरल छोटी-छोटी तुकबन्दियां हो सकती हैं जो बच्चे आपस में खेलते-कूदते या हँसते बोलते स्वयं अपने लिये गढ़ लिया करते हैं। इन्हें हम अलिखित बाल गीत कह सकते हैं। यह इतिहास के प्रत्येक काल में बच्चे अपने लिए गढ़ते रहे होंगे। उनमें से कुछ बच्चों में प्राचीन काल से प्रचलित चले आते हैं और कुछ बच्चे नये-नये गढ़कर उनमें जोड़ते जाते हैं। इनका भी संकलन करके ऐतिहासिक क्रम से कोई अध्ययन कभी नहीं किया गया। बाल गीतों का तीसरा स्रोत बड़े-बड़े कवियों के द्वारा लिखी गई कविताओं के वह कुछ अंश हो सकते हैं जिन्हें बच्चों ने अपने लिए विशेष रूप से लिखे गये गीतों के अभाव में अपने मनोरंजन के लिए अपना लिया होगा। हिन्दी कविता के इतिहास में आदिकाल से ही ऐसे बहुत

कविता या बाल गीतों के अन्तर्गत ले सकते हैं। हिन्दी ही नहीं अन्य भाषाओं के बाल साहित्य में हमेशा यह होता आया है कि जो रचनायें विशेष रूप से बच्चों के लिए नहीं की गई थीं वह भी कालांतर में बच्चों द्वारा अपना ली जाने के कारण बाल साहित्य की एक अंग बन गई। अलिफ लैला की कहानियाँ, अलीबाबा चालीस चोर, सिन्दबाद जहाजी, गुलिवर की यात्रायें आदि विश्व साहित्य की ऐसी ही रचनायें हैं।

इतिहास किसी देश का हो अथवा जाति या साहित्य का, उसके लेखन का बहुत गहरा सम्बन्ध इतिहासकार की दृष्टि से होता है। यदि किसी पर राष्ट्रीयता या जातीयता का रंग सवार है तो वह साहित्य के इतिहास को भी उसी दृष्टि से देखकर लिखेगा। उसे राष्ट्रीय या जातीय भावनाओं या आदर्शों से ओत-प्रोत साहित्य तो साहित्य लगेगा, शेष सब कोरा बकवास और यदि उसका दृष्टिकोण मार्क्सवादी होगा और वह धनी और निर्धन दो वर्गों के संघर्ष की कहानी को ही इतिहास समझ कर लिखेगा तो उसे शेष सारे साहित्य में शोषक वर्ग का पोषक होने की दुर्गंध आयेगी। इस प्रकार से लिखे गये इतिहास अधूरे, एकांगी या सत्य पर परदा डालने वाले ही होंगे। साहित्य का इतिहास किसी पूर्वाग्रहपूर्ण दृष्टिकोण से ग्रसित होकर कभी लिखा ही नहीं जा सकता। साहित्य का तो अर्थ ही स+हित = सबके हित या सबको साथ लेकर चलना होता है। किसी वर्ग, राष्ट्र या जाति को ध्यान में रखकर लिखा जाने वाला साहित्य श्रेष्ठ साहित्य हो ही नहीं सकता - शेक्सपियर हों, तुलसी या कालिदास - वह महान वहीं है जहाँ मानव मात्र के साथ हैं। बाल साहित्य पर तो यह बात और भी विशेष रूप से लागू होती है। बच्चे, जिनके लिये वह लिखा जाता है, किसी वर्ग या समाज विशेष के नहीं होते। वह तो समस्त मानव जाति के होते हैं और सारा विश्व उनका होता है। इसलिए बाल साहित्य के इतिहास लेखक में तो पूर्वाग्रहों से मुक्ति और सत्य के प्रति निष्ठा का होना और भी आवश्यक हो जाता है। डाक्टर हेनरी स्टील कोमागर ने अपनी पुस्तक 'ए क्रिटिकल हिस्ट्री आफ चिल्ड्रंस लिटरेचर' की भूमिका में इस सम्बन्ध में ठीक ही कहा है कि अन्त में माता पिता, अध्यापक, उपदेशक और स्वयं लेखक भी नहीं बल्कि बच्चे स्वयं यह निश्चित करते हैं कि उनका साहित्य क्या है? 'चाइल्डहुड एन कन्टेम्पोरेरी कल्चर' में मारग्रेट का यह कहना - यदि बच्चों को साम्यवादी नैतिकता की भावना से पाला पोसा गया है, यदि उन्होंने मार्क्सवादी लेनिनवादी सिद्धान्तों को आत्मसात कर लिया है, यदि उनके सोद्देश्य जीवन की प्रवृत्ति ही साम्यवाद के लिए संघर्ष को अपनी सारी शक्ति और सारा ज्ञान अर्पित कर देने की ओर है तो हमें उनके (बच्चों के) भविष्य

की कोई चिन्ता नहीं होनी चाहिए। रूस देश के बच्चों के विषय में यह ठीक हो सकता है। वहां मार्क्स और लेनिन के विचारों के आधार पर ही क्रांति की गई थी और उसके बाद से उन्हीं विचारों के ढांचे में सबको ढाल देने का प्रयास बराबर किया जाता रहा है। इसलिए उपरोक्त दृष्टि से लिखा गया बाल साहित्य रूस के लिए ठीक हो सकता है सारे संसार के बच्चों के लिए नहीं।

हमारा देश एक जनतांत्रिक व्यवस्था वाला देश है। यहां प्रत्येक व्यक्ति को स्वतन्त्रतापूर्वक अपने व्यक्तित्व का विकास करने का अधिकार संविधान द्वारा मिला हुआ है। यहाँ का बाल साहित्य तो बालक को उसके स्वतन्त्र व्यक्तित्व के साथ केन्द्र में रखकर ही रचा जा सकता है और बाल साहित्य का इतिहास भी वही सच्चा और पूर्ण होगा जो उसके हित या उसके सहित दृष्टि से देखकर लिखा जाये। हमारे देश में बाल साहित्य किसी विशेष जाति या वर्ग के बच्चे के लिए नहीं रचा जाता और यह समझते हुए लिखा जाता है कि सारे संसार के बच्चे एक से हैं। बड़ों के विचारों के अनुसार होने वाला साहित्य ही बाल साहित्य हो यह आवश्यक नहीं है। लिलियन स्मिथ ने इस सम्बन्ध में ठीक ही कहा है कि बच्चों की सब पुस्तकें साहित्य नहीं होतीं और न यह सदा आवश्यक होता है कि बच्चों की पुस्तक के विषय में बड़ों की धारणा बच्चों की धारणा से मेल खाये। बहुत से लोग बच्चों की पुस्तक को बड़ों की पुस्तक का एक सरलीकृत संस्करण समझते हैं। इस विचार के अनुसार बच्चे बड़ों का एक लघु संस्करण समझे जाते हैं और यह विचार बचपन को ठीक से न समझने के कारण बनता है क्योंकि बच्चों की एक अलग जाति है और उनके अनुभव बड़ों के अनुभव से भिन्न होते हैं। उनकी दुनिया ही एक अलग होती है उसमें बच्चे की दृष्टि से ही देखकर जीवन मूल्यों को प्रकट किया जाता है, बड़ों के जीवनानुभवों की दृष्टि से देखकर नहीं।

बाल गीत साहित्य के इतिहास लेखन में दृष्टिकोण से ही सीधा जुड़ा हुआ प्रश्न उसके मूल्यांकन या समीक्षा का होता है। इतिहास लेखन कितना भी तटस्थ और निष्पक्ष हो उसमें साथ-साथ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से समीक्षा चलती ही रहती है। समीक्षक के अपने विचार होते हैं जिनके आधार पर वह समीक्षा या मूल्यांकन करता है। इसके कुछ मापदण्ड होने चाहिए। वह कहां से आयें और कौन उन्हें निश्चित करे यह अलग विचारणीय प्रश्न है। अक्सर लोग बाल गीतों का मूल्यांकन बाल मनोविज्ञान की कसौटियों पर कस कर करते हैं। बाल मनोविज्ञान के कुछ साधारणीकृत सिद्धान्त

नहीं बनाये जा सकते और न उनके मन की आन्तरिक स्थितियों का अध्ययन संपूर्ण रूप से किया जा सकता है। ऐसी दशा में बाल मनोविज्ञान का अध्ययन भी एक सीमा तक ही बाल गीतों के मूल्यांकन में सहायक हो सकता है।

कुछ लोग बाल गीतों का मूल्यांकन उनकी बालक के लिए उपयोगिता या उसके नैतिक, सामाजिक या राष्ट्रीय चरित्र के विकास में योगदान की दृष्टि से करने लगते हैं। जहाँ तक उपयोगिता का प्रश्न है, इस बात का निर्णय कोई पहले से कैसे कर सकता है कि अमुक गीत बालक के लिए उपयोगी या अनुपयोगी होगा। वह कुछ गुणों या विशेषताओं के आधार पर कुछ गीतों के उपयोगी और कुछ के अनुपयोगी होने की कल्पना कर लेते हैं। उनकी वह कल्पना उनके अपने अनुभवों और जीवनादर्शो से प्रेरित होती है। जीवनादर्श तो बच्चों के जीवन में होते ही नहीं। अनुभव प्रत्येक बच्चे के अलग-अलग होते हैं। इसलिए कुछ बाल गीत उपयोगी समझे जाकर बच्चों को पढ़ने के लिए दिये तो जा सकते हैं पर यह नहीं कहा जासकता कि वह बच्चों की अपनी दृष्टि से भी उतने ही उपयोगी होंगे जितना बड़े उन्हें समझ लेते हैं।

बाल गीतों के माध्यम से बच्चों के नैतिक या राष्ट्रीय चरित्र के विकास की बात भी बहुत जोर-शोर से की जाती है। नैतिकता मनुष्य को समाज की देन है। बच्चे अपने व्यक्तित्व के विकास की धुन में इतने उग्र होते हैं कि समाज का कोई निश्चित रूप उनकी कल्पना में नहीं होता। समाज भी मनुष्यों के अपने अलग-अलग होते हैं। कई मनुष्य अपने समाज को अपने कुटुंबीजन और पास पड़ोस के लोगों तक ही सीमित समझते हैं। कुछ अपनी जाति बिरादरी के लोगों को भी समाज के अन्तर्गत मानते हैं और कुछ लोग समाज के मनुष्यों में जाति, वर्ण, वर्ग का कोई भेदभाव नहीं करते। उनकी दृष्टि में धनी, निर्धन, ब्राह्मण, हरिजन, हिन्दू, मुसलमान सब एक समान होते हैं और कुछ लोग तो इससे भी आगे बढ़कर अपने देश और दूसरे देशों के मनुष्यों के भेद को भी न मानकर सारी मनुष्य जाति को एक ही परिवार या समाज के रूप में देखते हैं। तब फिर मनुष्यों द्वारा निर्मित इतने सारे समाजों में से किस समाज से उत्पन्न नैतिकता के विकास की अपेक्षा हम बच्चों के लिए बाल गीत साहित्य से कर सकते हैं।

राष्ट्रीय भावना की दृष्टि से बाल गीतों का मूल्यांकन करना भी ठीक नहीं हो सकता। राष्ट्रीयता, लाल, नीली, हरी, सफेद आदि कई रंग की होती है। स्वतन्त्रता से पूर्व हमारे देश में जिस प्रकार की राष्ट्रीयता पाई जाती थी और उसे जनता से जैसी अपेक्षायें थीं वैसी राष्ट्रीयता और वैसी अपेक्षायें स्वतन्त्रता के बाद नहीं रहीं।

उनका रूप रंग ही सर्वथा बदल गया और आज हमारे देश पर कोई विदेशी शक्ति आक्रमण करने लगे तो हमारी राष्ट्रीय भावना और जन-जन से उसकी अपेक्षाओं का रूप ही बदल कर कुछ और हो जायेगा।

इन सब बातों पर विचार करने के बाद हमें अन्ततः इसी परिणाम पर पहुंचना पड़ता है कि बाल गीत साहित्य का समुचित मूल्यांकन हम उसे उन बच्चों की दृष्टि से देखकर ही कर सकते हैं जिनके लिए वह रचा जाता है। बाल मन के संगठन, बुद्धि के विकास और व्यक्तित्व के निर्माण में जो बालगीत जितना सहायक हो सकता है वह उसके लिए उतना ही श्रेष्ठ बाल गीत कहा जा सकता है। बालकों में कोई विचारधारा, कोई पूर्वाग्रह होते ही नहीं। इसलिए बड़ों के आस्था, विश्वास, मान्यताओं, विचारधाराओं और पूर्वाग्रहों के आधार पर बाल गीतों की कोई समीक्षा नहीं की जा सकती। बाल गीतों के अध्ययन के लिए एक बाल मन की आवश्यकता होती है। जिसके पास वह मन हो वही बाल गीतों का समुचित मूल्यांकन कर सकता है।

पर वात्सल्य रस की कविता और बच्चों के लिए लिखे जाने वाले गीतों में बहुत अन्तर होता है। कविता केवल बच्चों से किए जाने वाले प्रेम के आधार पर लिखी जा सकती है और उसे पढ़ सुनकर बड़ों को उसमें रस की अनुभूति हो सकती है। जैसे तुलसी की – 'अवधेस के द्वारे सकारे गई सुत गोद तें भूपति लै निकसे' इत्यादि पढ़कर कविता का आनन्द प्राप्त हो सकता है। पर बाल गीत लिखने में कवि को बच्चों के प्रति होने वाले उस प्रेम या ममता से भी थोड़ा और आगे जाकर बच्चों की अपनी भावनाओं, प्रवृत्तियों, रुचियों और कल्पनाओं के एक तत्व को उसमें जोड़ देना पड़ता है। इसके लिए कवि को स्वयं एक बालक बन जाना पड़ता है और उसी की दृष्टि से सारे संसार को देखना पड़ता है। इसके लिए उसे भावनाओं के उस धरातल पर उतरना पड़ता है जहाँ उसकी और बच्चे की भावनाओं में कोई अन्तर नहीं रह जाता। वहाँ पहुँच कर उसके मन में वैसी ही जिज्ञासायें होती हैं, जैसी एक बच्चे के मन में होती हैं। वह वैसी ही कल्पनायें करता है जैसी बच्चा करता है और उसे सुख-दुःख की अनुभूति भी वैसी ही होती है जैसी बच्चे को। हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवयित्री महादेवी वर्मा ने इस रहस्य को समझा था इसीलिए उन्होंने एक बार इलाहाबाद में अपने एक भाषण में कहा था– 'बच्चे की प्रमुख विशेषता है कि वह जीवन के बहुत से भेदभाव नहीं जानता। वह फूलों से बात करता है, पक्षियों से बात करता है, तोता, मैना सब उसके परिवार

सहज है। उसके लिए भी कोई विजातीय नहीं होता। वह भी तारों से बोलता, फूलों से बोलता, पक्षियों से बोलता है। मूल में दोनों में एकता है।' आगे अपने उसी भाषण में उन्होंने यहाँ तक कह दिया – 'हम जिसे साम्यवाद, समता या समानता कहते हैं वह बालकों में सर्वाधिक है।........ बड़े ही वास्तव में बच्चों की तुलना में छोटे, संकीर्ण हैं।

जो कवि भाव प्रवण हो बच्चों के मानसिक स्तर पर उतर कर स्वयं उनकी ही दृष्टि से जीवन और जगत को देखते हुए उनकी अपनी भावनाओं को गीतों में उसी प्रकार से व्यक्त नहीं कर सकता जैसे बच्चे स्वयं करना चाहते हैं वह सफल बाल गीतकार हो ही नहीं सकता। बाल गीत का उद्भव बड़ों के हृदय में बच्चे के प्रति प्रेम से होता है पर वह अपने असली रूप में तभी आ पाता है जब उसमें बच्चे की अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है।

हिन्दी के बहुत से विद्वान सूरदास को बच्चों का पहला कवि मानते हैं। उन्हें अन्य सब कवि 'खद्योत सम यत्र तत्र करत प्रकास' मालूम होते हैं। पर वास्तव में इससे बड़ा ऐतिहासिक भ्रम और कोई दूसरा नहीं हो सकता। सूर वात्सल्य रस के अद्वितीय कवि हैं। उन्होंने बाल स्वभाव का बड़ा मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। उनका वह चित्रण उनके चरित नायक या इष्टदेव कृष्ण के चरित्र का ही है। वह सर्वसाधारण बच्चों की अपनी भावनाओं का चित्रण करने के लिए नहीं किया गया था। सूर ने बाल रूप में भगवान की उपासना की है। वह यह कभी नहीं भूले हैं कि उनके आराध्यदेव अलौकिक शक्तियों से सम्पन्न हैं। उनके कुछ ही पद ऐसे हैं जिनमें बच्चों को अपनी जैसी भावनाओं की झलक मिल सकती है। पर उन पदों से भी जितना मनोरंजन कृष्ण भक्तों या काव्य के बड़े रसिकों का हो सकता है उतना स्वयं बच्चों का नहीं। इसीलिये वह पाठ्यक्रमों में निर्धारित करके बच्चों को पढ़ाये जाते भले ही रहे हों, बच्चों के अपने गीत कभी नहीं बन सके। पर उन पदों से जहाँ तक बाल पाठकों का भी थोड़ा बहुत मनोरंजन हो सकने का सम्बन्ध है। हम सूरदास को हिन्दी बालगीत साहित्य के इतिहास का एक प्रमुख उल्लेखनीय कवि तो कह ही सकते हैं।

सूरदास से पहले भी हिन्दी में कई ऐसे कवि हुए हैं जिनके काव्यांशों को बच्चों ने अपनाया और गाया दुहराया था। ग्यारहवीं बारहवीं शताब्दियों में रचे गये जगनिक के आल्हखण्ड के कुछ अंश ऐसे हैं जिन्हें ग्रामीण बच्चे आज तक गाकर सुनाते हुए पाये जाते हैं। शताब्दियों से आल्हखण्ड की वीर गाथा गांव-गांव में चौपालों

गई है। वह अपने संवत 1230 के मूल रूप में हमें प्राप्त है पर उसका उस रूप में पठन पाठन आम जनता में कहीं प्रचलित नहीं है। संवत 1900 के आसपास फर्रूखाबाद के कलक्टर चार्ल्स इलियट ने उसे चारणों के मुख से जिस रूप में लेकर क्रमबद्ध कथा के रूप में प्रकाशित कराया था, उसी रूप में वह जनता में प्रचलित है। आल्ह खण्ड वीर रस की एक ऐसी कविता का नाम है जिसे सुनने वाले लोग आवेश में अपने को रोक न पाकर आपस में स्वयं ही लड़ने लगते थे। बाल श्रोताओं के मन पर भी उसका प्रभाव पड़ता होगा। इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि उसके कुछ अंशों को उन्होंने अपने मनोरंजन के लिए अपने काव्य के रूप में अपना लिया।

जगनिक के बाद हिन्दी के एक दूसरे कवि अमीर खुसरो (1283-1328) ऐसे हैं जिनकी लिखी बहुत सी पहेलियाँ और मुकरियाँ शताब्दियों से बच्चों का मनोरंजन उनकी अपनी कविता की तरह करती आई हैं। उनमें कुछ ऐसी सरल स्वाभाविकता और सरल भावनाओं की अनुरूपता है कि बच्चे यह समझ ही नहीं सकते कि उनकी रचना कवि ने उनके लिए नहीं की थी। बच्चों में वह इतनी लोकप्रिय हैं और जब तक हिन्दी भाषा है, रहेंगी, कि हम अमीर खुसरों को हिन्दी में बच्चों का पहला कवि कह सकते हैं। उनकी निम्नलिखित पहेलियाँ देखने योग्य हैं -

एक थाल मोती से भरा
सब के सिर पर औंधा धरा
चारों ओर वह थाली फिरे
मोती उससे एक न गिरे (आकाश)
हरा था मन भरा था
हजार मोती जड़ा था
राजा जी के बाग में
दुशाला ओढ़े खड़ा था। (भुट्टा)
बाला था तब सब को भाया
बड़ा हुआ कुछ काम न आया
खुसरो कह दिया उसका नाम
अर्थ करो या छोड़ो ग्राम। (दिया)
सावन भादों बहुत चलत है माह पूस में थोरी
अमीर खुसरों यों कहे तू बूझ पहले मोरी। (मोरी)
बीसों का सिर काट लिया

एक कहानी में कहूं तू सुन ले मेरे पूत
बिन पैरों के उड़ गया वह बांध गले में सूत। (पतंग)

इसी प्रकार की खुसरों की कुछ मुकरियां और ढकोसले भी हैं। ढकोसला उन मुक्तकों को कहते हैं जिनमें कोई बेतुकी या बेढंगी बात केवल मनोरंजन के लिए कह दी गई हो। कुछ अर्थो में हम उन्हें आज की हिन्दी में नानसेंस राइम्स (अर्थहीन तुकबन्दी) के समकक्ष रख सकते हैं। अमीर खुसरों का एक अत्यन्त प्रसिद्ध ढकोसला है -

खीर पकाई जतन से चरखा दिया चला
आया कुत्ता खा गया तू बैठी बीन बजा।

यह ठीक है कि अमीर खुसरों ने यह पहेलियां, मुकरियाँ और ढकोसले विशेष रूप से बच्चों के लिए नहीं लिखे थे। पर उनसे उनके लिए बड़ों की कविता के इतिहास में कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं बन सका। वह लिखे बड़ों के लिये भले ही गये हों पर बच्चों ने ही उन्हें अपनी कविता की तरह अपनाया इसलिए हिन्दी बालगीत साहित्य के इतिहास में अमीर खुसरो का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है।

अमीर खुसरो की कविता शैली का अनुकरण करके उनके बाद के बहुत से कवि भी उसी प्रकार की पहेलियाँ, मुकरियां और ढकोसले लिखते रहे। पंडित रामनरेश त्रिपाठी ने इस सम्बन्ध में एक स्थान पर लिखा है - 'खुसरो की देखा देखी खबासी खेरा के घासी राम, विगहपुर के पंडित और बासू की खगीनियां आदि ने भी बहुत सी पहेलियां लिखीं' घासी राम की यह पहेली तो बहुत प्रसिद्ध है -

कारो है पर कौआ नाहिं
रूख चढ़े पर बन्दर नाहिं
मुँह को मोटो बिड़वा नाहिं
कमर को पतलो चीता नाहिं
घासी कहें खवासी खेरे
है नियरे पर पइहौ हेरे।

इसका उत्तर है 'चींटा'। पहेली रूप में कविता की विशेषता ही यह होती है कि पहली पंक्ति से ही पाठक या श्रोता की जिज्ञासा उसका उत्तर खोजने में उत्पन्न हो जाती है। प्रत्येक अगली पंक्ति से वह और भी बढ़ती रहती है और पहेली समाप्त हो जाने के बाद भी जब तक वह सही उत्तर खोज नहीं लेता उसे चैन नहीं पड़ता। इस प्रकार पहेली शैली में लिखी गई कविता में पाठक की रोचकता आदि से अन्त और उसके भी बाद तक बनी रहती है। हिन्दी के और भी बहुत

से जनकवियों ने पहेलियां लिखी होंगी जो हमें लोक साहित्य के रूप में घर-घर दादी नानियों या बड़े बूढ़ों से सुनने को मिलती हैं। पर बड़ों की दृष्टि में कविता के रूप में उनका कोई मूल्य नहीं था। इसलिये कविता के किसी इतिहास की पुस्तक में उनका कहीं उल्लेख नहीं मिलता। पर बाल गीतों के क्षेत्र में उस शैली के मूल्य को आंका और समझा गया इसलिए इस आधुनिक काल के अनेक कवियों ने पद्यबद्ध पहेलियां लिखी हैं। अमीर खुसरो ही उन सब के आदि गुरु हैं।

हिन्दी में वीर गाथा काल के बाद भक्ति काल के कवियों ने अपने-अपने इष्ट देवों की भक्ति में लवलीन होकर काव्य रचना की। उनका उद्देश्य मनुष्यों को क्षण-भंगुर भौतिक साधनों से प्राप्त होने वाले सुखों से विमुख करके आध्यात्मिक आनन्द की अनुभूति की ओर उन्मुख करना था। उनमें से कबीर आदि कवियों के इष्ट देव निर्गुण निराकार थे। पर तुलसी, सूर आदि कवियों के इष्ट देव अवतार लेकर मनुष्य के रूप में पृथ्वी पर आने वाले थे। उन्होंने उनके बाल रूप का भी विशद वर्णन किया है। वह बाल क्रीड़ाओं का वर्णन करते हुए बाल मन की गहराइयों में उतरे हैं। पर यह कभी एक पल के लिये भी नहीं भूल सके हैं कि उनके चरित्र नायक कोई साधारण बालक नहीं बल्कि सर्वशक्तिमान भगवान हैं। इसीलिये तुलसीदास जहाँ राम और उनके भाइयों के बाल रूप का वर्णन करते हैं वहाँ यह भी कह देते हैं – 'अवधेश के बालक चार सदा तुलसी मन मन्दिर में बिहरैं।' इससे स्पष्ट है कि उनका बाल रूप का वर्णन भी इष्ट देव को अपने मन में स्मरण करने के लिए ही था।

सूरदास ने अपने इष्ट देव कृष्ण के चरित का वर्णन करने के लिए सवा लाख पदों की रचना की थी। उनमें से अधिकांश पद कृष्ण के बाल रूप के वर्णन से सम्बन्धित हैं। अपने चरित नायक के बाल रूप का इतना विशद वर्णन हिन्दी के किसी अन्य कवि ने नहीं किया है। उन पदों में कृष्ण की बाल लीलाओं का ऐसा संश्लिष्ट चित्रण हुआ है कि लगता है कृष्ण हमारे ही घर आंगन में कहीं खेल रहे हैं। सूर को बाल मनोविज्ञान की भी अच्छी जानकारी थी इसके उदाहरण उनके निम्नलिखित पद हैं –

मैया कबहिं बढ़ैगी चोटी
किती बार मोहि दूधपियत भई यह अजहूं है छोटी
तू जो कहति बल की बेनी ज्यों है है लांबी मोटी।

या

मैया मैं नहिं माखन खायो

जान परै सब संग सखा मिल मेरे मुख लपटायो
देखि तुही सींके पर भाजन ऊंचे धरि लटकायो
इन नन्हें नन्हें कर अपने मैं कैसे धर पायो।

या

मैया मोहिं दाऊ बहुत खिझायो
मो सों कहत मोल को लीन्हों तोहिं जसुमति कब जायो।

या

खेलत में को काको गुसैयाँ
जात पाँत हमसे कछु नाहीं न बसत तुम्हारी छैंया।
अति अधिकार जनाबत याते अधिक तुम्हारे हैं कछु गैयाँ।।

कृष्ण कथा से परिचित बालकों को ही इन्हें पढ़ कर आनन्द की अनुभूति हो सकती है। कृष्ण चरित को आधार मानकर ही यह लिखे गये हैं। सूर के यह पद बच्चों के लिए पठनीय और रोचक हो सकते हैं इसलिए उन्हें बाल गीत साहित्य के अन्तर्गत माना जा सकता है।

सूर ने अपने पदों में ही बहुत सी लोरियाँ और प्रभातियाँ भी लिखी हैं जो माताओं द्वारा बच्चों को सुनाया जाने वाला साहित्य होने के कारण बाल गीत साहित्य के अन्तर्गत ही है जैसे -

मेरे लाल की आउ निंदरिया काहे न आन सुवाबै।

या

जागिये ब्रज राजकुंवर कमल कुसुम फूले।

सूरदास के जिन पदों में कृष्ण जन्म का उल्लास तथा कृष्ण की अलौकिक शक्तियों का चित्रण है, उनमें बच्चों को भला क्या आनंद आयेगा?

बच्चे अपने बाल गीतों में स्वयं अपने जन्म पर होने वाली प्रसन्नता या अपने रूप सौन्दर्य और चेष्टाओं के वर्णन से उतने प्रसन्न नहीं होते जितने अपनी भावनाओं और कल्पनाओं के वर्णन से। माता की ममता या बड़ों के लाड़ दुलार से उन्हें प्रसन्नता अवश्य होती है। उनसे उनको उसी प्रकार की तृप्ति मिलती है जैसी किसी को अपनी प्रशंसा किसी दूसरे से सुनकर मिलती है। पर उनके मन के असली गीत तो वही होते हैं जिनमें उनके अपने उद्गार, हर्ष, क्रोध आदि और कल्पनाओं की अभिव्यक्ति होती है। इस दृष्टि से विचार करने पर सूरदास एक सफल बाल गीतकार कवि नहीं ठहरते। पर यह निर्विवाद सत्य है कि

आधुनिक कवि भी बाल स्वभाव की वैसी परख नहीं रखते। बाल मन का कोई कोना ऐसा नहीं था जिस पर सूर की दृष्टि अपनी निश्चित सीमा में न गई हो। इसीलिए उनके पदों में कहीं-कहीं ऐसी पक्तियाँ भी अनायास आ गई हैं जिन्हें हम बाल गीतों के निकट रख सकते हैं।

समाज में जब तक बड़े अपने बच्चों से प्यार करते रहेंगे उन्हें अपने बच्चों की चेष्टाओं और क्रीड़ाओं को देखकर प्रसन्नता होती रहेगी तब तक सूर की रचनाओं का महत्व कम नहीं होगा। इसीलिए हम जब कभी बाल गीत साहित्य पर विचार करेंगे, सूर के पदों की उपेक्षा नहीं कर सकेंगे। रमेश थानवी के इस कथन से भी सूर की प्रासंगिकता प्रकट होती है, "सूर कृष्ण भक्त थे, मगर उनकी भक्ति केवल कृष्ण के बाल रूप की भक्ति थी। वे कृष्ण के बहाने भारतीय समाज में बालकों की प्रतिष्ठा का काम कर सके थे। बच्चों की नाना भंगिमाओं और बाल केलियों को सूर ने जिन आंखों से देखा था, वे आंखें अनुपम थीं, सर्वथा विरल थीं। एक तरफ वे बचपन की प्रतिष्ठा कर रहे थे और दूसरी तरफ वे समाज को वात्सल्य रस में डुबो रहे थे। वात्सल्य रस की जैसी धारा सूर ने प्रवाहित की, वैसी अन्य कोई कवि नहीं कर सका। आज जब हमारे समाज में बालक बार-बार अपमानित होता है, अवमानित होता है, अनचाहा मेहमान होता है, तब सूर की और भी आवश्यकता प्रतीत होती है। अब सूर ही आज बचपन की पुनः प्रतिष्ठा कर सकते हैं और बालकों के प्रति नया राग और अनुराग जगा सकते हैं।"

भक्ति काल के बाद रीति काल में कवियों का ध्यान कविता के भाव पक्ष से हट कर कला पक्ष की ओर अधिक हो गया था। इस काल के अनेक कवि वाग्विलास द्वारा अपने आश्रयदाताओं को प्रसन्न करने में ही कवि कर्म की इतिश्री मानने लगे थे। अतएव उनसे तो यह आशा करना ही व्यर्थ था कि वह कुछ ऐसी सरल रचनायें भी करेंगे जो बच्चों का भी मनोरंजन कर सकें। पर इस काल में ही कुछ ऐसे जन कवि भी हुये हैं जिन्होंने राज दरबारों के भोग विलास पूर्ण वातावरण से बाहर रहकर ऐसी कविताओं की रचना की जो बड़ों के साथ-साथ बच्चों का भी मनोरंजन करने वाली थीं। घाघ, भड्डरी और लाल बुझक्कड़ इनमें से बहुत प्रसिद्ध हुए। पं. रामनरेश त्रिपाठी के अनुसार लाल बुझक्कड़ फर्रूखाबाद के रहने वाले थे। उनका असली नाम लाल कवि था और उनकी अधिक सूझबूझ के कारण लोगों ने उन्हें बुझक्कड़ की पदवी दे दी थी। उन्होंने अपनी बुद्धि का चमत्कार दिखाना घाघ की देखा देखी प्रारम्भ किया था। घाघ के विषय में यह कहा जाता है कि वह कन्नौज के रहने वाले थे और उनके वंशधर वहाँ के सराय घाघ चौधरी नामक ग्राम में

आज तक निवास करते हैं। उनके जन्म संवत् के विषय में कुछ ज्ञात नहीं। पर किंवदन्ती के अनुसार वह अकबर के शासन काल में हुये थे। घाघ की रचनाओं में उनके अनुभव ज्ञान की बातें ही अधिक हैं। जैसे उनकी कविता पढ़कर लोग समझ लेते हैं कि वर्षा कब प्रारम्भ होगी और कब खुलेगी। इस वर्ष अतिवृष्टि होगी या अकाल पड़ेगा। इसलिये उनकी कवितायें ज्ञानवर्द्धक तो हैं पर मनोरंजक नहीं। लेकिन लाल बुझक्कड़ की रचनायें सरल और हँसाने वाली होने के कारण सभी का मनोरंजन करने वाली हैं। उदाहरण के लिये एक बार एक हाथी किसी गाँव में से होकर निकल गया। लोगों ने उसके पाँवों के बड़े-बड़े गोल निशान भूमि पर पड़े हुए देखे। सब आश्चर्य चकित होकर सोचने लगे यह बड़े-बड़े गोल निशान किस पशु के पांवों के हो सकते हैं। इस पर लाल बुझक्कड़ ने कहा -

लाल बुझक्कड़ बूझते
और न बूझे कोय
पाँव में चक्की बांध के
हरिना कूदा होय।

इसी प्रकार एक बार एक पुराने काई लगे हुये विद्रूप कोल्हू को कहीं पर पड़ा हुआ देखकर किसी की समझ में ही नही आ रहा था कि यह क्या चीज है। इस पर लाल बुझक्कड़ ने कहा था -

लाल बुझक्कड़ बूझते
वह तो हैं गुरु ज्ञानी
पुरानी होकर गिर पड़ी
खुदा की सुरमा दानी।

लाल बुझक्कड़ की यह छन्द बद्ध उक्तियाँ देखने में अमीर खुसरो की पहेलियाँ जैसी ही हैं। पर इनकी विशेषता यह है कि सुनकर उनका अर्थ समझ जाने पर कोई भी व्यक्ति अपनी हँसी को रोके हुए रह ही नहीं सकता। उसे ठहाका मारकर हँसना अवश्य पड़ जायेगा। विशेष रूप से बच्चों के मनोरंजन के लिए न लिखी जाकर भी वह उनका मनोरंजन करने में भरपूर सफल सिद्ध हुई हैं।

रीति काल में ही कुछ ऐसे कवि भी हुए जिन्होंने सरल भाषा में लिखे दोहों और कुंडलियों में अनुभव, ज्ञान और नीति की उपयोगी बातें लोगों को बताईं। उनमें रहीम, वृन्द और गिरिधर कविराय के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। उनकी रचनायें बच्चों को पाठ्य पुस्तकों में पढ़ाई जाती रही हैं और वह उनसे सरलता से कुछ

में तो नहीं रख सकते पर उपयोगी कविता अवश्य कह सकते हैं। गिरिधर राय की इन कुंडलियों से विद्यार्थी बच्चों को व्यावहारिक ज्ञान की कुछ बातें मिलने के साथ-साथ थोड़ा बहुत मनोरंजन भी हो सकता है –

साईं बैर न कीजिए गुरु पण्डित कवि यार
बेटा बनिता पौरिया यज्ञ करावन हार।
यज्ञ करावन हार राज्य मन्त्री जो होई
विप्र परोसी वैद्य आपकी तपै रसोई।
कह गिरिधर कवि राय युगन तें यहि चलि आई
इन तेरह सों तरह दिये बनि आवै सांई।

अथवा

लाठी में गुन बहुत हैं सदा राखिए संग
गहरि नदी नाला जहां तहां बचावै अंग।
तहां बचावै अंग झपटि कुत्ता को मारै
दुश्मन दावा गीर गरब तिनहूँ को झारै।
कह गिरिधर कवि राय सुनौ हो वेद के पाठी
सब हथियारन छाँड़ि हाथ में लीजै लाठी।

सन् 1843 से हिन्दी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल का प्रारम्भ होता है। इस काल में खड़ी बोली हिन्दी को भाषा के रूप में मान्यता दिलाने का महत्वपूर्ण कार्य किया गया था। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र इस काल के प्रमुख साहित्यकार थे इसलिए इस काल को भारतेन्दु युग नाम से जाना जाता है। भारतेन्दु जी ने स्वयं यद्यपि कविता के क्षेत्र में रीति कालीन परम्पराओं का ही अनुसरण किया। पर यह उनके और उनके समकालीन कवियों के प्रयास का ही फल था कि उसी काल में बहुत सी कवितायें खड़ी बोली में लिखी जाने लगीं और वही आगे चलकर हमारी राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता प्राप्त हुईं। भारतेन्दु जी ने अपने नाटकों में संवादों के रूप में कहीं-कहीं जो पद्य के अंश दिये हैं वह सरल जनभाषा खड़ी बोली में ही हैं। उनके 'अंधेर नगरी चौपट्ट राज' नामक हास्य व्यंग्य नाटक के 'चूरन का लटका' और 'चने का लटका' कवितायें तो इतनी लोक प्रिय हुई थीं कि एक समय में बच्चे-बच्चे की जवान पर चढ़ गई थीं। उनकी कुछ पंक्तियां तो बिल्कुल बाल गीत जैसी लगती हैं। जैसे –

चना बनावै घासी राम
जिसकी झोली में दूकान।
चना चुर मुर चुर मुर बोले

बाबू खाने को मुँह खोले।
चना खावै तोकी मैना
बोले-अच्छा बना चवैना।
चना खांय गफूरन मुन्ना
बोलै और नहीं कुछ सुन्ना।
चना खाते सब बंगाली
जिनकी धोती ढीली ढाली।
चना खाते मियां जुलाहे
दाढ़ी हिलती गाह बगाहे।
चना हाकिम सब जो खाते
सब पर दूना टिकिस लगाते।

या

चूरन अमल वैद का भारी
जिसको खाते कृष्ण मुरारी।
चूरन पाचक है पचलोना
जिसको खाता श्याम सलोना।
चूरन बना मसालेदार
जिसमें खट्टे की बहार।
मेरा चूरन जो कोई खाय
मुझको छोड़ कहीं ना जाय।
हिन्दू चूरन इसका नाम
बिलायत पूरन इसका काम।
चूरन अमले सब जो खावे
दूनी रिश्वत तुरत पचावे।
चूरन साहब लोग जो खाता
सारा हिन्द हजम कर जाता।

भारतेन्दु ने अमीर खुसरो की मुकरियों की तरह की कुछ मुकरियां भी लिखी है। पर वह भाव और विषय किसी भी दृष्टि से बाल गीतों के अन्तर्गत नहीं लिए जा सकते। अपने 'नील देवी' नाटक में उन्होंने एक लोरी भी लिखी थी -

सोओ सुख निंदिया प्यारे ललन
नैनन के तारे दुलारे मेरे वारे

भई आधी रात बन सनसनात
पशु पंक्षी कोउ आवत न जात।
जग प्रकृति भई मनु थिर लखात
पातहुं नाहिं पावत तरुन हिलन।

इस लोरी में मां की बच्चे के प्रति होने वाली ममता का उतना स्वाभाविक चित्रण नहीं है जितना बाह्य प्रकृति में घटित होने वाले व्यापारों का। पर आधुनिक काल में यह हिन्दी की पहली लिखी गई लोरी है इसलिए इसका ऐतिहासिक महत्व तो है ही।

भारतेन्दु जी के समकालीन कवियों में पं. प्रताप नारायण मिश्र बड़े मनमौजी और विनोदी स्वभाव के थे। उनकी बुढ़ापा, गोरसा और हर गंगे कवितायें बड़ों के साथ-साथ बच्चों का भी मनोरंजन करने वाली थीं।

सन् 1885 में भारतेन्दु जी का स्वर्गवास हो गया। तब तक भी हिन्दी कवियों का ध्यान विशेष रूप से बच्चों के लिए कवितायें लिखने की ओर नहीं गया था। बीसवीं शताब्दी प्रारम्भ होते-होते कुछ ऐसे कवि प्रकाश में आने लगे थे जो बच्चों के लिए अलग से कुछ कवितायें लिखने की आवश्यकता का अनुभव करने लगे थे। उसी काल में विद्यार्थियों के लिए पाठ्य पुस्तकें तैयार की जा रही थीं इसलिए उस आवश्यकता का अनुभव और तीव्रता से किया जाने लगा था। पर स्वतंत्र रूप से बच्चों के लिए उपयुक्त विषयों पर जैसे तोता, मैना, तीतर, मुर्गा, कुत्ता, बिल्ली आदि सबसे पहले पंडित श्रीधर पाठक ने सरल भाषा में कवितायें लिखीं इसलिए हम उन्हें ही हिन्दी का सबसे पहला बालगीतकार कवि मानते हैं।

9 : हिन्दी बालगीत साहित्य का इतिहास

(1) स्वतन्त्रता पूर्व काल (1885 से 1947)

प्रत्यक्ष आज की गतिविधियों का महत्व मानव जीवन में कुछ इतना अधिक बढ़ गया है कि बीते हुए कल के इतिहास को ले बैठना मेरी (निरंकार देव सेवक की) भूल भी हो सकती है पर इस इतिहास का सम्बन्ध उन बच्चों से भी है जो किसी भी जाति के भविष्य की आशा होते हैं और यह लिखना आवश्यक भी इसलिए हो गया कि यह पहले कभी लिखा नहीं गया था।

हिन्दी में बहुत कम कवि ऐसे हैं जिन्होंने जीवन भर केवल बच्चों के लिए लिखा हो। अधिकतर कवि ऐसे ही हैं जिन्होंने अपने जीवन के दो चार वर्षों में कभी बच्चों के लिए लिखा और फिर बड़ों के लिए लिखने या जीवन के और धंधों में लगकर उस ओर ध्यान देना भूल ही गये। कुछ बड़ों के बड़े-बड़े कवियों ने यह सोचकर कि साहित्य का यह क्षेत्र भी उनके प्रसाद से वंचित न रह जाये, यदा कदा कुछ कवितायें लिखकर हो सका तो एक दो पुस्तकें भी प्रकाशित करा डालीं। किस कवि ने अपने जीवन के किन वर्षों में किस भावना से प्रेरित होकर वह कवितायें लिखी थीं इसे जानने के लिए कोई साधन हमारे पास नहीं हैं। बच्चों की पुस्तकों में कोई भूमिकायें नहीं लिखी जातीं, उनकी उपयोगिता भी नहीं होती और उनकी ऐसी समीक्षा-समालोचना भी नहीं की जाती जिससे उनके रचनाकाल या प्रेरणा स्रोतों के विषय में कोई जानकारी प्राप्त की जा सके। बच्चों के बहुत से कवियों ने लिखने के बाद ही अपनी कविताओं से उदासीन हो जाने के कारण उनके विषय में चर्चा तक करने में कोई रुचि दिखाना आवश्यक नहीं समझा और बहुतों ने अपने को इतिहास में उल्लेखनीय बताने में संकोच का अनुभव किया। अनेक दिवंगत कवियों के विषय में जानकारी प्राप्त करना तो और भी कठिन हो गया क्योंकि उनमें से अधिकांश के वंशधरों की उनके द्वारा बच्चों के लिए भी कुछ लिखे गये पर कोई आस्था नहीं थी। फिर भी यह इतिहास लिखना आवश्यक इसलिए समझा गया कि मनुष्य अपने भविष्य का निर्माण अतीत के अनुभवों के आधार पर ही करता है और बच्चों की शिक्षा के विस्तार के साथ-साथ लोगों में बाल साहित्य के प्रति रुचि बढ़ती जा रही है उसके कारण उनकी कभी जिज्ञासा बढ़ी तो उन्हें कहीं कुछ सामग्री तो एकत्रित मिल सकेगी। बाल साहित्य पर अव तो कुछ लोग शोध कार्य भी करने लगे हैं। उनमें से ही कोई यदि इतिहास विषय पर कार्य करे तो यह लिखना कुछ उपयोगी हो सकेगा।

हिन्दी में बाल गीत साहित्य लेखन का इतिहास विगत सौ वर्षो से अधिक पुराना नहीं है। और यदि प्रकाशन की दृष्टि से 1980 तक के काल को देखेंगे तब तो 70-80 वर्ष पुराना ही माना जायेगा। उससे पूर्व पाठ्य पुस्तकों में रखने के लिए बच्चों की कुछ कवितायें लिखी अवश्य गई थीं पर पाठ्य पुस्तकों के लिए रची गई कविताओं और बच्चों के लिए लिखे गये बालगीतों में अन्तर होता है। पाठ्य पुस्तकों के लिए कवितायें बच्चों को शिक्षित बनाने के उद्देश्य से लिखी जाती है और बाल गीतों की रचना का उद्देश्य बच्चों की भावना व कल्पनाओं को अभिव्यक्ति देकर उनका मनोरंजन करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता।

बड़ों की कविता के इतिहास में जैसे वीर गाथा, भक्ति या रीति काल अथवा छायावादी, प्रगति या प्रयोग वादी युगों की कल्पना करके काल विभाजन कर लिया गया है वैसा कोई काल विभाजन बालगीत साहित्य के इतिहास में नहीं किया जा सकता। बच्चों की भावनायें, स्वाभाविक जिज्ञासायें और प्रवृत्तियां सदा एक रहने वाली होती है। उनकी अभिव्यक्ति की शैलियों में भी कोई ऐसे परिवर्तन नहीं हो सकते जिनके आधार पर ही कोई काल विभाजन किया जा सके। क्योंकि बच्चे तो सीधी सादी भाषा में कहीं गई सीधी-सादी बातें ही समझ सकते हैं।

संसार की बड़ी से बड़ी क्रांतियों, सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तनों का भी कोई प्रभाव बाल साहित्य पर परिलक्षित नहीं होता। वह क्रांतियां और परिवर्तन जिन विचारधाराओं के आधार पर होते हैं वह भी बच्चों के मन मस्तिष्क से ऊपर बहुत ऊपर हवा में उड़ती हुई निकल जाती है। बच्चों के अस्तित्व और विकास की जड़ें धरती में बहुत गहरी गड़ी होती हैं। उनकी नैतिकता के नियम सिद्धान्त उनके उस विवेक से सम्बद्ध होते हैं जो उनके अस्तित्व का एक अभिन्न अंग होता है। इसलिए सामाजिक या राजनीतिक परिस्थितियों से प्रभावित कुछ रचनाओं को छोड़कर अधिकांश रचनायें उनके प्राकृतिक वातावरण और उसमें पाये जाने वाले जीव जन्तुओं और मनुष्यों से प्रेरणा पाकर लिखी होती हैं। इसलिए समाज में मनुष्यों की विचारधाराओं, राजनीतिक क्रांतियों के आधार पर भी बाल गीत साहित्य के इतिहास का कोई काल विभाजन निश्चित नहीं किया जा सकता।

बच्चे जिस प्रकार के घरों में रहते हैं, जैसे स्कूल में पढ़ने के लिए भेजे जाते हैं, जिस प्रकार के मनुष्यों को अपने आस-पास देखते हैं और जैसा वातावरण और सुख सुविधायें उन्हें अपने विकास के लिए मिलती हैं, उन्हीं सब के आधार पर उनके लिए साहित्य लिखा जाता है। वैज्ञानिक उन्नति से प्राप्त उपलब्धियां मनुष्यों

भी बदल दिया करती हैं। चन्द्र विजय, टेलीविजन और वीडियों के युग में रहने वाले बच्चे उन बच्चों से अवश्य भिन्न होंगे जिन्होंने वायुयान, राकेट और राडार कभी देखे सुने ही न हों। पर अपने देश में हम देखते हैं कि बैलगाड़ी, साइकिल, मोटर, रेलें, वायुयान और राकेटों के विभिन्न युगों में रहने वाले बच्चे एक साथ रह रहे हैं। इसलिए वैज्ञानिक उपलब्धियों के आधार पर भी बच्चों के लिए लिखे जाने वाले गीतों के इतिहास में कोई काल विभाजन नहीं कर सकते।

हमारे देश में सन् 47 में स्वतन्त्रता प्राप्ति की एक ऐसी घटना अवश्य है जिसने सामान्य रूप से जन-जन के जीवन, रहन-सहन और प्रवृत्तियों को प्रभावित किया है। उससे पहले और बाद के बालगीतों में हम बहुत-सी गुणात्मक भिन्नतायें पाते हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद बाल साहित्य को मान्यता प्राप्त हुई और बाल गीतों के लेखन और प्रकाशन में एक साथ बहुत अभिवृद्धि हुई। इसलिए हम मोटे तौर पर बाल गीत साहित्य के इतिहास को स्वतन्त्रता पूर्व, स्वतन्त्रता बाद और आधुनिक (1980-82 से 2012 तक) कालों में विभाजित कर सकते हैं। इन कालखंडों के बीच की विभाजन रेखा भी बहुत अस्पष्ट ही है। प्रकाशन की सुविधायें स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ही प्राप्त होने के कारण बहुत सा स्वतन्त्रतापूर्व का लिखा हुआ बाल गीत साहित्य बाद में ही प्रकाश में आया। कुछ पुस्तकों में स्वतन्त्रता पूर्व और बाद दोनों कालों में लिखे बाल गीत एक साथ प्रकाशित मिलते हैं। प्रत्येक बाल गीत के विषय में यह पता लगाना कि वह किस दिन किस तिथि को लिखा गया था किसी शोधकर्ता का ही कार्य हो सकता है। इतिहास लेखन में अपनी जानकारी की सीमाओं को देखते हुए हम प्रत्येक कवि के जीवन काल को देखते हुए यह अनुमान ही लगा सकते हैं कि किस-किस ने कब-कब बाल गीतों की रचना की होगी।

इस काल के बाल गीत साहित्य को समझने के लिए कवियों की उन परिस्थितियों पर विचार कर लिया जाये जिनमें रहकर वह बच्चों के लिए लिखते थे, तो असंगत न होगा। अंग्रेजों ने सारे देश में अपनी संप्रभु सत्ता दृढ़तापूर्वक स्थापित कर ली थी। सारा देश उनके अधीन था। आम जनता अशिक्षित और अनभिज्ञ थी और उसने यह समझ लिया था कि हमें तो इसी शासन में रहना है। शिक्षित और प्रबुद्ध वर्ग के लोगों ने विदेशी शासन से संघर्ष करने के लिए कांग्रेस की स्थापना की भी थी तो उसका उद्देश्य देश के शासन में कुछ अधिकार प्राप्त करना ही था। वैसे बंगाल में राममोहनराय, विवेकानन्द, उत्तर भारत में स्वामी दयानन्द, सर सैयद अहमद, दक्षिण में रानाडे, तिलक और गोखले आदि ने जो नये विचारों के बीज बिखेर दिये थे, उनसे लोग विदेशी शासन की दासता से मुक्ति पाने के लिए छटपटाने

भी लगे थे। लोगों के सामाजिक और धार्मिक जीवन में परिवर्तन आने लगे थे और हिन्दू मुसलमान सभी अपने धर्मों के प्रति आस्थावान रहते हुए भी देश में सबके हित की बातों को समझने लगे थे। अंग्रेज शासक देश के लोगों को शासन व्यवस्था में सम्मिलित करने के लिए उन्हें अपनी तरह से शिक्षित बनाकर अपनी ओर आकर्षित करने के प्रयत्न में लगे हुए थे। जगह-जगह शिक्षण संस्थायें खोली जा रही थीं और बच्चों को उनकी मातृभाषा के माध्यम से शिक्षित करने के प्रयत्न किये जा रहे थे। इसकी प्रतिक्रिया स्वरूप अपनी परम्परागत सभ्यता संस्कृति की सुरक्षा का विचार भी बहुत से लोगों के मन में आने लगा था। उत्तर भारत में गुरुकुल कांगड़ी और अनेक सनातन धर्म एवं दयानन्द स्कूल कालिजों की स्थापना उसी की परिचायक थी। ऐसे ही वातावरण में सन् 1914 में दक्षिण अफ्रीका से स्वदेश में आकर महात्मा गांधी ने अपना सत्याग्रह और असहयोग आन्दोलन चलाना प्रारम्भ कर दिया था। इससे राजनीतिक चेतना की एक लहर देश भर में दौड़ गई थी। लोग अपनी दासता के कारणों, उसके दुष्परिणामों और उसे दूर करने के उपायों को समझने लगे थे। अपने देश के प्रति अभूतपूर्व प्रेम लोगों के हृदय में उमड़ पड़ा था और वह उसके लिए अपने प्राणों को भी उत्सर्ग करने तक की बात सोचने लगे थे। सन् 1939 में द्वितीय विश्व महायुद्ध प्रारम्भ हो गया और भारत भी उसकी चपेट से बचकर न रह सका। इससे एक ओर तो यह लाभ हुआ कि देश में शिक्षित वर्ग के लोग अंग्रेजों के मित्र देशों के लोगों की सभ्यता संस्कृति के सम्पर्क में आये। उनके ज्ञान का क्षेत्र बढ़ा। दूसरी ओर सन् 45 तक युद्ध में लड़ते-लड़ते अंग्रेज आर्थिक दृष्टि से इतने कमजोर हो गये कि उन्हें भारत में शासन छोड़ते ही बना।

इस काल में जब तक अंग्रेजी स्कूलों की बहुतायत न हो गई, बच्चों को शिक्षा मौलवियों के मकतबों और पंडितों की पाठशालाओं द्वारा ही दी जाती थी और उनमें धार्मिक ग्रन्थों की शिक्षा को ही प्रधानता दी जाती थी। अंग्रेजी स्कूलों में सब विषयों की शिक्षा का समुचित प्रावधान था पर विशेष रूप से इतिहास विषय तथ्यों को कुछ तोड़-मरोड़ कर पढ़ाया जाता था।

बड़ों के लिये लिखी जाने वाली कविता के क्षेत्र में दो प्रवृत्तियां प्रमुख रूप से पाई जाती थीं - एक स्वच्छन्दतावादी और दूसरी राष्ट्रीयतावादी प्रवृत्ति। पहली के प्रमुख कवि पं. श्रीधर पाठक थे और उन्होंने ही सबसे पहले बच्चों के लिए विशेष रूप से छोटी-छोटी सरल कवितायें लिखना प्रारम्भ किया। इसलिए हम हिन्दी बालगीतों को उस स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति की देन कह सकते हैं। पर कवियों की राष्ट्रीयतावादी

हिन्दी भाषा का रूप उस काल के प्रारम्भ तक पूरी तरह से स्थिर नहीं हुआ था। उसमें देशज शब्दों और ग्रामीण प्रयोगों की भरमार थी। उसे एक शुद्ध परिमार्जित और स्थिर रूप प्रदान करने का कार्य सन् 1903 में सरस्वती का सम्पादन कार्य संभालने के बाद पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी ने किया। उन्होंने एक अध्यापक की तरह अनेक लेखकों को लिखना सिखाया। पं. कामता प्रसाद गुरु (जो बच्चों के एक प्रमुख कवि भी थे) ने भाषा को व्याकरण सम्मत बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

इस काल में बच्चों के लिए अनेक पत्र निकाले गये। उनका उल्लेख इसलिए आवश्यक है कि उनमें न केवल उस समय के अनेक प्रख्यात और प्रतिष्ठित कवियों के बाल गीत प्रकाशित होते थे बल्कि उन्होंने प्रोत्साहन दे-देकर बच्चों के लिए लिखने वाले अनेक नये कवि भी तैयार किये। हिन्दी में बच्चों का सबसे पहला पत्र लखनऊ से 1891 में प्रकाशित होने वाला 'बाल हितकर' मासिक था। उसके बाद सन् 1906 में अलीगढ़ से 'छात्र हितैषी' मासिक का प्रकाशन प्रारम्भ किया गया। उन्हीं दिनों बनारस से पं. किशोरी लाल गोस्वामी के सम्पादकत्व में 'बाल प्रभाकर' नामक एक मासिक पत्र का प्रकाशन हुआ था। सन् 1912 में नरसिंहपुर म.प्र. से 'मानीटर' नामक एक बालोपयोगी मासिक पत्र निकला जो सन् 1916 तक लगातार प्रकाशित होता रहा। सन् 1914 में इलाहाबाद से 'विद्यार्थी' नामक एक मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया गया। यह उस समय तक निकाले गये सारे पत्रों में सर्वश्रेष्ठ था और उस समय के सभी महान् लेखकों का सहयोग इसे प्राप्त था। सन् 1914 में ही पं. गणेशदत्त शर्मा के सम्पादन प्रकाशन में 'बाल मनोरंजन' नामक एक मासिक पत्र आगर (मालवा) से प्रकाशित हुआ था। सन् 1915 में पं. सुदर्शनाचार्य ने अपनी पत्नी श्रीमती गोपाल देवी के सम्पादकत्व में शिशु कार्यालय इलाहाबाद से 'शिशु' नामक एक मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। यह लगभग 40 वर्ष तक नियमित रूप से लगातार निकलता रहा। छोटे बच्चों में यह बहुत लोकप्रिय हो गया था और बन्द हो जाने के वर्षो बाद तक लोग याद करते रहे। सन् 1916 में पं. रामलोचन शरण बिहारी ने पुस्तक भंडार, लहरिया सराय, पटना से 'बालक' नामक एक मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। बिहार के अनेक कवियों को प्रोत्साहित करके प्रतिष्ठित करने का श्रेय उसे है। सन् 1917 में इण्डियन प्रेस इलाहाबाद ने 'बालसखा' नामक एक मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। बाल साहित्य के उन्नयन और विकास में उसकी वैसी महत्वपूर्ण भूमिका रही है जैसी बड़ों के साहित्य में 'सरस्वती' मासिक पत्रिका की। पं. कामता प्रसाद गुरु, गिरजा दत्त शुक्ल 'गिरीश', देवीदत्त शुक्ल, ठाकुर

श्रीनाथ सिंह, लल्ली प्रसाद पांडेय और सोहन लाल द्विवेदी आदि अनेक बच्चों के कवि उसके सम्पादक रहे। उनमें लल्ली प्रसाद पांडेय का सम्पादन काल सबसे अधिक दीर्घकालीन था। उन्होंने उस काल में बाल साहित्य के अनेक नये पुराने लेखकों को प्रतिष्ठित करने और प्रोत्साहन दे देकर लिखाने का जो महत्वपूर्ण कार्य किया उसके कारण हम उन्हें बाल साहित्य का पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी कह सकते हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के लगभग 20 वर्ष बाद तक 'बालसखा' बराबर निकलता रहा था। सन् 1920 में जबलपुर से 'छात्र सहोदर' नामक एक मासिक पत्र का प्रकाशन नर्मदा प्रसाद मिश्र ने प्रारम्भ किया। सन् 1924 में दिल्ली से 'वीर बालक' निकला। सन् 1926 में हिन्दी प्रेस इलाहाबाद से पं. रामजी लाल शर्मा ने 'खिलौना' नामक एक मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। उसके तीन वर्ष बाद ही उनका स्वर्गवास हो गया। उसके बाद उनके सुयोग्य पुत्र पं. रघुनन्दन शर्मा उसे निकालते रहे। कुछ वर्षो तक पं. रामेश्वर गुरु 'कुमार हृदय' उसका सम्पादन जबलपुर से ही करते रहे। सन् 1931 में पं. रामनरेश त्रिपाठी ने इलाहाबाद से 'वानर' नामक एक मासिक पत्र निकाला। यह भी 'खिलौना' की तरह बच्चों में खूब लोकप्रिय हुआ। इससे एक वर्ष पूर्व सन् 1930 में पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय ने इलाहाबाद से 'चमचम' नामक एक मासिक पत्र निकाला था। जिसे बाद में उनके पुत्र विश्व प्रकाश 'कुसुम' भी निकालते रहे थे। वह लगभग 14 वर्ष तक बराबर निकलता रहा था। सन् 1933 में 'बालविनोद' नामक एक मासिक पत्र का प्रकाशन मुरादाबाद से प्रारम्भ हुआ। बाद में वही पं. दुलारे लाल भार्गव द्वारा गंगा ग्रन्थागार लखनऊ से निकाला जाता रहा। सन् 1937 में उदयपुर विद्यापीठ से 'बालहित' नाम का एक मासिक पत्र प्रकाशित हुआ था जो स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी वर्षो तक निकलता रहा। वह बच्चों का अपना पत्र नहीं था पर उसमें बालशिक्षाकल्याण और साहित्य विषयक लेख प्रकाशित होते थे। सन् 1940 के लगभग दिल्ली से 'बाल-सन्देश' नामक पत्र निकला था। सन् 1942 में श्री रामकृष्ण शर्मा खद्दर जी ने दिल्ली से 'हमारे बालक' नाम का एक पत्र निकाला था यह भी 'बालहित' की तरह का था।

हिन्दी में पहला बालगीत कब लिखा गया यह तो कोई खोज करके ही निश्चित बता सकता है। प्रमुख बाल गीतकार कवियों में पं. श्रीधर पाठक, बाल मुकुन्द गुप्त, अयोध्या सिंह उपाध्याय और सुखराम चौबे गुणाकर लगभग समकालीन ही थे। इनमें से पं. श्रीधर पाठक और बाल मुकुन्द गुप्त ने सबसे पहले लगभग एक ही समय में बच्चों के लिए भी कवितायें लिखना प्रारम्भ किया था। पर बाल मुकुन्द

बहुत दूर कलकत्ता में रहते थे। श्रीधर पाठक बड़ों के लिए सुविख्यात कवि होने के साथ बच्चों के कवि रूप में प्रकाश में आये। प्राप्त जानकारी के अनुसार उन्होंने ही सबसे पहले स्वतन्त्र रूप से मनोरंजक बालगीत लिखे, इसलिए उन्हें ही हिन्दी का पहला बालगीतकार कवि माना जा सकता है।

पं. श्रीधर पाठक -- उनका जन्म सन् 1860 में आगरा जिला के जोंधरी ग्राम में हुआ था। 10-12 वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने अपनी कुल-परम्परा के अनुसार संस्कृत की अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली थी। वह बड़े मेधावी और कुशाग्रबुद्धि छात्र थे। मिडिल और प्रवेशिका की परीक्षायें उन्होंने जिले भर में सबसे अधिक अंक प्राप्त करके पास कीं। सन् 1880 में वह कलकत्ता चले गये और राजकीय सेवा में नियुक्त होकर विभिन्न सरकारी पदों पर काम करते रहे। साहित्य और कविता में बचपन से ही उनकी रुचि थी। अंग्रेजी भाषा और साहित्य का उनका गहन अध्ययन था। उन्होंने कई अंग्रेजी कविताओं का पद्यानुवाद भी किया। हिन्दी कविता के क्षेत्र में वह स्वच्छन्दतावादी धारा के प्रवर्तक कवियों में माने जाते हैं। उन्होंने कुछ राष्ट्रीयतावादी कवितायें भी लिखी हैं। वह बड़े स्वाभिमानी स्वभाव के और स्वतन्त्रता प्रिय व्यक्ति थे। इसीलिए वह न तो अंग्रेजों की चापलूसी करके उपाधियाँ प्राप्त कर सके और न राष्ट्रीय विचारधारा से जुड़ कर चल सके। सेवा-निवृत्त हो चुकने के बाद सन् 1928 में जब वह स्वास्थ्य लाभ के लिए मंसूरी पहाड़ पर गये हुये थे तो वहीं उनका स्वर्गवास हो गया।

पाठक जी ने बच्चों के लिए कुत्ता, बिल्ली, तोता, मैना, कोयल, चकोर, मोर आदि सुपरिचित विषयों पर सरल भाषा में अनेक मनोरंजक कवितायें लिखी हैं। उनमें से कुछ सन् 1917 में ओंकार प्रेस, इलाहाबाद से प्रकाशित एक पुस्तक 'मनोविनोद' के बाल विकास खण्ड में बिना किसी साज-सज्जा के छपी हैं। उनकी 'भारत गीत' पुस्तक की कुछ कवितायें भी बालोपयोगी हो सकती हैं। बच्चों को कविता के द्वारा भूगोल पढ़ाने के लिए उन्होंने अपनी 'बाल भूगोल' पुस्तक में कुछ इस प्रकार की कवितायें लिखी हैं -

> भूमि हमारी गोल है नारंगी की भांत,
> चक्कर देती सूर्य का मत पूछो यह बात।
> कीली पर घूमी तभी होता है दिन रात,
> और सूर्य के चक्र से होय वर्ष विख्यात।

उनकी बच्चों के लिए एक मनोरंजक कविता है -

तीतर

लड़को इस झाड़ी के अन्दर,
छिपा हुआ है जोड़ा तीतर।
फिरते थे यह अभी यहीं पर,
चारा चुगते हुए जमीं पर।
एक तीतरी है इक तीतर,
हमें देखकर भागे भीतर।
आओ इनको जरा डराकर,
ढेला मार निकालें बाहर।
यह देखो वह दोनों भागे,
खड़े रहो चुप, बढ़ो न आगे।
अब सुन लो इनकी गिटकारी,
एक अनोखे ढंग की प्यारी।
तीइत्तड़ तीइत्तड़ तीइत्तड़ तीइत्तड़,
नाम इसी से इनका तीतर।

पण्डित अयोध्या सिह उपाध्याय 'हरिऔध' -- उनका जन्म सन् 1865 में निजामाबाद जिला आजमगढ़ में हुआ था। कुल की परम्परा के अनुसार उनकी शिक्षा घर पर ही उर्दू फारसी भाषा के माध्यम से प्रारम्भ हुई। बाबा सुमेर सिंह की प्रेरणा से उनकी रुचि हिन्दी की ओर हुई। कानूनगो के सरकारी पद पर रहने के बाद सन् 1923 में उन्होंने अवकाश ग्रहण किया। उसके बाद वह हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस में हिन्दी के प्राध्यापक हो गये और उस पद से अवकाश ग्रहण करने के बाद सन् 1947 में उनका स्वर्गवास हो गया। वह अपने समय में हिन्दी के मूर्धन्य कवियों में से एक थे। कठिन से कठिन और सरल से सरल भाषा में कविता लिखने में वह सिद्धहस्त थे। 'चुभते चौपदे', 'चोखे चौपदे' उनकी सरल भाषा में लिखी कविता पुस्तकें हैं। विशेष रूप से बच्चों के लिए भी उन्होंने बहुत-सी कवितायें लिखी हैं। 'बाल विभव', 'बाल विलास', 'फूले पत्ते', 'पद्य प्रसून', 'चन्द्र खिलौना', 'खेल तमाशा' नाम से उनकी बाल कविताओं के अनेक संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। 'चन्द्र खिलौना' और 'खेल तमाशा' का प्रकाशन रंगीन चित्रों में बहुत सुन्दर हुआ है। उनकी 'बाल विलास' पुस्तक के विषय में तत्कालीन 'माधुरी' मासिक ने लिखा था – 'इसमें 21 बालोपयोगी विषयों पर कवितायें हैं। गिलहरी, बन्दर, कोयल, जुगनू, बूंदें आदि विषयों पर कविता पढने को किस बच्चे का मन न चाहेगा।' उनकी एक कविता है –

देखो लड़को बन्दर आया। एक मदारी उसको लाया।।
उसका है कुछ ढंग निराला। कानों में पहने है बाला।।
फटे पुराने रंग बिरंगे। कपड़े हैं उसके बेढंगे।।
मुँह डरावना आँखें छोटी। लम्बी दुम थोड़ी सी मोटी।।
भौंह कभी है वह मटकाता। आँखों को है कभी नचाता।।
ऐसा कभी किलकिलाता है। मानो अभी काट खाता है।।
दाँतों को है कभी दिखाता। कूद फाँद है कभी मचाता।।
कभी घुड़कता है मुँह बाकर। सब लोगों को बहुत डराकर।।
कभी छड़ी लेकर है चलता। है वह यों ही कभी मचलता।।
है सलाम को हाथ उठाता। पेट लेटकर है दिखलाता।।
ठुमक ठुमक कर कभी नाचता। कभी कभी है टके जाँचता।।
देखो बन्दर सिखलाने से। कहने सुनने समझाने से।।
बातें बहुत सीख जाता है। कई काम कर दिखलाता है।।
बनो आदमी तुम पढ़ लिखकर। नहीं एक तुम भी हो बन्दर।।

बालमुकुन्द गुप्त -- उनका जन्म सन् 1865 में रोहतक जनपद के गुड़ियानी गाँव में हुआ था। सन् 1889 से 1891 तक वह कालाकांकर अवध से प्रकाशित होने वाले दैनिक पत्र 'हिन्दुस्तान' के सम्पादक रहे उसके बाद 'भारत मित्र' के सम्पादक होकर कलकत्ता चले गये। बच्चों के लिए कवितायें लिखने में उनकी रुचि थी। उनकी बालोपयोगी कविताओं के 'खिलौना' और 'खेल तमाशा' नामक दो संकलन भी प्रकाशित हुए थे। उनकी कुछ बालोपयोगी कवितायें 'स्फुट कवितायें' नामक संकलन में भी प्रकाशित हैं। सन् 1907 में दिल्ली में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक कविता ऊजड़-गाँव की कुछ पक्तियाँ हैं -

कहाँ गये वह गाँव मनोहर परम सुहाने,
सबके प्यारे परम शान्तिदायक मन माने।
कपट द्वेष क्रूरता पाप अरु मद से निर्मल,
सीधे सादे लोग बसे जिनमें नहिं छल बल।
इत्यादि

सीताराम बी.ए. -- उनका जन्म 1858 में अयोध्या में हुआ था। उन्होंने मौलवी

करने के बाद सन् 1879 में एल-एल.बी. पास किया। कुछ दिनों 'अवध अखबार' के सम्पादक रहे 1865 में सरकार ने उन्हें डिप्टी कलक्टर नियुक्त कर दिया। सन् 1909 में उस पद से अवकाश ग्रहण किया। कवितायें लिखने में उनकी रुचि बचपन से थी और राजकीय सेवा में रहते हुए भी लिखते रहते थे। उनकी एक कविता 'बैरगिया नाला' जो 'हिन्दी शिक्षावली' नामक पुस्तक के पाठ्यक्रम में निर्धारित थी, बच्चों में बहुत लोकप्रिय हो गई थी उसकी कुछ पंक्तियां हैं -

बैरगिया नाला जुलुम जोर
तहं रहत साधु के भेस चोर

....

जब तबला बाजै धीन धीन
तब एक एक पै तीन तीन

सन् 1937 में उनका स्वर्गवास हो गया।

कामता प्रसाद गुरु -- उनका जन्म सन् 1875 में ग्राम परकोटा जिला सागर में हुआ था। सागर में उन्होंने मैट्रिक तक शिक्षा प्राप्त की और उसके बाद अध्यापक नियुक्त हो गये। 35 वर्ष तक अध्यापन कार्य करते रहने के बाद सन् 1928 में उन्होंने नार्मल स्कूल जबलपुर से अवकाश ग्रहण किया और उसके बाद कुछ वर्षो तक उड़ीसा की एक रियासत में विद्यालय निरीक्षक के पद पर कार्य करते रहे। हिन्दी में व्याकरण विषयक पहली पुस्तक लिखने के कारण उन्हें हिन्दी का पाणिनि कहा जाता है। वह 'बाल सखा' मासिक के सम्पादक भी रहे थे। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने उन्हें 'साहित्य वाचस्पति' की मानद उपाधि देकर सम्मानित किया था। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत सी कवितायें लिखी हैं। उनकी 'छड़ी' और 'सोने की थाली' कवितायें वर्षो तक बच्चों को पाठ्यक्रम में निर्धारित करके पढ़ाई जाती रही हैं। उनकी बालोपयोगी कविताओं के दो संकलन भी 'पद्य पुष्पावली' तथा 'सुदर्शन' नाम से प्रकाशित हुए थे। सन् 1947 में जबलपुर में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक कविता है -

छड़ी

यह सुन्दर छड़ी हमारी। है हमें बहुत ही प्यारी।।
यह खेल समय हर्षाती। मन में है साहस लाती।।
तन में अति जोर जगाती। उपयोगी है यह भारी।।
हम घोड़ी इसे बनाये। कम घेरे में दौड़ायें।।

कुछ ऐब न इसमें पायें। है इसकी तेज सवारी।।
यह जीन लगाम न चाहे। कुछ काम न दाने का है।।
गति में यह तेज हवा है। यह घोड़ी जग से न्यारी।।
यह टेक छलांग लगायें। उँगली पर इसे नचायें।।
हम इससे चक्कर खायें। हम हलके हैं यह भारी।।
हम केवट हैं बन जाते। इसकी पतवार बनाते।।
नैया को पार लगाते। लेते हैं कर सरकारी।।
इसको बन्दूक बनाकर। हम रख लेते कन्धे पर।।
फिर छोड़ इसे गोली भर। कितनी भरकम है भारी।।
अन्धे को बाट बताये। लँगड़े का पैर बढ़ाये।।
बूढ़े का भार उठाये। यह छड़ी परम उपकारी।।
लकड़ी यह बन से आई। इसमें है भरी भलाई।।
है इसकी सत्य बड़ाई। इससे हमने यह धारी।।

सुखराम चौबे गुणाकर -- उनका जन्म सन् 1867 में ग्राम रहली, जिला सागर म.प्र. में हुआ था और स्वर्गवास सन् 1956 में कटनी में हुआ। अपनी शिक्षा समाप्त करने के बाद वह गोपालगंज स्कूल में अध्यापक हो गये थे। बाद में वर्षो तक नार्मल स्कूल जबलपुर के छात्रावास के अधीक्षक और ट्रेनिंग कालिज के अन्तर्गत स्कूल में अध्यापक रहे। पं. कामता प्रसाद गुरु के वह अभिन्न मित्रों में से थे। उन्हें घूमने फिरने का बहुत शौक था। उन्होंने शान्ति निकेतन जाकर रवीन्द्र नाथ टैगोर से भेंट की थी और अपनी कवितायें सुनाई थीं। पं. श्रीधर पाठक से वह व्यक्तिगत रूप से परिचित थे। उनकी 'वर्ण प्रबन्ध' चार भाग पुस्तक वर्षो तक मध्य प्रदेश के पाठ्यक्रम में चलती रही थी। वह बड़े हँसमुख स्वभाव के और वाक्पटु व्यक्ति थे। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत सी छोटी-छोटी कवितायें, चुटकुले और पहेलियाँ लिखी हैं। पंचतन्त्र और हितोपदेश की अनेक कहानियों को भी पद्यबद्ध किया है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद उनकी बड़ी इच्छा थी कि उनकी बालोपयोगी कविताओं का एक संकलन प्रकाशित हो। उनके शिष्य व्योहार राजेन्द्र सिंह ने एक संकलन प्रकाशित किया था। पर सन् 56 में जब तक वह 'गुणाकर काव्य संग्रह' प्रथम भाग प्रकाशित हुआ उनका स्वर्गवास हो गया था। उनका एक बाल गीत है -

यह छाता है सुख दाई, मैं इसे न दूंगा भाई।
जब घर से बाहर जाता, या बाहर से घर आता।

यह संग में आता जाता, रखता है सदा मिताई।
जब पानी बरसा करता, मग चलने में जी डरता।
तब मेरी रक्षा करता, यों होता सदा सहाई।
जब धूप कड़ी होती है, तब तपन बड़ी होती है।
भुन सड़क पड़ी होती है, दे छाया करे भलाई।
यह समय पड़े पर सच्चा, डंडे का पूरा बच्चा।
सिरहाना भी है अच्छा, मैं क्या-क्या करूं बड़ाई। इत्यादि

दामोदर सहाय 'कवि किंकर' -- उनका जन्म सन् 1875 में छपरा, बिहार में हुआ था। 1897 में एफ.ए. पास करने के बाद पहले अध्यापक फिर मुंगेर में स्कूलों के सब-इंस्पेक्टर नियुक्त हो गये थे। सन् 1927 में विद्यालय निरीक्षक होकर छपरा आये और सन् 31 में रिटायर हो गये। बच्चों के लिए भी उन्होंने बहुत सी कवितायें लिखी हैं जिनके संकलन 'रसाल', 'अंगूर' और 'सुध सरोवर' नाम से प्रकाशित हुए थे। 'रसाल' के विषय में सर जार्ज ए. ग्रियर्सन ने लिखा था - "It seems likely to be a very good reader for children." (यह बच्चों के लिए बहुत उपयोगी और पठनीय पुस्तक मालूम होती है) और उसी के विषय में पटना से प्रकाशित होने वाले सर्चलाइट पत्र ने लिखा था - "The juveniles will undoubtedly find this book thoroughly enjoyable." (बच्चों के लिए यह पुस्तक सचमुच मनोरंजक होगी)। उनकी एक अन्य पुस्तक 'बाल संकीर्तन' के विषय में बिहार के सुप्रसिद्ध विद्वान साहित्याचार्य प्रो. रामावतार शर्मा ने लिखा था - "It is fit for circulation in Primary and Middle schools and can be profitably used at home." (यह प्राइमरी और मिडिल स्कूलों के बच्चों को पढ़ने को देने के लिए उपयुक्त है और इसका उपयोग घरों में भी हो सकता है)। सन् 32 में उनका स्वर्गवास हो गया। हिन्दी में तत्कालीन बच्चों के कवियों में उनका स्थान बहुत ऊँचा था। उनकी एक बाल कविता का एक अंश है -

मोर गये ब्रह्मा के आगे करने लगे विचित्र विलाप
कहने लगे सुनो हे स्वामी हमने किया कौन सा पाप।
साधारण पक्षी भी ऊंचे स्वर से जब कुछ गाते हैं
तब मनुष्य पृथ्वी के सारे मोहित से हो जाते हैं।
पर सुनकर मेरी बोली वे हँसी ठिठोली करते हैं

देकर बहुत दिलासा ब्रह्मा बोले- 'मोरो! हो न उदास
दुनियाँ में न कहीं पाओगे सब ही गुण सब ही के पास।
है जो कड़ी तुम्हारी बोली तो पाया है कैसा रूप
वाह! वाह! करते नर जिसकी सुन्दरता को देख अनूप।
इस दुनियाँ में बिल्कुल अच्छा बिल्कुल बुरा न कोई है
सब में गुण हैं बंटे, वृथा ही तुमने निज मति खोई है। इत्यादि

पण्डित सुदर्शनाचार्य -- उनका जन्म सन् 1879 में मुरादाबाद नगर में हुआ था। उन्होंने क्वींस कालिज बनारस से संस्कृत आचार्य की परीक्षा पास की और प्रयाग वि. वि. से बी.ए. किया। सन् 1911 में उन्होंने इलाहाबाद से 'गृह लक्ष्मी' मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया जो बहुत लोकप्रिय हुआ। सन् 1916 में बच्चों के लिये 'शिशु' नामक मासिक पत्र निकाला। वह बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुआ और लगभग 40 वर्ष तक निरन्तर निकलता रहा। इलाहाबाद में उनका कार्यालय उस समय इलाहाबाद के प्रायः सभी साहित्यकारों सर्वश्री पुरुषोत्तमदास टंडन, रामजीलाल शर्मा, श्यामसुन्दरदास, आदि का मिलन स्थल रहता था। सन् 1942 में लखनऊ में उनका स्वर्गवास हो गया। उन्होंने स्वयं भी बच्चों के लिए बहुत सी कवितायें लिखी थीं। उनकी कथात्मक बाल कविताओं का एक संकलन 'चुन्नू-मुन्नू' नाम से सन् 1932 में छपा था। बाल साहित्य के विकास में उनका बड़ा योगदान रहा है। ठाकुर श्रीनाथ सिंह ने अपने लेखकीय जीवन का प्रारम्भ उन्हीं के सम्पर्क से किया। उनकी एक सुप्रसिद्ध बालोपयोगी कविता 'हाऊ और बिलाऊ' की कुछ पंक्तियां हैं -

किसी गाँव में थे दो भाई हाऊ और बिलाऊ
दोनों में था बड़ा बिलाऊ छोटा भाई हाऊ।
था धनवान बिलाऊ पर था वह स्वभाव का खोटा
था गरीब पर चतुर बहुत था हाऊ भाई छोटा।
गाय बैल थे बहुत बिलाऊ के घर रुपया पैसा
पर गरीब हाऊ के केवल था इक बूढ़ा भैंसा। इत्यादि

रामजीलाल शर्मा -- उनका जन्म सन् 1877 में ग्राम उतराला जिला मेरठ में हुआ था। उन्होंने घर पर ही अपने पिता से हिन्दी और संस्कृत सीखी और उनके साहित्य का अध्ययन किया। सन् 1905 में वह इंडियन प्रेस की सेवा में नियुक्त होकर

पुस्तकों का सम्पादन किया। बाद में प्रयाग में हिन्दी प्रेस नाम से अपना एक अलग प्रेस खोल लिया। सन् 1910 में 'विद्यार्थी' नामक एक मासिक पत्र निकाला जिसने उस समय के विद्यार्थी जगत में एक हलचल मचा दी थी। सभी बड़े-बड़े लेखकों का सहयोग उनके इस पत्र को प्राप्त था। सन् 1927 में 'खिलौना' नामक एक पत्र बच्चों के लिए निकाला। उसके 3 वर्ष बाद ही सन् 1930 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनके सुयोग्य पुत्र रघुनन्दन शर्मा उसके बाद भी 'खिलौना' का सम्पादन करते रहे और वह सन् 40 तक निकलता रहा। रामजी लाल शर्मा जी ने स्वयं भी बच्चों के लिए बहुत लिखा। उनकी बाल रामायण, बाल भागवत, बाल गीत, टके सेर मुक्ति, टके सेर लक्ष्मी आदि लगभग 50 पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत-सी कवितायें भी लिखीं। जिनमें से कुछ उ.प्र. में विभिन्न कक्षाओं की पाठ्य पुस्तकों में भी निर्धारित रहीं। उनकी एक कविता है -

मदरसे जाते पढ़ने खूब बालकों से रखते हैं मेल
शाम को घर आ सबके साथ द्वार पर अपने खेलें खेल
शान से अहा एक किक मार खेलते हँस-हँसकर फुटबाल
खिलाड़ी बने उछलते खूब हमारे लाला लल्लू लाल।

गिरिजा कुमार घोष -- उनका जन्म सन् 1878 में चौबिस परगना बंगाल में हुआ था। वह अपने परिवारजनों के साथ बचपन में ही आजीविका के लिए प्रयाग आ गये थे। वहीं उनकी शिक्षा-दीक्षा हुई। विद्यार्थी काल से ही साहित्य में रुचि हो जाने के कारण हिन्दी में भी 'पार्वती नन्दन' नाम से लिखने लगे थे। वयस्क होकर वह इंडियन प्रेस के भागीदार हो गये और उसी में काम भी करने लगे। बाद में लीडर प्रेस के मैनेजर नियुक्त हुए। वहाँ एक अंग्रेज डाइरेक्टर से झगड़ा हो जाने के कारण उसे छोड़ दिया और स्वतन्त्र रूप से लेखन कार्य करने लगे। उन्होंने लड़कियों के लिए शिक्षा की एक पुस्तक लिखी थी जो उसी वर्ष पाठ्यक्रम में निर्धारित हो गई थी। बच्चों के लिए कवितायें भी लिखते थे। उनका निधन 1920 में ही हो गया। उनकी 'वीरबाला' नामक पद्य नाटिका का एक अंश है -

सावधान! सावधान! कर में लेकर तीर कमान
भारत जननी आगे आतीं ध्यान धरो भारत सन्तान।
करें हमारी पूजा लोग, चूको मत अब यह संयोग
हम सब का आदर करने में जग में पाओ सुख सम्मान।

एक दो और तीन चार, बढ़ती जाओ अब की बार
पांति पांति से खड़ी रहो सब, सावधान हो धरो कृपाण।
पांव दाहिना चलो उठाय, आगे बढ़ना पांव मिलाय
पांत किसी की टूट न जाये, हिले नहीं कर तीर कमान। इत्यादि

लोचन प्रसाद पांडेय -- उनका जन्म 1886 में विलासपुर जनपद के बालपुर ग्राम में हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा उसी ग्राम में उनके पिता द्वारा स्थापित एक पाठशाला में हुई। उसके बाद उन्होंने संवलपुर हाई स्कूल में पढ़कर कलकत्ता वि. वि. से एन्ट्रेस परीक्षा पास की और फिर काशी के सेन्ट्रल हिन्दू कालिज में शिक्षा प्राप्त की। सन् 1904 से उनकी रुचि कविता लिखने में हुई। उनकी पहली कविता 1905 में बालकृष्ण भट्ट द्वारा सम्पादित 'हिन्दी प्रदीप' में प्रकाशित हुई थी। हिन्दी के अतिरिक्त उड़िया, बंगला, अंग्रेजी भाषाओं पर भी उनका समान अधिकार था। पुरातत्व में उनकी विशेष रुचि थी। बड़ों के लिए गद्य और पद्य में अनेक महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखने के साथ-साथ उन्होंने बच्चों के लिए भी लिखने की ओर ध्यान दिया था। जिसका प्रमाण उनके द्वारा तैयार की हुई रीडरें तथा 'बाल विनोद', 'बालिका विनोद', 'पद्य पुष्पांजलि' आदि पुस्तकें हैं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने सन् 1948 के मेरठ अधिवेशन में उन्हें 'साहित्य वाचस्पति' उपाधि से सम्मानित किया। उनका स्वर्गवास सन् 1959 में रायगढ़ में हुआ। उनकी एक बाल कविता है -

खेल समय खेलो तुम सब मिल, करो समय पर अपना काम
उद्योगी हर्षित होने की है यह प्यारे रीति ललाम।
जो कुछ करते हो मन देकर करो सदा तुम सुख दाई
काम अधूरे कभी जगत में ठीक नहीं होते भाई।
एक समय तुम एक काम को पूर्ण रीति से सदा करो
प्रथा सर्व सम्मत है प्यारे तुम भी इस पर ध्यान धरो।
व्यर्थ व्यतीत समय करने से निंदित होता है परिणाम
इससे खेला करो समय पर, करो समय पर अपना काम।

मन्नन द्विवेदी गजपुरी -- उनका जन्म 1885 में ग्राम गजपुरी जिला गोरखपुर में हुआ था। बनारस के राजकीय कालिज से उन्होंने बी.ए. पास किया और उसके बाद ही उनकी नियुक्ति उ.प्र. के शासन में तहसीलदार के पद पर हो गई। आजमगढ़

भी वह अपनी साहित्यिक रुचि को बनाये रहते थे और अपने लेखन में निर्भीकता का परिचय देते रहते थे। सन् 1921 में अल्पायु में ही उनका स्वर्गवास हो गया। बच्चों के लिए उन्होंने कई कवितायें लिखी हैं। 1911 में लिखी 'मातृभूमि' कविता में उन्होंने बच्चों की ओर से देश की वन्दना की है। उनकी यह 'विनती' भी बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुई थी –

विनती सुन लो हे भगवान
हम सब बालक हैं नादान।
विद्या बुद्धि नहीं कुछ पास
हमें बना लो अपना दास।
बुरे काम से हमें बचाना
खूब पढ़ाना खूब लिखाना।
हमें सहारा देते रहना
खबर हमारी लेते रहना।
तुमको शीश नवाते हैं हम
विद्या पढ़ने आते हैं हम।

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन -- युवावस्था में टंडन जी कवि भी थे। उनका जन्म सन् 1882 में प्रयाग में हुआ था। वहीं उन्होंने शिक्षा प्राप्त की। सन् 1904 में बी.ए. पास किया और वकालत की परीक्षा पास करके वकालत शुरू कर दी और फिर एम.ए. भी कर लिया। महामना मालवीय जी की कृपा से नाभा स्टेट पंजाब में कानून मन्त्री होकर चले गये थे। पर कुछ वर्ष बाद ही फिर प्रयाग लौट आये और राजनीति में भी सक्रिय भाग लेने लगे और देश के सभी बड़े-बड़े नेताओं के संपर्क में आये। सन् 33 में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कानपुर अधिवेशन के अध्यक्ष बनाये गये। हिन्दी भाषा के वह प्रमुख समर्थक और पक्षधर थे। अपने तपस्वी जीवन और समाज सेवा के कारण वह उत्तर प्रदेश के गांधी कहलाते थे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद उन्होंने ही संविधान में हिन्दी को राष्ट्र भाषा की मान्यता दिलाई। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के निर्माण में उनका ही विशेष योगदान रहा था। सन् 62 में उनका स्वर्गवास हो गया। उन्होंने 'बन्दर सभा महाकाव्य' नाम से लोक भाषा और आल्हा-छन्द में एक लम्बी कविता सन् 1905 में दिल्ली दरवार के अवसर पर लिखी थी जो बच्चों में भी बहुत लोकप्रिय हुई। उसका कुछ अंश है –

हियां की बातैं हियनै रह गईं अब आगै के सुनौ हवाल

गढ़ बन्दर के देश बीच माँ पड़ा रहा एक खेत विशाल।
सौ जोजन लम्बा अरु चौड़ा अरबन बानर जायं समाय
तामें बानर भये इकट्ठा जौन बचे वे आवैं धाय।
जब सगिरा मैदनवा भरिगा पूछें टोपी लगीं दिखाय
सबके सब कुरसिन से उछले हाथ पांव से ताल बजाय।
इतने माँ मल्लू-सा आये बंदरी और मुसाहिब साथ
बंदरी बड़ी चटक चमकीली थामे मल्लू-सा को हाथ।
ओढ़े गउन लगाये टोपी हीरे जड़े पांत के पांत
मटकत आवत भाव दिखावत आखिर मेहरारू की जात।

मैथिलीशरण गुप्त -- उनका जन्म सन् 1886 में चिरगांव झांसी में हुआ था। शिक्षा दीक्षा घर पर ही हुई। स्वयं अध्ययन करके उन्होंने अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू, फारसी और बंगाली भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। कविता लिखने में उनकी रुचि बचपन से ही थी। सन् 1917 में जब उनकी पुस्तक 'भारत भारती' प्रकाशित हुई तो पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी ने उसे 'युगान्तर कारणी' रचना कहा था। उन्होंने बड़ों के लिये बहुत-सी पुस्तकें लिखी हैं जिनके कारण उन्हें राष्ट्रकवि कहा जाता था। वह राज्यसभा के मनोनीत सदस्य भी रहे थे। स्कूलों की पाठ्य पुस्तकों में उनकी कवितायें पाठ्यक्रम में निर्धारित रहती थीं। सन् 1964 में उनका स्वर्गवास हो गया। उन्होंने बहुत सी बालोपयोगी कवितायें भी लिखी थीं जिनमें से 'ओला' शीर्षक एक कविता सन् 1906 में सरस्वती मासिक पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। पर उनकी बालोपयोगी कविताओं का अलग से कोई संकलन प्रकाशित नहीं हुआ। उनकी एक कविता है-

होकर कौतूहल के बस में। गया एक दिन मैं सरकस में।।
भय विस्मय के खेल अनोखे। देखे बहु व्यायाम अनोखे।।
एक बड़ा-सा बन्दर आया। उसने झटपट लैम्प जलाया।।
डट कुर्सी पर पुस्तक खोली। आ तब तक मैना यों बोली।।
'हाजिर है हजूर का घोड़ा।' चौंक उठाया उसने कोड़ा।।
आया तब तक एक बछेरा। चढ़ बन्दर ने उसको फेरा।।
टट्टू ने भी किया सपाटा। टट्टी फांदी, चक्कर काटा।।
फिर बन्दर कुर्सी पर बैठा। मुँह में चुरट दबाकर ऐंठा।।
माचिस लेकर उसे जलाया। और धुआं भी खूब उड़ाया।।

एक मनुष्य अन्त में आया। पकड़े हुए सिंह को लाया।।
मनुज सिंह की देख लड़ाई। की मैंने इस भांति बड़ाई।।
किसे साहसी जन डरता है। नरनाहर को वश करता है।।
मेरा एक मित्र तब बोला। भाई तू भी है बस भोला।।
'यह सिंही का जना हुआ है। किन्तु स्यार यह बना हुआ है।।
यह पिंजड़े में बन्द रहा है। नहीं कभी स्वच्छन्द रहा है।।
छोटे से यह पकड़ा आया। मार मार कर गया सिखाया।।
अपने को भी भूल गया है। आती इस पर मुझे दया है।।

लल्ली प्रसाद पांडेय -- उनका जन्म सन् 1886 में सानोदा, सागर, मध्य भारत में हुआ था। 'हिन्दी केसरी' नागपुर तथा 'कलकत्ता समाचार' के सम्पादकीय विभाग में काम करने के बाद उन्होंने सन् 1917 में इलाहाबाद आकर इंडियन प्रेस में नौकरी कर ली थी। तभी से वह 'बालसखा' के सम्पादन में बद्रीनाथ भट्ट आदि सम्पादकों के साथ सहयोगी के रूप में कार्य करते रहे। हिन्दी साहित्य के विकास में जो योगदान 'सरस्वती' का रहा है हिन्दी में बाल साहित्य के विकास में वही योगदान 'बाल सखा' का। पांडेय जी ने बहुत से लेखकों को प्रोत्साहित करके उनसे बाल साहित्य लिखवाया और बहुत से नये लेखकों को लिखना सिखाया। इसलिए हम उन्हें हिन्दी में बाल साहित्य का पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी कह सकते हैं। उन्हें हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत, मराठी और बंगाली भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। वह बड़े स्वाभिमानी और सुदृढ़ व्यक्तित्व के धनी और विज्ञापन प्रचार से दूर रहकर काम करने वाले व्यक्ति थे। अक्सर वह छद्म नाम से भी लिख दिया करते थे। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत कम लिखा है पर जो कुछ भी लिखा है बहुत ठोस है। सन् 1977 में उनका निधन हो गया। उनकी एक बालोपयोगी कविता है -

वानर जी

आँखों पर चश्मा है सुन्दर सिर पर गाँधी टोपी है,
और गले में पड़ा दुपट्टा निकली बाहर चोटी है।
टेबिल लगा बैठ कुर्सी पर लिखते हैं वानर जी लेख,
करते हैं कविता का कौशल रहती जिसमें मीन न मेख।
तुकबन्दी प्रति मास सुनाते लिखते लेख विचार-विचार,
कथा कहानी और पहेली करते नई-नई तैयार।
रंग बिरंगे चित्र दिखाते करते हँसी ठठोली हैं,
लड़के लड़की सभी किलकते सुनकर बन्दर बोली है।

पं. सिद्धनाथ दीक्षित 'संत' -- उनका जन्म सन् 1885 में कानपुर जिला के नौगवां ग्राम में हुआ था। उनके एक पूर्वज आगरा की भदावर रियासत के राजा के गुरु और राजकवि थे। उन्हें कई रजवाड़ों से कानपुर, हमीरपुर और जयपुर में जागीरें प्राप्त हुई थीं। दीक्षित जी 12 वर्ष के ही थे तो इनके पिता रामनाथ दीक्षित का स्वर्गवास हो गया था। प्रारम्भ में वह कानपुर जिला परिषद के एक स्कूल में अध्यापक हो गये थे। कविता लिखने में रुचि थी। वहाँ से 'हिन्दी केसरी' नागपुर में लेखन कार्य करने के लिए बुला लिये गये। 1908 में प्रयाग आ गये और पं. जगन्नाथ शुक्ल द्वारा संचालित 'सुधानिधि' मासिक में कार्य करने लगे थे। 'बालसखा' आदि सभी बच्चों के प्रमुख पत्रों में उनकी कवितायें प्रकाशित हुआ करती थीं। सन् 1958 में कानपुर में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक कविता है -

दयामय दीजे यह वरदान
हम सब बाल ब्रह्मचारी हों, होवें बुद्धि निधान
विद्या पढ़ें विवेकी होवें, करें बड़ों का मान।
करें समाज धर्म की सेवा हित अनहित लें जान
जो कुछ करें देश हित आवें जिससे हो उत्थान।।

राम नरेश त्रिपाठी -- उनका जन्म 1889 में ग्राम कोइरीपुर जिला जौनपुर में हुआ था। ग्राम के प्राइमरी स्कूल में शिक्षा प्राप्त की। उसके बाद पढ़ने की इच्छा से अपने कट्टर सनातनी पंडित पिता की अवज्ञा करके जौनपुर अंग्रेजी पढ़ने के लिए चले गये और वहाँ से कलकत्ता चले गये। वहाँ से राजस्थान जाकर शेखावटी नामक स्थान पर रहने लगे। इसी काल में उन्होंने बंगाली, राजस्थानी, गुजराती भाषायें सीख लीं। उन्होंने लोक गीतों के चयन के लिये कश्मीर से कन्याकुमारी और सौराष्ट्र से गौहाटी तक सारे देश का भ्रमण किया था। उन्होंने कविता कौमुदी 7 भाग नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना की थी। सन् 1915 में पिता के स्वर्गवास का समाचार सुनकर वह घर वापस आये थे और सन् 1917 में प्रयाग में आकर बस गये। वहाँ उन्होंने सन् 1924 में हिन्दी मन्दिर प्रेस की स्थापना करके प्रकाशन कार्य शुरु किया। सन् 1931 में उन्होंने 'वानर' नाम से एक बालोपयोगी मासिक पत्र भी निकाला था जो लगभग सन् 37 तक निकलता रहा। गद्य और पद्य में बच्चों के लिए उन्होंने बहुत लिखा है। उनकी 'हँसू की हिम्मत', 'मोहन माला', 'मोहन भोग', 'वानर संगीत', कविता विनोद दो भाग, मोतीचूर के लड्डू, हिन्दी ज्ञानोदय रीडर आदि अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। सन् 1962 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनका एक बाल गीत है -

आई एक छींक नंदू को एक रोज वह इतना छींका,
इतना छींका, इतना छींका इतना छींका, इतना छींका।
सब पत्ते गिर गये पेड़ के धोखा उन्हें हुआ आँधी का।।

डॉ. विद्याभूषण 'विभु' -- डॉ. विद्याभूषण 'विभु' का जन्म सन् 1894 में ग्राम नाटरपुर एटा में हुआ था। भूगोल विषय लेकर उन्होंने बी.ए. पास किया। फिर एम. ए. पास करने के बाद प्रयाग विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. किया और डी.ए.बी. इन्टर कालिज में अध्यापक हो गये। रायल भूगोल सोसायटी तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन की भूगोल समिति के वह सदस्य भी रहे। बच्चों के लिए कविता लिखने का उन्हें अपने विद्यार्थी जीवन से ही शौक था। उनके बाल गीतों पर आधुनिकता की छाप है। पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी जी के शब्दों में हिन्दी में उनके ही बाल गीत ऐसे हैं जो अंग्रेजी बाल गीतों के समकक्ष रखे जा सकते हैं। उन्होंने छोटी आयु के बच्चों के लिए दो-दो चार-चार पंक्तियों की सरल तुकबन्दियाँ लिखने का कार्य सबसे पहले किया। 'चार साथी', 'चन्दा', 'बबुआ', 'पंख शंख', 'ता', 'गोबर गणेश', 'लाल बुझक्कड़', 'शेख चिल्ली', 'ढपोर शंख', 'खेलो मैया', 'चाँद तारा', 'खेल खिलौना', 'लाल खिलौना', 'गुड़िया', 'फुल बगिया में', 'पाँच पंखुरियाँ', 'राष्ट्रीय राग' 3 भाग, 'चुनमुन', 'गुंजाफल', 'गगन गंगा', 'कोका बेली', 'सागर है या जादूगर' आदि उनकी लिखी बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनका स्वर्गवास 1965 में हो गया। यहाँ उनका एक बालगीत उद्धृत है -

घूम हाथी, झूम हाथी।
घूम हाथी, झूम हाथी।।
राजा झूमें रानी झूमें, झूमें राज कुमार।
घोड़े झूमें फौजें झूमें, झूमें सब दरबार।।
हाथी झूम झूम झूम।
हाथी घूम घूम घूम।।
झूम झूम, घूम घूम, घूम हाथी, झूम हाथी।
धरती घूमें, बादल घूमें, सूरज चाँद सितारे।
चुनिया घूमें मुनिया घूमें, घूमें राज दुलारे।।
हाथी झूम झूम झूम।
हाथी घूम घूम घूम।।

राज महल में बाँदी झूमे पनघट पर पनिहारी।
पीलवान का अंकुश घूमें सोने की अम्बारी।।
हाथी झूम झूम झूम।
हाथी घूम घूम घूम।।
घूम झूम, झूम घूम, घूम हाथी, झूम हाथी।

गिरिजा दत्त शुक्ल 'गिरीश' -- पं. गिरिजा दत्त शुक्ल 'गिरीश' का जन्म जौनपुर जिले के जोदईपुर गाँव में सन् 1898 में हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर हुई। बाद में वह प्रयाग आकर पढ़ने लगे और बी.ए., एल-एल.बी. तक शिक्षा प्राप्त की। उनका सारा जीवन साहित्य-सेवा में बीता। उपन्यास, निबन्ध, आलोचना, कविता सभी कुछ उन्होंने लिखे हैं। उनकी कीर्ति का प्रमुख आधार 'ताड़का वध' नामक महाकाव्य है। वह उत्तर प्रदेशीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के संग्रह मन्त्री रहे। सन् 1949 के अधिवेशन में वह साहित्य परिषद के सभापति भी थे। 6 जून सन् 1959 को दारागंज में उनका स्वर्गवास हो गया। बाल साहित्य की श्रीवृद्धि में उनकी विशेष रुचि थी। 'बाल सखा' मासिक का सम्पादन भी उन्होंने किया था। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत सी सुन्दर कवितायें लिखी हैं। एक यहाँ प्रस्तुत है -

यहीं हिमालय-सा पहाड़ है यहीं गंग की धारा है।
जमुना लहराती है सुन्दर भारत कितना प्यारा है।।
फल फूलों से भरी भूमि है खेतों में हरियाली है।
आमों की डालों पर बैठी गाती कोयल काली है।।
बच्चो! माँ ने पाल पोस कर तुमको बड़ा बनाया है।
लेकिन यह मत भूलो तुमने अन्न कहाँ का खाया है।।
तुमने पानी पिया कहाँ का खेले मिट्टी में किसकी।
पले हवा में किसकी बोलो, बच्चो! प्यारे भारत की।।

जगदीश झा 'विमल' -- उनका जन्म बिहार प्रदेश के भागलपुर जनपद के कुमेठा नामक ग्राम में सन् 1889 में हुआ था। शिक्षा समाप्त करने के बाद वह सन 1911 में भागलपुर के सी.एम.एस. स्कूल में अध्यापक हो गये थे और बाद में अनेक स्थानों पर शिक्षण कार्य करते हुये, बड़ों के साथ-साथ बाल साहित्य की सेवा करते रहे। उनकी कवितायें उस समय के सभी प्रमुख पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं।

‘पद्य प्रसून’ और ‘पद्य संग्रह’ उनकी दो बालोपयोगी कविता पुस्तकें भी प्रकाशित हुई थीं। सन् 1942 में उनका स्वर्गवास हो गया था। उनकी एक बाल कविता है -

ओला

काली काली घटा निराली।
घिर आई नभ में मतवाली।
गोल गोल मोती के दाने।
भू पर ओले लगी गिराने।
पशु पक्षी डर से भागे घर।
फूल गिरे नभ से धरती पर।
गलकर हुआ देख वह पानी।
रही न उसकी कहीं निशानी।
बुरे दूसरों को दुःख देकर।
खुद भी मिट जाते हैं रोकर।

प्रो. मनोरंजन एम.ए. -- श्री मनोरंजन प्रसाद सिन्हा का जन्म 1900 में डुमराँव जिला शाहबाद बिहार में हुआ था। अपने विद्यार्थी जीवन में ही वह सामाजिक कार्यों में भी सक्रिय भाग लेने लगे थे। सन् 1920 में कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन में विषय निर्वाचन समिति के सदस्य चुने गए। हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस से अंग्रेजी विषय लेकर उन्होंने प्रथम श्रेणी में एम.ए. पास किया। वहीं प्राध्यापक हो गए। उसके बाद राजेन्द्र कालिज, छपरा में प्रिंसिपल होकर चले गए। सन् 1960 में उसी पद से अवकाश ग्रहण किया। फिर हिन्दी विद्यापीठ, देवघर वैद्यनाथ धाम में उप-कुलपति रहे। उनकी हास्य रस की कविताओं का एक संग्रह ‘गुन गुन’ नाम से प्रकाशित हुआ था। भोजपुरी साहित्य में वह अपनी ‘फिरंगिया’ कविता के कारण बहुत प्रसिद्ध हुए। बच्चों के लिए भी उन्होंने बहुत-सी सुन्दर कवितायें लिखी हैं। वर्ष 1971 में उनका निधन हो गया। उनकी बालोपयोगी कविता है -

जागो भैया

शोर मचाती है गौरैया। हुआ सबेरा जागो भैया।।
उठो उठो अब आँखें खोलो। प्रातः कृत्य करो मुँह धोलो।।
गाती हैं सब प्रात चिरैया। हुआ सबेरा जागो भैया।।
सुन्दर स्वच्छ हवा बहती है। शान्त मन्द स्वर में कहती है।।
हर लूँगी मैं पीर बलैया। हुआ सबेरा जागो भैया।।

सूरज से पहिले जग जाओ। जीवन का आनन्द उठाओ।।
नाचो गाओ ताता थैया। हुआ सबेरा जागो भैया।।
उछलो कूदो धूम मचाओ। पढ़ने में निज चित्त लगाओ।।
राजा मेरे कुंवर कन्हैया। हुआ सबेरा जागो भैया।।

मुरारी लाल शर्मा 'बालबन्धु' -- श्री मुरारी लाल शर्मा का जन्म सन् 1893 में ग्राम साई मल की टीकरी जिला मेरठ में हुआ था। स्कूल लीविंग परीक्षा पास करने के बाद वह अध्यापक हो गये और कई स्कूलों में कार्य करने के उपरान्त सन् 1953 में नानक चन्द हाई स्कूल मेरठ में अध्यापक पद से अवकाश ग्रहण किया। 'भारतीय बालक' तथा 'सेवा' नामक बालोपयोगी पत्रिकाओं का उन्होंने सम्पादन भी किया था। बच्चों के लिए उनकी 'साहसी बच्चे', 'होनहार बिरवे', 'गोदी भरे लाल', 'मौत से अठखेलियाँ' 'ज्ञान गंगा', 'कोकिला', 'संगीत सुधा' आदि पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनके बाल गीत स्कूलों तथा बालचर संस्थाओं में बच्चों द्वारा गाये जाते हैं। सन् 1961 में उनका निधन हो गया। उनका एक सुप्रसिद्ध बाल गीत यहाँ प्रस्तुत है -

वह शक्ति हमें दो दयानिधे! कर्तव्य मार्ग पर डट जावें।
पर सेवा पर उपकार में हम जग जीवन सफल बना जावें।।
हम दीन हीन निबलों विकलों के सेवक बन सन्ताप हरें।
जो हैं अटके भूले भटके उनको तारें खुद तर जावें।।
छल दम्भ द्वेष पाखंड झूठ अन्याय से निशिदिन दूर रहें।
जीवन हो शुद्ध सरल अपना शुचि प्रेम सुधारस बरसावें।।
निज आन बान मर्यादा का प्रभु ध्यान रहे अभिमान रहे।
जिस देश जाति में जन्म लिया बलिदान उसी पर हो जावें।।

देवीप्रसाद गुप्त 'कुसुमाकर' -- श्री देवीप्रसाद गुप्त 'कुसुमाकर' जी का जन्म सन् 1893 में ग्राम बानखेड़ी जिला होशंगाबाद में हुआ था। उनके पिता उर्दू फारसी के अच्छे विद्वान थे। अतएव इन्हीं भाषाओं द्वारा उनकी शिक्षा प्रारम्भ हुई। राबर्टसन कालिज जबलपुर से बी.ए. और नागपुर से कानून की परीक्षा उन्होंने पास की और वकालत करने लगे। सोहागपुर में वकालत करते-करते ही सन् 1955 में उनका स्वर्गवास हो गया। साहित्य के क्षेत्र में अग्रसर होने के लिए उन्हें आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा पर्याप्त प्रोत्साहन मिला था। बच्चों के लिए भी उन्होंने बहुत-सी सुन्दर कवितायें लिखी हैं। उनकी एक कविता हम उदाहरण के लिए यहाँ प्रस्तुत करते हैं -

दादा का मुँह

दादा का जब मुँह चलता है मुझे हँसी तब आती है।
अम्मा मेरे कान खींच कर मुझको डांट बताती है।।
किन्तु हंसी बढ़ती जाती है मेरे वश की बात नहीं।
चलते देख पोपले मुख को रुक सकती है हंसी कहीं।।
ठुड्डी की वह उछल कूद-सी और पिचकना गालों का।
और कवायद वह होठों की नाच मूंछ के बालों का।
मित्र! देखते ही बनता है बहुत कठिन है समझाना।
तुम्हें देखना हो तो तुम भी ऐसे समय चले आना।।

"स्वर्ण सहोदर" -- श्री सभा मोहन अवधिया 'स्वर्ण सहोदर' का जन्म सन् 1902 में शहापुरा जिला मण्डला (म.प्र.) में हुआ था सन् 1980 में जबलपुर में स्वर्गवास हो गया। हिन्दी मिडिल तथा नार्मल स्कूल की परीक्षा पास करने के बाद वह अपने ग्राम की पाठशाला में अध्यापक हो गये थे और वहीं 31 वर्ष तक कार्य करने के उपरान्त सन् 1950 में प्रधानाध्यापक पद से अवकाश ग्रहण किया। बच्चों के कवियों में उनका प्रमुख स्थान है। उन्होंने बच्चों के लिए ही विशेष रूप से बहुत लिखा है। यदि उनका लिखा सब प्रकाशित हो जाये तो दर्जनों पुस्तकें हो सकती हैं। उनकी लिखी 'चगन-मगन', 'गिनती के गीत', 'नटखट हम', 'हर-हर बम', 'ललकार', 'लाल फाग', 'बाल खिलौना', 'सुनहले गीत', 'वीर बालक बादल', 'वीर हकीकत राय', 'वीर शतमन्यु', 'बच्चों के गीत' 4 भाग, 'हम्मीर राव' आदि पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उन्होंने बड़ा परिश्रम करके एक बहुत बड़ा मुहावरा कोश भी तैयार किया था जो अप्रकाशित ही रह गया। हिन्दी संस्थान उ.प्र. ने उनकी बाल साहित्य की विशेष सेवाओं के लिए पांच हजार रुपये का पुरस्कार देकर सम्मानित किया था। सन् 1980 में उनका निधन हो गया। यहाँ उनकी एक कविता के कुछ छन्द प्रस्तुत हैं -

नटखट हम हां, नटखट हम। करने निकले खटपट हम।।
आ गये लड़के पा गये हम। बन्दर देख लुभा गये हम।।
बन्दर को बिजकावें हम। बन्दर दौड़ा भागे हम।।
बच गये लड़के, बच गये हम।
बर्र का छत्ता पा गये हम। बांस उठाकर आ गये हम।।
छत्ते लगे गिराने हम। ऊधम लगे मचाने हम।।
छत्ता टूटा बर्र उड़े। आ लड़कों पर टूट पड़े।।

झटपट हट कर छिप गये हम। बच गये लड़के बच गये हम।।

बिच्छू एक पकड़ लाये। उसे छिपा कर ले आये।।
सबक जांचने भिड़े गुरू। हमने नाटक किया शुरू।।
खोला बिच्छू चुपके से। बैठे पीछे दुबके से।।
बच गये गुरू जी खिसके हम। पिट गये लड़के बच गये हम।।

बुढ़िया निकली पहुंचे हम। लगे चिढ़ाने जम जम जम।।
बुढ़िया खीझे डरे न हम। ऊधम करना करें न कम।।
बुढ़िया आई नाकों दम। लगी पीटने धम धम धम।।
जान बचाकर भाग गये हम। पिट गये लड़के बच गये हम।।

शम्भु दयाल सक्सेना -- शम्भु दयाल सक्सेना का जन्म सन् 1901 में उत्तर प्रदेश के फर्रूखाबाद नगर में हुआ था। अंग्रेजी शिक्षा की कोई उपाधि उन्होंने प्राप्त नहीं की। प्रारम्भ से वह इंडियन प्रेस प्रयाग में नौकर हो गये थे। सन् 1931 में उन्होंने फर्रूखाबाद में नवयुग ग्रन्थ कुटीर नाम से एक प्रकाशन संस्था स्थापित की और इसकी एक शाखा बीकानेर में भी खोली। वहाँ उस शाखा ने इतनी उन्नति की कि वह अब राजस्थान में एक प्रमुख प्रकाशन संस्था है। 'सेनानी' नाम से एक साप्ताहिक पत्र भी वहां से निकलता था। उन्होंने कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास सभी पुस्तकें बड़ों के लिये लिखी हैं। सन् 1976 में उनका स्वर्गवास हो गया। बच्चों के लिये उनकी 'पालना' 'मधुलोरी', 'लोरी और प्रभाती' 'फूलों का गीत', 'चन्द्र लोरी', 'आरी निदिया', 'रेशम झूला', 'शिशु लोरी', 'नाचो गाओ', 'दुपहरिया', 'बाल कवितावली' आदि लगभग 20 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनका एक बाल गीत हम यहाँ उद्धृत करते हैं -

खिड़की

खिड़की है मकान की आंख। लेते सभी उसी से झांक।।
आता जब कोई इस ओर। खिड़की तब कर देती शोर।।
अगर जानना हो यह बात। कहां जायेंगे पापा प्रात।
तो बैठो खिड़की को खोल। देती पीट भेद का ढोल।।
मां के मन्दिर की यदि राह। तुम्हें जानने की हो चाह।।
खिड़की में बैठो चुपचाप। बतला देती आपने आप।।

हो सीखना बहिन का खेल। करो दौड़ खिड़की से मेल।।
लोगे सभी भेद तुम जान। तब दीदी होगी हैरान।

ठाकुर श्रीनाथ सिंह -- ठाकुर श्रीनाथ सिंह का जन्म सन् 1901 में हुआ था। उन्होंने कोई अंग्रेजी शिक्षा की डिग्री नहीं प्राप्त की। एक स्वतन्त्र पत्रकार के रूप में अपना जीवन पंडित सुदर्शनाचार्य के साथ प्रारम्भ किया। 'शिशु', 'देश बन्धु', 'बाल सखा', 'अभ्युदय', 'सरस्वती', 'देश हित', 'दीदी', 'बाल बोध' और 'हल' इत्यादि अनेक पत्रों के वह सम्पादक रहे। बाद में स्वयं अपना प्रेस खोलकर प्रयाग में 'दीदी' और 'बाल बोध' पत्रिकायें निकालीं। बड़ों के लिए अनेक उपन्यास और कहानियों की पुस्तकें लिखने के अतिरिक्त बच्चों के लिए उन्होंने बड़े सुन्दर बालगीत लिखे हैं। 'गुब्बारा', 'दोनों भाई', 'बाल भारती', 'लंपा चंपा', 'मीठी तानें', 'पिपहरी', 'खेल घर' तथा 'बाल कवितावली' इत्यादि उनके बाल गीतों के कई संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। सन् 1996 में उनका निधन हो गया। उनका एक बाल गीत यहाँ प्रस्तुत है -

मक्खी की निगाह

कितनी बड़ी दीखती होंगी मक्खी को चीजें छोटी।
सागर-सा प्याला भर जल, पर्वत-सी एक कौर रोटी।।
खिला फूल गुलदस्ते जैसा काँटा भारी भाला-सा।
तालों का सूराख उसे होगा बैरगिया नाला सा।।
हरे भरे मैदान की तरह होगा एक पीपल का पात।
पेड़ों के समूह सा होगा बचा खुचा थाली का भात।।
ओस बूंद दरपण-सी होगी सरसों होगी बैल समान।
साँस मनुज की आंधी-सी करती होगी उसको हैरान।।

गणेश दत्त शर्मा 'इन्द्र' -- उनका जन्म सन् 1894 में गुना, ग्वालियर में हुआ था। अंग्रेजी, संस्कृत, उर्दू, गुजराती, बंगला, गुरुमुखी कई भाषाओं का ज्ञान उन्होंने प्राप्त कर लिया था। सन् 1912 से ही वह कविता लिखने लगे थे। बाल साहित्य में उनकी विशेष रुचि थी। सन् 1914 में उन्होंने आगर (मालवा) से एक बाल मासिक 'बाल मनोरंजन' नाम से निकाला था। वह बच्चों का एक अत्यन्त सुन्दर और लोकप्रिय पत्र था। पर अर्थाभाव के कारण 'बाल मनोरंजन' अधिक समय तक निकल नहीं सका। बच्चों के लिए कवितायें भी लिखते थे। अपने समय के बाल साहित्यकारों में उनका प्रमुख स्थान था।

गोकुल चन्द्र शर्मा -- उनका जन्म सन् 1888 में ग्राम हरि का नगला जिला अलीगढ़ में हुआ था। 1906 से उन्होंने नार्मल स्कूल आगरा से बी.टी.सी. पास किया और धर्म समाज स्कूल अलीगढ़ में अध्यापक हो गये। सन् 1914 में मैट्रिक और फिर प्रयाग वि.वि. से बी.ए. और आगरा वि.वि. से एम.ए. पास किया और धर्म समाज स्कूल जब डिग्री कालिज बना तो उसी में हिन्दी संस्कृत विभाग के अध्यक्ष बन गये। उनकी बालोपयोगी कवितायें 'बाल सखा' आदि पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। 'पद्य प्रदीप' नाम से उनकी फुटकर कविताओं का एक संकलन प्रकाशित हुआ था और 'गांधी गौरव' और 'तपस्वी तिलक' दो पद्य जीवनियों की पुस्तकें भी उन्होंने लिखीं हैं। उ.प्र. के स्कूलों की पाठ्य पुस्तकों में उनकी कवितायें पाठ्यक्रम में निर्धारित रहती थीं। सन् 1958 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक कविता 'गूंज' की कुछ पंक्तियाँ हैं -

एक कुंए के ऊंचे तट पर,
गाता था लेटा चरवाहा।
उठी तरंग किया मुंह नीचे,
बोला हो हो हा हा हा हा।
भरकर यह आवाज कुएं में,
लौटी ज्यों ही त्यों ही ओ ओ।
हो हो हा हा हा हा हो हो,

....

वह उजड्ड बालक तब डरकर,
भागा घर को मुठ्ठी बाँधे।
आंसू आंखों में भर आये,
और रहा था चुप्पी साधे। इत्यादि

देवी दत्त शुक्ल -- उनका जन्म सन् 1888 में जिला उन्नाव में हुआ था उन्होंने उन्नाव में रहकर मैट्रिक तक शिक्षा प्राप्त की। सन् 1919 से 1945 तक इंडियन प्रेस की सेवा में 'सरस्वती' और 'बाल सखा' के सम्पादकीय विभाग में रहे। दोनों का सम्पादन उन्होंने सम्पादक बनकर भी किया। बच्चों के लिए भी कुछ कवितायें उन्होंने लिखी हैं जो एक संकलन के रूप में 'बाल कविता माला' नाम से प्रकाशित हुई हैं। सन् 1971 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक कविता है -

मैं काशी का रहने वाला उचक्कू मेरा नाम,

सदा मिठाई मैंने खाई दिया न एक छदाम।
पेड़ा बरफी और जलेबी खाये हैं भरपूर,
रबड़ी पेड़ा बड़ी इमरती लड्डू मोतीचूर।
पढ़ी पोथियाँ मैंने गुरू से छोटी बड़ी तमाम,
पंडित बनकर घर आया हूँ करने को आराम।
यहां बैदकी करके अब मैं पाऊं सबसे मान,
टके कमाकर घर बनवाऊं पक्का आलीशान।

आनन्दी प्रसाद श्रीवास्तव -- उनका जन्म 1899 में इलाहाबाद जिला के मलेहपुर ग्राम में हुआ था। शिक्षा समाप्त करने के बाद उन्होंने इंडियन प्रेस में नौकरी कर ली थी और सरस्वती के सम्पादकीय विभाग में काम करने लगे थे। बाद में उन्होंने वह नौकरी छोड़ दी और कायस्थ पाठशाला प्रयाग में अध्यापक हो गये थे। 'शिशु', 'बाल सखा', 'खिलौना' आदि सभी पत्रों में उनकी कवितायें प्रकाशित हुआ करती थीं। वह कभी-कभी 'किरीट' नाम से भी लिख दिया करते थे। उनकी- 'इन फूल के दलों में प्रभु गंध है तुम्हारी' कविता जो बहुत लोकप्रिय हुई थी, किरीट नाम से ही छपी थी। उसके बाद गीतों की दो तीन पुस्तकें भी प्रकाशित हुई थीं। गृहत्याग के कारण इनका निधन अज्ञात है। उनकी एक बालोपयोगी कविता है -

किस तरह मेढक फुदकता जा रहा,
देखने में क्या मजा है आ रहा।
कूदते चलते भला हो किसलिए,
तुम मचलते हो भला यों किसलिए।
बाप रे गिरना न थाली में कहीं
दाल के भीतर खटाई की तरह,
हाथ पर आ बैठ जाओ खेल लो
साथ मेरे आज भाई की तरह।
थे छिपे टर्रा रहे तुम तो कभी
पर नहीं क्यों बोल सकते हो अभी।
बात हमसे क्या करोगे तुम नहीं
देख लो तुम तो भगे जाते कहीं। इत्यादि

रामलोचन शर्मा 'कंटक' -- इनका जन्म सन् 1906 में दरभंगा जिला (बिहार) के रामपुर गाँव में हुआ था। यह प्रारम्भ से ही बड़े मेधावी छात्र रहे और अपनी कक्षा

में सदा प्रथम स्थान प्राप्त करते थे। उन्होंने हिन्दू विश्वविद्यालय से एम.ए. किया और नौकरी के सिलसिले में कलकत्ता चले गये और वहीं रहने लगे। बचपन से ही वह बच्चों के लिये कविता लिखा करते थे जो 'बालक' आदि पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। उन्होंने बच्चों के लिये कई पुस्तकें लिखी हैं। उनकी एक पुस्तक 'चमचम' के विषय में डा. गंगानाथ झा एम.ए., डी.लिट. ने लिखा था - "Cham cham is a delightful little book. It has been very much appreciated by my grand children." (चमचम एक बड़ी मजेदार पुस्तक है। मेरे नाती पोतों द्वारा वह खूब पसन्द की गई।) 'मोदक' और 'मोहन भोग' उनकी बालोपयोगी पद्य कथाओं की पुस्तकें प्रकाशित हुयी थीं और उन्होंने माइकेल मधुसूदन दत्त के एक नाटक का अनुवाद 'कसौटी' नाम से सरल भाषा में किया था। उनकी एक बाल कविता है -

कुत्ता एक सिंह से बोला आप भले ही हो मृगराज,
बढ़ चढ़ कर है कहीं आपसे लेकिन मेरे सुख का साज।
खाने को मुझको मिलते हैं दूध मलाई मछली माँस,
बड़े-बड़े पक्के महलों में मैं करता हूँ सुख से वास।
किंतु आपको भोजन में भी रहता है संदेह सदा,
दौड़-धूप यदि खुद न करें तो हो सकता वह भी न कदा।
कुत्ते का कहना यों सुनकर बोला सिंह जरा हंसकर,
अरे मूढ़ हो गया बहुत अब मत मुंह खोल पुनः, बस कर।
इतना भी तू नहीं समझता परवश है तेरा जीवन,
मालिक की रुचि पर करता है निर्भर तेरा तन मन धन।
जो न किसी की दया दृष्टि पर जीता, रहता सदा स्वतन्त्र,
धन्य-धन्य है वह सब सीखें उसके ही जीवन का मन्त्र।

जहूर बख्श -- उनका जन्म सन् 1897 में सागर जनपद के गढ़ा कोटा ग्राम में हुआ था। उनकी शिक्षा दीक्षा जबलपुर में हुई। वहीं से उन्होंने सन् 1912 में मिडिल पास करके नार्मल ट्रेनिंग की और सागर में नगरपालिका की पाठशाला में अध्यापक नियुक्त हो गये थे, अपने शिक्षण काल में ही वह श्री कामता प्रसाद गुरु तथा सुखराम चौबे गुणाकर के निकट सम्पर्क में आकर उनके कृपा पात्र बन चुके थे। सन् 48 तक अध्यापन कार्य में संलग्न रहे। उन्होंने सन! 1914 में ही अपनी माता की प्रेरणा से हिन्दी में लिखना प्रारम्भ कर दिया था। उन्होंने फारसी की सुप्रसिद्ध 'गुलिस्तां'

में मकान बनवाया। उसमें सन् 61 में उग्रवादियों ने आग लगा दी जिससे उनकी लगभग 17 हजार पुस्तकें और पांडुलिपियां भी जलकर नष्ट हो गयीं। 40 वर्ष तक विशेष रूप से बच्चों के लिए लगातार लिखते रहने के बाद सन् 1964 में उनका भोपाल में स्वर्गवास हो गया। बच्चों के लिये उन्होंने गद्य और पद्य की अनेक पुस्तकें लिखी थीं जिनमें से कुछ म.प्र. शासन से पुरस्कृत भी हुयीं। उनकी एक बाल कविता है –

बढ़ई हमारे यह कहलाते, जँगल से लकड़ी मंगवाते।
फिर उस पर हथियार चलाते, चतुराई अपनी दिखलाते।
लकड़ी आरे से चिरवाते, फिर आरी से हैं कटवाते।
उसे वसूले से छिलवाते, रंगा रगड़ रगड़ चिकनाते।
कुर्सी टेबिल यही बनाते, बाबू जिनसे काम चलाते।
खाट पलंग यह हमको देते, बदले में कुछ पैसे लेते।

प्रोफेसर मणिराम गुप्त -- इनका जन्म बस्ती जिले के लालगंज ग्राम में हुआ था। पटना विश्व विद्यालय की प्रवेशिका परीक्षा पास करने के बाद आजमगढ़ में अध्यापक हो गये थे और अपना अध्ययन क्रम जारी रक्खा। आजमगढ़ में ही वह पण्डित अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के संपर्क में आये और हिन्दी में लेखन की ओर अनुराग बढ़ा। हरिऔध जी की ही प्रेरणा और प्रयत्न से उन्हें डी.ए.वी. कालिज बनारस में प्रोफेसर का पद मिल गया। सन् 28 में उनका स्वर्गवास हो गया। बच्चों के लिये उन्होंने बहुत सी कवितायें लिखी थीं जो पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती थीं। उनकी एक कविता है –

अंधे को छेड़ो मत लाल,
उसका बड़ा बुरा है हाल।
उसे नहीं है कुछ दिखलाता,
बार बार है ठोकर खाता।
चाहे दिन हो या हो रात,
गर्मी हो या हो बरसात।
उसको हैं सब एक समान,
जल थल का है उसे न ज्ञान।
लाठी का बस उसे सहारा,

जाकर उसे बता दो राह,
दु:ख से वह है रहा कराह।

ठाकुर गोपालशरण सिंह -- उनका जन्म सन् 1891 में नई गढ़ी, रीवां में हुआ था। रीवां और प्रयाग में रहकर उन्होंने शिक्षा प्राप्त की। वह रीवाँ में ही रहते थे और राज्य मन्त्रिमंडल के सदस्य भी हो गये थे। सन् 1911 से उन्होंने लिखना प्रारम्भ किया था और उनकी गणना द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों में की जाती थी। वह अधिकतर पुरानी कवित्त सवैया छन्द शैली में ही लिखा करते थे। बच्चों के लिये उन्होंने कुछ विशेष नहीं लिखा है पर कुछ कवितायें बालोपयोगी भी बन गई हैं। सन् 1960 में उनका निधन हो गया। उनकी यह कविता सन् 26 में 'बालसखा' में प्रकाशित हुई थी -

सुन्दर सजीला चटकीला वायुयान एक,
भैया हरे कागज का आज मैं बनाऊंगा।
चढ़ के उसी पै सैर नभ की करूंगा खूब,
बादल के साथ साथ उसको उड़ाऊँगा।
मन्द मन्द चाल से चलाऊंगा उसे मैं वहां,
चहक चहक चिड़ियों के संग मैं गाऊँगा।
चन्द्र का खिलौना मृग छौना वह छीन लूँगा,
भैया को गगन की तरैया तोड़ लाऊँगा।

अमीचन्द्र विद्यालंकार -- उनका जन्म सन् 1900 में कानपुर में हुआ था। गुरुकुल कांगड़ी में रहकर उन्होंने शिक्षा प्राप्त की। सन् 26 में वह फिजी द्वीप चले गये। उन्होंने फीजी में हिन्दी प्रचार के लिये हिन्दी रीडर पांच भाग, 'हिन्दी बातचीत' तथा 'हिन्दी व्याकरण' पुस्तकें भी तैयार कीं। सन् 1954 में एक वायुयान दुर्घटना में उनका स्वर्गवास हो गया। बच्चों के लिये कवितायें भी लिखते थे जो 'खिलौना' आदि बाल पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती थीं। उनकी एक कविता है-

हम वीर हैं, रणधीर हैं, बलवीर हैं, बलवान,
मर जायेंगे, कट जायेंगे, हो जायेंगे, बलिदान।
वारेंगे हम, त्यागेंगे हम, छोड़ेंगे हम, धन प्राण,
निज देश हित, निज धर्म हित, निज जाति हित अभिमान।

रामवृक्ष बेनीपुरी -- इनका जन्म सन् 1900 में ग्राम बेनीपुर जिला मुजफ्फरपुर में हुआ था। वह बिहार के एक सुप्रसिद्ध सामाजिक और राजनीतिक कार्यकर्ता थे। बड़ों के लिए उन्होंने बहुत सी पुस्तकें लिखी हैं। 'गोल माल', 'बालक', 'युवक', 'जनता' आदि अनेक पत्रों के सम्पादक भी रहे थे। उन्होंने बालोपयोगी और किशोरोपयोगी भी बहुत सी पुस्तकें लिखी हैं जिनमें से 'सियार पांडे', 'बगुला भगत', 'बिलाई मौसी', 'हीरा मन तोता' बच्चों ने बहुत पसन्द की थीं। 'कविता कुसुम' नामसे उनकी बाल कविताओं का एक संकलन भी प्रकाशित हुआ था। उनकी बालोपयोगी कवितायें 'बालक' आदि पत्रों में प्रकाशित होती रहती थीं। सन् 1968 में उनका निधन हो गया। उनकी एक देशभक्ति पूर्ण बालोपयोगी कविता का एक अंश है-

सब प्रकार से सुन्दर सुखकर सरस सुहावन मेरा देश।
खिलता जहाँ कमल रस पूरित
विकसित होता जहां गुलाब।
स्वर्ण फूल सा गेंदा हँसता,
बेला भरती नूतन भाव।
मौलश्री नित पुष्प रूप में,
फूलों की वर्षा करती।
चम्पा अपने सुरभि स्रोत से,
बरबस सबका मन हरती।
भौरों का वह गुन गुन गाना तितली का वह सुन्दर वेश,
सब प्रकार से सुन्दर सुखकर सरस सुहावन मेरा देश।

रामसिंहासन सहाय 'मधुर' -- 'मधुर' जी का जन्म सन् 1903 में सागर पाली, जि. बलिया में हुआ था। बचपन में ही पिता का स्वर्गवास हो जाने के कारण उनकी शिक्षा-दीक्षा ठीक से न हो सकी फिर भी उन्होंने सन् 1925 में मुखत्यारशिप की परीक्षा पास की और बलिया में वकालत करने लगे। सन् 1921 के राष्ट्रीय आन्दोलन में उन्होंने सक्रिय भाग लिया और तभी से उन्हें लिखने के लिये प्रेरणा मिली थी। उनके लिखे राष्ट्रीय गीत उत्सवों और जुलूसों तक में गाये जाते थे। बच्चों के भी वह सिद्धहस्त कवि थे। 'बच्चों के गीत', 'बच्चों के मधुर गीत' नाम से उनकी दो पुस्तकें भी छप चुकी हैं। सन् 1990 में उनका निधन हो गया। यहाँ हम उनका एक बालगीत उदाहरणार्थ प्रस्तुत करते हैं -

हीरा उगाते, मोती उगाते, उगाते चाँदी सोना।

सबसे चम चम सबसे सुन्दर मेरा श्याम सलोना।।
सूरज चमके चन्दा चमके बलिहारी बलिहारी।
काजल के टीके से चमके घर का कोना कोना।।
चम्पा और चमेली चमकें सोन जुही सैलानी।
सबसे चम चम सबसे सुन्दर मेरी बिटिया रानी।।
इन्द्र लोक इन्द्रानी चमके बलिहारी बलिहारी।
बिटिया की गुड़िया से चमके कुटिया में रजधानी।।

सुभद्रा कुमारी चौहान -- सुभद्रा कुमारी चौहान का जन्म सन् 1904 में प्रयाग में हुआ था और शिक्षा भी प्रयाग तथा बनारस में हुई। उनका विवाह जबलपुर के सुप्रसिद्ध वकील ठाकुर लक्ष्मण सिंह चौहान से हुआ था। राष्ट्रीय आंदोलनों में भाग लेने के कारण वह सबसे पहले 17 वर्ष की आयु में जेल गयीं। सन् 1948 में मोटर दुर्घटना से उनका अकस्मात स्वर्गवास हो गया। उस समय वह एम.एल.ए. भी थीं। कविता और कहानी दोनों ही लिखने में उनकी रुचि थी। उनके 'मुकुल' नाम से कविता संग्रह और 'बिखरे मोती' नाम से कहानी संग्रह प्रकाशित हुए हैं। उनकी कविता 'झांसी की रानी' बहुत प्रसिद्ध हुई। बच्चों के लिए भी उन्होंने बहुत सी सुन्दर कविताएँ लिखी हैं। 'कोयल' तथा 'सभा का खेल' के नाम से उनकी बालोपयोगी कविताओं के दो संग्रह भी प्रकाशित हो चुके हैं। उनका स्वर्गवास सन् 1947 में हो गया। एक कविता यहां प्रस्तुत है -

मैं बचपन को बुला रही थी, बोल उठी बिटिया मेरी।
नन्दन बन-सी फूल उठी वह छोटी-सी कुटिया मेरी।।
'मां ओ' कहकर बुला रही थी मिट्टी खाकर आई थी।
कुछ मुँह में कुछ लिये हाथ में मुझे खिलाने लाई थी।।
मैंने पूंछा-- 'यह क्या लाई' बोल उठी वह - 'मां काओ'।।
फूल-फूल मैं उठी खुशी से, मैंने कहा-तुम्हीं खाओ'।।

ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल' -- 'निर्मल' जी का जन्म सन् 1904 में सिंहगढ़ जिला इलाहाबाद में हुआ था। उन्होंने पत्रकारिता से अपना जीवन प्रारम्भ किया 'और मनोरमा', 'भारतेन्दु', 'भारत देशदूत' आदि पत्रों के सम्पादक रहे। वर्षो तक हिंदी साहित्य सम्मेलन की प्रमुख पत्रिका 'सम्मेलन पत्रिका' का सम्पादन करते रहे। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत सी सुन्दर कवितायें लिखी हैं जो 'बाल मनोरंजन' नाम से पुस्तकाकार प्रकाशित

भी हो चुकी हैं। उनका स्वर्गवास सन् 1980 में हो गया। उनकी एक बालोपयोगी कविता हम यहां प्रस्तुत करते हैं –

प्यारा भारतवर्ष हमारा, दुनिया में है सबसे न्यारा।
ऊँचे पर्वत से हैं भारी, रहते सुन्दर झरने जारी।।
बाग बगीचे नदियां नाले, सब का मन बहलाने वाले।
मुग्ध हुआ इस पर जग सारा, प्यारा भारत वर्ष हमारा।
हुए यहीं हैं कितने दानी, वीर बहादुर और अभिमानी।
हम सब शिक्षा लेते प्रतिदिन, सुनकर जिनकी कथा कहानी।।
जग में यश अपना विस्तारा, प्यारा भारतवर्ष हमारा।
सब सुख हम हैं इससे पाते, प्रतिदिन इसका ही गुण गाते।।
बड़े प्रेम से बिनती करके, हम सब इसको शीश नवाते।
है सबकी आंखों का तारा, प्यारा भारतवर्ष हमारा।।

बलभद्रप्रसाद गुप्त 'रसिक' -- रसिक जी का जन्म सन् 1905 में प्रयाग में हुआ था और शिक्षा भी वहीं पर हुई। 'मदारी', 'लीला', 'आलोक', 'अंगूरों के गुच्छे' आदि कई पत्रों के वह सम्पादक रहे और 'राष्ट्र के कर्णधार', 'महान आत्मायें' आदि कई पुस्तकें लिखीं। सेवा समिति विद्या मन्दिर स्कूल प्रयाग में अध्यापन कार्य भी करते रहे। बच्चों के लिये उन्होंने बहुत सी कहानियाँ लिखी हैं। उनकी 'वीरों की कहानियां', 'परियों की कहानियां', 'साहसी ध्रुव', 'वीर बालक अभिमन्यु', 'सत्याग्रही प्रहलाद', 'चतुर लोमड़ी', 'जादू की खुरपी', 'मणिमाला' आदि बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। सन् 1982 में उनका निधन हो गया। उनकी एक कविता का कुछ अंश यहाँ उद्धृत करते हैं –

कुछ तो बतला दो तुम हमको नदी कहाँ से आती हो?
यह पानी यह शोर और यह लहर कहाँ से लाती हो?
हमें है अद्भुत हैरानी! कहाँ पाया इतना पानी?
सुनता हूँ पर्वत ने तुमको पाल पोस कर बड़ा किया।
झीलों और सागरों ने है तुमको चलना सिखा दिया।।
हमें तुम जी से भाती हो। मधुर स्वर में क्या गाती हो?
नदी तुम्हारी चाल हमारी नहीं समझ में है आती।
उथली हो या गहरी हो क्या कहें बुद्धि चकरा जाती।।

सोहनलाल द्विवेदी -- सोहनलाल द्विवेदी का जन्म सन् 1904 में बिंदकी जि. फतेहपुर में हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा बिंदकी और फतेहपुर से समाप्त करके उन्होंने हिन्दू विश्व विद्यालय बनारस से एम.ए., एल-एल.बी. तक शिक्षा प्राप्त की। घर से सम्पन्न होने के कारण वकालत नहीं की। उनकी राष्ट्रीय कवितायें बड़ी ओजपूर्ण हैं। 'भैरवी', 'वासवदत्ता', 'कुणाल', 'युगाधार', 'चित्रा', 'बासन्ती' आदि उनकी कविताओं के कई संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। 'शिशु' तथा 'बाल सखा' पत्रों के वह सम्पादक भी रहे। बच्चों के वह सिद्धहस्त कवि हैं। बच्चों को देश प्रेम सिखाने वाली बहुत- सी कवितायें उन्होंने लिखी हैं। 'शिशु भारती', 'बाल भारती', 'दूध बतासा', 'बाँसुरी', 'बिगुल', 'बच्चों के बापू', 'हँसो हँसाओ', 'शिशु गीत' आदि उनकी बालोपयोगी कविताओं के कई संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। भारत सरकार ने उन्हें 'पद्मश्री' की उपाधि से सम्मानित भी किया। उनका निधन सन् 1988 में हो गया। उनकी एक कविता हम यहाँ प्रस्तुत करते हैं -

संगति का फल

खेलोगे तुम अगर फूल से तो सुगंध फैलाओगे।
खेलोगो तुम अगर धूल से तो गंदे बन जाओगे।
कौये का यदि साथ करोगे तो बोलोगे कड़वे बोल।
कोयल का यदि साथ करोगे तो तुम दोगे मिसरी घोल।।
जैसा भी रंग रंगना चाहो, घोलो ले वैसा ही रंग।
अगर बड़े तुम बनना चाहो तो तुम रहो बड़ों के संग।।

विश्वप्रकाश 'कुसुम' -- विश्व प्रकाश 'कुसुम' का जन्म सन् 1907 में हुआ था। सुप्रसिद्ध विद्वान् पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय के पुत्र होने के कारण 13 वर्ष की आयु में ही उन्होंने प्रथमा तथा उसके दो वर्ष बाद मध्यमा परीक्षायें पास कर लीं। प्रयाग विश्वविद्यालय से उन्होंने एम.ए., एल-एल.बी. की परीक्षायें पास कीं। पर वकालत नहीं की ओर साहित्य सेवा के विचार से प्रेरित होकर प्रयाग में कला प्रेस खोला। बच्चों के लिये सन् 1930 में 'चम चम' नामक मासिक पत्र निकाला जो 14 वर्षो तक निकलता रहने के बाद बन्द हो गया। उनकी 'गुल-गुल', 'तुरही', 'चन्द्र खिलौना', 'परी रानी', 'फूल कुमारी', 'बाल नाट्य शाला', 'छत्रपति शिवाजी', 'सिन्दबाद की कहानी', 'जापान की सैर' आदि बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी एक कविता यहाँ प्रस्तुत है -

क्या लोगे तुम? आलू गोभी?
क्या लोगे तुम? आलू गोभी?
गोभी का है स्वाद बढ़ाया।
सबकी यही पुकार, आलू गोभी।
सब करते तकरार, आलू गोभी।
जैसी गोभी वैसे आलू। आलू का है बना कचालू।।
गोभी गोभी हैं चिल्लाते। गोभी की हैं धूम मचाते।।
गोभी जैसे हो रसगुल्ला। नरम नरम खाते अबदुल्ला।।
नहीं चाहिये हमें मिठाई। आलू गोभी दे दो भाई।।

रामदेव सिंह 'कलाधर' -- कलाधर जी का जन्म सन् 1908 में ग्राम धनघटा जिला बस्ती में हुआ था। इन्टर बी.टी.सी. तथा साहित्य रत्न परीक्षायें उन्होंने पास कीं और अध्यापक हो गये। हिन्दी, उर्दू, फारसी और बंगाली भाषायें वह जानते थे। जूनियर हाई स्कूल घनधटा में प्रधानाध्यापक थे। उनका निधन वर्ष 1984 में हो गया। उनकी एक बालोपयोगी कविता यहाँ उद्धृत की जाती है -

सवेरा

सदा सबेरे ही उठ जाती। उठते ही झट मुझे जगाती।।
बड़े प्रेम से हृदय लगाती। कहती युग युग जीओ भैया।।
मेरी मैया, मेरी मैया।।
हाथ पैर मुँह मेरा धोती। मुझे पिन्हाती कुर्त्ता धोती।।
देख देख मुझको खुश होती। लेती बीसों बार बलैया।।
मेरी मैया, मेरी मैया।।
बढ़िया चावल रोज पकाती। अरहर की है दाल बनाती।।
देकर माखन और चपाती। झट दुहने लग जाती गैया।
मेरी मैया, मेरी मैया।।

बाबूलाल भार्गव 'कीर्ति' -- बाबूलाल भार्गव का जन्म सन् 1908 में गढ़ कोटा, जिला सागर में हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा गढ़ कोटा और सागर में प्राप्त करने के बाद उन्होंने हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस से बी.ए. तथा जबलपुर से बी.टी. की परीक्षायें पास कीं और म्यूनिसिपल हाई स्कूल, सागर में अध्यापक हो गये। सन् 1958 से वहीं प्रिंसिपल रहे। उनकी 'बाल कथा मंजरी', 'लोमड़ी रानी', 'परियों का दरबार',

'पौराणिक कथायें', 'पद्य प्रसून', 'कला कुंज', 'वीर गाथायें', 'उज्ज्वल सितारे', इत्यादि कई बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। एक कविता का कुछ अंश हम यहाँ उद्धृत करते हैं -

हलवाई

अम्मा से पैसे ले आओ आया है हलवाई।
धरे खोनचे में वह अपने ताजी भरी मिठाई।।
रस से भरी जलेबी लाया, लाया मोती चूर।
पैसे देकर उसको बच्चो, खाओ तुम भरपूर।।
कैसी सुन्दर टिकियाँ काटीं, बरफी खूब जमाई।
जिस जिसने लेकर यह खाई, करता बहुत बड़ाई।।
जो चाहो झट से लेलो यदि पैसे लाये साथ।
चला जायेगा जल्दी फिर तो, मलना होगा हाथ।।

गौरीशंकर 'लहरी' -- लहरी जी का जन्म सन् 1909 में सागर में हुआ था। छिन्दवाड़ा में उन्होंने शिक्षा प्राप्त की और जबलपुर में अध्यापक हो गये। उसके बाद मध्य प्रदेश के सूचना विभाग में कार्य करते रहे। 'तितली के पंख' नाम से उनकी बालोपयोगी कविताओं का एक संकलन प्रकाशित हो चुका है। उनकी एक बालोपयोगी कविता यहाँ प्रस्तुत है -

बीज बहादुर

बोली हवा बीज से उस दिन चलो घूमने मेरे साथ।
दूर दूर के देश दिखाऊं जाने क्या लग जाये हाथ।।
बीज आ गया इन बातों में खुश हो घर से निकल पड़ा।
गया नहीं था बहुत दूर तक मिट्टी ने उसको पकड़ा।।
मिट्टी कहने लगी- 'कहां तुम सोचे समझे बिना चले।
यहाँ रहो कुछ दिनों साथ में अंग अंग से हिले मिले।।'
हवा बह गई अपनी धुन में बीज रह गया वहीं खड़ा।
मिट्टी के भीतर जा बैठा, नभ में बादल देख बड़ा।।

रमापति शुक्ल -- रमापति शुक्ल का जन्म सन् 1911 में ग्राम नारायणपुर जिला गोरखपुर में हुआ था। थ्योसोफिकल नेशनल स्कूल तथा हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस में शिक्षा प्राप्त करके उन्होंने हिन्दी तथा अर्थशास्त्र में एम.ए. तथा बी.टी. की परीक्षायें

पास कीं। कुछ काल तक विद्याभवन उदयपुर में अध्यापक रहे। उसके पश्चात बीसेंट कालिज बनारस में अध्यापक हो गये। विश्वविद्यालय बनारस के टीचर्स ट्रेनिंग कालिज में प्राध्यापक रहे। बाल मनोविज्ञान के वह अच्छे ज्ञाता थे और बच्चों के लिये कवितायें लिखने में विशेष रुचि रही। 'अंगूरों का गुच्छा', 'हुआ सबेरा', 'शैशव', 'राष्ट्र के बापू', 'मुन्नी की दुनियां', 'बच्चों के भाव गीत' नाम से उनकी बालोपयोगी कविताओं के कई संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी कुछ कवितायें विभिन्न कक्षाओं के पाठ्यक्रमों में भी निर्धारित रही। उनका निधन सन् 1993 में हो गया। यहां हम उनकी एक कविता प्रस्तुत करते हैं –

आलपीन के सिर होता पर बाल न होता उसके एक।
कुर्सी के दो टांगें हैं पर दूर नहीं सकती है फेंक।।
कंधी के हैं दाँत मगर वह चबा नहीं सकती खाना।
गला सुराही का है पतला किन्तु न गा सकती गाना।।
जूते के हैं जीभ मगर वह स्वाद नहीं चख सकता है।
आँखें रखते हुए नारियल कभी न कुछ लख सकता है।।
है मनुष्य के पास सभी कुछ ले सकता है सबसे काम।
इसलिए सबसे बढ़कर वह दुनियां में पाता है नाम।।

बाबूराम पालीवाल -- उनका जन्म आगरा जनपद के ग्राम कुर्री कूपा में सन् 1907 में हुआ था। उन्होंने सन् 1926 में पंजाब विश्वविद्यालय से मैट्रिक की परीक्षा पास की और बाद में नागपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. पास किया था। सन् 1928 से भारत सरकार की सेवा में प्रवेश किया था। विभिन्न पदों पर रहने के बाद सन् 1945 से 1951 तक आकाशवाणी में प्रोड्यूसर रहे। सन् 1955 से 61 तक संचार मन्त्रालय में हिन्दी अधिकारी रहे उसके बाद गृह मन्त्रालय की हिन्दी शिक्षण योजना में क्षेत्रीय अधिकारी रहे। बचपन से ही कविता लिखने में रुचि थी। उनकी बालोपयोगी कविताओं की तीन पुस्तकें 'चम चम चमके चन्दा मामा', 'खेल खेल में' तथा 'दादी की माला' प्रकाशित हुई थीं। सन् 1978 में उनका स्वर्गवास हो गया।

रघुनन्दन शर्मा -- वह पं. रामजीलाल शर्मा के सुपुत्र थे। उनका जन्म सन् 1898 में हापुड़ में हुआ था। उन्होंने इन्ट्रेंस तक शिक्षा प्राप्त की थी पर अपने पिता के विशाल पुस्तकालय में अध्ययन करके खूब ज्ञानार्जन किया था। सन् 1930 में अपने पिता की मृत्यु के बाद उनके द्वारा स्थापित हिन्दी प्रेस प्रयाग का संचालन और 'विद्यार्थी'

तथा 'खिलौना' मासिक पत्रों का सम्पादन करते रहे। 'खिलौना' सन् 1961 तक निकलता रहा। वह स्वयं भी बच्चों के एक अच्छे लेखक थे। सन् 43 में वह अपने परिवार को लेकर ग्वालियर आ गये थे और वहीं सन् 1973 में उनका स्वर्गवास हो गया। बच्चों के लिए लिखी उनकी अन्य पुस्तकों के अतिरिक्त 'जलेबी', 'रसगुल्ला', 'समोसा', 'लाल' आदि कविता पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं। 1929 के 'शिशु' मासिक में उनका यह गीत प्रकाशित हुआ था –

डम डमा डम
खेलें कूदें हम
डम डमा डम डम।
ढोल बजाते हम,
झम झमा झम झम।
नाचें कूदें हम,
ढम ढमा ढम ढम।

शम्भुनाथ तिवारी 'आशुतोष' -- उनका जन्म सन् 1908 में हुआ था। शिक्षा प्राप्त करने के बाद वकील हो गये थे। फिर केन्द्रीय सरकार के उद्योग मन्त्रालय में वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी नियुक्त हो गये थे और वहाँ से सेवा निवृत्त होने के बाद दिल्ली में ही रहते थे। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत लिखा था जो अप्रकाशित ही रहा। उन्होंने 'शहीद बालक', 'चलो चाँद पर चलें', 'बाल पद्य कथायें' आदि बाल गीतों की कुछ पांडुलिपियाँ तैयार की थीं पर सन् 1978 में उनका स्वर्गवास हो गया और वह अप्रकाशित ही रह गईं।

अमृतलाल दुबे -- उनका जन्म सन् 1908 में जावेरा, जिला दमोह, मध्य प्रदेश में हुआ था। प्राइमरी स्कूल में शिक्षक के पद पर नियुक्त होकर स्वाध्याय के बल पर उच्चतम शिक्षा प्राप्त की और शिक्षा विभाग में अधीक्षक पद पर आसीन हुए। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत लिखा। उनकी लगभग 24 बालोपयोगी पुस्तकें हैं। उनमें से 'रसगुल्ले', 'कजलियाँ', 'गीतों की गंगा', 'जंगल के गीत' और 'गोमाता के गीत' आदि बाल गीतों की पुस्तकें हैं। सन् 1980 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक बाल कविता है –

शेर कहे मैं वन का राजा, खून पिया करता हूं ताजा,
यह पहाड़ मेरी दहाड़ से,

गूंजे कांपे, थर्राये, दुनियां मुझ से डर जाये।
बल बल करता हाथी आता, तड़ तड़ डालें तोड़ गिराता,
अपना बल दिखलाता है
कहता है जंगल मेरा है, मेरा इसमें डेरा है।
फिरें भेड़िये दाँत निकाले, जीभ लपलपाते मतवाले,
सदा खून के प्यासे ये तो
बड़े निर्दयी हत्यारे, आँखें हैं या अंगारे। इत्यादि

रामानुजलाल श्रीवास्तव -- उनका जन्म 1898 में सिहोरा, मध्य भारत में हुआ था। उर्दू फारसी के माध्यम से उन्होंने शिक्षा प्राप्त की और बिलहारी में शिक्षक हो गये। स्वाध्याय से हिन्दी पढ़ी। इन्टर पास किया। विभिन्न पदों पर कार्यरत रहने के बाद सन् 1928 में इंडियन प्रेस की जबलपुर शाखा के प्रबन्धक नियुक्त हुए। शायरी और कविता का शौक बचपन से ही था। ऊंट बिलहारवी नाम से हास्य रस में सरल भाषा में लिखा करते थे। बालोपयोगी कवितायें भी लिखते थे जो 'बाल सखा' में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनकी कुछ कवितायें पाठ्य पुस्तकों में पाठ्यक्रम में भी थीं। उनकी हीरक जयन्ती पर साहित्य संघ जबलपुर ने 'रामानुज लाल व्यक्तित्व और कृतित्व' ग्रन्थ समर्पित किया था। उनकी एक बालोपयोगी कविता है –

वहाँ सड़क पर खड़ा खंभ-सा दीपक जो दिखलाता है,
बालक वृन्द जरा तो सोचो हमको क्या सिखलाता है।
ऊँची गरदन किए हुए वह मुकुट शीश पर धारण कर,
शिक्षा देता है यह मानो पर उपकार किया नितकर।
कहता है जैसे मैंने है अंधकार का नाश किया,
जो भी आया पास उसी को मैंने स्वच्छ प्रकाश दिया।
इसी भांति तुम विद्या पढ़कर सुन्दर दीपक बन जाओ,
अज्ञानी के शून्य हृदय में ज्ञान उजाला फैलाओ।

माखनलाल चतुर्वेदी -- उनका जन्म सन् 1889 में बाबई, जिला होशंगाबाद में हुआ था। खंडवा में रहते थे। हिन्दी के एक सुविख्यात मूर्धन्य कवि और लेखक थे। 'एक भारतीय आत्मा' नाम से लिखते थे। खंडवा से वह एक साप्ताहिक पत्र 'कर्मवीर' निकालते थे। बच्चों के लिए उन्होंने कुछ विशेष अधिक नहीं लिखा है पर उनकी

उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक बालोपयोगी कविता 'पराग' में प्रकाशित हुई थी जो बच्चों ने पसन्द की थी –

ले लो दो आने के चार। लड्डू राज गिरे के यार।।
यह हैं पृथ्वी जैसे गोल। ढुलक पड़ेंगे गोल मटोल।।
इनके मीठे स्वादों में ही, बन जाता है इनका मोल।
दामों का मत करो विचार, ले लो दो आने के चार।
लोगे खूब मजा लायेंगे, ना लोगे तो ललचायेंगे।
मुन्नी लल्लू अरुण अशोक, हँसी खुशी से सब खायेंगे।
इनमें बाबूजी का प्यार, ले लो दो आने के चार।
कुछ देरी से आया हूं मैं, माल बनाकर लाया हूं मैं।
मौसी की नजरें इन पर हैं, फूफा पूछ रहे क्या दर हैं।
जल्द खरीदो लुटा बजार, ले लो दो आने के चार।

डॉ. रामकुमार वर्मा -- उनका जन्म सन् 1905 में नरसिंहपुर, मध्य भारत में हुआ था। उन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. और नागपुर विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। हिन्दी साहित्यकार और कवियों में उनका ऊँचा स्थान है। अभिनेय एकांकी लेखन प्रारम्भ करने वाले वही कहे जाते हैं। रूस और श्रीलंका में रहकर शिक्षण कार्य भी किया। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग से अवकाश प्राप्त कर सन् 1928 से 1932 तक उन्होंने बच्चों के लिए बहुत सी कवितायें लिखी थीं जो 'चमचम', 'शिशु', 'बाल सखा' आदि में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनके बाल गीतों की एक पुस्तक 'शिशु शिक्षा' नाम से सन् 1932 में प्रकाशित हुई थी। वह पाँच भागों में थी। उनकी एक बाल कविता है –

प्रभुवर सूरज को चमकाकर,
रोज सबेरे देते भेज।
काम घूमने का सिखलाकर,
भर देते हो उसमें तेज।
इसी तरह मुझको भी अब सब,
काम खूब सिखला देना।
मुझ में अपना तेज डालकर,
दुनियां में चमका देना।

प्रो. केसरी -- उनका पूरा नाम कलक्टर सिंह है। पर साहित्य जगत में केसरी नाम से ही प्रसिद्ध हुए। उनका जन्म सन् 1909 में ग्राम एकौना घाट, शाहबाद, बिहार में हुआ था। उन्होंने पटना कालिज से बी.ए. तथा अंग्रेजी में एम.ए. पास किया। वह सीवान कालिज सारन, बिहार में अंग्रेजी के अध्यापक थे। बाद में समस्तीपुर कालिज में प्राचार्य हो गये थे। बिहार के हिन्दी कवियों में उनका प्रमुख स्थान है। बच्चों के लिए भी उन्होंने बहुत सी कवितायें लिखी हैं। उनकी 'आम महुआ', 'बाबा की दाढ़ी', 'बरगद का पेड़' आदि बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनका निधन सन् 1989 में हो गया। उनकी एक कविता है 'जन्माष्टमी के दिन' -

आज खेलने का दिन है मां,
    मुझे न यह दिन खोने दे।
घिरती है तो घिरे बदरिया,
    दुर्दिन है तो होने दे।
आज बन्द स्कूल छुट्टियों
    की घड़ियां ये मन चाही।
कसम कन्हैया की न आज मैं,
    छूऊंगा कागज स्याही।
इसे छोड़ कर पढ़ूँ किताबें,
    यह कितनी नादानी है।
हरी घास की सेज सामने,
    कितनी भली सुहानी है।
बरस रहे नभ से मोती,
    झरता चाँदी का पानी है।
यह दुनियाँ लगती जैसे,
    रिमझिम की एक कहानी है।

शंकरदेव विद्यालंकार -- इनका जन्म सन् 1907 में मालवदा, सूरत में हुआ था। उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी में शिक्षा प्राप्त करके विद्यालंकार की परीक्षा पास की और फिर आगरा विश्वविद्यालय से एम.ए. किया। संस्कृत, गुजराती और अंग्रेजी के वह अच्छे ज्ञाता थे। सन् 1939 में गुरुकुल के शिष्ट मण्डल के साथ अफ्रीका जाकर उन्होंने हिन्दी का प्रचार किया। गुरुकुल कांगड़ी में वह अध्यापक भी रहे थे। बाद में महिला कालिज पोरबन्दर, सौराष्ट्र में अध्यापक होकर चले गये थे। बच्चों के

लिए उन्होंने अनेक भावपूर्ण कवितायें लिखी हैं। उनकी 'बालक' में प्रकाशित एक कविता है –

तारे हमको अपने जैसी नन्हीं-नन्हीं आँखें दे,
पंखी हमको अपने जैसी सुन्दर-सुन्दर पांखें दे।
मधु मक्खी तू अपने जैसी हमको' रस मय रसना दे,
कोयल हमको अपने जैसा सुन्दर मधुर चहकना दे।
शरद देवि! हे कुन्द फूल की एक मनोरम माला दे,
दीपक हमको अपने जैसी सोने की सी ज्वाला दे।
माला गूंथें इन फूलों की आओ आओ मेरे भ्रात,
इस उपवन में मिलकर गायें जय जय जय जय भारत मात।

वीरेश्वर सिंह 'विक्रम' –– उनका जन्म सन् 1909 में बाँदा में हुआ था। प्रयाग विश्वविद्यालय में उन्होंने एम.ए., एल-एल.बी. तक शिक्षा प्राप्त की। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मन्त्री भी रहे थे। बांदा में एडवोकेट थे। विद्यार्थी जीवन से ही बच्चों के लिए कवितायें लिखते थे जो विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती थीं। उनकी एक बालोपयोगी कविता है –

प्यारे फूल! प्यारे फूल
कल तो तुम चुन मुनिया से थे
आज भला कैसे बढ़ आये
ऐसी महक और यह रंग तुम
सच सच कहो कहां से लाये?
अरे हंसो मत इतना फूल।
अम्मा हमें फूल सा कहतीं
और यही है नाम तुम्हारा
उसी एक मां के हम तुम हैं
फूल! हृदय है एक हमारा।
गये हमें तुम कैसे भूल।
घर के बाहर यहां अकेले
क्या करते हो हमें बताओ।
तुम से यहां कौन बोलेगा
चलो हमारे संग घर आओ।
घर अपना ही अच्छा, फूल।

लक्ष्मीनिधि चतुर्वेदी -- उनका जन्म सन् 1903 में मैनपुरी में हुआ था। उन्होंने एम.ए. हिन्दी तथा साहित्य रत्न तक उच्च शिक्षा प्राप्त की। ढाई वर्ष तक मद्रास में रहकर हिन्दी प्रचार का कार्य करते रहे थे। बाद में मधु सूदन विद्यालय, सुल्तानपुर में अध्यापक और फिर उपप्राचार्य रहे। प्रयाग से निकलने वाले 'खिलौना' मासिक का सम्पादन भी कुछ दिनों करते रहे थे। बच्चों के लिए कवितायें लिखने में विशेष रुचि थी। सभी बालोपयोगी पत्र-पत्रिकाओं में उनकी कवितायें प्रकाशित हुआ करती थीं। बच्चों के लिए 'रसगुल्ला', 'समोसा', 'भैंसा सिंह' आदि कविताओं की कई पुस्तकें भी लिखी हैं। उनकी एक बाल कविता है -

मोटर कार मोटर कार,
मेरी बढ़िया मोटर कार।
टम टम इक्का घोड़ा गाड़ी,
इससे रहते सभी पिछाड़ी।
कभी नहीं पाते हैं पार,
मेरी बढ़िया मोटर कार।
दाना घास नहीं कुछ खाती,
दूर-दूर तक है पहुंचाती।
कल से करती है सब काम,
बहुत मुझे देती आराम।
लाये हैं बाबू जी मेरे,
इस पर चढ़कर सांझ सवेरे।
रोज घूमने को जाता हूं,
खूब सैर कर सुख पाता हूं।
इसको करता हूं मैं प्यार,
मेरी बढ़िया मोटर कार।

रामेश्वर गुरु 'कुमार हृदय' -- यह कामता प्रसाद गुरु के पुत्र हैं। उनका जन्मसन् 1914 में जबलपुर में हुआ था। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम.एस.सी. तक शिक्षा प्राप्त की। जबलपुर के सामाजिक और राजनीतिक जीवन में सक्रिय रहे। कविता लिखने में उनकी रुचि बचपन से रही। प्रारम्भ में वह और उनके छोटे भाई राजेश्वर गुरु मिलकर 'गुरु बंधु' नाम से ही लिखा करते थे। उनकी रचनायें 'शिशु', 'खिलौना', 'बाल सखा' आदि पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। 'खिलौना' का तो वर्षों तक

उन्होंने जबलपुर से सम्पादन किया था। बाल गीतों के अतिरिक्त बाल साहित्य को उनकी विशेष देन अभिनेय गीत हैं। उनका एक संकलन 'अभिनय गीत' नाम से प्रकाशित हो चुका है। सन् 1989 में उनका निधन हो गया। एक अभिनय गीत का थोड़ा सा अंश है -

राजा (पहले कैदी से) -

क्यों तुम पड़े कैद में जाकर,
बतलाओ कारण समझाकर।

पहिला कैदी (हाथ जोड़कर) -

लोगों ने दी झूठ गवाही,
लाये मुझको पकड़ सिपाही।

दूसरा कैदी (गिड़ गिड़ा कर पैरों पर पड़ते हुए) -

वह हाकिम था पूरा फंदी,
जिसने मुझे बनाया बन्दी। इत्यादि

रमाशंकर जैतली 'विश्व' -- उनका जन्म 1897 में मुरादाबाद में हुआ था। एम. एस.सी. तक शिक्षा प्राप्त की। सन् 1932 से 1936 तक मुरादाबाद से प्रकाशित होने वाले 'बाल विनोद' के सम्पादक रहे। बाद में 'अरुण' के सम्पादक हो गये। सन् 1937 में ही उनका स्वर्गवास हो गया। बच्चों के लिए कवितायें लिखते थे। उनकी एक कविता है -

भूल तुझे जाऊँ मैं कैसे ऐ मेरे प्रिय देश,
तूने ही था मुझे सुनाया जीवन का संदेश।
फल फूलों से भरी हुई है तेरी प्यारी गोद,
खेला करता हूं जिसमें मैं निशिदिन नित्य समोद।
गंगा यमुना सखी सहेली संग करती शृंगार,
नील सिंधु तेरे चरणों को निशिदिन रहा पखार।
बल दे, सदा करूँ मैं सेवा हे मेरे प्रिय देश,
ज्ञान ध्यान भगवान एक है मेरा भारत देश।

लक्ष्मी प्रसाद मिश्र 'कवि हृदय' -- उनका जन्म सन् 1913 में सागर में हुआ था। एम.ए., बी.एड. तक शिक्षा प्राप्त की। बच्चों के लिये बहुत सी कवितायें उन्होंने लिखीं जो 'बाल सखा', 'खिलौना' आदि पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। 'पद्य

कथा मंजरी', नाम से उनका एक संकलन भी प्रकाशित हुआ था। उनकी एक कविता है –

हरे भरे मैदान हमारे। लगते हैं हमको अति प्यारे,
खेतों की हरियाली प्यारी। बागों की है शोभा न्यारी।
नदी किनारे पेड़ खड़े है। छोटे छोटे बड़े बड़े हैं,
नदियाँ बहतीं कल कल करतीं। उपजाऊ करती हैं धरती।
खेतों से अनाज ये देते। बदले में कुछ कभी न लेते,
बागों के फल हमें खिलाते। पर मैदान नहीं कुछ खाते।

मूल चन्द श्रीवात्री -- सन् 1936 से 1939 तक उन्होंने बच्चों के लिए बहुत सी कवितायें लिखीं जो 'बाल विनोद', 'शिशु', 'खिलौना' आदि पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनकी कवितायें बच्चों के सुपरिचित विषयों पर सरल भाषा में हुआ करती थीं। उनका एक राष्ट्रीय बाल गीत है –

यह भारत वर्ष हमारा। है जग का एक सितारा।
इसने ही जन्म दिया है। गोदी में हमें लिया है।
पालन कर बड़ा किया है।
है सुख का साज संवारा। यह भारत वर्ष हमारा।

विद्या भास्कर शुक्ल -- यह इंडियन प्रेस की बनारस शाखा में काम करते थे। बच्चों के लिये कवितायें भी लिखते थे जो 'बाल सखा', 'शिशु', 'वानर' आदि पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनकी 'बुग्गा मुग्गा' और 'मन भाऊ मल्लाह', कवितायें बच्चों ने बहुत पसन्द की थीं। 'गुड़ गुड़ी' तथा 'कनेटी पड़ाका' नाम से उनकी बालोपयोगी कविताओं के दो संकलन भी 1933 में प्रकाशित हुए थे। उनकी एक बालोपयोगी कविता है –

क्या ही बढ़िया मेरा डंडा। इसको लिये कहाऊँ पंडा,
हाथ कमर पर रखकर जाता। तो बूढ़ा बाबा कहलाता।
जब कुत्ता मुझ पर गुर्राता। तब यह डंडा मजा चखाता,
भों भों करके उसे भगाता। मेरे पास न आने पाता।

ए. फाटक वाला 'प्रेम सखा' -- यह पारसी थे। मैनपुरी के रहने वाले थे। अंग्रेजी में बी.ए. पास करने के बाद उदयपुर चले गये थे और वहां दरबार

में नौकरी कर ली थी। बाद में स्पेशल मजिस्ट्रेट भी हो गये थे। प्रेम सखा नाम से बच्चों और बड़ों के लिए कवितायें लिखा करते थे। उनकी एक बालोपयोगी कविता है –

ओस की बूँदों तुम्हारा घर कहां,
कैसे चमकीले भवन होंगे वहां।
मोतियों हीरों के वह होंगे बने,
होगी चादर चांदनी की बिछ रही,
कैसे कैसे फूल पत्ते लह लहे,
और चिड़ियां होंगी रंगा रंग की।
....
ले चलो हमको भी एक दिन तुम वहां,
तुमसे सुन्दर लोग रहते हैं जहाँ।

सुखदेव प्रसाद चौबे -- वह प्रारम्भ में नार्मल स्कूल जबलपुर में अध्यापक थे। बाद में शिक्षा अधिकारी हो गये थे। सन् 1921 से 1925 तक उनकी बालोपयोगी कवितायें 'बाल सखा' में नियमित रूप से और कभी-कभी मुख पृष्ठ पर छपती रहीं। बच्चों के लिये उन्होंने बहुत सी पद्य कथायें भी लिखीं जो बड़ी मनोरंजक और शिक्षाप्रद होती थीं। उनकी एक लंबी कविता की कुछ पंक्तियाँ हैं –

भोंदू नाई नरहरि चौबे के नित बाल बनाता था,
बनवाई में पंडित जी से दो पैसे वह पाता था।
बाल बनाते समय एक दिन महाराज को लगा छुरा,
कहा न कुछ उसने भोंदू से यद्यपि हृदय में लगा बुरा।
दो की जगह आज द्विजवर ने पैसे दिए उसे दस बीस,
अति प्रसन्न हो नाईजी तब घर को चले नवा कर सीस।
चलते समय राह में उसने अपने मन यों किया विचार,
छुरा मारने से ही मुझको पैसे अधिक मिले इस बार। इत्यादि

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी -- वह मध्य प्रदेश में खैरागढ़ के निवासी थे। बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की थी। सन् 1920 से 28 तक इंडियन प्रेस इलाहाबाद में सरस्वती के सम्पादकीय विभाग में रहे। उसके बाद खैरागढ़ हाई स्कूल में अध्यापक हो गये थे। बच्चों के लिये उन्होंने बहुत सी कवितायें और कहानियाँ लिखी हैं। कई पुस्तकें

भी प्रकाशित हुई हैं। उनका निधन सन् 1971 में हुआ। एक बाल कविता है –

बुढ़िया चला रही थी चक्की। पूरे साठ वर्ष की पक्की।।
दोने में थी रखी मिठाई। उस पर उड़कर मक्खी आई।।
बुढ़िया बांस उठाकर दौड़ी। बिल्ली खाने लगी पकौड़ी।।
झपटी बुढ़िया घर के अन्दर। कुत्ता भागा रोटी लेकर।।
बुढ़िया तब फिर निकली बाहर। बकरा घुसा तुरत ही भीतर।।
बुढ़िया चली गिर गया मटका। तब तक वह बकरा भी सटका।।
बुढ़िया बैठ गई तब थककर। सौंप दिया बिल्ली को ही घर।।

गुलाब रत्न बाजपेयी 'गुलाब' –– उनका जन्म सन् 1899 में सुमेरपुर जिला उन्नाव उत्तर प्रदेश में हुआ था। व्यवसाय के सिलसिले में कलकत्ता चले गये थे। प्रारम्भ में उन्होंने बच्चों के लिए कवितायें लिखीं जो 'बाल सखा' में प्रकाशित हुआ करती थीं। बाद में बड़ों के लिए अधिक लिखने लगे थे। उनके कई नाटक जैसे 'हम एक हैं', 'स्वाधीन भारत', 'प्यारा देश' बच्चों में भी लोकप्रिय हुए थे। सन् 1970 में स्वर्गवास हो गया। उनकी 'बाल सखा' में प्रकाशित एक कविता की कुछ पंक्तियाँ हैं –

सुन्दर वन के कुछ शेरों ने आपस में यह किया विचार,
अब मनुष्य को नहीं खायेंगे चाहे उलट जाये संसार।
झपट-झपट कर उछल-उछल कर हिरनों को ही मारेंगे,
गीदड़ भभकी से न डरेंगे दुर्बल को न पछाड़ेंगे।
समय बितायेंगे सब सुख से पीकर ठंडा गंगा जल,
कृष्ण चन्द्र भगवान हमारा फिर न करेंगे क्यों मंगल। इत्यादि

हीरा देवी जोशी –– यह अल्मोड़ा के सुप्रसिद्ध वकील पं. बद्रीदत्त जोशी की पुत्री थीं। उनका जन्म सन् 1905 में हुआ था। अल्मोड़ा और नैनीताल की पाठशालाओं में पढ़कर शिक्षा प्राप्त की। सदा उच्च श्रेणी में पास हुईं। प्रारम्भ से ही पर्दा प्रथा के विरूद्ध थीं। सन् 1928 में विवाह हो जाने के बाद भी अपना पढ़ना लिखना जारी रक्खा। बच्चों के लिये कवितायें लिखती थीं। सन् 1929 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक कविता है –

तू है मेरा प्यारा बच्चा, मेरी गोदी का है लाल,
सबसे अधिक मुझे भाता तू, तुझको पाकर हुई निहाल।

है तेरा 'मां मां' मीठा स्वर, जैसा मृदु वीणा का तार,
जब तू कुछ कहता तुतलाकर, बढ़ जाता है मेरा प्यार।
तुझ पर न्योछावर तन मन है, तू है मेरा वेद पुराण,
तू तो मेरा जीवन धन है, सचमुच तू है मेरा प्राण।

शालग्राम द्विवेदी -- उनका जन्म सन् 1893 में हुआ था। जबलपुर में एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। माडल हाई स्कूल में शिक्षक रहे। बाद में रामपुर के राजकीय नार्मल स्कूल में अधीक्षक हो गये थे। वह बच्चों के लिये कवितायें भी लिखते थे। शारदा पुस्तक माला के अन्तर्गत उन्होंने अनेक बाल तथा छात्रोपयोगी पुस्तकों का प्रकाशन किया था। उनकी लिखी रीडरें वर्षों तक म.प्र. में बच्चों के स्कूलों में पढ़ाई जाती रहीं। उनकी बालोपयोगी कविताओं में से 'तितली', 'दो मित्र' और 'बन्दर की नकल' तो बहुत प्रसिद्ध थीं।

हरिदत्त दुबे -- उनका जन्म सन् 1899 में हुआ था। यह अमृत लाल दुबे के भाई थे। सागर और जबलपुर में रहकर एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। राबर्टसन कालिज, जबलपुर में अध्यापक हो गये थे। वह पं. सुखराम चौबे गुणाकर के सहयोगी शिष्यों में से थे। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत सी पाठ्य पुस्तकें तैयार कीं जिनमें उनकी अपनी बालोपयोगी कवितायें भी थीं।

गोविन्द दास 'विनीत' -- उनका जन्म सन् 1900 में हुआ था। आगरा में रहकर उन्होंने शिक्षा प्राप्त की। ताल बेहटा झांसी में रहते थे। बच्चों के लिये कवितायें भी लिखते थे। कई बालोपयोगी पुस्तकें उन्होंने लिखी हैं। उनमें से चार भागों में प्रकाशित 'बाल साहित्य' मुख्य हैं। सन् 1953 में उनका स्वर्गवास हो गया था।

भूप नारायण दीक्षित -- उनका जन्म सन् 1895 में सहबसू जिला कानपुर में हुआ था। हिन्दी में एम.ए. और एल.टी. करने के बाद वह सन् 1921 से 1948 तक उ.प्र. शिक्षा विभाग की सेवा में अध्यापक रहे और उसके बाद वहाँ से त्याग पत्र देकर आने के बाद अटवा अली मर्दनपुर जिला हरदोई में आकर बस गये और वहीं बच्चों का एक स्कूल खोल दिया। प्रारम्भ से बच्चों के लिए लिखने का शौक था। उनका उपन्यास 'खड़ खड़ महादेव' बहुत प्रसिद्ध हुआ। बच्चों के लिए वह कवितायें भी लिखते थे। सन् 1929 में उनकी बालोपयोगी कविताओं का एक संकलन 'मखिलवाड़'

नाम से प्रकाशित हुआ था जिसमें पशु-पक्षियों से सम्बन्धित 23 कवितायें थीं। उनकी 'चिलगोजा कवि' पुस्तक में कुछ बालोपयोगी कवितायें भी हैं। अपनी एक दूसरी पुस्तक 'नया आल्हा' में उन्होंने सरल भाषा में भारत- पाकिस्तान युद्ध का वर्णन किया है। उनका निधन सन् 1986 में हो गया।

छैल बिहारी लाल बजाज -- उनका जन्म 1894 में हाथरस में हुआ था। वहाँ से उन्होंने 'हितोपदेश', मासिक पत्र और फिर 'भारत पुत्र' साप्ताहिक पत्र निकाला था। 'छैला अलबेला' और 'चुलबुल छैला', नामों से भी लिखा करते थे। बच्चों के लिये उन्होंने अनेक कवितायें लिखी थीं उनमें से मुकरियां विशेष उल्लेखनीय हैं। 'मुकरी माला' नाम से उनकी मुकरियों का एक संकलन भी प्रकाशित हुआ था और सरल तुकबन्दियों में गणित सिखाने के लिये भी उन्होंने एक पुस्तक लिखी थी।

सैयद कासिम अली -- उनका जन्म सन् 1900 में साई खेड़ा होशंगाबाद में हुआ था। हिन्दी में साहित्यालंकार किया था। पहले अध्यापक रहे फिर डिप्टी विद्यालय निरीक्षक हो गये थे। अंग्रेजी, उर्दू, फारसी, मराठी आदि कई भाषायें जानते थे। स्वतन्त्रता आंदोलन के दिनों में नौकरी छोड़कर स्वतन्त्र पत्रकारिता का व्यवसाय अपना लिया था। 'दीपक' अबोहर, 'संगीत' हाथरस, 'नया संसार' भोपाल के सम्पादक रहे। फिल्मी कहानियाँ लिखीं और उनके कुछ गानों के रिकार्ड भी बने। अन्त में वह जबलपुर में रहते थे। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत सी कहानियाँ और कवितायें लिखी थीं। उनकी 'बाल कहानी', 'सरल गीत', 'राष्ट्रीय दर्पण', 'आजाद वतन' आदि कई बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं।

रामेश्वर 'करुण' -- उनका जन्म सन् 1901 में इटावा जनपद (उ.प्र) के कदमपुरा गाँव में हुआ था। परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण ज्यों त्यों कर मिडिल पास किया और फिर नार्मल ट्रेनिंग करके एक प्राइमरी स्कूल में अध्यापक हो गये थे। रींवा, प्रयाग और काशी में विविध पदों पर कार्यरत रहते हुए एक संघर्षशील जीवन जिया फिर आजीविका के लिये लाहौर चले गये। वहां अपना एक स्कूल खोल दिया और आर्य विद्या सभा के अनुरोध पर पाठ्य पुस्तकें तैयार की जो सब जगह पढ़ाई जाने लगीं। बच्चों के लिये लिखने में विशेष रुचि रखते थे। 'शिक्षा' नाम से एक मासिक पत्रिका का संपादन भी करते थे। बच्चों के लिए उनकी 'ईसप नीति निकुंज', 'वीर गाथा', 'गाँधी गौरव', 'बालगोपाल' आदि

पद्य कथाओं की पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं। 'चिनगारी' में उनकी राष्ट्रीय चेतना भरी कवितायें संकलित थीं।

कमला चौधरी --- उनका जन्म सन् 1908 में लखनऊ में हुआ था। घर पर ही शिक्षा प्राप्त करके उन्होंने पंजाब वि.वि. की रत्न एवं प्रभाकर परीक्षायें पास कीं। वह मेरठ के सुप्रसिद्ध होम्योपैथ डाक्टर चौधरी की पत्नी थीं। स्वतन्त्रता आंदोलन से भी सम्बद्ध रहीं। कविता लिखने का शौक उन्हें बचपन से ही था। उर्दू में भी लिखती थीं। बच्चों के लिए भी उन्होंने बहुत सुन्दर कवितायें लिखी हैं। उनकी बालोपयोगी कविताओं की दो पुस्तकें 'मैं गांधी बन जाऊँ' तथा 'चित्रों में लोरियां' प्रकाशित हुई थीं। उनकी एक बाल कविता है -

मॉं खादी का कुर्ता दे दे, मैं गांधी बन जाऊँ
सब मित्रों के बीच बैठ फिर रघुपति राघव गाऊं।
निकर नहीं धोती पहनूंगा, खादी की चादर ओढूंगा,
घड़ी कमर में लटकाऊंगा, सैर सवेरे कर आऊंगा।
मैं बकरी का दूध पिऊंगा, जूता अपना आप सिऊंगा।
आज्ञा तेरी मैं मानूंगा, सेवा का प्रण मैं ठानूंगा।
मुझे रूई की पूनी दे दे, चर्खा खूब चलाऊँ,
मां खादी की चादर दे दे, मैं गाँधी बन जाऊँ।

हरिमोहन झा --- उनका जन्म सन् 1908 में हुआ था। एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। बी.एन. कालिज पटना में दर्शन विभाग के अध्यापक थे। अपने नाम के साथ मोहन उपनाम लगाकर युवावस्था में बच्चों के लिए कवितायें लिखा करते थे जो 'बालक', 'बाल सखा' आदि पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनकी एक बालोपयोगी कविता 'बालक' में प्रकाशित हुई थी -

दुर्जन विद्या पढ़े सभी से गाल बजावें,
सज्जन विद्या पढ़ें ज्ञान की बात बतावें।
दुर्जन पायें शक्ति सभी को आँख दिखावें,
सज्जन पावें शक्ति सभी का हाथ बंटावें।
दुर्जन को यदि धन मिले पांव नहीं नीचे धरे,
सज्जन को यदि धन मिले नित परहित चिन्तन करे।

ईश्वरीप्रसाद सिंह 'अनीश' -- उनका जन्म सन् 1910 में हुआ था। मिडिल पास करने के बाद साहित्यरत्न पास किया। मुंगेर में अध्यापक रहने के बाद ऊधोडीह भागलपुर में रहने लगे थे। छोटा नागपुर बिहार में हिन्दी का प्रसार करने में उनका बड़ा योगदान रहा है। उन्होंने बहुत सी बालोपयोगी कवितायें भी लिखी हैं जो 'बालक', 'बालसखा' आदि पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। कोई संकलन प्रकाशित नहीं है।

सैयद अमीर अली 'मीर' -- उनका जन्म सन् 1902 में ग्राम देवरी, जिला सागर, मध्य भारत में हुआ था। शिक्षा प्राप्त करने के बाद अध्यापक हो गये थे। राजस्थान में भी अध्ययन किया। हिन्दू मुस्लिम एकता और हिन्दी प्रेम के वह आदर्श थे। पं. लोचन प्रसाद पांडेय के अनुसार उन्होंने जब वह राजस्थान में थे, अपनी चुनी हुई सरल बालोपयोगी कविताओं की एक पांडुलिपि तैयार करके उदयपुर के महाराणा के पास प्रकाशित करा देने की इच्छासे भिजवाई थी। अवकाश ग्रहण करने के बाद सन् 1937 में उनका एक आकस्मिक दुर्घटना में निधन हो गया था।

रामेश्वर झा 'द्विजेन्द्र' -- उनका जन्म बिहार प्रदेश के भागलपुर जनपद में सन् 1904 में हुआ था। उन्होंने सन् 1939 में लिखना प्रारम्भ किया था। वह अत्यन्त रूपवान थे और अपने मधुर कंठ से जब कविता पाठ करते थे तो श्रोता उसी प्रकार से मन्त्र मुग्ध हो जाते थे जैसे संपेरे की बीन को सुनकर नाग। उनकी बड़ों की कविताओं का एक संकलन 'ये शूल फूल' नाम से प्रकाशित हुआ था। बच्चों के लिए भी उन्होंने कुछ कवितायें लिखी थीं। सन् 1968 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक बाल कविता है -

मनुज जन्म ले जग में पर हित करना सीखो,
मधुर वचन कह पीर पराई हरना सीखो।
आनन्दित होकर स्वधर्म पर मरना सीखो,
भव्य भाव से हृदय भवन को भरना सीखो।
जन्म भूमि के लिए दुसह दुख सहना सीखो,
न्याय युक्त उपयुक्त वचन को कहना सीखो,
हरि पर कर विश्वास मुदित मन रहना सीखो,
समय स्त्रोत अनुरूप विश्व में बहना सीखो।
निखिल भुवन में प्रेम बीज का बोना सीखो,
आलस में हो निरत न हरदम सोना सीखो।

भाग्य भरोसे बैठ न पीछे रोना सीखो,
लोभ क्षोभ मद मत्सरता को खोना सीखो।

छैलबिहारी दीक्षित 'कंटक' -- वह विशेष रूप से बच्चों के लिये लिखने वाले कवि तो नहीं थे पर उनकी अनेक राष्ट्र प्रेम की भावनाओं से ओत-प्रोत सरल कवितायें प्रायः स्वतन्त्रता संग्राम के दिनों में बच्चों को भी कंठाग्र हो जाती थीं। उनका जन्म सन् 1905 में इटावा नगर के छिपैटी मुहल्ले में हुआ था। उन्होंने गाँधीजी के आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने के कारण बीच-बीच में छोड़कर बी.ए. और उसके बाद एम.ए., एल-एल.बी. तक शिक्षा कानपुर में प्राप्त की। कई पत्रों के सम्पादक भी रहे और अपनी ओजस्वी कविताओं के कारण उन्हें कई बार जेल भी जाना पड़ा था। उनकी एक कविता का अंश है -

आओ आओ आगे आओ इस दीवानों की टोली में,
अपने प्राणों की भीख भरो भारत माता की झोली में।
सौगंध उन्हीं की है तुमको जो उठती हुई जवानी में,
अन्याय मिटाने को जूझे जेलों में काले पानी में। इत्यादि

गुलाबराय -- उनका जन्म सन् 1887 में इटावा में हुआ था। सेंट जोंस कालिज आगरा में दर्शन शास्त्र के प्राध्यापक थे और सन् 1933 से 1958 तक 'साहित्य संदेश' मासिक आगरा के संपादक भी रहे। सन् 1915 से ही उन्होंने लिखना प्रारम्भ कर दिया था। बच्चों के लिए भी कुछ कवितायें लिखी हैं। उनकी सन् 1926 के 'शिशु' में प्रकाशित एक बाल कविता है -

मधु मक्खी है सबको भाती। मेहनत करना सदा सिखाती।।
सिर्फ घास पत्ती है खाती। फूलों से मधु भर-भर लाती।।
जोड़-जोड़ रखती मधु थाती। सार ग्रहण करना सिखलाती।।
सबसे मिल जुल छता बनाती। आजादी के गीत सुनाती।।
बिना काम के पास न आती। पकड़ो तो फौरन उड़ जाती।
बिना सताये नहीं सताती। निज रक्षा की रीति बताती।।

कृष्णदत्त भारद्वाज -- उनका जन्म सन् 1905 में हुआ था। उन्होंने दिल्ली वि. वि. से एम.ए. पास किया। पंजाब से शास्त्री, पटना से आचार्य और गोबर्धन विद्यापीठ जगन्नाथ पुरी से वेदान्ताचार्य की उपाधियां प्राप्त कीं। वह जीवन भर एक आदर्श

अध्यापक रहे और सन् 1960 में राष्ट्रपति पुरस्कार प्राप्त किया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद उनके बालगीतों का एक संकलन 'बालगीत' नाम से प्रकाशित हुआ था। उनकी एक बाल कविता है -

जय जय भारत देश
नहीं विदेशी अब कोई भी तुझको देगा क्लेश,
हम सब मिलकर यत्न करेंगे लगे न तुझको ठेस।
सागर तेरे चरण धो रहा हिमगिरि तेरे केश,
फल फूलों से सजा हुआ है तेरा सुन्दर वेष,
जीतेंगे रिपुओं को जब तक रक्त बिन्दु है शेष।

केशवप्रसाद पाठक -- उनका जन्म सन् 1906 में जबलपुर में हुआ था और सन् 1956 में उनकी अकाल मृत्यु हो गई, सन् 1928 में जब राबर्टसन कालिज जबलपुर में प्रवेश लिया तभी से कविता लिखने में रुचि हो गई थी। सन् 1936 में एम. ए. पास किया। कुछ दिन अध्यापक रहे पर अपनी स्वतन्त्र प्रकृति के कारण उसे छोड़ दिया। बड़ों के लिए उन्होंने बहुत-सी कवितायें लिखीं और उमर खैयाम की रुबाइयों का अनुवाद किया है। बच्चों के लिये यदा-कदा थोड़ी ही कवितायें लिखी हैं। उनकी मृत्यु के बाद उनके मित्रों ने 'केशव पाठक की काव्य कृतियाँ' नाम से एक पुस्तक प्रकाशित कराई थी। उसमें कुछ बालोपयोगी कवितायें भी हैं। उन्ही में से एक है -

माँ मुझको नहीं पसन्द बन्द करता हूं अब अपना पढ़ना,
वे पढ़ें जिन्हें बाबूपन की ऊँची सीढ़ी पर हो चढ़ना।
पढ़ना पढ़ना पढ़ना पढ़ना जैसे कि नहीं है काम और,
भैया समझे पढ़ना लिखना है दाल भात का एक कौर।
फिर मैं ही क्यों तड़के उठकर बाहर कमरे में डटा करूँ,
कुत्ता चूहा बिल्ली उल्लू के पाठ सुबह से रटा करूँ।

....

तू मुझसे साफ-साफ सुन ले शाला में नहीं पढूंगा अब,
मैं उसके ईट पत्थरों में घिर घिर कर नहीं सडूंगा अब।
मेरी शाला है और, उसी में अब मैं पढ़ने जाऊंगा,
मैदानों खेतों खलिहानों को ही चटसाल बनाऊंगा।

विनयमोहन शर्मा 'वीरात्मा' -- बच्चों की पुरानी पत्र-पत्रिकाओं में बहुत-सी कवितायें 'वीरात्मा' कवि के नाम से प्रकाशित मिलती हैं। यह वीरात्मा वही विनय मोहन शर्मा हैं जिनका असली नाम शुक देव प्रसाद तिवारी था। उन्होंने कर्मवीर साप्ताहिक खंडवा में पं. माखन लाल चतुर्वेदी 'एक भारतीय आत्मा' के साथ काम किया था तभी अपना नाम 'वीरात्मा' रख लिया था। उनका जन्म सन् 1905 में करक वेल, म. प्र. में हुआ था। उन्होंने एम.ए., एल-एल.बी., पी.एच.डी. तक उच्च शिक्षा प्राप्त की। रायगढ़ में राजकीय डिग्री कालिज में प्राध्यापक और फिर कुरुक्षेत्र वि.वि. में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष रहे। उनकी 'खिलौना' में प्रकाशित एक कविता है -

मधुर गीत गा नींद बुलाना,
थपकी दे दे मुझे सुलाना।
मेरा जरा विकल हो जाना,
तेरा टप टप अश्रु गिराना।
वह अब तो मुझे रुलाता है,
मां! तेरी याद दिलाता है।

ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी -- उनका जन्म सन् 1908 में ग्राम करेली जि. नरसिंहपुर, म.प्र. में हुआ था। एम.ए., एल.एल.बी. तक शिक्षा प्राप्त की। नागपुर वि.वि. में शोध-कार्य करके उपाधि प्राप्त की। राजनीति, पत्रकारिता और अध्यापन के क्षेत्र से जुड़े रहे। उन्होंने बड़ों के साथ-साथ बच्चों के लिए भी बहुत-सी कवितायें लिखी हैं जो 'बाल सखा', 'बालक', 'किशोर', 'बाल विनोद' आदि में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनके एक संकलन 'रेणु' में उनके 51 बाल गीत प्रकाशित हैं। उनका एक बाल गीत है -

अम्मा अम्मा मुझे बतादे यह चमकीले तारे,
सारी रात छिपा ही खेला करते हैं बेचारे।
दिन में कोई नहीं दीखता क्यों? सबके सब सोते,
क्या यह पागल हैं जो सारा समय व्यर्थ ही खोते।
'खेल समय खेलें' यह इनको कोई नहीं समझाता,
'सोना ही सोना' क्या इनकी नहीं समझ में आता।
सूरज बड़ा चतुर है अम्मा नित्य सुबह उठ जाता,
उसी समय से अपने सारे कामों में जुट जाता।
सुबह ओस की बूँदें पत्तों से कहती थीं माता,
जो जैसा करता जीवन में वैसा ही फल पाता।

मदनगोपाल शिंघल -- उनका जन्म सन् 1908 में मेरठ के एक धनी मानी व्यवसाय से जुड़े परिवार में हुआ था। वहाँ के सी. ए. बी. हाई स्कूल में उन्होंने शिक्षा प्राप्त की। प्रारम्भ से ही उनकी रुचि सार्वजनिक कार्यों में थी। बालचर संस्था से भी वह सम्बद्ध रहे और 'स्काउट ब्रादर' नामक पत्रिका का संपादन किया। अनेक शैक्षिक संस्थाओं की स्थापना की। 'बालवीर' नाम से एक बालोपयोगी मासिक पत्र का सम्पादन करते थे। बड़ों के लिये उन्होंने बहुत-सी पुस्तकें लिखी हैं। बच्चों के लिए भी गद्य और पद्य में बहुत लिखा। उनमें से 'कौन बनोगे?', 'भूल न जाना', 'देखो और लिखो', 'धर्मवीर हकीकत', 'झांसी की रानी', 'आओ बच्चो तुम्हें सुनायें' उनकी बाल कविता की पुस्तकें हैं। 'कौन बनोगे' पर उ.प्र. सरकार द्वारा पुरस्कार भी मिला था। उनकी एक बाल कविता है -

बोलो बच्चो कौन बनोगे?
किस महान मानव को अपने जीवन का आदर्श चुनोगे?
राघव राजा राम बनोगे? या गो पालक श्याम बनोगे?
गौतम करुणागार बनोगे? किस तन में अवतार बनोगे?
किसको अपने सम्मुख रखकर अजर बनोगे अमर बनोगे?
बोलो बच्चो कौन बनोगे?
गांधी, मां के भाल बनोगे? या कि जवाहर लाल बनोगे?
नेता जी अँगार बनोगे? भगत सिंह सरदार बनोगे?
या इस दानवता के युग में मानवता साकार बनोगे?
बोलो बच्चो कौन बनोगे?

व्यथित हृदय -- उनका जन्म सन् 1908 में वाराणसी जिले के ग्राम जगन्नाथपुर में हुआ था। उनकी माँ ने उनका नाम सूबालाल रक्खा था। नाना और मामा जिनके संरक्षण में उनकी प्रारम्भिक शिक्षा हुई उनका नाम दुःख हरण रख दिया था। बड़े होकर उन्होंने अपना नाम व्यथित हृदय 'सुमन' रख लिया था। सन् 21-22 से ही उन्होंने कविता लिखना प्रारम्भ कर दिया था। सन् 30 में वह 'मतवाला' साप्ताहिक मिर्जापुर के सहायक सम्पादक नियुक्त हुए और उसी वर्ष उनका विवाह स्वर्गीय लाल बहादुर शास्त्री की ममेरी बहिन से हो गया। सन् 31 में वह प्रयाग चले आये और लगभग 40 वर्ष तक वहीं रहने के उपरांत दिल्ली चले गये। प्रयाग में रहकर उन्होंने 'मदारी' और 'तितली' पत्रिकाओं का संपादन किया। हिंदी साहित्य सम्मेलन में प्रचार मन्त्री और महिला विद्यालय में प्राध्यापक भी रहे। तभी कुछ पाठ्य पुस्तकें उन्होंने

लिखीं। उन्होंने बच्चों के लिये अधिकतर शिक्षाप्रद कहानियों की पुस्तकें लिखी हैं। 'नन्हें मुन्ने गीत' नाम से उन्होंने शिशु गीतों की भी एक पुस्तक लिखी है। उसके कुछ गीत हैं -

रंग बिरंगे पँख फैलाये, झूम झूम कर नाचे मोर,
ढुमक ढुमक ढोलक बाजे, बच्चो नहीं करो तुम शोर।
रोज सबेरे सूरज आकर, अंधकार को दूर भगाता,
दान रोशनी का देकर, सारी दुनिया को चमकाता।
फूल बगीचे में हँस हँस कर, हँसना तुम्हें सिखाते हैं,
खुशबू उड़ा उड़ा कर अपनी, जीना तुम्हें सिखाते हैं।

रुद्रदत्त मिश्र -- उनका जन्म सन् 1908 में हुआ था। एम.ए., साहित्यरत्न तक शिक्षा प्राप्त की और म.प्र. के सूचना विभाग में कार्यरत रहे। उन्होंने स्वतन्त्रता पूर्व कुछ उद्‌बोधक कविताओं की पुस्तकें लिखी थीं जैसे 'निर्माण के गीत', 'आगे कदम बढ़ाओ', 'भारत रासो' (17 भाग)। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद उनके बाल गीतों के दो संकलन 'हमारे पक्षी' और 'फूल खिले हैं डाली डाली' प्रकाशित हुए। वह दोनों शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत हो चुके हैं और कई कवितायें पाठ्य पुस्तकों में भी पढ़ाई जाती रही हैं। उनकी एक बाल कविता है -

कबूतर

नहीं किसी का लेना देना नहीं किसी का खाना,
कंकड़ पत्थर जो मिल जाये वही हमारा खाना।
नहीं धोंसला कहीं हमारा नहीं हमारा घर है,
जहां बैठकर रात बितावें वहीं हमारा घर है।
शांति चाहते हम दुनिया में झगड़ा हमें न भाता,
हम सबका ही हित करते हैं रखते अच्छा नाता।

नवाबसिंह चौहान -- उनका जन्म सन् 1909 में अलीगढ़ जिला में हुआ था। धर्म समाज कालिज अलीगढ़ में शिक्षा प्राप्त की। बाद में वह संसदसदस्य भी रहे। उनकी लिखी 40 सस्ती पुस्तकें प्रकाशित हैं। दो बालोपयोगी कविताओं की भी हैं। उनके नाम हैं - 'सब हैं समान सब हैं समान' तथा 'गूंजे गीत किसान के'।

सत्यवती शर्मा -- उनका जन्म सन् 1911 में लुधियाना में हुआ था। कवितायें और

कहानियाँ दोनों लिखने में उनकी रुचि थी। उनकी रचनायें हिन्दी की अनेक पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। बच्चों के लिए लिखी उनकी कविताओं का एक संकलन 'जुगनू का जन्म' नाम से प्रकाशित हुआ था।

रामलक्षण शुक्ल 'मादक' -- उनका जन्म सन् 1910 में नगवा, देवरिया जिला गोरखपुर में हुआ था। 7वीं कक्षा पास करते ही महात्मा गांधी के आव्हान पर राष्ट्र के सेवक बन गये और स्वतन्त्रता प्राप्ति तक राजनीति और सामाजिक कार्यो में सक्रिय रहे। उसके बाद अपने आप को साहित्य को समर्पित कर दिया और इलाहाबाद में बस गये। बच्चों के लिए उन्होंने पद्य में बहुत लिखा है। उनकी बालोपयोगी कविताओं की 'नन्हें मुन्ने वीर सिपाही', 'चुन्नू मुन्नू चतुर किसान', 'अक्षर गीत', 'आज बालिका कल की गृहिणी', 'शाक सब्जी के गीत', 'एक बनो नेक बनो', 'विजयः बलिदान के गीत', 'बापू कथा', 'बापू के मुख से', 'श्रेष्ठ नागरिक बनो देश के' आदि अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी एक बाल कविता है -

सुई डोरा ऊन सलाई

मां मुझको मंगवा दो, मैं भी सीखूंगी अब फूल कढ़ाई
मैं तकिया रूमाल बनाकर, रंग बिरंगे फूल सजाकर
दीदी को तब भेंट करूंगी, होवेगी जब विदा विदाई
माँ मुझको जल्दी मंगवा दो, सुई डोरा ऊन सलाई।
नन्हें-नन्हें मोजे मफलर, बुन लूंगी सतरंगी स्वेटर
पप्पू गप्पू जब पहनेंगे, सभी करेंगे खूब बड़ाई
माँ मुझको जल्दी मंगवा दो, सुई डोरा ऊन सलाई।

बाबूलाल जैन 'जलज' -- उनका जन्म सन् 1909 में देवरी कलां जिला सागर में हुआ था। मैट्रिक, विशारद, साहित्यरत्न तक शिक्षा प्राप्त की। सन् 1929 में जबलपुर में शिक्षक हो गये थे। उसके बाद शिक्षा विभाग के अनेक सरकारी पदों पर रहे। बच्चों के लिए कवितायें लिखीं जो 'खिलौना', 'विद्यार्थी', 'स्काउट मित्र', 'दूधबताशा', 'विश्वज्योति', 'चंपक' आदि पत्रों में प्रकाशित होती रही हैं। सन् 1969 में भारतेन्दु साहित्य समिति बिलासपुर द्वारा सम्मान करके 'जलज अभिनन्दन ग्रन्थ' प्रकाशित किया गया। सन् 1934 में उनकी बालोपयोगी कविताओं का एक संकलन 'फूलों की डाली'

प्रभुवर दीजै यह वरदान
शीलवान विनयी हम होवें। कभी फूट के बीज न बोवें,
दीन जनों के दुख को खोवें। करें सदा सबका ही मान।
गुणी जनों की संगति पावें। उच्च विचार सदा मन आवें,
लोभ मोह से चित्त हटावें। समझें सबको सदा समान।

कन्हैयालाल मत्त -- उनका जन्म सन् 1911 में ग्राम जारखी तहसील एत्मादपुर जिला आगरा में हुआ था। हाथरस में इण्टर तक शिक्षा प्राप्त की। द्वितीय विश्व युद्ध के दिनों में भारत सरकार के रक्षा विभाग में क्लर्क हो गये थे और गाजियाबाद में रहने लगे थे। युवावस्था से ही बच्चों के लिए कवितायें लिखने का शौक था। सन् 41 में उनकी एक पुस्तक 'लोरियां और बालगीत' प्रकाशित हुईं थीं। नौकरी कर लेने के बाद लिखना छूट गया था। सन् 1967 में सेवा निवृत्त होने के बाद फिर से लिखना प्रारम्भ किया था। उनके बाल गीत, शिशु गीत आदि 'नंदन', 'पराग', 'बाल भारती', 'मेला', 'लोट पोट', 'मिलिन्द', 'चम्पक', 'धर्म युग', 'हिन्दुस्तान साप्ताहिक' आदि पत्रों में प्रकाशित होते रहे हैं। उनका एक गीत है -

आटे बाटे दही पटाके। सोलह सोलह सबने डाटे,
डाट डूट कर चले बाजार। पहुंचे सात समुन्दर पार।
सात समंदर भारी भारी। धूम धाम से चली सवारी,
चलते चलते रस्ता भूली। हँसते हंसते सरसों फूली।
फूल फाल कर गाये गीत। बंदर आये लंका जीत,
जीत जात की मिली बधाई। भर भर पेट मिठाई खाई।

पुरुषोत्तम दास -- उनका जन्म सन् 1912 में ग्राम छिपैरी जिला इटावा में हुआ था। वह 'कोमल' उपनाम से कवितायें लिखा करते थे। सक्रिय सामाजिक राजनीतिक कार्यकर्त्ता थे। स्वतन्त्रता आंदोलन में पांच बार जेल गये। उनकी बाल कविताओं का एक संकलन 'चिड़ियों की बातें' स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद प्रकाशित हुआ था।

गोपाल सिंह नेपाली -- उनका जन्म 1913 में बेतिया (चम्पारन) बिहार में हुआ था। कवि सम्मेलनों में उनकी कविताओं की बड़ी धूम रहा करती थी। बाद में फिल्म गीत लिखने के लिये बम्बई चले गये थे। सन् 1963 में उनका स्वर्गवास हो गया। बच्चों के लिए कुछ कवितायें लिखी थीं। उनमें से एक 'सरिता' पाठ्य पुस्तकों में भी निर्धारित रही थी।

यह लघु सरिता का बहता जल, कितना शीतल कितना निर्मल।
हिमगिरि के हिम से निकल निकल, यह विमल दूध-सा हिम का जल।
रखता है तन में इतना बल, यह लघु सरिता का बहता जल।
निर्मल जल की यह तेज धार, करके कितनी श्रृंखला पार।
बहती रहती है लगातार, गिरती उठती है बार बार,
करता है जंगल में मंगल, यह लघु सरिता का बहता जल।
कितना कोमल कितना वत्सल, रे जननी का यह अन्तस्तल।
जिसका यह शीतल करुणा जल, बहता रहता युग युग अविरल।
गंगा यमुना सरयू निर्मल, यह लघु सरिता का बहता जल।

नर्मदा प्रसाद खरे -- उनका जन्म सन् 1913 में जबलपुर में हुआ था। मिडिल पास करने के बाद नार्मल स्कूल में शिक्षा प्राप्त की और अध्यापक हो गये थे। सन् 1930 में उन्होंने लिखना प्रारम्भ किया। उनकी पत्नी श्रीमती शकुन्तला खरे भी कवितायें लिखती थीं। म.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन के संचालक रहे थेऔर अपना प्रकाशन कार्य भी चलाते थे। बच्चों के लिये उन्होंने बहुत-सी कहानियां, नाटक और कविताओं की पुस्तकें लिखी हैं – 'बाँसुरी', 'नाम उजागर करो देश का', 'राष्ट्र पिता को रोते देखा' आदि। सन् 1975 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक कविता है –

रंग बिरंगे पंख तुम्हारे सबके मन को भाते हैं,
कलियां देख तुम्हें खुश होतीं फूल देख मुस्काते हैं।
रंग बिरंगे पंख तुम्हारे सबका मन ललचाते हैं,
तितली रानी, तितली रानी कहकर सभी बुलाते हैं।
पास नहीं क्यों आती तितली दूर दूर क्यों रहती हो,
फूल फूल के कानों में तुम जा जाकर क्या कहती हो?

रामावतार यादव 'शक्र' -- उनका जन्म सन् 1915 में जि. मुंगेर बिहार के एक साधारण कृषक परिवार में हुआ था। उन्होंने इन्टर तक शिक्षा प्राप्त की। बच्चों के लिए बहुत सी कवितायें लिखी हैं जो पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। 'अमर शहीद', 'लंबीदाढ़ी', 'साँप की सवारी' आदि अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी एक बालोपयोगी कविता है –

गुलाब

चारों ओर घिरे हैं कांटे फिर भी यह गुलाब का फूल

खिल खिल कर हँस रहा गर्व से देख रहे सब के सब शूल।
मलय पवन को पास बुलाकर देता निज सुगंध का दान,
कभी नहीं वह दुखी दीखता सुनता भौरों के मृदु गान।
इसी तरह चाहिए तुम्हें भी कभी नहीं करना मुख म्लान,
लाखों संकट रहें घेर कर फिर भी हो मुख पर मुस्कान।

पूरन चन्द्र श्रीवास्तव -- वह एम.ए., पी-एच.डी. शिक्षा प्राप्त और कालिज में प्राचार्य के पद से अवकाश ग्रहण कर जबलपुर में रहे थे। किसी समय में उन्होंने बच्चों के लिए सरल भाषा में अच्छी कवितायें, नाटक, लोरियां आदि लिखी थीं जो 'बाल सखा' में प्रकाशित हुआ करती थीं। कुछ पुस्तकें भी प्रकाशित हुई थीं, उनकी एक लम्बी कविता में बन्दर एक कुएं में चन्द्रमा की परछाई को देखकर उसे बाहर निकालने के लिये कूद कर कुएं में डूब मरते हैं - उसकी कुछ पंक्तियां हैं -

विमल चांदनी छिटक रही थी पूनों की थी रात।
करती हूप किलोल काकली वन में बन्दर जात।
लगी देखने एक कुएं में धवल चन्द्र की छाया।
'गजब हुआ रे' बोले सब - 'पानी में चन्द्र समाया'। इत्यादि

शालग्राम वर्मा -- इलाहाबाद में जार्ज टाउन में रहा करते थे। वहीं सरस्वती प्रकाशन मन्दिर नाम से उनकी अपनी एक संस्था थी। वह बड़े मिलनसार और मधुर स्वभाव के व्यक्ति थे। पं. माखनलाल चतुर्वेदी की कविताओं को पुस्तक रूप में प्रकाश में लाने का श्रेय उन्हीं को है। वह स्वयं एक अच्छे लेखक भी थे। उन्होंने बच्चों के लिए गद्य और पद्य में बहुत लिखा। सन् 42, 43 तक उनकी रचनायें पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही थीं। कई बालोपयोगी पुस्तकें भी प्रकाशित हुई थीं जिनमें गीत-कथायें भी थीं। बड़ी साहित्यिक रुचि के सहदय व्यक्ति थे।

चन्द्रभानु सिंह -- देवधर स्कूल, मंगल गढ़, दरभंगा में अध्यापक थे। उनकी बच्चों के लिये लिखी कवितायें 'बालक', 'बाल सखा', आदि पत्रों में प्रकाशित होती थीं। उनकी एक बालोपयोगी कविता है -

हमारा प्यारा हिन्दुस्तान, जगत का तारा हिन्दुस्तान।
तीनों ओर समुद्र घेरता, सिर पर पर्वत हाथ फेरता।
सदा समीर प्रवाह टेरता, नदियों का कल गान।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान।

रवि शशि परिक्रमा करते हैं, मेघ मुदित हो जल भरते हैं।
मिलकर त्रिविध ताप हरते हैं, बने विचित्र महान ।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान।
हम आलस्य नींद में सोते, अपना अपनापन तक खोते।
पग पग पर हैं लांछित होते, होकर सभी समान।
हमारा प्यारा हिन्दुस्तान।

आरसी प्रसाद सिंह -- उनका जन्म सन् 1911 में ग्राम पुरैख, बिहार दरभंगा, में हुआ था। अन्होंने इन्टर तक शिक्षा प्राप्त की। पहले वह मुंगेर में काशी कालिज खगड़िया में अध्यापक थे। उनकी पहली रचना 'आम का पेड़' सन् 1927 में 'बालक' में छपी थी। आकाश-वाणी लखनऊ राजकीय सेवा में आ गए थे। बड़ों के लिये उनकी 'आरसी कलापी', 'पाँचजन्य', 'आँधी के पत्ते' आदि कई कविता पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। बच्चों के लिए भी उन्होंने सुन्दर कवितायें लिखी हैं। 'चन्दा मामा', 'चित्रों में लोरिया', 'जादू की वंशी', इत्यादि उनकी बालोपयोगी कविताओं के कई संकलन प्रकाशित हुए हैं। उनका निधन सन् 1996 में हुआ।
उनकी एक बाल कविता है -

अखाड़ा

बहुत मशहूर दुनिया में हमारा यह अखाड़ा है।
भयंकर भीम भी आकर यहाँ पढ़ता पहाड़ा है।।
बहादुर वीर रुस्तम से यहां सुहराब लड़ता है।
यहाँ बलवान गामा है जिविस्को भी पछड़ता है।।
सितारे हिन्द है कोई यहां बनराज है कोई।
हिरण पर शेर है कोई बया पर बाज है कोई।।
यहाँ खरगोश ने घर कर शिकारी को पछाड़ा है।
बहुत मशहूर दुनिया में हमारा यह अखाड़ा है।।

रामेश्वरदयाल दुबे -- उनका जन्म सन् 1911 में हिंदूपुर जिला मैनपुरी में हुआ था। उन्होंने एम.ए., साहित्य रत्न तक शिक्षा प्राप्त की। 6 वर्ष तक उत्तर प्रदेश में अध्यापन कार्य करने के उपरान्त बापू के आकर्षण से वर्धा चले गये और सन् 1936 से राष्ट्र भाषा प्रचार समिति में काम करते रहे। वर्धा में वह आर्टस कालिज में अध्यापक भी रहे।

है। उनकी 'अभिलाषा', 'चलो चलो', 'डाल डाल के पक्षी', 'मां यह कौन', आदि बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनका निधन सन् 2010 में हुआ। यहाँ हम उनकी एक कविता प्रस्तुत करते हैं -

क्या कहा कठिन है काम

क्या कहा कठिन है काम कभी ऐसा मत बोलो तुम।
कर सकते हो हर काम शक्ति अपनी तो तोलो तुम।।
यदि कठिन नहीं है काम भला उसका फिर करना क्या?
जिसको मंजिल तक जाना है उसको फिर डरना क्या?
श्रम करते ही रहने से हर मुश्किल हल होती है।
डूबे बिन सागर तल में मिलता किसको मोती है।।
इसलिए कमर कस भाई स्वागत कर कठिनाई का।
जूझा जो हँस कर लाल वही है अपनी माई का।।
कायर ही कठिनाई का रोना ले रुक जाते हैं।
वीरों के चरणों पर आकर पर्वत झुक जाते हैं।

त्रिभुवननाथ 'नाथ' --- त्रिभुवननाथ 'नाथ' का जन्म सन् 1910 में ग्राम कल्याणपुर जिला शाहबाद बिहार में हुआ था। उन्होंने बी. एन. कालिज पटना से बी. ए. पास किया। चक्रधरपुर बिहार में अध्यापक रहे थे। बच्चों के लिये उनकी कविताओं की दो पुस्तकें 'गीतों के गुलाब', 'गमकते फूल', प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी एक कविता है -

कब चींटी किससे कहती है दाना पानी लाओ।
कब चिड़ियाँ किस से कहती हैं नाज मुझे दे जाओ।।
कहां चाकरी अजगर करता किस का भरता पानी।
बादल किस से कब कहता है ला दो भरकर पानी।।
कटी पतंग मकोड़े अनगिन किस पर निर्भर करते।
लाकर दो भोजन सब करते नहीं भरोसा पर का।।
अपने पर ही निर्भर रहना, यही काम है नर का।

देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त' --- उनका जन्म 1911 में जिला सागर में हुआ। जबलपुर में रहकर शिक्षा प्राप्त की। सरस्वती, बाल सखा, मंजरी आदि कई पत्रिकाओं के वह सम्पादक रहे। उनकी कई कहानी, उपन्यास और कविताओं की पुस्तकें प्रकाशित

हो चुकी हैं। बच्चों के लिये भी उन्होंने बहुत-सी कहानियां और कवितायें लिखी हैं। उनकी 'मीठी तानें', 'झिलमिल तारे', 'मीठे गीत' आदि कई बालोपयोगी कविता की पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनका निधन सन् 2003 में हुआ। उनकी एक कविता यहां प्रस्तुत की जाती है -

टन टन टन टन घंटा बजता शाला को हम जाते हैं।
वहाँ पहुंच कर पंडित जी को हम सब शीश झुकाते हैं।।
अच्छी अच्छी बातें हमको पंडित जी बतलाते हैं।
रोज कहानी गीत बहुत से वह हमको सिखलाते हैं।।
माता पिता बड़ों की सेवा करना हमें सिखाते हैं।
गांधी वीर जवाहर का वह बचपन हमें सुनाते हैं।।
छोटे थे तब गाँधी बाबा भी तो शाला जाते थे।
हम जैसे ही पढ़ते लिखते, ऊधम बहुत मचाते थे।।
पढ़ लिख कर ये भारत को अब सेवा भाव सिखाते हैं।
इसीलिये तो ईश्वर जैसे घर-घर पूजे जाते हैं।।

अब्दुलरहमान सागरी -- सागरी जी का जन्म सन् 1911 में ग्राम गढ़ कोटा जिला सागर में हुआ था। हिन्दी मिडिल तथा नार्मल पास करने के बाद वह सागर नगर पालिका की एक प्राथमिक शाला में अध्यापक हो गये थे। हिन्दी और उर्दू दोनों ही पर उनका समान अधिकार था और दोनों में ही काव्य रचना करते थे। चित्रकला में भी उनकी रुचि और गति थी। बच्चों के लिये भी उन्होंने बहुत-सी सुन्दर कवितायें लिखी है। 'मोतियों की माला' नाम से उनके बालगीतों का एक संग्रह प्रकाशित हो चुका है। सन् 1945 में तपेदिक रोग के कारण उनका स्वर्गवास हो गया। यहाँ हम उनकी एक बालोपयोगी कविता प्रस्तुत करते हैं -

जागो और जगाओ

बीत चुकीं आलस की घड़ियाँ,
जाग उठीं अब सारी चिड़ियाँ।
जागे फूल खिलीं अब कलियाँ।।
तुम भी जागो आओ। जागो और जगाओ।
जाग रहा है कोना कोना,
फिर अपना यह कैसा सोना।
क्या सोकर है सब कुछ खोना।।

उठो होश में आओ। जागो और जगाओ।
जागे तुर्क उठे जापानी,
संभल चुके हैं अब ईरानी।
तुमको है कैसी हैरानी।।
आगे कदम बढ़ाओ। जागो और जगाओ।

डॉ. सुधीन्द्र -- उनका पूरा नाम ब्रह्मदत्त मिश्र था। सुधीन्द्र उपनाम से कवितायें लिखा करते थे। उनका जन्म सन् 1917 में कोटा राज्य के खैराबाद स्थान में हुआ था। निरन्तर कठिनाइयों में रहते हुए उन्होंने एम. ए. तक शिक्षा प्राप्त की और बनस्थली विद्यापीठ जयपुर में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष हो गये। राजस्थान विश्वविद्यालय से उन्होंने पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। उसके बाद बलवन्त राजपूत कालिज आगरा में हिन्दी के प्राध्यापक हो गये। बड़ों के साथ-साथ उन्होंने बच्चों के लिए भी बहुत-सी कवितायें लिखी थीं जिनमें से कुछ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हुई। 'मेरे गीत' नाम से उन्होंने अपनी बाल कविताओं का एक संकलन भी प्रकाशित कराया था। उनका एक बालगीत है -

पोथी मेरी, पोथी मेरी
इसके पन्ने-पन्ने में हैं, लगी हुई विद्या की ढेरी।
इसमें हैं तस्वीरें सुन्दर
सिंह मगर पंछी नर बन्दर
अरे कहें क्या बड़े बड़े हैं
भरे तमाशे इसके अन्दर।
इसके पन्ने-पन्ने में है लगी हुई विद्या की ढेरी।
पोथी मेरी, पोथी मेरी।
नये नये यह पाठ पढ़ाती
मन में विद्या भरती जाती
कल से आज आज से कल यह
हमको गुणी बनाती जाती।
इसके पन्ने-पन्ने में है लगी हुई विद्या की ढेरी।
पोथी मेरी, पोथी मेरी।

नरेन्द्र मालवीय -- उनका जन्म सन् 1915 में हुआ था। 13 वर्ष की आयु से

ही उन्होंने कविता लिखना प्रारम्भ कर दिया था। पहली कविता 'सीखो', 'खिलौना' मासिक में प्रकाशित हुई थी। इसके बाद 'शिशु', 'बालसखा', 'बालक', 'कुमार', 'वानर', 'कमल', (लाहौर), 'चमचम', 'नटखट' (अल्मोड़ा), 'बाल संदेश' (दिल्ली) आदि अनेक बाल-पत्रों में कवितायें प्रकाशित होती रहीं। गुजराती में भी बच्चों के लिए कुछ कवितायें लिखीं जो 'बालजीवन', 'कुमार' आदि गुजराती बाल पत्रों में प्रकाशित हुई। सन् 1933 में अल्मोड़ा से प्रकाशित 'नटखट' मासिक के एक विशेषांक का सम्पादन किया जिसमें पंडित मदनमोहन मालवीय, शिवप्रसाद गुप्त, महावीर प्रसाद द्विवेदी, विजयलक्ष्मी पंडित, श्रीप्रकाश, निराला, सुमित्रानन्दन पंत, जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, रामनरेश त्रिपाठी, श्रीनाथ सिंह के नटखटपन की बातें उन्हीं के शब्दों में प्रकाशित हुई थीं। दैनिक 'आज', 'हिन्दीमिलाप', 'नवप्रभात', 'विश्वमित्र', 'नवभारत टाइम्स', 'सारिका', 'माया' आदि के सह-सम्पादक रहे। 'पराग' मासिक के भी प्रारम्भिक वर्षों में कार्यकारी सम्पादक थे। उनकी एक कविता है –

भूलो कभी न क्षण भर को भी तुम हो भारत की सन्तान,
तुमको ही करना है जल्दी, नूतन भारत का निर्माण।
नये सिरे से उजड़ा उपवन ! तुमको आज सजाना है,
नये सिरे से आज भाइयो, तुमको बाग लगाना है।
हिम्मत करो शक्ति का तुम में भरा अपार खजाना है,
तुमको प्यारे हिन्द देश में नया प्राण फिर लाना है।
बोलो सब यह पुण्य भूमि है अमर रहे इससे नाता,
हमें लाख स्वर्गों से बढ़कर प्यारी है भारत माता।

श्रीचन्द्र जैन -- उनका जन्म सन् 1915 में झाँसी जनपद के आमरा ग्राम में हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा हस्तिनापुर (मेरठ) के जैन गुरुकुल में हुई। बाद में आगरा विश्वविद्यालय से बी. ए., एल-एल. बी. तक शिक्षा प्राप्त की। फिर नागपुर से एम. ए. किया और 'हिन्दी काव्य में पादप पुष्प' विषय पर शोध कार्य करके पी-एच. डी. की डिग्री ली। मध्य प्रदेश शासन के अन्तर्गत रीवां, ग्वालियर, जबलपुर, उज्जैन आदि कई स्थानों के महाविद्यालयों में प्रवक्ता, विभागाध्यक्ष तथा प्राचार्य रहे। लोक संस्कृति और आदिवासी उनके अध्ययन के विशेष विषय थे। उन पर उन्होंने बहुत-सी पुस्तकें लिखी हैं। बड़ों के एक विद्वान लेखक होने के साथ-साथ वह बच्चों के एक सहृदय कवि भी थे। सन् 1980 में बम्बई में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक लम्बी बालोपयोगी कविता का अंश है

मेवाड़ सूर्य राणा जब अस्त हो चुका था,
अपनी प्रशस्त निधि जब मेवाड़ खो चुका था।
विद्रोह तब मचाया बनवीर ने बिगड़ कर,
मेवाड़ पर जमाया आतंक निज अकड़ कर।
रह जाये अगर कोई राणा का वंश भूषण,
संभव है वह लगावे मुझको भी कोई दूषण।
बनवीर इन विचारों में व्यग्र हो रहा था,
आया वहां जहां पर मेवाड़ सो रहा था।
बोला गरज के-पन्ना ! राणा का पुत्र ला तू,
कर शांत क्रोध मेरा निज प्राण को बचा तू।
पन्ना न बोल पाई दो शब्द भी संभलकर,
निज पुत्र को बताया राणा का पुत्र कहकर। इत्यादि

दीनदयाल उपाध्याय -- उनका जन्म सन् 1916 में धनकिया (राजस्थान) में हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने मामा के पास गंगापुर (राजस्थान) में हुई। बाद में कोटा (राजस्थान) तथा रायगढ़ (मध्य प्रदेश), सीकर (राजस्थान) में रहकर उन्होंने बी. ए. तक शिक्षा प्राप्त की। एम. ए. में प्रवेश लिया पर पूरा न कर सके। गवर्नमेन्ट ट्रेनिंग कालिज प्रयाग से एल. टी. भी किया था। राजनीति में भी वह सक्रिय रहे और अनेक महत्वपूर्ण पुस्तकें भी लिखी हैं। हिन्दी के अतिरिक्त मराठी भी जानते थे। सन् 1968 में रेल यात्रा में उनकी हत्या कर दी गई। प्रारम्भिक जीवन में उन्होंने बच्चों के लिए बहुत-सी कवितायें 'बालार्क' उपनाम से लिखी जो बाल पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती थी। उनकी एक बाल कविता है -

बन में खोजा मग में ढूँढ़ा मिले नहीं करतार,
खाक महल की छानी मैंने देखे सब परिवार।
वीर कुशल सद्गुणी विवेकी औ पंडित विद्वान,
मुनिवर दान और धन वाले राजा औ बलवान।
खोजा सब में पा न सका पर दर्शन तब भगवान,
मिले किन्तु तुम दीन हृदय में बसते हे भगवान।

सत्यप्रकाश कुलश्रेष्ठ --- उनका जन्म सन् 1916 में ग्राम पाढ़म जिला मैनपुरी में हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा पाढ़म में ही हुई। उसके बाद शिकोहाबाद से मैट्रिक

और आगरा से इन्टर पास किया। फिर निजी तौर से अध्ययन करते हुये एम. ए. और उसके बाद एल-एल. बी. परीक्षायें पास कीं। पाढ़म में ही एक हाई स्कूल उन्होंने इस विचार से खोला था कि उसे वह किसी दिन विश्वविद्यालय का रूप दे सकें। पर सन् 1949 में चेचक रोग से अकस्मात उनका स्वर्गवास हो गया। बच्चों के लिये वह बहुत सुन्दर कवितायें लिखते थे। उनकी कविताओं का एक संकलन 'बाल कवितावली' नाम से प्रकाशित हुआ था। उनकी एक कविता हम यहाँ प्रस्तुत करते हैं –

मैं गोरी तुम काले

मेरे गोरे गोरे प्यारे, हाथ पैर हैं बुरे तुम्हारे।
अरे तुम्हारी छोटी, कैसी लम्बी मेरी चोटी।।
मोती गुंथे निराले।।
तुम काले मैं गोरी भैया, मैं गोरी तुम काले।
बाबूजी ने तुम को लादी, टोपी कुरता धोती सादी।।
मेरे कपड़े रंग कर सारे, लेकर सलमें और सितारे।
दीदी फूल निकाले।।
तुम काले मैं गोरी भैया, मैं गोरी तुम काले।
काले होकर रोब जमाना, आता है तुमको बहकाना।
बातों में बहलाना चाहो, काले हो कहलाना चाहो।।
इस घर के उजियाले?
तुम काले मैं गोरी भैया, मैं गोरी तुम काले,
नहीं तुम्हारा रंग बदलेगा, मां का नहीं उपाय चलेगा।
मीठा-मीठा दूध पिलाकर, सेब सन्तरे खूब खिलाकर।।
कितना ही मां पाले।।
तुम काले मैं गोरी भैया, मैं गोरी तुम काले।।

प्रह्लादनारायण रायजादा -- उनका जन्म वर्ष 1915-16 के लगभग अलवर में हुआ था। उन्होंने एम. ए. तक शिक्षा प्राप्त की और एल. टी. की परीक्षा भी पास की। तब से वह राजस्थान के विभिन्न स्कूलों में अध्यापक और प्राधानाध्यापक रहे। जोधपुर के एक हाई स्कूल में प्रधानाध्यापक पद से अवकाश प्राप्त किया। गद्य और पद्य दोनों में ही वह बच्चों के लिए सुन्दर रचनायें कीं। उनकी कई पुस्तकें पाठ्यपुस्तक के रूप में भी निर्धारित रही हैं। यहाँ हम उनकी एक कविता प्रस्तुत करते हैं।

सबेरा

पूरब में है लाली छाई। सूरज निकला मेरे भाई।।
चिड़ियों ने तज दिया बसेरा। उठो बालको ! हुआ सबेरा।।
पक्षी हैं सब मंगल गाते। उड़ उड़कर यह कहते जाते।।
तुमको क्यों आलस ने घेरा। उठो बालको ! हुआ सबेरा।।
तारे सारे छिपते जाते। चमगादड़ यह कहते जाते।।
हुआ उजाला गया अंधेरा। उठो बालको ! हुआ सबेरा।।
बड़े सबेरे अगर उठोगे। दुनिया में नित सुखी रहोगे।।
कहता है यह सच, मन मेरा। उठो बालको ! हुआ सबेरा।।

उत्तम चन्द्र श्रीवास्तव -- उनका जन्म सन् 1916 में हुआ था। प्रयाग विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में एम. एम. हिन्दी में पास किया। मध्य भारत में अनेक ऊँचे पदों पर प्रथम श्रेणी के राजपत्रित अधिकारी रहे। विद्यार्थी जीवन से ही बच्चों के लिए कवितायें लिखने लगे थे जो उन दिनों के सभी प्रमुख बच्चों के पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनकी एक कविता है -

नया साल आया है भाई खुशियां नई मनाने को
अपना और सभी का जीवन सुन्दर सुखी बनाने को
नये फूल हैं नई तितलियां नई-नई चिड़ियां बोलीं
नये वर्ष की नई कहानी नया दशहर नव होली
नये खेल हैं नये खिलौने नई-नई किरणें छाईं
नई-नई परियां बच्चों को खुश करने को हैं आईं।

ईशदत्त शास्त्री 'श्रीश' -- उनका जन्म मूंगदास कोपागंज ग्राम,जिला आजमगढ़ में 1915 में हुआ था। वह सन् 1940-41 में पं. मदनमोहन मालवीय के निजी सचिव रहे थे। साहित्यवाचस्पति, काव्यतीर्थ, विद्यावाचस्पति की उपाधियाँ प्राप्त कर चुके थे। साहित्य रत्न भी किया था। गवर्नमेन्ट संस्कृत कालिज वाराणसी में प्रिंस आफ वेल्स छात्रवृत्ति प्राप्त शोधकर्त्ता रहे थे और वहीं कुछ दिनों अध्यापक भी रहे थे। संस्कृत की तीन पत्रिकाओं के सम्पादक रहे थे। संसार दैनिक के सम्पादकीय विभाग में कई वर्ष तक कार्य किया। बड़ों के लिए बहुत-सी पुस्तकें लिखीं। बच्चों के लिए अच्छी कवितायें भी लिखते थे। लहरिया सराय पटना से प्रकाशित 'सरल पद्य माला' और 'कविता कुसुम' संकलनों में उनकी बालोपयोगी कवितायें प्रकाशित हुई थीं। सन् 1938

में यह दोनों पुस्तकें एकाकार होकर 'बाल संगीत' नाम से प्रकाशित हुई थीं। सन् 1945 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक बालोपयोगी कविता है –

ईश विनय

बहुत मैं तुमसे पाता हूं, तुम्हें कुछ देने आता हूं।
सुनता हूं तुम बिना हाथ के, ले लो मेरे हाथ,
उनके द्वारा जो चाहो सो करो जगत में नाथ।
नाथ ! मैं शीश झुकाता हूं। तुम्हें कुछ देने आता हूं।
सुनता हूं तुम बिना पैर के, ले लो मेरे पैर
उनके द्वारा जब चाहो तब करो जगत की सैर।
ग़ैर के पास न जाता हूं। तुम्हें कुछ देने आता हूं।
सुनता हूं हो बिना गात के ले लो मेरा गात
जिसको चाहो उसको दर्शन दिया करो दिन रात।
बात हित की बतलाता हूं। तुम्हें कुछ देने आता हूं।

करुणाशंकर तिवारी 'करुणेश' -- उनका जन्म सन् 1921 में ग्राम बहमनी, तहसील भरथना, जिला इटावा में हुआ। बी. ए. साहित्यरत्न तक शिक्षा प्राप्त की। प्रारम्भ में शिक्षक रहे। बाद में जेल विभाग में नियुक्त हो गये थे। युवावस्था से ही कविता लिखने में रुचि थी। उनकी बालोपयोगी कविताओं की 'गाँधी : एक कहानी', 'खेल खेल', 'वीर जवाहर', 'युवा गीत', 'मोहन बाल गीत' 3 भाग आदि पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। नौकरी से अवकाश प्राप्त करने के बाद कानपुर में रहे। उनकी बाल कविता है –

गाय

कितनी अच्छी मेरी गाय,
दूध पिलाती मेरी गाय।
चारा खाती मेरी गाय,
खड़ी रंभाती मेरी गाय।

तमाशा

देखा मैंने एक तमाशा,
पानी में घुल गया बताशा।
उस पानी को पीकर देखा,

वह कितना था मीठा-मीठा।
ना मानो तो देखो करके,
इक गिलास में पानी भरके।

शकुन्तला देवी प्रभाकर -- उनका जन्म सन् 1922 में हुआ था। आर्य पुत्री पाठशाला तांदलिया वाला, लायलपुर में प्रधान अध्यापिका थीं। श्रमजीवी लेखक मण्डल की मन्त्राणी भी रहीं। उनकी बच्चों के लिए लिखी कवितायें 'बालसखा', 'खिलौना' आदि में प्रकाशित हुआ करती थीं। एक कविता है -

हे दीन बंधु भगवन सुधि लीजिए हमारी
हम हैं अबोध बालक आये शरण तुम्हारी।
अज्ञान सारा हर दो विद्या प्रदान कर दो
सदज्ञान मन में भर दो हे सत्य रूप धारी।
भक्ती हमें सिखा दो बस प्रेम रस पिला दो
सन्मार्ग पर चला दो सुख रूप निर्विकारी। इत्यादि

नेमिचन्द्र जैन -- उनका जन्म सन् 1918 में आगरा में हुआ था। वह नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा से संबद्ध रहे और नाट्य विधा के अध्ययन ओर अध्यापन में उनकी विशेष रुचि रही, पर युवावस्था में वह कभी-कभी बच्चों के लिए भी कवितायें लिखा करते थे जो पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती थीं। उनकी एक बाल कविता है -

ओस

अंधेरी रात में ऐसा सजीला कौन आया था।
कि जिसने वाटिका को केन्द्र क्रीड़ा का बनाया था।
धनी भी वह अनूठा था जिधर देखो उधर मोती
मिला होता मैं ऐ माली ! खबर तूने जो की होती।
ये लड़ियां मोतियों की देख चारों ओर बिखरी हैं
खिला है हर कुसुम उद्यान की कलियां भी निखरी हैं।

शिक्षार्थी -- एक व्यंग चित्रकार तथा बाल साहित्यकार के रूप में सुप्रसिद्ध शिक्षार्थी जी इलाहाबाद के निवासी थे। बचपन से ही उनकी चित्रकला और साहित्य में रुचि थी। उनका जन्म सन् 1918 में सुलतानपुर में हुआ था। सन् 1930 में उनका

पहला व्यंग्यचित्र प्रकाशित हुआ था। कार्टून चित्रकला पर उन्होंने एक पुस्तक भी लिखी है जो हिन्दी में इस विषय पर पहली पुस्तक है। उन्होंने सन् 1948 में इलाहाबाद से बच्चों के लिए एक पत्र 'लल्ला' मासिक भी निकाला था जिसने अनेक नये लेखकों को लिखने का प्रोत्साहन दिया। बच्चों के लिए उनकी कविताओं की 'किलकारी', 'बंदर का नाच', 'गाथा गुल्लक', 'भन भन भन', 'छोटू मोटू', आदि अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। सन् 1981 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक बाल कविता है-

नारंगी से मीठा केला उससे मधुर अनार
पर अनार से भी मीठा है सेब ललाई दार
है अंगूर सेब से मीठा, उससे मीठा आम
सबसे मीठा फल मेहनत का डटकर करना काम।

हरिकृष्णदास गुप्त 'हरि' -- उनका जन्म सन् 1911 में दिल्ली में हुआ था। उर्दू, फारसी से विद्यारम्भ हुआ। बारहवीं कक्षा में पढ़ना छोड़ दिया। हिन्दी, संस्कृत और बंगला स्वयं सीखी। सोलह वर्ष की आयु से ही लिखने में रुचि थी। देश के स्वतन्त्रता संग्राम में भी भाग लिया। उनकी बालोपयोगी कवितायें 'बाल सखा', 'मनमोहन', 'विश्वज्योति', 'चन्दामामा', 'वानर', 'बालजगत', 'बालमेला' आदि पत्रों में प्रकाशित होती रहीं। 'दोहे के हीरे', और 'रस मलाई' नाम से उनकी बाल कविताओं के दो संकलन प्रकाशित हुए हैं। 'मन बतिया मां से', 'चाँद सलोना' तथा 'गीतों की बगिया' पुस्तकें हैं। उनकी एक बाल कविता है -

आओ नाव तिरायें
दीदी से बनवायें
जल टब में भर लायें
आओ, नाव बनायें।
छप छप छप छप करती
डग मग डग मग डोले
नाव चली, नाव चली
उछल-उछल हम बोले।

रामगोपाल 'रुद्र' -- उनका जन्म सन् 1912 में हुआ था। इलाहाबाद में शिक्षा प्राप्त कर इन्टर पास किया। गया में ना. प्र. सभा के मन्त्री तथा कई पत्रिकाओं के सम्पादक

कवितायें लिखते थे। उनकी 'पंचामृत', 'रंगा सियार', 'भग्गू भाई' आदि कई बालोपयोगी पद्य पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

मंजुला वीर देव -- उनका जन्म सन् 1912 में आगर मालवा में हुआ था। इलाहाबाद के मालवीय परिवार में विवाह हुआ। उनका नाम वास्तव में शान्ति मालवीय था। विवाह के बाद मंजुला वीर देव नाम हो गया। उन्होंने बच्चों के लिए बहुत-सी कवितायें लिखी हैं जो 'बालसखा' आदि पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनकी सन् 32-33 की लिखी एक बाल कविता है -

फूलों को किसने सिखलाया मधुर-मधुर मुस्काना
कोयल को किसने सिखलाया मीठा-मीठा गाना?
कौन सूर्य को चमकाकर हरता जग का अंधियाला
कौन रात को भर देता है चंदा में उजियाला?
किसने ज्योति भरी तारों में, पेड़ों में हरियाली
रोज सबेरे फैला देता कौन पूर्व में लाली?
किसने सिखला दिया हवा को सर सर सर सर बहना
किसने सिखलाया पर्वत को शीश उठाये रहना?
किसकी कला दिखाई पड़ती झरने के झर-झर में
किसकी झांकी झलक रही सागर की लहर-लहर में?

श्रीमती सुशीला कक्कड़ -- यह इलाहाबाद के सुप्रसिद्ध कक्कड़ परिवार की महिला थीं। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत-सी कवितायें लिखी थीं जो सन् 1932-35 के आस-पास 'बालसखा' में प्रकाशित होती रहती थीं। उनकी 'बालसखा' में प्रकाशित एक कविता है -

प्रभो दो ऐसी शक्ति महान
निर्धन धनी सबल औ निर्बल ज्ञान वान अज्ञान
भेद न मानूँ कभी किसी में, सब हों एक समान।
झूठे जात पात का जग में रहे न नाम निशान
एक पिता औ, एक राष्ट्र की हों हम सब सन्तान।

डॉ. एस. पी. खत्री -- वह इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अंग्रेजी विभाग में रीडर थे। उन्होंने इलाहाबाद में रहकर ही शिक्षा प्राप्त की थी और इलाहाबाद विश्वविद्यालय

के अंग्रेजी विभाग में सर्वप्रथम शोधछात्र के रूप में काम करके सन् 1935 में डाक्टरेट को उपाधि प्राप्त की। उन्होंने बड़ों के लिए अनेक महत्वपूर्ण पुस्तकों के साथ-साथ बच्चों के लिए कविता की अनेक पुस्तकें 'कपड़े की कहानी', 'गुड़गुड़ी', 'हमारी नाव चली' आदि लिखी हैं। उनका स्वर्गवास कानपुर में अपने निवास स्थान पर सन् 1958 में हो गया था।

कपूर चन्द्र जैन 'इन्दु' -- उनका जन्म सन् 1914 में हुआ था। बी.टी.सी., साहित्यरत्न और राष्ट्र भाषा रत्न की परीक्षायें पास की थीं। शान्ति निकेतन हिन्दी साहित्य मन्दिर नागपुर में अध्यापन कार्य करते थे। उनकी बच्चों के लिए लिखी कवितायें 'बालसखा' आदि पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनके संकलन 'कविता संग्रह' भाग 1, 2, 3 प्रकाशित हुए थे। उनकी एक बाल कविता है -

पितामह! दो ऐसा वरदान।
बनें हम विद्या बल की खान।।
बनें हम सच्चे भारत वीर।
बनें हम कर्मवीर रणधीर।।
करें हम अच्छे-अच्छे कर्म।
कभी हम भूले नहीं स्वधर्म।।
बनें हम धीर वीर गम्भीर।
मिटायें भारत की सब पीर।।
प्रभो! बस विनय यही तुमसे।
अलग हों विघ्न सभी हमसे।।

हजारी लाल श्रीवास्तव 'अधीर' -- उनका जन्म सन् 1912 में ब्रह्मपुरी जिला चाँदा, मध्य प्रदेश में हुआ था। मैट्रिक तक शिक्षा प्राप्त की। प्रारम्भ से ही साहित्य में रुचि थीं। 'इन्द्र धनुष' मासिक पत्र के सम्पादक भी रहे थे। बच्चों के लिए बहुत-सी कवितायें लिखी हैं जिनमें से कुछ पत्र पत्रिकाओं में छपी भी हैं।

अली शेर 'अली' -- उनका जन्म सन् 1917 में ग्राम सिंगावली अहीर जिला मेरठ में हुआ था। हिन्दी में विशेष योग्यता तथा बी. टी. सी. की परीक्षायें पास कीं और जूनियर हाई स्कूल में अध्यापक और फिर प्रधानाध्यापक रहे। 'अली शेर सतसई' आदि पुस्तकों के अतिरिक्त बच्चों के लिए 'मेरा मुन्नू', 'चंचल' और 'चुटकुले' तीन पुस्तकें लिखी हैं।

तारा पांडेय -- उनका जन्म सन् 1915 में हुआ था। हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवयित्री रहीं। अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उत्तर प्रदेश शिक्षा समिति की सदस्या रहीं। उन्हें सेकसरिया पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया था। बच्चों के लिए भी उन्होंने कुछ कवितायें लिखी हैं जो सन् 1946-48 में 'बालसखा' में प्रकाशित होती रही थीं। उनकी एक बाल कविता है -

आओ तुम्हें सुनाऊँ गान
बोलो जय भारत माता की जिसके हो तुम लाल
जो तुमको सब सुख देकर करती है सदा निहाल।
करो उसी का ही गुणगान।
हो यह वर्ष सुखद और सुन्दर यही कामना मन की
प्राणों में आनन्द जगाओ जगे ज्योति जीवन की।
पाओ यही अमर वरदान।

डॉ. राजेश्वर गुरु -- यह श्री कामता प्रसाद गुरु के छोटे पुत्र हैं। उनका जन्म सन् 1918 में जबलपुर में हुआ था। एम.ए., पी-एच. डी. तक शिक्षा प्राप्त की। शासकीय महाविद्यालय अंविकापुर मध्य प्रदेश में प्राचार्य रहे। बचपन से ही बच्चों के लिए कवितायें लिखा करते थे। जो 'खिलौना', 'बालसखा', 'वानर', 'बालविनोद' में प्रकाशित होती थीं। सन् 1934 में उनकी बालोपयोगी कविताओं का एक संकलन 'मुस्कान' नाम से प्रकाशित हुआ था। हिन्दी में शिशु गीतों की कमी को पूरा करने में उनका विशेष योगदान रहा है। उनका एक शिशु गीत है -

बिल्ली मेरी प्यारी मौसी कौआ मेरा मामा
बिल्ली पहने फ्राक गरारा कौआ जी पाजामा।
काँव-काँव कौआ जी बोलें म्याऊँ-म्याऊँ बिल्ली
कौआ जी कलकत्ता जायें बिल्ली जाये दिल्ली।
कौआ जी रसगुल्ला खायें बिल्ली खाये हलुआ
गोरी-गोरी बिल्ली मौसी कौआ मामा कलुआ।

रमेश चन्द्र अवस्थी -- उनका जन्म सन् 1917 में ग्राम रावतपुर जिला उन्नाव में हुआ। लखनऊ विश्वविद्यालय से हिन्दी और संस्कृत में एम.ए. किया और उत्तर प्रदेश के शिक्षा विभाग में अध्यापक नियुक्त हो गये थे। बाद में केन्द्रीय सरकार की सेवा में चले गये। बच्चों के लिए उन्होंने कवितायें लिखी हैं जो पत्र-पत्रिकाओं में

प्रकाशित होती रहती थीं। पुस्तक रूप में नहीं छपीं। उनकी एक बाल कविता है-

गाँव की दीवाली

बड़े नगर के पास गांव की देखी थी दीवाली
घर-घर मिट्टी दीप जल रहे आई थी उजियाली।
नाच रहे थे आज खुशी से नन्हें-नन्हें बच्चे।
खूब सजाये लीप पोतकर थे अपने घर कच्चे।
कहीं बाल सब मिल चिल्लाते धरती माता जागो
और युवक भी थे चिल्लाते भारत माता जागो।

विंध्याचल प्रसाद गुप्त -- उनका जन्म 1915 में हुआ था। साहित्यभूषण पास किया। बड़ों के लिए लिखने के साथ-साथ बच्चों के लिए भी कवितायें लिखी हैं। जो 'बालक', 'बाल-सखा' आदि में प्रकाशित होती थीं। चनपटिया जि. चम्पारण (बिहार) में रहते थे। बच्चों के लिए उनकी 'जादू की वंशी', 'सोने का हंस' आदि 15 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

सुदर्शन 'चक्र' -- देवनगर कानपुर के निवासी थे। उनका जन्म 20 दिसंबर 1911 में छोटी मनोह, कानपुर में हुआ था। बचपन से स्वतन्त्र प्रकृति और विद्रोही विचारों के थे। उन्होंने कानपुर में मजदूर बाल मंडल, जनगायक संघ तथा कथा प्रचारिणी सभा नाम की संस्थायें स्थापित की थीं। प्रगतिशील लेखक संघ कानपुर के अध्यक्ष भी रहे। कई बार जेल भी गये। सन् 36 में उनकी पहली रचना प्रकाशित हुई थी। सरल भाषा में मजदूरों की 'रण भेरी', 'आल्हा आम हड़ताल', 'लाल सेना की विजय' आदि पुस्तकें उन्होंने लिखी हैं। बच्चों के लिए भी कवितायें लिखते रहे। उनकी एक बाल कविता है -

बच्चे सकल जहान के। चलते मुट्ठी तान के
धरती माँ से इतना प्यार। द्वार द्वार अपना घर द्वार
बच्चा बच्चा है तैयार। साथ चलें तूफान के।
सुबह सुनहली सुन्दर शाम। लिखना पढ़ना अपना काम
मुफत मिठाई खायें आम। लगी भूख पहचान के।
कोई नहीं अनाथ है। सारी दुनिया साथ है
दिये हाथ में हाथ हम। साथी हैं इन्सान के।

मदनमोहन व्यास -- उनका जन्म सन् 1919 में हुआ था। बचपन से ही बच्चों के लिए कवितायें लिखते थे। युवावस्था में ही मुरादाबाद ने निकलने वाले 'बाल विनोद' मासिक से सम्बद्ध होकर सन् 1935-36 में सम्पादन कार्य देखते थे। बाद में अध्यापक हो गये थे। उनकी बच्चों के लिए लिखी कवितायें 'बालविनोद' और 'बालसंदेश' में प्रकाशित होती थीं। उनकी एक कविता है -

इस मिट्टी के बेटे हम। इस मिट्टी पर लेटे हम
इस मिट्टी पर बड़े हुए। लोट पोट कर खड़े हुए।
इसकी आन निभायेंगे। इस पर जान गवायेंगे
इसकी सीमाओं के रक्षक वीर जवान जिंदाबाद।
हिन्दुस्तान जिंदाबाद।
देश खड़ा है पैरों पर। नहीं भरोसा गैरों पर
बालक वृद्ध जवान सभी। ये मजदूर किसान सभी
कर्त्तव्यों में लगे हुए। तन से मन से जगे हुए।
राष्ट्र हितों के लिए स्वार्थ का यह बलिदान जिंदाबाद।
हिन्दुस्तान जिंदाबाद।

राम स्वरूप दुबे -- उनका जन्म सन् 1921 में ग्राम अमेढ़ा तहसील हल्दौर जिला बिजनौर में हुआ था। उन्होंने हिन्दी और अंग्रेजी में एम.ए. तथा एल- एल.बी. तक शिक्षा प्राप्त की। उत्तर प्रदेश राज्य के सूचना विभाग में सेवारत रहे। सन् 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन के समय वह पं. सोहनलाल द्विवेदी के संपर्क में आये और उनकी प्रेरणा से ही बच्चों के लिए कवितायें लिखने लगे थे जो 'बाल-सखा', 'शिशु', 'विद्यार्थी', 'पराग' आदि पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनकी बाल कविताओं का एक संकलन 'भारत देश हमारा' नाम से प्रकाशित हुआ है। उनका एक बाल गीत है -

मुर्गा जगा रहा है कब से, कब से सुना रहा कुकड़ू कूं
फुर्र-फुर्र कर चिड़ियां उड़ती, गीत सुनातीं 'चीं-चीं चूं-चूं'
कें कें करती बतख भागती, थोड़ा उड़ती, दौड़ लगाती
झूम झूम कर चलती हैं ये, सबके मन को कितना भातीं।
मिट्ठू कहता 'राम राम' है, मैना कहती 'जागो जागो'
पिंटी डब्बू, नीलू शीलू, जल्दी जल्दी बिस्तर त्यागो।

बल्लभदास बिन्नानी 'ब्रजेश' -- बिन्नानी जी कलकत्ता के एक सुप्रतिष्ठित व्यवसायी थे। उनका जन्म 1923 में मद्रास में हुआ था। इन्टर तक शिक्षा प्राप्त की और बाद में साहित्यरत्न की परीक्षा भी पास की। लगभग सन् 50 तक वह बच्चों के लिए गद्य और पद्य में बहुत लिखते रहे थे। उनकी रचनायें 'बालसखा' में प्रकाशित होती थीं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के तुरन्त बाद उनकी बालोपयोगी कविताओं के दो संकलन 'जय गीत' और 'सिंह नाद' प्रकाशित हुए थे। उनके विषय में ठाकुर श्रीनाथ सिंह का कहना था - 'यह संकलन बच्चों को बेहद पसन्द आयेंगे।' बिन्नानी जी की प्रेरणा से ही कल्याण मासिक का 100 पृष्ठ का बालक विशेषांक प्रकाशित हुआ था। बाल फिल्में बनाने के लिए उन्होंने सर्वप्रथम आवाज उठाई और 'हम पंछी एक डाल के' आदि फिल्में बनीं। उनकी एक बालोपयोगी कविता है -

हम हिन्द वीर हम हिन्द वीर
लड़ने हम रण में जायेंगे, रिपुओं को मार भगायेंगे
दिखला देंगे हम सत्य तीर।
हम लक्ष्मीबाई के सपूत, साहस बल हममें है अकूत
रण में रहते हम परम धीर।
हम भारत माता के प्यारे, हमसे सब शत्रु सदा हारे
हम शांत चित्त अतिशय गंभीर। इत्यादि

गंगा प्रसाद कौशल -- उनका जन्म सन् 1921 में फर्रूखाबाद में हुआ था। हाई स्कूल तक शिक्षा प्राप्त की। राष्ट्रीय आंदोलनों में सक्रिय भाग लेने के कारण जेल भी गये। बच्चों के लिए लिखने में प्रारम्भ से ही रुचि थी। उनकी बालोपयोगी कवितायें 'बालविनोद' में प्रकाशित हुआ करती थीं। बाद में जमशेदपुर चले गये थे और वहाँ से एक साप्ताहिक पत्र 'आजाद मजदूर' निकालते थे। उनकी बच्चों के लिए कविताओं की 'बापू', 'बच्चों के फूल', 'वीर बालक' आदि कई पुस्तकें प्रकाशित है। 'बच्चों के फूल' का प्रकाशन सन् 1947 में हुआ था और 'वीर बालक' भारत सरकार से पुरस्कृत भी हो चुकी है। सन् 1975 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक कविता की कुछ पंक्तियां हैं -

किसी एक वन में रहता था एक बड़ा-सा अजगर
काला काला लम्बा लम्बा वह था बड़ा भयंकर।
उस वन के ही निकट एक थी कुछ मुर्गों की बस्ती
उन मुर्गों की बातों में थी निर्भयता की मस्ती।

कहते जब तक हम लोगों में प्रेम एक्य का है बल
महा भयंकर शत्रु हमारा भी है तब तक निर्बल।
इसी एक्य बल पर हम चाहें भूधर से भिड़ जायें
तूफानों में खड़े रहें हम लपटों में मुस्कायें। इत्यादि।

शिवसिंह सरोज -- उनका जन्म सन् 1921 में बाराबंकी जिला के डंडियामऊ ग्राम में हुआ था। शिक्षा प्राप्त करने के बाद उनकी रुचि पत्रकारिता में हो गई और वह बाराबंकी से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक 'अवध वासी' का संपादन करने लगे। तभी बच्चों के लिए भी कवितायें लिखने लगे थे। सन् 1937 में लखनऊ चले आये। 'स्वतन्त्र भारत' दैनिक में नौकरी कर ली। सन् 1939 में उनकी बाल कविताओं का एक संकलन 'बाल भारती' नाम से गंगा पुस्तक माला लखनऊ से प्रकाशित हुआ था। लवकुश और बादल नाम से उन्होंने दो लम्बी कवितायें लिखी जो बच्चों ने भी बहुत पसन्द की थीं। बाद में उन्होंने लवकुश को गद्य नाटक का रूप भी दिया था।

मनोरंजनसहाय श्रीवास्तव -- उनका जन्म 1920 में हुआ था। पटना वि. वि. से एम. ए. बी. एल. की परीक्षा पास की। 'बालविनोद' में उनकी रचनायें प्रकाशित होती थीं। डी. जे. कालिज में प्रोफेसर हो गये थे। बाद में बिहार की राजकीय सेवा में डिप्टी कलक्टर हो गये थे। उनकी बालोपयोगी कविताओं का एक संकलन 'हंसते-हंसते' गंगा ग्रंथागार, लखनऊ से प्रकाशित हुआ था।

बाल बंधु -- उनका पूरा नाम हरिश्चंद्र बेरी था उनका जन्म सन् 1923 में हुआ था। बनारस में रहते थे और वहां के राष्ट्रीय प्रचारक पुस्तकालय के भागीदारों में से थे। राष्ट्रीय धारा के प्रमुख कवियों में उनकी गिनती होती थी। सन् 1946 में अल्पायु में ही उनका स्वर्गवास हो गया था। बच्चों के लिए कवितायें लिखते थे। उनकी 'भों पो इंजन छक-छक' नामक पुस्तक बहुत चर्चित हुई थी। उनकी एक बाल कविता है -

हम वीरों के मुख पर हर दम,
जननी की जय-जयकार रहे।
बरसाने लगें आग बादल,
मच जाय सिन्धु में उथल-पुथल

पर डरे न हम नन्हों का दल,
हम सबका बाना बना रहे।
सीना शेरों-सा तना रहे,
हम वीर पुत्र की नस-नस में,
भारत माता का प्यार रहे।
जर्मनी, रूस, इटली, जपान,
सब हमसे जायें हार मान,
फिर आर्यभूमि की बढ़े शान,
जननी की खातिर लड़े-मरें,
पर इसको हम आजाद करें।
बच्चा बच्चा भारत माँ पर,
मर मिटने को तैयार रहे।

स्वतन्त्रता पूर्व के इन सुपरिचित बाल गीतकार कवियों के अतिरिक्त और भी अनेक कवि ऐसे हुए हैं जिन्होंने बच्चों के लिए कवितायें लिखीं और उनमें से कई की कवितायें बहुत सुन्दर हैं और बच्चों ने बहुत पसन्द कीं। हम अपनी ही असमर्थता के कारण उनका जीवन परिचय प्राप्त करने में असफल रहे। पर उनमें से जिनका नामोल्लेख किये बिना यह इतिहास अधूरा ही माना जायेगा, उनमें लक्ष्मी कान्त झा, शंभुदयाल त्रिपाठी 'नेह', मोहन सिंह 'दीवाना', टीकारामसिंह 'अंशु माली', अनन्त राम 'चित्र गुप्त', पंडित श्रीराम बाजपेयी, प्रेमा देवी खरे, अध्यापक मूलचन्द्र रजक, राघव प्रसाद सिंह, अनन्त राम तलवार, हरिश्चन्द्र प्रसाद 'इन्दु', 'नयन', छोटेलाल शुक्ल, रामकुमार सर्राफ, 'दिवाकर', 'सुकुमार', धर्मचन्द्र खेमका 'चन्द्र', राधा बल्लभ चतुर्वेदी, घनश्याम दास वैष्णव 'कवि सेवक', 'लल्लन' आदि को भुलाया नहीं जा सकता। बाल कविताओं की कई पुस्तकें भी प्रकाशित हुई थीं। बृजरतन सूरज रतन मेहता कृत 'बालगीत' (1928) में पाँच कवितायें हैं जिनमें सरल भाषा में बच्चों को सीख की बातें बताई गई हैं। लक्ष्मीदत्त चतुर्वेदी कृत 'मिचौली' एक बालकविता संकलन है और 'भैंसा सिंह' में पद्य कथायें हैं। चन्द्र बंधु कृत 'बाल सुधार' (1935) और बृजबिहारी लाल कृत 'बाल बोध' में शिक्षाप्रद बाल कवितायें हैं।

इस काल में रची गई कुछ बाल कवितायें जो बच्चों ने पसन्द की थीं उनके कुछ अंश यहाँ उदाहरणार्थ प्रस्तुत करना अप्रासंगिक न होगा -

बत्तक

अहा! बत्तक कैसी सुन्दर है। सारी चिड़ियों से बढ़कर है।
सुथरी साफ, न मैली रहती। हमें बहुत ही अच्छी लगती।
वाह! वाह! कैसी छवि वारी। चन्द्र समान सफेद उजारी।
हैं अति सुन्दर पैर, चोंच, पर। गर्दन लंबी बड़ी मनोहर।
तैर-तैर कर पानी में यह। मन बहलाया करती है यह।
बालक देख देख हर्षाते। घर से लाकर अन्न खिलाते।

– शंभु दयाल त्रिपाठी 'नेह'

वर्षा ऋतु

वर्षा ऋतु की छटा निराली। निकलीं नई पत्तियां डाली।
सभी ओर छाई हरियाली। उमड़ चली बरसाती नाली।
भाई झूले लगे झुलाने। बहनें लगीं कजलियां गाने।
लगी कूकने कोयल काली। मोरों की है छटा निराली।
मेंढ़क लगे सुनाने तान। पंछी भी करते हैं गान।

– राधा बल्लभ चतुर्वेदी

जब नन्हा सा मैं बच्चा था

तब सूरज मुझे जगाता था। तब किस्से चांद सुनाता था।
तब पानी मेघ पिलाता था। तब झूले पवन झुलाता था।
जब नन्हा-सा मैं बच्चा था
फूलों से मेरी बातें थीं। सुख स्वप्न भरी सब रातें थीं।
मन मोहक तब बरसातें थीं। अद्भुत छवि अनुपम घातें थीं।
जब नन्हा-सा मैं बच्चा था

– प्रो. मोहन सिंह दीवाना, एम.ए.

कागज की नैया

भाई देखो तो यह नैया टब में तैर रही है
छोटी लहरों में हिल डुलकर यह कर सैर रही है।
हवा चली पानी लहराया थर-थर करती नैया
सर-सर चलके, फर-फर करके करती ताता थैया।
आहा! कैसी झूल रही है पड़कर बीच भंवर में
मांझी पतवारों की चिन्ता करती नहीं सफर में।

– टीकाराम सिंह 'अंशु माली'

बालक वीर

कर्म वीर हैं, धर्म वीर हैं, शरणागत हित हठी हमीर
न्याय वीर हैं, सत्य वीर हैं, मातृ भूमि हित बादल वीर।
धीर वीर हैं त्याग वीर हैं, फिर हम क्यों हों भला अधीर
दान वीर हैं ज्ञान वीर हैं, हम भारत के बालक वीर।

\- अनन्तराम चित्र गुप्त

एकता

छोटी-छोटी ईंटों से ही महल खड़े हैं बड़े-बड़े
नन्हें-नन्हें पुर्जों के बल बड़े-बड़े हैं यन्त्र खड़े।
छोटी-छोटी बूंदें मिलकर जभी बरसने लग जातीं
बड़ी-बड़ी नदियाँ भी पानी से भरकर हैं लहरातीं।
हम बालक हैं यद्यपि छोटे पर सब मिलकर लग जायें
तो फिर कार्य कौन है ऐसा जिसे न हम कर दिखलायें।

\- लक्ष्मीकान्त झा

इस काल में बच्चों के लिए जो भी कवितायें लिखी गईं उनके अध्ययन से कई बातें स्पष्ट उभर कर सामने आती हैं पहली तो यह कि उनमें से अधिकांश कवितायें बालोपयोगी हैं बालगीत नहीं। बालोपयोगी वह कवितायें होती हैं जिन्हें बड़े लोग अपनी दृष्टि से ठीक समझकर बच्चों को लिखकर दे देते हैं। उन्हें बच्चों के हित अनहित का हमेशा ध्यान रहता है। इसलिए वह उन्हें ऐसी कवितायें लिखकर देना पसन्द करते हैं जो उनकी निश्चित की हुई मान्यताओं और जीवनादर्शों तथा सामाजिक परम्पराओं के अनुकूल और उनकी अपनी दृष्टि से बच्चों के लिए उपयोगी हों। बालगीत बच्चों में बच्चा बनकर लिखे जाते हैं इसलिए उनमें 'हित' का अर्थ वही होता है जिसे बच्चे अपने लिए हितकर समझते हों। बड़ों की अपने विवेक या रुचि का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। बच्चों की अपनी कल्पनायें, भावनायें, इच्छा-आकांक्षायें और जिज्ञासायें जिन कविताओं में व्यक्त हों वही उनकी अपने लिए उपयुक्त कवितायें या बालगीत हो सकते हैं। लोचन प्रसाद पांडेय की यह कविता-

खेल समय तुम खेलो बच्चो,
करो समय पर अपना काम।

बालगीत कैसे कहला सकती है। बच्चों की अपनी भावना या कल्पना की कोई अभिव्यक्ति इसमें नहीं। ऐसा लगता है कोई नेता मंच पर खड़ा बच्चों को भाषण

में से दिये जा सकते हैं। अधिकांश कवियों ने यह सोचकर ही बच्चों के लिए लिखा है कि उससे बाल पाठकों को मनोरंजन के साथ-साथ शिक्षा भी मिले। इसलिए प्रत्येक कविता में और कहीं नहीं तो अन्त में अवश्य शिक्षा या ज्ञानवर्धन की कोई न कोई बात अवश्य मिल जाती है। बड़ों की कविता के क्षेत्र में ऐसा नहीं होता। वहां कवि पहले से यह सोचकर लिखना प्रारम्भ नहीं करता कि उसे कोई न कोई उपदेश अपने पाठक को देना जरूर है। बच्चे अपनी कविता के क्षेत्र में इस प्रकार की बात को पसन्द नहीं कर सकते। उसमें तो वह अपने मन की बात खोजते हैं और उनके अपने मन की बात उन्हें कुछ न कुछ शिक्षा देने वाली हो यह आवश्यक नहीं। बल्कि ऐसी बात तो कविता में उनकी अरुचि उत्पन्न करने वाली हुआ करती है। ऐसा लगता है कि बालोपयोगी कविता और बालगीत के अन्तर की ओर इस काल के कवियों का ध्यान बहुत कम गया था। कुछ ही कवि ऐसे हुए जिन्होंने बच्चों का केवल मनोरंजन करने वाली कवितायें या गीत लिखे।

दूसरे इस काल में बच्चों के लिए प्रार्थना और विनय के गीत बहुतायत से लिखे गये हैं। 'देखो उस ईश्वर की माया! जिसने सारा जगत बनाया', 'विनती सुन लो हे भगवान', 'यही वर दो हमको भगवान' आदि उसी प्रकार के गीत हैं। सन् 1928 में पुस्तक भण्डार लहरिया सराय बिहार से बच्चों के लिए एक पुस्तक 'बाल संगीत' नाम से प्रकाशित हुई थी। उसमें उस समय तक के प्रायः सभी बच्चों के कवियों की कविताओं का संकलन है और वह सभी प्रार्थना गीत है। सन् 1938 में प्रकाशित उसके तीसरे संस्करण की भूमिका में प्रकाशक ने अपने निवेदन में लिखा था – 'इस पोथी को शिक्षकों और बालकों ने बहुत पसन्द किया है जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह तीसरा संस्करण है।' हमारे समाज की यह प्रथा है कि हर शुभ कार्य का प्रारम्भ ईश्वर का नाम लेकर किया जाता है। इस दृष्टि से यह ठीक भी है कि हिन्दी में बालगीत साहित्य के इस आदि काल का श्रीगणेश प्रार्थना गीतों से हुआ है। पर बच्चों की दृष्टि से देखा जाये तो शिक्षा और ज्ञान की बातें बताने वाले गीत जहाँ उन्हें कठपुतलों की तरह नचाना चाहते हैं वहां प्रार्थना और विनय के गीत उन्हें यह बताते हैं कि संसार में कुछ भी ईश्वर की कृपा के बिना प्राप्त नहीं किया जा सकता। ईश्वर एक अव्यक्त अप्रत्यक्ष सत्ता है। बच्चा उसके विषय में न कुछ जानता है न जान सकता है। अधिक से अधिक वह इतना ही समझ सकता है कि इस दुनियां का कोई बनाने वाला होगा। विनय गीतों का उ द्देश्य उस सत्ता को महान से महान मानकर अपने को उसके आगे लघु से लघु अनुभव करना होता है। इसीलिए विनती सुन लो हे भगवान के साथ 'हमें बना लो अपना दास' कहना

भी आवश्यक हो जाता है। लघुता या आत्महीनता की जो भावना इन गीतों से बच्चों में उत्पन्न होती है, वह फिर उनमें आत्म-निर्भरता और आत्म-विश्वास के गुण कैसे उत्पन्न होने दे सकती है। उसे जब यह सिखाया जाता है -

हे प्रभो आनन्द दाता ज्ञान हमको दीजिए,
शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिए।

तो बच्चा समझ लेता है कि ज्ञान का देने वाला ईश्वर ही है। और उसी की प्रार्थना करने से दुर्गुण दूर हो सकते हैं। इससे बच्चे की स्वाभाविक जिज्ञासा की प्रवृत्ति पर आघात होता है और वह स्वयं अपनी इच्छा से गुण-अवगुण अपनाने या त्यागने की चेष्टा ही छोड़ देता है। बच्चों को सामाजिक आचरण-व्यवहार में विनयशील होना सिखाना कोई बुरी बात नहीं है। पर हमारे ही प्राचीन साहित्य में यह बताया गया है कि विनय तो विद्या की देन है। 'विद्या ददाति विनयं'। विद्या ही एक सभ्य सुसंस्कृत और असभ्य पशु मानव के अन्तर को उजागर करती है। विद्या जिज्ञासाओं की पूर्ति से ही प्राप्त होती है। इसलिए बच्चों की जिज्ञासाओं की पूर्ति बाल गीतों के माध्यम से करके ही उन्हें विनयशील बनाया जा सकता है या उद्दण्ड होने से बचाया जा सकता है। विनय और प्रार्थना के यह गीत तो बच्चों के अपने गीत नहीं उन पर आरोपित साहित्य के अन्तर्गत ही माने जा सकते हैं। उनमें बच्चा भगवान से उन्हीं बातों की मांग करता है जो बड़े उसके लिए उपयोगी और आवश्यक समझते हैं जैसे हमें बल दो, बुद्धि दो, यश दो, धन दो, इत्यादि। पर बच्चे को यदि भगवान से मांगने के लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया जाये तो वह उनसे वह चीजें मांगेगा जो उसकी अपनी इच्छा होगी। उपरोक्त 'बाल संगीत' के ही एक प्रार्थना गीत में ठाकुर श्रीनाथ सिंह ने इस ओर संकेत किया है। उन्होंने अपने उस गीत में कहा है -

वही खिलौना दो भगवान
जिससे खेलें, जिसमें खेलें
जिस पर खेलें खेल महान
जिसको खेलें करें कुलेंले
डंडें पेलें गायें गान।

देखने में यह बालगीत 'विनती सुन लो हे भगवान' की एक पैरोडी जैसा मालूम होता है। पर ऐसा हमारे ही दृष्टिदोष के कारण है। बच्चों को स्वतन्त्र रूप से यदि भगवान से प्रार्थना करने का अधिकार दिया जाये तो उनका वास्तविक प्रार्थनागीत यही होगा।

तीसरी प्रवृत्ति जो इस काल के कवियों में पाई जाती है, वह देश-प्रेम और

मातृ-वन्दना के गीत लिखने की है। 'जय जय भारत देश', 'हमारा प्यारा हिन्दुस्तान', 'भारत प्यारा देश हमारा' आदि तरह-तरह के राष्ट्रीय बालगीत लिखे गये। और कुछ गीतों में मातृ-भूमि की वन्दना की गई है जैसे-'हे मातृ-भूमि मेरी हे पितृ-भूमि मेरी', 'जन्म दिया माता-सा जिसने किया सदा लालन पालन' आदि हैं। इन्हीं में से कुछ गीत ऐसे भी हैं जिनमें मातृ-भूमि नहीं केवल माता की वन्दना की गई है। मां और पुत्र के सम्बन्ध बड़े नैसर्गिक होते हैं। मां पहला व्यक्ति होती है जिसे बच्चा संसार में अपनी बुद्धि से पहचानता है। उसका प्रभाव बच्चे पर साधारणतया किसी न किसी रूप में आजीवन बना रहता है। पर बच्चे की बुद्धि का विकास तभी सम्भव हो पाता है जब वह मां से अलग होकर स्वयं अपनी बुद्धि से सारी दुनिया को पहचानता और सोचता समझता है। इसीलिए कहा जाता है कि जो बालक बहुत अधिक समय तक अपनी मां की गोदी से चिपके रहते हैं उनका मानसिक विकास नहीं हो पाता। बच्चे की मां के प्रति प्रेम की भावना ही दूसरे रूप में मातृ-भूमि या देश के प्रति प्रेम के रूप में प्रकट होती है। इसलिए मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखें तो वह बच्चे के मानसिक विकास में बहुत अधिक सहायक नहीं हो सकती।

इस काल के अनेक राष्ट्रीय बालगीतों में बच्चों को धर्मवीर, कर्मवीर आदि बनने की प्रेरणा दी गई है और उन्हें देश के लिए प्राणोत्सर्ग कर देने तक के लिए प्रेरित किया गया है। जैसे -

हम वीर हैं, रण धीर हैं, बल वीर हैं बलवान,
मर जायेंगे, कट जायेंगे, हो जायेंगे बलिदान।

देश के लिए मर कट कर बलिदान होने की यह इच्छा स्वाभाविक रूप से किसी बच्चे में नहीं होती। वह अपने विकास के प्रति इतना सजग और स्वार्थी होता है कि अपने मर कट जाने की बात तो कभी सोच ही नहीं सकता। और इस दृष्टि से यह देश प्रेम और मातृ वन्दना के गीत बच्चों की सरल स्वाभाविक भावनाओं के विपरीत ही कहे जायेंगे।

पर इस काल में बच्चों की अपनी मनोभावनाओं, कल्पनाओं और इच्छा आकांक्षाओं को व्यक्त करने वाले बालगीत भी कम नहीं लिखे गये। पं. श्रीधर पाठक, अयोध्यासिंह उपाध्याय, डॉ. विद्याभूषण विभु, रामनरेश त्रिपाठी, ठाकुर श्रीनाथ सिंह, स्वर्णसहोदर, सोहनलाल द्विवेदी, रमापति शुक्ल, गौरीशंकर लहरी, आरसी प्रसाद सिंह, सत्यप्रकाश कुलश्रेष्ठ आदि अनेक कवियों ने विशेष रूप से इसी प्रकार के बालगीत लिखने की ओर ध्यान दिया। डॉ. विद्याभूषण विभु के 'मुर्गा बोला कुकड़ूं कूँ' तथा 'झूम हाथी-घूम हाथी', लक्ष्मी निधि चतुर्वेदी का 'मेरी बढ़िया मोटर कार', शम्भुदयाल

सक्सेना का 'खिड़की है मकान की आंख', स्वर्णसहोदर के 'नटखट हम हां नटखट हम', ठाकुर श्रीनाथसिंह के 'मक्खी की निगाह' तथा 'झट पट उत्तर दो गोपाल', रमापति शुक्ल का 'आलपीन का सिर', आनन्दीप्रसाद श्रीवास्तव का 'मेढक', देवीदत्त शुक्ल का 'अच्छा होता यदि मैं होती उड़ने वाली तितली', आरसीप्रसाद सिंह का 'हमारे साथ देखो तो अरी मां चाँद चलता है', देवीप्रसाद गुप्त कुसुमाकर का 'दादा का मुँह', रामनरेश त्रिपाठी का 'आई एक छींक नन्दू को', बलभद्र प्रसाद गुप्त रसिक का 'नदी कहाँ को जाती हो', ए. फाटक वाला प्रेम सखा का 'ओस की बूँदों तुम्हारा घर कहाँ?', सोहनलाल द्विवेदी के 'चिड़िया' और 'आम' आदि बहुत से गीत इस काल के विशुद्ध बाल गीत कहे जा सकते हैं। कुछ बाल गीतों में भाव और भाषा शैली का अद्भुत साम्य भी हमें मिलता है जैसे सुखराम चौबे गुणाकर के 'दाता का गीत' और कामता गुरु का 'छड़ी गीत', ठाकुर श्रीनाथ सिंह का 'चलो सहेली चलो मदरसे' और सोहनलाल द्विवेदी का 'राजा बेटा चला मदरसे' या द्विवेदी जी के 'फूलों से तुम हंसना सीखो' और गौरीशंकर लहरी के 'फूलों से हम हँसना सीखें' बालगीतों में।

इस काल में लिखे गये बालगीतों में से कौन कितना लोकप्रिय हुआ और कौन नहीं यह इस बात पर निर्भर नहीं कि बड़े-बड़े विद्वानों या शिक्षक अध्यापकों ने उसे कितना सराहा बल्कि यह इस बात से जाना जा सकता है कि बच्चों ने उसे कितना पसन्द किया और वह बच्चों तक पहुँच भी पाया या नहीं। इस काल के बहुत से बालगीत प्रकाशन की सुविधाओं के अभाव से आकर्षक ढंग से प्रकाशित होकर बच्चों तक पहुँच ही नहीं पाये। उदाहरण के लिए सत्य प्रकाश कुलश्रेष्ठ ने कुछ हर दृष्टि से बहुत अच्छे बालगीत लिखे हैं। वह कापी में लिखें ही रह गये और उनका स्वर्गवास हो गया। वह शायद किसी पत्र-पत्रिका में भी प्रकाशित नहीं हो पाये। और इस काल के अनेक श्रेष्ठ कवियों ठाकुर श्रीनाथ सिंह, शम्भु दयाल सक्सेना, विद्या भूषण 'विभु', रामसिंहासन सहाय मधुर, सुभद्रा कुमारी चौहान आदि के बालगीतों की जो पुस्तकें प्रकाशित भी हो सकी हैं वह चित्र रहित और इतनी घटिया छपाई की हैं कि बच्चे यदि उन्हें देखकर भी उन्हें पढ़ने के लिये लालायित नहीं होते तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है। बच्चे स्वयं चाहकर भी अपने लिए लिखे बालगीतों तक नहीं पहुँच पाते। वह तो उन तक पहुँचाये जाते हैं। इसमें अध्यापकों और अभिभावकों की बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पर इस काल में हमारे देश में वयस्कों में शिक्षा का इतना अभाव था कि बालगीतों की बच्चों के लिए उपादेयता ही सर्वसाधारण में एक असाधारण बात बनी रही।

लोकप्रियता के लिए बालगीतों की दूसरी कसौटी उनके स्वयं में ही इतना अच्छा होना है कि बच्चे एक बार उन्हें पढ़ या सुनकर अपनाये बिना न रह सकें। बालगीत लेखन की एक विशेष विधा है। उसमें एक-एक शब्द को बहुत नाप-तोल और परख कर रखना होता है। निरर्थक शिशु गीतों को छोड़कर यदि किसी बाल गीत में कहीं कोई भी शब्द अनावश्यक होता है तो बच्चे की रुचि न केवल उस बल्कि किसी भी बालगीत को पढ़ने से हट जाती है बच्चे अपने पूर्व परिचित विषयों पर सरल भाषा में सीधे सादे ढंग से लिखे गये बालगीत चाहते हैं। बच्चों के लिए इस काल में तोता, मैना, कौआ, मोर बिल्ली, कुत्ता, मेंढ़क, मोटर कार, बन्दर, तितली, पतंग, कागज की नाव, नदी, मैदान चन्दा मामा, आदि विषयों पर बालगीत रचे गये। पर इनके अतिरिक्त और भी बहुत से विषय हैं जैसे गुलाब, कुर्सी, घर, सागर, झरना, आदि जिन पर लिखे अच्छे बालगीत हमें नहीं मिलते। भाषा की दृष्टि से यह काल हिन्दी का व्याकरण सम्मत शुद्ध संस्कृत रूप स्थिर होने के प्रयास का था। इसलिए हमें बालगीतों में बहुत से व्याकरण दोष और ग्रामीण शब्दों के प्रयोग देखने को मिलते हैं। घबरावे, दिखलावे, नृप सोहें, इक बहेलिए ने इक काल, टो टो कर चलता, ढिठाई, आगी पानी में बढ़ जाओ, नहिं, कई एकों जैसे प्रयोग आज के उन बच्चों को अपने गीतों में कभी ग्राह्य नहीं हो सकते जिन्हें स्कूलों में शुद्ध सुसंस्कृत, हिंदी भाषा के माध्यम से शिक्षा देने के प्रयास किये जाने लगे हैं। मुहावरों के कुछ गलत प्रयोग भी इस काल के बालगीतों में पाये जाते हैं जैसे-आसमान मस्तक पर तोल, भूखों से आप रहकर, अंगारे चाट-चाट जाओ, नोच-नोच तू डालेगा चट इत्यादि। कुछ ऐसे कठिन शब्दों का प्रयोग हुआ है जिन्हें छोटे बच्चे साधारणतया नहीं समझ सकते जैसे-द्रुमादिक, शील-शिक्षामृत, आत्मानन्द अमृत का प्याला, पिंड दान, तरुणाई इत्यादि। अनुप्रास दोषों की भी कमी नहीं है और कहीं-कहीं लय दोष भी पाये जाते हैं जैसे -

जन-जन भारत का करे मान,
है भारत वर्ष हमारी शान।

या

नहिं रंग अबीर वहां पर था,
पर थी इक लाल रक्त की होली।

जो बालगीत बच्चों को सम्बोधन करके लिखे जाते हैं जैसे 'लड़को! बन्दर वाला आया', 'भाई! देखो तो यह नैया', 'देखो कैसी प्यारी बुलबुल', 'ओ हो! कैसी घूम रही है' वह बच्चों को कभी रुचिकर नहीं लगते। और उनमें यदि कुछ करने

का आदेश दिया गया हो तब तो बच्चे कभी उसका पालन करने को तैयार हो ही नहीं सकते। जैसे 'बच्चो! मेरी बात मान लो' से प्रारम्भ होने वाले बालगीत को पढ़कर बच्चे उसकी हर बात की अवहेलना ही करेंगे। भाषा पर अधिकार की कमी के कारण कहीं-कहीं भाव पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो पाया है और जो भाव कवि व्यक्त करना चाहता है ठीक उसका उलटा भाव व्यक्त हो गया है। जैसे 'मैल न थोड़ा दिल में लाऊँ' से कवि कहना चाहता था कि मैं थोड़ा सा मैल भी दिल में न लाऊँ। पर कोई बच्चा इसे पढ़कर यह भाव भी ग्रहण कर सकता है कि मैं थोड़ा मैल दिल में न लाऊँ, अधिक लाऊँ। बात को बढ़ाचढ़ाकर या अनावश्यक विस्तार से कहने का ढंग भी बच्चों को पसन्द नहीं आता। वह कम से कम शब्दों में कही गई स्पष्ट बात ही पसन्द करते हैं। जैसे -

> कुछ तो बतला दो तुम हमको नदी! कहाँ से आती हो
> यह पानी का ढेर और यह लहर कहाँ से लाती हो।

इसमें कही हुई बात को यदि इस प्रकार कह दिया गया होता -

> नदी! कहां से आती हो
> लहर कहां से लाती हो।

तो शायद बच्चे उसे अधिक पसन्द करते। इसी प्रकार की कमियों के कारण भी इस काल में लिखे गए बालगीत बच्चों में अधिक लोकप्रिय नहीं हो पाए।

बालगीत तुलसीदास की रामचरितमानस की तरह स्वांन्तः सुखाय नहीं लिखे जाते। उन पर गालिब की पंक्तियां घटित नहीं होती-'बक रहा हूँ जुनूँ में क्या-क्या कुछ। कुछ न समझे खुदा करे कोई।' बड़ों के लिए गीतों की रचना भी कवि द्वारा स्वान्तः सुखाय की जा सकती है पर बालगीतों की रचना नहीं। उनकी रचना के समय तो कवि को प्रत्येक शब्द का प्रयोग करते हुए यह ध्यान रखना पड़ता है कि उसके पाठक या श्रोता उसके भाव को किस रूप में कहाँ तक ग्रहण कर सकेंगे। पाठक या श्रोता की ग्राह्यता की सीमाओं को भी कवि को ध्यान में रखना पड़ता है। वह सीमायें भाषा की ही नहीं भावों की भी होती हैं। कवि उन सीमाओं की समझ जितनी अधिक रखता है और साथ ही जितनी अधिक संप्रेषणीयता के साथ वह उन भावों को ग्रहण कर सकता है जो वास्तव में उसके अपने नहीं उसके पाठकों और श्रोताओं के ही होते हैं, उतना ही वह बालगीत की रचना में सफल हो सकता है। बाल गीतकार की स्थिति उस समय उस भुक्त-भोगी वीतरागी की जैसी होती है जो अपने पाठक के मन के भाव का पूरी गहराई से भोग करते हुए भी उससे सर्वथा तटस्थ होता है। भाव यदि पाठक का नहीं उसके अपने मन का होता तो

उसे तटस्थ होने की कोई आवश्यकता न होती। वह कबीर की तरह अपनी सधुक्कड़ी भाषा में भी उसे व्यक्त कर देता तो उसकी कविता महत्वपूर्ण बन जाती। पर बालगीत की रचना में भोग और योग दोनों के समुचित सामंजस्य के बिना काम ही नहीं चल सकता। इसीलिए यह स्वीकार करना पड़ता है कि बच्चों के लिए लिखना बड़ों के लिए लिखने की अपेक्षा कहीं अधिक कठिन काम है।

इतिहास की दृष्टि से यह बालगीतों की रचना का प्रारम्भिक काल ही था। फिर भी इस काल में कई ऐसे कवि हुए हैं जो अपनी साधना में रत होकर उस स्थान तक पहुँच गये थे जहां से बालगीत का उद्‌गम होता है। इस काल में रचे गये बालगीतों की कई पुस्तकें वह भले ही स्वातन्त्रोत्तर काल में ही प्रकाश में आई हों बालगीतों की श्रेष्ठ पुस्तकें कही जा सकती हैं उनमें हम इनकी गिनती कर सकते है - अयोध्यासिंह उपाध्याय की 'चन्द्र खिलौना', 'खेल तमाशा', रामनरेश त्रिपाठी की 'बानर संगीत', 'मोहन माला', 'मोहन भोग', विद्याभूषण 'विभु' की 'पंखशंख', 'ता', बबुआ, 'चन्दा', स्वर्ण सहोदर की 'गिनती के गीत', 'चगन मगन' और 'नटखट हम', ठाकुर श्रीनाथ सिंह की 'खेल घर', 'पिपहरी', सोहन लाल द्विवेदी की 'दूध बताशा', 'बाल भारती', 'शिशु भारती', रमापति शुक्ल की 'अंगूरों का गुच्छा', 'हुआ सवेरा', ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी की 'रेणु', अमृतलाल दुबे की 'रसगुल्ले', रामेश्वर गुरु 'कुमार हृदय' की 'अभिनय गीत', कमला चौधरी की 'चित्रों में लोरियां', आरसी प्रसाद सिंह की 'चन्दा मामा', डॉ.एस.पी. खत्री की 'हमारी नाव चली'।

बालगीतों के अतिरिक्त बच्चों के लिए लिखे जाने वाले शिशु गीत, नर्सरी राइम्स, नानसेंस राइम्स, लोरियाँ, प्रभातियाँ, प्रयाण गीत, अभिनय गीत और पद्य पहेलियां भी बालगीत साहित्य के अन्तर्गत मानी जाती हैं। प्रस्तुत काल में नानसेंस राइम्स तो बिल्कुल लिखी ही नहीं गईं। डॉ. विद्याभूषण विभु ने अवश्य कुछ अच्छे शिशु गीत लिखे हैं। उनके अतिरिक्त पं. सोहनलाल द्विवेदी, स्वर्णसहोदर, ठाकुर श्रीनाथ सिंह, टीकाराम अंशुमाली, सत्यप्रकाश कुलश्रेष्ठ, डा. राजेश्वर गुरु तथा कुछ अन्य कवियों के गीतों या गीतांशों को शिशुगीतों के अन्तर्गत लिया जा सकता है। बच्चों के लिये विशेष रूप से शिशुगीत लिखने का प्रचलन वास्तव में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ही हुआ। लोरियाँ और प्रभातियां भी बहुत कम ही लिखी गयीं। राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर कुछ प्रयाण गीत भी लिखे गये। रामजीलाल शर्मा, रामनरेश त्रिपाठी, गिरजा कुमार घोष ने कुछ अभिनय गीत भी लिखे हैं। पर उन्हें लिखने का श्रेय विशेष रूप से रामेश्वर गुरुजी को है। उनकी एक पुस्तक 'अभिनय गीत' नाम से प्रकाशित हुई है। उसमें कुछ अच्छे अभिनय गीत हैं जो मंच पर प्रस्तुत भी किये

जा चुके हैं। उसमें उन्होंने अपने पिता पं. कामताप्रसाद गुरु की एक लम्बी कविता 'छड़ी का गीत' को भी एक अभिनय गीत का रूप देकर सम्मिलित कर दिया है।

अपने इस इतिहास में हमने पद्य कथाओं को भी बालगीत साहित्य के अन्तर्गत मान लिया है क्योंकि उनके द्वारा भी हिन्दी में बालगीत साहित्य के अभाव की पूर्ति करने की चेष्टा की गई थी। वैसे बालगीत और पद्य कथा में बड़ा अन्तर है। और इसका आभास मुझे (सेवकजी) उस समय हुआ जब एक शोध छात्रा ने मुझे अपने शोध-प्रबन्ध के कुछ अंश दिखाये। उसमें बहुत से बालगीतों को पद्य कथायें मानकर उनकी व्याख्या की गई थी। बालगीत प्रायः पद्यकथा का जैसा रूप लिए हुए होते हैं। पर दोनों को लिखने की मूल प्रेरणा में आकाश पाताल का अन्तर होता है। बालगीतकार का उद्देश्य अपने मनोभावों को व्यक्त करना होता है और वह केवल भावाभिव्यक्ति के लिए अपनी कल्पना से किसी भी रूप में किन्हीं पात्रों का सृजन करके उन्हें माध्यम बना लिया करता है। वह उसे लिखने में किसी पूर्व निश्चित कथानक से घिरा बंधा नहीं होता। पर पद्य-कथाकार के पास एक सुनी सुनाई लिखी या मनगढ़न्त कथा पहले से मौजूद होती है। उसका काम उसे छन्द, लय और अनुप्रासों से बांधकर एक कविता का रूप दे देना होता है। बालगीतकार के काम ढर्रे का होता है उसमें छन्दों का निर्वाह करते हुये तुकबन्दियों से भी काम चलता रह सकता है। सूर के भावातिरेक में बहकर लिखे गये अलग अलग पदों और तुलसी के प्रबन्ध को प्रधानता देकर लिखे गये रामचरितमानस को देखकर बालगीत और पद्यकथा के इस अन्तर को समझा जा सकता है।

इस काल की पद्य कथाओं में सबसे अधिक लोकप्रिय सीताराम बी.ए. की 'बैरगिया नाला' हुई। इसके अतिरिक्त दामोदर सहाय कवि किंकर की 'मोर और बक्चा', 'फूट का फल', ज्योति प्रसाद मिश्र 'निर्मल' की 'चंचल बन्दर', 'खट्टे अंगूर', सुदर्शनाचार्य की 'हाऊ और बिलाऊ', गुलाब रत्न बाजपेयी की 'प्रतिज्ञा पालन', शंभू दयाल त्रिपाठी 'नेह' की 'वहमी पंडित', विद्या भास्कर शुक्ल की 'मन भाऊ मल्लाह', 'बुग्गा मुग्गा', सिद्धनाथ दीक्षित संत की 'निन्यानवे का चक्कर', रामलोचन शर्मा कंटक की 'कुत्ता और सिंह', 'शिकारी और तीतर', सुखदेव प्रसाद चौबे की 'ज्ञानी और मूर्ख', रामगोपाल रुद्र की 'भग्गू भाई', 'रंगा सियार', विद्याभूषण विभू की 'शेखचिल्ली', 'गोबर गणेश', उल्लेखनीय पद्य कथायें हैं। इनमें से अनेक लोककथायें पुस्तक रूप में भी प्रकाशित हो चुकी हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व के उस काल में देश की जनता में शिक्षा का सर्वथा

समुचित ध्यान दे ही नहीं पाते थे। समाज के बहुत थोड़े से बुद्धिजीवी लोग ही बालसाहित्य के माध्यम से बच्चों के विकास की बात और उसके महत्व को समझ सकते थे। प्रेस और प्रकाशन की अपेक्षित सुविधायें भी नहीं थीं। बालसाहित्य के विकास में सरकार की ओर से किसी प्रकार के प्रोत्साहन की बात सोची भी नहीं जा सकती थी। जो पुस्तकें उस काल में प्रकाशित होकर सामने आईं वह ऐसी साज सज्जा विहीन थीं कि उन्हें देखकर कोई बच्चा उनकी ओर आकर्षित भी नहीं हो सकता था। बाल-मनोविज्ञान का अध्ययन भी तब तक हमारे देश में नहीं हुआ था। विदेशी मनोवैज्ञानिकों के अध्ययन के आधार पर ही सही या गलत थोड़ा बहुत बालमन को समझा जा सकता था। इस प्रकार इतने अवरोधक तत्वों से घिरे हुए बालगीत साहित्य का उस काल में जितना विकास हो सका उसे हम एक उपलब्धि ही कहेंगे।

(2) स्वातन्त्र्योत्तर बालगीत साहित्य
(1947-1982)

सन् 47 के बाद देश की जनता में एक ऐसी लहर आई जैसी पहले कभी नहीं देखी गई थी। सैकड़ों वर्ष की दासता के बाद हमें स्वयं अपने ऊपर शासन करने का अधिकार मिला था। देश में एक नया संविधान बना जिसका उद्देश्य था कि एक वर्ग/वर्ण/भेद-विहीन शोषणरहित समाज की स्थापना की जा सके। नागरिकों को स्वतन्त्रता के कुछ मौलिक अधिकार दिए गए जिनमें भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, समाज संगठन की स्वतन्त्रता, सम्पत्ति रख सकने की स्वतन्त्रता आदि मुख्य थे। संविधान में दिए हुए निर्देशक तत्वों के अनुमार शराबबन्दी करने, छुआछूत को दूर करने, आर्थिक विषमता को दूर करने के लिए सहकारी उद्योग धन्धे चलाने आदि के लिए व्यापक पैमाने पर प्रयत्न किए जाने लगे। केन्द्र और राज्यों में बालिग मताधिकार के आधार पर चुनी हुई सरकारें बनीं और नगरों से लेकर ग्रामों तक अपना प्रबन्ध स्वयं करने के लिए ग्राम सभायें और पंचायतें कायम हो गयीं। उद्योग धन्धों का विकास इस तेजी से होने लगा कि देश आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी और सम्पत्ति सुख सम्पन्न बनने लगा। भारत ने जो पंचशील के सिद्धांत पर आधारित निर्गुट देशों के एकीकरण की नीति अपनाई उससे संसार के अन्य देशों में उसकी प्रतिष्ठा भी बढ़ने लगी। उसकी धर्मनिरपेक्षता की नीति ने स्वतन्त्रता पूर्व जो हिन्दू-मुस्लिम विवाद उठ खड़े हुए थे उन्हें भी शान्त कर दिया। हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार कर लिया गया और किसी भी राज्य पर उसे जबरदस्ती आरोपित न

करने की नीति से राज्यों और केन्द्र में सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध बने रहे। इस बीच देश को कई बार पाकिस्तान और एक बार चीन से युद्ध में लिप्त होना पड़ा उन मुसीबतों को भी हमने कुशल नेतृत्व की सहायता से सफलतापूर्वक झेलकर पार किया।

इस प्रकार देश में निर्माण और विकास कार्य अभूतपूर्व सफलता के साथ निरन्तर अग्रसर होते रहे। पर कुछ बातें ऐसी भी देखने में आयीं जिनसे लगता है कि देश में स्वतन्त्र जनतांत्रिक दृष्टिकोण लिए हुये चरित्रवान स्वाभिमानी व्यक्तियों का निर्माण बड़े पैमाने पर न हो सका। धनियों द्वारा निर्धनों का शोषण जारी रहा। राष्ट्रीयता के स्थान पर जाति बिरादरीवाद भीतर पनपता गया। शासन से जुड़े हुए लोगों की स्वार्थपरता के कारण भ्रष्टाचार ऐसा फैल गया कि उसे रोकने के सारे उपाय निष्फल होते गये। देश पर वर्षों तक एकछत्र शासन करने वाली कांग्रेस के नेताओं की आपसी फूट ने राजनीति में नैतिकता के सिद्धाँतों को और भी लुप्त कर दिया और कहीं कहीं घोर अराजकता जैसी स्थितियाँ उत्पन्न होने लगीं। शासकों ने स्थितियों पर काबू पाने के लिए आपातकाल की घोषणा की पर उसके भी कोई सुफल सामने नहीं आये।

इस प्रकार जब हम देश में शासक वर्ग के लोगों या उनसे जुड़े हुये स्थानीय नेताओं तथा कुछ शिक्षित नागरिकों को छोड़कर देखें तो जन साधारण की सामाजिक स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ। आय के साथ-साथ मंहगाई भी बढ़ती रहने के कारण उनकी गरीबी ज्यों की त्यों बनी रही। सामाजिक न्याय सुलभ न होने से उनमें असुरक्षा की भावना बढ़ी जिसके कारण वह अधिकाधिक वर्गों में संकुचित होते गये। उनका आकर्षण धार्मिक बाह्याडम्बरों के प्रति बढ़ता गया। वह भाग्यवादी बनते गये। शिक्षा संस्थायें अत्यधिक राजनीतिक हस्तक्षेप और बढ़ती हुई शिक्षित बेरोजगारी से उत्पन्न युवा आक्रोश की विघटनकारी प्रवृतियों के कारण विद्या के मन्दिर नहीं रहीं। पुराने आदर्श और सामाजिक जीवन के मूल्य और मान्यतायें छिन्न-भिन्न हो गये और उनके स्थान पर नये आदर्शों, मूल्यों और मान्यताओं का निर्माण नहीं हो सका।

देश की उस राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा वैचारिक पृष्ठभूमि में हिन्दी में बाल साहित्य के सृजन और विकास का क्रम स्वतन्त्रता के बाद प्रारम्भ हुआ। उससे पहले देश की 80-85 प्रतिशत ग्रामीण जनता सर्वथा अज्ञानी और अशिक्षित थी। बच्चे सर्वथा उपेक्षित और असहाय अवस्था में रहते थे। उनके माता-पिता और अभिभावकों को ही जब अपनी परिस्थितियों और घटित होने वाली घटनाओं के कारणों और परिणामों का कोई ज्ञान नहीं था तो वह अपने बच्चों को कोई ज्ञान की बातें

छोटे बच्चों की शिक्षा के लिये कोई स्कूल नहीं थे। कुछ विद्यालय नगरपालिकाओं द्वारा चलाए जाते थे। उनमें भी शिक्षा का समुचित प्रबन्ध नहीं था। बच्चों को मार-मारकर अ, ब, स, सिखाया जाता था और गिनती याद कराई जाती थी। कुछ थोड़ी सी पुस्तकें थीं जिन्हें पाठ्य-पुस्तक कहकर बच्चों को तोतों की तरह रटा दिया जाता था। हां! कुछ अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा देने वाले गिने-चुने स्कूल तब भी हमारे देश में थे पर उनमें कुछ गिने-चुने धनी-मानी परिवारों के बच्चे पढ़ने के लिए भेजे जा सकते थे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद देश के गण्यमान्य नेताओं के बच्चे भी उन्हीं स्कूलों में भेजे जाने लगे थे। पर अनेक राज्यों में प्राइमरी शिक्षा अनिवार्य कर दी गई थी। नगर पालिकाओं और जिला परिषदों द्वारा मुहल्ले-मुहल्ले और गाँव-गाँव में प्राइमरी स्कूल खोल दिये गये। इससे बच्चों की शिक्षा को एकाएक अभूतपूर्व प्रोत्साहन मिला। उनमें और अधिक ज्ञान प्राप्त करने और अधिक पुस्तकें पढ़ने की इच्छा बढ़ने लगी। इसीसे प्रेरित और प्रभावित होकर विशेष रूप से नगरों में लोगों ने जगह-जगह बच्चों के लिए प्राइवेट स्कूल खोल दिए। इन स्कूलों की यह अनिवार्य आवश्यकता बन गई कि बच्चों को पाठ्यक्रम निर्धारित करके या अनौपचारिक रूप से पढ़ने को देने के लिए बाल साहित्य की कुछ उपयुक्त पुस्तकें होनी चाहिए।

बच्चों की बढ़ती हुई शिक्षा के इस वातावरण में केन्द्र और राज्य सरकारों का ध्यान भी बाल साहित्य की ओर गया। उन्होंने बाल साहित्य लेखकों को कुछ पुरस्कार प्रतिवर्ष देने प्रारम्भ कर दिये। केन्द्र सरकार ने जहां एक ओर चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट तथा नेशनल बुक ट्रस्ट जैसी बाल साहित्य प्रकाशित करने वाली संस्थाओं की स्थापना में योगदान दिया वहीं दूसरी ओर एक राष्ट्रीय शैक्षिक एवं अनुसंधान परिषद की भी स्थापना की, जिसके द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर बच्चों के लिए पठनीय साहित्य के सृजन की समस्याओं और योजनाओं पर विचार करके उन्हें क्रियान्वित किया जाने लगा। केन्द्र ने एक साहित्य अकादमी की स्थापना तो की पर उसी स्तर की बाल साहित्य का समुचित मूल्यांकन करके समुचित प्रोत्साहन देने वाली किसी संस्था का निर्माण नहीं किया। न नागरी प्रचारिणी सभा या हिन्दी साहित्य सम्मेलन जैसी हिन्दी सेवी संस्थाओं ने ही बाल साहित्य के विकास की ओर कुछ ध्यान दिया। हिन्दी के महान कहे जाने वाले लेखक और कवि भी बाल साहित्य की ओर से उदासीन बने रहे। पर नए लेखकों और कवियों में से अनेकानेक आकर्षित होकर बाल साहित्य सृजन में प्रवृत्त होने लगे। इसलिए हिन्दी के बड़े-बड़े लेखकों की दृष्टि

रहा। रामधारी सिंह दिनकर और बच्चन जैसे दो चार कवि ही उसकी ओर आकर्षित होकर आये। अंग्रेजी के सुप्रसिद्ध कवि हीरेन्द्र नाथ चट्टोपाध्याय ने भी अपनी अंग्रेजी की सब बाल कवितायें हिन्दी में लिख डाली हैं।

इस काल में कुछ स्वयं सेवी-संस्थाओं ने हिन्दी में बाल साहित्य के विकास में योगदान देने के कुछ प्रयास किये। उनमें अखिल भारतीय बाल साहित्यकार परिषद, हिन्दी बाल गीतकार परिषद, लखनऊ; बाल साहित्य अकादमी, वाराणसी, बाल साहित्य अकादमी, लखनऊ, मध्य भारत हिन्दी साहित्य सभा, ग्वालियर, बाल सेवक बिरादरी, कानपुर के नाम उल्लेखनीय हैं। पर उनमें से कोई भी राजकीय या जन-सहयोग के बिना अपने घोषित उद्देश्यों की पूर्ति में अधिक सफल न हो सकीं। अ. भा. बाल साहित्यकार परिषद के दो बड़े महत्वपूर्ण सम्मेलन इलाहाबाद और लखनऊ में आयोजित हुए। और उससे यह आशा थी कि वह अपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन जैसी संस्था खड़ी कर देने के उद्देश्यों में सफलता की ओर अग्रसर हो सकेगा। पर वह आशा भी धूमिल होती चली गई। अब जब केरल में इंस्टीट्यूट आफ चिल्ड्रन्स लिटरेचर, आंध्र में बाल साहित्य अकेडमी, उड़ीसा में रिसर्च इंस्टीटयूट आफ चिल्ड्रन्स लिटरेचर जैसी संस्थायें राज्य की ओर से मलयालम, तेलुगु और उड़िया भाषाओं में बाल साहित्य के विकास के लिए स्थापित हो चुकी हैं तो इस बात की आवश्यकता का और भी अनुभव होने लगा है कि उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार और राजस्थान में राज्यों की ओर से बाल सहित्य अकादमी जैसी संस्थाओं का गठन किया जाना चाहिए।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद बच्चों की बढ़ती हुई रुचि और पढ़ने की भूख का अनुमान करके एक साथ सैकड़ों नए लेखकों ने सभी विधाओं में लिख लिखकर बाल साहित्य का भण्डार भरना प्रारम्भ कर दिया। विराज एम.ए., गोकुल चन्द सन्त, नृसिंह शुक्ल, प्रशान्त, व्यथित हृदय, नरायन व्यास, विशम्भर सहाय प्रेमी, शारदा मिश्रा शिवमूर्ति वत्स, हरिकृष्ण देवसरे, मनहर चौहान आदि ने अनेक पौराणिक, ऐतिहासिक और परी कथायें बच्चों के लिए लिखीं। वैज्ञानिक बाल कथायें रमेश वर्मा, मेला राम बफा, देवकुमार मिश्र, रत्न प्रकाश 'शील', जय प्रकाश भारती, प्रकाश पंडित, संतोष नरायण नौटियाल, रामचन्द्र तिवारी आदि की बहुत पसन्द की गयीं। दैनिक जीवन की यथार्थवादी कहानियों के लेखन के क्षेत्र में कुदेसिया जैदी, बालबन्धु, रमेश भाई, शिवमूर्ति वत्स, मनोरमा मालवीय, शकुन्तला मिश्रा, सुमित्रा कुमारी सिन्हा, नारायण प्रसाद अरोड़ा, बालकृष्ण एम.ए., रामजन्म सिंह 'शिरीष', शशि प्रभा शास्त्री, राजेन्द्र

शिवानी आदि का उल्लेखनीय योगदान रहा। संसार के सब देशों और भारत के सब प्रदेशों की लोक कथायें भी बालोपयोगी बनाकर विभिन्न लेखकों द्वारा लिख डाली गई। अयोध्या प्रसाद झा, मनहर चौहान, हिमांशु श्रीवास्तव, सत्यप्रकाश अग्रवाल, कृष्ण चन्द्र, लक्ष्मी नारायण लाल, श्री कृष्ण, देवेन्द्र कुमार, मनोहर वर्मा, मस्तराम कपूर, मुद्रा राक्षस, भगवत शरण उपाध्याय, रामकुमार भ्रमर, विभा देबसरे, राधेश्याम प्रगल्भ आदि ने कई श्रेष्ठ बाल उपन्यास बच्चों के लिए लिखकर दिये। बाल नाटक भी इस काल में बहुत से लिखे गये। उनके लेखकों में केशव चन्द्र वर्मा, मंगल सक्सेना, विमला लूथरा, आनन्द प्रकाश जैन, विष्णु प्रभाकर, बालक राम नागर, कमलेश्वर, मस्तराम कपूर, चिरंजीत, सरस्वती कुमार दीपक, रेखा जैन, हरिकृष्ण देवसरे, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, लक्ष्मी नारायण लाल, रामेश्वर दयाल दुबे, उमाकान्त मालबीय के नाम उल्लेखनीय हैं। जीवनी और विविध ज्ञानवर्धन करने वाले बालसाहित्य की भी बहुत पुस्तकें इसी काल में लिखी गयीं।

प्रकाशकों ने बाल साहित्य के प्रकाशन में सहयोग ही नहीं दिया, उसे एक व्यवसाय के रूप में लेकर खूब प्रचारित किया और खूब धन कमाया। बाल साहित्य के उन प्रमुख प्रकाशकों में इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद; साहित्य भवन, इलाहाबाद; रामनरायन लाल एण्ड संस, इलाहाबाद; शकुन प्रकाशन, दिल्ली; आत्माराम एंड संस, दिल्ली; राजपाल एंड संस, दिल्ली; पराग प्रकाशन, दिल्ली; प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, दिल्ली; चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट, दिल्ली; नेशनल बुक ट्रस्ट, दिल्ली; हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी; मिश्रा ब्रादर्स, अजमेर; जीवन शिक्षा मुद्रणालय, वाराणसी; राष्ट्रीय प्रकाशन, लखनऊ हेम कुन्ट प्रेस, दिल्ली; लोक चेतना प्रकाशन, जबलपुर; सर्व सेवा संघ, वाराणसी; राजकमल प्रकाशन, दिल्ली; नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली; आर्य बुक डिपो, दिल्ली आदि के नाम लिए जा सकते हैं। इंडिया बुक हाउस एजुकेशन ट्रस्ट, बंबई; थामसन प्रेस लिमिटेड, दिल्ली, विकास पब्लिकेशन्स, दिल्ली आदि कुछ अंग्रेजी के प्रकाशकों ने भी हिन्दी बाल साहित्य का प्रकाशन प्रारम्भ कर दिया है।

सन् 1960 में अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ द्वारा हिन्दी में सबसे अधिक बिकने वाली पुस्तकों का एक सर्वेक्षण कराया गया था। उससे ज्ञात हुआ कि सबसे अधिक बिकने वाली बड़ों के उपन्यास और कहानियों की पुस्तकों को छोड़कर बाल साहित्य की ही पुस्तकें हैं।

बाल पत्र-पत्रिकाओं का बाल गीत साहित्य के विकास में इस काल में काफी योगदान रहा है। पुराने 'शिशु', 'बालक', 'बाल सखा' और स्वतन्त्रता प्राप्ति से कुछ ही बर्ष पूर्व प्रकाशन प्रारम्भ करने वाले मनमोहन (इलाहाबाद), बालबोध (इलाहाबाद),

कुमार (ग्वालियर), होनहार (लखनऊ) राजा भैया (दिल्ली) के अतिरिक्त बच्चों के लिए अनेकानेक मासिक इस काल में प्रकाशित हुए। इनमें से यह कुछ उल्लेखनीय हैं - शेरबच्चा (इलाहाबाद) 1947, लल्ला (इलाहाबाद) 1948, चन्दा मामा (मद्रास) 1949, बाल भारती (दिल्ली) 1948, वानर (जयपुर) 1954, पराग (बम्बई) 1958, वैज्ञानिक बालक (जयपुर) 1964, चुन्नू मुन्नू (पटना), जीवन शिक्षा (वाराणसी), मिलिन्द (दिल्ली), मुकुल (जयपुर), शेरसखा (कलकत्ता), नंदन (दिल्ली), रानी बिटिया (वाराणसी), बेसिक बाल शिक्षा (लखनऊ), बाल स्पुतनिक (दिल्ली), बाल जगत (लखनऊ), मुन्ना (दिल्ली), नन्हीं दुनिया (देहरादून) 1950, चम्पक अर्द्ध मासिक (दिल्ली) 1968, लोट पोट (दिल्ली), अंजू पंजू (लखनऊ), आदर्श बाल सखा (वाराणसी), चमाचम (लखनऊ), शिशु बंधु (लखनऊ), बाल पताका (मथुरा), संदेश (बदायूँ), मेला (कलकत्ता), बाल मन (कानपुर), आनन्द (पूना)। इनके अतिरिक्त चमकते तारे, राजा बेटा, बाल प्रभात, जैन बालक, विश्व बाल कल्याण, स्वर्ण कमल, बेसिक शिक्षा, ज्ञान भारती, विद्यार्थी सखा, ज्ञानदूत, मुन्ना-मुन्नी, मुन्ना की मुस्कान, कमल, शावक, घरौंदा आदि कितने ही बालोपयोगी पत्र इस काल में निकाले गये। इनमें से कई अब तक निकल रहे हैं और कई कुछ वर्षों तक निकलते रहने के बाद बन्द हो चुके हैं। पंजाब से निकलने वाली बड़ों की मासिक पत्रिका 'विश्वज्योति' में प्रतिमास बच्चों के लिए 10-15 पृष्ठ की सामग्री रही। इसी प्रकार प्रमुख साप्ताहिक धर्म युग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान आदि प्रत्येक अंक में बच्चों के लिए भी दो पृष्ठों में कुछ कहानियां, कवितायें आदि अवश्य देते रहे। हिन्दी के सभी प्रमुख दैनिक अमर उजाला, आज, भास्कर, न्याय, नव ज्योति, वीर-अर्जुन, प्रताप, विश्व मित्र, हिन्दुस्तान, जागरण, लोकमत, मध्य भारत संदेश, नई दुनिया (रायपुर), नई दुनिया (इन्दौर), नई दुनिया (जबलपुर), नवभारत टाइम्स (बंबई), पंजाब केसरी, राष्ट्र दूत, सन्मार्ग, स्वतन्त्र भारत आदि बच्चों का कोना, बाल संसद, बाल भास्कर, न्याय बाल संसद, बाल जगत, वीर बाल संसद, बालोद्यान, बाल मंडल, बच्चों की दुनिया, बाल जगत, बाल भारती, नेहरू बाल मंडल, बाल भारत, बाल संघ, बाल विनोद नामक बालस्तम्भों से अपने रविवारीय परिशिष्ट में प्रति सप्ताह कुछ बालगीत और कहानियाँ प्रकाशित करते रहे। इन पत्र-पत्रिकाओं में नंदन, पराग, चन्दा मामा, बाल भारती, चंपक का प्रमुख स्थान है। जो अपने प्रकाशन वर्ष से अब तक लगातार निकलते रहे हैं और बच्चों में बहुत लोकप्रिय हैं। (पराग अब बंद हो चुका है) बच्चों के लिए तीन साप्ताहिक पत्र भी इस बीच निकाले गये। एक बच्चों का अखबार इन्दौर से और दूसरा 'नन्हें मुन्नों का अखबार' इलाहाबाद

की जैसी सुविधा नये लेखक कवियों को मिली वैसी पहले कभी नहीं मिली थी। बाल साहित्य समीक्षा के क्षेत्र में भी दो पत्रिकायें इस काल में प्रकाश में आई। एक तो डा. मस्तराम कपूर ने दिल्ली से एक मासिक पत्रिका 'बच्चे और हम' निकाली थी जो सन् 1972-73 में निकल कर बन्द हो गई। दूसरी डा. राष्ट्र बंधु की कानपुर से निकलने वाली 'बाल साहित्य समीक्षा' है जो सन् 1978 से अभी तक नियमित रूप से निकल रही है। 'मधुमती' मासिक राजस्थान का मनोहर वर्मा के सम्पादकत्व में प्रकाशित विशेषांक तो पूरा एक ग्रन्थ ही है। हिन्दी की कुछ मासिक पत्रिकाओं और साप्ताहिक पत्रों में विशेष रूप से 'बाल दिवस' के आस-पास कभी-कभी बाल साहित्य सम्बन्धी कुछ लेख भी देखने को मिलते रहे हैं। 'केशव प्रयास' 'साप्ताहिक ग्वालियर का बाल विशेषांक सन् 82 भी उल्लेखनीय है।

हिन्दी में बाल साहित्य के ऐसे सर्वतोमुखी विकास के वातावरण में बालगीत साहित्य भी उतनी ही बहुतायत से लिखा गया जितनी बहुतायत से कहानी, नाटक, जीवनी आदि अन्य विधाओं का साहित्य। हिन्दी के कुछ प्रतिष्ठित कवियों को छोड़कर अनेकानेक नवोदित कवि बालगीत लिखने लगे। उनमें से अधिकांश ऐसे है जिन्होंने कुछ वर्षों तक लिखने के बाद बालगीत लिखना छोड़ दिया और बड़ों के लिए लिखने या दूसरे धन्धों में लग गये। कुछ ऐसे हैं जो और कामों को करते हुए कभी-कभी कुछ गीत बच्चों के लिए भी लिखते रहे और एक दो पुस्तकें प्रकाशित कराकर अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ ली। पर कुछ बालगीतकार ऐसे भी हैं जिन्होंने बच्चों के लिए लिखने को ही अपनी प्रतिभा समर्पित करके हिन्दी में बाल साहित्य के अभाव को दूर करने का प्रयास किया। उनकी कविताओं के क्रमिक अध्ययन से उनकी प्रतिभा के विकास की भी पहचान भली-भाँति की जा सकती है। बड़े कवियों में से जिन प्रसिद्ध और सुप्रतिष्ठित कवियों ने बड़ों के लिए लेखन प्रारम्भ करने के वर्षों बाद बालगीतों के सृजन में रुचि दिखाई वह रामधारी सिंह दिनकर और बच्चन हैं। दिनकर ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के कुछ वर्ष बाद बच्चों के लिए भी कुछ कवितायें और पद्य कथायें लिखीं। बच्चन ने, जब उनके सुप्रसिद्ध सिने अभिनेता पुत्र अमिताभ और अजिताभ छोटे थे, तो उन्हें रिझाने सिखाने के लिए कुछ बालगीत लिखे थे। पर जिस कापी पर वह लिखे थे, वह कापी ही बच्चों ने कहीं खो दी इसलिए वह कभी प्रकाश में नहीं आये। शायद उन्हीं में से दो गीत 'आज उठा मैं सबसे पहिले' और 'लाया गुब्बारों का पेड़' थे। जिनकी प्रतिलिपियां मेरे पास सुरक्षित हैं। उसके वर्षों बाद जब अमिताभ के भी बच्चे हो गये तो उन्होंने उनके लिए फिर बालगीत लिखना प्रारम्भ किया। हिन्दी बालगीतों की बढ़ती हुई लोकप्रियता को देखकर अंग्रेजी

के सुप्रसिद्ध वयोवृद्ध कवि हरीन्द्र नाथ चट्टोपाध्याय का ध्यान भी हिन्दी में बालगीत लिखने की ओर गया। मुझे ज्ञात हुआ है कि उन्होंने अपने अंग्रेजी में लिखे सब बालगीतों को हिन्दी में लिखकर रख दिया है। श्रीमती महादेवी वर्मा ने भी कुछ बालगीत लिखे हैं। इस काल के हिन्दी बालगीतकार कवियों में से कई ऐसे हैं जिन्होंने बच्चों के प्रति समर्पित भाव से दीर्घ काल तक बराबर केवल बालगीत लिखे हैं पर उनके वह बालगीत अभी तक पुस्तक रूप में प्रकाशित होकर सामने नहीं आ पाये हैं। उनमें से रामकृष्ण शर्मा खद्दर जी ने जगह-जगह बच्चों के लिए अच्छे स्कूल खोलना अपने जीवन का उद्देश्य बना लिया था। बाद में यह बिरला बाल मन्दिर, पिलानी में मुख्याध्यापक हो गये थे। बाल मन्दिर के छोटे-छोटे बच्चों के लिए उन्होंने प्रकाशन की चिन्ता किये बिना कुछ बड़े सरस और भावपूर्ण शिशु और बालगीत लिखे थे। उनमें से कुछ जो उन्होंने एक बार लिखकर मेरे पास (सेवक जी) भेज दिए थे सुरक्षित हैं। खद्दर जी के वह गीत कभी कहीं प्रकाशित नहीं हुए। कुछ वर्ष पूर्व उनका स्वर्गवास हो गया। इसलिए अब यह भी पता लगना कठिन है कि उनके लिखे अन्य बालगीतों का क्या हुआ। इसी प्रकार मंगरू राम मिश्र जब 'पराग' मासिक के सम्पादकीय विभाग में थे उनके कुछ बहुत अच्छे शिशु गीत उसमें प्रकाशित हुआ करते थे। बाद में जब उन्होंने उन्हें पुस्तक रूप में प्रकाशित कराने का विचार किया तो उन्हें मुफ्त में या बिना रायल्टी दिये कुछ थोड़े से मूल्य पर लेकर प्रकाशित करने को कई प्रकाशक मिले भी तो वह इस शोषण के लिए तैयार नहीं हुए और उन्होंने बच्चों के लिए लिखना ही छोड़ दिया। हिन्दी के और भी अनेक बाल गीतकार ऐसे हैं जिनके लिखे अच्छे बालगीत प्रकाशन के अभाव में पड़े-पड़े नष्ट हो गये। अब से 15-20 वर्ष पूर्व हिन्दी में बच्चों के एक अत्यन्त सुपरिचित और प्रतिष्ठित कवि 'स्वर्ण सहोदर' ने, जिन्हें बाद में उ.प्र. हिन्दी संस्थान द्वारा उनकी बाल साहित्य की सेवाओं के लिए पुरस्कृत और सम्मानित भी किया गया था, मुझे (सेवक जी) एक बड़ा मार्मिक पत्र लिखा था - मेरी अवस्था 58 वर्ष के ऊपर हो चुकी है। अभी क्रियात्मक शक्ति है। पर कब तक और क्यों?

'स्वयं अपने प्रकाशन की बात क्या कहूँ।....... न प्रचार है न बिक्री। फिर मैं तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति में उलझ कर प्रकाशन को गौण कार्य .... विवश होकर .... समझ बैठता हूँ। नहीं समझता तो गुजर नहीं। यह है मेरी परिस्थिति। सर्वत्र असफलता ही हाथ रही।........।' और इसके साथ ही उन्होंने अपनी 18 छोटी-छोटी पुस्तकों की पांडुलिपियाँ मेरे पास (सेवक जी) भेज

उनके जैसे मधुर और लोकप्रिय बालगीत लिखने वाले को अन्तिम दम तक कोई अच्छा प्रकाशक नहीं मिला। दूसरी ओर यह भी देखने में आता है कि बालगीतों या शिशु गीतों के नाम पर ढेर सारा हिन्दी में प्रकाशित हुआ है और खूब सज-धज के साथ प्रकाशित हुआ है। उसमें से कुछ तो ऐसा है कि वह प्रकाशित न हुआ होता तो लेखक, प्रकाशक या पाठक का न कोई अहित और न हित ही हुआ होता। जिन्हें गीत लिखना तो क्या तुकबन्दी करना भी नहीं आता, जो बाल स्वभाव के कभी पास होकर नहीं निकले उन्हें बालगीतों के नाम पर पुस्तकें छपाते, उन पर पुरस्कार पाते भी देखा गया है। अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के लखनऊ अधिवेशन में मैंने (सेवक जी) ने एक सुझाव रखा था कि प्रत्येक प्रकाशक बाल साहित्य की पांडुलिपियों का किसी बाल साहित्य विशेषज्ञ द्वारा मूल्यांकन और संशोधन करा लेने के बाद ही उन्हें प्रकाशित किया करें। पर यह बात एक कान से घुसकर दूसरे से निकल गई जैसी हो गई। (हालांकि आज कुछ प्रकाशक प्रकाशनार्थ आई पांडुलिपियों का मूल्यांकन विशेषज्ञों से कराते हैं, पर ये विशेषज्ञ सदैव और सर्वत्र नीर-क्षीर विवेकी हंस की भूमिका का निर्वहन नहीं करते और व्यक्तिगत दोस्ती-दुश्मनी निभाते हुए अपने उत्तरदायित्व का दुरुपयोग करते नजर आते हैं) प्रकाशकों में व्यवसाय बुद्धि कितनी ही हो बाल साहित्य की परख नहीं होती। वह तो उसका मूल्यांकन किसी पुस्तक की विक्रय सम्भावना के आधार पर करते हैं और वह जानते हैं कि यदि अपने और लेखक के प्रभाव से वह किसी पुस्तक की सरकार द्वारा स्कूल और पुस्तकालयों के लिए खरीद करा सकते हैं तो उनसे बड़ा कोई लेखक या प्रकाशक नहीं हो सकता और उनके उस लेखक की पांडुलिपि से अधिक श्रेष्ठ किसी अन्य लेखक की कृति नहीं हो सकती। बाल साहित्य के प्रति प्रकाशकों के इस दृष्टिकोण ने बाल साहित्य के विकास को बहुत क्षति पहुँचाई और बच्चों का बड़ा अहित किया है।

हिन्दी साहित्य के किसी इतिहास या समीक्षा ग्रन्थ में बालगीत साहित्य के विषय में कुछ भी लिखा हुआ कहीं नही मिलता। पर स्वतन्त्रता बाद के इस काल में देश के कई विश्वविद्यालयों ने बाल साहित्य को भी शोध के लिए अध्ययन की मान्यता दे रखी है। इससे बाल साहित्य की अन्य विधाओं के साथ-साथ बालगीत साहित्य का भी अध्ययन सम्भव हो सका है। अब तक डॉ. हरिकृष्ण देवसरे जबलपुर विश्वविद्यालय से 'हिन्दी बाल साहित्य', डॉ. मस्तराम कपूर, बल्लभ विद्यापीठ से 'हिन्दी बाल साहित्य का विवेचनात्मक अध्ययन', डॉ. ज्योति स्वरूप आगरा विश्वविद्यालय से 'हिन्दी में बाल साहित्य', डॉ. कृष्ण चन्द्र तिवारी 'राष्ट्रबंधु', सागर विश्वविद्यालय से

'हिन्दी में बाल साहित्य का मनोवैज्ञानिक एवं साहित्यिक अनुशीलन', डॉ. श्रीप्रसाद काशी विद्यापीठ विश्व विद्यालय से 'हिन्दी बाल साहित्य', डॉ. डोभाल गढ़वाल विश्वविद्यालय से 'हिन्दी बाल गीतों में बिंब विधान' तथा कुमारी स्नेह मोहनीश महापात्र रविशंकर शुक्ला विश्वविद्यालय से 'हिन्दी तथा उड़िया बाल साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन' विषयों पर शोध कार्य करके पी.-एच.डी. की उपाधियाँ प्राप्त कर चुके हैं। इनमें से केवल डॉ. देवसरे का शोध प्रबन्ध प्रकाशित हुआ है। इनके अतिरिक्त श्रीमती विद्या देवी ने 'सन् 1965 से 75 तक का हिन्दी बाल साहित्य' पर अपना शोध कार्य समाप्त करके कलकत्ता विश्व विद्यालय को दे दिया तथा श्रीमती कृष्ण कान्ता भल्ला मेरठ विश्वविद्यालय से 'हिन्दी में बालोपयोगी साहित्य' तथा श्री ब्रजेन्द्र वैद्य रीवा विश्वविद्यालय से 'बालगीत साहित्य' विषयों पर शोध कार्य में प्रवृत्त हुए। मोतिहारी के श्री विष्णुकांत पांडेय को उनकी लिखी पुस्तक 'बाल साहित्य विवेचन' की पांडुलिपि पर राष्ट्र भाषा बिहार ने पुरस्कार दिया है।

आधुनिककाल का होते हुए भी हिन्दी बालगीत साहित्य का यह इतिहास लिखने में मुझे (सेवक जी को) अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। इसमें जिन कवियों का परिचय दिया गया है उनमें से अधिकांश के विषय में किन्हीं पुस्तकों में कुछ भी कहीं नहीं मिलता। इसलिए उनकी जन्म तिथि, शिक्षा, व्यवसाय इत्यादि के विषय में उन्हें या उनके मित्रों को पत्र लिख लिखकर जानकारी प्राप्त करना पड़ी है। कई को लिखे पत्रों के तो उत्तर ही नहीं मिले। कई ने उत्तर में तत्परता दिखाई। कई के विषय में इधर-उधर से खोजकर जानकारी एकत्रित की। सबके विषय में यह जान पाना असम्भव हो गया कि उन्होंने लिखना कब प्रारम्भ किया और कब से कब तक लिखकर लिखना छोड़ दिया। इसलिये कवियों का क्रम रखने में भी कुछ त्रुटियां अवश्य हो गई होंगी। सम्भव है और भी कुछ त्रुटियां रह गई हों, पर वह सब त्रुटियां इतिहास लेखन का हिन्दी में यह पहला प्रयास होने के कारण आशा है क्षम्य समझी जायेंगी।

स्वातंत्र्योत्तर काल में हिन्दी में से ये प्रमुख बाल गीतकार कवि हुए हैं-

रामकृष्ण शर्मा खद्दर जी -- उनका जन्म सन् 1916 में दिल्ली में हुआ था। इन्टर तक शिक्षा प्राप्त की। बच्चों की शिक्षा में रुचि थी। दिल्ली में बाल भारती, हैप्पी स्कूल, बाल प्रशिक्षण केन्द्र आदि कई संस्थाओं के वह संचालक संस्थापक थे। उन्होंने छोटे बच्चों की शिक्षा को अपना जीवन ध्येय ही बना लिया था। उन्होंने 'हमारे बालक'

भारती नामक संस्था में भी उन्होंने काम किया था। सन् 1956 से बिरला बाल मन्दिर पिलानी में प्रधानाध्यापक पद पर काम करने लगे थे। वहां से अवकाश ग्रहण करने के कुछ वर्ष बाद ही उनका स्वर्गवास हो गया। उन्होंने छोटी आयु के बच्चों के लिए बहुत-सी कवितायें लिखी हैं पर विज्ञापन प्रचार से उदासीन रहने के कारण वह कहीं प्रकाशित नहीं हुई। उनकी हस्तलिखित कुछ कविताओं में से एक है -

छैः साल की छोकरी। भरकर लाई टोकरी
टोकरी में आम हैं। नहीं बताती दाम है
दिखा दिखाकर टोकरी। हमें बुलाती छोकरी
हम को देती आम है। नहीं बताती नाम है
नाम नहीं अब पूछना। हमें आम है चूसना।

सुमित्रा कुमारी सिनहा -- हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवयित्री श्रीमती सुमित्रा कुमारी सिनहा का जन्म सन् 1914 में हुआ था। उनके पति श्री राजेन्द्र शंकर चौधरी उन्नाव के एक प्रमुख समाज सेवी तथा राजनीतिक कार्यकर्ता थे। सुमित्रा जी आकाशवाणी लखनऊ में सेवारत रहीं उनका निधन सन् 1994 में हुआ। उनकी बालोपयोगी कविताओं के कई संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। 'दादी का मटका', 'फूलों के गहने', 'आँचल के फूल', 'आंगन के फूल' आदि। उनका एक अभिनय गीत है-

हम मनमोहन हम गोपाल, नाचें सब मिल देकर ताल
ता ता थैया, ता ता थैया।
खिलती हैं बागों में कलियां, गमक रहीं फूलों की डलियां
चलों मनायें हम रंग रलियाँ, देश हमारा ब्रज की गलियाँ
हम मनमोहन...........
हम बलदाऊ हमी कन्हैया, हम ग्वाले हैं हमी चरैया
हम राधा हैं रास रचैया, बंसी बजै कदम की छैया
नव भारत के हम हैं लाल, देश हमीं से है खुशहाल
ता ता थैया, ता ता थैया।

द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी -- उनका जन्म 1916 में ग्राम रोहता जिला आगरा में हुआ था। एम.ए., एल.टी. तक शिक्षा प्राप्त की तथा लंदन विश्व विद्यालय के इंस्टीटयूट आफ एजुकेशन का डिप्लोमा प्राप्त किया। उत्तर प्रदेश के शिक्षा विभाग में सहायक अध्यापक से लेकर उप-शिक्षा निदेशक तक अनेक पदों पर सेवारत रहे। उन्होंने राष्ट्रीय

और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की कई शिक्षा गोष्ठियों में भाग लिया। उनकी कई कवितायें उत्तर प्रदेश के पाठ्यक्रम में भी निर्धारित हैं। बच्चों के लिए उनकी कविताओं की 'हाथी घोड़ा पालकी', 'सोने की कुल्हाड़ी', 'माखन मिसरी', 'सूरज सा चमकूं मैं', 'सतरंगा पुल', 'अपने काम से काम', 'सीढ़ी-सीढ़ी चढ़ते हैं', 'हाथी आता झूम के', 'ना मोती ना मुस्कान', 'चांदी की डोरी' आदि अनेक पुस्तकें हैं। 'बाल गीतायन' उनकी सारी श्रेष्ठ कविताओं का एक वृहद संकलन है। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने उनको बाल साहित्य के क्षेत्र में विशिष्ट सेवाओं के लिए पुरस्कृत कर सम्मानित किया था। उनका निधन वर्ष 1998 में हो गया। उनकी एक कविता है –

मुन्नी-मुन्नी ओढ़े चुन्नी गुड़िया खूब सजाई
किस गुड्डे के साथ हुई तय इसकी आज सगाई।
मुन्नी-मुन्नी ओढ़े चुन्नी कौन खुशी की बात है
आज तुम्हारी गुड़िया प्यारी की क्या चढ़ी बरात है।
मुन्नी-मुन्नी ओढ़े चुन्नी गुड़िया गले लगाये
आँखों से यों आंसू ये क्यों रह रह बह बह जाये।
मुन्नी-मुन्नी ओढ़े चुन्नी क्यों ऐसा यह हाल है
आज तुम्हारी गुड़िया प्यारी जाती क्या ससुराल है।

अमृतलाल नागर -- नागर जी हिन्दी के एक सुप्रसिद्ध उपन्यासकार हैं। उनका जन्म 1916 में आगरा में हुआ था। उनकी शिक्षा दीक्षा लखनऊ में हुई। वह हिन्दी के अतिरिक्त बंगला, तमिल, गुजराती और मराठी भाषाओं के अच्छे ज्ञाता रहे। बच्चों के लिए उन्होंने कई कहानियाँ और उपन्यास पुस्तकें लिखने के साथ-साथ एक पद्य कथाओं की पुस्तक 'निदिया आ आ' नाम से लिखी जो सन् 1950 में प्रकाशित हुई थी।

रामधारीसिंह दिनकर -- सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि दिनकर का जन्म सन् 1908 में ग्राम सिपरिया जिला मुंगेर में हुआ था। उन्होंने पटना विश्वविद्यालय से बी. ए. पास किया और सब रजिस्ट्रार के पद पर नियुक्त हो गये। राष्ट्रीय विचार रखने के कारण उन्होंने नौकरी छोड़ दी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद वह राज्यसभा के सदस्य मनोनीत हुए थे और बाद में भागलपुर विश्वविद्यालय के उप-कुलपति भी रहे थे। सन् 1974 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी बालोपयोगी कवितायें 'चुन्नू मुन्नू' मासिक पत्र में प्रकाशित हुआ करती थीं। 'धूप छांह', 'मिर्च का मजा' तथा 'सूरज का ब्याह' तीन पुस्तकें भी प्रकाशित हुई हैं। उनकी एक कविता है –

चन्द्रमा का कुर्ता

हठ कर बैठा चांद एक दिन माता से यों बोला
सिलवा दे माँ मुझे ऊन का मोटा एक झंगोला
सन-सन चलती हवा रात भर जाड़े से मरता हूं।
ठिठुर-ठिठुर कर किसी तरह यात्रा पूरी करता हूं।
बच्चे की सुन बात कहा माता ने अरे सलोने
कुशल करें भगवान! लगें मत तुझको जादू टोने।
जाड़े की तो बात ठीक है पर मैं तो डरती हूं
एक माप में कभी नहीं तुमको देखा करती हूं।
कभी एक अंगुल भर चौड़ा कभी एक फुट मोटा
बड़ा किसी दिन हो जाता है और किसी दिन छोटा।
घटता बढ़ता रोज किसी दिन ऐसा भी करता है
नहीं किसी की आंखों को तू दिखलाई पड़ता है।
अब तू ही यह बता नाप तेरी किस रोज लिवायें
सी दें एक झंगोला जो हर रोज बदन में आये।

शकुन्तला सिरोठिया -- बच्चों की सुप्रसिद्ध कवयित्री शकुन्तला सिरोठिया का जन्म 1915 में कोटा (राजस्थान) में हुआ था। उनके पिता बौद्ध दर्शन के प्रकांड विद्वान थे। वह चुनार में डाक्टर थे। सिरोठिया जी का बचपन वहीं बीता था। उन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से एम. ए. तक शिक्षा प्राप्त की और उत्तर प्रदेश के शिक्षा विभाग में अध्यापिका नियुक्त हो गई थीं। वह मुरादाबाद, अलीगढ़, बांदा आदि कई स्थानों पर रहीं पर सेवा काल अधिकांश इलाहाबाद में बीता। राजकीय महिला शिशु प्रशिक्षण केन्द्र प्रयाग से अवकाश ग्रहण किया। साहित्य और चित्र कला में बचपन से रुचि थी। उनकी बच्चों के लिए लिखी कवितायें 'बाल सखा', 'बाल भारती' आदि पत्रों में प्रकाशित होती रही हैं। 'कांटों में खिलते हैं फूल', 'चटकीले फूल', 'गा ले मुन्ना', 'नन्हीं चिड़िया', 'सोनचिरय्या', 'काले मेघा पानी दे', 'आरी निंदिया', 'बालगीत' आदि बालोपयोगी कविताओं की अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उन्होंने 'शिशु चित्र कला' नाम की एक पुस्तक लिखी है जो हिन्दी में इस विषय पर अद्वितीय है। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने उनको दीर्घकालीन बाल साहित्य की सेवा के लिए विशिष्ट कवि के रूप में सम्मानित किया। उनका निधन सन् 2005 में हो गया। उनकी एक लोरी है -

चंदा प्यारे आ जाओ नींद रंगीली ले आओ
चांद लोक की परियां भेजो भेजो मृग का छौना
मुन्ना मेरा सोने जाता लगे न इसको टोना
पलना सोने का लाओ, चंदा प्यारे आ जाओ।
नीले रंग के पलने में हों तारे टंके सुनहले
किरणों की हो डोरी उसमें झुमके नीले पीले
लोरी मीठी गा जाओ, चंदा प्यारे आ जाओ।

शम्भुनाथ 'शेष' -- उनका जन्म 1915 में फरीदकोट पंजाब में हुआ था। उनकी मातृ भाषा पंजाबी थी। उर्दू में शिक्षा प्राप्त कर मुन्शी फाजिल की परीक्षा पास की। फिर दिल्ली से मैट्रिक की परीक्षा पास की। बाद में पंजाब विश्वविद्यालय से भूषण तथा प्रभाकर और बाद में बी. ए. परीक्षा पास की। बड़ों की कविताओं के साथ-साथ सरल भाषा में बच्चों के लिए भी कवितायें लिखा करते थे। चूना मण्डी, नई दिल्ली में रहते थे। 'आओ गायें' और 'बाल मेला' नाम से उनकी बालोपयोगी कविताओं की दो पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं। सन् 1958 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक बाल कविता है -

एक दिन जो बाग में जाना हुआ
दूर से ही महकती आई हवा
खिल रहे थे फूल रंगा रंग के
लाल पीले स्वर्ण जैसे ढंग के।
केसरी थे औ गुलाबी थे कहीं
चंपई की बात कुछ पूछो नहीं।
खिल रहा था फूल एक गुलाब का
देख जिसको मन बहुत ही खुश हुआ
चाहती थी तोड़ लूं उस फूल को
पास ही देखा मगर इक शूल को
फूल के है पास तीखा शूल क्यों
हो गई ऐसी किसी से भूल क्यों?

बेनीमाधव शर्मा -- उनका मूल नाम मुकुन्द देव शर्मा है। उनका जन्म सन् 1917

और 'हरिऔध जीवन और कृतित्व' विषय पर शोध कार्य करके पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। उन्होंने 12 वर्ष तक दैनिक भारत के प्रधान व्यवस्थापक सम्पादक के रूप में कार्य करने के बाद दैनिक 'जागरण' में भी काम किया। शिक्षा सम्बन्धी बहुत-सी पुस्तकें उन्होंने लिखी हैं। कविता लिखने में उनकी रुचि बचपन से थी। वह हरिऔध जी के पौत्र थे। उनसे छिपकर बेनी माधव शर्मा ने छद्म नाम से बच्चों के लिए कवितायें लिखना प्रारम्भ कर दिया था। बच्चों के लिए उनकी कविताओं और पद्य कथाओं की 'पढ़ लो बेटा पढ़ लो', 'नन्हों के नेता', 'शेर नाना', 'गदहे की चोरी', 'बन्दर की चालाकी', 'कालिदास' आदि अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं जिनमें से कई उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हुईं। उनकी एक बाल कविता है -

अम्मा टूटे दांतों वाला लम्बी-लम्बी बाहों वाला
मुझे बता दो अरे कौन यह लाठी लेकर चलने वाला।
बेटा यह जो पहन लंगोटी खड़ा कमर में घड़ी लगाये
फूलों का गुच्छा लेकर हैं जिसको देने बच्चे आये।
वह हम सबका प्यारा बापू उसने दी हमको आजादी
लोगों को है सुखी बनाया देखो सबको पहना खादी।
अम्मा क्या मैं पहन लंगोटी प्यारा बापू बन जाऊँगा
दांत हमारे भी टूटे हैं क्या मैं बापू कहलाऊँगा।

डॉ. प्रभाकर माचवे -- उनका जन्म सन् 1917 में हुआ था। रतलाम, इन्दौर और आगरा में रहकर एम.ए., पी.एच. डी. तक शिक्षा प्राप्त की। प्रारम्भ में प्राध्यापक फिर आकाशवाणी में प्रोग्राम असिस्टेन्ट और अन्त में साहित्य कला अकादमी में उपमन्त्री रहे। उन्होंने बच्चों के लिए भी कुछ कवितायें लिखी हैं जो पत्र-पत्रिकाओं और संकलनों में प्रकाशित हुई हैं। उनका निधन सन् 1991 में हो गया। उनकी एक बाल कविता है -

हाथी हाथी हाथी
ऐसे मस्त चल रहे जैसे डिक्टेटर के साथी
कई सूँड़ के लाभ,
सींच सकेंगे पूरा बाग चमेली जूही गुलाब
ऐसे चौड़े कान कि ओफ
गर्मी में पंखा का पंखा सर्दी में कनटोप।

दो दो दाँत गिना दें
राशन कार्ड तुम्हारा भाई कैसे हम बनवादें।

भारतभूषण अग्रवाल -- उनका जन्म सन् 1919 में मथुरा में हुआ था। उन्होंने चन्दौसी और इलाहाबाद में रहकर शिक्षा प्राप्त की। उसके बाद वह साहित्य अकादमी दिल्ली में सहायक मन्त्री नियुक्त हो गये थे। बड़ों के साथ-साथ बच्चों के लिए भी कवितायें लिखते थे। बाल साहित्य के विषय में उनके विचार बड़े सुलझे हुए थे। उनकी बालोपयोगी कविताओं के संकलन 'मेरे खिलौने' तथा 'किसने फूल खिलाए' हैं। उनका निधन सन् 1975 में हो गया। उनकी एक बालोपयोगी कविता है -

कितने सुन्दर और सलोने, देखो मेरे नये खिलौने
यह देखो फुर्तीला घोड़ा, नहीं चाहिए इसको कोड़ा
चाबी से चलता है सरपट, और लौटकर आता झटपट।
यह देखो यह बिल्ली आई, पंजों में है गेंद दबाई
जब भी इसकी पूंछ घुमाऊँ, यह करती है म्याऊँ-म्याऊँ।
कंधे पर बन्दूक उठाये, यह तो वीर सिपाही आये
ताकत वाले हिम्मत वाले, यह हैं इन सबके रखवाले।

विद्यावती मिश्र -- उनका जन्म सन् 1918 में पुखरायां जिला कानपुर में हुआ था। उनकी शिक्षा घर पर ही हुई। उन्होंने बच्चों के लिए सरल भाषा में बहुत सी पद्यकथायें लिखी हैं। उनकी पद्यकथाओं की कई पुस्तकें 'मंगल ज्ञान', 'एक किरण एक सुमन', 'अवतार कथा' आदि प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी एक पद्य कथा का एक अंश है -

बूढ़े ठाकुर के मन में जब यह विचार था आया
सब कुछ उसने किया, न अपना कोई भवन बनवाया।
....
फिर ठाकुर ने पांच हाथ की गहरी नींव खुदाई
उसके छोटे नाती को यह बात न मन में भाई।
....
डरते-डरते उसने पूछा बाबा यह बतलाओ
हानि भला क्या इतनी गहरी नींव न यदि बनवाओ।
....

ऊँचाई को साधे रहती नीचे की गहराई
इसके बिना भवन की काया कहीं सुदृढ़ बन पाई। इत्यादि

सरस्वतीकुमार दीपक -- उनका जन्म सन् 1918 में बुलन्दशहर में हुआ था। गीतकार के रूप में ख्यात हुए। उन्होंने बच्चों के लिए भी बहुत-सी कवितायें लिखी जो सभी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहीं। उनकी बालोपयोगी कविताओं के कई संकलन भी प्रकाशित हो चुके हैं - 'चुन्नू मुन्नू', 'गुड़ियों का राजा', 'गीतों भरे खिलौने', 'हाथी घोड़ा पालकी', 'बच्चों की कव्वालियाँ', 'बच्चों की गजलें', 'जय जननी जय भारती'। उनका निधन सन् 1986 में हुआ। उनका एक बालगीत है -

मैना पका रही खिचड़ी, कोयल देखे खड़ी-खड़ी
दूध उबाला कुत्ते ने बिल्ली चाट गई रबड़ी।
मैना भूखी बैठी थी तोता चबा गया ककड़ी
कीड़ों को ललचाने को नाले पर नाची मकड़ी।
तीतर शोर मचाता था मुर्गा ले भागा पगड़ी
छोड़ो तुम चोरी करना चुहिया चूहे से झगड़ी।
बन्दर मामा घूम रहे लिए हाथ में एक छड़ी
दाल जल गई खिचड़ी की मैना की हालत बिगड़ी।

रघुवीरशरण मित्र -- उनका जन्म सन् 1919 में मेरठ में हुआ था। बड़ों के लेखक और कवि होने के साथ-साथ उन्होंने बच्चों के लिए भी बहुत लिखा है। उनकी कई पुस्तकें उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश राज्य सरकारों द्वारा पुरस्कृत हो चुकी हैं। 'आओ खेलें आओ गायें', 'प्यारा देश हमारा', 'क्या खोयें क्या पायें', 'धरती बोली अंबर बोला', 'अमर रहे यह देश', 'कदम मिलाते बढ़े चलो', 'हम मांझी उस देश के', उनकी प्रकाशित बाल गीत पुस्तकें हैं। डॉ. हरिकृष्ण देवसरे ने एक स्थान पर उनकी कुछ कविताओं के बारे में लिखा था - 'ओजस्वी राष्ट्र गीत हैं। उनमें गेयता, माधुर्य और प्रभावशीलता है।' उनका निधन सन् 1994 में हो गया। उनकी एक कविता है -

फूल-फूल धरती का गाता गाते नभ के तारे
हम न कभी लव कुश से जीते, हम न कंस से हारे।
त्याग हमारा राम भरत सा धर्म हकीकत जैसा
जब हम आगे बढ़ जाते फिर पीछे हटना कैसा।

रावण हो या दुर्योधन हो जीत सत्य की होती
हम सागर की गहराई से ले आते हैं मोती।
जब-जब भीड़ पड़ी धरती पर हमने रावण मारे
फूल-फूल धरती का गाता, गाते नभ के तारे। इत्यादि

ब्रजकिशोर नारायण -- उनका जन्म सन् 1919 में ग्राम बरहरवा जिला चंपारन में हुआ था। 8 वर्ष की आयु में उन्होंने पहली कविता लिखी थी। तभी से उन्हें कवि जी कहने लगे थे। उन्होंने अपना साहित्यिक जीवन सन् 1941 में लाहौर से निकलने वाली 'शांति', मासिक पत्रिका का सम्पादक बनकर प्रारम्भ किया। उसके बाद हिन्दी मिलाप, हिन्दुस्तान, लोकमान्य आदि के सम्पादक मण्डल में कार्यरत रहे। फिर बिहार के समाज शिक्षा बोर्ड द्वारा निकाले जाने वाले 'जन जीवन' के सम्पादक बनकर बिहार आ गये। बच्चों के लिए उन्होंने लोरियां, हास्य व्यंग की और शिक्षाप्रद बहुत-सी कवितायें लिखी हैं जो बड़ी मनोरंजक हैं। 'लड्डू', 'पेड़े', 'बताशे', 'रसगुल्ले', 'जलेबी', 'ताक धिनाधिन', 'आ री निंदिया', 'गोल गपोड़े', आदि उनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हैं। उनका निधन सन् 1968 में हो गया। उनकी एक लोरी है -

मेरी बिटिया सोजा, सोजा
कुत्ता तबला बजा रहा है नाच रही है बिल्ली,
कुत्ता जायेगा कलकत्ता बिल्ली जाये दिल्ली।
घोड़ा बाबू ढोल बजायें बछड़ा जी सारंगी
बन्दर बाबू काम न करते खाते हैं नारंगी।
मेरी बिटिया सोजा, सोजा

निरंकारदेव सेवक -- उनका जन्म सन् 1919 में बरेली (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। वहीं रहकर एम.ए., एल.-एल.बी. तक शिक्षा प्राप्त की। साहित्य रत्न और बनारस से बी.टी. भी किया। प्रारंभ में अध्यापक थे। फिर वकालत करने लगे। बच्चों के लिए कविताओं की लगभग 40 पुस्तकें लिखने के अतिरिक्त उन्होंने बालसाहित्यसमीक्षा की एक पुस्तक 'बालगीत साहित्य' भी लिखी थी जो इस विषय पर हिन्दी में पहली पुस्तक थी। बाल साहित्य के उन्नयन और विकास में बहुत योगदान दिया और सारे देश में भ्रमण किया। अ.भा. बाल साहित्यकार परिषद के अध्यक्ष और बाल इंडिया जुबेनाइल लिटरेरी कांफ्रेस के आजीवन सदस्य तथा कार्यवाहक अध्यक्ष रहे। 'बिल्लो

के गीत', 'माखन मिसरी', 'पंचतंत्री' आदि पुस्तकें बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुई हैं। उनका निधन सन् 1994 में हो गया। उनका एक बालगीत है -

अगर मगर दो भाई थे। लड़ते खूब लड़ाई थे।।
अगर मगर से छोटा था। मगर-मगर से खोटा था।।
अगर मगर कुछ कहता था। मगर नहीं चुप रहता था।।
बोल बीच में पड़ता था। और अगर से लड़ता था।
अगर एक दिन झल्लाया। गुस्से में भर कर आया।।
और मगर पर टूट पड़ा। हुई खूब गुत्थम गुत्था।।
छिड़ी महाभारत भारी। गिरीं मेज कुर्सी सारी।।
मां यह सुनकर घबराई। बेलन ले बाहर आई।।
दोनों के दो-दो जड़कर। अलग कर दिये अगर मगर।।
खबरदार जो कभी लड़े। बन्द करो यह सब झगड़े।।
एक ओर था अगर पड़ा। मगर दूसरी ओर खड़ा।।

शान्ति अग्रवाल -- उनका जन्म सन् 1920 में बरेली में हुआ था। विवाह के बाद भी अपने अध्ययन क्रम को जारी रखकर एम.ए. साहित्यरत्न तक शिक्षा प्राप्त की। उनकी बाल कवितायें 'बाल सखा' और 'बाल विनोद' में सन् 1947 से पहले ही छपने लगी थीं। उनके बालगीतों की दो पुस्तकें 'बालवीणा' और 'जागा हिन्दुस्तान' अगड़म बगड़म नाम से प्रकाशित हो चुकी हैं। उनका एक बालगीत है -

अभी खबर लंदन से आई, मक्खी रानी उसको लाई।
भुनगे ने हाथी को मारा, भुनगा क्या करता बेचारा
घुस बैठा मटके के अन्दर, मटके में थे ढाई बन्दर
उन्हें देखकर हाथी रोया, रोते रोते ही वह सोया
रुकी न पर आंसू की धारा, मटका बना समन्दर खारा
लगे डूबने हाथी बन्दर, तब तक आया एक कलन्दर
पर वह उनको पकड़ न पाया, उसने फौरन ढोल बजाया
उसको सुनकर आया मच्छर, लात जमाई उसने कसकर
मटका फूटा बहा समन्दर, निकल पड़े सब हाथी बन्दर

अशोक एम.ए. -- उनका पूरा नाम सुन्दर लाल वर्मा है। उनका जन्म सन् 1922 में जाजगीर जि. विलासपुर में हुआ था। हिन्दी में एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की।

'इन्द्र धनुष' मासिक के सम्पादक रहे। उनकी पत्नी लक्ष्मी देवी 'चन्द्रिका' भी बच्चों के लिए लिखती रहीं। उन्होंने बच्चों के लिए बहुत लिखा है लगभग 40 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनमें से 'दूध बताशा', 'रसगुल्ला', 'घुनघुना', 'राजा भैया', 'तितली', 'अशोक के गीत', 'बालगीतांजलि' कविता पुस्तकें हैं। उनका एक बालगीत है –

चन्दा मामा चन्दा मामा अपने पास बुलाओ
अपने रथ में मुझे बिठाकर नभ की सैर कराओ।
चन्दा मामा रोज रात को सजधज कर तुम आते
सूरज की किरणें आते ही कहो कहाँ छिप जाते।
चन्दा मामा मेरे घर घुस रोज रात को आना
दूध मलाई पेड़ा बरफी बैठ प्रेम से खाना।
चन्दा मामा मेरे घर में रहता है अंधियारा
लाना अपने साथ याद में नन्हा सा इक तारा।

डॉ. देवेन्द्र दत्त तिवारी -- उनका जन्म सन् 1920 में ग्राम खैरपुर जि. फैजाबाद में हुआ था। एम.ए., एम.एड., डी.फिल तक उच्च शिक्षा प्राप्त की और उत्तर प्रदेश के शिक्षा विभाग में विभिन्न पदों पर सेवारत रहे। बड़ों के साथ- साथ बच्चों के लिए भी कवितायें लिखने में उनकी प्रारम्भ से रुचि रही है। 'चित्र विचित्र', 'नया फूल', 'फुलझड़ी', 'झम झम झम', 'झिलमिल तारे', 'च्याऊँ म्याऊँ', 'चर्रचूँ', 'चुन्नू मुन्नू' आदि उनकी बाल कविताओं के कई संकलन प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी कवितायें उ.प्र. की पाठ्य-पुस्तकों में भी संकलित हैं। उनकी एक कविता है –

कालू आया कालू आया, एक बड़ा सा भालू आया
डम डम डमरू बजा रहा है, और सभी को बुला रहा है।
नाच रहा है छम-छम भालू, गाना गाता जाता कालू।
मुन्नी मुन्ना चुन्नी चुन्ना, नाच उठे सब ताधिक धिन्ना।
सभी देखने आये भालू, भालू के संग नाचा कालू।
दो पैरों पर नाचा भालू, एक पैर पर नाचा कालू।
हाथ उठाकर किया सलाम, और लेट कर किया प्रणाम।

होरीलाल शर्मा 'नीरव' -- उनका जन्म सन् 1913 में जिला शाहजहांपुर के एक ग्राम में हुआ था बरेली में रहकर शिक्षा प्राप्त की और हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी

अध्यापक नियुक्त हो गये थे। उन्होंने बच्चों के लिए भी कविताओं की कई पुस्तकें लिखी हैं – 'आजू राजू', 'पढ़ो कहानी', 'प्यारे और दुलारे बालक', 'ईसप की आठ कहानियाँ', 'बोलते पशु' आदि। उनकी एक बाल कविता है –

आजू राजू दोनों दो दो गुब्बारे ले आये
मां को पास बिठाकर अगड़ू झगड़ू दो बनवाये।
पेट बड़ा सा छोटा-सा सर बिल्कुल ढीलमढालू
जैसे लाल टमाटर पर हो रक्खा छोटा आलू।
निकली जब तक हवा पिचककर गिरे भूमि पर झगड़ू
रहे देखते बड़ी देर तक आंखें फाड़े अगड़ू।

कल्याणकुमार जैन 'शशि' -- उनका जन्म सन् 1908 में हुआ था। बड़ों के लिए उनकी कविताओं की कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। बच्चों के लिए भी कुछ कवितायें लिखी हैं जो चंपक, नंदन, पराग आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो रही हैं। उनकी एक बाल कविता है –

मेरी गुड़िया बड़ी सयानी। पढ़कर आई है हल्द्वानी।।
सूरत से लगती सेठानी। दिन भर सुनती नई कहानी।।
उसके पीले हाथ करूंगी। अब उसकी शादी कर दूंगी।।
गुड्डे बिना पढ़े मिलते हैं। कुछ गुड्डों के सिर हिलते हैं।।
कुछ चाबी खाकर चलते हैं। कुछ के पांव फिसल पड़ते हैं।।
ऐसों का तो नाम न लूंगी। अब उसकी शादी कर दूंगी।।

डा. हरिवंशराय बच्चन -- हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि बच्चन का जन्म सन् 1907 में इलाहाबाद में हुआ था। उन्होंने प्रयाग वि.वि. से एम.ए. अंग्रेजी और कैम्ब्रिज वि.वि. से पी-एच.डी. तक शिक्षा प्राप्त की। अध्यापक, प्राध्यापक और भारत सरकार की सेवा में हिन्दी विशेष अधिकारी रहने के बाद अवकाश ग्रहण किया था। उनके पुत्र और आज के लोकप्रिय फिल्म अभिनेता अमिताभ जब बच्चा थे तो उन्होंने उनके लिए कुछ बालोपयोगी कवितायें एक कापी पर लिख दी थीं। पर वह कापी कहीं खो गई। उसके बाद जब अमिताभ के बच्चे हो गये तो अपने नाती पोतों के लिए कुछ लिखने की प्रेरणा उन्हें हुई। उनके बालगीतों के तीन संकलन 'जन्म दिन की भेंट', 'नीली चिड़िया' और 'बन्दर बांट' प्रकाशित हुए हैं। उनका निधन 2003 में हो गया है। उनका एक बालगीत है –

चिड़िया ओ चिड़िया कहां है तेरा घर
उड़ उड़ आती है जहां से फर फर
उड़ उड़ जाती है जहां को फर फर।
इमली के एक बड़े भारी पेड़ पर
घास फूंस तिनकों से बना मेरा घर
उड़ उड़ आती हूं वहां से फर फर
उड़ उड़ जाती हूं वहां को फर फर।

व्यंक्टेशचन्द्र पांडेय -- उनका जन्म सन् 1919 में बरेली में हुआ था। आगरा विश्वविद्यालय से हिन्दी तथा इतिहास दो विषयों में एम.ए. किया और इलाहाबाद में एल.टी. किया। उसके बाद उ.प्र. शिक्षा विभाग में अध्यापक के पद पर सेवारत रहे। उनकी कई बालोपयोगी कवितायें उ.प्र. के स्कूलों के पाठ्यक्रम में निर्धारित रही हैं। लखनऊ में सहायक पाठ्य पुस्तक अधिकारी के पद से सेवा निवृत्त होने के कुछ ही दिनों बाद हृदयगति अवरूद्ध हो जाने से उनका स्वर्गवास सन् 1973 में हो गया। वह कवि कोल्हू के नाम से हास्य व्यंग्य की कवितायें लिखा करते थे। उनकी हास्य रस की कविताओं के संकलन 'चप्पल', 'मेरा टामी' और 'रेल का डिब्बा' प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी एक कविता है -

आज है तेरे निधन पर रो रहा संसार बापू
घोर छाई थी निराशा था घना छाया अंधेरा
दूर तक देता दिखाई था नहीं सुखमय सबेरा
मार्ग दिखलाया तुम्हीं से ज्योति बन साकार बापू।
सत्य पर डटकर अहिंसा मार्ग पर चलना सिखाया
प्राण की बाजी लगाकर देश पर मरना सिखाया
शांति के तुम दूत थे या क्रांति के अवतार बापू।

देवर्षि सनाढ्य -- उनका जन्म सन् 1919 में बदायूं में हुआ था। हिन्दी में एम.ए. और शास्त्री की परीक्षायें पास कीं। उसके बाद एम.ए. और पी-एच.डी. भी किया उसके बाद डी.लिट. भी कर लिया। पहले राजकीय महाविद्यालय रामपुर में प्रोफेसर रहे फिर गोरखपुर विश्वविद्यालय में प्राध्यापक हो गये और वहां से सेवा निवृत्त हुए। कविता लिखने में बचपन से ही रुचि थी। ईसप की कुछ कथाओं को उन्होंने पद्यबद्ध किया है। वह 'ईसप की कहानियाँ' नाम से प्रकाशित हो चुकी हैं।

इसके अतिरिक्त बच्चों के लिए उन्होंने और भी बहुत-सी कवितायें लिखी हैं। उनकी एक बाल कविता है -

बड़कू भैया! कभी न कहना, तू उल्लू, ये बैल हमारे।
छुटकू धौला बैल तुम्हारा,
छोटे छोटे सींगों वाला।
काला बैल बड़कुआ का है,
भूरे भूरे कानों वाला।
खोद इन्हें तुम दूब खिलाओ रोज सुबह जा नदी किनारे।
भैया, तभी मुनैया बोली,
अम्मा एक बैल हम भी लें।
उसे खिलायेंगे हम लाकर,
अम्मा दीवाली की खीलें।
मेरा बैल खायेगा लड्डू, बर्फी और बतासे प्यारे।
अम्मा हंसीं और तब बोलीं,
तू तो अभी बड़ी छोटी है।
अपने नन्हें से हाथों से,
पकड़ नहीं पाती रोटी है।
थोड़ी और बड़ी तू हो ले मुँह धो पाये बिना सहारे।
बड़कू छुटकू दूब खिलाकर,
बैलों को लेंगे मोटा कर।
खूब खेत में धान पकेंगे,
मिलें रुपैया लोटा भर कर।
तुमको मैं गैया ले दूँगी घर भर दुहना सांझ सकारे।

तरुण भाई -- उनका जन्म 1918 में वाराणसी में हुआ था। वह वहाँ के एक कुशल व्यवसायी रहे। बच्चों की वह एक मासिक पत्रिका 'जीवन शिक्षा' भी निकाली। उन्होंने भारतीय बाल साहित्य अकादमी नाम की संस्था भी गठित की। उनकी लगभग 37 बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। 'भारत कथा' और 'मैं बड़ा हो' उनकी बाल कविताओं की दो पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। 'मैं बड़ा हो' पर उ.प्र. हिन्दी संस्थान द्वारा पुरस्कार भी मिला है। उनका एक बालगीत है -

मैं तो बड़ा हो बनूंगा किसान

बोऊंगा खेतों में गेहूं, जौ, धान।
सींचूगा पौधों को उपजेगा अन्न
धरती मां होयेंगी कितनी प्रसन्न।
मैं तो बनूंगा अनोखा लुहार
बनाऊंगा खेती के अच्छे औजार
पसीना बहाकर करूंगा मैं काम
कमाऊंगा मेहनत से जीवन में नाम।

बम्बबहादुर सिंह 'सरस' -- उनका जन्म सन् 1917 में ग्राम लेवड़ी जिला बस्ती में हुआ था। इण्टर, विशारद तक शिक्षा प्राप्त की और सी.टी. भी किया। सन् 1941 से 1978 तक तक डी.ए.वी. इण्टर कालिज बलरामपुर में अध्यापक रहे। उनकी बालोपयोगी पद्य कथाओं की पुस्तकें 'सरस कथायें' और 'अंगूर खट्टे हैं' प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी एक बाल कविता का एक अंश है-

भारत माता की गोदी में हो गये एक से एक लाल
अपने अच्छे कर्मों से जो मां का ऊंचा कर गये भाल।
हम अब भी उनका यशोगान अपने जीवन में गाते हैं
उनकी जीवन गाथाओं से नित नई प्रेरणा पाते हैं।
प्रहलाद भक्त की आज यहां हम सुन्दर कथा सुनाते हैं
जिसके यश गौरव का गायन भारतवासी सब गाते हैं।
वह था ईश्वर का परम भक्त शुभ नाम उसी का जपता था
इसलिए पिता हिरण्यकश्यप की आंखों में वह गड़ता था
था पिता क्रूर राक्षस उसका अपने को ईश समझता था
निज शक्ति और भौतिक बल से वह पांव न भू पर रखता था।

हंसकुमार तिवारी -- उनका जन्म सन् 1918 में पचकोट राज्य के पुरुलिया बंदेल ग्राम में हुआ था। उन्होंने लगभग 20 वर्ष की अवस्था में लिखना प्रारम्भ कर दिया था और तभी किशोर मासिक पटना के सम्पादक बना दिये गये थे। उनकी बालोपयोगी कवितायें 'बालक' और 'किशोर' में प्रकाशित हुआ करती थीं। उन्होंने बंगाली में भी बच्चों के लिए कुछ कवितायें लिखी हैं। सन् 1980 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी कई बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हैं।

विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक' -- उनका जन्म सन् 1918 में मेरठ में हुआ था।

शिक्षा पूरी कर लेने के बाद जालंधर आकाशवाणी में राजकीय सेवारत रहे। बच्चों के लिए भी उन्होंने कुछ कवितायें लिखी हैं उनमें से कुछ पराग मासिक में प्रकाशित भी हुई हैं। 'ता-ता थैया' कविता संग्रह है।

लाला जगदलपुरी -- उनका जन्म सन् 1920 में जगदलपुर जिला बस्तर (मध्य प्रदेश) में हुआ था। लाला उपनाम से सन् 1936 में कविता लिखना प्रारम्भ किया। इसलिए इसी नाम से प्रसिद्ध हो गए। सन् 1937 में उनकी पहली रचना प्रकाशित हुई थी। उनकी बाल कवितायें 'शिशु', 'बाल सखा', 'बाल भारती' आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। उनकी बच्चों के लिए गद्य में कई पुस्तकें प्रकाशित हैं पर बालगीतों की कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई। उनका एक बालगीत है -

नन्हीं सी माचिस की तीली

रगड़े खाती आग उगलती, उजियाला देने को जलती,
कहती मुझसे सही काम लो, आग संभाले नहीं संभलती।
चूल्हे के सिर चढ़े पतीली, नन्हीं सी माचिस की तीली,
दिये लैंप दिवरियाँ जलाती, अंधियारे में राह दिखाती।
नहीं जानती भेद भाव को, घर घर काम सभी के आती,
डिबिया जिसकी रंग रंगीली, नन्हीं सी माचिस की तीली।

बंधु रत्न -- उनका पूरा नाम भैया लाल सिंह है। बंधु रत्न उपनाम से लिखते हैं। उनका जन्म सन् 1920 में कोरौता, वाराणसी में हुआ था। शिक्षा प्राप्त करने के बाद उनकी रुचि पत्रकारिता में हो गई। संसार दैनिक, नया हिन्दुस्तान साप्ताहिक तथा शिक्षण संस्कार मासिक के सम्पादक रहे। बाद में हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय में पाकेट बुक विभाग के व्यवस्थापक हो गये थे। उनकी कई बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हुईं। उनकी एक बाल कविता है -

आई चिड़िया आले आई। आई चिड़िया बाले आई।।
चूं चूं करती चिड़िया आई। दाब चोंच में दाना लाई।।
दाना आया पानी आया। माटी ने मिल बीज उगाया।।
धरती में जड़ लगी फैलने। ऊपर फैल गई बिरवाई।।
चिड़िया कहती दाना मेरा। मुन्ना कहता ना ना, मेरा।।
बादल कहता सींचा मैंने। तीनों में छिड़ गई लड़ाई।।
पौधा बोला तुम सब आओ। मिल जुलकर मुझको अपनाओ,
सबसे पहले धरती माँ है। जिसने मेरी जड़े जमाई।

सत्यप्रकाश मिलिन्द -- उनका जन्म सन् 1922 में खुर्जा जिला बुलन्दशहर में हुआ था। इलाहाबाद में रहकर उन्होंने शिक्षा प्राप्त की। बिरला काटन मिल दिल्ली में श्रम अधिकारी रहे। बच्चों के लिए उपन्यास, कहानियां और कवितायें भी लिखी हैं। बाल कविताओं के संकलन 'मुन्ना मेरे' और 'आओ बब्बू गायें गीत' नाम से प्रकाशित हुए।

महेशचन्द्र 'सरल' -- उनका जन्म सन् 1922 में हरदोई में हुआ था। पत्रकारिता में रुचि थी। अपना प्रकाशन कार्य करते और हरदोई में रहते हैं। बच्चों के लिए उन्होंने कवितायें लिखी हैं, जिनका एक संकलन 'चंदा सूरज' नाम से प्रकाशित हुआ था। इसके अतिरिक्त 'अंत्याक्षरी प्रदीप' और 'अंत्याक्षरी पीयूष' नाम के दो और संकलन भी उन्होंने प्रकाशित किए थे।

नरेशचन्द्र सैनिक -- उनका जन्म सन् 1922 में देवीनगर जिला मैनपुरी में हुआ था। एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। बच्चों के कल्याण के लिए कुछ कार्य करने में बचपन से ही रुचि थी। कानपुर की बाल सेवक बिरादरी संस्था से संबद्ध रहे। अब मैनपुरी में रहते हैं। 'बाल दर्शन' मासिक के संपादक भी रहे। उनकी बालगीतों की पुस्तकें 'राजा बेटा सीखो', 'बाल चालीसा', मेरे शिशु गीत (दो भाग) तथा 'आओ अच्छा देश बनायें' प्रकाशित हो चुकी हैं। उनका एक बालगीत है -

चींटी रानी चींटी रानी, कितना खाती दाना पानी
बढ़ती सदा चली जाती है, चढ़ती सदा चली जाती है
ला लाकर यह दाना दाना, जमा कर रही बड़ा खजाना
जब बरसात कभी आ जाती, बैठी मेहनत का फल खाती
डटकर करना अपना काम, मिलता जीवन भर आराम

कृष्णकांत तैलंग -- उनका जन्म सन् 1922 में बिलहरा जिला सागर में हुआ था। उन्होंने मैट्रिक तक शिक्षा प्राप्त की और गन कैरिज फैक्टरी में राजकीय सेवारत रहे। उनकी बाल कवितायें 'बाल विनोद' में स्वतन्त्रता पूर्व से ही छपने लगी थीं। 'फूल माला' और 'मौजमजे' 'फूलपरी', 'जादू की सारंगी', 'नया सबेरा', 'आओ पेड़ लगायें' आदि उनके बालगीतों के संकलन प्रकाशित हुए हैं। उनका निधन 1996 में हो चुका है। उनका एक बालगीत है -

लंबी लंबी भूरी मोटी बाबा की थी मूंछें

मानो होठों पर रक्खी हों ला घोड़े की पूंछें।
पीछे दौड़ा करते बाबा मुझे पकड़ जब लेते
मूंछ गड़ाकर चूम चूम कर आफत सी कर देते।
एक रोज थे सुख से सोते बाबा खर्राटे भर
नाक बजाकर गाल फुलाकर मुंह अपना बिचकाकर
मुझको तब सूझी शैतानी लख बाबा की मूंछे
मैंने कैंची लाकर कतरीं घोड़े की वह पूंछे।

लक्ष्मीकांत वर्मा -- उनका जन्म सन् 1922 में बाँसी जिला बस्ती में हुआ था। उन्होंने बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। गांधी जी के आश्रम में रहकर सेवा कार्य करते रहे। बच्चों के लिए उनकी 'नटखट बिल्ली', 'बाल सेना', 'लाला जी ने भाजी खरीदी', 'मानस के हंस' पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी एक बाल कविता है -

बैंगन रामभगत थे मन के, बोले वे हर्षित मन से
तनिक मुझे भी देखो लाला, मैं आया हूं, लंदन से।
गोभी उछल पड़ी झाबे से बोली-चुप बे ओ खूसट
तेरे रंग बड़े भोले हैं किंतु जात का तू चौपट।
कहा सेम ने 'मैं श्यामा हूं, आई मैं चंडीगढ़ से'
जौनपूर की मूली बोली-'मैं आई शंकरगढ़ से'
देख टमाटर ज्यों ही लपके लाला जी ले लेने को
लाल टमाटर बोला फौरन क्या लाये हो देने को।

शिवशंकर मिश्र -- उनका जन्म सन् 1923 में उज्जैन, म. प्र. में हुआ था। उन्होंने अर्थशास्त्र, राजनीति शास्त्र और इतिहास विषयों में एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। प्रारम्भ में अध्यापक रहे। फिर सूचना विभाग उ. प्र. में सेवारत हो गये, और 'उत्तर प्रदेश' पत्रिका के संपादक, सहायक निर्देशक सूचना विभाग तथा सचिव हिन्दी समिति के पदों पर रहने के बाद अवकाश ग्रहण किया। बच्चों के लिए उनकी कविताओं की 'एक सुमन एक किरण', 'पढ़ो प्रेम की गीता' तथा 'चित्र हंसी के, गीत खुशी के' आदि पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी एक बाल कविता है -

सबसे पहले देश बाद में कोई है
इस पर न्योछावर तन मन है, इस पर न्योछावर जीवन है
अर्पित इसको क्षण प्रतिक्षण है

त्याग करो इसके हित सब कुछ यही प्रथम संदेश बाद में कोई है।
इस उपवन को तुम्हें सजाना, इसका भरना तुम्हें खजाना
इस धरती पर नंदन लाना
सबसे सुन्दर लगता भारत माता का यह देश बाद में कोई है।

गोपाल कृष्ण कौल -- यह एक सुप्रतिष्ठित बाल साहित्यकार और समीक्षक हैं। उनका जन्म सन् 1924 में हुआ था। बच्चों के लिए बहुत सी पुस्तकें लिखी हैं। उनकी बाल कवितायें बाल पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। उनकी एक कविता है-

तिनके चुनकर लाती चिड़िया, अपना नीड़ बनाती चिड़िया
चाहे मुन्ना हो या मुनिया, चाहे गुड्डा हो या गुड़िया
घर घर की गौरैया बनकर सबका मन बहलाती चिड़िया।
घर में वन में औ फूलों पर, डाली के हिलते फूलों पर
कभी फुदक कर नाच दिखाती कभी गीत सा गाती चिड़िया।
इसको पिंजड़े में मत डालो, खुला छोड़कर इसको पालो
आजादी की खुली हवा में अपने पर फैलाती चिड़िया।

मुकुल -- राजस्थानी भाषा के सुप्रसिद्ध कवि मुकुल का जन्म 1923 में हुआ था। उनका पूरा नाम मेघराज है। वह राजस्थान में ही राजकीय सेवारत रहे। उप सचिव और भाषा विभाग के निदेशक रह चुके हैं। उनकी बालोपयोगी कविताओं के दो संकलन 'लाड़ले गीत' और 'जन्म भूमि के गीत' प्रकाशित हो चुके हैं।

विनोद रस्तोगी -- उनका जन्म सन् 1923 में शमशाबाद, फर्रुखाबाद में हुआ था। बच्चों के लिए उपयोगी कुछ कवितायें भी लिखी हैं। उनकी एक कविता है -

मरुथल के जहाज की पदवी पाकर ऊंट बहुत अकड़ा
सोचा इस पूरी दुनिया में कोई मुझसे नहीं बड़ा।
अपनी ऊंचाई पर रीझा झूम झूम हो मगन चला
जैसे कोई वीर सिपाही विश्व विजय करने निकला
सीना तान उठाकर गरदन ऐंठा मन में फूल गया
जब पहाड़ के नीचे आया सभी हेकड़ी भूल गया।

सरोजिनी कुलश्रेष्ठ -- उनका जन्म सन् 1923 में मथुरा में हुआ था। एम.ए. तक

शिक्षा प्राप्त की। किशोरी रमण डिग्री कालिज, मथुरा से अवकाश प्राप्त प्राचार्या हैं। आजकल नोयडा में रह रही है। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान से 'बाल साहित्य भारती' सम्मान प्राप्त हैं। बच्चों के लिए लिखने में विशेष रुचि रखती हैं। उनकी बाल कवितायें बाल पत्र-पत्रिकाओं और कुछ संकलनों में छपती रही है। प्रकाशित पुस्तकों के नाम हैं - 'आजारी निंदिया', 'जागो बेटा प्यारे', 'भोर भई अब जागो प्यारे', 'नन्हें मुन्ने गायें गीत। उनकी एक बाल कविता है -

चढ़े हिरन के रथ पर आये। सबको चंदा मामा भाये
दिखते कैसे गोल मटोल। दूध कटोरे से अनमोल
अमृत भरा लबालब इनमें। टपकायेंगे सबके मुंह में
लक्ष्मी माँ के भाई प्यारे। चन्दा मामा लगते प्यारे

प्रकाश पंडित -- उनका जन्म सन् 1924 में हुआ था। लाहौर और अमृतसर में शिक्षा प्राप्त की। राजपाल एंड संस दिल्ली के प्रकाशन विभाग में काम करते थे। उन्होंने उर्दू काव्य साहित्य को हिन्दी लिपि में प्रकाशित कराने की दिशा में बहुत काम किया है। बच्चों के लिए भी लिखते थे। उनकी एक बालोपयोगी पुस्तक 'चांद का सफर' पंजाब सरकार द्वारा पुरस्कृत हो चुकी है। उनके बालगीतों की भी एक पुस्तक 'चिड़ियाघर' प्रकाशित हुई है। उनका स्वर्गवास सन् 1982 में कैंसर रोग के कारण हो गया।

दीनदयाल उपाध्याय -- उनका जन्म सन् 1924 में सागर में हुआ था। इण्टर तक शिक्षा प्राप्त की, और वहीं मिडिल स्कूल में अध्यापक हो गये। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत कवितायें लिखी हैं। जो पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहीं हैं। उनका एक बालगीत है -

दौड़ लगाकर सट पट जाकर, शाला झट पहुंचाती मुझको।
खूब घुमाती मन बहलाती, बाइसिकिल ले जाती मुझको।
कभी गिरा कर कभी रुला कर, बैठाकर घर लाती मुझको।
सैर कराती सर सर जाती, शान दिखाती भाती मुझको।

कमला ओबराय -- उनका जन्म सन् 1924 में अजमेर में हुआ था। घर पर ही शिक्षा प्राप्त की। 15 वर्ष की आयु से ही कविता लिखने लगी थीं। बच्चों के लिए लिखने में विशेष रुचि रही। उनके बालगीतों का एक संकलन 'बाल तरंग' नाम से प्रकाशित हुआ है। उनकी एक कविता है -

नदी किनारे आये हम। जल में डूब नहाये हम
तैरी मछली कूदे हम। पकड़ न पाये डूबे हम
पानी भर जब लाये घर। गिर गए पांव फिसलने पर
मटका टूटा हुई धड़म। चोट न आई बच गए हम

आशाकांत बी. आचार्य -- जयपुर से निकलने वाले लोकवाणी दैनिक के उप-सम्पादक थे। बाद में नवयुग साहित्य निकेतन, अमरावती का काम देखने लगे थे। उन्होंने बच्चों के लिए भी कवितायें लिखी हैं। 'म्याऊं' और 'छम छम' नाम से उनके संकलन प्रकाशित हुए। उनकी एक कविता है -

चींटी से यों बोला पंथी ठहर जरा सुस्ता ले
ठंडी छाँह तले तू मेरे संग गा ले मुस्का ले।
चींटी बोली पागल पंथी आंधी आने वाली
संभव है घिर कर आ जायें साथ घटायें काली।
करती हूं जो काम छोड़कर साथ तुम्हारे जाऊं
क्षण भर सुख के लिए व्यर्थ क्या जीवन भर पछताऊं।

जीवन प्रकाश 'जीवन' -- उनका जन्म सन् 1925 में पिंडी भट्टियां, जिला गुजरांवाला (पाकिस्तान) में हुआ था। उन्होंने एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और ज्ञानी तथा प्रभाकर की परीक्षायें भी पास कीं। सन् 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन में वह सक्रिय रूप से कूद पड़े थे और कई बार जेल गए। एक समीक्षक के शब्दों में-'पंजाब में उन्होंने ही बाल साहित्य सृजन का पथ प्रशस्त किया।' उन्होंने देशभक्ति और नैतिकतापूर्ण कवितायें बच्चों के लिये लिखी हैं। अनेक पुस्तकें भी प्रकाशित हो चुकी हैं - 'देशगीत', 'प्यारे बालगीत', 'बालगीत', 'वीर दर्शन', 'अक्षर अभिलाषा', 'हम उस जननी की संतान' आदि। उन्हें फाइन आर्ट अकादमी, पंजाब ने एक बाल साहित्यकार के रूप में सम्मानित किया था। उनकी कुछ कवितायें पंजाबी रीडरों में भी निर्धारित हैं। उनका एक बालगीत है -

बापू कहते एक बनो। तज दो लड़ना नेक बनो।।
आसतीन का सांप न बनना। विमल विचार सदा ही रखना।।
पांचों हीं मित्रों ने मिलके। तोड़े अंगूरों के गुच्छे।।
घर भागे जब हुई बरसात। पाठ पढ़ो तो होगी रात।।

चन्द्रपाल सिंह यादव 'मयंक' -- मयंक जी का जन्म 1925 में कानपुर में हुआ था। वहीं उन्होंने एम.ए., एल.एल.बी., साहित्यरत्न तक शिक्षा प्राप्त की और वकील तथा नोटरी पब्लिक हो गये। 10 वर्ष की आयु में ही उन्होंने बच्चों के लिये कविता लिखना प्रारम्भ कर दिया था। हिन्दी की सभी बाल पत्रिकाओं में उनकी कवितायें प्रकाशित होती हीं। उन्होंने छोटे और बड़े दोनों आयु वर्ग के बच्चों के लिए कवितायें लिखी हैं। कुछ पद्य कथायें भी लिखी हैं। सन् 1981 में बाल साहित्य समीक्षा ने उन पर एक विशेषांक निकाला था। बाल वर्ष में फाइन आर्ट अकादमी ने सम्मानित किया था। उनकी लगभग 60 पुस्तकें – 'राजा बेटा', 'परियों का नाच', 'सैर सपाटा', 'हिम्मत वाले', 'बज गया बिगुल', 'शिशु गीत', 'चिड़ियाघर', 'हम देश की मुस्कान', 'साहसी सेठानी', 'वीरांगना लक्ष्मी', 'ऐसे थे भारत के बापू', 'जंगल का राजा', 'देश के यह बलिदानी वीर', 'मुनमुन सरकस', 'बन्दर की दुल्हन', 'आनन्द भवन', 'देश हमारा' आदि प्रकाशित हैं। उनका निधन सन् 2000 में हो गया। उनके निधन के बाद 'यहाँ सुमन बिखेर दो' नामक वृहदाकार ग्रन्थ में उनके बाल साहित्य के प्रदेय का मूल्यांकन किया गया है। उनकी एक बाल कविता है –

कुत्तों में हो गई लड़ाई। फिर तो भारी आफत आई
बच्चों ने भी शोर मचाया। शू शू शू करके उकसाया।
सब मुहाल वाले घबराये। छड़ी लिए बाबू जी आये।
कुत्तों पर फिर छड़ी जमाई। बच्चों को भी डाँट बताई।
तितर बितर थे कुत्ते सारे। भागे तब वह डर के मारे।

रामभरोसे गुप्त 'राकेश' -- उनका जन्म सन् 1925 में आलमपुर जिला भिण्ड, मध्य प्रदेश में हुआ था। एम.ए., बी.एड., साहित्यरत्न तक शिक्षा प्राप्त की। सन् 1945 से लिखना प्रारम्भ किया। उनकी बाल कवितायें बाल सखा, पराग, लल्ला आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। 'नन्हें नन्हें सैनिक', 'क्या बनोगे?' तथा 'शिशुगीत' नाम से उनकी बाल कविताओं की पुस्तकें भी प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी एक बाल कविता है –

देश भक्ति के गीत सुनाते वीर साहसी सैनिक हम
कभी न कड़वे वचन बोलते वाणी रखते सदा नरम।
अन्यायों को देख हमारा पल में होता खून गरम
हंसी खुशी के फब्बारे हैं नहीं सताता हमको गम।

प्रेम नारायण गौड़ --- उनका जन्म सन् 1927 में प्रयाग में हुआ था। विद्यार्थी जीवन से उनकी रुचि लिखने में हो गई थी। सन् 1951 से ही विशेष रूप से बच्चों के लिये लिखने लगे थे। इलाहाबाद में उन्होंने बाल साहित्य परिषद की स्थापना की। उनकी लगभग 40 बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हुईं। उनमें से 'चमचम चंदा' एक बालगीत संकलन और 'बन्दर का मुंह लाल हुआ ' पद्य कथा तथा 'दस गुरु चरित', 'युग पुरुष विवेकानन्द', 'सरदार भगत सिंह' पद्य जीवनियों की पुस्तकें हैं। उनका निधन सन् 1996 में हुआ। उनका एक बालगीत है -

चन्दा मामा चमक रहे हैं नभ में आसन मारे
देख उन्हें कितने खुश होते हैं हम बच्चे सारे।
लिये साथ तारों की टोली नभ में चक्कर खाते
आंख मिचौनी खेला करते हरदम हैं मुस्काते।
पहुंच वहां तक पाते यदि होता सुख मन में भारी
किंतु वहां पहुंचा दे मुझको ऐसी कौन सवारी।

कामिनी दीदी -- सिनेमा जगत में जिन्हें सब कामिनी कौशल के नाम से जानते हैं बच्चों के लिए कामिनी दीदी के नाम से लिखती रही हैं। उनका असली नाम उमा सूद है। उनका जन्म सन् 1927 में लाहौर में हुआ था। उन्होंने अंग्रेजी विषय लेकर बी.ए. आनर्स तक शिक्षा प्राप्त की। योरूप और एशिया के अनेक देशों की यात्रा कर चुकी हैं। 'पराग' मासिक जब निकला था तो वही उसकी सम्पादिका नियुक्त हुई थीं। उन्होंने बच्चों की कहानियां, उपन्यास और कवितायें लिखी हैं जो पराग में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनकी एक बाल कविता है -

आज रात बिस्तर में लेटे सोचा मैंने ध्यान लगाकर।
कितने रंग की चीजें खाईं मैंने दिन भर मंगा-मंगा कर
श्वेत रंग का दूध पिया था। पीला मक्खन साथ लिया था
फिर थे लाल संतरे खाये। रंग बिरंगे सेव चबाये।
आइस्क्रीम गुलाबी चाटी। भूरी चाकलेट भी काटी
पेट भरा था हरी मटर से। और लाल-लाल गाजर से।
मैंने इतना सब था खाया। पेट अचानक फटने आया
अगर कहीं सचमुच जाता फट। इन्द्र धनुष बाहर आता झट।

रामावतार चेतन -- उनका जन्म सन् 1928 में फतेहपुर (उ.प्र.) में हुआ था। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी.ए. और बम्बई विश्वविद्यालय से एम.ए. पास किया। धर्मयुग

दुश्मन के सिर पर गिरते हैं बनकर के हम भीषण बम
दूर करेंगे श्रम से अपने निर्धनता का गहरा तम
स्वर्ग सदृश इस भारत भू पर लेंगे सौ-सौ बार जनम।

धर्मपाल शास्त्री -- उनका जन्म सन् 1925 में बारामूला में हुआ था। गुरुकुल में स्नातक तक शिक्षा प्राप्त की और पंजाब वि.वि. से एम.ए. किया। उन्होंने विशेष रूप से बच्चों के लिए बहुत सी पुस्तकें लिखी हैं। भारत सरकार और यूनेस्को पुरस्कार भी उन्हें मिल चुके हैं। उनकी बाल कविताओं की कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। जैसे-'खेलें कूदें नाचें गायें', 'मेरी गुड़िया कुछ तो बोल', 'आओ मिलकर गायें','मुन्नों के गीत', 'नवीन शिशु गान', 'बच्चों के बापू'। उनका एक बालगीत है -

सबसे अच्छा तेरा नाम। हे प्रभु तुझको लाख प्रणाम
हे प्रभु तू सब कुछ कर सकता। कर दे सोहन हलुआ सस्ता।।
टके सेर कर दे बादाम। न्याय सभी का तू है करता।।
मुझसे मोटू राम झगड़ता। हे प्रभु करदे उसे जुकाम।।

डॉ. हरिश्चन्द्र -- उनका जन्म सन् 1926 में बरेली (उ.प्र.) में हुआ था। बरेली कालिज में एम. एस-सी. (रसायन शास्त्र) तक शिक्षा प्राप्त की। उसके बाद एम. ए. (हिन्दी), एल-एल.बी. और हिन्दी में ही पी-एच.डी. भी की। भारतीय प्रशासनिक सेवा में रहे। सन् 1941 से ही नियमित रूप से 'निरंकुश' उपनाम से कविता कहानी, संस्मरण, शब्द चित्र आदि लिखते रहे हैं। उनकी एक बाल कथा पर बम्बई दूरदर्शन ने फिल्म भी बनाई है। उनकी बालोपयोगी कवितायें बाल सखा, बालक, शिशु, पराग, आदि में प्रकाशित होती रही हैं। एक बाल कविता का अंश है -

मुर्गे ने मुँह टेढ़ा कर 'कुकड़ूँ-कुकड़ूँ' का शोर किया
उससे टूटी नींद सेठ की पकड़ उन्होंने चोर लिया।
चोर निगोड़ा मच्छर निकला आया जो गोरस पीने
तोप उठाकर उड़ा दिया लेकिन उसको सेठानी ने।
यह सब बैठा देख रहा था मुर्ग मित्र घड़ियाल कहीं
हँसा जोर से सूंड उठाकर जो थी उसके पास नहीं।
मुर्गे ने तत्काल सूर्य को अपने सिर पर उठा लिया
तब से ही पड़ गया नाम भी उस पक्षी का अरुणशिखा।

में सम्पादकीय विभाग में रहे। वह बच्चों के लिये 'बाल मित्र' नाम से भी लिखते थे और उनकी बहुत सी रचनायें उसी नाम से प्रकाशित हैं। उनकी बालोपयोगी कविताओं की 'सुनो कहानी', 'दूब के मोती', 'शरारत का फल' आदि पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनका निधन सन् 1986 में हुआ। उनका एक बालगीत है -

सागर दादा सागर दादा, नदियों झीलों के परदादा।
तुम नदियों को पास बुलाते, ले गोदी में उन्हें खिलाते
झीलों पर भी स्नेह तुम्हारा, हर तालाब तुम्हें है प्यारा।
मेघ तुम्हारे नौकर चाकर, वे पानी दे जाते लाकर।
सांस भरी तो ज्वार उठाया, सांस निकली भाटा आया
तुम सबसे हिल मिल बसते हो, लहरों में खिल-खिल हंसते हो।

राधेश्याम सक्सेना 'रसिकेश' -- उनका जन्म सन् 1928 में ग्राम ललोर जिला फर्रूखाबाद में हुआ था। उन्होंने बी.ए. साहित्यरत्न तक शिक्षा प्राप्त की। बच्चों के लिये प्रेरक और मनोरंजक दोनों प्रकार की कवितायें लिखा करते थे। कानपुर में बेनी झावर में रहते थे। असमय ही उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी बालोपयोगी कविताओं की 'ठठोली', 'जागरण भेरी' तथा 'हमें इतिहास बदलना है' पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनका एक बाल गीत है -

नन्हें मुन्ने भाई। करना नहीं लड़ाई
आओ खेल खेलें। गेंद बल्ला ले लें
तुमको कैरम प्यारी। करो जल्द तैयारी
मेरी मुट्ठी खोलो। इसमें क्या है बोलो
मेरी मुट्ठी खाली। खाली बजती ताली
खेल खत्म है सारा। पैसा हजम तुम्हारा।

लक्ष्मी देवी चन्द्रिका -- यह अशोक एम.ए. की पत्नी थीं। उनका जन्म सन् 1929 में हुआ था। अंग्रेजी और मराठी भाषायें जानती थीं। बच्चों के लिये बहुत सी लोरियां और कवितायें लिखी हैं। 'नन्हें मुन्ने', 'निदिया रानी', 'लोरियाँ', 'चुन्नू मुन्नू' आदि उनकी कविता की कई पुस्तकें उनकी एक लोरी है -

सो जा ललना सो जा ललना
मां की गोदी तेरा घर है, तेरा घर है तेरा घर है
फिर क्यों तेरे मन में डर है सोने चांदी का है पलना।

मीठी-मीठी नींद बुला दूं, थपकी दे दे तुझे सुला दूँ
सारी चिन्ता शोक भुला दूं, कभी न रोना और मचलना।

भीष्मसिंह चौहान -- उनका जन्म सन् 1923 में जि. मैनपुरी के नगला जूला ग्राम में हुआ था। मैट्रिक करने के बाद उन्होंने साहित्यालंकार की परीक्षा पास की। मराठी और उर्दू भाषायें भी जानते थे। ग्वालियर और भोपाल की सामाजिक साँस्कृतिक गतिविधियों से सक्रिय रूप से संबद्ध रहे। सन् 1955 से उन्होंने लिखना प्रारम्भ किया था। उनकी बालोपयोगी रचनायें 'पराग', 'बाल सखा', 'गिलहरी', 'धर्म युग', साप्ता. हिन्दुस्तान आदि में प्रकाशित होती रही हैं। 'फूल और कांटा', 'बापू के बोल', 'आओ गायें', 'सच्चे सिपाही' नाम से बाल कविताओं के संकलन भी प्रकाशित हो चुके हैं। उनका निधन सन् 1990 में हो गया। एक बाल कविता है -

आँख मिचौली और कबड्डी चलो खेलने खो खो
कुश्ती लड़ें ठोक कर तालें हाथ दिखायें दो दो,
खायें मिठाई लाल की। हाथी घोड़ा पालकी।
सरपट-सरपट दौड़ लगायें ऊँची-ऊँची जम्प
लंगड़ी लंगड़ी मारें तंगड़ी मच जाये हड़कम्प,
हो तारीफ कमाल की। हाथी घोड़ा पालकी।

वीरेन्द्र मिश्र -- उनका जन्म सन् 1927 में मुरैना म.प्र. में हुआ था। उन्होंने बी. ए. तक शिक्षा प्राप्त की। कवि सम्मेलनों में लोकप्रियता प्राप्त करके फिल्मी गीत लिखने के लिये बम्बई चले गये थे। उन्होंने बच्चों के लिये भी बहुत लिखा है। भारत सरकार और म.प्र. में राज्य सरकार से पुरस्कृत भी हुए। 'सुनो राम की कथा', 'जय जवाहर', 'काले मेघा पानी दे' तथा 'अपना देश महान' उनकी वार्तालाप शैली में लिखी गेय और अभिनेय कथागीतों की पुस्तकें हैं। 'गीतों के झूले', एक संकलन का सम्पादन भी किया था। उनका निधन सन् 1999 में हो गया। उनका एक गीत है -

हम नन्हें-मुन्ने हों चाहें पर नहीं किसी से कम
आकाश तले जो फूल खिलें वह फूल बनेंगे हम।
बादल के घेरे में कुहरे के घेरे में
भयभीत नहीं होंगे घनघोर अंधेरे में।
हम दीपक भी हम सूरज भी तुम मत समझो शबनम।
अब जान गया यह नील गगन दिन रात तपेंगे हम।

रामावतार त्यागी -- उनका जन्म सन् 1925 में चन्दौसी में हुआ था। हिन्दी में एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। नवभारत टाइम्स दिल्ली में उप-सम्पादक रहे। उन्होंने बड़ों के साथ-साथ बच्चों के लिये भी कवितायें लिखीं। एक पुस्तक 'मैं दिल्ली हूँ' प्रकाशित हो चुकी है जिस पर उन्हें केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय से पुरस्कार भी मिला है। उनकी एक बाल कविता है -

हिन्द के बहादुरों, शूरवीर बालको
थाम लो सँभाल कर देश की मशाल को।
अन्धकार का गरूर आन बान तोड़ दो
बालको भविष्य के लिये मिसाल छोड़ दो।
दो नई-नई दिशा वर्तमान काल को।
देश माँगता कि खून से रंगा गुलाब दो
तुम उठो सिपाहियो, चीन को जवाब दो
झूम-झूम कर मलो युद्ध के गुलाल को।
दूर तक जमीन पर शानदार जय लिखो
तुम विशाल सिंधु पर जय लिखो विजय लिखो
तोड़ दो पिशाच के तुम हरेक जाल को।

हरिदयाल चतुर्वेदी -- उनका जन्म सन् 1931 में जबलपुर में हुआ था। बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की, उसके बाद पत्रकारिता का व्यवसाय अपना लिया। राजकीय सेवा में भी रहे। 'मनोरमा' व 'प्रयाग' के सम्पादक भी रहे। बच्चों के लिये कवितायें लिखने में बचपन से रुचि थी। 'बाल सखा' में बालगीत प्रकाशित होते थे। उनके बालगीतों का एक संकलन 'जादूगर' नाम से सन् 1943 में प्रकाशित हुआ था। उनका एक बालगीत है -

मैं छोटा हूं छोटा-सा है मेरा एक नया संसार
लाल-गुलाबी नीले-पीले फूल दिखाते जहाँ बहार।
सुन्दर मोहक और सलोना सुरभित सोने का संसार
फूलों की है मेरी दुनिया मैं फूलों का राजकुमार।
रंग-बिरंगी शोख तितलियां श्यामल भौरों का गुंजार
सदा गुंजरित करता रहता मेरे फूलों का संसार।
ऊषा आती फूल-फूल को लाली का देती वरदान
सूर्य सुनहरी किरणों से नित उन्हें बनाता है छविमान।

हँसता सूरज चन्दा हंसता फूलों का हंसता संसार
हँसता इनके साथ-साथ ही फूलों का मैं राजकुमार।

राधेश्याम 'प्रगल्भ' -- उनका जन्म सन् 1929 में खुर्जा, बुलन्दशहर में हुआ था। हिन्दी तथा भूगोल में आगरा वि.वि.से एम.ए. किया। खुर्जा नगरपालिका के सदस्य रहे। बच्चों के लिये कहानी, नाटक, जीवनी आदि सब तरह की पुस्तकें लिखी हैं। उनकी बाल कविताओं की एक पुस्तक 'सूरज की बेटी' नाम से प्रकाशित हुई है। उनका निधन सन् 1999 में हो गया। उनकी एक कविता है -

कोयल काली काली। लगती भोली भाली
मीठी बोली बोले। मानो मिसरी घोले
उड़ती डाली डाली। कोयल काली काली

कपिल -- सन् 1959-60 में दिल्ली में रहते थे। बाद में बम्बई चले गये और फिल्म पत्रकारिता के क्षेत्र में कार्य करने लगे थे। उनका परिचय देते हुए पं. सोहन लाल द्विवेदी ने लिखा था-'हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकारों एवं कवियों में अग्रगण्य हैं। उनकी रचनायें प्रमुख पत्रों में सम्मानपूर्वक प्रकाशित होती हैं।........ वह बच्चों के लिए भी बड़ी ही सरल तथा सरस रचनायें लिखते हैं।' उनके बालगीतों की एक पुस्तक 'नन्हें मुन्ने' नाम से प्रकाशित हुई थी। उनका एक बाल गीत है -

तड़के ही आकर के सूरज हमको नित्य जगाता है
जग में उजियारा फैलाकर तम को दूर भगाता है।
सागर का पानी पी-पीकर धरती पर बरसाता है
अपनी किरणों से खेतों में फसलें नई उगाता है।

रामनिरंजन शर्मा 'ठिमाऊ' -- उनका जन्म सन् 1930 में पिलानी (राजस्थान) में हुआ था। बैजनाथ श्रीराम साबू शिशु मन्दिर पिलानी में प्रधानाचार्य रहे। हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी और राजस्थानी भाषायें जानते और उनमें लिखते थे। बच्चों के लिए कविताओं के अतिरिक्त नाटक और कहानियां भी लिखी हैं। 'प्रार्थना संग्रह' और 'बालोत्सव' 'बालकवितावली' नाम से उनकी बालोपयोगी कविताओं के संकलन प्रकाशित हो चुके हैं। उनके अतिरिक्त उनकी गद्य-पद्य की अनेक पुस्तकें प्रकाशित हैं। उनका निधन सन् 2011 में हुआ। उनकी एक बाल कविता है -

पप्पू ने दीदी से पूछा क्या होती महंगाई

सभी इसी की चर्चा करते चली कहां से आई
हम दोनों के गुल्लक दीदी मम्मी ने क्यों खोले?
बिल वाले के आज कान में पापाजी क्यों बोले?
मटर टमाटर बन्द हुए हैं आलू गाजर खाते
सेब सन्तरे कभी न देखे पापा मूली लाते
सब चीजों के पप्पू भैया लगते दुगने पैसे
पापा रुपये वही कमाते सेव मंगायें कैसे?

पाण्डेय कपिल -- उनका जन्म 1930 में शीतलपुर, सारन (बिहार) में हुआ था। हिन्दू वि.वि. से बी. ए. और पटना वि.वि. से एम.ए. हिन्दी तक शिक्षा प्राप्त की। सारन जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन के संयुक्त मंत्री भी रहे। वह बिहार राज्य सेवा में सहायक अनुवादक के पद पर काम करते थे। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत सी कवितायें लिखी हैं। उनके 'फूल और कलियाँ' तथा 'हीरे के टुकड़े' दो बालोपयोगी कविताओं के संकलन प्रकाशित हो चुके हैं। एक बाल कविता है -

आ गई बरसात
लगे मेढक गीत गाने टर्र टर टर टर्र टर टर
नदी नाले और गड्ढे सभी पानी से गये भर
आज लह लह हरी धरती दूब पौधे पात
आ गई बरसात
है घिरा आकाश फिर से छा गये हैं श्याम बादल
कौंधती बिजली बराबर कड़कती है आज पल-पल
हो रही वर्षा झमा झम झमक कर दिन रात
आ गई बरसात

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना -- उनका जन्म सन् 1927 में पिकारा जि. बस्ती में हुआ था। इलाहाबाद में शिक्षा प्राप्त की। दिल्ली में 'दिनमान' साप्ताहिक के उपसंपादक तथा पराग के सम्पादक रहे। पुष्किन कविता समारोह में भारतीय कवि के रूप में सम्मिलित होने के लिए रूस गये थे। बच्चों के कवि, लेखक और बाल साहित्य के एक अच्छे समीक्षक भी रहे। उनके बालगीतों की पुस्तकें 'बिल्ली के बच्चे' 'बतूता का जूता' और 'मंहगू की टाई' प्रकाशित हो चुकी हैं। 'भों भों खों खों' एक काव्य नाटिका भी प्रकाशित हुई है। वह भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हुए। उनका निधन सन 1983 में हुआ। उनका एक बालगीत है -

इब्नबतूता पहन के जूता निकल पड़े तूफान में
थोड़ी हवा नाक में घुस गई थोड़ी घुस गई कान में।
कभी नाक को कभी कान को मलते इब्नबतूता
इसी बीच में निकल पड़ा उनके पैरों का जूता।
उड़ते उड़ते उनका जूता पहुंच गया जापान में
इब्नबतूता खड़े रह गये मोची की दूकान में।

बालक राम नागर -- उनका जन्म सन् 1928 में खानों बाल जिला गुरुदासपुर पाकिस्तान में हुआ था। उनकी मातृ-भाषा पंजाबी और गुजराती है। उन्होंने बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। आकाशवाणी दिल्ली में बच्चों के कार्यक्रमों के संयोजक रहे। बच्चों के लिए गद्य और पद्य दोनों में ही लिखा है। 'दो नाटक', 'छुकछुक', कथाकहानी 'स्वर्ग की सैर', आदि बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी एक कविता है -

आप हंसते जाइये हमको हंसाते जाइये
चमचमाते दांत मोती से दिखाते जाइये
भर कर रखी मेज पर ख्याली पुलाओं की प्लेट
आप भी उसमें से इक चम्मच उठाते जाइये।
कुछ उड़ाते गप्प हैं और कुछ उड़ाते हैं पतंग
आप हाथों के मगर तोते उड़ाते जाइये
चाय से परहेज करते दूध हम पीते नहीं
संतरे और मालटे का रस पिलाते जाइये
सात नम्बर डेढ़ सौ में से मिले भूगोल में
एक जीरो सात के आगे लगाते जाइये।

नारायणलाल परमार -- उनका जन्म सन् 1927 में अंजार जिला कच्छ में हुआ था। उनकी मातृभाषा गुजराती है। उनके बालगीत हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं में बराबर प्रकाशित होते रहे। बालगीतों के 'पन्द्रह अगस्त', 'गद्दार कौन', 'आजारी के गीत', 'चलो, गीत गायें' और 'बचपन की बांसुरी' नाम से प्रकाशित हो चुके हैं। 'चार मित्र' नाम से एक पद्य कथा पुस्तक भी प्रकाशित हुई है। धमतरी म.प्र. में 27.04.2003 को निधन हो गया है। उनका एक बालगीत है -

मिडिल पास कर बन्दर बाबू पहुंचे अपने गाँव

उन्हें गर्व था क्यों रखते वह अब जमीन पर पाँव।
साथी बोले हमें सुनाओ अपना कोई पाठ
बन्दर बाबू का उत्तर था, सोलह दूनी आठ।

कमलेश सक्सेना -- उनका जन्म सन् 1928 में दिल्ली में हुआ था। हिन्दी प्रभाकर, साहित्यरत्न और साहित्यालंकार की परीक्षायें पास कीं। दिल्ली में एक स्कूल कमलेश बालिका विद्यालय की प्रिंसिपल और संचालिका थीं। सन् 1980 में उनका स्वर्गवास हो गया। बाल कविताओं की कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं- 'ग्रहण लगा', 'जयघोष', 'राष्ट्र की पुकार' आदि।

भवानीप्रसाद मिश्र -- हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि भवानी प्रसाद मिश्र का जन्म सन् 1913 में ग्राम टिगरिया जिला होशंगाबाद (मध्य प्रदेश) में हुआ था। उन्होंने नागपुर विश्वविद्यालय से बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और कई वर्ष वर्धा में भी रहे थे। वह कई भाषायें जानते थे। संपूर्ण गांधी वाङ्मय ग्रन्थ का उन्होंने संपादन किया है। बच्चों के लिए उन्होंने एक पुस्तक 'तुकों के खेल' अतुकांत शैली में लिखी है। उनका निधन सन् 1985 में हो गया। उनकी एक कविता है -

सूरज का गोला
इसके पहले ही कि निकलता
चुपके से बोला
हमसे तुमसे इससे उससे
कितनी चीजों से
चिड़ियों से पत्तों से
फूलों फल से बीजों से
-'मेरे साथ साथ सब निकलो
घने अंधेरे से
कब जागोगे अगर न जागे,
मेरे टेरे से?'

रामवचन सिंह आनन्द -- उनका जन्म सन् 1932 में आरा जिला शाहाबाद में हुआ था। कलकत्ता वि.वि. से बी.एस.सी. पास किया। मारवाड़ी विद्यालय चक्रधरपुर

के लेखन में रुचि लेते रहे। उनकी बालोपयोगी कवितायें बच्चों के विभिन्न पत्रों में प्रकाशित होती रहीं। उनके बाल गीतों के संकलन 'गाओ गीत सुनाओ गीत', 'फूल और कलियां', 'दीप और तारा','बढ़े चलो तुम नन्हें राही' तथा पद्य कथाओं की पुस्तकं 'कथा कहानी गीत बन गई', 'सुनो कहानी', 'अंगलू-मंगलू' आदि प्रकाशित हो चुकी हैं। इनके अतिरिक्त बच्चों को वर्णमाला सिखाने वाली पद्य पुस्तकें 'बात-बात में वर्णमाला' तथा 'इतना पानी घोरो रानी' भी उन्होंने लिखी हैं। उनका निधन सन् 2000 में हुआ। उनका एक बालगीत है –

ऊंचे पर्वत से नीचे गिर आगे बढ़ता रहता झरना
मन में साहस ला उठकर फिर आगे बढ़ता रहता झरना।
दर्रा औ' खाई से होकर आगे बढ़ता रहता झरना
चट्टानों से खाकर ठोकर आगे बढ़ता रहता झरना।
रुकता नहीं किसी के रोके आगे बढ़ता रहता झरना
झुकता कहीं न आयें झोंके आगे बढ़ता रहता झरना।
इसीलिए गति प्रति क्षण उसमें आगे बढ़ता रहता झरना
इसीलिए तो जीवन उसमें आगे बढ़ता रहता झरना।

चिरंजीत -- उनका जन्म 1932 में दीनानगर जि. गुरुदासपुर में हुआ था। उन्होंने बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और दिल्ली से निकलने वाले कई पत्रों के संपादक रहे। उसके बाद आकाशवाणी में सेवारत हो गये और नाटक विभाग का संचालन करते रहे। बच्चों के लिये कवितायें लिखने में उनकी विशेष रुचि रही। उनके बालगीतों के संकलन 'नटखट के गीत' और 'बच्चो! गाओ गीत' तथा पद्य कथाओं का संकलन 'एक था राजा एक थी रानी' प्रकाशित हो चुके हैं। उनका निधन दिल्ली में हुआ। उनकी एक बाल कविता है –

आओ खेलें गिल्ली डण्डा खेलें बालीबाल
सबसे बढ़िया खेल कबड्डी खेलें घेरा डाल।
या फिर खेलें डण्डा घोड़ा भागें सरपट चाल
या फिर लाओ घुंघरू भैया नाचें ताता ताता थैया।
अरे नहीं बलवान बनें हम, कुश्ती लड़ डण्ड पेल
आओ खेलें खेल।
आओ खेलें चोर सिपाही सोता पहरेदार
चोरी करके रम्मू भागा घर में मची पुकार।

वर्दी पहन सिपाही आये आया थानेदार
चोर चोर रे पकड़ो हथकड़ियों से जकड़ो जकड़ो।
मजिस्ट्रेट ने हुक्म सुनाया–'चार साल की जेल'

मनोहर वर्मा -- उनका जन्म सन् 1931 में अजमेर में हुआ था। हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक और कवि हैं। बच्चों के लिये भी उन्होंने सभी विधाओं में लगभग 42 पुस्तकें लिखीं और सम्पादित की हैं। उनमें से कई भारत सरकार और राजस्थानी साहित्य अकादमी से पुरस्कृत हो चुकी हैं। 'मधुमती' मासिक का एक बाल विशेषांक निकालकर तो उन्होंने बाल साहित्य के इतिहास और समीक्षा के क्षेत्र में कीर्तिमान ही स्थापित कर दिया है। उन्होंने विभिन्न कवियों की कविताओं के तीन संकलन 'दूंगी तुझे बताशा', 'जागा देश हमारा' तथा 'देशभक्ति के गीत' नाम से प्रकाशित कराये हैं। इनमें उनकी भी कवितायें हैं। उनकी एक बाल कविता है -

एक ही धरती एक गगन है एक है देश हमारा
एक हिमालय एक है गंगा एक है देश हमारा
एक ही रंग है एक ही ढंग है एक है देश हमारा
इस धरती पर गिरजे भी हैं, मन्दिर भी हैं
मस्जिद भी गुरुद्वारे भी
आओ आओ हम सब मिलकर एक लगायें नारा।

विष्णुकाँत पाण्डेय -- उनका जन्म सन् 1933 में संग्रामपुर जि. चम्पारण में हुआ था। मोतिहारी में शिक्षा प्राप्त कर बी.ए. पास करने के बाद तुरकौलिया हाई स्कूल में अध्यापक हो गये। इसके बाद बिहार राज्य के शिक्षा विभाग द्वारा अवर विद्यालय निरीक्षक नियुक्त कर दिये गये। वह अखिल भारतीय बाल साहित्यकार परिषद के महामन्त्री रहे जिसके दो महत्वपूर्ण अधिवेशन इलाहाबाद और लखनऊ में आयोजित हुये। मोतिहारी से 'परिकल्पना' नामक एक पाक्षिक निकालते थे जिसके तीन बाल विशेषांक प्रकाशित हुये थे। उन्होंने बच्चों के लिये बहुत-सी कहानियां और लेख लिखे हैं और बहुत-सी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी एक पुस्तक की पांडुलिपि 'बाल साहित्य विवेचन' को राष्ट्र भाषा परिषद बिहार ने पुरस्कृत किया है। 'ये रंग बिरंगे फूल', 'खेलें कूदें नाचें गायें', 'कुछ पत्ते कुछ फूल', 'चंदा तारे', 'आगे कदम बढ़ाये जा', 'गाता चल दुहराता चल', 'मीठे मीठे प्यारे गीत', 'वीणा गाये हंसे विनोद','सारे गीत तुम्हारे गीत', 'सब गीतों से न्यारे गीत', 'धरती सूरज चांद सितारे', 'आओ

जगमग दीप जलायें', उनके बालगीतों और 'खट्टे हैं अंगूर', 'आओ सुनो कहानी', पद्य कथाओं और 'चाचा नेहरू', 'नन्हीं इन्दू बनी इन्दिरा', 'भारत गौरव गांधी', 'जय बोलो गांधी बाबा की' पद्य जीवनियों की पुस्तकें हैं। 'गांव के बच्चे की पाती' में अतुकांत शैली में बाल कविता लिखी है। उनकी एक बाल कविता है –

घोड़ा नाचे, हाथी नाचे, नाचे सोन चिरैया
किलक किलक कर बन्दर नाचे, भालू ताता थैया।
ठुमुक ठुमुक कर खरहा नाचे ऊंट मेमना गैया
आ पहुंचा जब शेर नाचने मची हाय रे दैया।

विश्वदेव शर्मा -- उनका जन्म सन् 1931 में इलाहाबाद में हुआ था। गोवर्द्धन हाई स्कूल नाथद्वारा से हाई स्कूल, आगरा वि.वि. से एम.ए. हिन्दी तथा पंजाब वि.वि. से एम.ए. अंग्रेजी की परीक्षायें पास कीं। भारत सरकार की सेवा में इन्वेस्टीगेटर के पद पर कार्यरत रहे। बच्चों के लिए लिखने में विशेष रुचि रही। उनकी बालगीतों की कई पुस्तकें 'फूल पत्ती', 'धरती के गीत', 'श्रम के स्वर', 'बाल समवेत गान' आदि प्रकाशित हो चुकी हैं। एक बालगीत है –

हरा समन्दर गोपी चन्दर, बोल मेरी मछली कितना पानी।
बहता कल कल कल कल नाला, नदिया में जा मिलने वाला
बोल मेरी मछली कितना पानी, घुटनो घुटनो छिछला पानी।
मिला नदी में नाला जाकर, तब उमड़ी नदिया उफनाकर
बोल मेरी मछली कितना पानी, कमर कमर तक गहरा पानी।
मिली नदी तो सागर लहरा, नाप न पाते कितना गहरा
बोल मेरी मछली कितना पानी, बोल मेरी मछली कितना पानी।

डॉ. ब्रजभूषण सिंह 'आदर्श' -- उनका जन्म सन् 1931 में उन्नाव जिले में हुआ था उन्होंने नागपुर वि.वि. से एम.ए. की परीक्षा पास की। सागर वि.वि.से पी-एच. डी. की उपाधि तथा पत्रकारिता में डिप्लोमा प्राप्त किया। बच्चों के लिये लिखने में बचपन से ही रुचि थी। जबलपुर से निकलने वाले 'बालमित्र' और हैदराबाद से निकलने वाले 'बालवाटिका' मासिक के सम्पादक रहे। उसके बाद म.प्र. शासन के सूचना एवं प्रकाशन विभाग में पहले जनसम्पर्क अधिकारी बाद में उप संचालक रहे। उनकी बालोपयोगी कविताओं के दो संकलन 'बालनाद' और 'हिमगिरि' प्रकाशित हो चुके हैं।

चन्द्र दत्त 'इन्दु' -- उनका जन्म सन् 1935 में लुहारी जिला गाजियाबाद में हुआ था। आगरा वि.वि. से एम.ए. तथा संस्कृत वि.वि. बनारस से साहित्य शास्त्री तक शिक्षा प्राप्त की। 'नंदन' मासिक के सह सम्पादक रहे। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत से नाटक, उपन्यास और कहानी की पुस्तकें लिखी हैं। पर मूलतः वह बच्चों के कवि हैं। उनकी बालोपयोगी कवितायें नंदन, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान आदि पत्रों में प्रकाशित होती रही हैं और कई संकलनों में भी हैं। उनके दो गीत संग्रह 'नई लहर नई तरंग' तथा 'फूलों की मुस्कान', 'हंसते गाते गीत' प्रकाशित हो चुके हैं। उनका निधन सन् 2007 में हो गया। उनकी एक बाल कविता है -

हंसी मांग कर फूलों से और कुलाचें झूलों से
माँग लहर से चंचलता तितली से ले कोमलता।
अट पट बोल हवाओं के सपने दसों दिशाओं के
रंग सुवह की किरणों का प्यार परी रानी से पा।
ईश्वर बोला धरती से मैं तुझको देता बच्चा।
इसकी किलकारी सुनना अपने सुख सपने बुनना।

गंगाप्रसाद श्रीवास्तव -- उनका जन्म सन् 1930 में ग्राम मुरैनी, जिला सुल्तानपुर में हुआ था। सुल्तानपुर में रहकर उन्होंने इण्टरमीडिएट तक शिक्षा प्राप्त की और अध्यापन कार्य करने लगे। बाद में उत्तर रेलवे में नौकरी कर ली। कविता लिखने की प्रेरणा उन्हें अपने पिता से मिली थी। पहले उर्दू में लिखते थे। फिर हिन्दी में लिखने लगे। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत सी कवितायें लिखी हैं जिनके दो संकलन 'गीतों की बरात' तथा 'आओ गायें गीत' प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी एक बाल कविता है -

शालू आये, केला लाये
मीना ने भी हाथ बढ़ाये, दो केला उसको पकड़ाये
उसने खाया केला एक
छिलका दिया वहीं पर फेंक
आई जब शालू की ताई, छिलका पड़ा न उन्हें दिखाई
पैर पड़ा छिलके पर जब
फिसलीं बड़े जोर से तब
गिर गयीं धड़ाम, मच गया कहराम।

शिवगोविन्द त्रिपाठी -- उनका जन्म सन् 1929 में ग्राम मुन्द्रासन जिला सीतापुर में हुआ था। हिन्दी में एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेद रत्न, तथा संपादन कला की उपाधियां प्राप्त कीं। केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मन्त्रालय की मासिक पत्रिका 'आरोग्य संदेश' के वरिष्ठ उप-संपादक रहे। आयुर्वेद चिकित्सा सम्बन्धी कई संस्थाओं और राजकीय संस्थानों से संबद्ध रहे। डा. राम मनोहर लोहिया अस्पताल दिल्ली में हिन्दी अधिकारी भी रहे। सन् 1952 से लिखने में रुचि हुई थी। बच्चों के लिए नाटक, कहानी, कविता सभी लिखते रहे। उनकी बालगीतों की दो पुस्तकें 'अपलम चपलम' और 'चूँ चूँ कुतरम' प्रकाशित हो चुकी हैं। एक बाल गीत है –

कसली कसली पीठ के घोड़ा टप टप टप टप
हिलती डुलती पूंछ कि झाड़ू झप झप झप झप।
खाता दाना घास कि बोले हिन हिन हिन हिन
मेहनत उसका काम कि करता हर दिन हर दिन।
काठी कसी लगाम एड़ दी हुर्रम हुर्रम
नौसिखिया असवार कि मन में थर्रम थर्रम
बैठे सीना तान कि चाबुक चप चप चप चप
सरपट घोड़ा चला गिरे हम धप धप धप धप।

दिग्गज मुरादाबादी -- उनका पूरा नाम प्रकाश चन्द्र सक्सेना है। दिग्गज नाम से उर्दू और हिन्दी दोनों में कवितायें लिखते रहे हैं। उनका जन्म 1930 में हुआ था। राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय में अध्यापक हैं। बच्चों के लिए विशेष रूप से कवितायें लिखी हैं। जो पराग, बाल भारती, मेला, बाल प्रभात आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। उनकी एक कविता है –

लो फिर से दीवाली आई, साथ अनेकों खुशियां लाई
खीलें और बताशे लाई, बढ़िया खेल तमाशे लाई।
छूट रही है आतिशबाजी, सब प्रसन्न हैं सब हैं राजी।
घर बाहर की हुई सफाई, कहीं रंगाई कहीं पुताई
हर घर में पकवान बने हैं बड़े बड़े सामान बने हैं।
आज कहीं भी नहीं अंधेरा, हुआ रात में दिन का घेरा
दीवाली की रात सुहानी, है सारी रातों की रानी।

रमेश कौशिक -- उनका जन्म सन् 1930 में खुर्जा जिला बुलन्दशहर में हुआ था। एम.ए. हिन्दी तक शिक्षा प्राप्त की। दिल्ली परिवहन विभाग में हिन्दी अधिकारी रहें। उनकी बच्चों के लिए लिखी कवितायें नंदन और साप्ता. हिन्दुस्तान में प्रकाशित होती रहीं। कुछ बाल कवितायें रूसी भाषा में अनुवादित होकर रूसी भाषा की पत्रिका 'कोलो बोक' में भी प्रकाशित हो चुकी हैं और दिल्ली और मास्को रेडियो से प्रसारित हो चुकी हैं। अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष में वह मास्को में आयोजित सम्मेलन में भाग लेने गये थे। उनकी बाल कविताओं के संकलन 'हम हैं चांद सितारे', 'रूसी बाल कवितायें', 'सोन चिरैया' 'गीत मेरे देश के', 'इक्यावन बालकविताएँ' और 'एक सौ इक्यावन बालकविताएँ' प्रकाशित हो चुके हैं। उनका निधन 2007 में हो गया है। एक बाल कविता है -

अपना नाम जिराफ है
ऊंट हमारा मामा लगता घोड़ा अपना भाई है
चरते चरते बात पते की मम्मी ने बतलाई है।
खाल हमारी ऐसी जैसे ओढ़ा हुआ लिहाफ है।
इतनी बड़ी कुलाचें अपनी हिरन देखकर शरमाता
पेड़ों का मस्तक जब देखो हमें देखकर झुक जाता
चाहे कोई दुश्मन समझे अपना मन तो साफ है।
हिंसा में विश्वास नहीं है शाकाहारी कहलाते
बल प्रयोग तब ही करते हैं जब संकट में घिर जाते।
जब तक कोई नहीं छेड़ता तब तक सब कुछ माफ है।

उमाकाँत मालवीय -- उनका जन्म सन् 1931 में बम्बई में हुआ था। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त की। बड़ों के लिए कवितायें और लेख लिखने के साथ साथ बच्चों के लिये भी लिखने में रुचि थी। उनके नाटक, कहानी और कवितायें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। उनकी बालगीतों और काव्य नाटिकाओं की 'चन्दा की माँ', 'पद्य रूपक संग्रह', 'बजी रण भेरी', 'मोम की कुर्सी', 'फूलों की सभा', आदि कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। सन् 1982 में असमय ही उनका स्वर्गवास हो गया। एक बाल कविता है -

लोटा ऊपर लोटा। लोटा नीचे लोटा
बोल जमूरे मेरे निरा अकल का खोटा।
राही रहा पियासा। गदहा रहा उदासा

सीधी बात पते की क्योंकि नहीं था लोटा।
भूत नहीं क्यों भागा। मन में डर क्यों जागा
सीधी बात पते की क्योंकि नहीं था सोंटा।
मिला नहीं गुब्बारा। बैठा क्यों बंजारा
सीधी बात पते की क्योंकि टका था खोटा।

मनोहर प्रभाकर -- उनका जन्म सन् 1931 में हुआ था। हिन्दी और अंग्रेजी में एम.ए. किया है। पंचायत एवं विकास विभाग राजस्थान में सेवारत और 'राजस्थान विकास' पत्रिका में सम्पादक भी रहे। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत लिखा है। उनके बालगीतों के संकलन 'पप्पू के गीत' तथा 'धरती के गीत' और पद्य कथाओं की पुस्तकें 'सुनो कहानी', 'एक था राजा', 'एक थी रानी', 'एक था बालक', तथा 'दादी की बात' प्रकाशित हो चुकी हैं।

सावित्री परमार -- उनका जन्म सन् 1932 में खुर्जा, बुलन्दशहर (उ.प्र.) में हुआ था। इन्टर वहीं से करने के बाद राजस्थान में शिक्षा प्राप्त की और विद्या भवन उदयपुर से बी.एड. किया। लिखने पढ़ने में बचपन से ही रुचि थी। ननिहाल के ग्राम्य जीवन की सरलता से प्रेरित होकर बालगीत लिखने प्रारम्भ कर दिये थे। श्री महावीर दिगम्बर जैन उ.मा. विद्यालय जयपुर में अध्यापिका रहीं। उनके बालगीत चंपक, बाल भारती, पराग, मेला आदि बाल पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। एक बालगीत केरल की एक पाठ्य-पुस्तक में भी है। 'नन्हे मुन्ने सूरज चाँद' नाम से बालगीतों का एक संकलन भी प्रकाशित हो चुका है। उनका एक बालगीत है -

तारे झिम झिम टिम टिम रात। गीदड़ जी की चली बरात।।
कोयलें गाना सुना रहीं। चींटी ताली बजा रही।।
ट्विस्ट कर रहे भालू राजा। ऊंट बजाये पेटी बाजा।।
नदी किनारे थी ससुराल। सब पहुंचे मस्ती की चाल।।
सबने नहाकर पहने सूट। पीली टाई काले बूट।।
झूम झूम कर हाथी बोला। पी लो साहब कोका कोला।
सबने मिलकर खाया खाना। खिला रहा था कौआ काना।

सुरेश दुबे 'सरस' -- उनका जन्म सन् 1938 में बिलारी, वारसली गंज, पटना

में सेवारत रहे। बच्चों के लिए उन्होंने गद्य और पद्य में बहुत सी पुस्तकें लिखी हैं। उनमें से 'खिलते फूल चटकती कलियाँ', 'गा ले गीत सुहावने', 'टन टन बाजा', 'चना चूर गरम' 'बूझो तो जानें' आदि बाल कविताओं की हैं। सन् 1968 में उनका स्वर्गवास हो गया। उनकी एक कविता है -

सादा जीवन उच्च विचार।
बने हमारा हृदय उदार।
तन हो स्वस्थ भुजा में बल हो।
मन प्रसन्न हो चित्त निर्मल हो।
बने ज्ञान गुण के आगार।
ऊंच नीच का भेद भगावें।
दीन दलित को गले लगावें।
करें मातृ-भू का उद्धार।
सेवा व्रत हो सत्य धर्म हो।
ध्येय सदा कर्त्तव्य कर्म हो।
करें स्वर्ग सा यह संसार।

श्यामसुन्दर घोष -- उनका जन्म सन् 1934 में सैदापुर गोडढ़ा, संथाल परगना, (बिहार) में हुआ था। पटना वि.वि. से उन्होंने बी.ए. आनर्स और हिन्दी में एम. ए. किया। सन् 1948 से ही लिखना प्रारम्भ कर दिया था। बच्चों के लिए भी कवितायें लिखते रहे हैं। उनकी दो बालोपयोगी पुस्तकें 'बारह मासा' 'नटखट मुन्ना' प्रकाशित हो चुकी हैं।

विश्वनाथ गुप्त -- उनका जन्म सन् 1935 में अलसीमर, झुझनूं (राजस्थान) में हुआ था। सेकसरिया शुगर मिल वभनाल, गोंडा में सेवारत थे। साहित्य में उनकी रुचि बचपन से ही रही। बच्चों के लिए भी कवितायें लिखीं, जो बालसखा आदि पत्रों में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनकी बाल कविता है -

एक बार बिल्ली ने रक्खा दो दिन का उपवास
हुआ तीसरा दिन जब उसको लगी भूख औ प्यास।
तभी वहां पर लड्डू लेकर आये चूहे चार
उन्हें देख बिल्ली के मुंह से लगी टपकने लार।

चूहे समझे अभी करेगी बिल्ली कुछ चालाकी।
दो दो लड्डू लाये चूहे कुल थे पूरे आठ
उसके ऊपर चूहे भी थे मिल जायें तो ठाठ।
सोच रही थी बिल्ली होंगे अब मेरे पौ बारह
किन्तु हो गए तभी अचानक चूहे नौ दो ग्यारह।

विष्णुकुमार त्रिपाठी 'राकेश' -- उनका जन्म सन् 1934 में लखनऊ में हुआ था। उन्होंने वहीं शिक्षा प्राप्त करके लखनऊ वि.वि. से एम.ए. किया और विद्यांत डिग्री कालिज लखनऊ में ही अंग्रेजी के प्राध्यापक नियुक्त हो गये। बच्चों के लिये उन्होंने कविताओं की दो पुस्तकें लिखी हैं- 'बन्दर तीन' में बाल कवितायें हैं और 'साहसी सोनू' में पद्य कथायें। उनका एक बालगीत है -

एक बार की कथा सुनाऊं, चूं चूं के घर आई म्याऊं।
म्याऊं बोली बाहर आओ, घर वालों के हाल बताओ
तीरथ से लौटी हूं कल ही, लो प्रसाद लाई हूं खाओ।
आओ आओ मत घबराओ, बीती बातों को बिसराओ
भैया! अब मैं पूरी भगतिन, आओ सबको कंठ लगाऊं।

दामोदर अग्रवाल -- उनका जन्म सन् 1932 में वाराणसी में हुआ था। उन्होंने इलाहाबाद में रहकर शिक्षा प्राप्त की और वहीं अग्रवाल डिग्री कालिज में प्राध्यापक हो गये थे। इसके बाद मोतीलालनेहरूकालिज दिल्ली में अंग्रेजी के प्राध्यापक रहे। बच्चों के लिये लगभग सन् 1965 से लिखना प्रारम्भ किया था। उनके बालगीत धर्मयुग, पराग, नंदन, चपंक आदि सभी बाल पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। कुछ दिल्ली दूरदर्शन और आकाशवाणी से भी प्रसारित हुये हैं। उनके बालगीत संग्रह 'चल मेरी नैया कागज वाली', 'राजा चले एक जंगल को', 'प्राणों के स्वर' तथा एक पद्य कथा पुस्तक 'आजादी की कहानी' प्रकाशित हो चुके हैं। उनका निधन 2009 में हुआ। उनका एक बालगीत है -

सूरज ने तान दिया गर्मी का तम्बू
रात रानी छोटी हुई दिन राजा लंबू।
कांटों सा सूख गया नदियों का तालू
खाक हो गया भुन के धरती का आलू।
हवा धूप बांट रही है यों चुन चुन के

धर देगी जैसे वह सूरज को धुन के।
ऐसे में आओ किसी बगिया में पैठें
ठंडी जगह ढूंढ़ वहां पल दो पल बैठें।

केदारनाथ कोमल -- उनका जन्म सन् 1931 में मलर कोटला जिला संगरूर (पंजाब) में हुआ था। एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। विश्वविद्यालय अनुदानआयोग दिल्ली में अनुभाग अधिकारी के पद पर सेवारत रहे हैं। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत-सी कवितायें लिखी हैं जो पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। 'हम सूरज के बच्चे' नाम से उनकी बालोपयोगी कविताओं का एक संकलन प्रकाशित हुआ है। उनकी एक बाल कविता है –

जीवन में सबसे सुन्दर क्या? आजादी है
जीवन में सबसे सुखकर क्या? आजादी है
जीवन में सबसे पावन क्या? आजादी है
सबसे ज्यादा मन भावन क्या? आजादी है
फूलों में सबसे कोमल बस आजादी का फूल है
छोटे और बड़े गोरे काले का भेद फिजूल है।

डॉ. किशोर काबरा -- उनका जन्म सन् 1934 में मंदसौर (म.प्र.) में हुआ था। संघर्षरत रहकर एम.ए., पी-एच.डी. तक उच्च शिक्षा प्राप्त की। बचपन से ही कविता करने का शौक था। उनकी बालोपयोगी कवितायें अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। रेडियो और टेलीविजन से भी प्रसारित हुई हैं और कुछ पाठ्य-पुस्तकों में भी निर्धारित हैं। उनकी बालोपयोगी कविताओं के दो संकलन 'तितली के पंख' और 'टिम टिम तारे' प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने राम और कृष्ण कथा पर आधारित 'बाल रामायण' और 'बाल कृष्णायन' भी लिखी हैं। उनका एक बालगीत है –

टिम टिम तारे टिम टिम तारे, चम चम चमक रहे हैं सारे
दुनिया सोती अपने घर में, तारे जाग रहे अम्बर में।
काँप रहे सब डर के मारे।
काली काली रात निराली, मानो कोई पुस्तक काली
अक्षर जैसे लिखे सितारे।
किरणों की पोशाक पहन कर, हम सब चमकें तारे बनकर
भारत की आँखों के तारे। टिम टिम तारे।

भगवान स्वरूप जैन 'जिज्ञासु' -- उनका जन्म सन् 1936 में हुआ। एम.डी. जैन इण्टर कालेज, आगरा में अध्यापक रहे। बच्चों के लिये विशेष रूप से कवितायें लिखने में रुचि रही है। 'नौनिहाल गायन' और 'नन्हें नन्हें गीत' नाम से उनकी बाल कविताओं की दो पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनके दो शिशु गीत है -

पापा, पापा! -हाँ बेटा
क्या मैं प्यारा? -हां बेटा
क्या मैं अच्छा? -हां बेटा
तो पैसा दो-ना, बेटा।

उड़ते हुये गगन के पक्षी
क्या सन्देश सुनाते हैं,
'आजादी ही सच्चा सुख है'
हम सबको सिखलाते हैं।

प्रेमचन्द्र गोस्वामी -- उनका जन्म सन् 1936 में हुआ था। बीकानेर (राजस्थान) में रहकर शिक्षा प्राप्त की। राजस्थान की राजकीय सेवा में जयपुर में 'आर्टिस्ट' रहे। उन्होंने बच्चों के लिए भी कवितायें लिखी थीं जो 1962-63 में पराग में प्रकाशित हुई हैं। उनकी पद्य जीवनियों की एक पुस्तक 'आविष्कारों की कहानी कविता की जबानी' प्रकाशित हो चुकी है। एक बाल कविता की कुछ पंक्तियां हैं -

बन के पंछी आज छेड़ते मिलकर नया तराना
सुनकर इनका गीत झूमता ये मौसम मस्ताना
कुहू कुहू की रट में कोयल बोली
जैसे रस की खान किसी ने खोली।
भंवरे ने गुन-गुन करके कुछ गाया
मीठा इसका राग सभी को भाया।
घूम घूम कर बादल दल का आना
सुनकर इनका गीत झूमता
यह मौसम मस्ताना।

शम्भूप्रसाद श्रीवास्तव -- उनका जन्म 1936 में औरंगाबाद, वाराणसी में हुआ था। बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। मिलन मन्दिर कलकत्ता के प्रकाशन विभाग में काम करते थे। वहीं से उन्होंने बच्चों के लिए 'शेरसखा' नामक एक मासिक पत्रिका भी निकाली

थी। बच्चों के लिये कवितायें भी लिखते थे जो विभिन्न पत्र- पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनके बालकविता संग्रह हैं - 'अंक्कड़ बक्कड़ बम्बे बो', 'हम चमन के फूल', 'हमें नया समाज दो', 'हंसते हंसते जीना सीखो'। उनका निधन सन् 1993 में हो गया। उनकी एक कविता है -

राकेट पर चढ़ चुहिया रानी चली चाँद के देश
सिर पर टोप लबादा तन पर अजब बनाये वेश।
हाथ मिलाकर टाटा करके बोली जब गुड बाई
घर्र घर्र आवाज तभी कानों में पड़ी सुनाई।
भारी आग छोड़ता राकेट ऊपर उठा गरजकर
चारों खाने चित्त आ गिरी चुहिया रानी डर कर।

डॉ. पार्थसारथि डबराल -- उनका जन्म सन् 1936 में पौड़ी गढ़वाल के ग्राम तिमली में हुआ था। पौड़ी, देहरादून और इलाहाबाद में रहकर संस्कृत और प्राचीन इतिहास विषयों में एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। ऋषिकेश में प्राध्यापक रहे। उनकी बालोपयोगी कवितायें धर्मयुग, बाल भारती आदि में प्रकाशित होती रही हैं। 'धरती से पृथ्वी', 'छोटों के बड़े काम' नाम से दो बाल संकलन और एक गीत नाटिका 'जगे ज्ञान की ज्योति' प्रकाशित हो चुकी हैं।

बाबूराम शर्मा 'विभाकर' -- उनका जन्म सन् 1936 में खरार जिला मुजफ्फरपुर में हुआ था। उन्होंने बी.ए., बी.एड. तक शिक्षा प्राप्त की। उनकी बालोपयोगी कविताओं की एक पुस्तक 'फुलझड़ियाँ' नाम से प्रकाशित हो चुकी हैं -

मिस बिल्ली जी छाता लेकर निकली करने सैर।
ऊंची एड़ी के जूतों के कारण फिसला पैर।
तभी अचानक काला कुत्ता दीखा उसको आता।
डर के मारे छोड़ भगी बेचारी अपना छाता।
फुदक फुदककर चिड़िया बोली चिंउ चिंउ चिंउ चिंउ
मुर्गा भी आकर झट बोला कुकडूं कूं कूं कूं कूं।
कुत्ते ने बिल्ली से पूछा यह क्या जमघट दादी
बिल्ली बोली पता नहीं क्या गधेराम की शादी।

डॉ. ओम प्रकाश सिंघल -- उनका जन्म सन् 1937 में हुआ था। दिल्ली वि. वि. से उन्होंने बी.ए. आनर्स तथा हिन्दी में एम.ए. किया और आगरा वि.वि. से शोध कार्य करके पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। दिल्ली विश्वविद्यालय से सम्बद्ध कॉलेज में अध्यापन कार्य भी किया और चीन की अध्यापन यात्रा में वहाँ दो वर्ष हिंदी अध्यापन भी किया था। बच्चों के लिये उन्होंने शिशु गीत भाग 1, 2, 3 पुस्तकें लिखी हैं जो बहुत सुन्दर प्रकाशित हुई हैं। उनका एक शिशु गीत है -

मेरी गुड़िया है बीमार। देखो कितना तेज बुखार।।
कल था डटकर बरसा पानी। भीगी जिसमें गुड़िया रानी।।
गीले कपड़े दिए उतार। फिर भी उसको तेज बुखार।।
जल्दी से डाक्टर बुलवाओ। फौरन इसको दवा दिलाओ।।

जयप्रकाश भारती -- उनका जन्म सन् 1936 में मेरठ में हुआ था। बी.एस-सी. करने के बाद उन्होंने एम.ए. और साहित्यरत्न की परीक्षायें पास कीं और पत्रकारिता में डिप्लोमा प्राप्त किया। पहले साप्ताहिक हिन्दुस्तान के संपादकीय विभाग में काम करते थे। फिर बच्चों के सर्वाधिक लोकप्रिय पत्र 'नन्दन' के संपादक रहे। उन्होंने बच्चों के लिये गद्य में तो बहुत लिखा है। सन् 1968 में 'हिमालय की पुकार' पुस्तक पर यूनेस्को पुरस्कार भी प्राप्त हो चुका है। 'चलो चाँद पर चलें' पुस्तक पर बाल साहित्य का राष्ट्रीय पुरस्कार तथा 'सपनों का देश' पुस्तक पर सोवियत भूमि नेहरू पुरस्कार प्राप्त हुआ है। रूस की यात्रा भी की। पर बच्चों के लिये उनकी कविताओं की पुस्तकें हैं - 'लो गुब्बारे', 'हिमालय की पुकार', 'चलो चांद पर चलो', 'रुनझुन रुनझुन', 'फूलों के गीत', 'विज्ञान गीत' तथा 'झुनझुना' बहुत सुन्दर प्रकाशित हुई है। 'झुनझुना' पर राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान परिषद ने उन्हें पुरस्कृत कर सम्मानित किया था। उनका निधन सन् 2005 में हुआ। उनकी एक बाल कविता है -

एक थे राजा एक थी रानी, दोनों करते थे मनमानी
राजा का तो पेट बड़ा था, रानी का भी पेट बड़ा था
खूब थे खाते छक-छक कर, फिर सो जाते थक-थक कर
काम यही था बक-बक-बक-बक, नौकर से बस झक-झक झक-झक।

शुभा वर्मा -- उनका जन्म सन् 1937 में इलाहाबाद में हुआ था। उन्होंने एम. ए. तक शिक्षा प्राप्त की। साप्ताहिक हिन्दुस्तान के संपादकीय विभाग में काम किया। बच्चों के लिये गद्य और पद्य दोनों में लिखती रही हैं। बच्चों के लिये उनकी एक

कविता पुस्तक 'निशू और चांद' प्रकाशित हो चुकी है। उसका एक अंश है –

'लगता है तुम सब जल्दी ही मामा के घर आओगे
उसे न छोड़ोगे, अपने संग खेलो और खिलाओगे।'
'तो क्या मामा अच्छा नहीं लगेगा तुमको
हम सबके आ जाने से दुख होगा तुमको।'
'पगली नहीं, लगेगी मुझको खुशी और भी
तुम्हें देखकर आ जायेगी हँसी और भी।'
'लेकिन मामा आकर यहां खायेंगे क्या हम?
दाना पानी बिना न मर जायेंगे क्या हम?'

कुँज बिहारी चौबे -- उनका जन्म सन् 1940 में राजनंद गांव, म.प्र. में हुआ था। 16 वर्ष की आयु से ही कवितायें लिखने लगे थे और वह बाल पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी थीं। सन् 1967 में अल्पायु में ही उनका स्वर्गवास हो गया। मृत्यु के बाद उनकी बालोपयोगी कविताओं का एक संकलन इंडियन प्रेस, इलाहाबाद ने प्रकाशित किया था। उनकी एक बाल कविता है –

यदि मैं भी चिड़िया बन पाता
तब फिर क्या था रोज मजे से मैं मनमानी मौज उड़ाता
नित्य शहर मैं नये देखता आसमान की सैर लगाता
वायुयान की सी तेजी से कई कोस आगे बढ़ जाता।
रोज बगीचों में जाकर के मीठे-मीठे फल मैं खाता
इस डाली से उस डाली पर उड़-उड़ करके मन बहलाता
....
सूर्योदय से पहले जगकर चें चें करके तुम्हें जगाता
सदा आलसी लोगों को मैं चंचलता का पाठ पढ़ाता।

मंगरूराम मिश्र -- उनका जन्म सन् 1940 में राजीपुर जिला सुल्तानपुर में हुआ था। बम्बई वि.वि. से एम.ए. (हिन्दी) तक शिक्षा प्राप्त की। सन् 1960 से पराग मासिक के संपादकीय विभाग में रहे। तभी से बच्चों के लिए शिशु गीत लिखने लगे थे। उनकी बाल कवितायें पराग, बालक, शेरसखा, नवभारत टाइम्स आदि पत्रों में प्रकाशित होती रहीं हैं और महाराष्ट्र तथा गोवा राज्य सरकार की पाठ्य पुस्तकों में भी संकलित हैं। वह टाइम्स आफ इण्डिया प्रकाशन 'माधुरी' पाक्षिक के संपादकीय

विभाग में काम करते रहे। आकाशवाणी से उनके अनेक बाल रूपक और बाल कवितायें प्रसारित होती रही हैं। बाल रूपकों का एक संकलन 'सच्चा मित्र' प्रकाशित हो चुका है। उनके दो शिशु गीत हैं -

(क) छाता ताने चला रात में मेढक करने सैर
बगुला भगत मिला जब उसको, लगा पूछने खैर
बगुला बोला छाते से यह कैसी प्रीति लगाई
तभी छींककर मेढक बोला-'ओस पड़ रही भाई।'

(ख) चक्खन मियाँ एक दिन घर में लगे पकाने खाना
पहली बार जिन्दगी में था चूल्हा पड़ा जलाना।
खर पतवार इकट्ठी करके फूंक जोर की मारी
निकली लपट लपक कर ऐसी जली मियां की दाढ़ी।

वीर कुमार 'अधीर' -- उनका जन्म सन् 1937 में देवबन्द जिला सहारनपुर में हुआ था। सन् 1970 से दिल्ली में आ बसे। इससे पहले देहरादून में रहते थे। सन् 1947 से उनकी रचनायें पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी थीं। पर बाल साहित्य सन् 1960 से ही लिखना प्रारम्भ किया। पराग, नंदन, नवभारत टाइम्स में उनके बालगीत प्रकाशित हुए हैं। 'ओ सपूत भारती' नामक एक पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है। उसमें उनके तीन बालोपयोगी काव्य रूपक हैं। उनका एक बालगीत है -

बुरा न बोलो, बुरा न देखो, बुरा सुनो मत, पर हां हां
बदला बापू देश तुम्हारा, अब पहले सा वक्त कहाँ
मिले तुम्हारे तीनों बन्दर, रूप बदलकर भेष बदलकर
हर बन्दर के भीतर बन्दर, नकली बाहर असली अन्दर
करते उलटी सीधी हरकत और हिमाकत, पर हां हां
अब पहले सा वक्त कहां
और दूसरा बोला हँसकर, रखकर हथेलियां हाथों पर
बहुत बुरा दुनिया का चक्कर, चलो सभी कुछ देखभाल कर
अपनाने को तो अपना लो बापू का पथ, पर हां हां
अब पहले सा वक्त कहां।

सरोजनी अग्रवाल -- उनका जन्म सन् 1938 में जोधपुर, राजस्थान में हुआ था। आगरा वि.वि. से एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और लखनऊ वि.वि. में शोध कार्यरत रहीं। बच्चों के लिए भी कवितायें लिखी हैं। उनकी बाल कविताओं के संकलन 'गुड़िया

गाये गीत', 'गीतों की बगिया', 'चौके छक्के', 'जन्तर मन्तर', 'हंसते गाते' और एक बाल खंडकाव्य 'इन्दिरा दीदी' प्रकाशित हो चुका है। उनकी एक बाल कविता है –

मुझको कहते झंडू सेठ, छोटा कद है मोटा पेट
नाक पहाड़ी मिर्ची सी, कान खटाई की फाँकें
आंखें गोल मटोल बड़ी, इधर-उधर ताकें झाँकें
टूटा दांत बनाये गेट, मुझको कहते झंडू सेठ।
दो दर्जन केले खाकर, सात किलो पूड़ी खाता
फिर बस सौ रसगुल्ले खा, सुबह कलेवा हो जाता
तुरत सफाचट करता प्लेट, मुझको कहते झंडू सेठ।
भले तखत टूटा भद्दा, मोटा सा मेरा गद्दा
खूब मजे से सोता हूं, ओढ़ खेस सस्ता मद्दा।
दो कुन्तल है मेरा वेट, मुझको कहते झंडू सेठ।

स्नेहलता प्रसाद -- उनका जन्म सन् 1938 में पुरानी सराय भागलपुर में हुआ था। जब वह नवम कक्षा की छात्रा थीं तभी से उन्होंने कविता लिखना प्रारम्भ कर दिया था। उन्होंने एम.ए., बी.एड. तक शिक्षा प्राप्त की और उसके पश्चात बी. एल. किया और 'महादेवी वर्मा की कविता' विषय पर शोध कार्य करके पी-एच. डी. की उपाधि भी प्राप्त की। वह राजकीय महिला औद्योगिक विद्यालय मुन्दी चक, भागलपुर में प्रधानाचार्या रहीं। उनके बालगीत आकाशवाणी से प्रसारित होते रहे हैं और विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छपे हैं। 'बालगीत' नाम से उनका एक संकलन है। उनका एक बालगीत है –

होली आई होली आई, अग जग में खुशियाली छाई।
ढोल मृदंग करताल बजाकर हँस-हँस कर हम होली गायें
रंग अबीर गुलाल उड़ाकर जी भरकर हम फाग मनायें
वासन्ती वैभव से भरकर मह-मह करती हर अमराई
गांव-गांव में घूम-घूमकर बालक रंग डालेंगे सबको
स्नान करेंगे सब रंगों से खुशियों से भर देंगे सबको।
बच्चों की वह टोली देखो भर गुलाल की झोली आई
होली आई, होली आई।

डॉ. राम जी मिश्र -- उनका जन्म सन् 1938 में बलरामपुर, जिला गोंडा उ.प्र. में हुआ था। काशी वि.वि. से एम.ए., पी-एच.डी. तक शिक्षा प्राप्त की और पांच वर्ष तक वहीं ऐतिहासिक व्याकरण विभाग में शोध सहायक रहे। दिल्ली वि.वि. के जाकिर हुसैन कालिज में भी अध्यापक रहे। उनकी अनेक बालोपयोगी कवितायें पराग, नंदन, चंपक आदि में प्रकाशित हो चुकी हैं। वह बच्चों के लिए लिखना अपने लेखक को नीचे गिराना समझते थे। उनकी एक बाल कविता है -

लोग मुझे कहते हैं गुड़िया। होती कभी नहीं मैं बुढ़िया।
मेरे गाल नहीं पिचकेंगे। ना ही मेरे बाल पकेंगे।
चश्मा नहीं लगाऊँगी मैं। आंसू नहीं बहाऊँगी मैं।
मुझे न चिन्ता दुनिया भर की। रोटी कपड़ा की या घर की।
बड़ी-बड़ी चीजें न चाहूं। इसीलिए हरदम मुस्काऊँ।

आनन्दम् -- उनका पूरा नाम सुतीक्ष्ण कुमार है। कविता के क्षेत्र में आनन्दम् उपनाम से ही प्रसिद्ध हैं। उनका जन्म सन् 1929में जम्मू कशमीर, में हुआ था। अहिन्दी भाषी क्षेत्र में भी उन्होंने हिन्दी बालगीत लिखे हैं। 'हम हैं बालक भारती' नाम से उनके बालगीतों का एक संकलन प्रकाशित हुआ है। उनका एक बालगीत है -

फर फर फर फर चल रहा पवन
थर थर थर थर कंप रहा बदन।
झरनों में नई जवानी है। कल कल कल बहता पानी है
गोभी ने ली है अंगड़ाई। मूली गाजर भी मुस्काई।
खुशियों से है भर रहा चमन
फर फर फर फर चल रहा पवन।

ठाकुर जमनाप्रसाद 'जलेश' -- उनका जन्म सन् 1932 में हुआ था। दमोह, मध्य प्रदेश में अध्यापक रहे। सन् 1960 से लेखन प्रारम्भ किया। उनकी अनेक बालोपयोगी कवितायें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। मध्य प्रदेश के पाठ्य पुस्तक निगम में में लेखन कार्य भी कर चुके हैं। उनके एक बालगीत की कुछ पंक्तियां हैं -

ना जानूं मैं मन्दिर मस्जिद ना जानूं गुरुद्वारा,
तेरी चरण धूल पर माता मैंने जीवन वारा।
स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर

जो भी आये काम,
ऐसे वीर सपूतों को है
बारम्बार प्रणाम।
मां तेरा राई सा दुख भी पर्वत सदृश हमारा,
तेरी चरण धूल पर माता मैंने जीवन वारा।

हरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय -- अंग्रेजी के सुप्रसिद्ध कवि हरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय ने हिन्दी में भी बच्चों के लिए कवितायें लिखीं। उनका जन्म सन् 1898 में हुआ था। उनका बचपन हैदराबाद में व्यतीत हुआ जहां उनके पिता निजाम की सेवा में थे। उनकी बाद की शिक्षा इंगलैंड, जर्मनी, अमरीका में हुई। रूस में रहकर उन्होंने नाट्य कला की शिक्षा प्राप्त की। राष्ट्रीय नेता भारत कोकिला सरोजनी नायडू उनकी बहिन थीं। वह लोकसभा के सदस्य भी रहे। और उन्हें पद्मश्री और पदमभूषण की उपाधियां भी मिल चुकी हैं। बच्चों के लिए उन्होंने नानसेंस राइम्स की दो पुस्तकों के अतिरिक्त आठ अन्य बालगीतों की पुस्तकें अंग्रेजी में लिखी हैं। अपनी उन्हीं सब बाल कविताओं को वह हिन्दी में भी लिख चुके हैं पर उनमें से प्रकाशित कुछ थोड़ी ही हुई हैं। उनका निधन सन् 1990 में हुआ। उनकी एक बाल कविता है -

ताती ताती तोता। पींजरे में सोता
पंख जो हरे थे। उड़न से भरे थे
पड़ गये हैं पीले। हो गये हैं ढीले
ताती ताती तोता। पींजरे में सोता।
ताती ताती तोता। पींजरे में रोता।
झाँकते हैं तारे। नन्हें नन्हें प्यारे
उड़ते-उड़ते सारी रात। आ मिल जा हम सबके साथ
छोटा भाई तोता प्यारा। तू भी बन जा एक सितारा।

प्रीतिशरंजन गुप्त -- राँची (बिहार) में रहकर उन्होंने बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और वहीं के सुप्रसिद्ध होटल संगम के व्यवस्थापक हो गये थे। अपने व्यवसाय के सम्बन्ध में ही कटक (उड़ीसा) में रहे। विद्यार्थी जीवन काल से ही उनकी रुचि बच्चों के लिये कवितायें लिखने में हो गई थी। उनकी कवितायें बालसखा आदि पत्रों में छपती थीं। उनकी एक बाल कविता है -

सुबह सुबह के खिले फूल-से मां के लाल दुलारे हैं

दुनिया है ये आसमान तो हम सब चांद सितारे हैं।
खेलकूद में रहें मगन हम प्यार सभी का पाते हैं
देख किसी को भी खुश होते पल भर में खिल जाते हैं।
जिसकी चाह करें पा जायें है इतना अधिकार हमें
कलियों सा सुकुमार मानकर दुलराता संसार हमें
डाह न जाने द्वेष न जाने निर्मल प्राण हमारे हैं।

विजयकृष्ण तैलंग -- उनका जन्म सन् 1944 में टीकमगढ़ में हुआ था। एम.ए. (हिन्दी), बी.एड. तक शिक्षा प्राप्त की और शासकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय में शिक्षक हो गये। 30 वर्ष की आयु में ही उनका असामयिक स्वर्गवास हो गया। अच्छी उभरती प्रतिभा थे। उनकी बाल कवितायें बालसखा, पराग आदि में प्रकाशित हुआ करती थीं। उनका एक बालगीत है -

एक फूल से महके बगिया एक फूल से डाल
हमारा देश हजारों फूलों वाला है, हजारों फूलों वाला है।
जले घृणा के रेगिस्तानों में बरसेगा पानी
दुनिया को शीतल कर देंगी बूंदें हिन्दुस्तानी।
एक गीत गूंजे दुनिया एक राग से प्यार
हमारा देश गीत की गलियों वाला है, प्रात की भूलों वाला है।
पतझर के सूखे हाथों को देंगे वे हरियाली
कांटों के सिर पर रख देंगे टोपी फूलों वाली।
एक खुशी से कटे उदासी एक हंसी से आह
हमारा देश खुशी की अलियों वाला है, हंसी के झूलों वाला है।

आचार्य अज्ञात -- सचमुच अज्ञात ही हैं। सन् 1965-66 में वह मेरे (सेवकजी के) निकट संपर्क में आये थे। वह गौतम ब्रादर्स लखनऊ के यहां काम करते थे और एक बाल विश्व कोष निकालने की योजना लिए थे। मेरठ के निवासी थे। उसके बाद ही नन्हीं दुनिया चोहड़पुर देहरादून में अध्यापक हो गये थे। बहुत छोटी आयु वर्ग के बच्चों के लिए उन्होंने अच्छे शिशु गीत लिखे थे। उनके शिशु गीतों की एक पुस्तक 'नन्हें मुन्ने गीत' नाम से प्रकाशित हो चुकी है। उनके दो शिशु गीत हैं -

(अ) ईची मींची, आंखें भींची, आया लटकू, बैठा मटकू
खट खट खटका, फूटा मटका, खींखीं बिल्ली, टिल्ली लिल्ली।

(ब) उड़े झील से बगुले राजा, मछली लगी बजाने बाजा
पेट पीटकर मेढक भैया, लगे नाचने ता ता थैया।

सरोजनी प्रीतम -- हिन्दी की सुपरिचित क्षणिकायें और सीपिकायें लिखने वाली हैं। उनका जन्म पश्चिमी पाकिस्तान में हुआ था। एम.ए., बी.टी., पी-एच.डी. तक शिक्षा प्राप्त की। दिल्ली में अध्यापन कार्य किया। उनके शिशु गीतों के संकलन 'सुबोध बालगीत' तथा 'पंखों वाला फूल' नाम से प्रकाशित हुए हैं। और एक पद्य कथाओं की पुस्तक 'सैनिक की बेटी' नाम से भी उन्होंने लिखी है। उनका एक शिशु गीत है -

गुड़िया का है ब्याह रचाना
गुड्डा एक मिला है काना
नखरे उसके कई हजार
कहता-'मैं तो लूँगा कार'।

इन्दिरा परमार -- वह श्री नारायण लाल परमार की धर्मपत्नी हैं। उनका जन्म सन् 1942 में बाग बाहरा, जिला रायपुर, म.प्र. में हुआ था। बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और राजकीय बालिका हायर सेकेंडी स्कूल में अध्यापिका रहीं। कविता लिखने में बचपन से ही रुचि थी। सन् 1960 में बच्चों के लिए सोद्देश्य कविता लिखने की प्रेरणा पति से मिली। उनके बालगीत बच्चों की सभी प्रमुख पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं। उनका एक बाल कविता संकलन 'निंदिया लागी' है। उनका एक बालगीत है -

ज्यादा खेलो सोओ कम, इम्तहान हो गये खतम
कल तक जो थे डांट रहे, आज सभी पड़ गये नरम।
नीकू चीकू मिलकर के, सजा रहे अपना अलबम
देखभाल करती मुनिया, अपनी गुड़िया की हरदम।
कुछ न मिला तो मुन्नू जी, ढोल बजाते ढम ढम ढम
छुट्टी के दिन जिन्दाबाद, तेरे दीवाने हैं हम।

हुआ था। बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। बाराबंकी में पत्रकार हैं। सन् 1954 से लिखना प्रारम्भ किया था। बच्चों के लिए भी कवितायें लिखते हैं। उनकी बालोपयोगी कविताओं के संकलन 'शिशु गान', 'फुलवारी' और 'सब कुछ' प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी एक बाल कविता है -

मेरा टामी वीर सिपाही घर का पहरेदार है
बड़ा भयंकर काला-काला लगता बिल्कुल काल-सा
भों भों भों भों करने लगता आ जाता भूचाल सा।
शेर बबर बनता जब इस पर होता क्रोध सवार है
स्वामिभक्ति है इसमें भारी इससे मेरा दास है।
सीटी सुनकर दौड़ा आता फौरन मेरे पास है
सभी इशारे तुरत समझता यह इतना हुशियार है।

अशोकरंजन सक्सेना -- उनका जन्म सन् 1947 में हमीरपुर में हुआ था। उन्होंने एम.एस-सी., डी.फिल. तक उच्च शिक्षा प्राप्त की। लंदन से ए.आर. आई.सी. किया और वाशिंगटन में ए.सी.एस. फेलो भी रहे। वह प्रयाग विश्व विद्यालय के सी.एम.पी. कालिज में रसायन विभाग में प्रवक्ता रहे। उनकी बाल कवितायें पराग, नंदन, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, धर्मयुग आदि पत्रों में छपती रही है। 'छोटे-छोटे गीत' नाम से एक संकलन भी प्रकाशित हो चुका है। उनका एक बालगीत है -

ओ मेरी मैया? क्या करूं दैया? भाप निकलती, मुंह से दैया
घर के अन्दर कांपूं थर थर, कोहरा कितना लगता है डर
फूहे जैसी ओस जम रही, ठंडक ने मुझे पछाड़ा है।
ओ मेरी मैया, क्या करूं भैया, किट किट किट किट होती दैया
पी लो पिंकी चाय गरम है, स्वेटर भी हो गया नरम है
लाल गुलाबी लगते देखो, लगता कितना जाड़ा है।

बालकृष्ण गर्ग -- उनका जन्म सन् 1943 में हाथरस में हुआ था। साहित्यरत्न तक शिक्षा प्राप्त की। साहित्य और संगीत में बचपन से ही रुचि रही है। सन् 1963 से हाथरस की सुप्रसिद्ध पत्रिका 'संगीत' मासिक का संपादन कर रहे हैं और संगीत कार्यालय संस्थान के भागीदार भी हैं। उनकी पहली बाल कविता 11 वर्ष की आयु में 'शिशु' में प्रकाशित हुई थी। इसके अतिरिक्त उनकी कवितायें 'नंदन', 'पराग', 'चंपक', 'बाल भारती' आदि में भी प्रकाशित होती रही हैं और आकाशवाणी से

प्रसारित भी। संगीत मासिक का एक बालगीत विशेषांक प्रकाशित कर उन्होंने बालगीतों को एक नई दिशा प्रदान की है। वह फिल्म ट्रस्ट आफ इंडिया के सदस्य भी रहें। उनका एक बालगीत है –

तड़ तड़ बजता ताशा, मीठा लगे बताशा
मार करारा झापड़, हमने तोड़ा पापड़
फड़ फड़ उड़े दुपट्टा, मारे चील झपट्टा
छत पर बोले कौआ, उड़े गगन कनकौआ
भिन्नाता है मच्छर, बोझा ढोता खच्चर
सट सट लगता कोड़ा, सरपट भागे घोड़ा
बैठ कार में कुत्ता, पहुंच गया कलकत्ता
मेरी प्यारी बिल्ली, देख चुकी है दिल्ली
मार तुकों में मुक्का, बन जायेगा तुक्का।

यादराम 'रसेन्द्र' -- उनका जन्म सन् 1946 में भुनगड़ा अहीर, अलवर में हुआ था। भारतीय खाद्य निगम ग्वालियर में राजकीय सेवारत प्रशासनिक सहायक रहे। बच्चों के लिये बहुत वर्षो से कवितायें लिखते रहे हैं जो 'पराग', 'बाल भारती', 'बालक', 'मिलिन्द', 'धर्मयुग' आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। उनकी एक बाल कविता है –

कविता करने बैठा टिल्लू
कागज कलम संभाल
बस इतना ही लिख पाया था –
हम भारत के लाल
इतने में आ चढ़ा गोद में
उसका कुत्ता काला
लुढ़क गई दावात हो गया
सब गड़बड़ घोटाला।

आजाद रामपुरी -- उनका मूल नाम शिवदयाल शर्मा है। जन्म सन् 1945 में ग्राम रामपुर कला, परगना सबलगढ़ जि. मुरैना (म.प्र.) में हुआ था। एम.ए., एल.एल. बी. शिक्षा प्राप्त की और महा लेखाकार ग्वालियर के कार्यालय में लेखा परीक्षक के

के लिए बहुत सी कवितायें उन्होंने लिखी हैं। उनका एक संकलन 'हम हैं रत्न महकते' प्रकाशित हो चुका है। उनकी एक बाल कविता है -

लंगड़ा तोतापरी कठौआ खुशियों भरे दशहरी आम
रस गुब्बारे गाल फुलाये सजधज खड़े सुनहरी आम।
टूटी कमर पीठ भी पिचकी लू के पिटे तिकोने लम्बे
भरी टोकरी हुए शोख सब देहाती कुछ शहरी आम।
कुछ खट्टे कच्चे निब्बू से कुछ मीठे चमचम से बढ़कर
कुछ हैं सुर्ख लाल रंग, पीले जैसे जेठ दुपहरी आम।
मस्ती भरा नशीला रंग ढंग देख सभी का मन ललचाते
कुतुर कुतुर जब जी भर खाती चखकर स्वाद गिलहरी आम।

डॉ. शंभुदयाल चतुर्वेदी -- वह श्री देवी दयाल चतुर्वेदी 'मस्त' के सुपुत्र हैं। उनका जन्म सन् 1947 में इलाहाबाद में हुआ था। एम.ए. पी-एच.डी. तक शिक्षा प्राप्त की और जबलपुर में अध्यापन कार्यरत रहे। बचपन से ही बच्चों के लिये कवितायें लिखते थे जो 'बाल सखा', 'बाल भारती', 'पराग', 'धर्मयुग', 'सा. हिन्दुस्तान' आदि में प्रकाशित होती रही हैं। उनका एक बाल गीत है -

ऊंट गिलहरी चूहा हाथी। जंगल में रहते थे साथी
उड़ी एक दिन यह अफवाह। हाथी का हो रहा विवाह
हाथी यह सुनकर घबराया। दौड़ा दौड़ा दिल्ली आया।
भीड़ भाड़ में वह घबराया। सड़कों पर वह दौड़ न पाया
तभी पुलिस ने उसको घेरा। चिड़ियाघर में दिया बसेरा
रही न उसकी वह आजादी देख उसे दुनिया मुस्का दी।

उद्भ्रांँत -- उनका पूरा नाम रमाकांत शर्मा है। उनका जन्म सन् 1948 में नवलगढ़ राजस्थान में हुआ था। कानपुर में रहकर एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और अब दिल्ली में रहते हैं। उनकी चन्द्रमा पर लिखी बाल कविताओं की एक पुस्तक 'चन्दा मामा', प्रकाशित हुयी थी। उनकी एक बाल कविता है -

तुम सचमुच ही कितने अच्छे। करते प्यार तुम्हें सब बच्चे।।
गोल मटोल तुम्हारा चेहरा। लगा नहीं है सिर पर सेहरा।।
फिर भी चम चम करते हो तुम। बच्चों का मन हरते हो तुम।

जगदीश सरीन -- उनका जन्म सन् 1943 में लाहौर में हुआ था। एम.ए. (हिन्दी, अंग्रेजी) तक शिक्षा प्राप्त की। बाल गीतकार होने के साथ साथ व्यंग चित्रकार भी थे। आयुक्त भू-अभिलेख कार्यालय ग्वालियर में मान चित्रकार थे। उनके बालगीत अनेक प्रमुख बाल पत्रिकाओं में प्रकाशित होते थे। कैंसर रोग से उनका स्वर्गवास वर्ष 1982 में हो गया। उनकी एक बाल कविता है -

कल पर कोई काम न टालो
जो करना है झट कर डालो।
सच कहने में नहीं डरो
सोच समझ कर काम करो।

विश्व बंधु -- उनका पुरा नाम हेमन्त प्रसाद दीक्षित है। उनका जन्म सन् 1947 में हुआ था। जबलपुर विश्वविद्यालय से बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और कानपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी और राजनीति विषयों में एम.ए. किया। केन्द्रीय विद्यालय आई. आई.टी. कानपुर में ही अध्यापक हैं। सन 1961 से लेखन प्रारम्भ किया। उनकी बच्चों के लिये लिखी आधुनिक भाव-बोध की कवितायें 'पराग', 'धर्मयुग', 'मेला', 'बाल भारती', 'बालक', 'बालसखा' आदि में प्रकाशित होता रही हैं। 'बंगाल का जादू' तथा 'गांवों के गीत' पुस्तकें भी प्रकाशित हो चुकी हैं। कानपुर से प्रकाशित बाल साहित्य समीक्षा के सहयोगी सम्पादक भी रहे हैं। उनकी एक कविता है -

घोर घोर के सत्तू को। खाओ हो मन मत्तू को
मन मोदक बन जाइये। ठोकर एक लगाइये
सत्त बरसे झर झर के। खाओ बुढ़िया भर भर के

वीरेन्द्र कुमार जैन -- उनका जन्म सन 1949 में हुआ था। अर्थशास्त्र में एम. ए. तक शिक्षा प्राप्त की। व्यंग लेखन, चुटकुला लेखन आदि में रुचि रही है। बाद में बाल साहित्य सृजन की ओर उन्मुख हुए। उनका एक बालगीत है -

आ गये दिन इम्तहानों के
पुस्तकों के ढेर देखो हो गये दूने
खेल के मैदान सारे हो गये सूने।
घट गये जमघट तिराहे की दुकानों के।
घोल धप्पा बन्द कर शैतानियां छोड़े

फिर रहा है बचपना गंभीरता ओढ़े।
बन्द चर्चे हुये फिल्मी दास्तानों के।
सुबह से पहले ही घड़ियां घनघनाती हैं
आज कल मम्मी स्वयं बाजार जाती हैं।
मिल गई छुट्टी घरेलू सभी कामों से।

सुरेश विमल -- उनका जन्म 04.09.1950 को हुआ। राजस्थान में टोंड़ा भीम नामक स्थान के निवासी हैं और राजस्थान वि.वि. के स्नातक हैं। विदेश मन्त्रालय नई दिल्ली में सेवारत रहे। लंबे अरसे से बच्चों के लिये बाल कवितायें लिख रहे हैं जो 'नंदन', 'पराग', 'चम्पक' आदि में प्रकाशित होती रही हैं। 'कानाबाती' तथा 'कहाँ बनाये घर गौरेया' प्रकाशित काव्य संकलन हैं। उनकी एक बाल कविता है-

कैसी मोहक कैसी प्यारी, मेरी बगिया सबसे न्यारी
रंग रंग के फूलों वाली, गंधों की अनमोल पिटारी।
हर पल मुस्काती रहती है, रूपनगर की राजकुमारी।
हवा बुहारे इसका आंगन, भौंरा इसको गीत सुनाये
नाचें तितली परियों जैसी, धूप बदन इसका सहलाये।
माली दादा बड़े जतन से, पालें इसकी क्यारी क्यारी।

जहूर कुरेशी -- उनका जन्म सन् 1952 में चन्देरी जि. गुना म प्र. में हुआ था। इन्टरमीडियट तक शिक्षा प्राप्त की। भारतीय डाक तार विभाग में कार्यरत रहे। कविता लिखने में बचपन से रुचि रही है। उनकी बच्चों के लिये लिखी कवितायें 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'पराग', 'चम्पक', 'मेला', 'बाल भारती', 'डाक तार' आदि पत्रों-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। 'उगते सूरज तुम्हें सलाम' नाम से एक बाल कविता संग्रह भी प्रकाशित हो चुका है। उनकी एक कविता है -

बड़ी बड़ी बातें करते हैं नेता जी बन्दर
सड़कें बनवा दूंगा वन में दस दिन के अंदर।
जंगल के कोने कोने तक बिजली पहुंचेगी
अंधियारे की भुतहिन को रोशनी दबोचेगी।
पशु पक्षी दोनों के अपने अपने घर होंगे
वन में भी दिल्ली बाम्बे की तरह शहर होंगे
नहीं शेर की तानाशाही अब चल पायेगी
अब तो वह सब होगा जो कुछ जनता चाहेगी

भाई बहिनों हाथ मेरे मजबूत कीजिएगा
अपना वोट सिर्फ भीखू बन्दर को दीजिएगा।

नवीन रश्मि -- उनका जन्म सन् 1950 में हरदोई में हुआ था। उन्होंने लखनऊ वि.वि. से बी.ए. तथा कानपुर वि.वि. से समाज शास्त्र में एम.ए. किया। बच्चों के लिये उनकी बाल कविताओं के दो संकलन 'त्यौहारों के गीत', तथा 'बाल गीतावली' प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'हिन्दी के श्रेष्ठ बालगीत' नाम से एक बाल कविता संकलन तैयार किया था जो सन् 1979 में उनकी आकस्मिक मृत्यु हो जाने के कारण बाद में बहुत सुन्दर रूप में प्रकाशित हुआ। उनका एक बाल गीत है -

आई है सुन्दर दीवाली
बच्चे करते धूम धड़ाके, लगा रहे हैं खूब पड़ाके
रंग बिरंगी फुलझड़ियों की बिखर रही है छटा निराली
खुश हैं आज सभी हलवाई बेच रहे हैं खूब मिठाई
लाई खील बताशे खाकर बाल मंडली है मतवाली
मिट जाये अज्ञान अंधेरा जगे ज्ञान का सुखद सवेरा
लक्ष्मी जी की पूजा लाये सारे भारत में खुशहाली।

हरिश्चन्द्र -- उनका जन्म सन् 1951 में बिहार में हुआ था। बिहार विश्वविद्यालय की प्रवेशिका परीक्षा प्राप्त की। उसके बाद गवर्नमेन्ट स्कूल आफ आर्ट एण्ड ललित कला में अध्ययनरत रहे। विद्यार्थी जीवन से ही साहित्य में रुचि थी और सन् 1967 से ही कविता लिखने लगे थे। सन् 1971 में जीवकोपार्जन के लिए बम्बई चले गये और वहां चित्रशाला नामक कला संस्था के संस्थापक संचालक हुए। उनकी बच्चों के लिये लिखी कवितायें 'राजा भैया', 'पराग', 'मेला', धर्मयुग आदि में प्रकाशित होती रही हैं। उनका एक संकलन भी 'शिशु गीत' नाम से प्रकाशित हो चुका है। उनकी एक बाल कविता है -

'चिनी कटोरा टन टन बोले, धिया पुता के मनवां डोले।'
माधो चिनी कटोरा लाया, लेकर हाथी घोड़ा आया।
आओ बच्चो खाओ बच्चो, आज बहुत ही थोड़ा आया।
सब चीनी का खेल खिलौना, लम्बी रानी, राजा बौना।
एक बार जो चखे मिठाई, कभी न भूले डेढ़ा पौना।

छड़ी मिठाई पैसे पैसे, पैसे में दो ले लो गोले।
'चिनी कटोरा टन टन बोले, धिया पुता के मनवां डोले।'

रूप सिंह चंदेल -- उनका जन्म सन् 1951 में ग्राम नौगवाँ (गौतम) जिला कानपुर में हुआ था। व्यक्तिगत प्रत्याशी के रूप में 1976 में कानपुर वि.वि. से हिन्दी में एम.ए. पास किया और उसी वि.वि. से शोध कार्यरत रहे। केन्द्रीय सरकार की सेवा में दिल्ली में कार्यरत रहे। उनके बालगीतों का प्रकाशन साप्ताहिक हिन्दुस्तान आदि में होता रहा है और कुछ बालगीत दिल्ली तथा लखनऊ दूरदर्शन से प्रसारित भी हुए हैं। उनके बालगीतों का एक संकलन 'गीत गाओ गुनगुनाओ' नाम से प्रकाशित हो चुका है। उनका एक बालगीत है -

कबूतर बोला गुटरूं गूं, चुन मुन बोली चूँ चूँ चूं
हुआ सवेरा बच्चो जागो, मुर्गा बोला कुकडूं कूं।
कऊआ कहता कांव कांव, पूछ रहा है नाम गाँव
कुहू कुहू कह कोयल कहती, आओ तुम बागों की टांव।
गौरैया बैठी मुंडेर पर, कहती जल्दी आँखें खोलो
कोयल काकी बुला रही हैं, उठो और हाथ मुंह धोलो।

श्याम कुमार दास -- उनका जन्म सन् 1953 में कलकत्ता में हुआ था। उन्होंने एम.ए., बी. लिब् तक शिक्षा प्राप्त की। वह पहले मथुरा में वेटनरी कालिज में थे। फिर उ.प्र. के सूचनाधिकारी नियुक्त होकर फर्रुखाबाद चले गये। मथुरा से वह 'बाल पताका' नाम से बच्चों की एक पत्रिका निकाला करते थे। बच्चों के लिए बहुत-सी कहानियाँ, कवितायें और मुकरियाँ लिखी हैं जो विभिन्न बाल पत्रिकाओं में छपती रहीं। उनका निधन हो गया है। उनकी कुछ मुकरियाँ हैं -

इधर लगा दो उधर लगा दो, चाहो जहां मुझे पहुंचा दो।
कान ऐंठ दो चीखे फौरन, कह भाई रेडियो, न भई हारन।
कत्थई कत्थई रंग है उसका, गोल गोल है कुछ कुछ चपटा।
बच्चे देर से उसे निहारें, कह भाई चपटा न भाई पेड़े।

पूरन सूरमा -- उनका जन्म सन् 1954 में हुआ था। उनकी रचनायें अनेकानेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहीं। कुछ कवितायें आकाशवाणी से भी प्रसारित हुई। बच्चों के लिए भी उन्होंने लिखा है। पाँच बाल पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

उनकी कुछ रचनायें मलयालम तथा गुजराती में अनुवादित भी हुई हैं। उनका एक बालगीत है –

हम फूलों की मुस्कान, गाने की मीठी तान।
हम सच्चे वीर सिपाही, हम हैं कांटों के राही
हम मुश्किल में मुस्काते, हम कभी नहीं घबराते
जब जो भी मन में ठानी, फिर दे दी है कुर्बानी
हम भारत राष्ट्र विधाता, हम नवल राष्ट्र निर्माता
हम प्रेम पौध पनपाते, खुशियों के पेड़ लगाते
हम हैं सूरज के साथी, आशा की जलती बाती
हम इस उपवन के माली, महकाते डाली डाली।

विंध्य वासिनी दत्त त्रिपाठी -- उनका जन्म सन् 1956 में शाहपुर पट्टी, भोजपुर बिहार में हुआ था। बचपन से ही साहित्य में रुचि हो गई थी। हिन्दू विश्वविद्यालय से संस्कृत में स्नातकोत्तर शिक्षा एवं हिन्दी साहित्य सम्मेलन की विशारद परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद हाई स्कूल में अध्यापक हो गये थे। बड़ों के लिए कवितायें लिखने के साथ ही बच्चों के लिए भी कवितायें लिखते हैं जो आज, प्रताप, बालक आदि पत्रों में प्रकाशित होती रही हैं। 'बाल गान' नाम से उनकी बाल कविताओं की एक पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है। 'आओ मेरे पास' नाम से एक दूसरी पुस्तक है। उनकी एक बाल कविता है –

आसमान में सूरज आता
सूरज आता, सूरज आता।
अपने साथ सवेरा लाता।
सबको अब रोशनी मिलेगी
सबके मन की कली खिलेगी।
आसमान में सूरज आता
दूर अन्धेरा है हो जाता।
देख उसे तारे छिप जाते
लड़के जग कर गाना गाते।
सूरज सबके मन को भाता
सबको करना काम सिखाता।

विजय अग्रवाल रजनीश -- उनका जन्म सन् 1955 में फारबिसगंज बिहार में हुआ था। इन्टर तक शिक्षा प्राप्त की। बच्चों के लिये भी बालगीत लिखे हैं। जो 'चमाचम' 'चंपक', 'वानर', आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित हुये हैं। उनकी बच्चों के लिए लिखी कविताओं का एक संकलन 'मां तेरी सौगंध' नाम से प्रकाशित हो चुका है। उनकी एक बाल कविता है -

लमड़ी दमड़ी

लमड़ी राम, दमड़ी राम। मिलते रोज सवेरे शाम
लमड़ी था कानों का कच्चा। अकल का दुश्मन बुद्धू पक्का
आँखें छोटी गोलम गोल। दिखने में था गोल मटोल
दमड़ी लंबा जैसे ताड़। कहता खुद को जान पहाड़
टकराना है खेल नहीं। मुझसे भिड़ जाना न कहीं।

प्रमोद जोशी -- उनका जन्म सन् 1959 में सहारनपुर में हुआ था। बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं। बच्चों के लिये कवितायें लिखने में विशेष रुचि है। उनके बालगीत विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं। उनका एक बालगीत है-

गाड़ी छुक छुक करती क्यों? कोयले से मुंह भरती क्यों?
कहे कबूतर गुटरू गूं? कुत्ते की दुम टेढ़ी क्यों?
तारे चम चम चमके क्यों? सूरज नभ में दमके क्यों?
धमकाते हैं चाचा क्यों? मारें तेज तमाचा क्यों?
मम्मी मुझको मारे क्यो? रोने पर पुचकारे क्यों?
बाबा पान चबाते क्यों? मुंह से खून गिराते क्यों?
भइया दिन भर लिखता क्यों? शीशे में मुँह दिखता क्यों?

राकेश अचल -- उनका जन्म सन् 1959 में हुआ था। नई पीढ़ी के प्रमुख गजलकार कहे जाते हैं। उनकी गजलें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती हैं। बच्चों के लिये भी बहुत-सी कवितायें लिखी हैं। उनके दो नन्हें गीत हैं -

(1)

मीठे मीठे मिट्ठू लाल
चलते उल्टी सीधी चाल।
खाते दूध मलाई आम
कभी न करते कोई काम।

भोलू राम भुलक्कड़ से
लगते पूरे झक्कड़ से।
इन्हें नहीं गिनती आती
रोज पिटाई लग जाती।

ऊपर जिन कवियों के परिचय दिए गये हैं इनके अतिरिक्त और भी अनेक कवि हैं जिन्होंने इस काल में बालगीत की साहित्य की श्रीवृद्धि में योगदान दिया है। उनमें से रति भानु सिंह नाहर की 'दुंदुभी', रामशंकर मिश्र की 'खेल नाच और गाने', रामेश्वर प्रसाद मालवीय की 'धूल भरे हीरे', अवध भूषण मिश्र की 'विज्ञान गीत', नरेन्द्र चतुर्वेदी की 'निर्माण बेला', आर.बी. अवधेश की 'शिशु गान' तथा 'वर्ण गीत', ललित गोस्वामी की 'मामा जी दिल्ली गये', वीरेन्द्र मृदु की 'शैशव', लक्ष्मी नारायण की 'जय-जय भारत देश' कमला रत्नम की 'अक्षर गीत', मोहनलाल गुप्त की 'देश हमारा', मोहन लहरी की 'फूलों का झोला', आशाराम वर्मा की 'पहली रोटी', शीला गुजराल की 'बालगीत', करणीदान बारहठ की 'झिड़ियों', प्रशांत की 'नटखट पिंकू', देवराज दिनेश की 'भारत मां की लोरी', डा. महेंन्द्र भटनागर की 'हंस-हंस गाने गाएं हम', कृष्ण कुमार सिंह 'नूतन' की 'पंखड़ियां', चंद्रभूषण श्रीवास्तव 'विदग्ध' की 'जय जवान जय किसान', राम कृष्ण वर्मा की 'चूहे राजा', हरीशंकर शर्मा 'हरीश' की 'नौनिहालों के गीत', देवेन्द्र दीपक की 'सूरज बनती किरण', जगदीश तोमर की 'इमला पहेली (चार भाग)', मोहन प्रभाकर की 'एक था बालक' रामचंद्र तिवारी की 'अपना देश' व 'आओ करें सवारी', वेदव्यास की 'हंसते गाते बढ़े चलो', कमलेश बाजपेयी की 'हम भी बने महान', भवानी भीरु त्रिपाठी की 'पानी का पैसा', सत्यभान की 'बाजे-बाजे बांसुरी', कुसुमावती देशपांडे की 'वर्षा की बूँद', देवकी नन्दन जैमिनी की 'हम नन्हें मुन्ने सरदार', गया प्रसाद सुल्लेरे की 'गढ़ा मंडल की रानी', रुद्रनाथ पांडेय की 'यह है उत्तर प्रदेश', विकास बाजपेयी की 'इस देश की मिट्टी : इस देश के लोग', विद्या गुप्ता की 'बिल्ले भैया', दिवाकर की 'त्योहारों की झांकी', 'मेरा जन्म दिवस', 'बापू की कहानी उन्हीं की जबानी', शिवनाथ राघव की 'धरती के गीत', हूँदराज लीलाराम दुखायल की 'धरती के गीत', आचार्य भद्रसेन वैद्य की 'सत्यमेव जयते', अशोक की 'धूल के फूल', मधुकर की 'बच्चों की फुलवारी', उदय खन्ना की 'सम्पूर्ण रामायण', बौड़म लखनवी की 'बौड़म बसन्त', रामऋषि शुक्ल की 'शत-शत वन्दन', हरिश्चरण सिंह परवाना की 'कदम मिला के चल', सुकान्त की

'बालोद्यान', श्याम दत्त पराग की 'मधुर-मधुर बालगीत' दो भाग, गीता सक्सेना की 'साग-सब्जियाँ गायें गीत', राजशर्मा की 'भारत देश महान', सुरेश कुमार 'सुमन' की 'फुलवारी', परमानन्द शुक्ल की 'जियो देश के लिए', उर्मिला वर्मा की 'पढ़ो हँसो और गाओ', राधे श्याम झिंगर की 'मटरू सेठ', वंशीधर विद्यालंकार की 'बालपद', त्रिभुवन चतुर्वेदी की 'सरस बालगीत', राजेन्द्र मेहरोत्रा की 'रिमझिम-रिमझिम बरसा पानी', सत्यवती श्रीवास्तव की 'सोने की गुड़िया', रामप्रिय 'लाल धुआं' की 'बजते गीत' भाग 1, 2, 3, भानुशंकर मेहता की 'अच्छा मुन्ना गन्दा मुन्ना', राजराजेश्वरी त्रिवेदी की 'गुनगुनाते भौंरे नाचती कलियाँ', संतोष बाला प्रेमी की 'हम फूल भी है अंगार भी', शांति उपाध्याय की 'रंग बिरंगे फूल', रमाकान्त पांडेय की 'हँसो-हँसाओ', राजनारायण की 'एक ही जादू', जगदीश पंकज की 'आओ बच्चो खेलें खेल', तेज बाला गोयल की 'राष्ट्र गीत', मिसेज पी.वी. मेहरोत्रा की 'मेरे शिशु गीत', जसपाल की 'लहरों की चांदनी तारों के फूल', कु. अपर्णा गुप्ता की 'फूलों के गीत', तथा मगन अवस्थी की 'राष्ट्र के गौरव', सुमित्रा पांडेय की 'स्वतन्त्रता की अमर कहानी' आदि बाल कविता पुस्तकें उल्लेखनीय हैं।

अब तक के लिखे गये बालगीतों में से अपने-अपने दृष्टिकोण से चुने गये बालगीतों के कई संग्रह भी इस काल में प्रकाश में आये। उनमें से 'प्रतिनिधि बाल सामूहिक गान' तथा 'शिशु गीत' सम्पा. योगेन्द्र कुमार लल्ला, 'गीतों के झूले' सम्पा. वीरेन्द्र मिश्र, 'हँसी के बालगीत', 'वीणा के गीत', 'देश प्रेम के गीत' सम्पा. राष्ट्र बंधु, 'बच्चों की सौ कवितायें' सम्पा. हरिकृष्ण देवसरे, 'हिन्दी के श्रेष्ठ बालगीत' सम्पा. नवीन रश्मि, 'बालगीत' दो भाग, सम्पा. शंकर सुल्तानपुरी, 'हिन्दी के नये शिशु गीत', 'महकते फूल' सम्पा. चन्द्रपाल सिंह यादव मयंक, 'गीत हमारे कंठ तुम्हारे' तथा 'गाओ गुनगुनाओ' सम्पा. संत कुमार टंडन, 'मेरा देश है यह', 'दूँगी तुझे बताशा' सम्पा. मनोहर वर्मा, 'शिशु विनय माला' सम्पा. आदित्य प्रसाद सिंह, 'पहेलियाँ' सम्पा. सूर्य नारायण सक्सेना, 'बाल सरिता' सम्पा. सत्या झा, 'बालगीत' सम्पादक क्षेत्रपाल, 'तुम्हारे गीत' सम्पादक उमाकांत मालवीय, 'बालगीत' सम्पादक अंजनी कुमार दृगेश तथा 'बालेन्दु', 'बालगीत संग्रह' सम्पादक ठाकुर प्रसाद सिंह, 'शिशु गीत' भाग 1, 2, 3 सम्पा. कृष्ण विनायक फड़के, 'राष्ट्रीय गीत' सम्पा. अशोक, 'बालगीत' सम्पा. सन्तराम वत्स, 'गाँधी गौरव' सम्पा. श्री रंजन, 'हमारा राष्ट्र हमारे गीत' सम्पा. माया स्वरूप, 'गीत अनूठे' सम्पा. द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी, 'बाल गीतांजलि' सम्पा. सोहन लाल द्विवेदी, 'अन्त्याक्षरी' सम्पा. रघुवीर शरण अग्रवाल, 'हल्ला गुल्ला' सम्पा. केशव चन्द्र बधावन, 'सार्थक' सम्पा. देवेन्द्र दीपक, 'युग संगीत' सम्पा. लक्ष्मी नारायण सोनी,

'अन्त्याक्षरी' सम्पा. अनुराधा, 'अन्त्याक्षरी प्रदीप' तथा 'अन्त्याक्षरी पीयूष' सम्पा. महेश चन्द्र सरल, 'बढ़े चलो' सम्पा. कमर मेवाड़ी, 'साहसी सपूत' सम्पा. रेबा राम पांडे, 'नन्हें मुन्नों के गीत' सम्पा. सभ्यता शर्मा, 'राष्ट्रीय गान' (संपादक का नाम नहीं) 'लो खिलौने' संपा. जय प्रकाश भारती उल्लेखनीय हैं। यहां एक उस वृहद संकलन का उल्लेख भी अप्रासंगिक न होगा जो तैयार होने के बाद भी छप नहीं सका। सन् 59-60 में इंडियन प्रेस के मालिक धूनी बाबू के कहने से मैंने (सेवक जी) और पं. सोहन लाल द्विवेदी ने उसे तैयार किया था। इसमें इतिहास क्रम से बच्चों के सभी प्रतिनिधि कवियों के जीवन परिचय और बालगीत दिये थे। प्रत्येक कवि का रेखा चित्र भी बनवा लिया था और चित्रों सहित पांडुलिपि इंडियन प्रेस को भेज दी गई थी। मुद्रण प्रारम्भ हो गया था। उसके बाद ही अचानक धूनी बाबू का स्वर्गवास हो जाने से उसका प्रकाशन खटाई में पड़ गया और फिर वह रेखा चित्र और पांडुलिपि भी वहां से वापिस न मिल सके। यह वृहद संकलन तीन खंडों में प्रकाशित होना था।

इन बालगीत संग्रहों में से 'प्रतिनिधि बाल सामूहिक गान', 'बच्चों की सौ कवितायें', 'हिन्दी के श्रेष्ठ बालगीत' तथा 'बालगीत' (शंकर सुल्तानपुरी) ही कुछ स्थायी महत्व के हैं। कृष्ण बिनायक फड़के द्वारा सम्पादित 'शिशु गीत' भाग 1, 2, 3 भी चयन की दृष्टि से बहुत अच्छे संकलन है।

इस काल के जिन कवियों के परिचय ऊपर दिये जा चुके हैं उनके अतिरिक्त और भी बहुत से कवि हैं जिनके बालगीत प्रायः पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होकर देखने को मिल जाते हैं। उनमें से कई कीं रचनायें बालगीतों के संकलनों में संग्रहीत मिलती हैं और वह बच्चों में सुपरिचित भी हो चुकी हैं। उनमें से कई के परिचय हम अपनी ही सीमाओं के कारण प्राप्त करके नहीं दे पा रहे हैं पर उसका यह अर्थ नहीं कि हम उनके कृतित्व का समुचित मूल्यांकन नहीं करते। उनमें से सर्वश्री गौरी शंकर 'अंजलि', सुबोध कुमार द्विवेदी, सीताराम गुप्त, सुधाकर दीक्षित, रवीन्द्र शलभ, शान्ति मेहरोत्रा, बालकवि 'वैरागी', डा. मंगली प्रसाद 'निष्काम', शिवदत्त शर्मा, ज्ञानवती सक्सेना 'किरण', रामानंद दोषी, राजेंद्र शर्मा, कृष्णा नंदन व्यास 'बेआस', जीवन शुक्ल, चंद्रसेन विराट, ओंकारेश्वर लाल 'नीषाद', नरेंद्र दीपक, ओम प्रकाश शर्मा, श्याम बेबस, कैलाश सेंगर, कलीम आनंद, रामजन्म सिंह 'शिरीष', उमाशंकर वर्मा, जयदेव प्रसाद शुक्ल, अशोक कुमार सूरी, राम अभिलाष शुक्ल, 'लखन', श्रीधर द्विवेदी, सभ्यता शर्मा, श्रीमती मृदुला सिन्हा, कन्हैया लाल नंदन, अशोक शुक्ल, आलोक मेहरोत्रा, जयप्रकाश जय, रतन सिंह किरमोलिया, कु. शशि नंदन, श्रीमती

सरला जैन, नर्मदा प्रसाद त्रिपाठी, केशव प्रसाद मिश्र 'कमल', आनन्द वर्द्धन, चन्द्रिका प्रसाद सिंह, बैकुंठनाथ मेहरोत्रा, कृष्णेश्वर डींगर, केदारनाथ मिश्र, कृष्ण सोवती, मार्गरेट फिलिप मीना, कृष्ण मोहन सक्सेना, ओंकार श्रीवास्तव, रमेश अग्रवाल, बालचन्द लाल 'बालकवि', कैलाश कल्पित, सत्य जायसवाल, रामरिख मनहर, गंगा सहाय प्रेमी, बृजेश चंचल, पंकज गोस्वामी, भगवान स्वरूप सक्सेना, रमेश राज, जगदीश शरण 'मधुप', ज्वाला प्रसाद दीक्षित, सुधाकर पाँडेय, बद्री प्रसाद वर्मा 'अनजान', नंदन हितैषी, प्रेमेन्द्र गोस्वामी, अवधेश कुमार श्रीवास्तव, मनमोहन भदोरिया, स्वतन्त्र लता शर्मा, पीयूष वर्मा, प्रीति जायसवाल, सुरेश चन्द्र शर्मा 'विनीत', तिलक राज गोस्वामी, मुनीन्द्र नाथ श्रीवास्तव, संत कुमार, चित्रा श्रीवास्तव, शैलेश पंडित, अमर नाथ शुक्ल, रमाशंकर 'चंचल', राम निवास शर्मा 'मयंक', रामजी मौर 'सरस', शोभानाथ त्रिपाठी, ठाकुर प्रसाद शुक्ल 'सरस', जगदीश ओझा 'सुन्दर', ममता कालिया, राजेन्द्र तिवारी, आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

बालगीतों का संपादन, चाहे वह लेखक द्वारा स्वयं किया जाये चाहे किसी अन्य विशेषज्ञ द्वारा, अपने आप में एक संपूर्ण कला है। संपादक किसी शब्द को उठाकर इधर से उधर रख सकता है या किसी शब्द को बिल्कुल निकालकर उसकी जगह नया शब्द बैठा सकता है। वह यह भी निर्णय कर सकता है कि कोई बालगीत बच्चे कहाँ तक पढ़ना पसन्द करेंगे या किसी गीत में कौन सी दो चार पंक्तियाँ और जोड़ या घटा दी जायें तो वह पहले से अधिक रोचक हो जायेगा। सम्पादक को अपने इस कार्य में निष्ठुरता की सीमा तक निष्पक्ष और कठोर होना पड़ता है। हिन्दी बालगीतों की पुस्तकों के प्रकाशन में संपादन कला का सर्वथा अभाव दिखाई देता है। कवि अपनी रचना के प्रति ऐसे मोह से ग्रसित होते हैं कि वह तटस्थ भाव या बच्चे की दृष्टि से उसे देख ही नहीं पाते और अपनी व्यावसायिकता में फंसे बाल साहित्य की बारीकियों से अनभिज्ञ प्रकाशकों का तो उधर ध्यान ही नहीं जाता। यही कारण है कि हिन्दी बालगीतों की अधिकांश पुस्तकों में छन्द, भाषा और भाव के ऐसे दोष दिखाई देते हैं जो कोमल बाल पाठकों को हलुए में कंकड़ जैसे गड़ने लगते हैं। कहीं यतिभंग है, कहीं छन्द भंग हो गया है, कहीं तुक नही मिल रही है, कहीं व्याकरण की अशुद्धियां हैं और कहीं मुहावरों के अशुद्ध प्रयोग किये गये हैं। यह ऐसे दोष हैं जो थोड़ी सी सावधानी से दूर किए जा सकते हैं पर बहुतायत से पाये जाते हैं। लेखक को अपनी रचना प्रकाशित देखकर संतोष हो जाता है। उसे कोई मतलब नहीं कि बच्चों पर उसका क्या प्रभाव पड़ा और प्रकाशक यदि किसी लेखक के नाम, पद या प्रभाव से या अपने ही बिक्री तन्त्र की सक्षमता

से किसी पुस्तक को लाभ कमाने लायक बेच सकता है तो आंख मूंदकर उसे छाप डालता है। परिणाम यह होता है कि बालगीत साहित्य के नाम पर पुस्तकों के ढेर पर ढेर लगते चले जाते हैं। बहुत से ऐसे कवि जो बड़ों की कविता के क्षेत्र में अधिक ख्याति अर्जित नहीं कर पाते बालगीतों को सरल तुकबन्दी मात्र समझकर यश बटोरने के विचार से आ झपटते हैं। और बहुत से प्रकाशक नादान बाल पाठकों और उनसे भी अधिक नादान उनके अभिभावकों के हाथों बाल साहित्य बेचना आसान समझ कर उसके प्रकाशन में लग जाते हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के बालगीत साहित्य के क्षेत्र में यह बहुत हुआ है। लेखक, प्रकाशक या पाठक किसी भी ओर से बालगीतों का समुचित मूल्यांकन न हो पाने के कारण ही जहां एक ओर रद्दी से रद्दी बाल गीतों की पुस्तकें प्रकाशित होती रहीं वहां कई अच्छे लेखक अपनी अच्छी-अच्छी बाल कविताओं को अपनी छाती से चिपकाये हुए इस दुनिया से चले गए या इस क्षेत्र से ही संन्यास ले बैठे। बाल साहित्य की कोई अच्छी पुस्तक लेखक, प्रकाशक, चित्रकार और संपादक के सम्मिलित प्रयास का सुफल होती है। हिन्दी में यह चारों कहीं एक जगह बैठे दिखाई नहीं देते।

बच्चे के लिए वास्तव में नित नये लिखे जाने वाले बालगीतों की आवश्यकता ही नहीं होती। उसे वह कहानियों की तरह एक के बाद दूसरे नित नए पढ़ने के लिये नहीं चाहिये। अच्छे बालगीत तो वह पढ़ते या सुनते तुरन्त याद कर लेता है और फिर उन्हें ही बार-बार गाते दुहराते रहने में ही उसे आनन्द आता है। बच्चा यह जानना भी नहीं चाहता कि किसी बालगीत का लेखक कौन है। वह जिस बालगीत को पसन्द करता है और अपनाता है उसे अपना रचा हुआ ही समझ लेता है और बाल गीतकार का यह अभिमान भी निराधार होकर रह जाता है कि उसका रचयिता वह है।

हिन्दी में बालगीत साहित्य की जो पुस्तकें इस काल में प्रकाशित हुई हैं उनमें से कुछ राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत गीतों की है, जैसे नर्मदा प्रसाद खरे की 'नाम उजागर करो देश का', मोहन लाल गुप्त की 'देश हमारा', शांति अग्रवाल की 'जागा हिन्दुस्तान', चन्द्रपाल सिंह यादव 'मंयक' की 'देश के यह बलिदानी वीर', वीरेन्द्र मिश्र की 'अपना देश महान', राष्ट्र बन्धु की 'राष्ट्र प्रेम के गीत', वीर कुमार अधीर की 'ओ सपूत भारती', चक्रधर नलिन की 'बच्चे देश महान के', रघुवीर शरण मित्र की 'अमर रहे यह देश' आदि। राष्ट्रप्रेम की भावना बच्चों में स्वाभाविक रूप से जन्म जात नहीं होती। वह उनमें वातावरण के प्रभाव से धीरे-धीरे विकसित हो जाती है। वातावरण यदि उनके स्वाभाविक विकास के अनुकूल हो तो वह अपने

देश ही नहीं सारे संसार को अपना घर समझकर मनुष्य मात्र से प्रेम करने वाले भी बन सकते हैं। पर देशों में बंटे हुये संसार में अपने देश के मनुष्य को प्यार करना बच्चों को बचपन से ही सिखाया जाता है। इससे उनका भावनात्मक विकास सीमाओं में आबद्ध ही नहीं होता, दूसरे देशों के मनुष्यों को अपने से भिन्न समझने की भावना उनमें अपने आप उत्पन्न हो जाती है। और यदि वह दूसरे देश अपने विरोधी हुए तो वहां के निवासियों के प्रति घृणा का भाव भी उत्पन्न हो जाता है। इसलिए राष्ट्रीय भावनाओं को भड़काने वाले बालगीतों को बच्चों पर आरोपित ही कहा जा सकता है उनका अपना साहित्य नहीं। राष्ट्रप्रेम के इन गीतों में कुछ ऐसी बातें भी पाई जाती हैं जो बच्चों के अपने प्राकृतिक स्वभाव के अनुकूल नहीं होती, जैसे –

हिन्द के बहादुरो, शूरवीर बालको
देश माँगता, कि खून से रंगा गुलाब दो

या

बलिवेदी पर मां तेरी वीरों के शीश कटेंगे
अर्पित कर तब चरणों में हम अमर शहीद बनेंगे।

बच्चे न तो खून से रंगा हुआ गुलाब किसी के द्वारा मांगे जाने की कल्पना कर सकते हैं, न बलिवेदी पर कटते हुए शीशों की और न अमर शहीद बनने की। वह अपना सिर तो किसी को अर्पण कर ही नहीं सकते। उन्हें अपनी जान संसार में सबसे अधिक प्यारी होती है। बलिवेदी क्या होती है इसे वह जानते ही नहीं। हमारे देश में प्राचीन काल के इतिहास में हजारों वर्ष पहले कभी बलिवेदी हुआ करती थी। उसे खूब रच रचकर बनाया जाता था। उसके चारों ओर एक उत्सव होता था। उसमें बच्चे भी शामिल होते थे। तब सैकड़ों पशुओं की बलि दी जाती थी। उनके सिर धड़ से अलग कर दिए जाते थे। कितना वीभत्स दृश्य होता होगा वह। पर उस समय के बच्चे उसे देखकर विचलित नहीं होते होंगे। बाद में बौद्ध और जैन धर्मों ने उस पशु बलि देने की प्रथा का विरोध किया और धीरे-धीरे वह समाप्त ही हो गई। आज तो देश भर में कलकत्ता के काली और गोहाटी के कामाख्या मन्दिर जैसे दो चार मन्दिरों में ही बलि देने की प्रथा है। फिर पशुओं की तरह मनुष्यों के सिर काटने की बात तो वह समझ ही नहीं सकते। और राष्ट्र प्रेम में सिर काटने का क्या औचित्य है यह तो उनके समझ के बाहर की बात है। ऐसी कविता से न तो वह अपना सिर कटाने को तैयार हो सकते हैं न देश से प्रेम करने लगें।

इसलिये देश प्रेम का भाव भरने वाली कवितायें बच्चों को देना ही है तो वह उन्हें देश का ज्ञान कराने वाली, पारस्परिक सद्भाव, प्रेम और एकता की ओर उन्मुख करने वाली या देश के प्राचीन गौरव का गुणगान करने वाली ही हो सकती हैं। जैसे -

भारत प्यारा देश हमारा सारे जग से न्यारा है।
कल-कल करती जिसमें बहती गंगा यमुना धारा है।

या

हम सब भाई-भाई भारत माता की संतान हैं
हिन्दू मुस्लिम सिक्ख पारसी बौद्ध जैन क्रिस्तानी
हिन्दुस्तान हमारा सबका हम सब हिन्दुस्तानी।
एक देश के रहने वाले हम सब एक समान हैं।

हमारे देश में वीर पूजा की भावना को राष्ट्र प्रेम का एक अभिन्न अंग माना गया है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद तो बालगीतों में उसकी अभिव्यक्ति बहुतायत से देखने को मिली है। आश्चर्य तो यह है कि इस काल में जिन वीरों के प्रति पूजा की भावना भरने के प्रयास किये गये उनमें से अधिकांश तो वह हैं जो स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व भी विद्यमान थे और अपनी वीरता के कार्य भी उन्होंने तभी किये थे। पर उस समय उनकी विरुदावली उतनी नहीं गाई गई थी जितनी वर्तमान काल में उनके सत्ता में आने के बाद। वीर पूजा की भावना से प्रेरित होकर इस काल में बहुत सी बालगीतों की पुस्तकें प्रकाश में आयीं जैसे करुणा शंकर तिवारी की 'वीर जवाहर', राम भरोसे गुप्त 'राकेश' की 'क्या बनोगे?', विष्णु कांत पाँडेय की 'भारत गौरव गाँधी तीन', विनोद चन्द्र पाँडेय की 'युग पुरुष', सरोजनी अग्रवाल की 'इन्दिरा दीदी', राजनारायण की 'एक ही जादू', इत्यादि। पर बच्चों की दृष्टि से देखें तो वीर पूजा की भावना भी बच्चों के लिये उतनी ही वैदेशिक होती हैं जितनी राष्ट्रप्रेम की भावना। वह अपने पूर्व पुरुषों के बारे जानकारी तो अवश्य प्राप्त करना चाहते हैं पर उन्हें महामानव या देवता मानकर नहीं। उनका मानव रूप ही उन्हें अपनी ओर आकर्षित करता है। वीर पूजा का भाव तो उनके मन में एक ऐसी क्षुद्रता या आत्म हीनता की भावना भर देता है जिससे वह आजीवन बौने ही बने रहते हैं। वह आत्म विश्वास खो बैठते हैं जो उन्हें आगे चलकर मनुष्य बनाने के लिये बहुत आवश्यक होता है।

बच्चों के लिये पद्य जीवनी और पद्य कथा साहित्य को भी हमने बालगीत साहित्य के अन्तर्गत इसलिये लिया है कि बच्चे उनमें भी बालगीतों जैसा ही आनन्द

प्राप्त करते हैं। हिन्दी में बहुत सी पद्य कथायें और पद्य जीवनियाँ इस काल में लिखी गयीं। जैसे चन्द्रपाल सिंह यादव 'मयंक' की 'बन्दर की दुलहिन', रामवचन सिंह आनन्द की 'कथा कहानी गीत बन गई', 'अंगलू मंगलू', 'सुनो कहानी', चिरंजीत की 'एक था राजा, एक थी रानी', विष्णु कांत पांडेय की 'आओ सुनो कहानी', 'खट्टे हैं अंगूर', प्रशान्त की 'तिब्बत की लोक कथायें', विष्णु कुमार त्रिपाठी 'राकेश' की 'साहसी सोनू', डा. किशोर काबरा की 'बाल रामायण', 'बाल कृष्णायन', शंकर सुल्तानपुरी की 'तिलक', 'झांसी की रानी', निंरकार देव सेवक जी 'ईसप की गीत कथायें', 'पंच तन्त्री', 'गीत कथायें सोने की', 'मटर के दाने', इत्यादि। पद्य कथाओं में कवि की सफलता का रहस्य व्यर्थ के शब्दाडंबर से बचकर छन्दबद्धता और लय के साथ कथा प्रवाह को अक्षुण्ण बनाये रखने में होता है। भाषा पर उसका पूरा अधिकार होना चाहिए। और इस दृष्टि से रामधारी सिंह दिनकर, विद्यावती मिश्र, विष्णु कांत पांडेय, डॉ. किशोर काबरा आदि कुछ कवियों को पद्य कथायें लिखने में विशेष सफलता मिली है। उदाहरण के लिये दिनकर की इस पद्य कथा में जो सरल स्वाभाविक प्रवाह है, वह बच्चों को आकर्षित करने वाला है –

वन में एक घनी झुरमट थी जिसके अन्दर जाकर
खरहा एक रहा करता था सबकी आँख बचाकर।
फुदक-फुदक चिनगियां घास की चुन-चुनकर खाता था
देख दूर से लोगों को झुरमुट में छिप जाता था।
एक रोज आया उस बन में कुत्ता एक शिकारी
लगा छानने सूंघ-सूंघकर बन की झाड़ी-झाड़ी।
आखिर वह झुरमुट भी आई जो खरहे का घर थी
मगर खैर उस बेचारे की लम्बी अभी उमर थी।
कुत्ते की जो लगी सांस खरहा सोते से जागा
देख पीठ पर खड़ा काल को जान बचाकर भागा।

पद्य कथाओं और राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत गीतों की पुस्तकों के अतिरिक्त इस काल में ऐसे बालगीतों की भी बहुत सी पुस्तकें लिखी गई हैं जो बच्चों को सामाजिक या वैज्ञानिक विषयों का ज्ञान देने वाली है। जैसे-राधेश्याम प्रगल्भ की 'सूरज की बेटी', अवधभूषण मिश्र की 'विज्ञान गीत', कुसुमावती देशपांडे की 'वर्षा की बूंदे', मधुकर की 'बच्चों की फुलवारी', गीता सक्सेना की 'साग-सब्जियां गायें गीत', रुद्रदत्त मिश्र की 'हमारे पक्षी' इत्यादि। सामाजिक जीवन विषयक ज्ञान देने वाली पुस्तकों में रामचन्द्र तिवारी की 'आओ करें सवारी', रामेश्वर प्रसाद मालवीय की 'धूल भरे हीरे',

कु. मधु की 'गुड़िया का ब्याह', नरेन्द्र चतुर्वेदी की 'निर्माण बेला', दिवाकर की 'त्योहारों की झाँकी', आदि। इस प्रकार की पुस्तकों के बालगीत शिक्षाप्रद गीतों की श्रेणी में आते हैं। उनमें क्योंकि बच्चों को शिक्षा देने या ज्ञान बढ़ाने के उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रयास की प्रधानता रहती है इसलिए वह बच्चों के सरल स्वाभाविक गीत नहीं बन पाते। यह ठीक है कि बच्चों में जिज्ञासा बहुत प्रबल होती है और उसकी तृप्ति बालगीतों के माध्यम से की जा सकती है। पर वह बालगीत ऐसे तो न हों कि उनमें तुकें मिली हुई होने के अतिरिक्त कविता या गीत जैसी कोई बात ही न हो। जैसे बच्चों को वैज्ञानिकों के नाम रटाने के उद्देश्य से लिखे गये इस गीत को गीत कहना ही कविता की हँसी उड़ाना है –

जेम्स वाट इंजन के दाता स्टीफेंसन रेल प्रदाता
मोर्स तार को लेकर आये पुल्टन ने जलयान चलाये।

....

तार मारकोनी का सुखकर, मीटर के निर्माता डेमलर
मिस्टर जानसन की दुरबीन, एक्सकिरण के रोटंगीन।

वायुयान बना जैप्लिन ने
किया विश्व कल्याण
टाइप राइटर बना सुखद
बन बैठे शोल्स महान।

बच्चा ऐसी कविता को पढ़कर ज्ञानवर्धन से ही दूर भागता दिखाई दे सकता है। वैज्ञानिक तथ्यों की जानकारी भी बच्चों को उनकी जिज्ञासाओं को साथ लेकर ही दी जा सकती है। कोई कविता यदि उनमें और अधिक जानने की इच्छा ही पैदा कर दे तो उसे एक सफल कविता कहा जा सकता है। जैसे –

चन्दा मामा कहो तुम्हारी शान पुरानी कहाँ गई
कात रही थी बैठी चरखा बुढ़िया नानी कंहां गई।
सूरज से रोशनी चुराकर चाहे जितनी भी लाओ
हमें तुम्हारी चाल पता है अब मत हमको बहकाओ।
है उधार की चमक दमक यह नकली शान निराली है
समझ गये हम चन्दा मामा रूप तुम्हारा जाली है।

यही बात विज्ञान के अन्य विषयों और सामाजिक ज्ञान की जानकारी देने वाली कविताओं के बारे में भी कही जा सकती है। जब तक वह बच्चों की भावनाओं को साथ लेकर नहीं चलेंगी, उनका मनोरंजन नहीं करेंगी, उनके लिए उपयोगी नहीं हो सकतीं।

लोकगीतों में पाई जाने वाली मां की ममता भरी लोरियों की तरह की लोरियां हिन्दी में बहुत कम लिखी गई हैं। यह काम पुरुष कवियों की अपेक्षा महिलायें ही अधिक सफलतापूर्वक कर सकती हैं। हिन्दी में ले दे कर हमारी दृष्टि शकुन्तला सिरोठिया और लक्ष्मीदेवी 'चन्द्रिका' पर ही अटक कर रह जाती है। सिरोठिया जी ने विशेष रूप से लोरियां लिखने की ओर अधिक ध्यान दिया है। उनकी 'गा ले मुन्ना', 'सोओ सुख निंदिया', 'आ री निंदिया', 'लक्ष्मी देवी 'चन्द्रिका' की 'लोरियां' और ब्रजकिशोरनारायण की 'आ री निंदिया' लोरियों की पुस्तकें हैं। इसके अतिरिक्त निरंकारसेवक जी 'मुन्ना के गीत' और 'चिड़ियां गाती तेरा राग' तथा कुछ अन्य पुस्तकों में भी लोरियां हैं। राष्ट्रबंधु की 'कन्तक थैयां धुनूं मनैयां' लोरी भी बहुत लोकप्रिय हुई है। सरोजनी कुलश्रेष्ठ ने सौ से अधिक लोरियां लिखी हैं। उनमें से कुछ अच्छी भी हैं। ब्रजकिशोरनारायण ने लोरियों के विषय क्षेत्र को थोड़ा विस्तार देकर कुछ नये ढंग की लोरियां लिखी हैं। जैसे -

मेरी बिटिया सो जा, सो जा
कुत्ता तबला बजा रहा है, नाच रही है बिल्ली
कुत्ता जायेगा कलकत्ता बिल्ली जाये दिल्ली
घोड़ा बाबू ढोल बजायें बछड़ा जी सारंगी
बन्दर बाबू काम न करते खाते हैं नारंगी।

पुरानी परम्परा का निर्वाह करते हुए बच्चों के लिए इस काल में पहेलियाँ लिखीं तो बहुत जाती रही हैं पर वह पत्र-पत्रिकाओं में ही प्रकाशित होती रही हैं। पुस्तक के रूप में तो एक वृहद संकलन प्रकाशन विभाग ने प्रकाशित किया है और एक संकलन जगदीश तोमर का 'ज्ञान पहेली' नाम से चार भागों में प्रकाशित हुआ है। श्यामकुमारदास और उमाकांत मालवीय ने कुछ मुकरियां भी लिखी हैं।

इस काल के बालगीत साहित्य की एक मुख्य विशेषता यह भी है कि शिशु गीत बहुतायत से लिखे गये। शिशु गीतों का लिखना यों तो स्वतन्त्रता पूर्व के काल में ही प्रारम्भ हो गया था। और डा. विद्या भूषण 'विभु' ने विशेष रूप से बहुत से शिशु गीत लिखे थे पर स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के काल में सन् 1950 के बाद ही हिन्दी कवियों का ध्यान इस ओर जाने लगा था और आगे के दशकों में तो प्रचुर मात्रा में शिशु गीत लिखे गये। विष्णुकांत पांडेय की 'मीठे-मीठे प्यारे गीत', 'वीणा गाये हँसे विनोद', 'सब गीतों से न्यारे गीत', शेरजंग की 'अक्षर गीत', 'सुमन बालगीत', अशोक रंजन सक्सेना की 'छोटे-छोटे गीत', हरिश्चन्द्र की 'शिशु गीत, डॉ. ओमप्रकाश शिंघल की 'शिशु गीत' भाग 1, 2, 3, प्रयाग शुक्ल की 'सरस्वती बालगीत',

शकुन्तला सिरोठिया की 'शिशु गीत माला', श्रीप्रसाद की 'खेलो और गाओ' निरंकारदेव सेवक की 'नन्हें मुन्ने गीत', 'दूध जलेबी', 'बिल्लो के गीत', और जय प्रकाश भारती की 'झुन झुना' इस काल में प्रकाशित शिशु गीतों की कुछ विशेष उल्लेखनीय पुस्तकें हैं। इनके अतिरिक्त रामकृष्ण शर्मा खद्दर जी, चन्द्रपाल सिंह 'मयंक' आदि और भी अनेक कवियों ने बहुत से सुन्दर शिशु गीत लिखे हैं। इन सब में से कुछ शिशु गीत तो इतने अच्छे हैं कि विश्व के श्रेष्ठतम शिशु गीतों के समकक्ष रक्खे जा सकते हैं। पर ध्यान देकर उनका चयन और संपादन अभी तक नहीं किया जा सका है। उनके विषय में स्वयं लेखकों की कुछ गलत धारणायें भी बनी हुई हैं जैसे कुछ कवि शिशु और बालगीतों के अन्तर को न समझ पाकर भी अपने को शिशु गीतकार समझ बैठे हैं। शेरजंग गर्ग और प्रयाग शुक्ल ने अपनी शिशु गीतों की पुस्तकों को बालगीत नाम दिया है। शिशु गीतों के विषय क्षेत्र के विषय में भी कुछ भ्रम और पूर्वाग्रह लेखकों में मालूम होते हैं। वह यह समझते हैं कि बच्चों के वातावरण में उनके पूर्व परिचित विषयों पर ही शिशु गीत लिखे जा सकते हैं और वह उस वातावरण को माँ की गोद और घर परिवार तक ही सीमित मान लेते हैं। पर बच्चों के परिचित विषयों में बहुत से वह विषय भी आते हैं जिन्हें हम समझते हैं कि बच्चे उनसे परिचित नहीं। जैसे आज का जो बच्चा घर में दिन रात यह सुनता है कि दुकानदार खाने पीने की वस्तुओं में मिलावट करते हैं, वह ऐसे दुकानदार लाला के पकड़े जाने पर प्रसन्न भी हो सकते हैं और इस दृष्टि से ऐसे गीतों को भी शिशु गीतों के अन्तर्गत ही लिया जा सकता है –

अक्कड़ ताला बक्कड़ ताला ताले ऊपर ताला
घी में तेल मिलाने वाला पकड़ गया है लाला।
लोगों ने काला मुंह करके खूब जलूस निकाला
मगर पुलिस ले गई जेल तो बन्द वहां था ताला।

बालगीतों के विषय और क्षेत्र का तो इस काल में अभूतपूर्व विस्तार हुआ है। अब बालगीतों के विषय हाथी, घोड़ा, शेर, भालू, बन्दर, तारे, चांद, नदियां, मैदान तक ही सीमित नहीं हैं, राशनकार्ड, पोस्टमैन, बिना टिकट सफर, टाई, मोटर का अस्पताल जैसे विषयों पर भी बालगीत लिखे जाने लगे हैं। बालगीतों के विषय-क्षेत्र की कोई सीमा तो हो भी नहीं सकती है। बच्चों के अनुभव, ज्ञान और कल्पना के क्षेत्र में आने वाले सभी विषयों पर बालगीत लिखे जा सकते हैं। बच्चों के लिए सामूहिक गान और प्रयाण गीत भी इस काल में लिखे तो गये हैं। पर उनकी संस्था

मंच पर प्रस्तुत करके उनका उपयोग नहीं किया जा सका है। बच्चे तो अपने लिए लिखे साधारण गीतों को भी अभिनय करते हुए ही पढ़ना या गाना पसन्द करते हैं और इस दृष्टि से उपयोगी बालगीतों की अब हिन्दी में कोई कमी नहीं है। कुछ कवियों ने बच्चों के लिए पद्य नाटिकायें लिखने की ओर भी ध्यान दिया है। उनमें वीरेन्द्र मिश्र, उमाकांत मालवीय, डा. चन्द्र शेखर प्रमुख हैं। वीरेन्द्र मिश्र की 'सुनो राम की कथा', 'जय जवाहर', 'काले मेघा पानी दे', उमाकांत मालवीय की 'फूलों की सभा', 'मोम की कुर्सी', 'पद्य रूपक संग्रह' और डा. चन्द्र शेखर की 'कमल और केतकी', 'आज देश बलिदान मांगता', 'जब मैना थी बोला करती' गीत नाटिकाओं की उल्लेखनीय पुस्तकें हैं। इसके अतिरिक्त सरस्वती कुमार दीपक, योगेन्द्र कुमार 'लल्ला' आदि और भी कवियों ने वार्तालाप या संवाद शैली में कवितायें लिखी हैं जिनका उपयोग छोटी नाटिकाओं के रूप में हो सकता है।

हिन्दी में यह तो अब निर्विवाद रूप से स्वीकार कर लिया गया है कि बालगीतों में बाल भावनाओं, उनकी इच्छा आकांक्षाओं, कल्पनाओं और जिज्ञासाओं की अभिव्यक्ति होना चाहिए और वह उनके लिए मनोरंजक हों। ऐसे गीत कोई बड़ा अपने स्वभाव से ही बच्चा बने बगैर नहीं लिख सकता। पर समाज में बच्चे के व्यक्तित्व के स्वतन्त्र अस्तित्व और उसके अपने विकास के अधिकार को उतनी मान्यता अभी भी नहीं मिल पाई है जितनी स्वतन्त्रता प्राप्ति के इतने वर्ष बाद अब तक मिल जाना चाहिए थी। इसीलिए अधिकांश बालगीतों में बच्चों को कुछ न कुछ प्रेरणा, सीख या ज्ञान की बातें देने का दुराग्रह किसी न किसी रूप में बना ही हुआ है। बड़े लोगों के साहित्य में चाहें वह कविता हो, कहानी या उपन्यास, वह इतने स्पष्ट रूप में दिखाई नहीं देता। उसमें तो कविता में छायावाद, प्रगतिवाद, यथार्थवाद के लिए कई आन्दोलन चलाये जा चुके हैं। यह आन्दोलन लेखकों और पाठकों के सहयोग से चले थे। बच्चे कोई वैसे आन्दोलन अपने साहित्य में चलाने में सहयोग नहीं दे सकते। इसलिए बाल साहित्य में कोई भावात्मक या रूपात्मक परिवर्तन न किया जा सकता है न उसकी आवश्यकता है। यह ठीक है कि समाज में जो परिवर्तन होते रहते हैं उनके अनुसार बाल साहित्य के विषय बदलते रहते हैं। पहले बच्चा 'र' से रथ पढ़ता था, अब 'र' से राकेट पढ़ता है।

बड़ों की कविता जैसे प्रतीक और बिंबों के कुछ नये प्रयोग इस काल के बालगीतों में हुए हैं। सूर्य कुमार पांडेय ने कुछ जापानी हाइकू कवितायें भी बच्चों के लिये लिखी हैं। पर बच्चों में वह कितनी लोकप्रिय होंगी यह भविष्य ही बतायेगा। आज से अनेक वर्ष पूर्व विष्णु काँत पांडेय ने 'गांव के बच्चे के नाम पाती' नाम

से एक पुस्तक अतुकांत शैली में बच्चों के लिये लिखी थी। उसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार थीं -

जैसे तुम नन्हें मुन्ने हो
वैसे ही मैं भी नन्हा हूं
एक गांव का रहने वाला
पेड़ों पर चलता फिरता हूं
मैदानों में बाग बगीचों में
खेतों में हँसता गाता।
दिन भर चाहे कहीं रहूं पर
साँझ पड़े घर आ जाता हूं
घास पात के बने मुलायम
बिस्तर पर मैं सो जाता हूं
मेरे बापू मेरी अम्मा
दिन भर काम किया करते हैं।

इस कविता में अतुकान्त शैली को छोड़कर परम्परागत बालकविता की और सब विशेषतायें मौजूद हैं। भाव, भाषा और लयात्मकता बाल पाठक का उसी प्रकार मनोरंजन करते हैं जैसे किसी तुकान्त कविता में। पर वह इसकी पंक्तियों को पढ़ते ही याद करके गाते दुहराते नहीं फिर सकते। वह तो इसे किसी गद्य की तरह एक बार पढ़कर उठाकर रख देंगे। बच्चों में तो गाने गुनगुनाने की एक हूक सी उठती है। उस समय लयबद्ध कविता ही उनका मनोरंजन कर सकती है। छन्दहीन अतुकान्त कवितायें बच्चों में लोकप्रिय होते नहीं देखी गयीं।

ऐसा ही एक नया प्रयोग भवानी प्रसाद मिश्र ने अपनी पुस्तक 'तुकों के खेल', में किया है। उसकी भूमिका में उन्होंने लिखा है-'इन अनूठी कविताओं को आपके लिये विशेष रूप से लिखा है।' उसकी कुछ पंक्तियां हैं -

मेल बे मेल
तुकों के खेल।
जैसे भाषा के ऊँट की
नाक में नकेल
इससे कुछ तो बनता है
भाषा के ऊँट का सिर
जितना तानों तनता है।

बच्चे अपने लिये लिखी गई किसी पुस्तक की सिफारिश या भूमिका कभी नहीं पढ़ते। न वह उसके अनूठेपन या शैली से ही प्रभावित होते हैं। वह नहीं जानते कि उनके लिये तब और अब लिखी जाने वाली कविता तथा उसकी भाषा शैली में क्या अन्तर होता है। वह तो उसकी लयात्मकता को पकड़कर तुकों से मेल करना चाहते हैं। इसी में उन्हें आनन्द आता है।

मिश्र जी की कविता की उपरोक्त पंक्तियों में एक नया प्रयोग 'भाषा का ऊंट' कहकर किया गया है। इस प्रकार के नये प्रयोग इस काल के कुछ और भी बालगीतों में मिलते हैं। जैसे -

जाकर बैठी दरवाजे पर
उछली पहुंच गई छज्जे पर
वह नन्हीं चिड़िया सी धूप।

या

मछुयारे भी पकड़ न पाये
ऐसी मछली है यह नदिया।

या

सुबह : मेरी मां का चेहरा है
दोपहर : बाबू जी का गुस्सा है।
शाम : दादाजी का डंडा है
रात : सब लोगों का तकिया है।

यह ठीक है कि बच्चे भाषा, ऊंट, चिड़िया, धूप, मछली, नदिया, डण्डा, शाम, तकिया, रात आदि सब शब्दों के अर्थ अलग-अलग समझते हैं। पर भाषा की ऊंट, धूप की चिड़िया, नदिया की मछली, शाम की डण्डा और रात की तकिया के रूप में कल्पना उनके लिए दुरूह कल्पनायें ही कही जायेंगी।

अंग्रेजी में नानसेंस राइम्स की तरह की कुछ कवितायें भी हिन्दी में लिखी गई हैं। जैसे -

ईंची मींची आंखें भींची
आया लटकू बैठा मटकू
खट-खट खटका फूटा मटका
खीं-खीं बिल्ली टिल्लीं लिल्ली।

पर वह बहुत कम हैं। बच्चों को इस प्रकार के निरर्थक शब्दों से खेलने में आनन्द आता है। उन्हें पढ़ने या सुनने में उनके मन या मस्तिष्क पर कोई बोझ नहीं पड़ता।

कुछ बाल गजलों के नये प्रयोग भी हिन्दी में किये गये हैं। उर्दू में सैकड़ों वर्ष पूर्व से गजल कविता की एक विधा रही है। हिन्दी में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से गजलें लिखी जाने लगी थीं पर पिछले दो दशकों में तो अनेक कवि गजलें लिखने लगे हैं। सन् 1978 में मेरा (निरंकारदेव सेवक) का ध्यान इस बात पर गया कि बच्चों के लिए भी गजलें क्यों न लिखी जायें। उन्होंने कुछ गजलें लिखीं उनमें से एक के कुछ शेर हैं -

मेरे घर के बराबर में जो ताल है
उसमें मछली नहीं एक घड़ियाल है
पापा कहते हैं दुनिया में सबसे बड़ा
तुमने देखा नहीं न्यागरा फाल हैं।
एक मेंढक को देखा तो मैंने कहा
वाह चौपाये! तेरी अजब चाल है।

उन्होंने बालगीतों की इस नई विधा की ओर ध्यान आकर्षित करने के लिए दो गजलें 'दिल्ली' मासिक, दिल्ली और बालसाहित्यसमीक्षा कानपुर में सवक्तव्य प्रकाशित करायीं। उनका विचार था कि गजल कोई नज्म नहीं होती जो किसी एक विषय पर आदि से अन्त तक लिखी जाये। गजल का प्रत्येक शेर एक दूसरे से सर्वथा अलग एक भाव लिए होता है और इस दृष्टि से अपने में सम्पूर्ण होता है। उसके बाद से हिन्दी के कुछ बालगीतकारों ने हिन्दी में बाल गजलें लिखने में पहल दिखाई है। रोहिताश्व अस्थाना की तो एक पुस्तक ही 'बाल गजलें' नाम से प्रकाशित होकर सामने आई है। उनकी एक गजल है -

त्योहारों में सबसे आला
दीवाली का पर्व निराला
हार गये सबका सब फड़ पर
रोकड़मल का पिटा दिवाला।
रात अंधेरी पहने फिरती
जगर मगर दीपों की माला।

सेवकजी की समझ से तो गजल का कोई गुण या विशेषता उनकी इस कविता में नहीं। उर्दू भाषा के शब्दों में यह तो एक ही विषय पर लिखी हुई एक नज्म है। उसका छन्द भी उर्दू गजल का नहीं। यह हिन्दी के चौपाई छन्द में लिखी हुई है। और यदि यह गजल ही है तो ऐसी गजलें तो हिन्दी में तीतर, बिल्ली, चिड़िया आदि विषयों पर श्रीधर पाठक के काल से ही बराबर लिखी जाती रहीं। फिर इसे ही बालगजल क्यों कहा जाये?

इस काल के हिन्दी कवियों में कुछ विशेष रूप से बच्चों के लिए लिखने को समर्पित व्यक्तित्व उभर कर सामने आये हैं। उनमें अशोक एम.ए., शकुन्तला सिरेठिया, द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी, सरस्वतीकुमार दीपक, चन्द्रपालसिंह यादव 'मयंक', धर्मपाल शास्त्री, प्रेमनारायण गौड़, विश्वदेव शर्मा, रामवचन सिंह 'आनन्द', डॉ. श्रीप्रसाद, डॉ. राष्ट्रबन्धु, जयप्रकाश भारती, विनोदचन्द्र पांडेय, हरिकृष्ण देवसरे आदि को गिना जा सकता है। बड़ों के लिये लिखने वाले सुप्रसिद्ध कवियों में दो की ओर विशेष रूप से हमारा ध्यान जाता है, बच्चन और सर्वेश्वर दयाल सक्सेना। बच्चन ने सन् 1979 में कोई भी नई कविता न लिखने की कसम खाकर कविता से संन्यास ले लिया था और सचमुच उसके बाद कई वर्ष तक उन्होंने कोई कविता नहीं लिखी। अचानक एक पत्र उनका सेवकजी के पास आया कि अपने नाती पोतों को देखकर मेरी इच्छा बच्चों के लिए कुछ लिखने को होती है। उसी वर्ष उनके बालगीतों की एक पुस्तक 'जन्म दिन की भेंट' प्रकाशित होकर सामने आई। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने भी अपने बच्चों को खुश करने के लिये बालगीत लिखना प्रारम्भ किया। अपने बालगीतों की पहली पुस्तक 'बतूता का जूता' की भूमिका में उन्होंने लिखा है-'ये कवितायें लिखी नहीं गयीं। अपने बच्चों के साथ उठते बैठते उन्हें खुश करने के लिए खेल-खेल में गढ़ी गई हैं।'

इसका अर्थ है बच्चों को प्यार करना, पहली शर्त है बच्चों का कवि बनने के लिए। पर वह प्यार ही सब कुछ नहीं है। इसे स्वयं बच्चन ने अपनी एक कविता में स्पष्ट किया है -

मैंने चिड़िया से कहा-'मैं तुम पर एक
कविता लिखना चाहता हूं।'
चिड़िया ने मुझसे पूछा-'तुम्हारे शब्दों में
मेरे परों की रंगीनी है?'
मैंने कहा-'नहीं।'
'तुम्हारे शब्दों में मेरे कंठ का संगीत है?'
'नहीं'
'जान है?'
'नहीं'
'तब तुम मुझ पर कविता क्या लिखोगे?'
मैंने कहा-'पर तुमसे मुझे प्यार है।'
चिड़िया बोली, 'प्यार का शब्दों से क्या सरोकार है?'

यहाँ बालसाहित्य के विषय में कतिपय हिन्दी विद्वानों के विचारों का उल्लेख कर देना भी अयुक्तिसंगत न होगा। पं. हजारीप्रसाद द्विवेदी कहा करते थे-'हिन्दी में बालगीतों की पुस्तकें हैं तो बहुत, पर बंगाली की 'अबोल तबोल' और 'टापुर टुपुर' जैसी एक भी पुस्तक नहीं लिखी गई।' ठाकुर प्रसाद ने अपने एक लेख में सारे हिन्दी बाल साहित्य को ही रेकेटीयर्स (धूर्त्त व्यवसायियों) का साहित्य बता दिया था जिसका मैंने (सेवकजी) प्रतिवाद भी किया था। कानपुर के विश्वबन्धु ने अपने एक लेख में लिखा था-'हिन्दी में जो सबसे मरियल और अशक्त विधा है वह निश्चित रूप से कविता है।......... बाल साहित्य में हम नौ दिन चले अढ़ाई कोस वाली शर्मनाक स्थिति में हैं......... श्रीधर पाठक की बाबा आदम के जमाने की-'लड़कों इस झाड़ी के अन्दर। छिपा हुआ है जोड़ा तीतर' और आठवें दशक की 'पक्के नियमी धरम धुरन्धर। गायक गुपचुप भांड उजागर'......... इससे तो पाठक जी की कविता ही अधिक संग्रहणीय लगती है।' उनके यह दृष्टिकोण और धारणायें कितना कुछ अनदेखा करके बने हैं, उनमें कितना अंश उनकी अपनी कुंठाओं और पूर्वाग्रहों का है, इसे स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के बालगीत साहित्य का कोई निष्पक्ष अध्येता भलीभांति समझ सकता है।

हिन्दी बालगीत साहित्य को यदि सैकड़ों वर्ष पुरानी लेखन परम्परा वाले समृद्ध साहित्यों की तुलना में देखा जाये तो हमें निराश होना पड़ेगा पर यदि सौ डेढ़ सौ वर्ष पुरानी हिन्दी खड़ी बोली और उसमें भी स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के 30-35 वर्षों की अल्पावधि की उपलब्धियों की दृष्टि से देखा जाये तो हिन्दी में बालगीतों की कई ऐसी पुस्तकें हैं जिन्हें किसी भी देश की श्रेष्ठ बालगीतों की पुस्तकों के समकक्ष रखा जा सकता है जैसे 'सरस्वती बालगीत', 'लो खिलौने', 'जन्म-दिन की भेंट', 'बतूता का जूता', 'बाल रामायण', 'गिनती के गीत', 'सोओ सुख निंदिया', 'नन्हें-मुन्ने गीत', 'बिल्ली के गीत', 'ईसप की गीत कथायें', 'सब गीतों से न्यारे गीत', 'वीणा गाये हंसे विनोद', 'चूँ चूँ कुतरम', 'हम हैं चाँद सितारे', 'दूध बताशा', 'शिशु भारती' आदि आदि। हिन्दी में आज बहुत से ऐसे बालगीत उपलब्ध हैं जो संसार के श्रेष्ठतम बालगीतों की तुलना में खरे उतर सकते हैं। उदाहरण के लिए एक यह शिशु गीत -

हाथी राजा कहां चले
सूंड़ हिलाते कहां चले
पूंछ हिलाते कहां चले

गन्ना खाते कहां चले।
मेरे घर आ जाओ न
हलुआ पूरी खाओ ना
आओ बैठो कुर्सी पर
कुर्सी बोले चर चर चर।

यह गीत संसार में किन बच्चों का मनोरंजन करने में समर्थ न होगा। इसी प्रकार 'खाना खाने गाना गाने आती है यह चिड़िया', 'छैः साल की छोकरी', 'कन्तक थैयाँ घुनू मनैया', 'चिड़िया ओ चिड़िया कहां हैं तेरा घर', 'मुन्नी मुन्नी ओढ़े चुन्नी', 'चन्द्रमा का कुरता', 'आटे पाटे दही चटाके', 'मैना पका रही खिचड़ी', 'अगर मगर दो भाई थे', 'लाल टमाटर', 'अभी खबर लंदन से आई', 'नदी किनारे आये हम', 'एक फूल से महके बगिया', 'इब्न बतूता पहन के जूता', 'सात समन्दर गोपी चन्दर', 'बिल्ली के घर बिल्ली', 'आलपीन के सिर होता है', 'मक्खी की निगाह', 'चिड़िया सी धूप' आदि आदि सैकड़ों उच्च कोटि के बाल और शिशु गीत हिन्दी में लिखे जा चुके हैं। डा. श्रीप्रसाद, राष्ट्रबंधु, विष्णुकांत पांडे, प्रयाग शुक्ल, कन्हैयालाल 'मत्त', सूर्यभानु गुप्त, मगरूराम मिश्र, सूर्यकुमार पाँडेय, नारायणलाल परमार, किशोर काबरा, शिवगोविन्द त्रिपाठी, दिविक रमेश, विनोदचन्द्र पांडे, चन्द्रपालसिंह यादव 'मयंक', शकुन्तला सिरोठिया आदि अनेक बाल गीतकार हिन्दी साहित्य के भंडार को भरते रहे हैं। उनमें से कई के बालगीत सुन्दर रूप में ढंग से प्रकाशित होकर अभी बच्चों के हाथों में पहुँच भी नहीं पाये हैं। इस संबंध में दिनमान के सम्पादक कन्हैया लाल 'नन्दन' ने एक स्थान पर ठीक ही कहा है-'कहना न होगा कि अन्य भारतीय भाषाओं के साथ हिन्दी में काफी कुछ काम हो रहा है। बल्कि इतना कुछ हो रहा है कि बच्चों तक सही ढंग से पहुँच नहीं पा रहा है।'

अच्छे बालगीत साहित्य के बच्चों के हाथों में पहुँचने के मार्ग में कई अवरोधक तत्व हैं। 1. हिन्दी के बड़े-बड़े विद्वान और अंग्रेजी प्रेमी हिन्दी बालगीतों को पढ़े बिना ही यह धारणा बनाये बैठे हैं कि हिन्दी में अच्छे बालगीत हैं ही नहीं और उसका प्रचार नाजी जर्मनी की तरह करने में लगे हुए हैं। 2. अभिभावकगण या तो अशिक्षित हैं या शिक्षित हैं भी तो साहित्य के द्वारा बच्चों के मनोरंजन और विकास की ओर कोई ध्यान नहीं देते। 3. हमारे देश में बाल पुस्तकालयों का सर्वथा अभाव है। सरकार भी इस ओर कोई ध्यान नहीं देती।

फिर भी अब तक हिन्दी में बालगीत साहित्य के क्षेत्र में जो कुछ किया जा चुका है उसे देखते हुये भविष्य में उसके विकास की सम्भावनायें बहुत हैं। रेडियो

से बालगीत के कार्यक्रम प्रसारित होने लगे हैं। दूरदर्शन पर भी कुछ कार्यक्रम आने लगे हैं। बच्चों के लिए बालगीतों के कैसेट और रिकार्ड भी बनने की आवश्यकता है। बालकवि सम्मेलन भी जहाँ जहाँ आयोजित हुए, खूब सफल हुए हैं।

(३) अद्यतन बालगीत साहित्य (१९८२-२०१२)

पूर्वपीठिका -- बड़ों के साहित्य को प्रभावित करने वाले घटक, यथा युगीन परिवेश, नये विचार बिंदु और सामयिक संदर्भ बाल साहित्य को भी न्यूनाधिक मात्रा में प्रभावित करते हैं। सन् 1980 के बाद हिन्दी साहित्य जगत में जिस उत्तरआधुनिकता की पदचाप गूंजी, उसके दूरगामी प्रभाव परिलक्षित हुए। इस उत्तरआधुनिकता को आधुनिकता की अगली कड़ी न समझना चाहिए। यह एक नई विचाराधारा है, जिसका सूचनातंत्र और तकनीक से गहरा नाता है। इसकी चर्चा यूरोप में 1920-25 में, बंगाल में 1960 में और हिंदी में प्रथम बार मार्च 1981 में वत्सलनिधि के लेखक शिविर में हुई। 4 से 10 मार्च तक चलने वाले इस लेखक शिविर में अज्ञेय, अमृतलाल नागर, विजयदेव नारायण साही, अर्चना वर्मा, रघुवीरसहाय, विद्यानिवास मिश्र और महेन्द्र पाण्डेय ने अपने विचार व्यक्त किये। उस समय यह माना गया कि पांच-छः फीसदी धनिक वर्ग ही पश्चिमी शैली की अत्याधुनिकता में रंगा है। देश की आबादी का लगभग ८० प्रतिशत भाग केबल, टी.वी., वी.सी.आर., पेजर, सेलुलर, फैक्स, वेलेन्टाइन डे आदि शब्दों के प्रयोग से कोसों दूर है। लेकिन आज यह स्थिति नहीं है और पिछले 30-32 सालों में हम उत्तरआधुनिकता के प्रभाव और खतरों की गिरफ्त में पूरी तरह आ गये हैं।

उत्तरआधुनिकता ने समाज, संस्कृति, अर्थव्यवस्था, राजनीति, कला, संगीत, वास्तुशास्त्र आदि सभी क्षेत्रों में अपने पांव पसारे। यह विचारधारा 'अंत' पर बल देती है। इसका आरंभ नीत्शे के 'ईश्वर मर चुका है' कथन से हुआ। इलियट ने उपन्यास के अंत की घोषणा की और फिर तो 'अंत' का अंतहीन सिलसिला चल पड़ा। सोचने की बात है, जब ईश्वर का अंत हो गया, साहित्य का अंत हो गया, मनुष्य का अंत हो गया और मनुष्यता का भी अंत हो गया, तब फिर बचा क्या? सिर्फ मशीनें, सिर्फ बाजार, सिर्फ दो शब्द 'क्रेता और विक्रेता'। इस विचारधारा के प्रभाव को इस प्रकार रेखांकित किया जा सकता है -

1. साहित्य व संस्कृति में नई प्रवृत्तियां शुरु हुई, जैसे-सांस्कृतिक अध्ययन, स्त्री विमर्श,

2. 'भारत एक है, पर उसके विचार अनेक हैं', जैसी विचारधारा ने क्षेत्रीय व जातिवाद पर आधृत राजनैतिक दलों के प्रभुत्व को बढ़ाया। उदारीकरण, भूमंडलीकरण, बाजारवाद आदि ने भ्रष्टाचार को घटाने के बजाय बढ़ाया।

3. विखण्डन की प्रवृत्ति पर बल देने वाली विचारधारा होने के कारण इसने पारम्परिक विश्वास, संस्कृति और सांस्कृतिक प्रतिमान छिन्न-भिन्न किये।

4. भूमंडलीकरण से परिचालित होने वाली प्रवृत्ति के कारण इसने बाजारवाद को बढ़ावा दिया। चूंकि बाजार में सूचना व विज्ञापनों का महत्व है, इसलिए उत्तरआधुनिकता सबसे पहले सूचनातंत्र पर अधिकार जमाती है।

5. इसने समाज को दो भागों में बांटा है, उत्पादक और उपभोक्ता। इसकी कथनी-करनी में भेद है। यह पुरानी स्थापनाओं को तो नकारती है, पर अपनी स्थापनाओं पर बल देती है। इसका एक ही लक्ष्य है, ज्यादा-से-ज्यादा उत्पादन और उसके लिए बाजार की तलाश। इसने तंत्र-मंत्र, टोने-टोटके, मिथक, फैंटेसी, शून्यवाद, देसीवाद आदि को पुनर्जीवित किया है।

6. उत्तरआधुनिकता की विकेन्द्रीकरण की नीति ने दलित, जनजातियां, नारी और हर किस्म के अटके-भटके-गूंगे लोगों को 'पावर शिफ्टिंग' के तहत अपनी पहचान बनाने के लिए प्रेरित किया।

7. साहित्य पर प्रभाव यह पड़ा कि महान आख्यान का युग खत्म हो गया। रामचरितमानस, कामायनी, गोदान या राम की शक्तिपूजा जैसी उदात्त कृतियों को उत्तरआधुनिकतावाद आभिजात्य की सृजन भाषा के प्रयोग की वजह से नकारता है।

8. इसने सबाल्टर्न इतिहास (पूर्वापर संबंध से रहित इतिहास) की थ्योरी विकसित की है। यही नवइतिहासवाद है।

हमें उत्तरआधुनिकता चाहिए या नहीं, यह सवाल आज इसलिए बेमानी हो जाता है कि हमारे पास इसे छोड़ने का विकल्प है ही नहीं। हालांकि यह विचाराधारा भारत के अनुकूल नहीं है। पश्चिम की भौतिकता का अंधानुकरण हमारे लिए घातक है। गांवों में पेयजल चाहे न हो पर टेलीविजन जरूर हो, इसे आप कहाँ तक उचित कहेंगे? विश्व के कदम से कदम मिलाकर चलना तो ठीक है, पर अपनी आध्यात्म पर आधारित परम्परा को छोड़ना क्या हमें स्वीकार्य है? सच तो यह है कि वर्तमान युग पावर शिफ्ट का जो खेल खेल रहा है, उससे घर, दफ्तर, बैंक, शिक्षणसंस्थाएँ, धर्म-दर्शन सभी के पुराने पैटर्न चरमरा गये हैं। इस परिवर्तन चक्र को मीडिया एक नई ताकत दे रहा है। यह परिवर्तन अचानक न होकर उस शैतान दिमाग की खुराफात है, जिसे भारत जैसा देश अपने माल की खपत के लिए

अत्यंत उपयुक्त बाजार नजर आता है। विश्व बाजार की ये नई ताकतें गांधीदर्शन और स्वदेशी जैसी विचारधारा को मटियामेट करने का खुला दुष्चक्र हैं। परिवर्तन की पहली लहर कृषिक्रांति से और दूसरी औद्योगिक क्रांति से आई। तीसरी लहर इस प्रौद्योगिकी से आ जरूर रही है, पर उत्तरआधुनिकता के नाम पर यह सिर्फ क्रय-विक्रय का खेल है।

उत्तरआधुनिकता की अवधारणा में भूमंडलीकरण या विश्वग्राम की जो पाश्चात्य परिकल्पना है, वह भारतीय संस्कृति के 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की समानार्थी नहीं है। यह प्रवृत्ति आइडियालॉजी की जगह टेक्नालॉजी पर बल देती है। इक्कीसवीं सदी में इसका वर्चस्व इतना बढ़ा है कि मनुष्य अब मनुष्य न रहकर एक संसाधन बन गया है। विश्वनाथ तिवारी की पंक्तियाँ हैं -

मैं एक बुरी खबर/लाया हूँ श्रीमन्
दुनिया से मनुष्यों की प्रजाति/लुप्त हो रही है।

वैश्वीकरण कहने को विश्वग्राम है, पर वस्तुतः बाजारवाद, उपभोक्तावाद और भौतिकता को बढ़ावा देने वाला भ्रांतिलोक है। मैकलुहान के 'विश्वगांव' की परिकल्पना में निहित बाजार वह बाजार नहीं है, जिसे संसार का पर्याय मानते हुए पांच सौ साल पहले कबीर ने कहा था -

कबिरा खड़ा बजार में लिए लुकाठी हाथ
जो घर फूके आपनो, चले हमारे साथ।

कबीर के इस 'घरफूंक तमाशें' के पीछे एक शोषणमुक्त समाज की स्थापना का भाव था, जर्जर रुढ़ियों में आग लगाकर एक बेहतर समाज के गठन का सपना था। इसके विपरीत आज की बहुराष्ट्रीय कंपनियां किसी लोककल्याण के इरादे से अपना वर्चस्व स्थापित नहीं कर रही है। उनका उद्देश्य केवल मुनाफा कमाना है। अधिकाधिक मुनाफा कमाने के लिए अनगिन हथकण्डों का इस्तेमाल करते वक्त वे मासूम बचपन तक को नहीं बख्शती हैं।

भूमंडलीकरण के दौर में बालक और बालकविता -- आधुनिक जीवनशैली की तीन विशेषताएं व्यक्तिस्वातंत्र्य, भौतिकता और परिवर्तन से आज का बालक बहुत जल्दी परिचित हो जाता है। वह देखता है कि नौकरीपेशा माता-पिता अपने-अपने अहं के स्तूप तले कैद होकर दूसरे के वजूद को नकारते हैं। वह यह भी देखता है कि भौतिकता के प्रति बढ़ते आकर्षण ने उसके माता-पिता को पैसा कमाने की

में साझा डुबकी लगाने के द्योतक हो गये हैं। दादी की आंख के आपरेशन के नाम पर खर्च का रोना रोते हुए पिता का टेलीफोन पर दो टूक इंकार बच्चा एक बार बरदाश्त भी कर ले पर उसी शाम घर में नये एयर कंडीशनर का आना वह पचा नहीं पाता। एक समूची मूर्ति पता नहीं कब टूटकर खंड-खंड होकर बिखर जाती है। पिता की इज्जत कैसे करे, किंकर्तव्यविमूढ़ बच्चा समझ नहीं पाता।

पर इस अंधेरी तस्वीर का एक उजला पक्ष भी है। बच्चों के लिए कम्प्यूटर ने ज्ञान-विज्ञान की एक नई और अनूठी दुनिया खोल दी है। उनकी जानकारी आज अछोर हो चुकी है। चंदामामा की सच्चाई से वे पूरी तरह अवगत हैं। ओजोन परत के क्षरण और प्रदूषण के खतरों को वे जानते है। अंतरिक्ष में सुनीता विलियम्स ने कितनी देर चहलकदमी की, उनके संज्ञान के भीतर है। छोटा सा बच्चा तक कम्प्यूटर के 'माउस' से दोस्ती करके एक रंगारंग तिलस्म के रूबरु होना जानता है। अपने देश, देश के महापुरुषों और देश की कलाकृतियों के विषय में कितना कुछ जानते हैं आज के बच्चे। और देश ही क्यों, संपूर्ण विश्व आज उन्हें अपने पड़ोस जैसा जाना पहचाना प्रतीत होता है। आधुनिकता बोध ने यदि बच्चों से बहुत कुछ छीना है, तो काफी कुछ दिया भी है। वे अपनी रुचियों, अपेक्षाओं और आकांक्षाओं को लेकर भी माता पिता से खुलने लगे हैं। उनमें आत्मविश्वास बढ़ा है। भूमंडलीकरण के दौर का बालजीवन में यह सकारात्मक पक्ष है।

जहाँ तक हिंदी बालकविता की बात है, सन् 1980 के बाद बालकवियों का एक पूरा काफिला ही यहाँ अपनी जोर आजमाइश के लिए उतर पड़ा है। भले ही बालमन की परख न हो, बालजीवन की जानकारी न हो और बालसंसार की रंगारंग छवियां भी न निहारी हों, पर देशप्रेम, त्योहार, मौसम जैसे विषयों पर कुछ भी सुर में अथवा बेसुरा आलाप कर बालकवि का दर्जा तो पाया ही जा सकता है। इससे बालकविता में अराजकता जैसी स्थिति उत्पन्न हो गई है। कविता की छोटी-बड़ी किताबें अपने पैसे से छपवाकर रचनावली की संख्या बढ़ाने से हिंदी बालकविता का हित संपादन नहीं किया जा सकता। आर्थिक मजबूती के चलते रंगारंग चित्रों से सजे ऐसे बालकविता संकलन भी बाजार में उतार दिये जाते हैं, जो ऊंची दुकान फीका पकवान की उक्ति को चरितार्थ करते हैं। कवियों के इस रेवड़ को किसी तरह भी हांक-हांककर बालकविता के चरागाह में पहुंचा देने की प्रकाशकीय साजिश के चलते ही हिन्दी बालकविता पर स्तरहीन होने का आरोप लगता है। लोगों की इसी यश लिप्सा का फायदा उठाने के लिए अनेक प्रकाशक सौ-दो सौ रुपये की सहयोग राशि मांगकर ऐसे बालकविता संकलन बाजार में पहुंचा देते हैं, जिन्हें देखकर सिर्फ

खीझ ही उपजती हैं। बालसाहित्य आज एक ऐसा व्यवसाय बन गया है, जिसमें विवेक शून्य होकर रचनाकार के पात्र-अपात्र होने की कसौटी को तिलांजलि देते हुए बाजारवादी ताकतें कूद पड़ी है। ऐसे में बालसाहित्य समीक्षक को महावीरप्रसाद द्विवेदी की भूमिका में आना होगा। तभी आज की बालपत्रिकाएँ 'सरस्वती' बन सकेंगी और श्रेष्ठ बालकाव्य को अपनी पृथक पहचान मिलेगी।

पर यह सिक्के का सिर्फ एक पहलू है। दूसरी तरफ आज की हिंदी बालकविता में विचारतत्व की प्रधानता के कारण नये विषयों का प्रचुर समावेश हुआ है। इन कविताओं में समय की पहचान साफ सुनी जा सकती है। कहीं माता-पिता के समयाभाव से जूझते बालक का दर्द है, कहीं बस्ते के बोझ तले सिसकता बचपन है तो कहीं रोजमर्रा की जिंदगी का आतप-ताप झेलते उसके दिन-रात हैं। अचानक कमरे की बिजली गुल हो जाने से उपजी खीझ, अचानक नल का पानी चले जाने से उपजी झुंझलाहट और अचानक पिकनिक या चिड़ियाघर चलने का प्रोग्राम रद्द कर दिये जाने से उपजी बालमन की निराशा को आज की हिंदी बालकविता ने बड़ी संवेदन शील दृष्टि से देखा और बड़े ही सधे हाथों से पकड़ा है। इसीलिए वह बच्चे के दर्द और सपनों की सफल संवाहक बन सकी है।

लोकजीवन से रस और माधुर्य ग्रहण करने में भी आज की हिन्दी बालकविता पीछे नहीं है। नये, अछूते और टटके उपमानों व बिम्बों को खोजने का बालकवि का कौशल दर्शनीय है। एक शिशु की तोतली बोली को वह इतने नटखटी अंदाज में अपने भीतर उतार लेती है कि देखकर ताज्जुब होता है। पारिवारिक जीवन की नाना छवियां उसका अलग आकर्षण हैं। पारिवारिक जीवन से रस ग्रहण करने की प्रवृत्ति के चलते 'चकई के चकदुम' जैसी कविताएं सामने आई हैं। बाल मनोविज्ञान की भी वह अद्भुत पारखी है। 'मौत का कुआं' जैसी कविताएँ प्रदूषण को लेकर उसकी चिंता की सूचक है। निश्चय ही आज के दौर की हिन्दी बालकविता अपनी सामर्थ्य से हमें अभिभूत करती है। शर्त यह है कि थोक के भाव लिखी जाने वाली बालकविताओं के अंबार से अच्छी बालकविता खोजकर बाहर निकाली जाये।

सच तो यह है कि हिन्दी बालकाव्य में ही नहीं, समूचे बालसाहित्य के परिदृश्य में वर्ष 1980 के बाद से व्यापक बदलाव आया है। डॉ. कामना सिंह ने 'स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी बालकविता में आधुनिकताबोध' शीर्षक अपने शोध प्रबंध में इस बदलाव के मुख्य बिंदुओं की पड़ताल की है-

1. बालसाहित्य की सभी विधाओं में साहित्यसर्जना हुई। कहानी, उपन्यास, सर्वाधिक पसंद की जाने वाली विधाएं रहीं। उसके बाद कविता आई। कविता में

यदि भाव सौंदर्य, लय और संगीत का जादू विद्यमान हो, तो वह त्वरित गति से बच्चे की जुबान पर चढ़ जाती है। बच्चे उसे गाना-गुनगुनाना पसंद करते हैं। पर प्रकाशक ज्यादा रुचि उपन्यास-कहानी छापने में लेते हैं। समकालीन लेखन में यही विधाएं शीर्ष पर हैं।

2. कम्प्यूटर युग में पहुंच जाने के कारण बालसाहित्य का बहिरंग भी अत्यंत मनोहारी हो गया है। रंगीन चित्रों से पुस्तक के आकर्षण को चार चांद लगे हैं। चूंकि कम्प्यूटर द्वारा मुद्रण की त्रुटियों को दूर करना आसान हो गया है, अतः बालसाहित्य को थोड़ा श्रम करके शुद्ध रूप में छापने की प्रवृत्ति बढ़ी है।

3. चित्रों के प्रति इसी बढ़ती ललक का परिणाम है, चित्रकथाओं का लोकप्रिय संसार। यह संसार आज के बालक को लुब्ध करने में पूर्णतः सफल रहा है। कॉमिक्स के प्रति बच्चों का आकर्षण इस सीमा तक बढ़ा है कि वे उसे देखते ही खरीद लेना चाहते हैं। इसी के साथ कॉमिक्स के विरोध में भी स्वर मुखरित हुए हैं। पर यह मानना पड़ेगा कि चित्रकथाओं के सम्मोहन से आज का बालक बंधा हुआ है।

4. समकालीन बालसाहित्य विषय-वैविध्य की दृष्टि से अपने पूर्ववर्ती युगों से कहीं बढ़-चढ़कर है। जो नये विषय आज के बच्चों को मोह रहे हैं, वे हैं बाल मनोविज्ञान का धरातल, विज्ञान के ऊंचे क्षितिज, रहस्य-रोमांच की अनूठी दुनिया और बच्चे का अपना जीवन।

5. विवेच्य कालावधि में, अब तक उपेक्षा का गरलपान करने वाली विधाओं में भी साहित्य रचने की प्रवृत्ति बढ़ी है। यात्रा साहित्य एवं जीवनी साहित्य में मौलिकता दिखाई दी है।

इस दौर के बालकवि -- स्वातंत्र्योत्तर युग में पूरे दम खम के साथ लिखने वाले बहुत से बालकवियों ने अद्यतन युग में भी अपनी प्रतिभा का प्रकाश फैलाया। ऐसे रचनाकारों में हैं - सोहनलाल द्विवेदी, निरंकारदेव सेवक, चंद्रपालसिंह यादव 'मयंक', 'डॉ. श्रीप्रसाद', जयप्रकाश भारती, दामोदर अग्रवाल, सूर्यकुमार पाण्डेय रामवचनसिंह आनंद, शकुन्तला सिरोठिया, सरोजिनी कुलश्रेष्ठ, मनोहर वर्मा, डॉ. राष्ट्रबंधु, रत्नप्रकाश शील, बाबूराम शर्मा 'प्रेम', संतकुमार टंडन 'रसिक', डॉ. श्यामसिंह शशि, डॉ. शेरजंग गर्ग, मधु भारतीय, रमेश कौशिक, जगदीशचंद्र शर्मा, अशोकरंजन सक्सेना, योगेंद्रकुमार लल्ला, बालस्वरूप राही, विनोदचंद्र पाण्डेय 'विनोद', चक्रधर नलिन, घमण्डीलाल 'राजीव' (अब 'घमंडीलाल अग्रवाल' नाम से), प्रयाग शुक्ल, बालकृष्ण गर्ग, यादराम रसेंद्र, दिविक रमेश, सूर्यभानु गुप्त, पद्मा चौगांवकर, प्रेमकिशोर पटाखा, प्रकाश मनु, रोहिताश्व अस्थाना, सूर्यकुमार पाण्डेय, भगवती प्रसाद द्विवेदी, धीरेंद्र कुमार यादव, अजय प्रसन्न, सुरेंद्र

कुमार श्रीवास्तव (अब 'सुरेंद्र विक्रम' नाम से) एवं चंद्रेश। इसीलिए इनमें से अधिकांश बालकवियों को मैंने (उषा यादव) सेवकजी के स्वातंत्र्योत्तर काल से हटाकर यहाँ शामिल किया है।

अद्यतन युग के अन्य सशक्त हस्ताक्षर हैं -- तारादत्त निर्विरोध, मंगरुराम मिश्र, हरीश निगम, सुरेश विमल, देवेंद्रकुमार, रमेश तैलंग, जहीर कुरैशी, अब्दुल मलिक खान, भैरुँलाल गर्ग, राजा चौरसिया, मधुसूदन साहा, रमेशचंद्र पंत, रामावतार त्यागी, सुंदरलाल अरुणेश, किसलय वंद्योपाध्याय, अहद प्रकाश, कृष्ण शलभ, उषा यादव, राजनारायण चौधरी, अनंतप्रसाद 'रामभरोसे', अजय जनमेजय, अश्वघोष, शकुन्तला कालरा, शंभुनाथ तिवारी, अखिलेश श्रीवास्तव 'चमन', श्याम सुशील, यश मालवीय, योगेंद्रदत्त शर्मा, यतीन्द्रनाथ राही, जगदीश व्योम, हरिमृदुल, शिवचरण चौहान, विनय कुमार मालवीय, नागेश पाण्डेय 'संजय', रामनिवास मानव, इंदिरा गौड़, मौ. साजिद खान, मौ. अरशद खान, रमाशंकर, कमलेश भट्ट 'कमल', मौ. फहीम, दिनेश चमोला 'शैलेश', आर.पी. सारस्वत, विनोद 'भृंग', यश मालवीय, शिवांक, कामना सिंह, अंशु शुक्ला, रचना सिद्धा, निश्चल आदि।

बाल पत्रिकाएँ एवं बाल सिनेमा -- पहले से चली आने वाली 'नंदन', 'बाल भारती', 'बालवाणी', 'चंपक', 'देवपुत्र', 'बच्चों का देश', 'बालहंस', 'बालवाटिका' आदि पत्रिकाएं आज भी बच्चों का मन मोह रही हैं। 'पराग' का बंद हो जाना एक बड़ी साहित्यिक क्षति रहा। 'बालवाटिका' बच्चों की जगह अब किशोरों की पत्रिका बन गई है, हालांकि छोटे बच्चों के लिए भी उसमें स्थायी स्तम्भ रहता है। 1980 के बाद प्रकाशित होने वाली प्रमुख बालपत्रिकाओं के नाम हैं - 'कुटकुट' (1981, रतलाम), 'नन्हे तारे' (1981, हरियाणा), 'नन्ही मुस्कान' (1981, कानपुर), 'नन्हे-मुन्नों का अखबार' (1981, इलाहाबाद), 'दि चिल्ड्रंस टाइम्स' (1981, लखनऊ), 'आनंददीप' (1982, महाराष्ट्र), 'बालनगर' (1982, इलाहाबाद), 'चंदन' (1982, बहराइच), 'लल्लू जगधर' (1982, लखनऊ), 'सुमनसौरभ' (1983, दिल्ली), 'किलकारी' (1984, दिल्ली), 'उपवन' (1984, राजस्थान), 'चकमक' (1985, होशंगाबाद), 'अच्छे भैया' (1986, इलाहाबाद), 'बालमंच' (1987, नई दिल्ली), 'नन्हेसम्राट' (1988, नई दिल्ली), 'किशोर लेखनी' (1988, कटिहार), 'बालमेला' (1989, नई दिल्ली), 'समझझरोखा' (1989, भोपाल), 'यू.पी. नन्हा समाचार' (1989, लखनऊ), 'पमपम' (1992, दिल्ली), 'बाल सुमन' (1992, बस्ती), 'गुब्बारा' (1997, जयपुर), 'स्नेह' (1997, भोपाल), 'बालप्रभा' (वार्षिक, प्रवेशांक 2012, शाहजहाँपुर)।

उपर्युक्त बाल पत्रिकाओं के रूप में बच्चों का मन मोहने के लिए एक इन्द्रधनुषी दुनिया मौजूद है। 'बालप्रहरी' (सं. उदय किरौला) की सार्थकता उत्तराखंड के गांवों में रहने वाले बच्चों को भी कविता-कहानी लिखने के लिए प्रोत्साहित करने में है। अलीगढ़ से प्रकाशित होने वाली 'अभिनव-बालमन' भी एक ऐसी त्रैमासिक बालपत्रिका है, जो बच्चों की लेखन-प्रतिभा को सामने लाने में प्रयत्नशील है। इसमें 'पुस्तक समीक्षा' के अंतर्गत जो समीक्षा छपती है, उन पुस्तकों को बच्चे स्वयं पढ़कर तैयार करते हैं। उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान से निकलने वाली द्वैमासिक बालपत्रिका 'बालवाणी' भी बच्चों के साथ संवाद स्थापित करने में कतई पीछे नहीं है। रंगारंग चित्रों से सजी इस पत्रिका का महत्व बच्चों के मनोरंजन, ज्ञानवर्धन के साथ-साथ मौलिक सृजन से जोड़ने के लिए भी है। नेशनल बुक ट्रस्ट दिल्ली द्वारा प्रकाशित 'पाठक मंच बुलेटिन' में हिन्दी व अंग्रेजी दोनों भाषाओं में रचनाएं छपती हैं तथा बच्चों की रचनाओं व चित्रों को विशेष महत्व दिया जाता है। 'बालसाहित्यसमीक्षा' आर्थिक संकट से जूझने के बावजूद लगातार कानपुर से निकल रही है। भोपाल से छपने वाला बच्चों का अखबार 'अपना बचपन' (सं. महेश सक्सेना) अपने अन्य स्तम्भों के साथ बालसाहित्यकारों के बचपन को छापने में विशेष रुचि लेता है। 'नन्ही कलम' का बंद हो जाना दुखद है क्योंकि यही एकमात्र पत्रिका बच्चों द्वारा हाथ से लिखी जाती थी और फिर फोटोस्टेट प्रतियां वितरित की जाती थीं। इसके अतिरिक्त प्रायः कई दैनिक समाचार पत्रों के साप्ताहिक परिशिष्ट में बच्चों का पृष्ठ रहता है।

बालसाहित्य के प्रति पत्र-पत्रिकाओं की बढ़ती गंभीरता का प्रमाण यह है कि प्रतिवर्ष नवम्बर मास में बालदिवस पर अनेक पत्रिकाएं अपने बालसाहित्य विशेषांक निकालती हैं। 'आजकल' इस दृष्टि से शीर्ष पर है। पिछले कई सालों से निकलने वाला उसका यह विशेषांक पूरे वर्ष प्रतीक्षित रहता है। बालक, बालसाहित्य एवं बाल चिंतन से जुड़े आलेख, कविता और कहानी इसे संग्रहणीय बनाते हैं। अन्य पत्रिकाएं भी इस दृष्टि से पीछे नहीं है। भारतीय ज्ञानपीठ के प्रकाशन 'नया ज्ञानोदय' ने प्रभाकर श्रोत्रिय के संपादन में अक्टूबर 2004 में 'हाशिये पर बचपन' नामक 296 पृष्ठों का बृहदाकार विशेषांक निकाला। भारतीय-अमरीकी संयुक्त प्रयास से छपने वाली 'अन्यथा' ने नवम्बर 2005 में कृष्ण किशोर के संपादन में बालक, बालश्रम, बालसाहित्य आदि विषयों पर केंद्रित विशेषांक निकाला। 'अनौपचारिका' (सं. रमेश थानवी) का नवम्बर 2005 अंक भी 'बालक विशेषांक' के रूप में निकला। इसकी संपादकीय मन को झकझोर देने वाली है : 'बच्चा अपने स्वभाव से ही सरल होता है मगर बड़ों की दुनिया ने ऐसी स्वाभाविक सरलता सीखने की कभी कोशिश ही नहीं की।

एक और विलक्षण बात यह है कि बालक जो करता है वही सीखता है। मगर बड़ों की दुनिया का आलम देखिए कि जो खुद नहीं करते, वही सब दिखाते हैं।' 'अक्षर शिल्पी' ने मार्च 2010 में बालसाहित्य विशेषांक निकाला। 'कुतुबनुमा' ने भी अक्टूबर-दिसम्बर 2010 में रमेश यादव के अतिथि संपादन में बाल साहित्य पर केंद्रित अंक प्रकाशित किया। 'साहित्य-अमृत' में भी प्रति वर्ष नवम्बर माह में बालसाहित्य परक सामग्री प्रकाशित होती है। इस वर्ष (नवम्बर 2012) में लगभग दो सौ पृष्ठों का विशेषांक (अतिथि संपादक प्रकाश मनु) छपा है, जो अपने वैशिष्ट्य के कारण संग्रहणीय बन गया है। 'सेतु', 'वीणा', 'उत्तरप्रदेश', 'साक्षात्कार', 'हरिगंधा' जैसी पत्रिकाएं भी नवम्बर माह में प्रायः बालसाहित्य को प्रमुखता देती हैं।

सूचना प्रौद्योगिकी के जबरदस्त विस्फोट के फलस्वरूप बाल सिनेमा ने भी बच्चों से जुड़ने में आज महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हैरी पॉटर का जादू तो विश्व भर के बच्चों के सिर पर इस कदर चढ़ा कि इस श्रृंखला की पुस्तकों के साथ-साथ उन पर बनने वाली फिल्में भी अत्यंत लोकप्रिय रहीं। पर मात्र मनोरंजन से इतर ऐसी सोद्देश्य बाल फिल्में भी बनी हैं, जो बच्चों की दुनिया के सच से जुड़ी हैं। ऐसी फिल्मों की लंबी श्रृंखला के कुछ प्रमुख नाम हैं - 'नन्हे जैसमेर', 'अपना आसमान', 'तारे जमीं पर', 'भूतनाथ', 'ब्लू अंब्रेला', 'बम-बम भोले', 'माई फ्रेंड गणेश', 'थैंकयू मां', 'पाठशाला', 'आई.एम. कलाम' आदि। अपने प्रभावशाली कथ्य, अन्तर्निहित संवेदना तथा बालमन को पकड़ने की क्षमता के कारण ये फिल्में काफी चर्चित रहीं। संवेदना के सूक्ष्म ताने-बाने से इन्हें बुना गया है। कहीं बालक की छिपी क्षमताओं को खोजने का प्रयास है, कहीं अनाथ बालक का दर्द है, कहीं बाल-मन के सपनों का अनंत आकाश है। हैरीपॉटर श्रृंखला की फिल्में, नार्निया जैसी फिल्में और कार्टून फिल्में बच्चों के लिए सिर्फ मनोरंजन का खजाना भर होती हैं, पर ये सोद्देश्य फिल्में उनकी समस्याओं पर आधृत होने के कारण बालजीवन का सच्चा और भरोसेमंद चित्र बन जाती है।

शोध ग्रंथ एवं बालसाहित्य समीक्षापरक अन्य चर्चित पुस्तकें -- वर्ष 1980 के बाद बालसाहित्य में शोध की प्रवृत्ति बढ़ी। हिंदी बालकविता को लेकर लिखे जाने वाले कुछ महत्वपूर्ण शोध प्रबंध हैं - 'हिन्दी बालकाव्य : एक अध्ययन' (डॉ. निर्मला वर्मन), 'स्वातंत्र्योत्तर हिंदी बालकाव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन' (डॉ. पुष्पा जैन), 'आधुनिक युग के प्रमुख हिंदी बालगीतकार' (डॉ. राजकिरन दीक्षित), 'स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी बालकविता' (डॉ. प्रतिमा) आदि। बालकाव्य के अतिरिक्त अन्य विधाओं पर भी शोध कार्य हुए हैं। मनोविज्ञान, शिक्षाशास्त्र आदि के निकष पर भी बालसाहित्य

हिंदी के बाल कवियों पर व्यक्तिपरक शोधप्रबंध भी पर्याप्त संख्या में लिखे गये हैं। सुप्रसिद्ध बालसाहित्यकार चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक' पर लिखे गये शोध प्रबंध इस प्रकार हैं –

(क) 'हिन्दी बाल साहित्य के संदर्भ में श्री चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक' की साहित्य साधना का मूल्यांकन', डॉ. कंचनलता यादव (1988)

(ख) 'चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक' : व्यक्तित्व एवं कृतित्व', डॉ. ज्योत्स्ना शर्मा (1993)

(ग) 'चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक' की बाल कविता में राष्ट्रीय भावना', डॉ. वंदना चिटकारा, (1996)

बाल साहित्य पर शोध कार्य कराने में उषा यादव की श्रमसाध्य भूमिका रही है। उनके निर्देशन में इन शोधार्थियों ने पी-एच.डी. उपाधि प्राप्त की है –

'हिन्दी बालसाहित्य के विकास में श्रीमती शकुन्तला सिरोठिया का योगदान', डॉ. रामवीर शर्मा, (1999), 'हिन्दी बालसाहित्य के विकास में विनोदचंद्र पाण्डेय 'विनोद' का योगदान', डॉ. रेखा शर्मा, (2000), 'डॉ. राष्ट्रबंधु और बालशौरि रेड्डी के बालसाहित्य का तुलनात्मक अध्ययन', डॉ. निशा सिंह, (2001), 'जयप्रकाश भारती की साहित्य साधना के विविध आयाम', डॉ. यज्ञदत्त अवस्थी, (2001), 'श्रीमती शकुन्तला सिरोठिया : साहित्य साधना के विविध आयाम', डॉ. कृष्ण कुमार, (2004), 'कन्हैयालाल मत्त की साहित्य साधना के विविध आयाम', डॉ. जगदीप यादव, (2006 प्रकाशित), 'हिन्दी बालसाहित्य के विकास में डॉ. राष्ट्रबंधु का योगदान', डॉ. सीमा दुबे, (2008), 'स्वातंत्र्योत्तर हिंदी बालकाव्य में राष्ट्रीय चेतना' (सोहनलाल द्विवेदी, द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी एवं चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक' के विशेष संदर्भ में), डॉ. अनुपम (2010), 'आधुनिक हिन्दी बालकहानी का विवेचनात्मक अध्ययन', डॉ. जाकिर अली 'रजनीश', (2011), सुप्रसिद्ध बालकवि राजनारायण चौधरी एवं रमेशचंद्र पंत की बाल कविताओं पर उषा यादव के निर्देशन में क्रमशः शैलेंद्र चौहान तथा रामकुमार सिंह चौहान ने लघुशोधप्रबंध लिखे हैं। स्वयं उषा यादव के बालसाहित्य पर डॉ. अनुराधा ने 'उषा यादव के बालसाहित्य में बाल मनोविज्ञान' विषय पर काम किया है।

हिंदी बालसाहित्यपरक कुछ महत्वपूर्ण प्रकाशित शोध ग्रंथ एवं उनके प्रकाशन वर्ष इस प्रकार हैं –

1. 'साठोत्तरी हिन्दी बालसाहित्य : डॉ. रोहिताश्व अस्थाना के विशेष संदर्भ में', डॉ. शेषपाल सिंह 'शेष', (2002)

3. 'हिंदी बालसाहित्य के समीक्षा सिद्धान्त', डॉ. नागेश पाण्डेय 'संजय', (2009)
4. 'पं. भूपनारायण दीक्षित का साहित्यिक अनुशीलन', डॉ. कुसुम, (2009)
5. 'हिन्दी बालसाहित्य : डॉ. सुरेंद्र विक्रम का योगदान', डॉ. स्वाति शर्मा, (2012)

उपर्युक्त शोध कार्य के अलावा ऐसी पुस्तकों की एक बड़ी संख्या है, जिनमें हिन्दी बालसाहित्य के विविध पक्षों पर विचार किया गया है। कुछ महत्वपूर्ण नाम इस प्रकार हैं - 'हिन्दी बालसाहित्य की रूपरेखा', डॉ. श्रीप्रसाद (1985), 'आधुनिक हिंदी में बालसाहित्य का विकास', डॉ. विजयलक्ष्मी सिन्हा, (1985), 'हिन्दी बालसाहित्य : परम्परा और प्रयोग', सं. डॉ. ओमप्रकाश सिंहल, (1992), 'बाल साहित्य की अवधारणा', डॉ. श्रीप्रसाद, (1998), 'हिन्दी बालसाहित्य : मेरा चिंतन', डॉ. हरिकृष्ण देवसरे, (2000), 'किशोर साहित्य की संभावनाएँ', सं. देवेन्द्र कुमार 'देवेश', (2001)।

हिंदी बालकवियों पर शोधपरक दृष्टि से लिखी गई दो महत्वपूर्ण पुस्तकों पर चर्चा यहाँ जरूरी है। इसमें पहली है, 'शंभुप्रसाद श्रीवास्तव : व्यक्तित्व और कृतित्व', सं. अविनाश कुमार गुप्ता और महेन्द्रराज मेहता, (1994) तथा दूसरी है चन्द्रपाल सिंह यादव 'मयंक' के व्यक्तित्व-कृतित्व पर आधृत 'यहाँ सुमन बिखेर दो', सं. डॉ. राजकिशोर सिंह तथा डॉ. उषा यादव, (2004) इन दोनों बृहदाकार ग्रंथों में विवेच्य बालसाहित्यकारों की बालसाहित्य साधना का विस्तृत, शोध परक एवं गंभीर विवेचन है। संदर्भग्रंथ के रूप में इन्हें प्रयुक्त किया जा सकता है क्योंकि रचनाओं की प्रकाशन तिथि एवं पत्र-पत्रिकाओं के नामोल्लेख सहित इनमें आलेख लिखे गये हैं। जयप्रकाश भारती के साहित्यिक योगदान पर पुस्तकीय प्रकाशन के साथ-साथ डॉ. राष्ट्रबंधु के व्यक्तित्व-कृतित्व पर भी दो पुस्तकें निकली हैं।

डॉ. विनोदचन्द्र पाण्डेय 'विनोद' के संपादन में प्रकाशित 'हिन्दी बालकाव्यः एक अविराम यात्रा' में चालीस कवियों की कलम से लिखी गई उनकी काव्ययात्रा तथा चुनी हुई कविताएँ संकलित हैं। इन कवियों के नाम हैं - रामसिंहासन सहाय 'मधुर', रामेश्वरदयाल दुबे, रमापति शुक्ल, शकुन्तला सिरोठिया, द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी, निरंकारदेव सेवक, रामस्वरूप दुबे, शिवशंकर मिश्र, सरोजिनी कुलश्रेष्ठ, चंद्रपालसिंह यादव 'मयंक', नारायणलाल परमार, प्रेमनारायण गौड़, शकुन्तला वर्मा, डॉ. श्रीप्रसाद, रामवचनसिंह 'आनंद', विष्णुकांत पाण्डेय, विद्या गुप्ता, डॉ. राष्ट्रबंधु, श्याम सिंह शशि, जयप्रकाश भारती, शोभनाथलाल, प्रसाद 'निष्काम', कौशलेंद्र पाण्डेय, प्रेमचंद गुप्त 'विशाल', चक्रधर नलिन, विनोदचंद्र पाण्डेय 'विनोद', शंकर सुल्तानपुरी, आशाराम त्रिपाठी, रामेंद्र पाण्डेय, सुंदरलाल अरुणेश, आजाद रामपुरी, उद्भ्रान्त, सुमित्रा पाण्डेय, रोहिताश्व अस्थाना, रमाकांत मिश्र 'स्वतंत्र', अजय प्रसून, भगवती प्रसाद द्विवेदी, राधेश्याम कुशवाहा, सुरेंद्र विक्रम एवं अपर्णा गुप्ता।

विनोदचंद्र पाण्डेय 'विनोद' ने 'हिन्दी बालकाव्य के विविध पक्ष' (2012) में हिंदी बालकविता के विकास में आरंभिक युग की बाल-पत्रिकाओं के योगदान को बड़ी बारीकी से रेखांकित किया है। 'शिशु', 'बालसखा', 'खिलौना', 'लल्ला', 'किशोर भारती', 'मनमोहन', 'शिशुबंधु', 'बालजगत', 'बालबंधु' आदि पत्रिकाओं के कालजयी महत्व को इनमें प्रकाशित कविताओं के माध्यम से देखना अत्यंत मनस्वी दृष्टि है।

हिंदी बालसाहित्य में कुछ नया जोड़ने का उपक्रम 'भारतीय बालसाहित्य का इतिहास' (2002) में भी हुआ है, जिसका संपादन जयप्रकाश भारती ने किया है। इस पुस्तक में पंजाबी, उर्दू, मणिपुरी, उड़िया, असमिया, बांग्ला, गुजराती, मराठी, सिंधी, मलयालम, कन्नड़, तमिल, तेलुगु, डोंगरी, कोंकणी, राजस्थानी एवं भोजपुरी भाषा के बालसाहित्य की चर्चा है। बालसाहित्य को लेकर लिखी जाने वाली भारतीजी की अन्य चर्चित पुस्तकें हैं - 'बालसाहित्य : इक्कीसवीं सदी में', 'कम्प्यूटर क्रांति और बालक' तथा 'बाल पत्रकारिता : स्वर्णयुग की ओर'।

राष्ट्रीय बालभवन, नई दिल्ली द्वारा डॉ. मधु पंत के संपादन में बाल साहित्य के लेखकों, संपादकों, प्रकाशकों और पाठकों द्वारा किये गये चिंतन की एक पूरी पुस्तक-श्रृंखला ही प्रकाशित हुई है - 'त्रिविधा' (1994), 'त्रिदिशा' (1996), 'त्रिपदा' (1997), 'त्रिपथगा' (1998), 'त्रिवेणी' (2000), 'त्रिसंग और त्रिसंध्या' (2004), 'त्रिवर्णा और त्रिसाम्या' (2006)। लीक से हटकर एक नया काम डॉ. शकुन्तला कालरा द्वारा संपादित 'हिंदी बालसाहित्यविमर्श' (2010) है, जो तीस बालसाहित्यकारों के साक्षात्कार पर आधृत है। शकुन्तलाजी के संपादन में दो अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथ भी प्रकाशित हुए हैं, 'डॉ. राष्ट्रबंधु का बाल साहित्य : एक मूल्यांकन' (2009) तथा 'दर्शन सिंह आशट और उनका बालसाहित्य' (2012)।

प्रकाश मनु के 'बाल कविता का इतिहास' में पहली बार हिंदी बाल कविता को एक बड़ा कैनवास मिला है। आचार्य शुक्ल जैसी निष्पक्ष और ईमानदार दृष्टि ही इतिहास-लेखन का सबसे महत्वपूर्ण घटक है। मनुजी अपनी इस परीक्षा में काफी हद तक सफल रहे हैं। वर्ष 2013 में प्रकाशित हिन्दी बालसाहित्य और बाल विमर्श (सं. राजकिशोर सिंह और उषा यादव) में हिंदी बालसाहित्य की विविध विधाओं के विवेचन के साथ बालश्रम, बाल अधिकार, बालिका विमर्श जैसे नये विषयों का भी सन्निवेश है।

कुछ महत्वपूर्ण कविता-संकलन -- सन् 1980 के बाद हिंदी बालकविता में जो महत्वपूर्ण संकलन आये, वे इस प्रकार हैं - 'हिंदी के श्रेष्ठ बालगीत', सं. नवीन

रश्मि (1980), 'हिंदी के श्रेष्ठ बालगीत', सं. जयप्रकाश भारती (1987), 'चुने हुए बालगीत' (दो भाग) सं. रोहिताश्व अस्थाना (1993), 'प्रतिनिधि बालगीत', सं. डॉ. श्रीप्रसाद (1995), 'प्यारे-प्यारे गीत', सं. डॉ. पृथ्वीनाथ पाण्डेय (1996), 'महके सारी गली गली' सं. निरंकारदेव सेवक व कृष्ण कुमार, (1996), '100 श्रेष्ठ बालगीत' सं. चेतन दुबे 'अनिल' (1996), 'न्यारे गीत हमारे', सं. नागेश पाण्डेय 'संजय' (1998), 'देशभक्ति गीत' सं. मनोहर वर्मा (2001), 'देश हमारा' सं. डॉ. प्रतीक मिश्र (2004), 'ईचक दाना बीचक दाना' सं. डॉ. अजय जनमेजय (2005), 'उमंग', सं. डॉ. इंद्रदेव त्रिवेदी (2006), 'देशप्रेम के बालगीत', सं. घमण्डीलाल अग्रवाल (2008), 'गीतमाला' भाग 1-2 सं. डॉ. दर्शन सिंह आशट। कृष्ण शलभ संपादित 'चीं..... चीं...... चिड़िया' (2000) चिड़िया पर केंद्रित 26 बाल कविताओं का संकलन है। अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', सोहनलाल द्विवेदी, महादेवी वर्मा और हरिवंशराय 'बच्चन' जैसे मंजे हुए कवियों के साथ सुरेश विमल और नरेंद्र मस्ताना जैसे नये कवियों का पुस्तक में होना सचमुच बहुत सुहाता है, पर चिड़िया पर आधृत और बच्चों की जुबान पर चढ़े हुए एक अत्यंत लोकप्रिय शिशुगीत की अनुपस्थिति खटकती है -

चिड़िया रानी आओ ना!
अपने गीत सुनाओ ना!
मैं तो खाती हलवा-पूड़ी,
तुम भी आकर खाओ ना!

हिंदी के बालकविता संकलनों की भीड़ में ज़ाकिर अली रजनीश द्वारा संपादित '151 बाल कविताएँ' (2003) ग्रीष्म के प्रचण्ड ताप के मध्य शीतल हवा का एक झोंका है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि इस संकलन में पहली बार किसी संपादक ने परिवर्तित परिवेश में बदलती बालमन की विविध छवियों को एक विशिष्ट चित्रपटी देने की कोशिश की है। अपने इस प्रयास में संपादक को पूरी सफलता भी मिली है। एक ऐसा ही सफल प्रयास कृष्ण शलभ का 'बचपन एक समन्दर' (2009) है, जिसमें 666 बाल कविताओं को एक ही जिल्द के भीतर समाहित कर संपादक ने उन लोगों की आंखें खोली हैं, जो हिन्दी बाल कविता की विफलता का राग अलापते हैं। पुस्तक के साथ एक सारगर्भित लंबी भूमिका भी है, जो संपादक के हिन्दी बाल कविता से गहरे परिचय को दर्शाती है। इसी क्रम में नेशनल बुक ट्रस्ट, दिल्ली द्वारा लाई गई 'लोरियां' (2011) की चर्चा जरूरी है। इस महत्वपूर्ण संपादन कार्य के प्रयोजन को एन.बी.टी. के शब्दों में ही सुना जाये, "लोरियां धीरे-धीरे पुरानी पीढ़ी के साथ

ही लुप्त होती जा रही हैं और हो सकता है कि निकट भविष्य में लोरियां हमेशा-हमेशा के लिए खो जायें। इसी चिंता को लेकर नेशनल बुक ट्रस्ट ने लोरियों की एक पुस्तक प्रकाशित करने का निर्णय लिया।" (दो शब्द) पुस्तक में कुछ पारम्परिक लोरियां हैं और कुछ साहित्यकारों द्वारा रची गई लोरियां भी हैं। कुल संख्या पचास है। इस पुस्तक ने लोरियों के प्रति हिन्दी बाल कविता को एक बार फिर समुत्सुक बनाया है।

बालकाव्य संकलन की दृष्टि से तीन अन्य महत्वपूर्ण पुस्तकें हैं - 'नाच मेरी गुड़िया', 'आओ मिलकर गायें' तथा 'उगता सूरज खिलती कलियां'। यह संकलन केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा और भारतीय भाषा संस्थान मैसूर के संयुक्त तत्वावधान में 12 जनवरी से 28 जनवरी 1994 तक चलने वाली 'शिशु-बालगीत कार्यशाला' में रचे गये गीतों के हैं। इस कार्यशाला में द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी, शकुन्तला सिरोठिया, चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक' और डॉ. राष्ट्रबंधु जैसे शीर्षस्थ बालकवियों के साथ अनेक नवोदित बालकवियों ने एक मंच पर बैठकर कविताएँ रची थीं। संकलन वर्ष 1998 में छपे। चूंकि यह कार्यशाला में होने वाला सामूहिक काम था, इसलिए रचनाकारों के नाम अलग-अलग नहीं दिये गये हैं। तीन से चार वर्ष, पांच से छः वर्ष और सात से आठ वर्ष की आयु वर्ग के बच्चों की रुचियां, जिज्ञासाएं व ग्राह्यक्षमता का इन संकलनों में विशेष ध्यान रखा गया है।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि वर्ष 1982 से 2012 के बीच हिन्दी बालकविता ने विकास के नये रास्ते तलाशे हैं और नव्यता-बोध के साथ आगे बढ़ी है। सूचना प्रौद्योगिकी और तकनीक ने भी उसे अग्रसर करने में विशेष सहयोग दिया है। इंटरनेट पर बाल पत्रिकाएं पढ़ी जाती हैं। अनेक ऐसे ब्लॉग हैं, जो बालसाहित्य के संवर्द्धन की दिशा में संलग्न हैं। जाकिरअली 'रजनीश', हेमंत कुमार, कृष्ण कुमार यादव और आकांक्षा यादव इस क्षेत्र में जाने-माने नाम हैं।

अद्यतन युग के हिन्दी बाल कवियों की श्रृंखला शुरू करने से पहले मैं **महादेवी वर्मा** के नाम का विशेष श्रद्धा और सम्मान के साथ उल्लेख करना चाहूंगी। काल-क्रम से महादेवी जी को स्वतंत्रतापूर्व युग में ही रखना चाहिए, पर उनकी बालकविताएं बाद में ही समीक्षकों की दृष्टि-तले आईं। इसीलिए सेवकजी ने स्वातंत्र्योत्तर काल के बाल कवियों में महादेवी वर्मा को परिगणित नहीं किया था। छायावाद युग के आधार स्तम्भों में से एक महादेवी वर्मा को अपने मध्य पाकर निश्चय ही हिंदी बाल कविता धन्य हुई है। रहस्यवाद-छायावाद की अप्रतिम हस्ताक्षर होने के साथ-साथ वह

24.03.1907 को फरूखाबाद, उत्तर प्रदेश में हुआ था। निधन 11.09.1987 को प्रयाग में हुआ। ज्ञानपीठ पुरस्कार से समादृत हुईं। इनका कालजयी लेखन समूची हिंदी बालकविता को गौरवान्वित करने में सक्षम है। इनके बालकाव्य संकलन हैं, 'मां के ठाकुरजी भोले हैं' तथा 'आज जगाएंगे हम ज्वाला।' यहाँ प्रस्तुत है इनका एक बालगीत 'बया हमारी चिड़िया रानी' -

बया हमारी चिड़िया रानी!
तिनके लाकर महल बनाती / ऊंची डाली पर लटकाती,
खेतों से फिर दाना लाती / नदियों से भर लाती पानी।
तुझको दूर न जाने देंगे / दानों से आंगन भर देंगे,
और हौज में भर देंगे हम / मीठा-मीठा ठंडा पानी।
फिर अंडे सेयेगी तू जब / निकलेंगे नन्हे बच्चे तब,
हम आकर बारी-बारी से / कर लेंगे उनकी निगरानी।
फिर जब उनके पर निकलेंगे / उड़ जाएंगे बया बनेंगे,
हम तब तेरे पास रहेंगे / तू मत रोना चिड़िया रानी।

अद्यतन युग के अन्य बालकवियों में मानवती आर्य्या तथा यतीन्द्रनाथ राही भी पुरानी पीढ़ी के साहित्यकार हैं। दरअसल रचनाकार को समय-सीमा में नहीं बांधा जा सकता। एक ही कवि को स्वतंत्रतापूर्व, स्वातंत्र्योत्तर और अद्यतन युग में कविता रचते हुए देखना अत्यंत सुखद भी होता है। उदाहरण के लिए रामेश्वरदयाल दुबे (1911-2010) ने तीनों कालखंड में बाल कविताएं लिखी है। तदपि नामोल्लेख एक स्थान पर ही मिलेगा। अद्यतन युग के बालकवियों का एक सम्यक विवेचन इस प्रकार है -

मानवती आर्य्या -- इनका जन्म 30.10.1920 को मैक्टीला, म्यामा (वर्मा) में हुआ था। शिक्षा एम.ए. (अंग्रेजी) बी.टी.। 'बालदर्शन' बाल मासिक की प्रधान संपादक रहीं। अध्यापन से सेवानिवृत्त हुईं। काकादेव, कानपुर में रहीं और वहीं 2010 में निधन हो गया है। इनकी एक बालकविता 'बेचारा छोटू' यहाँ प्रस्तुत है -

छोटू अपनी मां का प्यारा / किंतु गरीबी का है मारा।
सुंदर और सलोना छोटू / कहलाता नसीब का खोटू।
दुर्घटना में बाप मरा जब / अनपढ़ मां असहाय हुई तब।
रो-रोकर बीमार हुई वह / निर्धन थी लाचार हुई वह।

छोटू ने तब पढ़ना छोड़ा / सुख-सपनों से भी मुख मोड़ा।
बेचारा होटल में जाकर / लगा कमाने बनकर चाकर।
भूल गया वह बचपन का सुख / जीवन में छाया दुख ही दुख।
बड़े सवेरे वह उठता है / दिनभर बेचारा खटता है।
डांट-मार भी वह सहता है / नहीं किसी से कुछ कहता है।
खाना पाता जो बच जाता / काफी रात गये घर आता।
मां को कुछ खाने को देता / तब जाकर है वह दम लेता।
बड़े सबेरे फिर जायेगा / दिन भर घर न आ पायेगा।

यतीन्द्रनाथ राही -- इनका जन्म 31 दिसम्बर 1926 को भारौल, जिला मैनपुरी, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा एम.ए., बी.एड्.। मध्य प्रदेश शिक्षा विभाग में कार्यरत रहे। बच्चों व बड़ों के लिए काव्य विधा में लेखन। अखिल भारतीय भाषा साहित्य सम्मेलन, भोपाल से सरस्वती सम्मान सहित अनेक पुरस्कार-सम्मानों से विभूषित। दुबई के प्राथमिक पाठ्यक्रम में बाल कविताएं चयनित। 'तितली, बादल, मोर, कबूतर' बालकविता संकलन है। इनकी 'हम सब भाई-भाई' बालकविता यहाँ प्रस्तुत है -

हिंदू मुस्लिम जैन पारसी सिक्ख और ईसाई
सब धर्मों का एक पिता है हम सब भाई-भाई।
चलें मिलाकर कदम लक्ष्य हम नये-नये खोजेंगे
नई रोशनी के वातायन मिल-जुल कर खोलेंगे
तोड़ें नफरत की दीवारें, पाटें दिल में पड़ी दरारें
घोल न पाये जहर दूध में कहीं कोई अन्यायी।
रूप अनेक किंतु भीतर से एक आदमी हम हैं
सबके भीतर एक प्यार है सबके सुख-दुख सम है
एक हमारी पावन संस्कृति जिसके हम अनुयायी।
सुंदर और असुंदर सारे पुष्प एक डाली के
झरी पंखुरियों वाले भी तो आभूषण डाली के
हम सबका सम्मान करें सबमें जागृति गान भरें
इतिहासों के नये पृष्ठ पर हो अपनी अगुआई।

सीताराम गुप्त -- इनका जन्म 31.01.1927 को ग्राम गज़रौला, मुरादाबाद उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा इंटरमीडिएट तक हुई। केंद्र सरकार के श्रम मंत्रालय के कर्मचारी

के रूप में कार्यरत रहे। साप्ताहिक हिंदुस्तान, धर्मयुग, पराग तथा अन्यान्य पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन हुआ। प्रकाशित बालकाव्य कृतियां हैं - 'नाच मयूरी छम छम छम', 'शिशु भारती', 'तभी बनेगा देश महान', 'वीरों तुम्हें प्रणाम', 'पहियों वाला घर।' वर्ष 2003 में राजस्थान साहित्य अकादमी का अमृत सम्मान प्राप्त हुआ। 'लड़की मौसम की' कविता यहाँ प्रस्तुत है -

खिले कमल-सी जिसकी सूरत / आंखें शबनम की,
आई फ्रॉक पहन कुहरे की / लड़की मौसम की।
है बर्फीली चाल, हवा से / सांठ-गांठ इसकी,
बड़ी कटखनी, काट गई तो / नस-नस तक कसकी।
पीट सांकलें दे जाती हर / दरवाजे धमकी।
तिल बुग्गे, रेवड़ी, गजक की / है शौकीन बड़ी,
चट कर जाती मेवा, काजू / किशमिश खड़ी-खड़ी।
सर्दी इसका नाम, लाडली / सारे आलम की।

लालबहादुर सिंह चौहान -- इनका जन्म 25.10.1929 को ग्राम बमानी, जिला आगरा उत्तर प्रदेश में हुआ। चिकित्सा-जगत की शैक्षिक उपाधियाँ प्राप्त करके फिजीशियन व सर्जन हैं। साहित्य-क्षेत्र में भी बच्चों व बड़ों के लिए विविध विधाओं में लेखन किया है। पद्मश्री सम्मान से अलंकृत हैं। इनका बालकाव्य संकलन है, 'झरोखा बचपन का।' उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ से 'विज्ञान भूषण सम्मान' से विभूषित हो चुके हैं। इनकी बालकविता 'अपना बचपन' का एक अंश यहाँ प्रस्तुत है -

ज्येष्ठ सुत मैं घर में जन्मा / मनोहर और सलोना था
पिता की आशा-अभिलाषा / जननि का प्रथम खिलौना था।
मुझे मां देख-देख जीती / था उसकी आंखों का तारा
न करती थी क्षण भर को दूर / उसे था प्राणों से प्यारा।

संतकुमार टण्डन 'रसिक' -- इनका जन्म सन् 1930 में इलाहाबाद में हुआ था। एम.ए., एल.टी. तक शिक्षा प्राप्त की और टेलीफोन विभाग में हिन्दी अधिकारी रहे। सन् 1954 से लिखना प्रारम्भ किया और बच्चों के लिए रुचिपूर्वक लेखन किया। इनकी बालोपयोगी कविताएं नंदन, धर्मयुग, बालक, मेला, बालभारती आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। 'गाओ गुनगुनाओ' तथा 'गीत हमारे कंठ तुम्हारे' शीर्षक दो संकलनों का संपादन भी किया। इनका एक बालगीत है -

मथुरा के चौबेजी आये, मीठे-मीठे पेड़े लाये
सिर पर मोटी लंबी चुटिया, एक हाथ में झोला-लुटिया
ता-ता थेई थेई रास रचैया, लगे नाचने देखो भइया
घर आंगन गोकुल वृंदावन, झूम उठा गोपालों का मन
भोजन को बैठे दम साधे, बोले श्रीहरि राधे राधे
पूरी और कचौरी अनगिन, लड्डू खा गये किलो, न आधे!

डॉ. श्रीप्रसाद -- बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार डॉ. श्रीप्रसाद ने बच्चों के लिए कविता, कहानी, उपन्यास आदि विधाओं में रचनाएं ही नहीं लिखीं, समीक्षा क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य किया। इनका जन्म आगरा जिले के पारना ग्राम में वर्ष 1932 में हुआ था। इन्होंने हिन्दी में एम.ए. किया और बालसाहित्य पर शोधकार्य करके पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। सन् 1950 से इन्होंने बच्चों के लिए लिखना आरंभ किया और आजीवन एक समर्पित बाल साहित्यकार बने रहे। सम्पूर्णानन्द संस्कृत वि. वि. वाराणसी में प्राध्यापक रहे। इनकी बालोपयोगी रचनाएं हिन्दी की सभी बाल पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहीं। उनके प्रमुख बालकाव्य संकलन हैं - 'चिड़ियाघर की सैर', 'साथी मेरा घोड़ा', 'फूलों के गीत', 'ताक धिना धिन', 'झिलमिल तारें', 'खेलो और गाओ', 'खिड़की से सूरज', 'आ री कोयल', 'गुड़िया की शादी', 'आंगन के फूल', 'भारत गीत', 'गीत बचपन के'। 'मेरा साथी घोड़ा' केन्द्रीय सरकार द्वारा पुरस्कृत हुई। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ से बालसाहित्य हेतु दिये जाने वाले सर्वोच्च सम्मान 'बालसाहित्यभारती' से समादृत भी हुए। इनका निधन 12.10.2012 को हो गया। इनकी एक बालकविता 'हल्लम हल्लम हाथी' यहाँ प्रस्तुत है -

हल्लम-हल्लम हौदा, हाथी चल्लम-चल्लम
हम बैठे हाथी पर हाथी हल्लम-हल्लम।
लंबी-लंबी सूंड़ फटा-फट फट्टर-फट्टर
लंबे-लंबे दांत खटा-खट खट्टर-खट्टर।
भारी-भारी सूंड़ मटकता झम्मम-झम्मम
पर्वत जैसी देह थुलथुली थल्लम-थल्लम।
हल्लर-हल्लर देह हिले जब हाथी चल्लम
खम्भे जैसे पांव धमाधम धम्मम-धम्मम।
हाथी जैसी नहीं सवारी अग्गड़-बग्गड़
पीलवान पुच्छन बैठा है बांधे पग्गड़।

गोपीचंद श्रीनागर -- इनका जन्म 17.03.1934 को कानपुर उ.प्र. में हुआ था। झांसी में 27.08.2008 को निधन हो गया। इनके प्रमुख प्रकाशित बालगीत संग्रह हैं, 'चुनमुन', 'रुनझुन', 'गीतों से हम सीखें ज्ञान', 'नन्हे गीत', 'सुंदर और सजीले गीत', 'नन्हे नन्हे फूल'। इनका एक बालगीत 'खटपट-खटपट' का अंश यहाँ प्रस्तुत है -

कोयल दीदी / खाकर गाती / मीठे-मीठे आम रे!
गिल्लो रानी / कुटकुट खाती / बैठी ले बादाम रे!
गौरेया जी / बैठ डाल पर / करती हैं आराम रे!
सूरज दादा / लौट चले हैं / ढल जाती जब शाम रे!

जयजयराम आनंद -- इनका जन्म 01.04.1934 को लायकपुर, पो. परौंखा, जिला मैनपुरी, उत्तर प्रदेश में हुआ। विभिन्न शैक्षणिक एवं प्रशासनिक पदों पर कार्यरत रहे। शिक्षा एवं साहित्य से जुड़ी अनेक पुस्तकों का लेखन। 'बालहंस', 'देवपुत्र', 'वन्या' आदि पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन। इनकी बालकाव्य की प्रकाशित पुस्तके हैं- 'चांद सितारों में आनंद' (शिशुगीत संकलन), 'धूल भरे हीरे आनंद' (बालगीत संकलन) तथा 'माटी धरे महावर चंदन' (किशोरगीत संकलन), 'बचपन' शीर्षक एक बालगीत का अंश यहाँ प्रस्तुत है -

जीवन की आधारशिला है / सचमुच में बचपन
बचपन कोरे कागज जैसा / जो चाहे लिख दो
रंग बिरंगी कूंची लेकर / उजले रंग भर दो
मां के हाथों की थपकी है / लोरी है बचपन
निर्मल निर्झर-सा है बचपन / थकना ना जाने
पंख लगाकर आसमान में / उड़ने की ठाने
झिलमिल चांद सितारों जैसा / मोहक है बचपन।

डॉ. राष्ट्रबन्धु -- इनका पूरा नाम श्रीकृष्णचन्द्र तिवारी है। इनका जन्म सन् 1934 में सहारनुपर में हुआ था। इन्होंने एम.ए., बी.टी. तक शिक्षा प्राप्त की और मध्य प्रदेश में अध्यापक हो गये। वहीं रहकर बालसाहित्य पर शोधकार्य करके सागर वि.वि. से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। बाद में नौकरी छोड़कर अपने घर कानपुर चले आये और एक प्रेस लगाकर 'बालसाहित्य समीक्षा' पत्रिका का सम्पादन शुरू कर दिया। यह पत्रिका आज भी निकल रही है। उसमें डा. विभु, चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक', स्वर्ण सहोदर, निरंकारदेव सेवक, सोहनलाल द्विवेदी, लल्ली प्रसाद पाण्डेय,

विनोदचंद्र पाण्डेय और शकुन्तला सिरोठिया पर विशेषांक निकाले गये। अब भी नवोदित चर्चित साहित्यकारों पर विशेषांक निकल रहे हैं। अपने पिताजी की स्मृति में प्रतिवर्ष एक बाल साहित्यकार को सम्मानित कर पांच सौ रुपये की भेंट देने से प्रारंभ किया गया इनका पावन अनुष्ठान अब ग्यारह सौ रुपये की राशि हो चुका है। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ से बालसाहित्य भारती सम्मान से समादृत होने के साथ-साथ अन्य अनेक सम्मान-पुरस्कार अर्जित किये हैं। इनके बालगीत संकलन हैं - 'बाल भूषण', 'कंतक थैंया घुनूं मनैया', 'राष्ट्रप्रेम के गीत', 'नाचो गाओ', 'टेसूजी की भारत यात्रा' आदि। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'हंसी के बालगीत' तथा 'वीणा के गीत' का संपादन भी किया है। इनका एक बालगीत है -

कंतक थैया घुनू मनइयां, चंदा भागा पइयां पइयां
यह चंदा हलवाहा है, नीले-नीले खेत में
बिल्कुल सेंत मेंत में, रत्नों भरे खेत में
किधर भागता लइयां पइयां, कंतक थैया घुनू मनइयां।
मिट्टी के महलों के राजा, ताली तेरी बढ़िया बाजा
छोटा-छोटा छोकरा, सिर पर रखे टोकरा, राम बनाये डोकरा
बने डोकरा करूं बलइयां, कंतक थैया घुनू मनइयां।

मधु भारतीय -- इनका जन्म सन् 1934 में चंदौसी, जिला मुरादाबाद में हुआ था। इनका वास्तविक नाम सरस्वती वार्ष्णेय है। एम.ए., साहित्यरत्न तक शिक्षा प्राप्त की। सन् 1957 से 1961 तक चंदौसी के एक स्कूल में अध्यापिका रहीं, फिर दिल्ली के एक सरकारी स्कूल में अध्यापन किया। बच्चों और बड़ों के लिए लेखन किया। इनके प्रकाशित बालगीत संकलन हैं - 'गुड़िया का ब्याह', 'गीतों की फुलवारी', 'आओ मिलकर गायें गीत', 'मेरा देश महान', 'गीतों की रंगोली', 'शिशुओं के मनभाए गीत', 'गाने वाले फूल।' इनकी एक बालकविता है -

गुड़िया गुड़िया क्या लेगी तू, मैं तो लूंगी राजसिंहासन।
राजसिंहासन सबसे प्यारा, वह सबकी आंखों का तारा
राजसिंहासन मिल जाने पर दूंगी घूम-घूम कर भाषण।
देश-विदेश खूब घूमूंगी, मस्ती में भरकर घूमूंगी।
लोग अगर चीं चपड़ करेंगे, कम कर दूंगी उनका राशन।
इस पर भी जो होगा हल्ला, मांगेंगे घर कपड़ा गल्ला
अमन चैन की खातिर उनको तुरत सजा दूंगी निष्कासन।

बाबूलाल शर्मा 'प्रेम' -- इनका जन्म 01.05.1935 को नवादा, अलादादपुर, हरदोई, उत्तर प्रदेश में हुआ। सेवानिवृत्ति के उपरांत स्वतंत्र लेखन में संलग्न हैं। प्रकाशित बाल कविता संकलन हैं - 'बचपन के गीत', 'आंचल के फूल', 'याद के बादल' तथा 'मेरे गीत'। यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बालकविता 'सुंदर चिड़िया' -

रंग बिरंगी सुंदर चिड़िया / लगती है तू कितनी बढ़िया,
इस डाली से उस डाली पर / चहक रही है फुदक-फुदक कर।
उड़कर जाती दूर गगन में / कभी उतर आती आंगन में,
दाना चुगती, पास न आती / दूर-दूर से मन बहलाती।
कैसा भी हो कोई मौसम / गीत खुशी के गाती हरदम,
झुरमुट में घोंसला बनाती / ढूँढ-ढूँढ वन के फल खाती।
मगन काम में अपने रहती / वर्षा शीत घाम है सहती,
बच्चों को तू प्यारी लगती / किरणों से पहले है जगती।
तुझसे सीखेंगे हम गाना / बड़ी भोर जल्दी जग जाना,
हरदम गुनगुन करते रहना / चुप रहकर सारे दुख सहना।

बलजीत सिंह -- इनका जन्म 10.06.1935 को ग्राम चांदनेर, गाजियाबाद में हुआ। शिक्षा एम.ए., पी-एच.डी. (अंग्रेजी), वर्धमान कालेज बिजनौर (उ.प्र.) से अंग्रेजी के विभागाध्यक्ष पद से सेवानिवृत्त। गीत, ग़ज़ल, दोहे, व्यंग्य एवं बालकविता के क्षेत्र में साहित्य सृजन किया है। इनके बालगीत संग्रह हैं, 'हम बगिया के फूल', 'गाओ गीत सुनाओ गीत', 'छुट्टी के दिन बड़े सुहाने' तथा 'दिन बचपन के।' इनकी एक बाल कविता 'जुर्माना भरना होगा' यहाँ प्रस्तुत है -

चूहा पहुंच गया बाजार / वहाँ खरीदी मारूति कार।
कार मिली थी सस्ते में / मिला सिपाही रस्ते में।
बोला, मुझको भी बिठला / मारूति लेकर मत इठला।
बता कहाँ से लाया है? / क्यों इतना घबराया है?
चोरी कर ले आया है / इसीलिए घबराया है।
अब थाने चलना होगा / जुर्माना भरना होगा।

रत्नप्रकाश 'शील' -- इनका जन्म सन् 1935 में बुलंदशहर उत्तर प्रदेश में हुआ था। बी.ए. आनर्स तक शिक्षा प्राप्त की। लेखन में विद्यार्थी जीवन से ही रुचि थी।

फिर 'नंदन' पत्रिका के संपादन से जुड़े। इन्हें शैक्षणिक रेडियो कार्यक्रम के अन्तर्गत आलेख 'जलचक्र' पर एक अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार मिला। 'कहावतों के गीत' उनका प्रकाशित बालकाव्य संकलन है। इनकी बालकविताएँ मनमोहन, मिलिन्द, बालभारती, धर्मयुग आदि में प्रकाशित होती रहीं। इनकी एक बालकविता 'सोन चिरैया' यहाँ प्रस्तुत है -

सोन चिरैया आ जा, आ जा, खा जा हप्पा
फिर गाएंगे दोनों मिलकर, लारा लप्पा!
तू उड़ना, मैं बैठ परों पर जाऊंगा
धरती के बारे में तुझे बताऊंगा
दोनों देखेंगे दुनिया का चप्पा-चप्पा!
तू छोटी मैं बड़ा, नहीं कुछ इससे होता
बड़ी नदी बन ही जाता, छोटा-सा सोता
सब हैं एक बराबर कहते मेरे बप्पा!
मगर बात यह नहीं समझ में मेरे आती
'छोटे' पर अम्मा क्यों ज्यादा प्यार जताती
मैं जिद करता तो मिलता, बदले में धप्पा!

बालस्वरूप राही --- इनका जन्म सन् 1936 में तिमारपुर, दिल्ली में हुआ था। वहीं उन्होंने हिन्दी में एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में सहसंपादक नियुक्त हो गये। दिल्ली में रहकर स्वतंत्र पत्रकार एवं लेखक रूप में कार्यरत हैं। बच्चों व बड़ों के लिए कविताएं लिखी हैं। इनके बालकाव्य संकलन हैं - 'हम जब बड़े होंगे', 'दादी अम्मा मुझे बताओ' तथा 'सूरज का रथ'। इनकी 'ऊंट' नामक बाल कविता यहाँ प्रस्तुत है -

ऊंट, तुम बड़े ऊंट - पटांग।
गरदन लंबी, पूंछ जरा-सी / आंखें छोटी, दांत बड़े
ऊबड़-खाबड़ पीठ, ऊंघते / रहते अक्सर खड़े-खड़े
बंधी गद्दियां हैं पैरों में / लेकिन झाड़ू जैसी टांग।
सारा हुलिया बेढंगा है / शीशा देखो कभी अगर
लोट-पोट खुद हो जाओगे / होगी अकड़ रफूचक्कर
चाल तुम्हारी ऐसी जैसे / चलता कोई पीकर भांग।

डॉ. शेरजंग गर्ग -- इनका जन्म 1936 में देहरादून में हुआ था। पी-एच.डी. तक शिक्षा प्राप्त की और दिल्ली में निवास करते हैं। बच्चों के लिए विशेष रूप से नर्सरी राइम्स लिखी हैं। प्रकाशित बालकाव्य संकलन हैं - 'अक्षर गीत', 'नटखट गीत', 'गुलाबों की बस्ती', 'शरारत का मौसम', 'पक्षी उड़ते फुर फुर फुर', 'भालू की हड़ताल', 'गीतों के इन्द्रधनुष', 'गीतों के रसगुल्ले', 'यदि पेड़ों पर उगते पैसे', 'तीनों बंदर महाधुरन्धर', 'अटैची में बिस्कुट, अटैची में टॉफी', 'हो हो हंसते मिस्टर जोकर'। इनके दो शिशुगीत यहाँ प्रस्तुत हैं -

(क) कितनी भोली कितनी प्यारी
सब पशुओं में न्यारी गाय
सारा दूध हमें दे देती
आओ इसे पिला दें चाय।

(ख) लड्डू खाते मौजी राम
लड़ने जाते फौजी राम
मौजी को है काम हराम
फौजी को आराम हराम।

पद्मश्री डॉ. श्यामसिंह 'शशि' -- इनका जन्म सन् 1936 में बहादुरपुर जट्ट, जिला सहारनपुर में हुआ था। इन्होंने आगरा विश्वविद्यालय से एम.ए., पी-एच.डी. तक उच्च शिक्षा प्राप्त की। अंग्रेजी, उर्दू, पंजाबी, संस्कृत आदि कई भाषाएं जानते हैं। हिन्दी और अंग्रेजी के लेखक हैं। सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के प्रकाशन विभाग के निदेशक पद से सेवानिवृत्त हुए। जनजातियों के लिए बहुत काम किया है। बच्चों के लिए अनेक पुस्तकें लिखी हैं, जिनमें बालगीत संकलन हैं - 'मैं भी बंदर तू भी बंदर', 'नन्हे सैनिक' तथा 'बच्चे गाते हैं।' इनका एक बालगीत यहाँ प्रस्तुत है-

तू भी बंदर मैं भी बंदर, नाचो साथी मस्त कलंदर।
नानी कहती पूंछ लगी थी, दादी कहती मूंछ लगी थी
मैंने रगड़ा तूने रगड़ा, हुआ सफाया वानर आया
सब बच्चों ने शोर मचाया, एक नया बंदर घबराया।
वह आया था चंद्रलोक से, लाया मिट्टी बांध कोख से
मैं भी बोला तू भी बोला, आ भाई बंदर चंदर बंदर
करें परीक्षण सारे बंदर, मिलकर बोलो जय-जय बंदर।

रमेशचंद्र शाह -- इनका जन्म सन् 1937 में (हिंदी तिथि के अनुसार बैशाख त्रयोदशी संवत 1994) अल्मोड़ा, उत्तराखंड में हुआ। शिक्षा एम.ए. (अंग्रेजी), पी-एच.डी.। कार्यक्षेत्र अध्यापन रहा। बड़ों के लिए कविता, कहानी, उपन्यास, संस्मरण, समीक्षा, साक्षात्कार आदि विधाओं में कार्य किया है। अनुवाद एवं संपादन से भी जुड़े हैं। बच्चों के लिए तीन कविता संग्रह हैं, 'जादू सपना', 'गोलू के मामा', 'हाथी की करतूत'। भारत सरकार द्वारा पद्मश्री, के.के. बिड़ला फाउन्डेशन द्वारा 'व्यास सम्मान', मध्य प्रदेश के संस्कृति विभाग द्वारा 'शिखर सम्मान', मध्य प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा 'महावीर प्रसाद द्विवेदी पुरस्कार'। भारतीय भाषा परिषद कोलकाता तथा मध्यप्रदेश साहित्य परिषद द्वारा भी पुरस्कृत-सम्मानित। 'गोलू के मामा' शीर्षक बालकविता का अंश यहाँ प्रस्तुत है -

गोलू के मामा आए / देख रहे सब मुंह बाए!
मुंह उनका है गुब्बारा / था किसने उन्हें पुकारा,
नारंगी उनको भाए / गोलू के मामा आए।
वे पूरब से हैं आते / गोलू से गप्प लड़ाते,
हौले से उसे सुलाकर / फिर पच्छिम को उड़ जाते
सच बात अगर मैं बोलूं / तो पोल पुरानी खोलूं
सूरज का फटा पजामा / सिलते गोलू के मामा।
पर जाने क्या जादू है / रहते हैं सब पर छाए,
सब देख रहे मुंह बाए / गोलू के मामा आए।

जगदीशचन्द्र शर्मा -- इनका जन्म 29.04.1937 को गिलूंड, जिला समंद, राजस्थान में हुआ। शिक्षा एम.ए., पी-एच.डी. तक प्राप्त की। अध्यापन के अनन्तर प्राचार्य पद से सेवानिवृत्त हुए। बच्चों और बड़ों के लिए पिछले पैंसठ वर्षों से कविता, कहानी, समीक्षा, नाटक आदि विधाओं में लेखन किया है। बच्चों की सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं, यथा - मनमोहन, बालसखा, पराग, नंदन, बालहंस, चकमक, मेला, बालभारती और बालवाटिका में कविताएं छपीं। प्रमुख बालकाव्य अठारह हैं - 'बालगीत', 'चौके-छक्के', 'किरणों की मुस्कान', 'गुनगुनाते झरने', 'मेवाड़-मंजरी', 'पद्य प्रसंग: नेहरू के संग', 'शिशु गीत', 'चलो सुनायें पद्य कथायें', 'ज्योति का जलूस', 'वृक्षों की वंदना', 'पर्यावरण के बालगीत', 'प्रदूषण रोकथाम के गीत', 'पशु भी मनुष्य से बढ़कर', 'अनोखे आभूषण', 'अच्छा पड़ोस बनाएं', 'आजादी का मतवाला', 'ऋतुओं का आनंद', 'पद्य कथाएं।' महामहिम उपराष्ट्रपति शंकरदयाल शर्मा से सम्मानित होने के साथ-साथ अनेक

सम्मान-पुरस्कार प्राप्त। बालकविता के संबंध में इनका विचार है, 'बालकविता अमूर्त आनंद का मूर्त रूप है।' इनकी 'मंहगाई' शीर्षक कविता यहाँ प्रस्तुत है –

तिल जैसी थी जो मंहगाई, बढ़-चढ़कर अब ताड़ हो गई
राई जैसी जो लगती थी, मानो वही पहाड़ हो गई।
सभी कीमतें एक साथ ही, ऊपर उठीं गगन को छूने
दुर्लभ हुईं अनेक वस्तुएं, कितनी ही बन गईं नूमने
जो मामूली-सी ठोकर थी, मानो वही पहाड़ हो गई।
बढ़ी कीमतें जिस तेजी से, ऐसा हमने कभी न सोचा
निर्दयता से मूल्यवृद्धि ने, सब चीजों को बहुत दबोचा
जो हलकी-सी गुर्राहट थी, मानो वही दहाड़ हो गई।
लंबा-चौड़ा जाल बिछाकर, मंहगाई ने सबको लूटा
कोई नहीं बचा है उससे, कोई नहीं उलझकर छूटा
जो छोटी-सी चिनगारी थी, मानो भीषण भाड़ हो गई।

रमेशचन्द्र खरे -- इनका जन्म 19.07.1937 को होशंगाबाद, मध्य प्रदेश में हुआ। शिक्षा एम.ए. (इतिहास, हिन्दी), पी-एच.डी., साहित्यरत्न। संप्रति, सेवानिवृत्ति के बाद स्वतंत्र लेखन में संलग्न हैं। बाल काव्य संकलन हैं – 'आओ सीखें मैदानों में गाते-गाते', 'आओ सीखें शाला में पढ़ते-पढ़ते।' बड़ों के लिए व्यंग्य, समीक्षा एवं काव्य विधा में भी लेखन है। विविध सम्मान एवं पुरस्कारों से समादृह हो चुके हैं। इनकी एक विचारोत्तेजक बाल कविता 'संविधान बच्चों का' का एक अंश यहाँ प्रस्तुत है-

दुनिया के सब बच्चो एक हो जाओ / मिलकर सभी सच्चो एक हो जाओ।
मौलिक अधिकारों को अपने मांगो / अलिखित संविधान का बस्ता टांगो।
मम्मी का, पापा का प्यार चाहिए / सबको पूरा ही आहार चाहिए।
सब भैया-बहनों का नेह चाहिए / अब सहानुभूति का गेह चाहिए।
सभी स्वास्थ्य सुविधाएं हमको मिल सकें / शुल्क रहित शिक्षा-दीक्षाएं फल सकें।
खेलों के, मनोरंजन के अवसर हों / मैदानों के, नाट्यग्रहों के परिसर हों। आदि।

योगेन्द्रकुमार लल्ला -- इनका जन्म सन् 1937 में मवाना जिला मेरठ में हुआ था। पहले 'धर्मयुग' के संपादकीय विभाग में रहे, फिर 'मेला' मासिक के संपादक होकर

प्रतिनिधि एकांकी' तथा 'प्रतिनिधि सामूहिक गान।' 'शिशुगीत' नाम से भी एक संकलन प्रकाशित कराया। इनके बाल कविता संकलन हैं, 'कर दो हड़ताल' व 'तोते जी।' 'मेला' नामक बालकविता यहाँ प्रस्तुत हैं –

आओ मामा आओ मामा / मेला हमें दिखाओ मामा।
सबसे पहले उधर चलेंगे / जिधर घूमते उड़न खटोले
आप जरा कहियेगा उससे / मुझे झुलाये हौले-हौले
अगर गिर गया, फट जाएगा / मेरा नया-निकोर पजामा।
कठपुतली का खेल देखकर / दो धड़ की औरत देखेंगे
सरकस में जब तोप चलेगी / कानों में उंगली रखेंगे
देखेंगे जादू के करतब / तिब्बत से आये हैं लामा।
फिर खाएंगे चाट-पकौड़ी / पानी के चटपटे बताशे
बच जाएंगे फिरभी कितने / दूर-दूर से आए तमाशे
जल्दी अगर न वापस लौटे / मम्मी कर देंगी हंगामा।

राजेन्द्र मिलन -- इनका जन्म सन् 16.11.1937 में आगरा में हुआ था। एम. ए., पी-एच.डी., साहित्यरत्न तक शिक्षा प्राप्त की है। संप्रति, स्वतंत्र लेखन में संलग्न हैं। बच्चों व बड़ों के लिए समान दक्षता से लिखा है। इनका बालकाव्य संकलन 'मेरे नन्हे मित्र तुम' है। यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बाल कविता 'सूरज' –

सुबह-सुबह जब उगता सूरज,
लाल गेंद-सा लगता सूरज।
दो पहरी में थाली जैसा,
चमचम चमका करता सूरज।
लाल टमाटर-सा हो जाता
शाम ढले जब ढलता सूरज।

प्रेमचंद गुप्त 'विशाल' -- इनका जन्म 08.09.1938 को जनपद मथुरा (उ.प्र) में हुआ था। बच्चों व बड़ों के लिए विविध विधाओं में लेखन किया है। वर्ष 1982 से अर्धवार्षिक बालपत्रिका 'लल्लू जगधर' का संपादन कर रहे हैं। शिक्षा बी.काम, विशारद तक प्राप्त की है। 'बाल अगीत' इनका एक ऐसा बालकाव्य संकलन है, जो अनुकांत अगीत विधा पर आधृत है। 'दुनिया सारी गोलमटोल' इनका शिशुगीत संकलन है। 'फुलवारी के फूल' इनका बालकाव्य संकलन है। बाल कहानियों, बाल एकांकियों

के भी संकलन प्रकाशित हैं। लगभग 22 संस्थाओं द्वारा अब तक पुरस्कृत एवं सम्मानित हो चुके हैं। बालसाहित्य के क्षेत्र में इनकी सेवाएं अविस्मरणीय हैं।

राजनारायण चौधरी -- इनका जन्म 03.02.1938 को नरहन स्टेट, समस्तीपुर बिहार में हुआ। शिक्षा बी.ए., हिन्दी विशारद। बिहार सरकार में पणन पदाधिकारी के पद से सेवानिवृत्त होने के बाद स्वतंत्र लेखन में संलग्न हैं। बाल कविता की प्रकाशित कृतियां हैं - 'झूमें नाचें गायें हम', 'दीप हमारे बच्चे सारे', 'पराग' तथा 'अगड़म बगड़म ना-ना-ना'। बच्चों की प्रायः सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन। अनेक साहित्यिक सम्मानों से समादृत। इनकी 'मामाजी' शीर्षक बालकविता यहाँ प्रस्तुत है -

हम सबके हैं मामाजी / लगते जैसे गामाजी!
उनका वजन एक क्विंटल / भैंसे से भी ज्यादा बल।
सुबह-शाम करते आसन / खा जाते हैं आधा मन।
पीते दस लीटर पानी / होती सबको हैरानी।
फटे बांस-सा वह गाते / गदहे भी सुन शरमाते।
झूम-झूम कर जब चलते / उन्हें देखकर सब हंसते।

अनंत कुशवाहा -- इनका जन्म 10.07.1938 को जौनपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा स्नातक, ललित कला में डिप्लोमा। बच्चों के लिए कविता, कहानी, चित्रकथा के क्षेत्र में बहुत काम किया है। राजस्थान पत्रिका की पाक्षिक 'बालहंस' का फरवरी 1986 से अनेक वर्षो तक कुशल संपादन किया। पत्र-पत्रिकाओं में 300 चित्र कथाएं, दो हजार व्यंग्य चित्र, 100 कहानियां, 50 आलेख और 200 कविताएं प्रकाशित। 'ढोलाराम', 'कू-कू', 'कवि आहत' जैसे सशक्त चरित्र बच्चों में बेहद लोकप्रिय रहे। अनेक साहित्यिक पुरस्कारों एवं सम्मानों से भी आप समादृत हुए। यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बालकविता 'तीन तलैया' का अंश देखिए -

अक्का-बक्का तीन तलैया / जो जीते वह मेरा भैया।
दौड़ो, पीपल छूकर आओ / आकर मुझसे हाथ मिलाओ,
आज गुरुजी से जो सीखा / पूरा-पूरा हाल सुनाओ।
बबलू, वसुधा, राम, कन्हैया / अक्का बक्का तीन तलैया।
सूरज लो सिर पर चढ़ आया / चलो वहाँ है ठंडी छाया

गोल गोलाई में बैठो सब / नाचेगी अब नन्ही माया।
छम-छम, छम-छम, ताता-थैया / अक्का बक्का तीन तलैया।

शिवकुमार गोयल --- इनका जन्म 31.10.1938 को पिलखुवा, जिला गाजियाबाद उत्तर प्रदेश में हुआ। भारतीय संस्कृति के अनन्य उपासक हैं। बच्चों के लिए पत्र-पत्रिकाओं में अनेक कविताएं प्रकाशित हुई। पत्रकारिता के क्षेत्र में अनेक सम्मान मिले। एक बालगीत 'छतरी चांद-सितारों की' यहाँ प्रस्तुत है -

हम हैं जिस धरती के बेटे / वह धरती अवतारों की
इस धरती पर तनी हुई है / छतरी चांद-सितारों की।
ऊंचे पर्वत, गहरी नदियां / इनको बीत गई हैं सदियां
सरदी गरमी वर्षा आंधी / हर मौसम की सीमा बांधी
फूलों की खुशबू फैलाती / ताजी हवा बहारों की।
सुबह सबेरे सूरज आता / अंबर स्वर्णिम थाल सजाता
गंगा की यह निर्मल धारा / इसने सबको पार उतारा
हर मौसम खुशियां बिखेरता / ले उमंग त्यौहारों की।

तारादत्त निर्विरोध -- इनका जन्म 14.01.1939 को जयपुर, राजस्थान में हुआ। शिक्षा एम.ए., पी-एच.डी., सरकारी नौकरी से सेवा निवृत्ति के बाद स्वतंत्र लेखन में संलग्न रहे। बच्चों एवं बड़ों के लिए साहित्य की विविध विधाओं में लिखा है। मूलतः गीतकार हैं। रचनाएं हिन्दी एवं राजस्थानी में हैं। बालकाव्य कृतियों की संख्या तीस से अधिक है, जिनमें प्रमुख हैं - 'देश के लिए,' 'अपना देश महान', 'मेरा नाम हिंदुस्तान', 'शिशु गीत', 'पर्यूषण गीत', 'प्रार्थना गीत', 'राजस्थान के स्वतंत्रता सेनानी', 'फूलों की पाठशाला', 'बालभारती जिंदाबाद', 'हाथी बाबा', 'चलो आकाश को छू लें।' राजस्थान सरकार द्वारा वर्ष 1972 एवं 1989 में साहित्यिक सेवाओं के लिए 'मेरिट अवार्ड।' राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा वर्ष 1998 में 'सुधीन्द्र काव्य पुरस्कार' एवं वर्ष 1999 में 'साहित्यकार सम्मान' से सम्मानित। इनका निधन अप्रैल 2013 में हो गया है। इनका एक शिशुगीत 'सोए चादर तान' यहाँ प्रस्तुत है -

भालूजी दौरे पर आए
बने जांच अधिकारी।

जमाखोर बंदर ने की
तब पूरी खातिरदारी।
चौंसठ पूड़ी, पैंसठ लड्डू
एक बार में खाए,
सोये चादर तान -
सातवें दिन तक लौट न पाये।

विनोदचन्द्र पाण्डेय 'विनोद' -- इनका जन्म सन् 1939 में जिला सुल्तानपुर की अमेठी तहसील के पंडरी ग्राम में हुआ था। आपने इलाहाबाद में रहकर उच्चशिक्षा प्राप्त की। एम.ए. (इतिहास) के अनंतर इलाहाबाद विश्वविद्यालय में इतिहास विभाग में अध्यापक रहे। फिर पी.सी.एस. में चयनित होकर विभिन्न प्रशासनिक पदों पर कार्यरत रहे और आई.ए.एस. संवर्ग में पहुंचे। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ में निदेशक पदपर रहकर बालसाहित्य के विकास कार्यों को आगे बढ़ाया। इनका बालकाव्य इस प्रकार है - 'विनोद वाटिका', 'जय स्वदेश', 'कथा जवाहरलाल की', 'आओ गाएं गीत', 'बच्चों के गीत', 'गीत महापुरुषों के', 'भारत की गौरव-गाथा', 'गीत देशप्रेम के', 'बालवाटिका', 'गीत नीति के', 'आओ गाएं खुशियां मनाएं', 'सुनो कहानी गाओ गीत', 'ऋतु-गीत', 'फुलवारी', 'हंसी-खुशी के गीत', 'अमरकथा बापू की', 'बाल सहगान', 'उत्सव गीत', 'स्वतंत्रता के प्रिय सेनानी', 'बाल कवितांजलि', 'बालगीत भारती', 'शिशुगीत', 'ज्ञानज्योति', 'राष्ट्रभारती', 'फलों के गीत', 'कविता की फुलवारी', 'समय-समय के गीत', 'गीत बालकल्याण के', 'गुरुभक्त आरुणि की कथा', 'देशगान', 'नवसाक्षरों के गीत', 'आजादी के गीत', 'उपमन्यु-आरूणि की कथा', 'मास मास के गीत' तथा 'गीत समारोहों के।' इनका एक बालगीत यहाँ प्रस्तुत है -

मेरा घोड़ा बड़ा मजे का चलता सरपट चाल
दिखलता है समय-समय पर अपना खूब कमाल।
कभी नहीं पीछे को हटता आगे रखता पैर
मैं चाहूं तो कर लूं इस पर दुनिया भर की सैर।
भूख सताती कभी न इसको, कभी न लगती प्यास
कोड़ा खाकर भी यह होता बिल्कुल नहीं उदास।
इसे पकड़ सकती न दौड़कर गाड़ी मोटरकार
जा सकता मैं बैठ इसी पर सात समन्दर पार।

चक्रधर 'नलिन' -- इनका जन्म सन् 1939 में ग्राम अटौरा बुजुर्ग, जिला रायबरेली, उत्तर प्रदेश में हुआ था। आपने एम.ए., एल.एल.बी., साहित्यरत्न तक शिक्षा प्राप्त की। रायबरेली में एडवोकेट रहे। इनके प्रमुख बालकाव्य संकलन हैं - 'नन्ही चिड़िया फुदक रही', 'बच्चे देश महान के', 'ग्राम गीत', 'विज्ञान की कविताएं'। इनका एक बालगीत यहाँ प्रस्तुत है -

मेरे सोने के कमरे में मकड़ी क्यों जाला बुनती है?
मेरी मां कमरे में आकर देगी तेरे जाले तोड़
बड़ी खुशी से बना रही घर, अपने मुंह से जाले मोड़।
अपने जाले मिट जाने पर तुम क्यों अपना सिर धुनती हो
अपनी धुन के आगे क्यों तुम मेरी बात नहीं सुनती हो।

रमा तिवारी -- इनका जन्म 21.11.1939 को कोटा, राजस्थान में हुआ। शिक्षा एम.ए. (अंग्रेजी साहित्य), बच्चों के लिए कविता कहानी विधा में लिखा है। प्रकाशित बालकाव्य संग्रह हैं - 'इंद्रधनुष', 'नन्ही फुलझड़ियां', 'हंसो-मुस्कराओ।' इन्हें राजस्थान साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ है तथा भारत सरकार दिल्ली का भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार भी मिला है। यहाँ 'दावत' शीर्षक इनकी बालकविता प्रस्तुत है -

चिड़िया चावल लेकर आई / बिल्ली लाई दूध-मलाई।
चीनी लाए चूहे राजा / और गिलहरी मेवे ताजा।
तोता लेकर आया दोने / खीर पकाई खरगोशों ने।
सारे बैठे भूल अदावत / मिल-जुल खाई सबने दावत।
कोयल ने छेड़ी कव्वाली / बंदर लगा बजाने ताली।
और मोर ने नाच दिखाया / भालूजी ने ढोल बजाया।

डॉ. हरिकृष्ण देवसरे -- इनका जन्म सन् 1940 में नागोद, जिला सतना में हुआ था। रीवां में रहकर उन्होंने हिन्दी एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और बालसाहित्य पर पहला शोधकार्य करके जबलपुर वि.वि. से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। आकाशवाणी की सेवा में भोपाल, गुजरात, दिल्ली आदि में रहे। 'पराग' के संपादक के रूप में अपार ख्याति अर्जित की और नवीन प्रयोगों द्वारा पत्रिका को किशोरोपयोगी बनाया। बालसाहित्य पर सौ से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। बालसाहित्य की समीक्षा के क्षेत्र में शीर्ष पर हैं। अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित किये गये हैं। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ से 'बालसाहित्य भारती' तथा साहित्य अकादमी

दिल्ली से बालसाहित्य लेखन हेतु समादृत किये जा चुके हैं। बच्चों के लिए 'सौ बाल कविताएँ,' 'सौ बालकहानियां' व 'सौ बालनाटकों' के संकलन तैयार करके महत्वपूर्ण कार्य किया है। इन्होंने भारतीय बाल साहित्यकारों की एक परिचय पत्रिका भी अंग्रेजी में निकाली है। बाल उपन्यास, बाल कहानी के सशक्त हस्ताक्षर होने के साथ-साथ एक श्रेष्ठ बालकवि भी हैं। इनके बालकाव्य संकलन हैं - 'सफेद रसगुल्ले', 'गुब्बारे', 'नकलची बंदर' तथा 'पानी के गीत'। इनकी एक बालकविता यहाँ प्रस्तुत है -

कविवर तोंदूराम बुदक्कड़ कभी-कभी आ जाते हैं
खड़ी निरन्तर रहती चोटी, आंखें धंसी मिचमिची छोटी
नाक चायदानी की टोंटी,
अंग-अंग की छटा निराली, भारी तोंद हिलाते हैं।
कंधे पर लाठी बेचारी, लटका उसमें पोथा भारी
लिए हाथ में सुंघनी प्यारी,
सूंघ-सूंघ कर आ छीं, आ छीं का आनंद उठाते हैं।
ये हैं नियमी, धर्म धुरन्धर, गायक गुपचुप, भांड़ उजागर
परम स्वतंत्र, न नौकर-चाकर,
झूम-झूम कर मटक-मटक कर हलुआ पूरी खाते हैं।
कविता का बंध जाता तांता, चप्पल का विवाह ठन जाता
जूता दूल्हा बनकर आता,
बिल्ली रानी पिस्सू राजा की भी जोड़ मिलाते हैं।

शंकर सुल्तानपुरी -- इनका पूरा नाम शंकर दयाल श्रीवास्तव है। इनका जन्म सन् 1940 में परऊपुर, जिला सुल्तानपुर में हुआ था। इन्होंने हिन्दी में एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और लखनऊ रहकर स्वतंत्र लेखन कर रहे हैं। बच्चों के लिए इनकी पहली कविता सन् 1952 में बालसखा में छपी थी। लगभग सौ बालोपयोगी पुस्तकों के रचनाकार हैं, जो कविता, कहानी, नाटक एवं उपन्यास विधा की हैं। प्रमुख कविता संकलन हैं - 'महापुरुषों के गीत', 'हम भारत के वीर सिपाही', 'शिशु गीत' (पांच भाग), 'मुक्ति दूत', 'बनो भरत सम भाई', 'लोकमान्य तिलक', 'झांसी की रानी', 'बाल रामायण', 'बालगीता', 'कृष्ण लीला' आदि। बालगीतों का संकलन करके 'बालगीत' (भाग 1-2) का संपादन भी किया है। बच्चों के लिए पाठ्य पुस्तकें तैयार करने के श्रमसाध्य दायित्व को भी अत्यंत कौशल से निभा रहे हैं। 'नंदन', 'चंपक', 'बाल भारती', 'पराग', 'बालवाणी' में रचनाएं निरन्तर प्रकाशित हुई हैं। कुछ समय तक 'बालवाणी' के कार्यकारी संपादक भी रहे हैं। इनका एक बालगीत यहाँ प्रस्तुत है-

आओ हम सब एक साथ मिल जन गण मंगल दायक गायें
भारतमाता की जय बोलें प्रगति पंथ पर बढ़ते जायें।
भेद-भाव से हमें न मतलब छुआछूत का भेद न जानें
कोई उच्च न कोई हरिजन बंधु भाव ही सबसे मानें।

* * *

आओ हम सब हंसी-खुशी से एक दूसरे के हो जायें
स्वर्ग लोक सा पावन निर्मल अपना भारत देश बनायें।

प्रयाग शुक्ल -- इनका जन्म सन् 1940 में कलकत्ता (वर्तमान कोलकाता) पश्चिम बंगाल, में हुआ था। वहीं रहकर बी.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। 'दिनमान' साप्ताहिक के सम्पादकीय विभाग में कार्यरत रहे। बच्चों के लिए विशेष रूप से बहुत सी कविताएँ लिखीं। इनके प्रमुख बालगीत संकलन हैं - 'आए बादल', 'जंगल में बोला है मोर', 'सरस्वती बालगीत', 'हक्का बक्का' आदि। इनका एक बालगीत है -

धम्मक धम्मक आता हाथी, धम्मक धम्मक जाता हाथी
अपनी सूंड़ उठाता हाथी, अपनी सूंड़ गिराता हाथी
अपने कान हिलाता हाथी, अपनी पूंछ हिलाता हाथी
जब पानी में जाता हाथी, भर-भर सूंड़ नहाता हाथी
कितने केले खाता हाथी, यह तो नहीं बताता हाथी।

सूर्यभानु गुप्त -- इनका जन्म सन् 1940 में नत्थूखेड़ा, बिंदकी, जिला फतेहपुर में हुआ था। आपने बम्बई में इण्टर तक शिक्षा प्राप्त की और वहीं एक इंजीनियरिंग प्रतिष्ठान में कार्यरत रहे। बच्चों के साथ बड़ों के लिए भी कविताएँ लिखीं, जो प्रायः 'धर्मयुग' के बालजगत स्तम्भ में प्रकाशित होती रहीं। इनकी एक बालकविता 'हिप्पी जैसे बादल आए' यहाँ प्रस्तुत है -

लंबे लंबे बाल बढ़ाये, हिप्पी जैसे बादल आए
काले-काले, भूरे-भरे, कवियों से मनमौजी पूरे
मोरपंख की गंजी पहने, इन्द्रधनुष की पैंट चढ़ाए।
साथ हवाओं के हो लेंगे, कई-कई दिन पता न देंगे
और मूड में कई-कई दिन, बने रहेंगे झड़ी लगाए।
बिजली संग नाचें-झूमेंगे, आसमान भर में घूमेंगे
आंधी-पानी वाले झोले, हरदम कंधों से लटकाए।

मधुसूदन साहा -- इनका जन्म 15.07.1940 को गांव धमसाई, संताल परगना, जिला अविभाजित बिहार में हुआ था। भागलपुर विश्वविद्यालय से एम.ए. तथा संबलपुर वि.वि. से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। प्रमुख बालगीत संग्रह हैं - 'तुम इतिहास बदलते रहना', 'कोयल आकर सबसे बोली', 'देखो नाच रहा है मोर', 'लो मौसम की रेल चली' तथा 'ऋषियों का देश चलो देख आयें।' उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ द्वारा सौहार्द सम्मान मिल चुका है। इनके दो शिशुगीत देखिए -

(क) सूरज कहता जागो-जागो
बिस्तर जल्दी त्यागो-त्यागो
सुबह-सुबह पढ़ने जाना है
बस्ता पकड़ो भागो-भागो। (सूरज)

(ख) पड़ी घास पर आकर बूंद
अंबर का फल खाकर बूंद
चकमक-चकमक लगी चमकने
मोती-सा मुख पाकर बूंद। (बूंद)

देवेन्द्र कुमार -- इनका जन्म 10.10.1940 को दिल्ली में हुआ। बच्चों के लिए कविता, कहानी, उपन्यास विधा में महत्वपूर्ण लेखन किया है। इनका रचनाकार व्यक्तित्व लेखक, पत्रकार और अनुवादक की त्रिवेणी है। विश्व साहित्य की 250 से अधिक पुस्तकों के सार-संक्षेप तैयार किये हैं। प्रसिद्ध बालपत्रिका 'नंदन' के संपादक रह चुके हैं। इनके बालगीत संकलन हैं, 'हिन्दी के श्रेष्ठ बालगीत' व 'इक्यावन बालगीत'। इनकी एक बालकविता 'रूप हवा के' यहाँ प्रस्तुत है -

हवा हुई शैतान!
खिड़की-दरवाजे खड़काए, / बेपर कागज खूब उड़ाए,
सारे घर में धूल बिखेरे, / अम्मा है हैरान!
हंसते फूलों को दुलराती, / बादल कहाँ-कहाँ ले जाती,
बांसों से सीटी बजबाए, / कैसी इसकी शान!

शिवमृदुल -- इनका जन्म 13.07.1941 को चित्तौड़गढ़, राजस्थान में हुआ। शिक्षा एम.ए. (अंग्रेजी, अर्थशास्त्र) है। अध्यापकीय सेवानिवृत्ति के उपरांत स्वतंत्र लेखन में संलग्न हैं। प्रकाशित कृतियां 'रानी बिटिया' भाग 1, 2, 3 हैं। 'कविताएं विज्ञान की' (भाग 1-2) तथा 'चिड़िया का जन्मोत्सव' 32 पृष्ठों का एक खंडकाव्य है। बालकविता

के विषय में आपका मंतव्य है, “बालक के मन की मौज-मस्ती को प्रकट करने वाली पंक्तियों का नाम है बालकविता।” यहाँ प्रस्तुत है इनकी बालकविता 'हमें खेलने जाने दो' -

मम्मी-पापा रोको मत / बाहर जाते टोको मत
उम्र खेलने जाने की / दूध-दही, घी खाने की
खाया-पिया पचाने दो / हमें खेलने जाने दो।
अभी न पढ़ना आता है / खूब खेलना आता है।
बस्ता अभी न उठता है / कमरे में दम घुटता है
खुली हवा में जाने दो / लारी-लप्पा गाने दो।
कच्ची उम्र हमारी है / बस्ता कितना भारी है
नाहक बोझ बढ़ाते हो / हमको क्यों दहलाते हो
कुछ तो ताकत आने दो / हमें खेलने जाने दो।

डॉ. मुरारीलाल सारस्वत -- इनका जन्म सन् 1941 में ग्राम सरौठ, मथुरा (उ.प्र.) में हुआ। शिक्षा एम.एस.सी., पी-एच.डी. तक प्राप्त की। सरकारी सेवा, प्रधान वैज्ञानिक (प्रोफेसर) पद से सेवा निवृत्त होने के बाद बरेली में रहकर स्वतंत्र लेखन में संलग्न हैं। बच्चों एवं बड़ों के लिए मुख्यतः काव्य विधा में लेखन किया है। प्रकाशित बालकाव्य संग्रह है, 'गाते-गाते पाओ ज्ञान', 'पंचतंत्र-पारिजात'। अनेक सम्मान-पुरस्कार भी प्राप्त हुए हैं। इनकी एक बालकविता 'नाचे मोर' का अंश यहाँ प्रस्तुत है -

वर्षा ऋतु में गरज-गरज कर / जब बादल करते हैं शोर
सुनकर और देखकर उनको / दीवाना हो नाचे मोर।
कहते हैं जब मोर नाचते / तब उनके आंसू झरते हैं
अपने पैर कुरुप देखकर / लगता वे आहें भरते हैं।

अश्वघोष -- इनका जन्म 20 जुलाई 1941 को ग्राम रन्हेरा, जिला बुलंदशहर, उत्तर प्रदेश में हुआ। मूल नाम ओमप्रकाश शर्मा है, पर साहित्य जगत में अश्वघोष नाम से ही चर्चित हैं। शिक्षा एम.ए., पी-एच.डी., कार्यक्षेत्र अध्यापन रहा। नंदन, बालभारती, बालवाटिका, बालहंस, बालवाणी, जनसत्ता, हिन्दुस्तान आदि पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का नियमित प्रकाशन हुआ। अभी तक सात बालकाव्य संकलन प्रकाशित हो चुके हैं - 'डुमक-डुमक-डुम', 'तीन तिलंगे', 'राजा हाथी', 'बाइस्कोप निराला', 'ताक

धिना धिन्', 'सोनचिरैया के क्या कहने' तथा 'मेरे इक्यावन बालगीत।' उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ से 'डुमक-डुमक-डुम' पर अनुशंसा पुरस्कार सहित अन्य अनेक पुरस्कार-सम्मान प्राप्त। इनकी दृष्टि में 'बाल अनुभूतियों, बाल क्रियाकलापों तथा बाल रुचियों की सहज काव्यात्मक अभिव्यक्ति ही बालकविता है।' बाल मनोरंजन के साथ-साथ बालक को उत्तम सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों एवं सुरुचियों के प्रति उत्प्रेरित करना ही आपने बाल कविता का उद्‌देश्य माना है। अश्वघोष की कविताओं में बालक के समकालीन जीवन को बड़े निकट से देखा गया है, 'समय नहीं है' में इसकी झांकी देखिए -

नानी, नानी! कहो कहानी
समय नहीं है बोली नानी
फिर मैंने पापा को परखा,
बोले, समय नहीं है बरखा!
भैया पर भी समय नहीं था,
उनका मन भी और कहीं था,
मम्मीजी भी लेटीं-लेटीं
बोलीं, समय नहीं है बेटी
मम्मी, पापा, नानी, भैया
दिन भर करते ता-ता-थैया
मेरी समझ नहीं आता है
इनका समय कहाँ जाता है?

पद्‌मा चौगांवकर -- इनका जन्म सन् 1942 में शाजापुर मध्यप्रदेश में हुआ था। हिन्दी में एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। मातृ भाषा मराठी है। शासकीय महाविद्यालय गुना (म.प्र.) में प्राध्यापन किया। बच्चों के लिए हिंदी में कविता-कहानी आदि विधाओं में लेखन किया है। मराठी से हिन्दी में अनुवाद भी किये हैं। विविध पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित हुई हैं। 'पराग', 'बालहंस', 'चंपक', 'सुमन-सौरभ', 'मेला', 'नंदन', 'बालभारती', 'देवपुत्र' आदि पत्र-पत्रिकाएं मुख्य हैं। शीघ्र प्रकाश्य बाल कविता संकलन है, 'आ री चिड़िया' इनका कथन है। "मैं अपनी रचनाओं के द्वारा बच्चों को अच्छे-बुरे की पहचान की सहज सीख देती हूँ, उन पर कुछ थोपना नहीं चाहिए।" यहाँ प्रस्तुत है इनका एक बालगीत -

ऐसे ही सबके जीवन में तुम भी खुशबू भरना।
जैसे सूरज एक अकेला हरता है जग का अंधियाला
ऐसे ही सारे जग में तुम दीप ज्योति के धरना।
जैसे चिड़िया छोटी-सी भी अपनी मेहनत पर जीती
वैसे ही तुम भी जीवन में मेहनत से मत डरना।

निर्मला सिंह -- इनका जन्म 09.03.1943 को बरेली उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षाः एम.ए., एल.टी.। बालकाव्य की दो पुस्तके हैं - '21 बालगीत (भाग 1)', 'बालगीत (भाग 2)'। बच्चों के लिए कहानियां भी लिखी हैं। अनेक सम्मान-पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। चिड़िया पर इनका एक बालगीत देखिए -

चिड़िया आई, चिड़िया आई
चीं-चीं करती चिड़िया आई।
कभी धरा तो कभी गगन में,
सूने वन में, हरे चमन में,
कभी छतों पर कभी मुंडेरे,
कभी सबेरे, कभी अंधेरे,
झूम-झूम मस्ताती आई।

भगवतीप्रसाद गौतम -- इनका जन्म 28.09.1943 को मोखमपुरा, जिला बारां (राज.) में हुआ। शिक्षा एम.ए. (चित्रकला), बी.एड.। पहले प्रधानाचार्य रहे, तदुपरांत जिला शिक्षाधिकारी के पद से सेवानिवृत्ति हुई। बहुआयामी लेखन-प्रतिभा कवि, गीत-गज़लकार, कहानीकार, व्यंग्यकार एवं बालसाहित्यकार आदि रूपों में प्रकट हुई है। प्रकाशित बालगीत साहित्य है - 'इल्ली-दुल्ली-तिल्ली', 'गाते रंग-बिरंगें पंछी', 'गीत शान से गाओ', 'कभी न हारे सपने', 'हम बच्चे हिम्मत वाले' तथा 'श्यामल परी और अन्य पद्यकथाएं'। पत्र-पत्रिकाओं में बहुतायत से रचनाओं का प्रकाशन हुआ है। राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा 'गीत शान से गाओ' पुरस्कृत। इनकी दृष्टि में, "बालकविता बालमन में रागात्मकता के संचार का सहज, सरल एवं सरस माध्यम है।" 'नल राजा' बालगीत यहाँ प्रस्तुत है -

बजा दिया बस्ती का बाजा
रूठ गये फिर क्यों नल राजा?
मनमरजी से आते-जाते

बर्तन-भांडों को धमकाते
कब लौटोगे अब तुम वापस
नहीं किसी को कुछ अंदाजा।
चाय-चबेना लिया न अब तक
ब्रश-मंजन भी किया न अब तक
दो बूंदों की आस लगाये
बाट जोहता हर दरवाजा।
अब समझे जीवन है जल ही
मुश्किल तुम बिन कटना पल ही
नाम तुम्हारा रटते-रटते
दादाजी भी करें तकाजा।

प्रेमकिशोर 'पटाखा' -- इनका जन्म 27.10.1943 को अलीगढ़, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा साहित्यरत्न। संप्रति, स्वतंत्र लेखन। प्रकाशित बालकाव्य संकलन है – 'बाल तरंग गीतमाला', 'बाल उमंग गीतमाला', 'नन्हे-मुन्ने गीत (दो भाग)', 'गीतों के गुब्बारे (दो भाग)', 'आओ बच्चो गाओ बच्चो', 'खट्टे-मीठे गीत रसीले (दो भाग)', 'हाथी घोड़ा पालकी', 'सूरज की शैतानी', 'नन्ही सरगम गाएं', 'गीत खिलौने', 'सच्चे बोल अच्छे बोल' आदि। यहाँ प्रस्तुत है इनकी बाल कविता 'फुलझड़ियां' –

बैठा तार सितार पर / मच्छर गाता गीत,
टांग तार से लड़ गई / साथ बजा संगीत।
कान उठे ऊपर तने / तुरत भर गया जोश,
उठी ऊंट की पीठ तब / जब बैठा खरगोश।
टेलीविजन पर दिखलाए / गुच्छे अंगूरों के,
देख लोमड़ी खाने लपकी / भालू उसको रोके।
'यह सच्चे अंगूर नहीं हैं / है झूठा आकर्षण,
भेंट अरे दूरदर्शन की है। करो दूर से दर्शन।'

राजेन्द्र निशेश -- इनका जन्म 24.12.1944 को झेलम (अब पाकिस्तान) में हुआ। शिक्षा बी.ए.। व्यंग्य, कविता एवं बालगीत इनके लेखन की मुख्य विधाएं हैं। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रचुर प्रकाशन हुआ है। एक बालगीत संकलन 'नया सवेरा आया है' प्रकाशित हो चुका है। यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बालकविता 'भर-भर लाते पानी' –

झूम-झूम कर चिड़िया नाची / नभ से बरसा पानी।
छाता लेकर जाना बच्चो / कहती सबको नानी।
धमा-चौकड़ी मचा रहे वे / करते सब मनमानी।
पंचम सुर में गाती कोयल / हवा हुई मस्तानी।
शहर-गांव सब को नहलाती / बरखा है तूफानी।
गरज-गरज कर बादल कड़के / भर-भर लाते पानी।

कृष्ण शलभ -- इनका जन्म 18.07.1945 को नकुड़, सहारनपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा इंटरमीडिएट, साहित्यरत्न। संप्रति, सेवानिवृति के बाद स्वतंत्र लेखन। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का नियमित प्रकाशन! कविता, गीत, लोकसाहित्य, समीक्षा और बालसाहित्य आपके लेखन की दिशाएं हैं। प्रकाशित बालगीत संग्रह हैं - 'ओ मेरी मछली', 'टिली-लिली झर', 'सूरज की चिट्ठी', 'इक्यावन बालकविताएं'। 'चीं चीं चिड़िया' तथा 'बचपन एक समन्दर' बालकाव्य की संपादित कृतियां हैं। उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ से बालसाहित्य का सर्वोच्च पुरस्कार 'बालसाहित्य भारती' तथा हिन्दी अकादमी, दिल्ली का बालसाहित्य सम्मान सहित अन्य अनेक सम्मान पुरस्कार प्राप्त। इनकी दृष्टि में, "वस्तुतः बालकविता है ही एक जीवंत बच्चा, जो कभी चुलबुला, कभी हठीला, कभी प्रश्नातुर-जिज्ञासु दिखाई देता है। हर बार एक अलग रंग, हर बार एक नई छवि।" इनकी 'छुट्टी नहीं मनाते' कविता यहाँ प्रस्तुत है -

सूरज जी, तुम इतनी जल्दी क्यों आ जाते हो!
लगता तुमको नींद न आती
और न कोई काम तुम्हें,
जरा नहीं भाता क्या मेरा
बिस्तर पर आराम तुम्हें!
खुद तो जल्दी उठते ही हो, मुझे उठाते हो!
कब सोते हो, कब उठते हो
कहाँ नहाते-धोते हो,
तुम तैयार बताओ हमको
कैसे झटपट होते हो!
लाते नहीं टिफिन, क्या खाना खाकर आते हो?
रविवार ऑफिस बंद रहता
मंगल को बाजार भी,

कभी-कभी छुट्टी कर लेता
पापा का अखबार भी।
ये क्या बात, तुम्हीं बस छुट्टी नहीं मनाते हो!

बानो सरताज -- इनका जन्म 17.07.1945 को पांढर-कवड़ा जिला यवतमाल (महाराष्ट्र) में हुआ। शिक्षा एम.ए. (हिन्दी, उर्दू, इतिहास), एम.एड., पी-एच.डी. है। महिला शिक्षण-शास्त्र महाविद्यालय, चंद्रपुर (महाराष्ट्र) से प्राचार्या पद से अवकाश प्राप्त। हिन्दी, मराठी और उर्दू में समान अधिकार है। बालकाव्य संग्रह है, 'मुर्गे मियां की कुक्डूं-कूं'। पुस्तक की शीर्षक कविता यहाँ प्रस्तुत है -

है जानी पहचानी सबकी
मुर्गे मियां की कुक्डूं-कूं।
दादी अम्मा को है प्यारी
पापा-मम्मी उस पर वारी
नाम खुदा का लेने कहती
मुर्गे मियां की कुक्डूं-कूं।
रात गई अब सोने वाली
दिन की अब बहती है चांदी
काम से लगने को उकसाती
मुर्गे मियां की कुक्डूं-कूं।

शशि गोयल -- इनका जन्म वर्ष 1945 में मथुरा, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा एम.ए., पी-एच.डी.। बच्चों के लिए कविता-कहानी विधा में पुस्तकें हैं। बालकाव्य संग्रह हैं - 'चंदामामा लटके', 'सूरज को भी लगती सर्दी' तथा 'नानी गाना गाएं।' बालगीत के संबंध में इनका अभिमत है, "बालगीत में जीवन गुनगुनाता है।" 'दुल्हन बनी बंदरिया' शीर्षक बालगीत यहाँ प्रस्तुत है -

नदी किनारे पड़ी पोटली / बंदरिया ले आई
देखी उसमें लहंगा चोली / नाची ता-ता थाई
लहंगा पहना ओढ़ चुनरिया / टिकुली मांग सजाई
बंदर के आगे जा पहुंची / चुपके से शरमाई
बंदर खो-खो करता भागा / कौन बला यह आई
फेंके कपड़े, रुठी लेटी / बंदरिया खिसआई।

रमेश थानवी -- इनका जन्म 01.08.1945 को उत्तर पश्चिमी राजस्थान के कस्बे फलोदी जिला जोधपुर में हुआ। शिक्षा पहले अनेक गांवों में, फिर जयपुर व जोधपुर में हुई। जोधपुर विश्वविद्यालय से दर्शन शास्त्र में एम.ए. करने के बाद दिल्ली में भारतीय ज्ञानपीठ में पुस्तक संपादन एवं पुरस्कार चयन प्रक्रिया का काम किया। तदनन्तर राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति के तत्वावधान में प्रौढ़-शिक्षा के राज्य संदर्भ केंद्र की स्थापना की। बीस वर्ष तक इस केंद्र के संस्थापक-निदेशक रहे। समकालीन शिक्षा चिंतन की मासिक पत्रिका 'अनौपचारिका' के संपादन भार से जनवरी 2013 में सेवानिवृत्त हुए हैं। बच्चों एवं किशोरों के लिए मौलिक व अनूदित साहित्य लिखा है। बाल काव्य की पुस्तकें हैं - 'दौड़ा-दौड़ा मन का घोड़ा', 'गुन गुन गुन' तथा 'भोर भई'। इनकी एक बालकविता 'पापा गये जलेबी लेने' यहाँ प्रस्तुत है -

पापा गये जलेबी लेने
नहीं जलेबी लाये
मिली नहीं थी गरम जलेबी
खाली हाथों आये
एक बहाना और लगाया
भीड़ पड़ी थी भारी
बहुत देर में नंबर आया
बिकी जलेबी सारी
एक बात जो नहीं बताई
वह थी मोटी मंहगाई
कैसे आये गरम जलेबी
जब छाई हो तंगाई
यही वजह थी मेरे पापा
खाली हाथों आये
गये थे लेने गरम जलेबी
नहीं जलेबी लाये।

आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप' -- इनका जन्म 05.08.1945 को ग्राम रानेपुर, सुलतानपुर उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.ए., बी.एड्., साहित्यरत्न। अनेक साहित्यिक विधाओं में लेखन। बालकाव्य की पुस्तकें हैं - 'काले मेघा पानी दे', 'भारत माता', 'ओ मातृभूमि मेरी', 'मेरा देश सलोना है।' उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ से

कृतित्व पर जायसी सम्मान, रामनरेश त्रिपाठी सम्मान तथा जयशंकर प्रसाद सर्जना सम्मान प्राप्त। इनकी बालकविता 'काले मेघा पानी दे' का एक अंश यहाँ प्रस्तुत है-

जागे धरती, बरसो राम / खेत-खेत में होवे काम
ऊसर बंजर हरे-भरे हों / अपनी आज निशानी दे।
मेढक दौड़े रेत में / पानी बरसे खेत में
उठे धुआं-सी फसल सुहानी / ऐसी घड़ी सुहानी दे।
काले मेघा पानी दे।

अनन्तप्रसाद 'रामभरोसे' -- इनका जन्म 01.12.1945 को ग्राम समरपाली, जनपद बलिया, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा एम.ए. (रसायन विज्ञान, समाजशास्त्र) तक हुई। श्री मुरली मनोहर टाउन इंटर कालेज, बलिया के रसायन विज्ञान के प्रवक्ता पद से अवकाश ग्रहण कर चुके हैं। बच्चों के लिए एक लंबे अरसे से लिख रहे हैं। अनेक समाचार पत्रों के बाल स्तम्भ सहित बालहंस, बालभारती, झिलमिल जुगनू, देवपुत्र, बालवाटिका, बालवाणी, बच्चों का देश आदि पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन हुआ है। कविता- कहानी लेखन की मुख्य विधाएं हैं। हिन्दी के साथ ही भोजपुरी में भी लेखन किया है। अनेक साहित्यिक पुरस्कार सम्मानों से समादृत हैं। इनके बालकविता संकलन हैं - 'काना बाती कुर्र' तथा 'मेरी इक्यावन बाल कविताएं।' इनकी 'खटर-पटर मत कर' बालकविता यहाँ प्रस्तुत है -

खटर-पटर मत कर री चुहिया! / खटर-पटर मत कर!
तेरी खटर-पटर से मम्मी / हो जाती है तंग
फिर भी बाज न आती हो तुम / करने से हुड़दंग
क्यों शैतानी दिखलाती हो / तुम मेरे ही घर!
कुटुर-कुटुर खा जाती हो सब / गेहूं, चावल, दाल
और कुतरकर कपड़े सारे / करती हो बेहाल
बिल्ली मौसी का भी तुमको / जरा नहीं है डर!

राजा चौरसिया -- इनका जन्म 10.04.1945 को उमरियापान, जबलपुर, मध्य प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.ए., बी.एड.। संप्रति, स्वतंत्र लेखन। प्रकाशित बालकाव्य संग्रह हैं, 'रसभरे गीत', 'प्यारे गीत तुम्हारे।' विभिन्न संस्थाओं द्वारा आप पुरस्कृत एवं सम्मानित हुए हैं। यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बालकविता 'कितनी अच्छी बात है'-

मन में गुस्सा कभी न आए / कितनी अच्छी बात है,

फूलों जैसा मन मुस्काए / कितनी अच्छी बात है।
गुस्से की मर जाए नानी / या हो जाए पानी-पानी
बात पेट में ही पच जाए / कितनी अच्छी बात है
बनता काम बिगड़ जाता है / क्रोधी सबसे लड़ जाता है
मुखड़ा सदा हंसी झलकाए / कितनी अच्छी बात है।
हेलमेल से हरदम रहना / बात पते की है ये कहना
सबको खुश करना आ जाए / कितनी अच्छी बात है।

राजेश जोशी -- इनका जन्म 18.07.1946 को हुआ। शिक्षा एम.एस.सी.। प्रकाशित बाल कविता संग्रह है, 'गेंद निराली मीठू की।' मुक्तिबोध पुरस्कार, माखनलाल चतुर्वेदी पुरस्कार, शमशेर सम्मान आदि से समादृत। यहाँ प्रस्तुत है इनकी बाल कविता 'पानी बरसा' -

आए बादल, बादल आए
पानी जेबों में भर लाए।
इतने सारे ताल-तलैया
दैया-दैया, दैया-दैया।
कहो, कहाँ से तुम भर लाए
जेबों में भी कहीं ठहरता पानी बुद्धू
बादल के पापा चिल्लाए।
जेब उलट दी उसने झटपट
पानी बरसा, टप-टप, टप-टप
बादल के पापा मुस्काए।

हूँदराज बलवाणी -- इनका जन्म 09.01.1946 को लरकाना-सिंध (अब पाकिस्तान) में हुआ। शिक्षा- एम.ए., पी-एच.डी. (बालसाहित्य पर), बी.एड., पत्रकारिता में डिप्लोमा। हिंदी, सिंधी और गुजराती, तीनों भाषाओं के बालसाहित्य के संवर्द्धन में प्रचुर योगदान दिया है। तीनों भाषाओं में कुल मिलाकर 100 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। पांच पुस्तकों पर गुजरात साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला है। साहित्य अकादमी, दिल्ली से सिंधी बालसाहित्य हेतु राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हैं। इनकी एक बालकविता 'बस्ता इतना भारी क्यों?' का अंश यहाँ प्रस्तुत है -

बस्ते में हैं ढेर किताबें / पढ़नी इतनी सारी क्यों?
पेन, कापियां और किताबें / कितनी चीजें तुम्हें गिनाएँ
खाने की भी चीज चाहिए / कैसे इसमें उसे समाएं?
धोबी के गधे-सी गठरी / कैसे हो गई हालत खस्ता
गिरते-गिरते, मरते-मरते / नाप रहे स्कूल का रस्ता।

रमेश तैलंग -- इनका जन्म 02.06.1946 को टीकमगढ़, मध्य प्रदेश में हुआ। शिक्षा-एम.ए. (हिन्दी एवं समाजशास्त्र) साप्ताहिक हिन्दुस्तान, पराग, नंदन, बालभारती, सुमनसौरभ, बालवाटिका तथा दैनिक समाचारपत्रों के साप्ताहिक परिशिष्ट में रचनाओं का प्रकाशन। आपके प्रमुख बालकाव्य संकलन हैं - 'उड़न खटोले आ', 'एक चपाती', 'कनेर के फूल', 'इक्यावन बालगीत', 'टिन्नीजी ओ टिन्नीजी', 'लड्डू मोतीचूर के' तथा 'मेरे प्रिय बालगीत' 'एक चपाती' तथा 'कनेर के फूल' हिन्दी अकादमी, दिल्ली द्वारा पुरस्कृत हैं। सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार के 'भारतेंदु हरिश्चंद पुरस्कार' से भी सम्मानित। संप्रति, स्वतंत्र लेखन तथा मल्टीमीडिया विज्ञापन एजेंसी से संबद्ध। आपकी 'अम्मा की रसोई में' शीर्षक बालकविता यहाँ प्रस्तुत है -

हल्दी दहके, धनिया महके / अम्मा की रसोई में
आन विराजे हैं पंचायत में / राई और जीरा
पता चले न यहाँ किसी को / राजा कौन फकीरा
सिंहासन हैं ऊंचे सबके / अम्मा की रसोई में
आटा-बेसन, चकला-बेलन / घूम रहे हैं बतियाते
राम रसोई बने प्यार से / ही अच्छी ये समझाते
रूखी-सूखी से रस टपके / अम्मा की रसोई में
थाली, कड़छी और कटोरी / को सूझी है मस्ती
छेड़ रही हैं गर्म तवे को / दूर-दूर हंसती-हंसती
दिखलाती हैं लटके-झटके / अम्मा की रसोई में।

दिविक रमेश -- दिविक रमेश (वास्तविक नाम रमेश शर्मा) का जन्म 06.02.1946 (वास्तविक 28.08.1946) को गांव किराड़ी, दिल्ली में हुआ। दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर पद से सेवानिवृत्त हुए। हिंदी की सभी प्रमुख बालपत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन। बच्चों के लिए कविता, कहानी, नाटक, संस्मरण आदि विधाओं में लगभग पैंतीस पुस्तकों का प्रकाशन। बालगीत संकलन हैं - 'अगर पेड़ भी चलते होते', 'खुशी

लुटाते हैं त्योहार', 'मेघ हंसेंगे और जोर से', 'मधुर गीत 3 एवं 4', 'हंसे जानवर हो हो हो', 'छतरी से गपशप', 'कबूतरों की रेल', 'अगर खेलता हाथी होली', 'तस्वीर और मुन्ना', 'जोकर मुझे बना दो जी', 'खूब जोर से आई बारिश', 'एक सौ एक बालकविताएँ।' अनूदित बालगीत संकलन है – 'कोरियाई बाल कविताएं।' बालसाहित्य से सम्बद्ध अनेक पुरस्कार-सम्मान में से कुछ हैं – वर्ष 1988 में 'हंसे जानवर हो हो हो' पर एन.सी.ई.आर.टी. राष्ट्रीय पुरस्कार। वर्ष 1990 में दिल्ली हिंदी अकादमी द्वारा 'कबूतरों की रेल' पर बाल साहित्य पुरस्कार। बालकन जी बारी अंतर्राष्ट्रीय संस्था द्वारा 1991 में राष्ट्रीय नेहरू बालसाहित्य अवार्ड। समग्र अनुवाद परिषद नई दिल्ली द्वारा वर्ष 2009 में द्विवागीश पुरस्कार, भारतीय अनुवाद। आपका कथन है, "बच्चों के लिए भी मैं जो कविताएं लिखता हूँ, वे किसी विषय पर नहीं होतीं, बल्कि अनुभवजन्य होती हैं और बहुत हद तक रहस्यमय भीतरी दबाव के तहत ही।" 'घर' शीर्षक बालकविता यहाँ प्रस्तुत है –

पापा क्यों हमको लगता है
अपना प्यारा-प्यारा घर।
घूम-घाम लें, खेल-खाल लें
नहीं भूलता अपना घर।
नहीं आपको लगता पापा
है माँ की गोदी-सा घर
प्यारी-प्यारी ममता वाला
सुंदर-सुंदर न्यारा घर।
थक कर जब वापस आते हैं
कैसे बिछ-बिछ जाता घर
खिला-पिला आराम दिलाकर
नई ताजगी देता घर।
पर पापा इक बात बताओ
नहीं न होता सबका घर
क्या करते होंगे वे बच्चे
जिनके पास नहीं है घर?

शकुन्तला कालरा -- इनका जन्म 11 सिम्बर 1946 को बक्सर (पश्चिमी पाकिस्तान) में हुआ। शिक्षा– एम.ए., एम.लिट., पी-एच.डी., डी.लिट., ज्योतिष प्रवीण, ज्योतिष

विशारद। मैत्रेयी कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय के रीडर पद से सेवानिवृत्ति। मौलिक व संपादित पुस्तकों की कुल संख्या 27 है, जो विविध विधाओं से संबंधित हैं। पांच बाल कविता संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, 'करें तमाशा प्यारी मुनिया', 'फुलवारी', 'हंसते-महकते फूल', 'जय-जय भारत प्यारा' तथा 'ममता की छांव में।' बालसाहित्यकारों के साक्षात्कार पर आधृत 'हिन्दी बालसाहित्य विमर्श' इस विधा का पहला बृहदाकार ग्रंथ है। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का निरंतर प्रकाशन हुआ है। भारत-ऐशियाई साहित्य अकादमी से बालसाहित्यकार सम्मान (2006), हिंदी अकादमी दिल्ली सरकार द्वारा सम्मान (2008) एवं अंतर्राष्ट्रीय संस्था बालकन जी बारी द्वारी सम्मान प्राप्ति के साथ-साथ अन्य अनेक सम्मानों से समादृत हैं। बालकविता के विषय में आपका मंतव्य है, "गहन संवेदना का कोई क्षण होता है, जब स्वाति बूंद की तरह कविता हृदय में ढुलक जाती है।" 'झूले पलना मेरी गुड़िया' शीर्षक मनभावन लोरी यहाँ प्रस्तुत है –

झूले पलना मेरी गुड़िया
आकर इसे सुला री निंदिया।
गोरे मुख पर काली अलकें
थकी-थकी सी भारी पलकें
चुपके से आ जा री निंदिया
आकर इसे सुला री निंदिया।
धरती सोई नभ भी सोया
जाने किन सपनों में खोया
इसको स्वप्न दिखा री निंदिया
आकर इसे सुला री निंदिया।
ठुमक-ठुमक कर चलें हवाएँ
मीठी-मीठी लोरी गाएँ
तू भी संग में गा री निंदिया
आकर इसे सुला री निंदिया।

परशुराम शुक्ल -- इनका जन्म 06.06.1947 को कानपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.ए., पी-एच.डी.। संप्रति, सेवानिवृत्ति के बाद स्वतंत्र लेखन। भारत का राष्ट्रीय वृक्ष और राज्यों के राज्य वृक्ष, राष्ट्रीय पुष्प और राज्यों के राज्य पुष्प सहित 60 से अधिक पुस्तकें और 6000 से अधिक स्फुट रचनाएं प्रकाशित। हिंदी बाल कविता संकलन हैं – 'कामना', 'एकता की शक्ति', 'बालवंदन', 'तितली', 'उठो सवेरे',

'छुक-छुक रेल', 'आओ गुनगुनाओ', 'पुरस्कृत बालगीत (तीन खंड)', 'मोटूराम', 'राष्ट्रीय पुष्प और राज्य पुष्प', 'राष्ट्रीय वृक्ष और राज्य वृक्ष', 'राष्ट्रीय पशु और राज्य पशु', 'राष्ट्रीय पक्षी और राज्य पक्षी', 'मंगल ग्रह जाएंगे', 'आओ बच्चो गाओ बच्चो', 'चारों खाने चित्त', 'तिरंगा', 'हमारे प्राकृतिक प्रतीक', 'कलरव', 'नंदनवन', 'सूरज पाना है', 'मेरा रोबो बड़ा निराला', 'चिड़िया नीड़ बनाती', 'विजय पर्व' और 'बाल सतसई।' समाज कल्याण मंत्रालय एवं वन मंत्रालय, हिंदी अकादमी हैदराबाद सहित अन्य संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत-सम्मानित। यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बालकविता 'मुन्ना पापा होता'-

बैठा मुन्ना सोच रहा था / अगर कहीं कुछ ऐसा होता।
पापा-मम्मी बच्चे होते / मुन्ना उनका पापा होता।
रोज उठाता पौने छै पर/ ठंडे पानी से नहलाता।
दांत किटकते जब सर्दी से / तब मन ही मन वह मुस्काता।
बस्ता देकर भारी-भरकम / उन्हें मदरसे वह पहुंचाता।
घर वापस जब दोनों आते / बिना वजह ही डांट लगाता।
खेल-कूद की छुट्टी करता / होमवर्क दिन भर करवाता।
अगर कभी वे लड़ते-भिड़ते / तो डंडे से मार लगाता।
घर का काम करो तुम दोनों / कहकर रोज घूमने जाता।
उस पर रौब जमाते जैसे / वह भी उन पर रौब जमाता।

अनवारे इस्लाम -- इनका जन्म 01.10.1947 को सागर (मध्य प्रदेश) में हुआ। शिक्षा- स्नातक। संप्रति, स्वतंत्र लेखन। प्रकाशित बालगीत संग्रह हैं - 'चकई के चकदुम', 'सारी दुनिया दंग', 'बादल आये पानी लाये', 'झाईं-झाईं झप।' मध्यप्रदेश साहित्य परिषद से पं. रविशंकर शुक्ल सम्मान प्राप्त हुआ है। यहाँ प्रस्तुत है इनकी बालकविता 'म्याऊं म्याऊं छम' -

दाल भात रोटी / बिल्ली बड़ी मोटी
चौके में बैठी / बांध के लंगोटी
म्याऊं म्याऊं छम / सब कुछ हज़म!
कुर्सी के पीछे / टेबिल के नीचे
पंजे से बिल्ली / चुहिया को खींचे
म्याऊं म्याऊं छम / चुहिया हज़म!
खा-पीके बिल्ली / पहुंच गई दिल्ली
भूल गई रस्ता / खूब उड़ी खिल्ली
म्याऊं म्याऊं छम / कुछ नहीं गम!

उषा यादव -- इनका जन्म 02.04.1948 को कानपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.ए. (हिन्दी, इतिहास) पी-एच.डी., डी.लिट्.। आगरा वि.वि. से प्रोफेसर पद से सेवानिवृत्ति के बाद स्वतंत्र लेखन में संलग्न हैं। बच्चों एवं बड़ों के लिए विविध विधाओं में कुल मिलाकर 65 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। बच्चों के लिए कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, जीवनी आदि विधाओं में तीन दर्जन से अधिक पुस्तकें हैं। बालसाहित्य पर समीक्षात्मक लेख भी प्रचुर मात्रा में लिखे हैं। प्रकाशित बालकविता संग्रह हैं, 'राधा का सपना', 'भारी बस्ता', 'इक्यावन बाल कविताएं', 'काले मेघा पानी दे', 'गुड़ियों का संसार' तथा 'खेल-खिलौनों का संसार।' सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं, यथा 'पराग', 'नंदन', 'बाल भारती', 'स्नेह', 'सुमन सौरभ', 'बालहंस', 'बालवाणी', 'बालवाटिका' आदि में रचनाओं का प्रकाशन हुआ है। उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ द्वारा दिया जाने वाला बालसाहित्य का सर्वोच्च पुरस्कार 'बाल साहित्य भारती', मध्य प्रदेश हिंदी साहित्य अकादमी का 'अखिल भारतीय वीरसिंह देव पुरस्कार', सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार दिल्ली का 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार' (प्रथम) सहित अन्य बहुत से पुरस्कार-सम्मान से समादृत हैं। अनेक बाल रचनाओं का प्रकाशन असमिया, उड़िया, मणिपुरी, पंजाबी आदि अन्य भारतीय भाषाओं में हो चुका है। यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बाल कविता 'पिकनिक का प्रोग्राम' -

सब बच्चे पिकनिक पर जाते / देख-देख कर हम ललचाते
अपने घर सारा दिन चलता / काम, काम, काम
आज बना ही डालो मम्मी / पिकनिक का प्रोग्राम।
पापाजी जरूर टालेंगे / ढेरों काम गिना डालेंगे
बस रविवार एक वे सौंपे / हम बच्चों के नाम।
पिकनिक की सारी तैयारी / होगी मेरी जिम्मेदारी
भइया से कुछ मत कहना / वह महाआलसी राम।
ज्यादा झंझट तुम मत करना / बस आलू-पूरी ही धरना
थरमस में संग चाय रहेगी / तो होगा आराम।

भैरूँलाल गर्ग -- इनका जन्म 01.01.1949 को सोडार, भीलवाड़ा, राजस्थान में हुआ। बच्चों एवं किशोरों की जानी-मानी पत्रिका 'बालवाटिका' का मार्च 1996 से निरंतर संपादन कर रहे हैं। शिक्षा- एम.ए., पी-एच.डी., साहित्यरत्न। समीक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है। बच्चों के लिए अनेक कहानी संग्रह प्रस्तुत किये हैं। इनके बालगीत संग्रह हैं - 'उत्सविका', 'गीत सुहाने बचपन के।' राजस्थान साहित्य

अकादमी द्वारा वर्ष 1991 में शंभूदयाल सक्सेना बालसाहित्य पुरस्कार एवं सम्मान सहित अन्य अनेक सम्मान भी प्राप्त हुए हैं। इनके निर्देशन में छः शोधार्थियों को पी-एच.डी. उपाधि मिल चुकी है। भीलवाड़ा में पिछले कई वर्षों से प्रतिवर्ष अखिल भारतीय बालसाहित्य संगोष्ठियों का आयोजन करते हैं। इनकी एक बालकविता 'मूंछें' यहाँ प्रस्तुत है –

वाह-वाह ये काली मूंछें / लगती बड़ी निराली मूँछें।
किसी-किसी की इंच-इंच भर / कुछ ने गज भर पाली मूँछें।
कुछ लोगों के तो सचमुच की / पर जोकर की जाली मूँछें।
बड़ी मूँछ से सब डरते हैं / ज्यों बंदूक दुनाली मूँछें।
कुछ कहते यह तो झंझट है / इसीलिए मुंडवा ली मूँछें।
कोई कहता शान मर्द की / इसीलिए रखवा ली मूँछें।
जिसको जैसी भाई, उसने / उसी रूप में पाली मूँछें।

प्रतीक मिश्र -- इनका जन्म 04.07.1949 को धामपुर, बिजनौर, उत्तर प्रदेश में हुआ था। निधन 14.03.2009 को हो गया। प्रकाशित बालकाव्य संकलन हैं, 'दमक उठे संसार', 'अंत्याक्षरी', 'कक्का-किक्की-कुक्कू', 'धम्म-धमाका'। उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान से पुरस्कृत भी हुए थे। 'नन्हे हैं हम दीप' बालकविता यहाँ प्रस्तुत है –

नन्हें हैं हम दीप, जगत को दमकाएंगे।
थोड़ा नेह और लघु बाती मिट्टी का तन
यह अपनी सीमा है फिर भी ऊंचा है मन
पूरी धरती को किरणों से भर जाएंगे।
ऐसे कितने ही अंधियारे देख चुके हैं
पर न कभी भी अपने मस्तक कहीं झुके हैं
हम तो तम में भी मुस्काते, मुस्काएंगे।
हारे-थके लोग जब चाहें तब सो जाएं
जिन्हें भोर की चाह साथ वे अपने आएं
सूरज के घर का पथ हम ही दिखलाएंगे।

रोहिताश्व अस्थाना -- इनका जन्म सन् 1949 में अटवा अली मर्दनपुर, जिला हरदोई में हुआ था। एम.ए. (हिन्दी) तथा बी.एड. तक शिक्षा प्राप्त की। तदनन्तर पी-एच.डी. की उपाधि भी अर्जित की और अध्यापन क्षेत्र में सक्रिय रहकर सेवानिवृत्त हुए।

इनकी बालोपयोगी रचनाएँ बच्चों की प्रायः सभी प्रमुख पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। आपके बालसाहित्य पर शोधकार्य हुए हैं। बच्चों के लिए कविता, कहानी, उपन्यास, संस्मरण आदि विधाओं में मौखिक लेखन तथा संपादित पुस्तकें तैयार की हैं। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ से 'बालसाहित्य भारती' सम्मान से समादृत हो चुके हैं। प्रमुख बालकाव्य संग्रह हैं – 'नन्ही ग़ज़लें', 'आओ गाएं धूम मचाएं', 'मोनू के गीत', 'स्वप्नलोक' तथा 'हंसते मुस्कुराते सपने।' यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बाल ग़ज़ल 'फूल बनकर मुस्कराना चाहिए' –

जिंदगी हंसकर बिताना चाहिए
चुटकुले सुनना, सुनाना चाहिए।
रात-दिन आंसू बहाने से भला
फूल बनकर मुस्कराना चाहिए।
चाट का ठेला खड़ा है सामने
आज कुछ खाना, खिलाना चाहिए।
आ गया इतवार पापाजी हमें
आज तो सरकस घुमाना चाहिए।
मास्टरजी हम पढ़ेंगे शौक से
पर खिलौने कुछ दिलाना चाहिए।
देश को खुशहाल रखना है अगर
हमको संसद में बिठाना चाहिए।

योगेन्द्रदत्त शर्मा -- इनका जन्म 30.08.1950 को गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश में हुआ। प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली से सेवानिवृत्ति के बाद स्वतंत्र लेखन में संलग्न है। बच्चों के पाठ्यक्रम में इनकी कविताएँ चयनित हैं और विद्यालयों में पढ़ाई जाती हैं। बालकविता संकलन हैं – 'कैसा आए मज़ा' तथा 'आए दिन छुट्टी के'। इनकी एक बालकविता 'पान वाले' यहाँ प्रस्तुत है –

पान वाले, पान वाले!
पान दे हमको बनाकर / ओ अनोखी शान वाले!
गोलटा देशी न भाते / बस बनारस का लगा दे
खा सकें पत्ता, सपत्ता / इसलिए छोटा उठा ले!
देख चूना कम लगाना / ढेर-सा कत्था चढ़ाना
मुंह रचाना है हमें बस / कहीं पड़ जाएं न छाले!

डालना मीठी सुपारी / खुशबुओं वाली फुहारी
और पीपरमेंट भी कुछ / जो हमारा मन उछाले!
सौंफ मिसरी खूब रखना / पर न तंबाकू बुरकना
एक भी पत्ती पड़ी तो / हम न जाएंगे संभाले!

प्रकाश मनु -- इनका जन्म सन् 1950 में शिकोहाबाद, उत्तर प्रदेश में हुआ। एम.एस.सी. (भौतिक विज्ञान), एम.ए. (हिन्दी) तथा पी-एच.डी. तक शिक्षा प्राप्त की। आरम्भ में अध्यापन, तदनन्तर पत्रकारिता से जुड़े। बच्चों एवं बड़ों के लिए उपन्यास, कहानी, कविता, संस्मरण, साक्षात्कार, समीक्षा, इतिहास आदि विविध विधाओं में पर्याप्त लेखन किया है। 'हिन्दी बाल कविता का इतिहास' एक महत्वपूर्ण कृति है। संपादन के क्षेत्र में सक्रिय रहे हैं। 'नंदन' पत्रिका के संपादकीय विभाग में लंबे अरसे तक कार्यरत रहे। प्रमुख बालकविता संकलन हैं - 'बच्चों की एक सौ एक कविताएं', 'हाथी का जूता', 'इक्यावन बाल कविताएँ' तथा 'हिन्दी के नये बालगीत।' हिंदी की प्रायः सभी प्रमुख बालपत्रिकाओं व पत्रों में रचनाओं का निरन्तर प्रकाशन हुआ है। साहित्य अकादमी, दिल्ली से बालसाहित्य सृजन हेतु 'एक था ठुनठुनिया' बाल उपन्यास पर पुरस्कृत-समादृत। बालकविता के संबंध में इनका मंतव्य है, "मुझे तो बालसाहित्य के दिग्गज कवि मत्तजी की बात सबसे सही लगती है कि अच्छी बाल कविता वह है जिसे पढ़कर या सुनकर बच्चे के मन की कली खिल जाये।" यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बालकविता -

चिट्ठी में है मन का प्यार।
यह आई मम्मी की चिट्ठी, लिखा उन्होंने प्यारी विट्टी
मेहनत से तुम पढ़ना बेटी, पढ़-लिखकर होना हुशियार।
पापा पोस्टकार्ड लिखते हैं, घने-घने अक्षर लिखते हैं
जब आता है बड़ा लिफाफा, समझो चाचा का उपहार।
छोटा-सा कागज बिन पैर, करता दुनिया भर की सैर
नये-नये संदेश सुनाता, जोड़ रहा है दिल के तार।

सुरेश विमल -- इनका जन्म 04.09.1950 को टोडाभीम, राजस्थान में हुआ। प्रकाशित बालकाव्य संकलन हैं - 'कानाबाती', 'कहाँ बनाए घर गौरैया'। यहाँ प्रस्तुत है 'गौरैया का घर' बालकविता -

कहाँ बनाए घर गौरैया?

बैठक में जोड़े जो तिनके / दादाजी ने डांट लगाई
भगा दिया अपने कमरे से / भैया को भी दया न आई
घुसी रसोईघर में लेकिन / उड़ी धुएं से डर गौरैया।
लिये चोंच में तिनका बैठी / आंगन की खूंटी पर आकर
लगी मांगने दादी मां से / जगह जरा-सी गाना गाकर
देखे कोना-कोना घर का / घुमा-घुमा कर सिर गौरैया।
खुले पेड़ पर डर मौसम का / आंधी, ओले, लू का चक्कर
रहे भला कैसे गौरैया / बाज, चील, कौओं से बचकर
सो पायेगी कहाँ चैन से / डरी-डरी बाहर गौरैया।

विनयकुमार मालवीय -- इनका जन्म 16.10.1950 को इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश में हुआ। शैक्षिक योग्यता एम.ए., पी-एच.डी. (इतिहास) है। बच्चों के लिए कविता के अतिरिक्त कहानी, एकांकी, जीवनी विधा में भी लेखन किया है। देश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन हुआ है। बालकविता संग्रह है, 'देश पर कुरबान हैं।' उच्च शिक्षा निदेशालय उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद में कार्यरत रहे। इनकी एक बाल कविता 'मीठी बोली' यहाँ प्रस्तुत है -

सबके साथ सदा जो रहती / नहीं किसी से कुछ भी कहती
सदा बांटने से जो बढ़ती / बड़ी अनोखी मीठी बोली।
हम उसको पहचान न पाते / महिमा उसकी जान न पाते
सबसे जो पहचान कराती / बड़ी लाभप्रद मीठी बोली।
बैर-लड़ाई दूर कराती / दुश्मन को भी मीत बनाती
अनजानों से प्यार दिलाती / बड़ी सहायक मीठी बोली।

अहद प्रकाश -- इनका जन्म 17.06.1951 को बरेली रायसैन (म.प्र.) में हुआ। लेखन एवं पत्रकारिता से जुड़े हैं। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में बच्चों के लिए कविताएं, कहानियां एवं ज्ञानवर्धक आलेख प्रकाशित हुए हैं। नई दुनिया बालसाहित्य स्तम्भ के संपादन से भी जुड़े हैं। इनकी बालोपयोगी कविताओं का संग्रह 'आंखों में आकाश' है, जिसमें लगभग तीस बाल कविताएं हैं। बच्चों से रू-बरू होते हुए इनका कथन है, "तुम्हारी कविताएं लिखते समय मैं बिल्कुल तुम्हारी तरह हो जाता हूँ। लगता है आसपास बहुत सारे फूल खिले हैं। रंग-बिरंगे सुगंधित प्यारे प्यारे।" इनकी एक

दम्भ झूठा है तोड़िए साहब
इसकी गर्दन मरोड़िए साहब।
अच्छी सोहबत से आप खुश होंगे
गंदी सोहबत को छोड़िए साहब।
दुख जो आये हैं चले जाएंगे
खुशमिज़ाज़ी न छोड़िए साहब।
आप तो खुद ही फूल जैसे हैं
खिलती कलियां न तोड़िए साहब।

रामदुलारा सिंह 'पराया' -- इनका जन्म 31.01.1952 को ग्राम गोविंदपुर, जिला मिर्ज़ापुर, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.ए., पी-एच.डी.। संप्रति, अध्यापन। इनके प्रकाशित बालकाव्य संग्रह हैं-'सोन चिरैया', 'बच्चों के मनभावन गीत।' अनेक पुरस्कार-सम्मान प्राप्त। यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बालकविता 'कैसा जन्मदिवस' -

जन्मदिवस पर पापा मेरे / लाए खूब मिठाई
मम्मी-पापा, मैंने खाई / जमकर खूब मिठाई।
पर दादी की थाली से जब / गायब मिली मिठाई
तब बरबस ही मेरी आंखें / छल-छल कर भर आईं।
झट बोला पापा से जाकर / जन्म दिवस यह कैसा
दादी मां को नहीं दिया क्यों / खाना सबके जैसा?

शेषपाल सिंह 'शेष' -- इनका जन्म 04.05.1952 को ग्राम रुपधनूं, जिला आगरा, उत्तरप्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.ए. (हिन्दी, संस्कृत), बी.एड., पी-एच.डी., आयुर्वेद रत्न। श्री महात्मा दूधाधारी इंटर कालेज, आगरा से प्रवक्ता पद से सेवानिवृत्त। बच्चों के लिए कविता एवं कहानी विधा में मौलिक सृजन किया है तथा विविध पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित हुई हैं। इनके शिशु गीत संग्रह हैं - 'आंगन गाए' व 'किलकारी'। बालगीत संकलन हैं - 'प्यारे बच्चे प्यारा देश', 'खिलते फूल चटकती कलियां', 'सूरज उग आया' तथा 'आशाओं के दीप'। पद्यकथा संग्रह है - 'झूमें गायें गीति कथाएं' विविध साहित्यिक संस्थाओं से अनेक सम्मान प्राप्त किये हैं। इनका 'स्वाद' शीर्षक शिशुगीत देखिए -

चटनी हरी टमाटर लाल / हरा पुदीना करे कमाल

हरी सब्जियां खूब सलाद / मीठा कम भोजन के बाद
खुशी-खुशी हम खाते हैं / तब आता भोजन में स्वाद।

विनोद भृंग -- इनका जन्म 01.09.1952 को सहारनपुर, उत्तरप्रदेश में हुआ। बच्चों व बड़ों के लिए काव्यविधा में लेखन किया है। अनेक सम्मान प्राप्त हुए हैं तथा पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन हुआ है। इनका बालकविता संग्रह है, 'जादूगर बादल।' इसमें इनकी 29 बाल कविताएं संकलित हैं। यहाँ प्रस्तुत है 'पंखा खोलो भाई' शीर्षक बालकविता -

सर्दी लौट गई घर अपने / फिर से गर्मी आई,
मम्मीजी ने धरे बक्स में / कंबल, कोट, रजाई।
धूप काटने लगी बदन को / कैसी आफत आई,
वहे पसीना झर-झर-झर-झर / पंखा खोलो भाई।
छुट्टी का मौसम आया है / पूरी हुई पढ़ाई,
छोड़ो अब पढ़ने-लिखने को / मौज मनाओ भाई।

डॉ. सुषमा सिंह -- इनका जन्म सन् 24.12.1952 को हुआ था। शिक्षा एम.ए. (हिन्दी, स्वर्णपदक विजेता) तथा पी-एच.डी. तक प्राप्त की है। कविता, कहानी, लघुकथा आदि विधाओं में बड़ों के लिए तथा कविता में बच्चों के लिए भी लेखन किया है। संप्रति, हिन्दी विभाग, राजा बलवंत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय आगरा में उप आचार्य के रूप में कार्यरत हैं। शीघ्र प्रकाश्य बालकाव्य संकलन है, 'चंदा मामा'। यहां प्रस्तुत है इनकी 'चंदामामा' शीर्षक बालकविता -

चंदामामा पहन पजामा / पहुंच गए स्कूल में
सब बच्चों ने हंसी उड़ाई / वे आये थे पैण्ट में।
चंदा मामा भूल गए थे / बस्ता लेकर आना भी
पीछे-पीछे मम्मी आईं / हंसी हुई उनकी तब भी
होमवर्क भी किया नहीं था / डांट लगाई मैडम ने
जब रोये चंदा मामा तो / आंसू पोंछे मैडम ने।
फिर मामा अच्छे से आए / बनकर अपटूडेट
होमवर्क भी करके लाए / नहीं हुए फिर लेट

शिक्षा एम.ए. तक प्राप्त की है। बैंक से सेवानिवृत्ति के बाद स्वतंत्र लेखन में संलग्न हैं। बच्चों के लिए विज्ञान गल्प के साथ कहानी, नाटक, काव्य आदि विधाओं में लिखा है। प्रकाशित बालकाव्य कृतियां हैं, 'नन्हे-मुन्ने गीत' (भाग 1, 2, 3) 'शिशुगीत' तथा 'वतन तुझे नमन'। राष्ट्रीय नायकों पर सरस सूचनापरक गेय बाल काव्य कृति है, 'राष्ट्र रत्न।' इसी पुस्तक पर उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ द्वारा जयशंकर प्रसाद नामित पुरस्कार प्राप्त हुआ है। यहाँ प्रस्तुत है इनकी बालकविता 'लो दीवाली आई' का एक अंश –

आंगन-आंगन दीप जल रहे / छत-छत फिरे सितारे।
द्वार-द्वार चल रहे रोशनी / के जगमग फव्वारे।
रंग-रंग से सजी अल्पना / देती यही बधाई।
श्री शुभ की किरणें बरसाती / लो दीवाली आई।

रमेश आजाद -- इनका जन्म 05.01.1954 को चक नवादा, बाढ़, पटना, बिहार में हुआ। प्रकाशित बालकविता संग्रह है, 'सुन भाई भालू।' यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बाल कविता 'बुआ लोमड़ी' –

रहते इक बाड़े के अंदर / शेर-लोमड़ी-भालू-बंदर।
भालू से बंदर लड़ बैठा / हाथापाई तक कर बैठा।
खाकर थप्पड़ रोया बंदर / खिसियाया भालू के ऊपर।
देख रही थी खड़ी-खड़ी / बुआ लोमड़ी बोल पड़ी।
नहीं, नहीं, मत करो लड़ाई / वरना समझो आफत आई।
रहना है जब सबको साथ / फिर क्या थप्पड़, घूंसे-लात?

अजय 'प्रसून' -- इनका जन्म 18.01.1954 को लखनऊ, उत्तर प्रदेश में हुआ। बच्चों के लिए मनोरंजक-सार्थक बालकविताएँ लिखी हैं। 'पीली धूप' कविता यहाँ प्रस्तुत है –

माचिस की है तीली धूप, / सरसों-सी है पीली धूप।
गरम दूध-सी उबल रही है, / चूल्हे चढ़ी पतीली धूप।
अभी शाम आई थी, डटकर / उसने सारी पी ली धूप।
सर्दी में क्यों हो जाती है / पता नहीं, नखरीली धूप।
गरमी के तपते मौसम में / होती बड़ी हठीली धूप।

सफदर हाशमी -- इनका जन्म 12.04.1954 को दिल्ली में हुआ। निधन 02.01.1989 को साहिबाबाद, गाजियाबाद उत्तर प्रदेश में हुआ। प्रकाशित बाल कविता संग्रह है, 'दुनिया सबकी।' इनकी 'किताबें' शीर्षक लंबी कविता का एक अंश प्रस्तुत है –

किताबों में चिड़िया दीखी चहचहाती
कि इनमें मिलें खेतियां लहलहाती।
किताबों में झरने मिलें गुनगुनाते
बड़े खूब परियों के किस्से सुनाते।
किताबों में साइंस की आवाज है
किताबों में रॉकेट का राज है।
हर एक इल्म की इनमें भरमार है
किताबों का अपना ही संसार है।
क्या तुम इनमें जाना नहीं चाहोगे?
जो इनमें है, पाना नहीं चाहोगे?
किताबें कुछ तो कहना चाहती हैं
तुम्हारे पास रहना चाहती हैं।

रामनिवास मानव -- इनका जन्म 08.10.1954 को तिगरा, जिला महेंद्रगढ़, हरियाणा में हुआ। शिक्षा एम.ए. (हिन्दी), पी-एच.डी., डी.लिट्.। सम्प्रति अध्यक्ष एवं शोध निर्देशक, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग सी.आर.एम. जाट पी.जी. कालेज, हिसार। विविध विधाओं में बच्चों व बड़ों के लिए लेखन। बालगीत संग्रह हैं, 'हम सब हिन्दुस्तानी', 'आओ, गाओ बच्चो' तथा 'मुन्ने राजा आजा।' इन तीनों संग्रहों को एक जिल्द में 'छोटे छोटे इन्द्रधनुष' में वर्ष 2004 में संकलित किया गया है। हरियाणा साहित्य अकादमी पुरस्कार सहित अन्य अनेक सम्मान-पुरस्कार प्राप्त। इनके साहित्य पर शोधकार्य भी संपन्न हुए हैं। इनकी 'चिड़िया रानी' बाल कविता यहाँ प्रस्तुत है-

सदा फुदकती, कभी न थकती
गाती मीठी-मीठी बानी।
कैसे खुश रहती हो इतना,
सच-सच कहना चिड़िया रानी।
ताजा दाना निर्मल पानी,
शुद्ध हवा औ धूप सुहानी।

यही राज सारी खुशियों का
बोली हंसकर चिड़िया रानी।
खुले जगत में जीना सीखो
ताज़ा हो सब दाना-पानी।
इतना कहकर, फुदक जरा-सा
फुर्र हो गई चिड़िया रानी।

घमंडीलाल अग्रवाल -- यह पहले घमंडीलाल 'राजीव' नाम से लिखते थे, बाद में घमंडीलाल अग्रवाल नाम से लिखने लगे। इनका जन्म सन् 1954 में हुआथा। गुड़गांव (हरियाणा) में अध्यापन कार्य कर रहे हैं। बच्चों के लिए प्रायः सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में कविताएं लिखी हैं। 'देश प्रेम के बालगीत' नामक एक महत्वपूर्ण पुस्तक का संपादन किया है। मौलिक कृतियां हैं, 'आओ पापा बात करें', 'मेरे प्रिय बालगीत', 'बाल कवितावली', 'बाल गीतांजलि', 'सुन री सोनचिरैया', 'बगिया के फूल', 'कानाबाती कुर्र', 'मन में गुलमोहर'। अनेक महत्वपूर्ण पुरस्कार-सम्मान प्राप्त कर चुके हैं। इनकी एक बालकविता 'हम बच्चों की बात' यहाँ प्रस्तुत है -

कोई नहीं समझ पाता है हम बच्चों की बात।
पापा कहते उठो सबेरे, मम्मी बोले पढ़ना
है आराम हराम हमेशा भैया का यह कहना
चंचल मन सहता ही रहता घात और प्रतिघात।
खेलों पर पाबंदी दादा खूब लगाया करते
चाचा पत्रिकाएं पढ़ने को कभी न अच्छा कहते
उजला दिन भी हमको लगता मानो काली रात।
बस में सीट न मिलती पूरी, जैसे-तैसे बैठें
कौन करेगा हित की चर्चा, बोलो किससे ऐंठें
नहीं जरा भी नई सदी में बदल सके हालात।

लक्ष्मीशंकर बाजपेयी -- इनका जन्म 10.01.1955 को ग्राम सुजगवां, कानपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.एस.सी. भौतिकी। संप्रति, निदेशक आकाशवाणी दिल्ली। बालकविता संकलन है, 'मच्छर मामा समझ गया हूं'। हिंदी अकादमी दिल्ली से बालसाहित्य पुरस्कार तथा बालकनजी बारी से श्रेष्ठ बालसाहित्यकार सम्मान प्राप्त हैं। यहाँ प्रस्तुत है इनकी बालकविता 'ऐसा कमाल' -

कम्प्यूटरजी तुम कैसे / ऐसा कमाल कर पाते हो
भारी-भारी प्रश्न गणित के / पल में कर दिखलाते हो।
एक सवाल लगाने में / मुझको घंटा भर लगता है,
और कभी इतना करके भी / उत्तर गलत निकलता है।
क्या तुमको जादू आता है / जिसका असर दिखाते हो
या दिमाग के लिए खास कुछ / जड़ी-बूटियां खाते हो।
मुझको भी तरकीब बताओ / गणित सही कर पाऊं मैं
मम्मी-पापा खुश हों / जब सौ में सौ नंबर पाऊं मैं।

शिव गौड़ -- इनका जन्म 30.04.1955 को सहारनपुर, उत्तरप्रदेश में हुआ। शिक्षा- बी.ई.। बालकविता संकलन है - 'हल्ला-गुल्ला'। यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बालकविता 'प्यारे पापा' का एक अंश -

खुशियों के फव्वारे हैं जी / पापा मेरे प्यारे हैं।
किस्से खूब सुनाते हैं / खुद हीरो बन जाते हैं
परी लोक ले जाते हैं / जमकर सैर कराते हैं
खेल-तमाशा, हल्ला-गुल्ला / जादू भरे पिटारे हैं।
हम पर रौब जमाते हैं / गुस्सा जब हो जाते हैं
पर मम्मी की बात अलग / मम्मी से घबराते हैं
वो दादी को लगते प्यारे / उनके राजदुलारे हैं।

भगवतीप्रसाद द्विवेदी -- इनका जन्म 01.07.1955 को उत्तरप्रदेश के बलिया जनपद के दलछपरा गांव में हुआ। शिक्षा- एम.एस-सी. (रसायन विज्ञान) तथा विद्यावाचस्पति है। भारत सरकार के दूरसंचार विभाग (अब भारत संचार निगम) में सेवारत हैं। बच्चों व बड़ों के लिए समान दक्षता से लेखन किया है। प्रकाशित बालगीत संग्रह हैं - 'ओका बोका तीन तड़ोका', 'गीत खुशी के : गीत प्यार के', 'इक्कीसवीं सदी के खेल', 'आओ मिलकर गायें', 'नन्हे गीत', 'अक्षरगीत', 'आंखमिचौली', 'गीत तुम्हारे प्यारे-प्यारे', 'कुदरत का उपहार', 'मेरी प्रिय बालकविताएं।' बाल खंडकाव्य हैं - 'मन के धनीः बहादुर लाल', 'सबके साथी : सबके बापू।' भोजपुरी बालगीत संकलन हैं- 'पटना की सैर', 'गीतों की फुलझड़ियां', 'दिन के मेले में', 'चहक'। बिहार सरकार के राजभाषा विभाग द्वारा वर्ष 1982 में पुरस्कृत। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद से वर्ष

सम्मान' सहित अन्य अनेक पुरस्कार-सम्मान से समादृत। हिन्दी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन। बालकविता के विषय में मंतव्य है, "बालकविता बच्चों के दिलों की धड़कन होती है। सही मायने में बालकविता की सार्थकता इसी में है कि वह बच्चों के मनोभावों को जीवंतता से अभिव्यक्ति देने के साथ ही उनके तन-मन को झंकृत कर दे।" इनकी 'मधुर नींद की गोली रात' बालकविता यहां प्रस्तुत है -

तारों की मुंहबोली दीदी
चंदा की हमजोली रात।
अंधियारे-उजियाले के संग
खेले आंख-मिचौली रात।
बांटा करती ठुमक-ठुमक कर
मधुर नींद की गोली रात।
दादी मां की मीठी लोरी
उल्लू की है बोली रात।
दिखलाती सपनों का टी.वी.
ले परियों की टोली रात।

धीरेन्द्र कुमार यादव -- इनका जन्म सन् 1955 में कानपुर में हुआ था। अपने पिता चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक' के साथ रहकर वहीं एम.ए. (अर्थशास्त्र, हिन्दी) तक शिक्षा प्राप्त की। संप्रति, कानपुर देहात में सहकारिता विभाग में सहायक आयुक्त एवं सहायक निबंधक पद पर कार्यरत हैं। इनकी बालकविताएं 'बाल भारती', 'विश्व ज्योति', 'लोटपोट', 'चमचम', दैनिक आज और दैनिक जागरण आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। इनके प्रकाशित बालकाव्य संकलन हैं - 'चटपटे शिशुगीत' तथा 'हम भारत के नन्हे बच्चे।' इन्हें अनेक पुरस्कार व सम्मान भी मिले हैं। इनका एक शिशुगीत यहाँ प्रस्तुत है -

बीच अखाड़े में आकर के
चूहे जी चिल्लाये
'है कोई जो कुश्ती लड़ने,
आज सामने आये?'
'मुझसे लड़ लो', बढ़कर बोली

भूल पहलवानी चूहे जी
पूंछ दबाकर भागे।

हरीश निगम -- इनका जन्म 31 जुलाई 1955 को मैहर, जिला सतना, मध्य प्रदेश में हुआ। शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना में समाजशास्त्र विभाग के प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष हैं। विगत तीस वर्षों से सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं, यथा- नंदन, पराग, बालहंस, बालभारती, बच्चों का देश, चंपक, सुमनसौरभ, लोटपोट, साप्ताहिक हिंदुस्तान, धर्मयुग, जनसत्ता, ट्रिब्यून, दैनिक हिन्दुस्तान, हरिभूमि, अमर उजाला, राजस्थान पत्रिका, संडे मेल आदि में रचनाओं का प्रकाशन। बालगीत संग्रह है 'टिंकू बंदर।' अनेक साहित्यिक सम्मानों से विभूषित हैं और राष्ट्रीय संस्था एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रकाशित पाठ्य पुस्तकों में रचनाएं शामिल हैं। इनकी दृष्टि में, "बालकविताएं, बालमनोविज्ञान का आईना होनी चाहिए, जिसमें सरल, सहज शब्दावली और उन्मुक्त नदी-सा प्रवाह हो।" इनकी एक बालकविता 'हवा का गीत' यहाँ प्रस्तुत है -

बोल हवा तू आती कैसे
पेड़ों को लचकाती कैसे?
हाथ-पांव ना दिखते तेरे
करती रहती फिर भी फेरे,
रंग-रूप को हम लोगों से
कुछ तो बता, छिपाती कैसे?
मीठी-मीठी और नरम-सी
ठंडी-ठंडी कभी गरम-सी
बोली बदल-बदल के अपनी
सबको रोज छकाती कैसे?
आंधी बनके आ जाती हो
सारे जग पर छा जाती हो।
धूल-धुंए का जादू बनकर
अपना रंग जमाती कैसे?
पुरवाई, पछुआ, बासंती
नामों की कोई ना गिनती
सच कहना तुम इतने सारे

रमेशचन्द्र पंत -- इनका जन्म 10.08.1955 को रेहरा बाजार, बलरामपुर उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.ए. (हिंदी, अंग्रेजी), बी.एड. है। संप्रति, राजकीय पॉलीटेक्निक द्वाराहाट, अल्मोड़ा उत्तराखंड में कार्यरत हैं। गीत, गज़ल, कविता, व्यंग्य एवं बालसाहित्य में लेखन किया है। देश की प्रायः सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन हुआ है। बच्चों के लिए कविता एवं कहानी विधा में पुस्तकें हैं। बालकविताओं का संकलन है, '101 बाल कविताएं।' पाठ्य पुस्तकों में भी रचनाएं संकलित हैं। अनेक सम्मान-पुरस्कार मिले हैं। इनकी एक बालकविता 'अच्छी बात नहीं है', यहाँ प्रस्तुत है -

सुबह-शाम / बस पढ़ना-पढ़ना / कोई अच्छी बात नहीं है।
घर से कभी / निकलकर बाहर / धमा-चौकड़ी खेल करो तो!
दुःख से हो / यदि पीड़ित कोई / हंस-हंस कर दो बात करो तो!
अपने तक ही / सीमित रहना / कोई अच्छी बात नहीं है।
बगिया में / कुछ देर बैठकर / चिड़ियों के मधु-गान सुनो तो!
इंद्रधनुष-सी / आभा वाले / सपनों के कुछ जाल बुनो तो!
दुनिया से / यूं कटकर रहना / कोई अच्छी बात नहीं है।

राकेश चक्र -- इनका मूल नाम राकेश कुमार गुप्त है, साहित्यिक नाम 'राकेश चक्र' है। इनका जन्म 14.11.1955 को साजाबाद ताजपुर, जिला अलीगढ़ उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.ए. (समाज शास्त्र), एल-एल.बी. है। उत्तर प्रदेश पुलिस (अभिसूचना विभाग) में कार्यरत हैं। इनके प्रमुख बालगीत संग्रह हैं, 'राकेश चक्र की एक सौ एक बालकविताएं', 'लट्टू सी ये धरती घूमे', 'स्वर व्यंजन के बालगीत', 'धीरे-धीरे गाना बादल', 'याद करेगा हिन्दुस्तान', 'माटी हिंदुस्तान की', 'मेहनत से तुम डरो न भाई' आदि। अनेक सम्मान भी इन्हें मिले हैं। यहाँ प्रस्तुत है एक बालकविता 'मकड़ी का जाला' -

नौकर हूं ऐसा मतवाला / उम्र अभी मेरी दससाला
खीच रहा हूं बचपन को मैं / फटा हुआ सारा दोशाला।
बचपन पूरा काला-काला / तरस न खाते मोटे लाला
रातों-दिन में काम करूं मैं / फिर भी समझें गंदा नाला।
धर्म-कर्म लालाजी करते / फिर भी रोज मिलावट करते
मेरा पेट न भरता पूरा / रोटी गिनते मोटे लाला।
दिन में काटें मोटे लाला / रोज रात मच्छर मतवाला
चैन नहीं है अब जीवन में / जीवन है मकड़ी का जाला।

अजय जनमेजय -- इनका जन्म 28.11.1955 को हस्तिनापुर, मेरठ उत्तरप्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.बी.बी.एस., डी.सी.एच.। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन, बच्चों के लिए कहानियां व नाटक भी लिखे हैं। प्रकाशित बालगीत संग्रह है - 'अक्कड़ बक्कड़ हो हो हो', 'हरा समुन्दर गोपी चन्दर' तथा 'निंदिया सबसे प्यारी तू', 'तिरंगा प्यारा', 'चिड़िया खुश है उड़ने में।' संपादित बालकविता संग्रह हैं, 'ईचक दाना बीचक दाना' तथा 'बाल सुमनों के नाम।' बच्चों के साथ-साथ बड़ों के लिए भी गज़लें लिखी हैं। मध्यप्रदेश दुष्यंत अवार्ड सहित अन्य अनेक सम्मान पुरस्कार प्राप्त किये हैं। चूंकि 'निंदिया सबसे प्यारी तू' लोरी एवं प्रभाती संग्रह है, इसलिए 'नींद अंखियों के द्वारे खड़ी' शीर्षक इनका लोरी गीत यहाँ प्रस्तुत है -

नींद अंखियों के द्वारे खड़ी
खड़ी है, अभिनन्दन करो जी।
सपने भी लाई
परियां भी लाई,
पल में खिलेंगी जो
कलियां भी लाई।
फूलों-सा खुद को बनाओ
बनाओ, मन चन्दन करो जी
कल के खिलौने ले
कल की ले दुनिया,
खुद बनके आई है
सुंदर सी मुनिया।
चलो, चलकर के स्वागत करो
करो जी, अब वन्दन करो जी।

सूर्यकुमार पाण्डेय -- इनका जन्म सन् 1956 में लखौलिया, जिला बलिया में हुआ था। लखनऊ विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त की। वि.वि. आयोग के अनुदान लेखा विभाग में इलाहाबाद में कार्यरत रहे। वर्तमान में लखनऊ में निवास करते हैं। बच्चों के लिए प्रकाशित काव्य संकलन हैं, 'गीत तुम्हारे', 'चूहे राजा', 'हम बच्चे', 'फूल खिले', 'बंदरजी की दुम', 'मेरी प्रिय बाल कविताएं', 'गीत चुनमुने' , 'अक्कड़-बक्कड़।' इनकी एक बालकविता 'रूप धूप के' यहाँ प्रस्तुत है -

आकर बैठी दरवाजे पर

उछली, पहुंच गई छज्जे पर
वह नन्ही चिड़िया-सी धूप।
पल में आ जाती धरती पर
पल में हो जाती छूमन्तर
जादू की पुड़िया-सी धूप।
लुढ़क रही कमरे के अंदर
बैठी मस्ती से बिस्तर पर
जापानी गुड़िया-सी धूप।
पके आम-से गालों वाली
और सुनहरे बालों वाली
लगती है बुढ़िया-सी धूप।

श्याम सुशील -- इनका जन्म 28.08.1957 को बस्ती, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.ए. (हिंदी साहित्य)। मौलिक एवं संपादन क्षेत्र में प्रतिभा प्रदर्शित हुई है। बाल काव्य संकलन है - 'होती मैं भी चंचल तितली', बच्चों की हस्तलिखित पत्रिका 'नन्ही कलम' का संपादन भी किया है। इंडो-रशियन लिटरेरी क्लब द्वारा सम्मान प्राप्त है। 'किताबें' शीर्षक एक बालकविता यहाँ प्रस्तुत है -

शब्दों का सुंदर / घर है किताबें
चिड़ियों के पंखों सी / फर-फर किताबें
किताबें हैं दोस्त / करती हैं बातें
किताबों की दुनिया में / आओ हम झांकें।

प्रभाष मिश्र 'प्रियभाष' -- इनका जन्म 15.09.1958 को ग्राम बिरायमपुर कन्नौज, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- डिप्लोमा इंजीनियर (विद्युत अभियंत्रण), संप्रति अध्यापन। प्रकाशित बालकाव्य संग्रह हैं - 'चिड़ियों की चौपाल', 'हाथीजी की दावत।' इनकी एक बालकविता 'टिली-लिली' यहाँ प्रस्तुत है -

चूहेराम उड़ाते खिल्ली / टिली लि-ली
पकड़ न पाई मोटी बिल्ली / टिली लि-ली।
नाली में मुंह धो आओगी / फिर भी मुझे न छू पाओगी
मौसी बहुत दूर है दिल्ली / टिली लि-ली।
मुझसे रहती हो खिसयानी / लेकिन क्यों मर जाती नानी

अगर भौंक दे पिल्ला-पिल्ली / टिली लि-ली।
झबरूजी ने रस घोला था / मुझको पहलवान बोला था
तुमको बता गए मरगिल्ली / टिली लि-ली।
कमजोरों को जो न सताते / वही बहादुर हैं कहलाते
क्या समझीं मैडम सिलबिल्ली / टिली लि-ली।

अखिलेश श्रीवास्तव चमन -- इनका जन्म 19.12.1958 को ग्राम मनियर, जिला बलिया उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.ए. (हिन्दी), एल-एल.बी.। उत्तर प्रदेश सरकार की सेवा में प्रथम श्रेणी राजपत्रित अधिकारी हैं। बच्चों के लिए कविता, कहानी, उपन्यास, एकांकी एवं ज्ञानवर्धक लेखों पर कुल प्रकाशित पुस्तकों की संख्या 16 है। बालकविता संकलन हैं – 'एक पते की बात', 'देश हमारा', 'बिल्ली की भक्ति' तथा 'बढ़े चलो'। सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार से 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार' सहित अन्य अनेक पुरस्कार-सम्मान मिले हैं। इनकी दृष्टि में, "मीठी थपकी के साथ मां के मुंह से उच्चरित लोरी साहित्य की उद्गमस्थली है और इस कारण बालकविता संपूर्ण साहित्य की जननी है।" इनकी एक बालकविता 'हमको खिलने दो' यहाँ प्रस्तुत है -

इक उजली-सी रात / इक उजला-सा दिन
कुदरत की सौगात / मस्ती के पल छिन
अधिकार हमारा है / हमको मिलने दो।
अपनी इच्छाएँ / हम पर मत लादो
आकाश खुला छोड़ो / सीमा में मत बांधो
अपने पंखों के बल / उन्मुक्त विचरने दो।
दुर्गम राहों पर / विश्वास से चलने दो
नहीं फूल ही फूल / कांटों में पलने दो
तन कटता, छिलता है / तो कटने-छिलने दो।
देश का अगला कदम / हम आज के बच्चे हैं
पलकर निखरेंगे / जो अनगढ़-कच्चे हैं
बस अवसर दो हमको / खुलने, खिलने दो।

ओमप्रकाश कश्यप -- इनका जन्म 15.01.1959 को बरौली, वासदेवपुर, बुलंदशहर

एम.ए. (दर्शन शास्त्र) है। कविता संकलन 'वृक्ष हमारे जीवनदाता' हैं हिन्दी अकादमी दिल्ली सहित अनेक संस्थाओं से पुरस्कार-सम्मान प्राप्त हैं। यहाँ प्रस्तुत है इनका 'बालगीत' –

पापा मुझको सदा डांटते, मम्मी मेरे खींचे कान
दादा की आंखों का तारा, चाचा कहते हैं शैतान।
दादाजी का चश्मा लेकर अक्सर मैं छिप जाता हूँ
सब भगते हैं मेरे पीछे हाथ न उनके आता हूँ
पापा मुझे डांटते बच्चू गलती की है खींचो कान।
चाचाजी की कलम उठाकर अपने बस्ते में रख लेता
मम्मीजी का क्रीम-पाऊडर अपने चेहरे पर मल लेता
टाई बांधकर पापा की सबको कर देता हैरान।
लेकिन पढ़ने-लिखने से मैं कभी नहीं घबराता हूँ
हर कक्षा हर इम्तिहान में सबसे अव्वल आता हूँ
दादाजी खुश होकर कहते – मेरा पोता मेरी शान!

कमलेश भट्ट 'कमल' –– इनका जन्म 13.02.1959 को जफरपुर, कादीपुर, सुलतानपुर उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.एस-सी.। संप्रति, उत्तर प्रदेश वाणिज्य कर विभाग में आयुक्त। बच्चों के साथ ही बड़ों के लिए भी हाइकु, लघुकथा आदि विधाओं में महत्वपूर्ण लेखन किया है। बालकविता संग्रह है – 'अजब गजब।' उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ से बालकहानी मंगल टीका के लिए सूर पुरस्कार, ग़ज़ल संग्रह 'शंख सीपी रेत पानी' के लिए निराला पुरस्कार, 'नख्लिस्तान' के लिए सर्जना पुरस्कार। यहाँ प्रस्तुत हैं इनकी एक बालकविता 'मन करता है' का एक अंश –

मन करता है किसी रात में
चुपके से उड़ जाऊं
आसमान की सैर करूं फिर
तारों के घर जाऊं।
देखूं कितना बड़ा गांव है
कितनी खेती-बारी
माटी-धूल वहाँ भी है कुछ
या केवल चिनगारी।

शुभदा पाण्डेय -- इनका जन्म 22.07.1959 को सेवरही, जिला कुशीनगर (उ.प्र.) में हुआ। शिक्षा, एम.ए. (हिन्दी), एम.एड्. तक प्राप्त की। 'पक्षी लोक', 'बगुला बगुला ध्यान दे', 'मेले की सैर', 'सांझ के साथी' आदि प्रकाशित बालकाव्य संग्रह हैं। यहाँ प्रस्तुत है 'आओ कान्हा' बालकविता का एक अंश -

यदि कन्हैया होते अब तो बहुत-बहुत पछताते
मंहगाई के दौर में कैसे माखन मिसरी खाते
धुआं और प्रदूषण में वे क्या मधुवन में जाते
हुई विषैली यमुना ऐसी कैसे रास रचाते?

उदय किरौला -- इनका जन्म 12.03.1960 को उत्तराखंड के अल्मोड़ा जिले के कलौटिया ग्राम में हुआ। अब तक प्रकाशित होने वाली पुस्तकों की संख्या सात है, जिनमें दो बालसाहित्य की हैं। वर्ष 2004 से बच्चों की पत्रिका 'बालप्रहरी' व ज्ञान विज्ञान बुलेटिन का संपादन कर रहे हैं। वर्ष 2006 से बालसाहित्य पर प्रतिवर्ष राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन करने के साथ-साथ बच्चों की लेखन कार्यशालाएं भी आयोजित करते हैं। 'बालसाहित्य संस्थान, उत्तराखंड' के सचिव हैं और विविध पत्र- पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन हुआ है। उनकी एक बालकविता 'बर्फ़' यहाँ प्रस्तुत है -

आसमान से फूल बरसते / ऐसे गिरती जाती बर्फ़
हवा शांत है, वर्षा रुकी / चुपके से मुस्काती बर्फ़
आसमान का फ्रिज टूटा क्या / धरती पर बिछ जाती बर्फ़
थाली-प्लेट धरो जो कुछ भी / सबमें ही टिक जाती बर्फ़
गुड़ के साथ उसे मसलकर / मुन्नी खुश हो खाती बर्फ़
दादी टोके या मां रोके / पर उसको तो भाती बर्फ़।

जगदीश व्योम -- इनका जन्म 01.05.1960 को शंभू नगला, फर्रूखाबाद उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा एम.ए., एम.एड्., पी-एच.डी.। शासकीय सेवा में रहकर लेखन में अभिरुचि के चलते मौलिक एवं संपादित पुस्तकें तैयार कीं। बच्चों के लिए उपन्यास, कहानी, कविता आदि विधाओं में महत्वपूर्ण लेखन किया है। 'फुलवारी' इनका संपादित बालगीत संग्रह है। इनकी एक बालकविता 'दूर हुए हम' यहाँ प्रस्तुत है -

छीन कर खिलौनों को बांट दिए गम
बचपन से दूर बहुत दूर हुए हम।
अच्छी तरह से अभी चलना न आया

कपड़ों को अपने बदलना न आया
लाद लिए बस्ते हैं भारी-भरकम।
अंग्रेजी शब्दों का रटना-रटाना
घर आकर दिया हुआ काम निपटाना
होमवर्क करने में निकल जाए दम।
देकर के थपकी न मां मुझे सुलाती
दादी भी क्यों नहीं कहानियां सुनाती
बिलख रही कैद बनी जीवन सरगम।
इतने कठिन विषय हैं कि छूटे पसीना
दिन-रात किताबों को घोट-घोट पीना
उस पर भी नम्बर आते हैं बहुत कम।

सुरेन्द्र विक्रम -- पहले यह सुरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव 'विक्रम' के नाम से लिखते थे, अब सुरेन्द्र विक्रम के नाम से ही जाने जाते हैं। इनका जन्म सन् 1961 में इलाहाबाद जिले के बरोखर गांव में हुआ था। एम.ए. (हिन्दी), पी-एच.डी. तक शिक्षा प्राप्त की है और पी.जी. क्रिश्चियन कालेज, लखनऊ में एसो. प्रोफेसर व हिन्दी विभागाध्यक्ष के पद पर कार्यरत हैं। बच्चों के लिए कविता एवं कहानी विधा में प्रचुर मात्रा में साहित्य लिखा है। समीक्षा क्षेत्र में भी आपका प्रदेय महत्वपूर्ण है। प्रमुख बालकविता संकलन हैं - 'तारों की रेल', 'बच्चों के मनमोहक गीत', 'अब्बक डब्बक', 'सूरज चंदा', 'इक्कीसवीं सदी की ओर', 'सारा देश हमारा घर' तथा 'खेल-खेल में।' विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आपकी रचनाओं का प्रकाशन हुआ है। 'बाल साहित्य शोध समीक्षा संदर्भ' आपकी पन्द्रह वर्षो की दीर्घ साधना का फल है। बाल-मन में पैठ रखने वाली इनकी एक बालकविता यहाँ प्रस्तुत है -

मन करता है सूरज बनकर, आसमान में दौड़ लगाऊं
मन करता है चंदा बनकर, सब तारों पर अकड़ दिखाऊं
मन करता है तितली बनकर, दूर-दूर उड़ता ही जाऊं
मन करता है कोयल बनकर, मीठे-मीठे बोल सुनाऊं
मन करता है चिड़िया बनकर, चीं-चीं-चूं-चूं शोर मचाऊं
मन करता है जोकर बनकर, सब बच्चों को खूब हंसाऊं।

शम्भुनाथ तिवारी -- इनका जन्म 11.07.1962 को ग्राम गोहुअना, गोरखपुर उत्तर

प्रदेश में हुआ। शिक्षा एम.ए. (हिन्दी), एम.फिल्., पी-एच.डी.। एम.ए. में प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान पाकर स्वर्णपदक प्राप्त किया। संप्रति, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ में रीडर पद पर कार्यरत हैं। हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत, उर्दू, बंगला और अंग्रेजी भाषाओं के ज्ञाता हैं। बड़ों के लिए ग़ज़ल, गीत, कविता, व्यंग्य एवं समीक्षा लिखने में सिद्धहस्त हैं। अनेक राष्ट्रीय सेमिनार व संगोष्ठियों में शोधपत्र प्रस्तुत किये हैं। इनका बालकाव्य संग्रह है, 'धरती पर चांद' जो विषयों की ताज़गी और महक से मन मोह लेता है। आज की अधिकांश बाल कविताओं को लेकर आपकी पीड़ा ही यही है, "काव्यात्मकता के निर्वाह के साथ काव्यानुभूति के अनुरक्षण का प्रयास बहुत कम बाल कविताओं में दृष्टिगत होता है।" इनकी 'तो कैसा होता!' शीर्षक कविता यहाँ प्रस्तुत है –

शरबत का गर झरना होता, तो कैसा होता,
घड़ा उसी में भरना होता, तो कैसा होता!
एक सड़क बालूशाही की होती घर के पास,
उस पर मुझे टहलना होता, तो कैसा होता!
उसी सड़क के पास महल गर बरफी का होता,
मुझे उसी में रहना होता, तो कैसा होता!
गेट इमरती का सुन्दर-सा लगा हुआ होता,
लड्डूजी का धरना होता, तो कैसा होता!
बूंदी की दीवारें छत रसगुल्ले की होती,
वहीं गजक का पलना होता, तो कैसा होता!
कमरे सभी गरी के बिस्तर चमचम का होता,
शयन उसी पर करना होता, तो कैसा होता!
कलाकंद की टेबल कुर्सी घेवर की होती,
बैठ उसी पर पढ़ना होता, तो कैसा होता!
एक बड़ा तालाब लबालब रबड़ी का होता
उसमें रोज तैरना होता, तो कैसा होता!

रमेश यादव -- इनका जन्म 09.10.1962 को मुम्बई (महाराष्ट्र) में हुआ। शिक्षा एम.ए. (हिन्दी), पत्रकारिता, बैंकिंग व अनुवाद में डिप्लोमा। मराठी-हिन्दी अनुवाद कार्य एवं लोकसाहित्य में विशेष रुचि है। एक बालकाव्य संकलन 'महक फूल-सा मुस्काता

हैं। वर्ष 2010 में महाराष्ट्र राज्य हिन्दी साहित्य अकादमी द्वारा 'महक फूल-सा मुसकाता चल' पर सोहनलाल द्विवेदी सर्वोत्तम बालसाहित्य पुरस्कार प्राप्त हुआँ। इनकी 'तिरंगा' शीर्षक बालकविता का अंश यहाँ प्रस्तुत है -

जन मन का अभियान तिरंगा राष्ट्रगान से नाता है
भारत भू की शान तिरंगा हर दिल में लहराता है।
राष्ट्रध्वज भारत का है यह, कोटि-कोटि प्रणाम इसे
अजर-अमर वरदान देश का, वीरों का अभिमान इसे।

प्रभाकिरण जैन -- इनका जन्म 30.10.1963 को देहरादून (उत्तराखंड) में हुआ। शिक्षा- एम.ए. (राजनीति शास्त्र)। बालकविता एवं बाल कहानी इनके लेखन की मुख्य विधाएं हैं। 'गीत खिलौने' बालगीत संकलन है, जिस पर हिंदी अकादमी, दिल्ली से साहित्य सम्मान मिल चुका है। 'अपना घर' बालगीत यहाँ प्रस्तुत है -

मां, क्या हो सकता है ऐसा
जादू वाला घर हो अपना
जहाँ धूप हो उसी दिशा में
घर का दरवाजा हो अपना!
हो न अंधेरा, रहे उजाला
जहाँ बना हो अपना घर,
मां, बतलाऊं सच्ची-सच्ची
मुझे रात को लगता डर।

नरेन्द्र गोयल -- इनका जन्म 21.10.1963 को पिलखुवा, गाजियाबाद उत्तर प्रदेश में हुआ। पत्रकारिता तथा लेखन क्षेत्र में सक्रिय हैं। शिशु एवं बालगीतों की प्रकाशित पुस्तकें हैं - 'गीतमाला', 'गीतगंगा' तथा 'गीतसागर।' 'बंदरजी' बालगीत यहाँ प्रस्तुत है -

बंदरजी अपनी शादी में
जयमाला पर रूठ गये।
बोले, माला तब डालूंगा
मुझे मिलेंगे सूट नये
बंदरिया गुस्से में बोली
यही सूट रख लो बंदर।

पुलिस बुलाकर करवा दूंगी
वरना तुमको मैं अंदर।

दिनेश चमोला 'शैलेश' -- इनका जन्म 14.01.1964 को कौशलपुर, रुद्रप्रयाग, उत्तराखंड में हुआ। शिक्षा एम.ए. (हिन्दी, अंग्रेजी), पी-एच.डी., डी.लिट्. तक प्राप्त की है। संप्रति, भारतीय पेट्रोलियम संस्थान, देहरादून में वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी एवं 'विकल्प' पत्रिका के संपादक हैं। बच्चों के लिए मूलतः कहानी, कविता विधा में लेखन किया हे। इनके बालकाव्य संग्रह हैं - 'बोलो चिड़िया बोलो मैना', 'आओ गीत गाओ गीत', 'एक सौ एक बालगीत', 'गाएं गीत ज्ञान-विज्ञान के', 'प्रतिनिधि बालगीत', 'हम हैं सूरज चंदा मां के।' विभिन्न पुरस्कार सम्मानों से समादृत। यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बालकविता 'मुझको ही डांटा' -

दीदी भूली सैर-सपाटा!
सुबह-सुबह ही / दही-परांठा / खाकर करती / आटा-बाटा।
कोई नहीं पूछता मेरे / मारा दीदी ने क्यों चांटा?
रोज सवेरे / दौड़ी आती / मुंह बिचकाकर / मुझे खिजाती।
कितनी बार शिकायत की पर / कभी किसी ने उसको डांटा?
सोते-सोते / मुझे जगाती / 'कुर्र' कान की / काना-बाती।
मैं बोली क्यों करती ऐसा / पर उलटा मुझको ही डांटा!

चंद्रकांत त्रिपाठी 'चन्द्रेश' -- इनका जन्म 01.03.1965 को शेरपुर, मिर्ज़ापुर, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा एम.ए., पी-एच.डी.। संप्रति, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा में कुलसचिव पद पर कार्यरत हैं। बच्चों के लिए बहुत छोटी आयु से ही लिख रहे हैं। पत्र-पत्रिकाओं में बालकविताओं का प्रकाशन हुआ है। यहाँ इनकी एक बालकविता 'हंसते और हंसाते फूल' प्रस्तुत है -

कभी डाल से झूल-झूल कर
मीठे गीत सुनाते फूल।
कभी मगन हो उसी डाल से
खुशियां खूब लुटाते फूल।
सुख-दुख दोनों में मुस्काते
हरदम साथ निभाते फूल।
मैत्री की जो कठिन परीक्षा

कभी नहीं घबराते फूल।
माली अगर तोड़ना चाहे
हाथों में आ जाते फूल।
कोई नहीं शिकायत इनकी
कभी नहीं पछताते फूल।

दर्शन सिंह आशट -- इनका जन्म 15.12.1965 को ग्राम बरास, जिला पटियाला, पंजाब में हुआ। शिक्षा- एम.ए. (पंजाबी और उर्दू), पी-एच.डी. है। संप्रति, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला पंजाब में कार्यरत हैं। हिंदी एवं पंजाबी की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएं निरंतर प्रकाशित हो रही हैं। दो संपादित शिशुगीत संग्रह हिंदी में हैं। पंजाबी से हिन्दी और हिन्दी से पंजाबी में अनेक पुस्तकों का सफल अनुवाद किया है। पुरस्कार सम्मान की सुदीर्घ श्रृंखला में कुछ प्रमुख हैं - भाषा विभाग पंजाब से हिंदी बालकविता की पुस्तकों पर अनेक बार (1988 से 2005 तक के मध्य) सर्वोत्तम बालसाहित्य पुरस्कार। पंजाबी साहित्य अकादमी द्वारा वर्ष 2001 में 'बालगीत' पुस्तक पर सर्वोत्तम बालसाहित्य पुस्तक पुरस्कार। साहित्य अकादमी, दिल्ली द्वारा वर्ष 2011 में पंजाबी भाषा में बालसाहित्य सृजन के लिए सम्मान। यहाँ प्रस्तुत है इनकी एक बालकविता 'चिड़िया कहाँ गई?' -

बात समझ न आई अम्मा, चिड़िया कहाँ गई?
देती नहीं दिखाई अम्मा, चिड़िया कहाँ गई?
घर आंगन महकाती थी जो/दाना-दुनका खाती थी जो/फुदक-फुदक इठलाती थी जो
कहाँ उड़ान लगाई अम्मा, चिड़िया कहाँ गई?
चीं चीं राग सुनाती थी जो/हमको सुबह जगाती थी जो/रौनक खूब बढ़ाती थी जो
अब क्यों चुप्पी छाई अम्मा, चिड़िया कहाँ गई?
तिनका तिनका लाती थी वो/छत में नीड़ बनाती थी वो/अपना स्वर्ग रचाती थी वो
किसने नजर लगाई अम्मा, चिड़िया कहाँ गई?
बच्चों के संग गाती भी थी/उड़ना उन्हें सिखाती भी थी/मिट्टी में नहलाती भी थी
हुई क्यों आज पराई अम्मा, चिड़िया कहाँ गई?
अभी नहीं ननिहाल से आई/या बिल्ली कुत्ते ने खाई/क्या कौवे संग हुई लड़ाई
खिचड़ी नहीं बनाई अम्मा, चिड़िया कहाँ गई?
बोलो उससे अम्मा मोरी / पानी की है भरी कटोरी / पी ले आकर चोरी-चोरी

प्रकृति की शान थी चिड़िया/इक नन्ही सी जान थी चिड़िया/देश की एक पहचान थी चिड़िया
क्यों पहचान गंवाई अम्मा, चिड़िया कहाँ गई?

शिवचरण चौहान -- इनका जन्म 22.12.1965 को कानपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.ए. (अर्थशास्त्र, हिन्दी) बी.एड.। संप्रति, पत्रकारिता से जुड़े हैं। बाल साहित्य की कविता-कहानी विधा में लेखन। इनकी 'गौरैया' शीर्षक बालकविता यहाँ प्रस्तुत है -

साथ हमारे हंसती-गाती / इठलाती गौरैया
दाना खाती, पानी पीती / बतियाती गौरैया।
छत पर कभी, कभी आंगन में / कभी नीम पर द्वारे
पल-पल आती-जाती / फुर-फुर नन्हे पंख पसारे
जल में कभी धूल में खुद को / नहलाती गौरैया।
तिनके-तिनके जोड़, घोसला / श्रम से खूब बनाती
चींची बच्चों को अपने / पाले-पोसे दुलराती
उड़ना-गाना खाना पाना / सिखलाती गौरैया।
बड़े सवेरे सूरज उगने / से पहले उठ जाती
हंसती-गाती चीं-चीं, चूं-चूं / मेहनत में जुट जाती
घर भर में सबको है प्यारी / मनभाती गौरैया।

रमाशंकर -- इनका जन्म 10.10.1970 को ग्राम मोहनगंज, रायबरेली, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- स्नातक (बी.ए.) तक। कहानी, कविता, नाटक, उपन्यास आदि विधाओं में बच्चों के लिए सार्थक लेखन। फिल्म व टेलीविजन धारावाहिक एवं डाक्यूमेंटरी में लेखन व निर्देशन। पत्र-पत्रिकाओं में नियमित प्रकाशन। एक बाल काव्य शीघ्र प्रकाश्य है। बालकविता के बारे में इनकी राय है, 'बालकविता से मिली सीख हमें उम्र भर याद रहती है और आगे बढ़ने, कुछ करने के लिए प्रेरित करती है।' उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान से पुरस्कृत। सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, दिल्ली से भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार (प्रथम) से सम्मानित। इनकी एक बालकविता 'चुनमुन चिड़िया' यहाँ प्रस्तुत है -

रोज सबेरे छत पर मेरे
चुनमुन चिड़िया आती है
अपना मीठा गीत सुनाकर

मेरा मन बहलाती है।
मुझको सच्ची दोस्त सदा ही
चुनमुन चिड़िया लगती है
मेरे सोने-जगने के संग
क्या वह सोती-जगती है?
जल्दी उठकर पढ़ने जाओ
शायद यही बताती है
मेहनत से आगे बढ़ने का
महामंत्र सिखलाती है।
रोज सबेरे दाना चुगने
चुनमुन चिड़िया आती है
मां छत पर बिखेरती दाने
वह चुगती, उड़ जाती है।

यशोधरा यादव 'यशो' -- इनका जन्म 08.02.1974 को हाथरस (उ.प्र.) में हुआ। शिक्षा एम.ए. (हिन्दी), बी.एड. तक प्राप्त की। एक प्रकाशित काव्य संग्रह 'छूट गई तेरी पगडंडी' है। बच्चों के लिए लिखी गई इनकी कविता 'चिड़िया रानी' का अंश देखिए -

फुदक-फुदक कर चिड़िया रानी दाना खाने आती
बैठ आम की डाली पर फिर मीठा गान सुनाती
मन करता है चिड़िया जैसे पंखों को पा जाऊं
बैठ आम की ऊंची डाली, मम्मी तुम्हें बुलाऊं।

नागेश पाण्डेय 'संजय' -- इनका जन्म 02 जुलाई 1974 को खुटार, शाहजहाँपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा एम.ए. (हिन्दी, संस्कृत) एम.काम., एम.एड., पी-एच. डी.। संप्रति राजेंद्र प्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय बरेली में शिक्षा, विभागाध्यक्ष। वार्षिक बाल पत्रिका 'बालप्रभा' (प्रवेशांक) का संपादन किया है। शिशुगीत, कविता, कहानी, एकांकी, समीक्षा आदि अनेक विधाओं में लेखन किया है। बालकाव्य की प्रकाशित पुस्तकें हैं - 'चल मेरे घोड़े', 'अपलम चपलम', 'हाथी को जुकाम', 'यदि ऐसा हो जाये', 'लारी लप्पा।' उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ द्वारा उमाकांत मालवीय साहित्य सम्मान सहित अनेक साहित्यिक संस्थाओं से सम्मान प्राप्त। इनकी एक बालकविता 'जय कम्प्यूटर भैया' यहाँ प्रस्तुत है -

जय-जय हे कम्प्यूटर भैया!
आज हर कहीं तुम छाये हो
विद्यालय में भी आये हो,
बढ़वा दिया पीरियड दैया!
मिनटों में तुम गणित लगाते
किस चक्की का आटा खाते
चलता तेज बुद्धि का पहिया।
भैया अपना प्यार हमें दो
थोड़ी बुद्धि उधार हमें दो
बनो हमारे पार लगैया।

जाकिर अली 'रजनीश' -- इनका जन्म 01.01.1975 को लखनऊ, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षाः एम.ए. (हिन्दी), पी-एच.डी.। संप्रति, राज्य कृषि उत्पादन मंडी परिषद उ.प्र. में कार्यरत हैं। प्रायः सभी समकालीन पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रचुर मात्रा में प्रकाशन हुआ है। मौलिक एवं संपादित बालसाहित्य की एक बड़ी श्रृंखला है। मौलिक लेखन में बालकहानी एवं बाल उपन्यास पसंदीदा विधाएं हैं। संपादन क्षेत्र में कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, विज्ञान कथाएं आदि क्षेत्र में काम किया है। कुल पुस्तकों की संख्या दर्जनों में है। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ का सर्जना पुरस्कार तथा सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार दिल्ली का भारतेंदु हरिश्चन्द्र सम्मान सहित अन्य अनेक पुरस्कार-सम्मानों से समादृत हैं। दूरदर्शन के लिए धारावाहिक एवं डाक्युमेन्ट्री लेखन इनका वैशिष्ट्य है। 'बाल-मन' एवं 'हमराही' ब्लॉग (वेबसाइट) का संपादन करते हैं। यहाँ प्रस्तुत है इनकी बालकविता 'ज़रा सा प्यार' -

नहीं चाहिए लड्डू, बरफी, रसगुल्ला रसदार
मांग रहा हूं मम्मी तुमसे, सिर्फ ज़रा-सा प्यार।
क्रिकेट, गेम वीडियो, कैरम, माना बहुत है अच्छे
किंतु हर समय उनसे ही न घिरे रह सकें बच्चे
परिवर्तन की चाह लिये मन मेरा रहा निहार।
बहुत पी चुके कोल्ड ड्रिंक हम, दूध-चाय व कॉफी
अब चुका मन इन चीजों से, अब तो दे दो माफी
प्यासा है मन, जरा पिला दो तुम स्नेह की धार।
माना तुमको भी घर-आफिस में है दिन भर खटना

लेकिन मेरे कोमल मन का है अब मुश्किल बचना
चीख रहा बचपन, बस्ते का बढ़ता जाता भार।

कामना सिंह -- इनका जन्म 12.10.1975 को आगरा, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा-एम.ए. (दर्शनशास्त्र, हिन्दी), पी-एच.डी. (दर्शनशास्त्र, हिन्दी)। बी.ए. व एम.ए. (द्वय) में विश्वविद्यालय में प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान प्राप्त किया। हिन्दी में पांच स्वर्णपदक मिले। संप्रति, स्वतंत्र लेखन एवं कला प्रदर्शनियों में सहभागिता। अनेक एकल चित्र प्रदर्शनी संपन्न। साहित्य एवं दर्शन में अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथों का सृजन। नंदन, स्नेह, बालवाटिका, बालवाणी आदि पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित एवं बच्चों के पाठ्यक्रम हेतु 'अनुपम भारती' में चयनित। बच्चों, किशोरों व बड़ों के लिए अनेक उपन्यास प्रकाशित। अभी तक कुल प्रकाशित पुस्तकों की संख्या ग्यारह है। बालकाव्य संग्रह है, 'गुड़िया रानी।' एक बालकविता 'मेरे आंगन बूदें बरसें' यहाँ प्रस्तुत है -

मेरे आंगन बूंदें बरसें, मैं नाचूं ता थैया
गोल-गोल चमकीली बूंदें जैसे बड़ा रुपैया।
बूंद पड़े तो श्यामा भीगे, भीगे गौरी गैया
नदिया भीगे, नाला भीगे, भीगे ताल-तलैया।
खेत हमारे भीगे भीगे, हल जोतेगा भैया
बाबा मेरा फसलें काटे, रोटी करती मैया।
मैं तो नाचूं झूम-झूम के, सिहराती पुरवैया,
मेरे आँगन बूंदें बरसें, मैं नाचूं ता थैया।

मौ. साजिद खान -- इनका जन्म 15.03.1976 को उधौली, बाराबंकी, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा एम.ए., पी-एच.डी.। जी.एफ.पी.जी. कालेज शाहजहाँपुर में असिस्टेंट प्रोफेसर के पद पर कार्यरत। बालसाहित्य की विविध विधाओं, यथा--कविता, कहानी, उपन्यास आदि में लेखन। बच्चों और बड़ों के लिए समान रूप से सिद्धहस्त लेखन। केंद्रीय सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार द्वारा भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार (प्रथम वं द्वितीय) प्राप्त। बालकन जी बारी इंटरनेशनल, नई दिल्ली द्वारा वर्ष 2006 में राष्ट्रीय युवा कवि एवार्ड। यहाँ प्रस्तुत है इनकी बालिका विमर्श को संकेतित करती 'नहीं आऊंगी' बाल कविता -

बस्ता नया-नया दद्दा का / देखो मेरा है भद्दा-सा
नया मंगा दो, वरना शाला / नहीं जाऊंगी, नहीं जाऊंगी।

दद्दा पढ़ते मेज, बैठकर / थकूं फर्श मैं पोंछ-पोंछ कर
प्यार करो, वरना मैं खाना / नहीं खाऊंगी, नहीं खाऊंगी।
बाबा जब भी बर्फी लाते / मुझको कम, दद्दा सब पाते
मांगेंगे दद्दा जो चीजें / नहीं लाऊंगी, नहीं लाऊंगी।
करूं समय से चौका-बर्तन / फिर भी क्या खुश होता है मन
मुंह पे ताला डाल लिया, अब / नहीं गाऊंगी, नहीं गाऊंगी।
कभी भरा होता बांहों में / मैया, रोती हूं रातों में
जाओ, घर से विदा किया तो / नहीं आऊंगी, नहीं आऊंगी।

अभिरंजन कुमार -- इनका जन्म 06.07.1976 को बेगूसराय, बिहार में हुआ। हिंदी में स्नातक एवं पत्रकारिता में स्नातकोत्तर तक शिक्षा प्राप्त हैं। संप्रति, मीडिया में कार्यरत होने के साथ-साथ स्वतंत्र लेखन में संलग्न हैं। प्रकाशित बालगीत संकलन हैं, 'मीठी-सी मुस्कान दो।' वर्ष 1995 में राष्ट्रीय युवा कवि अवार्ड प्राप्त हुआ है। 'छोटी चिड़िया बड़ी चिड़िया' शीर्षक बालकविता यहाँ प्रस्तुत है -

छोटी चिड़िया पेड़ पर / बैठी बड़ी मुंडेर पर!
छोटी चिड़िया ने फल खाए/ और बड़ी ने दाने
फिर दोनों ने चीं-चीं-चीं-चीं / खूब सुनाए गाने
गाने से जब पच गया खाना / खाया फिर से सेर भर!
छोटी ने फिर दाना खाया / और बड़ी ने फल
इसके बाद पिया दोनों ने / नदी किनारे जल
फिर दुलार से चोंच मिलाई / आजू-बाजू घेरकर!
अब गाने गा-गाकर दोनों / आईं सबसे कहने
अचरज क्यों करते हो भाई / आखिर हम दो बहनें
जब जी चाहे हम तो प्यारे / प्यार करेंगे ढेर भर!

मौ. फहीम -- इनका जन्म 23.06.1977 को रुदौली, फैजाबाद, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा- एम.ए. (हिन्दी)। कविता, कहानी, नाटक, पहेलियां आदि विविध विधाओं में लेखन। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान से प्रकाशित बालकविता संकलन 'हाथी की बारात' पुरस्कृत। 'मेरे मन की बात' कविता यहाँ प्रस्तुत है -

आखिर क्यों न सुनता कोई / मेरे मन की बात!
बड़ी-बड़ी बातें न जानूं / नन्हा-सा है मन

मेरे जैसा नन्हा, मेरे / सपनों का आंगन
नहीं सजाने देता कोई / सपनों की बारात!
पढ़ने बैठूं तो दादाजी / कहते ला दे पान
दीदी कहतीं, जा रे मुन्ना / ला दे ये सामान
नन्हा हूँ कुछ कह न पाता / खाता सबसे मात!
डांट पिलाती मम्मी, भैया / रौब जमाते हैं
पापा कहते पढ़ो, खेल पर / रोक लगाते हैं
हुक्म चलाते सभी मुझी पर / दिन हो चाहे रात!

कृष्ण कुमार यादव -- इनका जन्म वर्ष 1977 में तहबरपुर, आजमगढ़, उत्तर प्रदेश में हुआ था। शिक्षा एम.ए. (राजनीतिशास्त्र) है। संप्रति, निदेशक डाक सेवाएं, इलाहाबाद परिक्षेत्र, इलाहाबाद में कार्यरत हैं। अपनी पत्नी आकांक्षा यादव के साथ 'बाल दुनिया' ब्लॉग का संचालन कर रहे हैं। अनेक निबंध संग्रह, काव्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं। बालभारती, बालवाणी, बालवाटिका, देवपुत्र एवं बच्चों का देशआदि पत्र-पत्रिकाओं में बाल-रचनाएं छपी हैं। न्यू मीडिया एवं ब्लॉगिंग हेतु 'अवध सम्मान' से समादृत। इनका प्रकाशित बालगीत संग्रह है, 'जंगल में क्रिकेट'। बालकविता के संबंध में इनका मंतव्य है, 'बालकविता अन्तर्मन से निःसृत वह भाव है, जो व्यक्ति को उसके बचपन के साथ-साथ वर्तमान समय के बचपन की मासूमियत और बालमन की गतिविधियों से जोड़ता है।' इनका बालगीत 'जंगल में क्रिकेट' यहाँ प्रस्तुत है -

जंगल में भी शुरू हुआ / ट्वेंटी-ट्वेंटी क्रिकेट मैच
दर्शक बने सभी जानवर / देखें, कौन करेगा कैच?
जिराफ-भालू बने कप्तान / खड़े हुए थे सीना तान
लोमड़ी, सियार करें फील्डिंग / शेर अंपायर थे हैरान
घोड़े ने पहले की बॉलिंग / हाथी ने फिर छक्का जमाया
चीयर लीडर बनी बंदरिया/ कूद-कूद कर नाच दिखाया।

मौ. अरशद खान -- इनका जन्म 17.09.1977 को उधौली, बाराबंकी, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा एम.ए., पी-एच.डी.। जी.एफ.पी.जी. कालेज शाहजहाँपुर में असिस्टेंट प्रोफेसर के पद पर कार्यरत। सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशन। बच्चों एवं बड़ों के लिए समान रूप से अनेक विधाओं में लेखन। प्रकाशित बालकविता संग्रह 'रेल के डिब्बे में।' यहाँ प्रस्तुत है इनकी बालकविता 'नानी का गांव', जो परिवर्तित परिवेश की त्रासदी जतलाती है -

सूना-सूना-सा लगता है, / अब नानी का गांव।
दूर-दूर तक हरा-भरा जो / फैला था मैदान,
लालाजी ने बनवा ली हैं, / वहाँ कई दूकान।
बनकर ठूंठ खड़ा है पीपल / जो देता था छांव।
माली बाबा की फुलवारी / सूख गई अब हाय,
रामदीन का लड़का अब तो / वहाँ चराता गाय।
सूख गई वह नदिया प्यारी / जिसमें चलती नाव।
हमें सुनाता था जो जंगल / पुरवइया में गान,
चुभता है अब आंखों में वह / बनकर रेगिस्तान।
कोयल की अब कुहक नहीं बस / सुन पड़ती है कांव।

अंजीव 'अंजुम' -- इनका जन्म 20.09.1978 को आयराखेड़ा (मथुरा उ.प्र.) में हुआ। शिक्षा एम.ए. (हिन्दी), एम.फिल्.। संप्रति, अध्यापक। प्रकाशित बालकाव्य संग्रह हैं - 'बच्चों की फुलवारी', 'गीत वतन के गाये जा', 'नया सवेरा', 'आस्था के स्वर', 'नव स्वरों की गूंज', 'ज्ञान-विज्ञान पहेलियां', 'कौन फलों का राजा' (गीति नाटिका) इनका एक बालगीत यहाँ प्रस्तुत है -

जंगल का स्कूल खुला
हाथी सबको रहा बुला
सारस ने सब पर्चे बांटे
जंगल के सब बच्चे छांटे
नये-नये अध्यापक आये
सबने मीठे गीत सुनाये
बांटी टॉफी खट्टी-मीठी
कर दी फिर बच्चों की छुट्टी।

अंशु शुक्ला -- इनका जन्म 05.12.1981 को झांसी, उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा बी.ई. (सूचना प्रौद्योगिकी) संप्रति, सॉफ्टवेयर इंजीनियर, विप्रो, बैंगलुरु। प्रकाशित पुस्तकें हैं - 'नाचे मोर मचाये शोर', 'तिरंगा', 'झरना' आदि। बालकन जी बारी इंटरनेशनल, नई दिल्ली से सम्मानित। 'तितली रानी' शीर्षक बालकविता यहाँ प्रस्तुत है -

तितली रानी, तितली रानी / कौन देश से आती हो
फूल-फूल का रस पीती हो / फिर झट से उड़ जाती हो

अपने इन सुंदर पंखों पर / क्यों इतना इतराती हो
छोटे-छोटे हम बच्चों को / क्यों तुम नाच नचाती हो
रंग-बिरंगे फूलों के संग / तुम क्यों हंसती-गाती हो
हम बच्चों से क्या कुट्टी है / हाथ नहीं जो आती हो
मैं भी इक दिन पंख लगाकर / जब तितली बन जाऊंगी
तुमसे जी भर बात करूंगी / और संग उड़ जाऊंगी।

आकांक्षा यादव -- इनका जन्म 30.07.1982 को सैदपुर, गाजीपुर (उ.प्र.) में हुआ। शिक्षा एम.ए. (संस्कृत) है। लघुकथा, लेख, कविता तथा बालकाव्य में लेखन किया है। 'बालभारती', 'बालवाणी', 'बालवाटिका', 'देवपुत्र', 'बच्चों का देश' आदि पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन हुआ है। इंटरनेट पर भी विभिन्न पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित हुई हैं। इंटरनेट पर 'बाल दुनिया' ब्लॉग का संचालन। इस हेतु 'अवध सम्मान' से समादृत। इनका एक प्रकाशित बालकविता संग्रह 'चांद पर पानी' है। बालकविता के विषय में आपका मंतव्य है, 'बालकविता बालमन और उसके परिवेश को सहेजती वह निश्छल अनुभूति है, जो शब्दों का रूप लेकर काव्यमय रूप में जीवंत होती है।' इनका बालगीत 'चांद पर पानी' यहाँ प्रस्तुत है -

नानी सुनाएं कहानी
कितनी अद्भुत बानी।
लेकर बैठी तकली
चांद पर बुढ़िया रानी।
चांद पे निकला पानी
सुनकर हुई हैरानी।
बड़ी होकर जाऊंगी
पीने चांद पर पानी।

निश्चल -- इनका जन्म 01.12.1982 को अलीगढ़ उत्तर प्रदेश में हुआ। शिक्षा एम.काम., एम.ए. (हिन्दी, शिक्षाशास्त्र), बी.एड. है। सम्प्रति अध्यापन से जुड़े हैं। व्यंग्य, ग़ज़ल, हाइकु, साक्षात्कार तथा बालकाव्य आदि विधाओं में लेखन कार्य किया है। बाल लेखन को प्रोत्साहित करने वाली त्रैमासिक बालपत्रिका 'अभिनव बालमन' के संपादक हैं। इनकी 'आयें जब स्कूल' कविता में बालमन की झांकी देखिये -

मेरे पापा मुझको लेने आयें जब स्कूल

मेरे मन की बगिया में तब खिल-खिल जायें फूल
मेरे प्यारे-प्यारे पापा मुझको गले लगायें
अपनी बाहें बढ़ा, गोद में मुझको तुरत उठायें
मैं भी उनकी बाहों में तब हंस-हंस जाऊं झूल।
गुनगुन ने जो बात कही पापा को मैं बतलाऊं
चिंकी की चुगली वाली हरकत भी उन्हें सुनाऊं
मैडम की शाबासी बतला खुशी से जाऊं फूल।
हिन्दी में जो याद करी वह कविता उन्हें सुनाऊं
खोल गणित की कापी सारा गुणा-भाग दिखलाऊं
लेकिन इंगलिश वाली कविता हाय गई मैं भूल।

शिवांक –– इनका जन्म 17.05.1991 को गांधी नगर बस्ती में हुआ। संप्रति, विद्यार्थी हैं। हस्तलिखित पत्रिका 'नन्ही कलम' का संपादन किया है। इनका बालकाव्य संकलन है, 'बस्ते पर चूहा'। 'आज से मैंने सोचा' डायरी है। इनकी एक कविता यहाँ प्रस्तुत है –

एक परी आए, / गरमी को दूर भगाए!
परी हमारी दोस्त बन जाए/साथ हमारे खेले/साथ हमारे गाए।
एक परी आए / दुनिया की सैर कराए!
परी हमें कहानी सुनाए/सबसे अच्छी नींद सुलाए/सबका मन बहलाए।
एक परी आए, / होमवर्क कर जाए।

अद्यतन युग में बाल कविता के क्षेत्र में उपर्युक्त कवियों के अतिरिक्त और भी बहुत से बालकवि सक्रिय हैं। इनके नाम व बालकविता संकलन इस प्रकार हैं- अनिल द्विवेदी 'तपन' की 'मेढक दादा', निडर की 'अच्छे बच्चे पढ़ने जाते', अनुराग कुमार मिश्रा की 'जागो भाई', आर. पी. सारस्वत की 'नानी का गांव' तथा 'चटोरी चिड़िया', अशोक कुमार सक्सेना की 'महकेंगे कब गीत', अशोक रंजन सक्सेना की 'छोटे-छोटे गीत', अरविंद बख्शी की 'आओ गाएं धूम मचाएं', अब्दुल समद राही की 'भारत देश हमारा', 'बज गई घंटी', अरूण बहुखंडी 'अंजाना' की 'सूरज के घर', अजय गुप्त की 'जंगल में मोबाइल', अशोक सिंह सोलंकी की 'लतिका', 'गुंजार'

तथा 'मिट्ठू मियां', इंदु पाराशर की 'बच्चों देश तुम्हारा', उपेंद्रनाथ शुक्ल की 'बालगीत', एल. आर. सोनी की 'चेतना की धूप', 'कृष्ण कन्हैया', ओम प्रकाश आर्य की 'दीप जलाओ', 'बाल दोहा शतक', ओम प्रकाश सिंहल की 'कहा पेड़ ने', कमल सिंह चौहान की 'सबका सूरज', कमलेश द्विवेदी की 'बच्चों की कविताएं', कौशल पाण्डेय की 'जंगल की ओर', 'सोन मछरिया गहरा पानी', कान्ता अरोड़ा की 'अच्छे बच्चे अच्छा घर', गोविंद पाल की 'मुन्ना बोला', गोविंद भारद्वाज की 'सूरज का संदेश', गोपीनाथ कालभोर की 'पेड़ लगे तो पानी बरसे', चंद्रप्रकाश शर्मा पटसारिया की 'शाला गीत', चंद्रमोहन दिनेश की 'मेरे प्यारे देश', 'टांय-टांय कर तोता बोला', 'नोटों का पेड़', 'चंदा मामा बोले मां से', 'मछली दीदी सुनो-सुनो', जगदीश तोमर की 'बूझो तो जानें', 'विज्ञान पहेलियां', जयपाल तरंग की 'श्रेष्ठ बाल कविताएं', जीवन मेहता की 'बालगीत', 'देश हमारा जिंदाबाद', 'हम बच्चे हिंदुस्तान के', 'अमन गीतमाला', ज्ञानकुमारी अजीत की 'स्वर संगम', 'कुंजकली', 'दूध बताशा', त्रिलोक सिंह ठकुरेला की 'नया सवेरा', देशबंधु शाहजहांपुरी की 'मूंछे ताने पहुंचे थाने', 'देश प्रेम के बालगीत', धनसिंह मेहता 'अनजान' की 'महकी माटी भारत की', नंदकुमार मनोचा 'वारिज' की 'आओ चिड़िया', नरेंद्र मदनावत की 'अंकुर', नरेंद्रनाथ लाहा की 'बचपन', नवीन सागर की 'गेंद निराली मीनू की', नरेंद्र मंस्ताना की 'चंदन का पलना', निशेश जार की 'बातें सूरज की', प्रीति प्रवीण खरे की 'खेल-खेल में', प्रत्यूष गुलेरी की 'बालगीत', पी. दयाल श्रीवास्तव की 'बचपन गीत सुनाता चल', 'बचपन छलके छल छल छल', पद्मा सिंह की 'फूलों को खिलना है', पुष्पा रानी गर्ग की 'आओ मिलकर गाएं हम', 'शिशुगीतमाला', पूरन सरमा की 'सरस बालकविताएं', 'गुन-गुन गाओ', प्रतिमा पाण्डेय की 'तोतले बोल', बद्रीप्रसाद वर्मा 'अनजान' की 'रूठी गुड़िया', बालराम गुमाश्ता की 'गीतों में विज्ञान', 'अपनी प्यारी धरती', बालकवि बैरागी की 'आओ बच्चो गाओ बच्चो', बाबूलालपरमार की 'बच्चों की दुनिया', बैजनाथप्रसाद शुक्ल 'भव्य' की 'बच्चो गाओ गीत सुहाने', भालचंद्र सेठिया की 'झूला झूले गुड़िया रानी', भारत गौड़ की 'सचित्र बाल कविताएं', भगवतीलाल व्यास की 'मौसम के गीत', 'भोर के गीत', 'यह देश हमारा', 'जब-जब खिले गुलाब', भानुदत्त तिवारी 'मधुरेश' की 'आओ बच्चो गाओ बच्चो', 'बच्चे गाएं गीत', 'गीतों के गुब्बारे', 'प्यारे पक्षी प्यारे फूल', मोक्ष गौड़ की 'आंख मिचौली', महेंद्र भट्ट की 'मेरी मम्मी मेरी बेटी', महेशचंद्र त्रिपाठी की 'लाएंगे नूतन विहान', 'हम चौकन्ने', 'जंगल में मंगल', महेश सक्सेना की 'राज्य हमारे राष्ट्र के' (भाग एक-दो), 'खुशी के गीत', 'आओ जानें सड़क के नियम', मुनिलाल उपाध्याय 'सरस' की 'बाल बताशा', 'जय भारत', 'नेहा-सनेहा', 'जलेबी',

'झंइयक झम', 'चरण पादुका', मूलाराम श्रीराम जोशी की 'गीतों का गमला', 'पंकज का पत्ता', यशमालवीय की 'ताक धिनाधिन', 'पानी लगता है जूजू', रंजना अग्रवाल की 'मच्छर ने समझाया', राजकिशोर सक्सेना 'राज' की 'राज बालतरंगिणी', 'ममता बाल तरंग', राजीव नामदेव 'राना लिधौरी' की 'अर्चना', राजेंद्र शर्मा 'अक्षर' की 'धरती गोलमटोल', राजेश जोशी की 'गेंद निराली मीठू की', राजकुमार मिश्र 'मधुकर' की 'बालगीत कुंज', रामजीलाल घोड़ेला 'भारती' की 'मिट्टी के रंग बच्चों के संग', 'सुनहरा उपवन मेरा', रामवल्लभ आचार्य की 'राष्ट्र आराधना', 'सुमिरन', 'गाते गुनगुनाते', 'अक्कड़ बक्कड़ बम्बे बो', रामावतार अनुरागी की 'भारत देश हमारा प्यारा', रामेश्वरदास वैष्णव की 'बच्चो तुम बूढ़े मत होना', रामेश्वरप्रसाद श्रीवास्तव की 'बालगीत', लक्ष्मीकांत खुण्टिया की 'शिशु कविता', लक्ष्मी यदुनाथ मुंग्रे की 'मधुवन', विजयानंद की 'नन्हे मुन्ने गीत', 'गौरव गीत', 'देश हमारा', 'चुनी हुई बाल कविताएं', विनोद रास्तोगी की 'पिंकी की पूसी, मीठी बोली बोलो', 'हम भारत के लाल', शशांक मिश्र 'भारती' की 'हम बच्चे', 'बिना विचारे का फल', शिवकुमार गौड़ की 'हल्ला-गुल्ला', श्याममनोहर व्यास की 'मनोहर बालगीत', शैलबाला अग्रवाल की 'किलकारी', श्यामलाल शमी की 'नया उजाला', 'नई सुबह', श्यामसुंदर श्रीवास्तव 'कोमल' की 'हम भारत की शान बनेंगे', 'प्यारे बच्चे प्यारे गीत', 'आलोक शिशुगीत', संजीव सौरभ की 'नन्ही उड़ान', 'आओ गाएं मीठे गीत', संतोष कुमार की 'प्यारे बच्चे प्यारे गीत', 'गीत गुंजन', 'गीत सुधा', साधना श्रीवास्तव की 'बालक की चाहत', सुनयना अवस्थी की 'पढ़ ले बिटिया', सतीशचंद्र भगत की 'शिशुगीत गांए हम', 'भारत के प्यारे बच्चे', 'हंसते-गाते बच्चे प्यारे' 'कदम-कदम बढ़ते जाएंगे', सर्वेश अस्थाना की 'इनको जानो इन्हें मनाओ' सत्यदेव सवितेन्द्र की 'फूलों से बतियाएं तितली', 'गांव हमारे बड़े सुहाने', सत्यनारायण 'सत्य' की 'आये दिन छुट्टी वाले', सावित्री देवी चौरसिया की 'स्वर-व्यंजन गीतमाला', 'बालगीत', 'आओ गीत गाएं', 'गीतों की कहानी', सीताराम गुप्त 'दिनेश' की 'सूरज के बेटे', सुकीर्ति भटनागर की 'मधुर-मधुर हंसते रहना', 'बचपन रंग रंगीला', सुधा गुप्ता 'अमृता' की 'ताकि बची रहे हरियाली', सुमित्रा पाण्डेय की 'शिक्षाप्रद बालगीत', 'अक्षर कविता', 'नैतिक शिक्षा के गीत', सूरज मृदुल की 'सचित्र बाल कविताएं', स्नेहलता की 'चेतना के गीत', स्नेहलता सोनटके की 'नानी का गांव', हरिसिंह 'हरीश' की 'बच्चो पढ़ने जाओ रोज', 'बच्चों की मीठी मुस्कान', हरीश कुमार 'अमित' की 'गुब्बारे जी', 'चाभी वाला बंदर', 'मम्मी-पापा की लड़ाई', हरीश दुबे की 'बच्चे सबको प्यारे हैं', श्रीनारायण अग्निहोत्री 'सनकी' की 'आओ

अद्यतन युग की बालकविता का उपर्युक्त लेखा-जोखा यह जतलाता है कि उसने बड़ी संजीदगी से बच्चों के मन की बात सुनी है। इसीलिए उसका कलेवर इतना विस्तृत हो गया है कि बच्चे से जुड़ा हर विषय आज उसके सीमा-क्षेत्र में आ गया है। मां की लोरी, पिता का वात्सल्य, दादी की गोद, नानी का लाड़ और भाई-बहन का अनमोल प्यार है हिंदी बालकविता। बस्ते का बोझ, होमवर्क का भूत, खेल के घटते हुए मैदान और मासूम बचपन के कलेजे पर एकाकीपन की मार का इज़हार है हिंदी बालकविता। पर्यावरण, प्रदूषण, वृक्षारोपण, जल का मोल, विज्ञान और सूचनात्मक ज्ञान का भंडार है हिंदी बालकविता। होली के रंग, दीवाली की आतिशबाजी, दशहरे का उल्लास, मेले-ठेले-सर्कस-नुमाइश और हमारे राष्ट्रीय पर्वो के गौरव का संभार है हिंदी बालकविता। सूरज-चांद-सितारे-बादल और परियों का इंद्रधनुषी संसार है हिंदी बालकविता। कुल मिलाकर, एक बच्चे के हर स्पन्दन का अद्भुत समाहार है हिंदी बालकविता। वह बाल जीवन का एक संपूर्ण चित्र है।

आज का बच्चा अपने लिए माता-पिता के समयाभाव की समस्या से बेतरह जूझ रहा है। संपन्न वर्ग का बालक आखिर लैपटॉप के साथ कितनी देर व्यस्त रहे? 'पकड़' और 'फिरौती' जैसे समकालीन जीवन के संत्रास के चलते घर से स्कूल और स्कूल से घर तक ही उसके कदम बंधकर रह जाते हैं। टेलीविजन की कार्टून फिल्मों के सहारे वह कब तक अपना मन बहलाये? रमेशचंद्र पंत की 'अकेला हूं मैं' कविता में बालक के मन के इस दर्द को बड़ी सहानुभूति के साथ सुना गया है। मध्यवर्ग का बच्चा पैसे के पीछे भागते अपने माता-पिता को देखकर स्तब्ध है। सीमित आय और असीमित महत्वाकांक्षाओं की चक्की के दो पाटों के बीच पिसते बच्चे की मनोभावना को रमेश तैलंग ने 'पापा की तनख्वाह में' कविता में बहुत गंभीरता से व्यक्त किया है। निम्नवर्ग के बालक की हताशा को जगदीश व्योम ने बड़े मार्मिक अंदाज में पकड़ा है, 'बहुत दूर है चांद, हाथ हैं छोटे-छोटे अपने।' सबसे बढ़कर, माता-पिता की अतिव्यस्तता के चलते वह इतना खिन्न है कि अश्वघोष की 'समय नहीं है' कविता में अपना विक्षोभ व्यक्त किये बिना नहीं रहता –

"मम्मी पापा नानी भैया / दिन भर करते ता-ता थैया
मेरी समझ नहीं आता है / इनका समय कहाँ जाता है?"

जैसे-तैसे घर में कभी कोई प्रोग्राम बनता भी है, तो ऐन वक्त पर कोई व्यवधान पड़े बिना नहीं रहता। उषा यादव की 'गुस्सा हैं हम जाओ जी' कविता में इसका चित्रण है।

आज के बालक का यह विक्षोभ सिर्फ माता-पिता के समयाभाव को लेकर

ही नहीं है, उसके अन्य कारण भी हैं। बस्ते के बोझ से कितना संत्रस्त है वह, इसे डा. श्रीप्रसाद, हरीश निगम, कृष्ण शलभ और सुरेंद्र विक्रम के साथ-साथ अन्य अनेक बाल कवियों ने भी बहुत नजदीक से देखा है। यही नहीं, हिंदी की समकालीन बालकविता में सूचना-प्रौद्योगिकी की चमत्कारिक दुनिया का व्यापक प्रवेश भी दृष्टव्य है। कम्प्यूटर, मोबाइल, रोबोट जैसे विषयों पर घमंडीलाल अग्रवाल, मो. फहीम, शिवचरण चौहान, चक्रधर नलिन आदि कवियों ने रुचिपूर्वक कविताएं लिखी हैं। वृक्षारोपण, प्रदूषण, जल संरक्षण जैसे पर्यावरणपरक विषयों के साथ-साथ विज्ञान से भी समकालीन हिंदी बालकविता ने अपना संवाद स्थापित किया है। नलिनजी ने तो एक पूरी पुस्तक ही 'विज्ञान कविताएं' नाम से लिखी है। भगवतीप्रसाद द्विवेदी के वायु प्रदूषण पर, तो अनंत प्रसाद रामभरोसे ने जल प्रदूषण को लेकर विचारोत्तेजक बालकविताएं लिखी हैं।

समकालीन हिंदी बालकविता में केवल चिंतन, विचार और गांभीर्य ही नहीं, चुहल के भावभीने स्वर भी हैं, जो हमें गुदगुदाये बिना नहीं रहते। यादराम रसेंद्र की 'कसम राम की' और हरीश निगम की 'मामी कहाँ हमारी' इसी कोटि की कविताएं हैं। एक खास बात यह है कि आधुनिक बालकविता ने कुछ ऐसे बिंदुओं का भी संस्पर्श किया है, जिनका इससे पहले बालकविता में अभाव भले ही न हो, पर व्यापक चित्रण नहीं हुआ था। मंहगाई, भ्रष्टाचार, ऊंच-नीच, अमीर-गरीब जैसी विचारोत्तेजक संवेदनाओं ने आज की हिंदी बालकविता को चिंतन का गंभीर धरातल दिया है। जीवन मूल्यों के तिरोभाव पर चिंता के चलते उसने उदात्त भावों तक उड़ान भरी है। विनोदचंद्र पाण्डेय की अनेक कविताएं इस महक से परिपूर्ण हैं। प्रकाश मनु की 'खुशबू जरा उड़ा लें' में भी इसी स्वर को सुना जा सकता है।

लोक जीवन से गहन संपृक्ति भाव भी आज की हिंदी बाल कविता में देखा जा सकता है। दिविक रमेश इस ओर गहरे अग्रहशील हैं। रमेश तैलंग की 'अले, छुबह हो गई' तथा 'चक्की चले' भी इसी रंग की ओर इंगित करती हैं। 'बाल अधिकार' जैसे गंभीर विषय को लेकर भी समकालीन हिंदी बालकविता ने समय-समय पर अपना मुंह खोला है। जाहिर है, विषय-वैविध्य की दृष्टि से उसने नये कीर्तिमान स्थापित किये हैं। और सच तो यह है कि शैली में नये प्रयोगों को लेकर भी वह पीछे नहीं रही है। दिविक रमेश, अजय प्रसून, सूर्यकुमार पाण्डेय जैसे नाम सहज ही हमारे जेहन में कौंध जाते हैं।

आज की हिन्दी बालकविता में अनेक खूबसूरत शेड्स होने के बावजूद बहुसंख्यक

है। ये कविताएं विषय की दृष्टि से कोई मौलिकता नहीं रखतीं। देशप्रेम, पशु-पक्षीजगत और मौसम-पर्व आदि विषयों पर तीस-पैंतीस वर्ष पूर्व और कभी-कभी तो उससे भी काफी पहले इतनी सुंदर कविताएं लिखी जा चुकी हैं कि उनके सामने आज की ये बाल कविताएँ पानी मांगती हैं। पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त करने के लिए हम चिंता करते हैं। जल, वायु और ध्वनि प्रदूषण को दूर करने के लिए बड़े स्तर पर प्रयास होते हैं, पर इस साहित्यिक प्रदूषण को लेकर किसी के मन में कोई चिंता नहीं जागती। घटिया किस्म की ये कविताएँ सिर्फ लिखी नहीं जातीं, धड़ल्ले से पत्र-पत्रिकाओं में छपती हैं और प्रकाशक पूरी खुशी से इन्हें रंगारंग चित्रों से सजाकर पुस्तकाकार प्रकाशित करते हैं। कभी-कभी तो ऐसा लगता है कि चूड़ी बनाने के कारखाने और आतिशबाजी बनाने के कारखाने की तरह बालकवि निर्माण के कारखाने भी जहाँ-तहाँ खुल गये हैं। सिर्फ पैसा खर्च करिये और बालकवि बनने के गौरव का सुख लूटिये। मज़ा यह कि ये किताबें जब बच्चों की मासिक, द्वैमासिक पत्रिकाओं में समीक्षा हेतु भेजी जाती है तो समीक्षक प्रवर इन्हें हिंदी बालकविता की श्रेष्ठ पुस्तकों में शुमार करते हैं। इनकी तारीफ में ऐसी कसीदाकारी की जाती है कि समीक्षा का औचित्य ही खत्म हो जाता है। आज भी अगर आप सिर्फ बड़ों के कथा मासिक 'हंस' को उठाकर देख लीजिए, तो पाठकों के पत्र अमूमन निष्पक्ष राय देते हुए मिलेंगे। नकल पर लिखी हुई कहानी, घटिया कहानी और श्रेष्ठ कहानियों को लेकर पाठकों की बेबाक राय आपको मिलेगी। हिंदी बालकविता के सामने पता नहीं ऐसी कौन-सी मजबूरी है या भाई-भतीजावाद की बाध्यता है, जिसके चलते बेसिर-पैर की कविताओं की मुक्त कंठ से सराहना जरूरी हो जाती है। जो भी हो, बालकविता की प्रदूषण मुक्ति के लिए इस मसले पर गंभीर चिंतन जरूरी है।

अपनी उपर्युक्त पीड़ा को प्रमाणित करने के लिए मैं रचनाकारों का नाम लिये बगैर कुछ उद्धरण आपके सामने प्रस्तुत करूंगी, जो मेरे कथन की सच्चाई बयान करेंगे। निम्न पंक्तियां बच्चों को गढ़ने की जिम्मेदारी उठाते हुए क्या संदेश दे रही हैं, देखा जा सकता है -

'हम यदि फेल हुए तो हम भी / नकल करेंगे खुल्लमखुल्ला।'

इसी तरह 'दूरदर्शिता' शीर्षक एक अन्य बाल कविता का अंदाज-ए-बयां भी विलक्षण है -

'कुल नौ भाई हैं मेरे / शायद एक और है आने वाला
अब ना आए भाई मेरा / क्या ऐसा है कोई ताला
हे ईश्वर मुझ पर दया करो / मेरे घर ला दो एक टी.वी.
जब देखे मम्मी टी.वी. / शायद दिख जाए विज्ञापन माला-डी।'

'नानाजी आए हैं' शीर्षक बालकविता की खूबसूरती भी कुछ कम नहीं है। नाना-नानी बच्चों के पूज्य होते हैं, पर यह बालकविता नानाजी का जो चित्र खींचती है, वह देखने लायक है –

'नाना हैं दिल के मरीज / पर खाते खाना हैं लजीज
गोली पर गोली लेते हैं / हमें नहीं कुछ देते हैं।'

नानाजी के गुणों का धाराप्रवाह बखान करने से बच्चों के सामने उनका कौन-सा बिम्ब बनेगा, शायद रचनाकार को खुद नहीं मालूम है। तभी तो वह लिख सके हैं –

(क) 'बिना बुलाये आते हैं। बिना बताये जाते हैं।'
(ख) 'खैनी मलते रहते हैं।'
(ग) 'नानी से लड़ते रहते हैं।'

इसी तरह एक अन्य बालकविता 'मेरे डैडी' जब डैडी के गुणों का ब्योरा देने बैठती है तो उचित-अनुचित का सारा विवेक भूल जाती है –

(क) 'खाते फिर वो खाना / टी.वी. पे सुन के गाना।'
(ख) 'चश्मा उतार रखकर / लगते कवि वो दिनकर।'
(ग) 'अखबार हाथ लेकर / सो जाते उसमें छिपकर।'

इस किस्म की कविता यदि न लिखी जाये, तो बाल कविता शायद 'घटियापन' के लेबिल से बच जायेगी।

सिर्फ नाना और पिता ही नहीं, यह कविता दादी और मां को भी नहीं बख़्शती है। निश्चय ही दादी की पारम्परिक छवि आज बदल गई है। स्वतंत्रता के बाद जन्मी पीढ़ी दादी-नानी बन चुकी है। वह उच्च शिक्षा प्राप्त है, अपनी अस्मिता पहचानती है और पुरुषों के साथ कदम से कदम मिलाकर चलना जानती है। पर एक गरिमामंडित, भव्य व्यक्तित्व की स्वामिनी का यह चित्रण कदाचित् शालीनता के साथ-साथ भाषा-शुद्धता की सीमा भी तोड़ता है –

'जेठे-स्याने कहते आये / बुढ़िया होती दादी
कमर झुकाकर चलती हरदम / लिये हाथ में लाठी
अड़सठ की है मेरी दादी / अभी युवा दिखती है
कद-काठी है इसकी अच्छी / लड़की-सी लगती है।'

और कभी-कभी तो आज की बालकविता निश्चय ही शालीनता की सारी सीमाएं तोड़ देती है, जब ममता की मूर्ति मां के लिए कहती है –

'मां की छाती तनी-तनी / मां की बानी धनी-धनी।'

'तनी' की तुकबंदी के लिए मां की वाणी को 'धनी' कहने का प्रयोजन भी समकालीन बालकविता ही जाने! पर्व-त्योहार और मौसम जैसे विषयों पर हमारे पुरानी पीढ़ी के कवि इतनी श्रेष्ठ बालकविताओं का सृजन कर चुके हैं कि उनके सामने आज की बालकविता अक्सर पानी मांगती है। बारिश पर आज से 50 वर्ष पूर्व 'बालसखा' के अगस्त 1961 के अंक में छपी चंद्रपालसिंह यादव 'मयंक' की 'जादूगर बरसात' कविता की ये पंक्तियां बरबस याद आ रही हैं, जिसमें बरसात के माध्यम से शादी का पूरा बिम्ब खींच दिया गया है -

'बादल गरज-गरज उठते हैं, मानो बजते ढोल-मृदंग
बिजली नाच-नाच कर नभ में, कैसा जमा रही है रंग
बूंदें नहीं, गुलाबपाश से केवड़ा जल छिड़का जाता
शादी की महफिल का पूरा साज-बाज है सज जाता
जादूगर ने दृश्य दिखाया, मौसम की बारात का
जादूगर बनकर आया है यह मौसम बरसात का।'

ध्वन्यात्मकता, गत्यात्मकता और श्रव्यात्मकता का अद्‌भुत संयोजन यहाँ हमें विस्मय- विमुग्ध किये बिना नहीं रहता। उत्प्रेक्षा, रूपक, विशेषोक्ति और मानवीकरण जैसे अलंकारों का भाषा में इतने सरल रूप में सुगुंफन, कि बच्चों को विषय के साथ सहज तादात्म्य में कोई बाधा न आये, प्रातिभ बालकवि की लेखनी से ही संभव था। इस परिप्रेक्ष्य में समकालीन बालकविता के बरसात के चित्र देखिए -

'थोड़ा मंद-मंद हो बरसो
मेरे बापू के कुर्ते को मत छीनो
थोड़ा टप-टप कर बरसो
मेरी दीदी की चोली को मत छीनो
थोड़ा झर-भर कर बरसो
मेरे भैया की निक्कर को मत भीगोओ
थोड़ा छन-छन कर बरसो
मेरे बिछौने को भिगोकर सुखो दो।'

तथा -

'नदी वही सब नाले उफनाए / जल न पूछे कोई जात/
कैसे निकले घर से बाहर/ बारिस से खाई मात।'

जाहिर है, आज की हिन्दी बालकविता में एक बड़ा हिस्सा उस कूड़े-कचरे का है, जो निर्मल जल की सरिता को सिर्फ प्रदूषित कर रहा है।

न सिर्फ भाव-व्यंजना, अपितु शिल्प के स्तर पर भी आज की हिंदी बाल कविता अक्सर बेहद फुसफुसी दिखाई देती है। सिर्फ उदाहरण ही पर्याप्त हैं, भाषागत त्रुटियां स्वतः जाहिर हो रही है -

1. दादाजी ने लिक्खा लैटर / उसमें था आवश्यक मैटर।
2. सबकी इच्छा पूरी होने पर ही लग पाएगा ब्रेक
   मेरे जन्म दिवस का लेकिन, पता न चलता मुझको नेक।
3. हमको तो ऐसा लगता है / हुई कहीं भारी मिस्टेक।
4. गैंडा कहता गंगा - न्हाऊँ।
5. गहरे पानी में न्हाते हैं लगा-लगाकर गोते।
6. एक पेड़ पर मुंह में रोटी / लिए काग बैठा था
   देख लोमड़ी भूखी अपनी / किस्मत पर ऐंठा था।
7. भीगी-भीगी लगे रजाई / जैसे ठंडा घुसा समुन्दर।
8. एबीसीडी काखागाघा पढ़ते।
9. ऊनी कपड़े गरम गरम। सर्दी लगती तरम तरम
   चहलकदमिया ढरम ढरम। कांप रहे हैं हरम हरम।
10. मां को देना भोजन गाथा / मेंहदी कैसे रंग रचाता।
11. केशू ने भी की फरमाइस / पापा होते दो-दो बाइस।
12. दूल्हन का दिन रुखा रुखा / आया सावन सूखा सूखा।
    मेहन्दी हुई उदासी फीकी / दूल्हे का मन दूखा दूखा।
13. ले लो गोल गप्पे ले लो / पानी पताशे छप्पे ले लो
    एक प्लेट भर गप्पे दे दो / और पैसे तुम नप्पे ले लो।
14. जब भी कसकर भुखियाता है।
15. काला है हरजाई है / बस रस का शैदाई है।
16. भालू चाचा चले शहर को / चश्मा कैप लगाकर
    बालों में मेंहदी लगवाई / दाढ़ी को बनवाकर
    खींच रहे थे कश बीड़ी के / मुंह में पान दबाये
    कदम-कदम पर डिस्को करते / मस्ती में बौराये।

ऐसे उद्धरण अनगिन हैं, कहाँ तक गिनाये जायें! और ऐसी ही बहुतायत में लिखी जा रही बाल कविताओं के परिप्रेक्ष्य में शंभुनाथ तिवारी की यह वाजिब चिन्ता दर्शनीय है, "आजकल बाल कविताएँ परिमाण की दृष्टि से तो बहुत लिखी जा रही है, पर गुणवत्ता की दृष्टि से, जो सचमुच कविता कहला सकें, ऐसी बाल

कविताएँ अत्यल्प ही देखने-सुनने में आती हैं। कुछ सतही तथा बाजारू पत्र-पत्रिकाओं ने तो सस्ती लोकप्रियता बटोरने की फिराक में ऐसी सामान्य-चालू एवं निरी साधारण तुकबंदियों को प्रश्रय दिया है, जिन्हें बालकविता कहने में संकोच होता है। .... बालकाव्य के लिए यह स्वस्थ संकेत नहीं कहा जा सकता।"

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि समकालीन बालकविता को वर्षाकालीन बाढ़ की स्थिति से निकालकर शरद की निरभ्र गंगा बनाना होगा। निश्चय ही यह बड़ा कठोर कदम होगा। पुराने-घिसे-पिटे ढर्रे पर आंख मूंदकर बढ़े चले जाने वाले बाल कवियों को, बेतुकी कविताएँ लिखने वाले नवोदित कवियों को और उन्हें छापकर पैसा कमाने वाले प्रकाशकों को नागवार भी प्रतीत होगा। बालकविता का सबसे बड़ा नुकसान करने वाले उन मठाधीशों को भी इससे तिलमिलाहट होगी जो अपने अनुयायियों की संख्या बढ़ाने के लिए, उन्हें दीक्षित करने के क्रम में उचित-अनुचित का विवेक भूल जाते हैं। पर या तो राह से भटकी हिन्दी बाल कविता इन शिकंजों से बाहर निकलकर बालोपयोगी पथ पकड़े, अन्यथा उदयप्रताप जी के शब्दों में कहूं, तो एक कठोर फैसले के तहत हमें वह अधिकांश निरस्त करना ही पड़ेगा, जो अंध गह्वरों को आलोकित करने में सक्षम नहीं है -

'या तो नभ के चांद-सितारे अंधी गलियों तक आ जायें
या फिर नभ के चांद-सितारे-दिनकर हमें बदलने होंगे।'

10 : हिन्दी के राष्ट्रीय बालगीत

बच्चा अपने जन्मजात स्वभाव से किसी विशेष देश का नागरिक या जाति या धर्म विशेष से सम्बद्ध नहीं होता। वह केवल एक मनुष्य होता है और उसी रूप में अपनी क्षमताओं का विकास करते हुये जीवित रहना चाहता है। पर उसके परम हितैषी और शुभचिन्तक माता-पिता, अभिभावक और अध्यापक सब मिलकर या अकेले अलग-अलग उसे किसी विशेष देश का नागरिक, जाति, उपजाति या धर्म का सदस्य बनाने में जुट जाते हैं। धर्म और जाति के मामलों में तो कभी-कभी ऐसा भी होता है कि कोई बड़ा उसे एक ओर घसीटता है और कोई दूसरी ओर, पर उसे देशभक्त बनाने के मामले में प्रायः सभी एकमत होते हैं। बच्चा बड़ों के मुख से देश या राष्ट्र शब्द बोला जाता हुआ सुनता है पर वास्तव में वह उसका कोई अर्थ अपने मन में निश्चित नहीं कर पाता। छोटे बच्चों के स्कूलों में भी बच्चों से विशेष अवसरों पर जनगणमन गाने के लिए कहा जाता है और वह तोते की तरह रटकर उसे गा भी देते हैं पर वह यह बिल्कुल नहीं समझ पाते कि 'उत्कल बंगा' और 'उच्छल जलधि तरंगा' किन अर्थों के वाचक शब्द हैं।

देश शब्द का भाव बोध सब बड़ों के मन में भी सदा एक सा नहीं होता। कोई भौगोलिक या राजनैतिक सीमाओं से घिरे हुए भू-भाग को देश समझता है और उन सीमाओं से बाहर के सारे दूसरे देशों के लोगों को अपने हितों का विरोधी या शत्रु। कोई अपने देश के लोगों के रहन-सहन और आचार-व्यवहार के तरीकों के अनुसार चलते रहने को ही देशप्रेम मानता है। किसी को अपने देश की प्राचीन परम्पराओं और सीमाओं की रक्षा के लिए अपने प्राणों का बलिदान कर देना देशप्रेम का आदर्श मालूम होता है और कुछ लोग अपने देश की प्राचीन सभ्यता संस्कृति पर इतना गर्व करते हुये पाये जाते हैं कि उनकी पुनर्स्थापना की कामना में ही उन्हें देशप्रेम दिखाई देता है। पर एक राजनीतिक सीमा में रहने वाले सब मनुष्यों में आपसी सद्भाव, प्रेम और एकता को सभी देशप्रेम के लिए आवश्यक मानते हैं। यह प्रेम, सद्भाव और एकता को ही देशप्रेम मानने की बात बचपन से ही बड़ों का व्यवहार देख देखकर बच्चे की समझ में नहीं आती। वह जब घर की जमादारनी के प्यारे से बच्चे के साथ खेलने को लपकता है तो उसकी मां बांह पकड़ कर उसे अलग खींच ले जाती है। पिता अपने घर आये किसी विधर्मी या गरीब मजदूर को उसी मान आदर के साथ बैठाकर चाय नहीं पिलाते जैसे किसी अन्य अपने सम्बन्धी या धनी मानी दिखाई देने वाले सज्जन को।

साहित्यकार बच्चों को शुरू से ही अपने देश के लिए त्याग करने, बलिदान हो जाने, शीश कटा देने की प्रेरणा देने वाले गीत रच रचकर देना अपना कर्तव्य समझते हैं और अधिकार भी। पर बच्चे को तो यह सब बातें ही बुरी लगती हैं। किसी बच्चे को कितना ही प्रेरित किया जाए वह अपना शीश कटा देने के लिये कभी तैयार नहीं हो सकता। कुछ कवि बच्चे में वीर पूजा की भावना भरने का प्रयत्न करते हैं पर वह किसी महान से महान पुरुष को अपना चाचा, बाबा या ताऊ मानकर तो प्यार कर सकता है महापुरुष मानकर नहीं। महापुरुष तो उसकी दृष्टि में सभी बड़े होते हैं। अपने देश के प्राचीन गौरव से भी उसका कोई रागात्मक सम्बंध नहीं जुड़ पाता, वह तो प्रत्यक्ष वर्तमान को ही अपने लिये सब कुछ समझता है। उसके अस्तित्व और व्यक्तित्व के विकास का सम्बन्ध ही उसके वर्तमान से जुड़ा हुआ होता है। उसी से संघर्ष करते हुये अपना रास्ता बनाने में उसे अपने जीवन की सार्थकता मालूम होती है।

बच्चे की समझ में जब तक यह न आ जाये कि देश क्या होता है वह उससे प्रेम कर भी कैसे सकता है। यही कारण है कि जिन्हें बचपन में देशप्रेम की शिक्षा अच्छी तरह मिल चुकती है, वह भी बड़े होकर सच्चे देशप्रेमी नहीं बन पाते। अवसर मिलते ही वह स्वार्थ सिद्धि में लग जाते हैं और कभी-कभी तो अपने को सत्ता में बनाये रखने के लिये अपने ही देश की जनता पर अत्याचार तक करने लगते हैं।

देश से प्रेम करना बच्चों के लिये एक कल्पना से प्रेम करना नहीं तों और क्या है? कल्पना को भी वह प्यार कर सकते हैं पर शर्त यह है कि वह उनकी अपनी कल्पना के अनुरूप हो। अपने मन पर आरोपित किसी अन्य की कल्पना को प्यार करना उनके स्वभाव और प्रकृति के ही प्रतिकूल होता है। बच्चों का देश तो उनका अपना घर या आसपास का वातावरण ही होता है जिसका विस्तार उनके आयु में बढ़ने के साथ-साथ होता जाता है। या फिर वह एक ऐसा 'देश' होता है जिसकी कहीं कोई सीमा नहीं होती। हम उसे एक संपूर्ण सृष्टि कह सकते हैं, जिसका वह एक अंग होते हैं। बच्चों को जो उन्हीं की दृष्टि से देखकर प्यार करें वही उनके लिए गीत लिख सकते हैं। पर जो बड़े उनसे अधिक अपने देश को प्यार करते हों वह कुछ भी लिख सकते हैं बच्चों के अपने गीत तो नहीं। हम जिन्हें राष्ट्रीय बालगीत कहते हैं वह बड़ों के द्वारा बच्चों के लिये लिखी गई कवितायें तो हो सकती हैं गीत नहीं।

एक राष्ट्रीय बालगीत याद कराते हुये देखा था। बच्चा मां के साथ-साथ दुहराता जा रहा था -

भारत देश हमारा है,
हमें प्राण से प्यारा है।
हम इस पर बलि जायेंगे,
जीवन पुष्प चढ़ायेंगे।

पहली पंक्ति को दुहराते-दुहराते रुक कर बच्चे ने अचानक एक प्रश्न कर दिया- 'मां! देश किसे कहते हैं?' पहले तो मां हतबुद्धि हो चक्कर में पड़ गई कि इसे कैसे समझायें कि देश क्या होता है? फिर उसने यह कहकर उसे समझाने का प्रयत्न किया-'हम सब जिसमें रहते हैं वही हमारा देश है।' बच्चे ने तुरन्त कहा-'हम तो अपने घर में रहते हैं' मां इस बात का क्या उत्तर दे। उसने मां को निरुत्तर कर दिया था। मैं देखकर मन ही मन हंसता रहा था और उस बच्चे की भावनाओं के आधार पर आगे की यह पंक्तियां रच दी थीं -

यह सुनकर मुन्ना बोला,
अज्ञानी बालक भोला।
-देश किसे कहते हैं मां?
हम जिसमें रहते हैं मां?
पर वह तो अपना घर है,
या फिर यह दुनिया भर है।

पंक्तियां तो रच दीं पर सोच में पड़ कर रह गया था कि जो बच्चे यह भी नहीं जानते कि देश किस चिड़िया का नाम है उन्हें तोते की तरह रटाने से क्या लाभ है? यह ठीक है कि बच्चों को अपनी जन्म भूमि या वह जहाँ रहते बसते हैं, उस स्थान से मोह होता है। पर उस मोह को देशप्रेम तो नहीं कह सकते। अबोध बच्चों पर अपनी देशप्रेम की भावना को लादना कुछ इसी प्रकार का है जैसे किसी विजयी देश के लोग पराजित देश के लोगों पर अपनी भाषा, सभ्यता, संस्कृति और आदर्शों को जबरदस्ती लादने का प्रयत्न करते हैं।

अंग्रेजी या किसी अन्य भाषा में शायद ही इतने अधिक देशप्रेम के बालगीत लिखे गये हों जितने हिन्दी में। इसका कारण यह है कि हमारे देश में भाषा के विकास के प्रारम्भिक काल से ही विदेशी शासन के विरुद्ध स्वतन्त्रता संग्राम चल रहा था। उस समय बच्चे-बच्चे के मन में देशप्रेम की भावना भर देना आवश्यक समझा जाता था। आधुनिक हिन्दी बालगीतों के आदि कवि पंडित श्रीधर पाठक ने

जहाँ कुत्ता, बिल्ली आदि विषयों पर बच्चों के लिए बहुत से बालगीत लिखे हैं, वहीं अपनी 'भारत गीत' पुस्तक में बहुत से देश का गुणगान करने वाले गीत भी लिखे हैं। पंडित मन्नन द्विवेदी 'गजपुरी' और पं. कामता प्रसाद गुरु के यह देशप्रेम के बालगीत तो अब तक प्रसिद्ध हैं -

जन्म दिया माता सा जिसने किया सदा लालन पालन
जिसके मिट्टी जल से ही है बना हुआ हम सबका तन।

....

....

माता केवल बाल काल में निज अंकन में भरती है।
हम अशक्त जब तक रहते हैं पालन पोषण करती है।।
मातृ भूमि करती है लालन पालन सदा मृत्यु पर्यन्त।

(मन्नन द्विवेदी 'गजपुरी')

तथा

जहां जन्म देता हमें है विधाता।
उसी ठौर में चित्त है मोद पाता।।
जहां है हमारे पिता बन्धु माता।
उसी भूमि से है हमें सत्य नाता।।

(कामता प्रसाद गुरु)

इन दोनों बालगीतों में देशप्रेम की जो भावना व्यक्त की गई है वह बच्चों के लिये उतनी विदेशी नहीं जितनी और बहुत-से राष्ट्रीय बालगीतों की भावना है। सब बच्चे उस भूमि से प्यार करते ही हैं, जहाँ उनके माता-पिता, भाई-बन्धु इत्यादि रहते हैं। अतएव वह इन बालगीतों में व्यक्त भावना को अपने ही मन की भावना समझ कर सरलता से ग्रहण कर सकते हैं।

पर इसी भावना को जिन बालगीतों में अन्य ढंगों से व्यक्त किया गया है वह भाषा, शैली इत्यादि की दृष्टि से अधिक रोचक होते हुए भी बच्चों के स्वभाव के उतने अनुकूल नहीं बने हैं। जैसे -

मन मोहिनी प्रकृति की जो गोद में बसा है।
सुख स्वर्ग-सा जहां है वह देश कौन-सा है?
जिसका चरण निरन्तर रत्नेश धो रहा है।
जिसका मुकुट हिमालय वह देश कौन-सा है?

(रामनरेश त्रिपाठी)

इस बालगीत में प्रश्न शैली अपनाने के कारण बच्चों के मन में देश के प्रति अनुराग जगाने का अच्छा प्रयत्न किया गया है। पर जब तक बालक यह उत्तर तोते की तरह रट न ले कि वह भारत है तब तक इस कविता का पूरा आनन्द उसे प्राप्त नहीं हो सकता।

हिन्दी के प्रायः सभी कवियों ने अपने देश भारतवर्ष की कल्पना एक देवी माता के रूप में की है। यह कल्पना की गई है कि प्रातःकाल सूर्य की किरणें जिसकी चोटियां सोने के समान चमकाती हैं वह हिमालय भारत माता का मुकुट है। गंगा यमुना आदि नदियाँ उसका गलहार हैं। पंजाब से लेकर बंगाल तक फैला विस्तृत मैदान उसकी साड़ी का आंचल है। नर्मदा और विन्ध्याचल उनकी कटि की मेखला हैं। कन्याकुमारी उनके चरण हैं जिन्हें रत्नाकर हिन्द महासागर धो रहा है। लंका वह कमल है जिस पर वह अपना चरण रक्खे हुए है। इस प्रकार वह मानों लक्ष्मी की साक्षात् मूर्ति है। अपने देश को माता का रूप देकर उसकी इतनी सुन्दर, सजीव और कलात्मक कल्पना हमें किसी दूसरे देश के साहित्य में देखने को नहीं मिल सकती। पुत्र का स्वाभाविक प्रेमाकर्षण अपने पिता की अपेक्षा माता के प्रति अधिक होता है। अतएव बच्चों के लिए इस कल्पना के प्रति आकर्षित होना नितान्त स्वाभाविक है। हिन्दी में बहुत से ऐसे बालगीत हैं जिनमें भारतमाता के इसी रूप का वर्णन किया गया है। अपने देश के प्रति प्रेम उत्पन्न कराने का यह एक अत्यन्त मनोवैज्ञानिक ढंग है। इसी कल्पना की एक पुरुष का रूप देकर भारत पर घटित करके निम्नलिखित बालगीत में चित्रित किया गया है –

जय जय भारत प्यारा।
मुकुट हिमालय साजे सिर पर,
गंगा यमुना हार मनोहर;
रंग बिरंगे कलि कुसुमों से सजा हुआ तन सारा।
जय जय भारत प्यारा।
छै ऋतुएं आ रूप सँवारें,
सागर लहरें चरण पखारें,
आरति सूरज चाँद उतारें;
तारक दीपों से नीलम का जगमग मन्दिर न्यारा।
जय जय भारत प्यारा।
हम सब की आँखों का तारा,

आज लगाते हम यह नारा;
हम बच्चे स्वाधीन देश के, ऊंचा शीश हमारा।
जय जय भारत प्यारा।

अन्तिम पंक्तियों में कुशल कवि ने राजनीति का भी एक हलका-सा पुट दे दिया है। 'प्रजा राज यह देश हमारा।' अर्थात् भारतवर्ष में अब किसी एक राजा का शासन नहीं समस्त प्रजा का राज है। यह हमारे देश के नये बने उस संविधान की ओर संकेत करता है जिसने जाति, वर्ण, रंग इत्यादि के भेद के बिना सब भारतवासियों को जनमत का अधिकार दे दिया है। पर इस बालगीत को रट कर याद कर लेने के बाद भी क्या कोई बच्चा यह समझ सकता है कि उसका देश क्या है और क्या इस बालगीत को पढ़ने के बाद किसी बच्चे के मन में देश की जनता के प्रति प्रेम और सहानुभूति के भाव जागृत हो सकते हैं? इसका उत्तर कोई बालमनोविज्ञान से भली-भाँति परिचित व्यक्ति ही ठीक-ठीक दे सकता है।

भारत माता की इस कल्पना के साथ जागृत होने वाली राष्ट्रीय भावना के अनुसार यह भी आवश्यक है कि बच्चों को उसके आगे नत शिर होने, आदर भाव दिखाने, पूजा करने और बलिदान होने की शिक्षा भी दी जाये। अपनी माताओं के प्रति शिष्ट और विनयशील होना सिखाना कोई बुरी बात नहीं। इससे बच्चों में आत्मानुशासन आता है। पर बच्चे को कल्पित देवी देवताओं के प्रति विनयशील बना देने से वह स्वभाव से ही वैसा हो जाता है और इससे उसके स्वाभाविक विकास में बाधा पड़ती है। बच्चों में जो स्वाभाविक कौतूहल जिज्ञासा की भावना होती है वह भी तृप्त नहीं हो पाती। पूजा, श्रद्धा और आदर के भाव जो उसके मन पर अंकित कर दिये जाते हैं उनके कारण वह स्वयं प्रयत्न और प्रयोग कर जो अनुभव प्राप्त करता, उनसे भी वह वंचित रह जाता है। और अपना सिर काट कर माता के चरणों पर चढ़ा देने या अपने स्वार्थ को बलिदान करने की जो बात इन राष्ट्रीय गीतों में कही जाती है उसे तो चंचल स्वभाव के भोले बच्चे एक आदर्श के रूप में कभी स्वीकार कर ही नहीं सकते। बच्चे स्वयं अपने आप को दुनिया में सबसे अधिक प्यार करते हैं। वह अपने तन-मन-प्राण किसी को अर्पित कर देने की बात कभी सोच ही नहीं सकते। ऐसी बातें सोचने के लिए जब उनके लिए लिखे साहित्य के द्वारा उन्हें विवश किया जाता है तो उनका मन उचाट खा कर दूसरी दिशाओं में भागता है। बच्चों के लिए लिखने वाले बड़े कवि के लिए तो यह सम्भव है कि वह भावावेश में अपना तन-मन-प्राण अर्पित कर मृत्यु के बाद फिर भारत में ही दूसरा जन्म लेने की बात सोच सके जैसा कि इस बालगीत में किया गया है –

मस्तक ऊँचा करूँ देश का जब तक तन में प्राण रहे।
चाहे प्राण चले जावें पर देश हेतु ही प्राण रहे।।
मरते दम तक यही प्रभू मेरे मन में अभिमान रहे।
मेरे पीछे भी भारत का इससे बढ़कर मान रहे।।
पैदा होऊँ फिर भारत में ही इसका कुछ ध्यान रहे।
मैं भारत का सेवक हूं, बस यह कहने की शान रहे।।

पर प्रत्येक बच्चे को अपना नन्हा जीवन इतना प्यारा होता है कि पुनर्जन्म के सिद्धान्त का विश्वास वह कितना ही रोचक हो, बड़ों की तरह उसके मन पर जम नहीं सकता। उसकी समझ में तो उसके उसी जन्म में कुछ भी करने की बात आसानी से आ सकती है। बड़े-बूढ़ों की तरह अपनी मृत्यु की कामना कर वह पुनर्जन्म के विचार से प्रेरित कभी नहीं हो सकता।

राष्ट्रीय भावना का एक रूप यह कल्पना भी है कि देश का कोई शत्रु है जिससे सबको संगठित होकर लड़ना है। राष्ट्रीय नेता सदैव राष्ट्र के भीतरी पारस्परिक संघर्षों को दबाने के लिये इस कल्पना का पूरा-पूरा लाभ उठाया करते हैं। और जहाँ देश का कोई शत्रु नहीं होता वहाँ भी वह कोई न कोई शत्रु राष्ट्र की भावना को केन्द्रीभूत करने के लिये पैदा कर लिया करते हैं। हिटलर ने ऐसा ही करने के लिए जर्मन जाति को सर्वश्रेष्ठ घोषित कर अन्य जातियों के प्रति घृणा का मनमाना प्रचार किया था और रूसी जनता को भी एकता के सूत्र में बाँधे रखने के लिए इसी प्रचार ने कार्य किया है, कि सारी दुनिया के देश उसके साम्यवादी सिद्धांतों के शत्रु हैं और उस पर आक्रमण कर नष्ट कर देना चाहते हैं। राष्ट्रीय भावना के आवेश में प्रायः ऐसा ही होता है कि एक देश अपना प्रभाव बढ़ाने के उद्देश्य से दूसरे किसी देश पर आक्रमण कर उससे शत्रुता मोल ले लिया करता है जिससे वहाँ की जनता की आपसी विरोध की भावनायें पनप ही न सकें और उनका ध्यान दूसरी ओर लगा रहे। यह सत्य कहने में कितना भी कटु लगे पर बिना किसी दूसरे देश को शत्रु घोषित किये हुए प्रायः राष्ट्रीय एकता की भावना को कायम रक्खा ही नहीं जा सकता, इस प्रत्यक्ष या कल्पित शत्रु को लेकर देश में उससे लड़ने की तैयारियां की जाती हैं। प्रत्येक बालक और युवक के हृदय में ऐसे जोशीले भाव भरे जाते हैं जिनसे वह अपने देश के लिये लड़ने और अपने बड़े से बड़े स्वार्थ का परित्याग करने के लिए तैयार हो सके। बच्चों के हृदय में जोशीले भाव भरने के लिए बालगीतों की उपयोगिता स्वयं सिद्ध है। बालगीतों के द्वारा उन्हें कदम मिला कर साथ साथ चलने, जीवन के मार्ग में आगे बढ़ने, आपत्तियों और बाधाओं से

न डरने की शिक्षायें दी जाती हैं। बच्चों में यदि इस प्रकार के भाव भर जाते हैं तो बड़े होकर उन्हें अपने देश के गौरव कहलाने का श्रेय मिलता है।

हमारे देश में बालगीतों की रचना के प्रारम्भिक काल से ही अंग्रेजों का शासन था। उसे छिन्न-भिन्न कर स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये अनेक प्रकार के राष्ट्रीय आन्दोलन देश में चल रहे थे। लोग अंग्रेजों के शासन को उखाड़ फेंकना चाहते थे और उसके प्रति क्रोध और आवेश की भावनायें लोगों के हृदय में उमड़ रही थीं। अतएव उस समय ऐसे बालगीतों का लिखा जाना नितान्त स्वाभाविक था जिनसे बच्चों में भी वही भावनायें जगाई जा सकें। बच्चों के हृदय में एक दूसरे के प्रतिस्पर्द्धा और संघर्ष कर आगे बढ़ने की इच्छा बहुत प्रबल होती है। वह खेल में भी दो टुकड़ियों में विभाजित हो जीत-हार की बाजी लगा संघर्ष करना जानते हैं। बच्चों की इस प्रतिस्पर्द्धा और एक ही उद्देश्य के लिए संगठित हो तैयारियाँ कर आगे बढ़ने की प्रवृत्ति को उन राष्ट्रीय बालगीतों से बहुत बढ़ावा मिलता है जिनमें इसी प्रकार की बातें कही गई हों। पण्डित सोहनलाल द्विवेदी ने तो हिन्दी में विशेष रूप से ऐसे अनेक बालगीत लिखे हैं –

पीछे रहना है ठीक नहीं
यह है वीरों की लीक नहीं
मत सकुचाओ मत घबराओ
आगे आओ, आगे आओ।

या

दुनियां क्या कहती कहने दे
तू अपनी मस्ती रहने दे
तू जरा न अपने पथ से टल
तू अपनी धुन के पीछे चल

या

तुम बढ़ो अकेले ही आगे
मत सोचो कोई साथ नहीं
कुछ अस्त्र है हाथ नहीं
उत्साह उमंगों में पागे।
तुम बढ़ो अकेले ही आगे।।

या

तब तक पल भर आराम न लो।

तब तक पल भर विश्राम न लो।।
जब तक न लक्ष्य अपना पाओ।
बढ़ते जाओ, बढ़ते जाओ।।

पर इन सब बालगीतों में स्पष्ट शब्दों में कुछ न कुछ आदेश दिए गये हैं। बच्चों को कोई संकेत सुझाव देकर या अन्य किसी मनोवैज्ञानिक ढंग से समझाकर कुछ करने के लिए नहीं कहा गया है। इसलिए उन्हें श्रेष्ठ बालगीतों की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। आदेश और आज्ञा पालन की भावना जहाँ एक ओर बच्चों को अनुशासनप्रिय और चरित्रवान बनाती है वहां दूसरी ओर वह उनके आत्मविश्वास, मन और बुद्धि के स्वाभाविक विकास को रोकती भी है। बचपन में यदि वह पग-पग पर दूसरों के आदेशों पर चलने के आदी बना दिये जाते हैं तो वह बड़े होकर स्वयं अपनी बुद्धि से निश्चय कर कुछ भी नहीं कर पाते और जीवन भर ढुलमुल यकीन बने रहते हैं। कभी-कभी अत्यधिक आदेश और आज्ञाओं के अनुसार चलने की उनके मन पर उल्टी ही प्रतिक्रिया होती है और वह बड़े होकर स्वार्थी, लोभी और मिथ्याभिमानी बन जाते हैं या उन बड़ों के विरुद्ध विद्रोह कर बैठते हैं जिन्होंने उन्हें अत्यधिक अनुशासन में रखने का प्रयत्न किया था। बच्चे वैसे ही घर के बाहर कदम-कदम पर बड़ों से बराबर यह सुनते रहते हैं कि 'ऐसा करो, ऐसा मत करो।' अतएव उन्हें यदि उनके लिये लिखित साहित्य में भी वैसी ही बातें पढ़ने को मिलें तो उनका जी ऊब जाता है।

श्री द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी ने भी कुछ सुन्दर प्रयाणगीत बच्चों के लिये लिखे हैं। उदाहरणार्थ -

वीर तुम बढ़े चलो।
धीर तुम बढ़े चलो।।
आज प्रात है नया।
आज साथ है नया।।
आज राह है नई।
आज चाह है नई।।
वीर तुम बढ़े चलो।
धीर तुम बढ़े चलो।।
देश को करो नया।
देश को करो नया।।
जीर्ण वस्त्र छोड दो।

जीर्ण अस्त्र छोड़ दो।।
वीर तुम बढ़े चलो।
धीर तुम बढ़े चलो।।

यह बालगीत पण्डित श्यामनारायण पाण्डेय के महाकाव्य हल्दी घाटी के अन्तर्गत महाराणा प्रताप की सेना के बढ़ने के वर्णन से बहुत मिलता-जुलता है। दोनों को एक स्थान पर रखकर देखने से यह समझ सकना कठिन हो जाता है कि माहेश्वरी जी के इस प्रयाण गीत में वह कौन-सी विशेषता जिसके कारण इसे बालगीत और पाण्डेय जी के उस वर्णन को बड़ों की कविता कहा जाये, जिसमें उन्होंने लिखा है –

तुम अभय बढ़े चलो।
तुम अजय बढ़े चलो।।
तुम निडर बढ़े चलो।
श्रृंग पर चढ़े चलो।।

आदेश देने की जो बात उपर्युक्त द्विवेदी जी के बालगीतों के सम्बन्ध में कही गई है वह इस प्रकार के और भी बालगीतों में विद्यमान है। बालगीतों के विषय में यह आवश्यक है कि उनमें जो बात कही जाये वह बच्चों को उनके अपने मन की बात लगे। एक साथ मिलकर आगे बढ़ने की इस बात को यदि स्वयं बच्चों की ओर से इस प्रकार कहा जाये –

वीर सिपाही हम हम हम।
वीर सिपाही हम हम हम।
बढ़ते पाँव हमारे साथ।
हिलते साथ हमारे हाथ।।
एक नियम हैं एक कदम।
वीर सिपाही हम हम हम।।
कन्धों पर रखकर हथियार।
चलते हम डरता संसार।
चलते हैं हम धम धम धम।
वीर सिपाही हम हम हम।।

तो बच्चों के मन पर सीधा असर होता है और उनमें एक साथ आगे बढ़ने के उत्साह के साथ एक ऐसे आत्मविश्वास का उदय होता है जिसके कारण वह अन्य नाममात्र से परिचित देशों का उल्लेख करके कह सकते हैं –

जर्मन हो या जापान।
अमरीका या पाकिस्तान।
हम हैं नहीं किसी से कम।
वीर सिपाही हम हम हम।।

राष्ट्रीय भावना के आवेश में आगे बढ़ते जाने का आदेश देने वाले उन गीतों के साथ-साथ हिन्दी में लिखे बालगीतों की एक विशेषता यह भी रही है कि उनके लिखने वालों ने इतिहास में बहुत पीछे देखते हुए बीते हुये स्वर्णयुग या रामराज्य को फिर से स्थापित करने की इच्छा की है। उन्होंने प्राचीन आदर्शों और मान्यताओं के न केवल गुण गाये हैं बल्कि उन्हें मानने और मनवाने की चेष्टा भी की है। इसलिये हिन्दी में हमें अधिकतर ऐसे बालगीत लिखे हुये मिलते हैं जिनमें समय की प्रगतिशील प्रवृत्तियों की अवहेलना कर प्राचीन आदर्शें का ही गुणगान किया गया है। पण्डित सोहन लाल द्विवेदी ने अपने "मातृभूमि" शीर्षक गीत में लिखा है –

जन्मे जहां थे रघुपति।
जन्मी जहां थी सीता।।
श्री कृष्ण ने सुनाई,
वंशी, पुनीत गीता।
गौतम ने जन्म लेकर,
जिसका सुयश बढ़ाया।
गज को दया दिखाई,
जग को दिया दिखाया।
वह युद्ध भूमि मेरी।
वह बुद्ध भूमि मेरी।
वह मातृ भूमि मेरी।
वह पितृ भूमि मेरी।।

इसी प्रकार पण्डित रामनरेश त्रिपाठी ने अपने गीत "वह देश कौन सा है" में कहा है :

पृथ्वी निवासियों को जिसने प्रथम जगाया
शिक्षित किया सुधारा वह देश कौन सा है?
जिसमें हुये अलौकिक तत्वज्ञ ब्रह्मज्ञानी,
गौतम कपिल पतंजलि वह देश कौन सा है?
छोड़ा स्वराज्य तृणवत् आदेश से पिता के,

वह राम थे जहां पर वह देश कौन सा है?
निस्वार्थ शुद्ध प्रेमी भाई भले जहाँ थे,
लक्ष्मण भरत सरीखे वह देश कौन सा है?

भारतवर्ष को प्राचीन वैदिक काल या रामराज्य की ओर ले जाने वाली इसी राष्ट्रीय कही जाने वाली भावना ने भारत में रहने वाली विभिन्न जातियों और वर्गों में वह एकता स्थापित नहीं होने दी जो राष्ट्रीय भावना के विकास के लिए अपेक्षित थी और उसी का परिणाम स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय देश के विभाजन के रूप में हमें देखना पड़ा। अपने प्राचीन पुरुषों का गुणगान करना, उनके जीवन आदर्शों से प्रेरणा ग्रहण करना ठीक है। पर इस प्रेरणा का उपयोग तभी तक उचित है जब तक वह हमें अपने मार्ग पर आगे बढ़ने को उकसाने वाली हो। वह प्रेरणा ही जब हमारी टांग पकड़ कर हमें पीछे की ओर घसीटने लगे तो उसका हमारे लिये कोई उपयोग नहीं। संसार के किसी भी राष्ट्र ने कभी अपने समय और समाज के लिए नये विचार, नये आदर्श, नई मान्यतायें और नये विश्वास दिये बिना उन्नति नहीं की है। जो राष्ट्र लकीर के फकीर बने पुराने आदर्शो और विश्वासों के सहारे चलते हैं, वह उन्नति की दौड़ में दूसरे राष्ट्रों से पिछड़ जाते हैं। विनोदचन्द्र पांडे ने अपनी पुस्तक 'भारत की गौरव गाथा' में अर्वाचीन और प्राचीन भारत के ऐसे अनेक प्रसिद्ध पुरुषों से बच्चों का परिचय कराया है जिनके विषय में और अधिक जानने की इच्छा जागृत होना उनके लिए उपयोगी हो सकता है।

हिन्दी के बालगीतों में बहुत से बालगीत ऐसे भी हैं जो समाज में नये विचार और नई आदर्श मर्यादाएं स्थापित करने की ओर संकेत कर नयी प्रेरणायें देने वाले हैं। जैसे पण्डित सोहनलाल द्विवेदी का ही एक बालगीत है :

बड़ी जाति में होने से ही,
बड़ा न कोई हो पाता।
जब तक नहीं बड़े गुण लाता,
नहीं बड़े गुण अपनाता।

उनका ही एक दूसरा बालगीत है –

देखो नहीं हाथ की रेखा,
पलटो मत पत्रा पोथी।
मीन मेष कुछ कर न सकेगा,
ये सारी बातें थोथी।।
कभी निकम्मे बन मत बैठो,

उठो बढ़ो कुछ काम करो।
सब कुछ कर सकते हो तुम,
मत ईश्वर को बदनाम करो।
नहीं भाग्य का मुख देखो तुम,
अपने बनो विधाता आप।
चलो बढ़ो अपने पाँवों से,
लो सारी दुनिया को नाप।।

मानसिक दासता के पुराने मरीज और लगन-महूरत की बातों पर अन्धविश्वास करने वाले मनुष्यों को ऐसी बातें कुछ बुरी भी लग सकती हैं। पर भाग्यदुर्भाग्य के विवर्त्त में फँसे हुए अकर्मण्य देशवासियों में स्वाभिमान जगाने और आत्मविश्वास उत्पन्न करने के लिए सत्य पर पर्दा डाले रहने से भी काम नहीं चल सकता। हिन्दू-मुस्लिम एकता की ओर संकेत करने वाले भी अनेक बालगीत हिन्दी में लिखे गये हैं जैसे :

तेरे नाज उठायेंगे हम।
तेरे गाने गायेंगे हम।।
हिन्दू मुस्लिम सिख ईसाई।
आपस में जो भाई भाई।।
तू ही राम रहीम हमारी।
जय जय भारत माता प्यारी।।

जाति-वर्ण-धर्म विषयक संकीर्ण दृष्टिकोण और बैर-भाव को बढ़ावा देने वाले पुराने विचारों का जो अभिशाप आज तक हमारे समाज को राष्ट्रीय एकता के सूत्र में पिरोने में बाधक रहे हैं उन्हें हटाने के लिए इस प्रकार के गीतों की बड़ी आवश्यकता है, इसे प्रत्येक राष्ट्रीयतावादी स्वीकार करेगा। फिर भी प्रश्न वही उठता है कि क्या इस प्रकार के गीतों को बालगीत कहा जा सकता है? बच्चे तो स्वभाव से ही हाथ की रेखाओं, पोथा-पत्री, मीन-मेष, भाग्य या राम-रहीम की सीमाओं को मानने वाले नहीं होते। वह जन्म से ही अपने मन में अतुलित आत्मविश्वास को लिए हुए होते हैं और अपनी शक्ति से अधिक काम करने के लिए तैयार होने में कोई संकोच नहीं करते। उनके भोले मन में अपनी ओर से हिन्दू-मुस्लिम का भी कोई भेद-भाव नहीं होता। बड़ों के सम्पर्क में रहते-रहते उनमें यह भेद की बातें जड़ कर जाती हैं। इसलिए एकता के नाम पर भी उनसे भेदभाव की याद दिलाने वाली बातें करना

हिन्दी के राष्ट्रीय बालगीतों में महापुरुषों से सम्बन्धित और झण्डे के बालगीत विशेष रूप से हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं। धरती से बहुत ऊपर नीलाकाश में लहर-लहर फहराता हुआ तिरंगा झण्डा बच्चों को भारत माता की कल्पना या राष्ट्रीय भावना के किसी अन्य रूप से कम प्रभावित नहीं करता। उसे वह अपने सामने प्रत्यक्ष देख कर उसके विषय में अपनी धारणायें और विश्वास निश्चित कर सकते हैं। खुले मैदान में गड़ा हुआ या किसी ऊंची इमारत पर फहराता हुआ झण्डा उन्हें एक ऐसा केन्द्र-बिन्दु मालूम होता है जिसके चारों ओर घूमने या पीछे-पीछे चलने में वह प्रफुल्लित होते हैं। झण्डे के सम्बन्ध में लिखे गये बालगीतों में पण्डित सोहन लाल द्विवेदी का यह बालगीत बहुत प्रसिद्ध है -

हम नन्हें नन्हें बच्चे हैं।
नादान उमर के कच्चे हैं,
पर अपनी धुन के सच्चे हैं।।
जननी की जय जय गायेंगे।
भारत की ध्वजा उड़ायेंगे।।
अपना पथ कभी न छोड़ेंगे,
अपना प्रण कभी न तोड़ेंगे।
हिम्मत से नाता जोड़ेंगे,
हम हिमगिरि पर चढ़ जायेंगे।
भारत की ध्वजा उड़ायेंगे।।
हम भय से कभी न डोलेंगे,
अपनी ताकत को तोलेंगे।
माता के बन्धन खोलेंगे,
अपना सिर भेंट चढ़ायेंगे।
भारत की ध्वजा उड़ायेंगे।।

इसमें जिस बाल स्वभावोचित सरलता के साथ भावनाओं को व्यक्त किया गया है उसने इस बालगीत की रोचकता बहुत बढ़ा दी है। बच्चों के मन में साहस, आत्मविश्वास और प्रतिज्ञा पालन की भावना भी इस बालगीत से उत्पन्न होती है। किन्तु इसकी अन्तिम पंक्ति में सिर भेंट चढ़ाने की जो बात कही गई है वह बच्चों के मन की अपनी बात नहीं। बच्चे अपना सिर भेंट चढ़ा देने के बाद एक सिररहित शरीर की कल्पना करते ही भय से सहम जायेंगे और फिर उस कल्पना के पास जाना भी पसन्द नहीं करेंगे।

प्राचीन और वर्तमान महापुरुषों का गुणगान करने वाले बालगीत भी हिन्दी में बहुत-से लिखे गये हैं। अंग्रेजी में इस प्रकार के बालगीत इतनी बहुतायत से नहीं मिलते। भारतवर्ष में वीर-पूजा की भावना अत्यन्त प्राचीन काल से बहुत अधिक रही है। यहां महापुरुषों के शव मिस्त्र की भांति ममी की शक्ल में पिरामिड में सुरक्षित नहीं रक्खे गये पर उनके गुणगान से साहित्य का भण्डार भरा हुआ है। वर्तमान काल में महात्मा गान्धी और पण्डित नेहरू तो बच्चों और बालगीतकारों के आकर्षण और प्रेरणा के मुख्य आधार रहे हैं। अब इंदिरा गांधी को दुर्गा का अवतार बताकर गीत गाये जाने लगे हैं। बापू की कल्पना बच्चे अपने दादे-परदादे एक वृद्ध पुरुष के रूप में करते हैं पर पण्डित नेहरू उनके जगत प्रसिद्ध चाचा हैं। चाचा से प्रायः बच्चों का दादे-परदादे की अपेक्षा अधिक अपनापन होता है। इसलिए पण्डित नेहरू उनकी भावनाओं में उनके मन के अधिक निकट हैं। बापू को वह पूजा श्रद्धा के भाव से देखते हैं पर चाचा नेहरू को तो अपना चाचा ही समझते और उनसे अधिक से अधिक निकटता का अनुभव करना चाहते हैं। पण्डित नेहरू का जन्म-दिन प्रति वर्ष बालदिवस के रूप में भी मनाया जाता है। हिन्दी के अनेक कवियों ने पण्डित नेहरू से सम्बन्धित बहुत से बालगीत लिखे हैं। इनमें से कुछ में चाचा नेहरू जिन्दाबाद के नारे लगाये गये हैं और कुछ में उनकी वीरता, साहस, कर्त्तव्यपरायणता और त्याग की सराहना की गई है। बच्चों की एक पत्रिका 'बालबोध' में प्रकाशित सेवकजी का निम्नलिखित बालगीत पण्डित नेहरू ने बड़े ध्यान से पढ़ा और खूब हंसे थे –

चाचा नेहरू ने पाले दो बच्चे शेर के,
रोज सबेरे उठते हैं वह सोकर देर से।
तिब्बत के लामा ने भेजा उनको दूर से,
भारी भय लगता है जो भी देखे घूर के।
गर्मी की ऋतु आई गर्मी पड़ी कड़ाके की,
नन्हीं मछली रोई नानी मर गई नाके की।
दोनों गर्मी कड़ी बिताने नैनीताल चले,
वह देखो मोटर में बैठे लगते बहुत भले।
आस-पास छोटे बच्चों की भीड़ लगी भारी,
उमड़ पड़ी है उन्हें देखने को जनता सारी।
मैं भी अपने टामी को ले गया देखने को,
रूप रंग में कितने सुन्दर लगते हैं वे दो।

देख उन्हें मुझसे यह बोला मेरा प्रिय टामी
अल्मोड़ा मैं भी जाऊंगा हे मेरे स्वामी।।

पण्डित नेहरू की वर्षगाँठ पर प्रायः प्रति वर्ष अनेक बालगीत हिन्दी में लिखे जाते हैं। राष्ट्रबन्धु का निम्नलिखित बालगीत बच्चों की भावनाओं के बहुत अनुरूप है –

जब तक चमकें चाँद सितारे।
चाचा नेहरू जियें हमारे।।
टिक टिक घोड़ा उन्हें बनायें,
हम सब पीछे चलते जायें।
पांत बढ़ायें दायें बायें,
सभी लगायें मिल के नारे।
चाचा नेहरू जियें हमारे।।
साल गिरह हर साल मनायें,
सब भर पेट मिठाई खायें।
उड़ा उड़ा गुब्बारे गायें,
सब लोगों के एक सहारे।
चाचा नेहरू जियें हमारे।।
जिसको दुनिया कहती नाहर,
वह अपना ही वीर जवाहर।
जय बोलो उसकी घर बाहर,
बोलो मिल सारे के सारे,
चाचा नेहरू जियें हमारे।।

मेरी (सेवक) और श्री विष्णुकाँत पाण्डेय की लिखी तो चाचा नेहरू से सम्बन्धित बालगीतों की दो अलग अलग पुस्तकें ही हैं। विष्णुकांत पान्डेय ने अपनी पुस्तक 'चाचा नेहरू' में उन्हें 'विश्वशान्ति का दूत', 'भारत का कर्णधार', 'त्याग तपस्या की प्रतिमा' आदि कह कर सम्बोधित किया है। इसलिये राष्ट्रीयतावादी बड़ों की दृष्टि में वह बच्चों के लिये एक उच्चकोटि की पुस्तक हो सकती है पर बच्चों की दृष्टि से भी वह उतनी ही उच्चकोटि की है या नहीं यह एक अलग प्रश्न है। इस पुस्तक में आदि से अन्त तक पण्डित नेहरू के चरित्र का यशगान ही नहीं किया गया बार-बार बच्चों को इस प्रकार के उपदेश भी दिये गये है :

अनुशासन अपनाओ।
और जवाहर बन जाने की,
मन में लगन लगाओ।।

या

बच्चो! तुम भी बनो जवाहर,
कहती भारत माता।
सत्य अहिंसा को अपना कर,
होओ भाग्य विधाता।।

बच्चे, चाहे चाचा नेहरू हों या युगपुरुष बापू उन्हें अपनी ही भावना और कल्पनाओं के सहारे देखते हैं। वह यदि चाचा नेहरू को भारत का प्रधान मन्त्री और एक महान राजनीनिक नेता ही मानने लगें तो उनके और बड़ों के दृष्टिकोण में कोई अन्तर ही न रह जाये। बच्चे जब तक उन्हें अपने चाचा के प्रति होने वाली स्वाभाविक भावनाओं का प्रतीक नहीं मानेंगे तब तक वह उन्हें हृदय से प्यार कर ही नहीं सकते। इसलिए मैंने अपनी पुस्तक के बालगीतों में पण्डित नेहरू के विषय में बड़ों की बड़ी-बड़ी बातों का वर्णन न करके उनमें बच्चों की उन सरल बातों का ही वर्णन किया है जिन्हें वह सोच सकते हैं :

चाचा नेहरू! मुझे एक तुम मोटर मंगवा दो,
कैसी प्यारी लगती है वह मैंने देखी है।
मुन्नू के चाचा ने उसको ला कर दे दी है,
खूब फर्श पर इधर उधर वह दौड़ी जाती है।
सारे खेल खिलौने भर भर कर ले आती है।।
माँ कहती है मैं ला दूंगी गई बजार जभी।
पापा कहते कैसे लाऊं पैसे नहीं अभी।।
बाबा कहते हैं मोटर क्या तू ले एक जहाज।
रोज आज कल करते उनको कभी न आती लाज।।
मेरे अच्छे चाचा तुम ही एक मुझे ला दो।
नेहरू चाचा मुझे एक तुम मोटर मंगवा दो।।

पर मेरे (सेवक) इन बालगीतों को देखकर कुछ बड़े लोगों ने यह कहा कि मैंने इन गीतों में भारत के प्रधान मन्त्री और एक महान राजनीतिक नेता की हंसी उड़ाई है। उनकी इस आलोचना के लिये मैं उनके बाल-स्वभाव के अल्पज्ञान को उत्तरदायी ठहराऊं या पण्डित नेहरू के प्रति पूजा श्रद्धा की अन्धी भावना को, यह मैं आज तक निर्णय नहीं कर सका।

चाचा नेहरू के समान ही विश्वबन्धु बापू से सम्बन्धित भी बहुत से बाल गीत हिंदी में लिखे गये हैं। पण्डित सोहन लाल द्विवेदी ने एक पूरी पुस्तक ही 'बच्चों के बापू' नाम से लिख दी है जो छपी भी बहुत सुन्दर है। इस पुस्तक में बापू के कुछ बहुत सुन्दर शब्दचित्र प्रस्तुत किये गये हैं, जैसे –

सिर पर धर खादी का टुकड़ा,
कस कर कमर लंगोटी।
बापू कहां चल पड़े बोलो,
लिये लकुटिया छोटी।।
एक ओर तो बा चलती है,
कौन दूसरी ओर।
अच्छा मैं पहचान गया यह,
भैया नन्दकिशोर।।

एक स्थान पर छोटे बच्चे बापू के पोपले मुख को देख कर कहते हैं :

सभी लोग तुम तक आते हैं तुम न कहीं क्यों जाते।
बापू इसका भेद बताओ तुम तो भेद छिपाते।।
बापू तुमको सभी मानते दुनिया शीश झुकाती।
पर मुंह पुपला देख तुम्हारा मुझे हँसी आ जाती।।

एक दूसरे स्थान पर कोई खिलाड़ी बच्चा उनसे कहता है :-

बापू काम कर चुके, आओ चल कर पतंग उड़ायें।
मैं ले लूंगा रील, चलो कनकइया कहीं लड़ायें।।
बापू लो मैं रील लिये हूं देते जाओ ढील।
खूब पतंग बढ़ाओ अपनी कम से कम दो मील।।
जिसकी भी पतंग आ जाये काटो उसको सर से।
बड़ा मजा आयेगा बापू उड़े पतंग फिर घर से।।

बापू ने कभी पतंग उड़ाई हो या नहीं पर जिन बच्चों को पतंग उड़ाते समय बड़ों के साथ लगे रहने में आनन्द आता है वह बापू के भी पतंग उड़ाने की कल्पना कर सकते हैं। विश्व-बन्धु देवता तुल्य, राम और कृष्ण की तरह ईश्वर के अवतार, देश में जगह-जगह जिनकी प्रतिमायें स्थापित कर लोग हार-फूल चढ़ाते हैं उन बापू के दाँतों रहित पोपले मुख को देख कर बच्चों में ही वह साहस हो सकता है कि हँस पड़ें और बच्चों के इस प्रकार हँस पड़ने से कोई देवता कभी बुरा भी नहीं मानता। द्विवेदी जी की इस प्रकार की रचनायें भी मेरे चाचा नेहरू

के गीतों की तरह ही बड़ों की दृष्टि में एक महापुरुष की हंसी उड़ाने वाली हो सकती हैं पर बच्चों के स्वभाव की जिन्हें थोड़ी भी जानकारी है वह ऐसा कभी नहीं कह सकेंगे।

राष्ट्रीय भावनाओं से पूर्ण बालगीतों के विषय में विचार करते समय एक इस सत्य की उपेक्षा कभी नहीं की जा सकती कि देश और समाज की परिस्थितियों में परिवर्तन होने पर राष्ट्रीय भावना के आधार-विषय और उसकी अभिव्यक्ति के रूप में भी परिवर्तन हो जाता है। जब भारतवर्ष में रेलें, सड़कें, नहरें और बड़े-बड़े नगर नहीं थे उस समय गंगा को देवी माता कह कर पूजने का जो भाव था वह आज के वैज्ञानिक युग में उतना प्रबल नहीं रहा। आज के किसान जब कृत्रिम मेघों से सिंचाई का काम ले सकते हैं तो उन्हें गंगा मइया या इन्द्र देवता को मनाने के लिये विनय गीत गाने की क्या आवश्यकता है। महापुरुषों की महत्ता के विषय में भी इसी प्रकार लोगों के दृष्टिकोण में परिवर्तन होते रहते हैं। स्टालिन जो अभी कुछ वर्ष पूर्व तक रूस देश का भाग्य-विधाता समझा जाता था बाद में एक महान अत्याचारी और निर्दयी शासक घोषित कर दिया गया और लोग उसके शव को भी चैन से लेटे नहीं देखना चाहते। देश और समाज की परिस्थितियों में परिवर्तनों का प्रभाव साहित्य पर भी पड़ता है और बालगीत भी उससे अलग नहीं रह सकते।

हिन्दी में कुछ ऐसे बालगीत भी लिखे गये हैं जो बच्चों की भावनाओं को विस्तार देकर उन्हें अन्तर्राष्ट्रीयता या विश्व एकता की भावना तक पहुँचाने वाले हैं। पर ऐसे बालगीत बहुत ही कम हैं। पण्डित रामनरेश त्रिपाठी का एक गीत है :

आसमान है एक हमारा एक नाव पर घर है।
है एक ही चिराग हमारा और एक बिस्तर है।।
एक तरह के अंग हमारे चाहे रंग कई हों।
रहन सहन है एक हमारी चाहे ढंग कई हों।।
भाव एक है भाषाओं की पोशाकें पहने हैं।
परमेश्वर है एक हमारा हम भाई बहनें है।।

इस बालगीत में "एक नाव पर घर है" की कल्पना बच्चों के लिये कुछ दुरूह अवश्य है पर एक बार इसका भाव समझ लेने से सारी कविता का भाव बहुत सरल हो जाता है। सारे संसार को प्रकाश देने वाला सूर्य हमारा चिराग और धरती बिस्तर है। इसे समझने में उन्हें कुछ भी देर नहीं लग सकती। इस प्रकार के बालगीतों में व्यक्त भाव राष्ट्रीय बालगीतों के भावों की अपेक्षा बच्चों की भावनाओं के अधिक अनुकूल होते है। बच्चों को प्रत्यक्ष तो यही दिखाई देता है कि संसार

के सारे मनुष्य एक से ही शरीर वाले हैं। उनके आपसी भेद-भाव और विरोध की बातें तो उनकी समझ में तभी आती हैं जब उनकी बुद्धि कुछ अधिक पक जाती है। मैंने (सेवक) भी बाल दिवस पर लिखित एक बालगीत में संसार के सब बच्चों की एकता का भाव व्यक्त किया है -

आज हमारे घर आंगन में मस्ती और बहार है।
बाल दिवस यह दुनिया भर के बच्चों का त्योहार है।।
कैद नहीं हम देश जाति की सीमाओं के जाल में।
उछल कूद में मस्त सदा हम पड़ते नहीं बवाल में।।
छोटे छोटे देश बड़ों के, बच्चों का संसार है।
आज हमारे घर आंगन में मस्ती और बहार है।
मिकोयान मौली लेवेना, बाला डोर तिन च्वांग पो।।
आज हमारे घर तुम सब की दावत है ज्योनार है।
बाल दिवस यह दुनिया भर के बच्चों का त्योहार है।।

भारतवर्ष तो अपने 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के प्रिय आदर्श का अत्यन्त प्राचीन काल से अनुयायी रहा है। यहां के युगदृष्टा ब्रह्मज्ञानी ऋषि संसार को 'कर वदर' सदृश देखा करते थे। इसका उल्लेख भी हमें प्राचीन ग्रन्थों में मिलता है। भारतवर्ष के यह ऊंचे आदर्श कभी सत्य रूप में चरितार्थ हो कर सामने आये थे या नहीं पर पिछली कुछ शताब्दियों में संसार में जो अभूतपूर्व वैज्ञानिक उन्नतियां हुई हैं उनके कारण अब वह पुराने आदर्श हमारी आंखों के सामने प्रत्यक्ष सत्य होकर आने लगे हैं। आज सबेरे ही हम घर बैठे एक समाचार पत्र के द्वारा संसार भर के सारे महत्वपूर्ण समाचार एक साथ जान लेते हैं। रेडियो के द्वारा हमें दूर-दूर देशों के निवासियों की बातें अपने कानों से सुनने को मिल जाती हैं और टेलीविजन भी जब रेडियो की तरह ही सुलभ हो गया है अतः दूर-दूर के देशों के लोगों को चलते-फिरते, खाते-पीते, गाते-बजाते भी घर बैठे देख लेते हैं। वायुयानों की गति अब इतनी तीव्र हो गई है कि हम कुछ ही घण्टों में हजारों मील दूर जा कर फिर अपने घर वापस आ सकते हैं। अब लन्दन और दिल्ली जैसे दूर-दूर स्थित विशाल नगर एक ही बड़े नगर के दो अलग-अलग मुहल्ले मालूम होते हैं। संसार के मनुष्यों ने अब धरती से दूर बहुत दूर चांद तारों तक पहुँचने की कल्पना को सत्य कर दिया। रूस का एक साधारण नागरिक गागरिन अन्तरिक्ष यात्रा करके वापस आया है। भारत की कल्पना चावला तो अंतरिक्ष के रहस्य के भेदन के सिलसिले में अंतरिक्ष में ही गुम हो गई। भारतीय मूल की सुनीता विलियम्स के कीर्तिमान

भी जगजाहिर हैं। संसार के सारे देशों ने मिल कर विश्व के मानवों की एकता के सिद्धांत को स्वीकार कर एक संयुक्त राष्ट्र संघ का निर्माण ही कर रखा है। इन सब कारणों से अब देश-देश के बीच की दूरी और अन्तर नष्ट होते जा रहे हैं। देशों बीच की सीमा-रेखाओं के अस्तित्व का महत्व भी अब कम होता जाता है। भेद-भाव और बैर-विरोध के विषय मिल-जुल बैठ कर सुलझाने से तय हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में आज का बालक भविष्य में जिस समाज का अंग होगा वह एक ऐसा विश्व मानव समाज होगा जिसमें जाति/देशों के रूप में मानव मन की कल्पित सीमाओं के लिये स्थान ही न रह जायेगा। अब भी यदि हमारे कवि बच्चों को राष्ट्रीयता के नाम पर प्राचीन परम्परागत संकीर्णताओं और संसार के मनुष्यों में बैर-विरोध की भावनाओं को बढ़ाने वाले बालगीतों के बजाय विश्व नागरिक बनने की प्रेरणा देने वाले बालगीत रच कर नहीं देगे तो वह बड़े होकर उनका कुछ भी एहसान नहीं मानेंगे। उनके लिए अब तक के रचे बड़ों के यह राष्ट्रीयगीत समय की हवा के साथ उड़ जावेंगे और भविष्य के बच्चे उन्हें गैस के गुब्बारों की तरह उड़ते देख कर भी खेलने के लिए पकड़ने का प्रयत्न नहीं करेंगे। जब उन्हें खेल-खेल में अन्तरिक्ष तक उड़ने-उड़ाने के लिए असली वायुयान, बैलून, राकेट, और हेलीकोप्टर मिलने लगेंगे तो वह इन जरा में फट जाने वाले नकली गुब्बारों को लेकर क्या करेंगे।

11 : बालगीतों की शिक्षा एवं रचना-शिक्षा

आजकल विज्ञान का युग है। रेडियो, बिजली, वायुयान, राकेट, टेलीविजन, वायरलेस यह सब विज्ञान के चमत्कार हैं और विज्ञान के प्रयोग से चलने वाले बड़े कल कारखाने, इंजन, मशीनें, रेलें, बसें, ट्रेक्टर, सिनेमा, तार, टेलीफोन इत्यादि को देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है कि मनुष्य ने अपने जीवन को सुख-सुविधापूर्ण बनाने के लिए कैसी-कैसी उपलब्धियां कर रखी हैं। अपने से मीलों दूर खेले जाने वाले क्रिकेट के मैच को हम टेलीविजन द्वारा प्रत्यक्ष अपनी आँखों से देख सकते है आज विज्ञान ने हमारे लिए यह सम्भव बना दिया है कि हम सबेरे की चाय दिल्ली में पीने के बाद दोपहर इटली और शाम लन्दन में बितायें। अमरीका और रूस के लोग चाँद तक पहुँच गये हैं। ऐसे अभूतपूर्व वैज्ञानिक युग में रहने के कारण जीवन, जगत और समाज के प्रति हमारा दृष्टिकोण भी बहुत कुछ वैज्ञानिक हो गया है। एक-एक पल समय का मूल्य आज मनुष्य आँकने लगा है क्योंकि उतना ही समय संसार में बड़े से बड़े परिवर्तन लाने के लिए पर्याप्त होता है। जो मनुष्य आज वैज्ञानिक दृष्टिकोण नहीं रखते वह पग-पग पर ठोकरें खाते और पछताते हैं। इसलिए छोटे बच्चों को भी प्रारम्भ से ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने की शिक्षा देना आवश्यक हो गया है।

हिन्दी कविता को भी इस यथार्थवादी वैज्ञानिक दृष्टिकोण ने कम प्रभावित नहीं किया है। आज का कवि आज के आदमी की तरह स्वयं एक मशीन बनकर रह गया है। वह आज पहले की तरह स्वच्छन्द रहकर कल्पना की उड़ानें भरते हुए नहीं रह सकता। न कालिदास के यक्ष की तरह भावुकता की लहरों पर निर्बाध बहता रह सकता है। कविताओं में अधिक रुचि होने से मनुष्य भावुक और कल्पनाशील बन जाता है। इसलिए बहुत से वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाले शिक्षाशास्त्रियों का यह मत है कि बच्चों को बालगीत या कल्पना प्रधान साहित्य पढ़ने को देने से कोई लाभ नहीं।

किन्तु मनुष्य जीवन को समाज में रहते हुये सफलतापूर्वक व्यतीत करने के लिये केवल तार्किक बुद्धि से ही काम नहीं चल सकता। भावना और कल्पना भी उसके लिये उतनी ही आवश्यक हैं जितनी विवेकपूर्ण तार्किक बुद्धि। मनुष्य में यदि कल्पना की प्रचुरता न हो तो वह कुशल वैज्ञानिक भी नहीं बन सकता। वैज्ञानिक अनुसन्धान करने के लिये भी उसे पहले से कल्पना में वह सब योजना बनाना पड़ती है जिसके अनुसार चल कर ही वह अपने प्रयत्न प्रयोग में सफलता प्राप्त कर सकता

है। इसी प्रकार कल्पना के साथ-साथ भावना की भी आवश्यकता उसे होती है। यदि किसी भी कार्य को आदि से अन्त तक बराबर करते रहने के लिये उसकी भावुकता उसे प्रेरणा नहीं देती तो वह काम अधूरा रह जाता है। कल्पना प्रधान साहित्य भी विवेक बुद्धि के सहयोग के बिना लिखा ही नहीं जा सकता। किसी भी कल्पना को साहित्य के रूप में प्रस्तुत करने के लिए प्रत्येक कवि या लेखक को अपनी विवेक बुद्धि का सहारा लेना पड़ता है। अतएव सत्य तो यह है कि हम किसी भी साहित्य के सर्वथा कल्पनामय होने की कल्पना ही नहीं कर सकते। कल्पना, भावना और विवेक-बुद्धि तीनों के सह-अस्तित्व से ही सत्साहित्य का सृजन होता है और इन तीनों का समुचित संतुलन ही मनुष्य के व्यक्तित्व को विकसित करने और उसे एक सफल मनुष्य बनाने के लिये अपेक्षित और आवश्यक है। इसलिये यह किसी प्रकार भी नहीं कहा जा सकता कि बालगीत या अन्य कोई कल्पना साहित्य बच्चों को पढ़ने को देना ही नहीं चाहिए।

बचपन में मनुष्य में तर्क या विवेक बुद्धि का प्रायः अभाव रहता है। वह ऐसी वस्तुओं को पाने की चेष्टा करता है जिन्हें पाना बड़ों की दृष्टि में सर्वथा हास्यास्पद हो सकता है। प्राप्त करने के प्रयत्नों में असफलता हाथ लगने पर बालक स्वयं अपने ऊपर ही क्रोध करने लगता है। सुन्दर सुरुचिपूर्ण बालगीत या दूसरा कल्पना या भावना प्रधान साहित्य बच्चों के हृदय की वृत्तियों का परिष्कार करके उनके मन को समय और परिस्थितियों के अनुसार ऐसी दिशाओं में लगा सकता है जिससे उनके मन में पराजय का भाव आ ही न सके। कविता से जीवन यापन की कला का भी बहुत गहरा सम्बन्ध है। जिनकी रुचि उसके अध्ययन में हो जाती है वह सदैव प्रसन्नचित रहते हैं और बड़ी से बड़ी आपत्तियां भी उन्हें विचलित नहीं कर पातीं।

बालगीत बच्चों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करने में बहुत सहायक होते हैं। गीतों में तुक और स्वरों की संतुलित व्यवस्था ही अव्यक्त रूप से बच्चों के मन को संतुलित बनाये रखने के लिए पर्याप्त प्रेरणा देने वाली होती है। बार-बार निश्चित मात्राओं के आने और स्वरों के उतार-चढ़ाव से वह अपने आप मन को व्यवस्थित करने के अभ्यस्त हो जाते हैं। मानसिक संतुलन की यह बात उनके बड़े होकर उच्च कक्षाओं में पहुँच जाने पर अनुशासन से भी सम्बद्ध होती है। बचपन में समुचित बालगीतों द्वारा जिन्हें अपने मन को संतुलित रखने की शिक्षा मिल जाती है वह बड़े होकर भी अनुशासन और व्यवस्थाप्रिय बने रहते हैं। सैनिक स्कूलों में बजने वाले वाद्ययन्त्रों के स्वरों के उतार-चढ़ाव से बच्चों के मन पर पड़ने वाले

छोटे बच्चों के मन स्वभावतया बहुत चंचल होते हैं। मन की चंचलता के कारण वह किसी वस्तु का एक निश्चित रूप अपने मन में स्थिर नहीं कर पाते। घोड़े में सूंड़ वाले हाथी और पंख लगी उड़ने वाली छिपकलियों की विचित्र कल्पनायें वह प्रायः किया करते हैं। शिक्षा का उद्देश्य इस चंचलता को वश में करके उन्हें संसार की वस्तुओं को वे जैसी हैं वैसी ही देखने के लिए दृष्टि और साथ-साथ नित नई कल्पनायें करने की शक्ति प्रदान करना है। जो वस्तु जैसी है उसे वैसा ही समझने की दृष्टि उन्हें भविष्य के जीवन में यथार्थवादी वैज्ञानिक दृष्टिकोण देती है। साथ ही यदि कल्पना-शक्ति भी उनमें हुई तो एक ओर नये-नये अन्वेषण और आविष्कार करने में वह सफल होते हैं और दूसरी ओर समाज में दूसरों के सुख-दुख के भावों को समझ कर सहृदयतापूर्वक आचरण करने की क्षमता प्राप्त करते हैं। बालगीतों की शिक्षा बच्चों के चंचल मन में स्थिरता लाकर उनकी उलझी हुई कल्पनाओं को सुलझाकर उनका स्वरूप निश्चित कर देती है। बच्चों की भावनाओं और कल्पनाओं के अनुरूप ही बालगीत लिखे जाते हैं इसलिये बच्चे उन्हें पढ़-सुनकर अपनी भावनाओं और कल्पनाओं को स्वयं समझ सकते हैं। जीवन के बहुत से यथार्थ भी ऐसे होते हैं जिनका बोध बच्चों को बालगीतों के माध्यम से बड़ी सरलता से कराया जा सकता है। सवेरा, बरसात, बसन्त इत्यादि के भाव बच्चों के मन पर बालगीतों के द्वारा जितने सुन्दर ढंग से जमाये जा सकते हैं उतने अन्य किसी उपाय से नहीं। बालगीतों में किसी प्राकृतिक दृश्य या वस्तु का वर्णन पढ़ने या सुनने से ऐसा चित्र-सा उनकी आंखों के सामने खिंच जाता है कि वह फिर उनकी आंखों से कभी ओझल नहीं होता।

सामाजिक जीवन के आदर्शों और उच्च भावनाओं के प्रति बच्चों को आकर्षित करने के लिए भी बालगीतों की उपयोगिता स्वयंसिद्ध है। उनमें जो बात रोचक और मनोवैज्ञानिक ढंग से कही जाती है वह बच्चों के मन को अवश्य प्रभावित करती है। प्रायः देखा गया है कि किसी भी कविता की कोई एक पंक्ति उन्हें इस प्रकार से याद हो जाती है कि वह उसे जीवन भर भूल नहीं पाते। उस पंक्ति का भाव उन्हें अव्यक्त रूप से सदा प्रेरित करता रहता है। बालगीत यदि मनोरंजक ढंग से लिखे हुए हों तो उनके द्वारा सच्चरित्रता, सत्यवादिता, वचनबद्धता, परदुखकातरता आदि गुण बच्चों में बहुत सरलता से विकसित किये जा सकते हैं। विनय और प्रार्थना के बालगीत उन्हें विनम्र बनाने में सहायक होते हैं। बहुत-सी शिक्षण सस्थाओं में पढ़ाई प्रारम्भ होने से पूर्व कोई प्रार्थना गीत सामूहिक रूप से गाया जाता है। इससे अपने गुरुजनों का आदर करने का भाव उनमें अपने आप आ जाता है और वह

अनुशासन में रहना भी सीख जाते हैं। पर यह भी देखा गया है कि बहुत छोटे बच्चे बड़े बच्चों के साथ मिलकर प्रार्थना के कठिन गीत गाने से कुछ भी नहीं सीख पाते। उदाहरण के लिए स्कूलों में बहुत प्रचलित एक यह प्रार्थना है -

हे प्रभो आनन्द दाता ज्ञान हमको दीजिए।
शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिए।।
लीजिए हमको शरण में हम सदाचारी बनें।
ब्रह्मचारी धर्म रक्षक वीर व्रत धारी बनें।।

छोटे बच्चे इन पंक्तियों को बार-बार तोते की तरह दुहराकर भी इनसे कुछ सीख सकते हैं या नहीं, यह विचारणीय प्रश्न है। जो बच्चे आनन्द, दुर्गुण, शरण, सदाचारी, ब्रह्मचारी, धर्मरक्षक और वीर व्रतधारी का अर्थ भी ठीक से नहीं समझते हों वह इससे क्या उपदेश ग्रहण करेंगे। इस प्रकार की प्रार्थना से एक भय यह भी बना रहता है कि कोई अत्यधिक भावुक बालक कहीं यह न समझ ले कि उसमें दुर्गुण और दुराचार ही भरे हैं जिन्हें दूर करने के लिए उसे किसी की शरण में जाना अनिवार्य रूप से आवश्यक है। और उसे धर्मरक्षक, ब्रह्मचारी, वीर व्रतधारी बनने के लिए जीवन भर एक कठिन तपस्या करनी होगी। इससे एक प्रकार की हीनता की भावना भी उसके मन में उत्पन्न हो सकती है और वह अच्छा बनने के प्रयत्नों से विमुख भी हो सकता है। जैसे वही भोजन मनुष्य को खाना चाहिए जिसे पचाकर वह शक्ति ग्रहण कर सके वैसे ही विनय और प्रार्थना के जो पद बच्चों को याद कराये जायें वह ऐसे होना चाहिए जो मनोवैज्ञानिक ढंग से बच्चों में आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता, साहस आदि के भावों को जगाने वाले तथा भाव और भाषा दोनों दृष्टियों से बच्चों के लिए उपयुक्त हों।

बच्चों को बालगीत पढ़ाने के अनेक उद्देश्य हो सकते हैं। उनमें से भाषा ज्ञान पल्लवित करना भी एक है। बहुत से शिक्षा शास्त्रियों का मत है कि भाषा ज्ञान की शिक्षा बच्चों को बालगीतों के द्वारा नहीं देनी चाहिए। उनके इस मत का आधार यह है कि गीतों में शब्द प्रायः अपने वाच्यार्थ को छोड़ कर व्यंग्यार्थ या लाक्षणिक अर्थ की प्रधानता लिये हुए होते हैं। अतएव शब्दों के साधारण अर्थों के स्थान पर बच्चों के मन में कुछ ऐसे अर्थ के भाव बैठ जाते हैं जो प्रतिदिन के व्यवहार की भाषा में प्रयुक्त नहीं होते। पर बच्चे अपने परिवार और समाज के जिस वातावरण में रहते हैं उसमें शब्दों का प्रयोग केवल उनके साधारण वाच्यार्थ में ही नहीं किया जाता। प्रायः अल्पशिक्षित ओर अनपढ़ लोग भी अभिधा के अतिरिक्त

काम लिया करते हैं। इसलिए बच्चे भी बचपन से ही उनसे परिचित हो जाते हैं और समय और आवश्यकता के अनुसार वह भी उनसे काम लेने लगते हैं। ऐसी दशा में बालगीतों के द्वारा ही यदि बच्चे अभिधेयार्थों के साथ उनके लाक्षणिक अर्थ भी सीखते जायें तो उनके भाषा ज्ञान की शिक्षा में कोई बाधा नहीं पड़ती। दूसरे बालगीत लिखे ही इतने सरल भाषा में जाते हैं कि उनमें शब्दों के लाक्षणिक और व्यंगात्मक प्रयोगों के लिए गुंजायश ही बहुत कम होती है। गद्य और पद्य के द्वारा भाषा की शिक्षा दिये जाने में अन्तर केवल इतना है कि पद्य स्वर और लय से संयुक्त होने के कारण बच्चों को गद्य की अपेक्षा अधिक आकर्षक लगते हैं। इसलिए वह पद्य को न केवल अधिक रुचि से पढ़ ही सकते हैं बल्कि पढ़ते-पढ़ते याद भी कर लेते हैं। याद कर लेने से उनका शब्द-भण्डार बहुत तेजी से बढ़ता चला जाता है और उनका भाषा ज्ञान बहुत समृद्ध हो जाता है। किन्तु यदि बालगीतों की शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य भाषा ज्ञान की अभिवृद्धि मान लिया जाता है तो उसके अन्य प्रमुख उद्देश्यों की पूर्ति ठीक से नहीं हो पाती। भाषा की शिक्षा देने में शब्दों और अर्थों का विश्लेषण करके अर्थ बोध कराना पड़ता है। ऐसा करने से बालगीतों की मूल आत्मा के दर्शन बच्चों को नहीं हो पाते और न वह उनका पूरा रस ही ले सकते हैं। इसलिए भाषा ज्ञान को ही बालगीतों की शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य नहीं माना जा सकता। बहुत छोटी आयु के बच्चों के लिए अवश्य यह उद्देश्य प्रमुख होता है क्योंकि उस अवस्था के बच्चों में कोई भावनात्मक या कल्पनात्मक रूप अपने सामने स्थिर करने की क्षमता होती ही नहीं है। शब्द भी उन्हें निर्जीव खिलौने की तरह रोचक खेल की वस्तु मालूम होते हैं। वह इससे अधिक उनका और कुछ महत्व नहीं समझ सकते। इसलिए उस छोटी आयु के लिये लिखे गये बालगीतों में शब्दों का प्रयोग बहुत सावधानी से करने की आवश्यकता होती है। बच्चों के मनोनुकूल स्वर और व्यंजनों के मिश्रण से बने हुए कुछ चुने हुए शब्द ही यदि आकर्षक ढंग से उनके सामने प्रस्तुत किये जायें तभी वे उनका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने में समर्थ हो सकते हैं।

बालगीतों की शिक्षा का दूसरा प्रमुख उद्देश्य उनकी कल्पना शक्ति को विकसित करना है। विकसित कल्पना शक्ति के बिना कोई मनुष्य जीवन के किसी क्षेत्र में कोई उन्नति नहीं कर सकता। प्रत्येक वैज्ञानिक अनुसन्धान या आविष्कार करने से पूर्व ही उसके भावी रूपों और परिणामों की पूर्व कल्पना कर लेता है। जो व्यक्ति कल्पना द्वारा नई-नई परिस्थितियों और किसी कार्य के परिणामों की जितनी यथार्थ कल्पना पहले से कर सकता है वह उतना ही अपने जीवन में सफल होता है।

इसलिए बच्चों की कल्पना शक्ति को जागृत और विकसित करने के लिये बालगीतों की शिक्षा से बहुत लाभ उठाया जा सकता है। पर अत्यधिक कल्पनाप्रधान साहित्य बच्चों को पढ़ाने का एक दुष्परिणाम भी होता है। जो बच्चे अत्यधिक कल्पना प्रधान साहित्य पढ़ने से कल्पना में ही विचरण करते रहते हैं वह प्रायः जीवन की यथार्थ परिस्थितियों का सामना करने में कमजोरी का अनुभव करते हैं। इस प्रकार के बच्चे प्रायः दिवास्वप्न देखने लगते हैं और जो वह नहीं है वैसा अपने को समझने की आदत पड़ जाने के कारण उन्हें अनुचित और असंगत व्यवहार करते हुए भी देखा जाता है। इस प्रकार की प्रवृत्तियाँ बच्चों में बालगीतों की अपेक्षा कथा-कहानियों के पढ़ने से अधिक विकसित हो जाती हैं। फिर भी जीवन के यथार्थ से दूर के बालगीत ही बच्चों को पढ़ने के लिए देना शिक्षा की दृष्टि से सर्वथा उचित नहीं कहे जा सकते।

कल्पना मनुष्य के मस्तिष्क की उपयोगी शक्तियों में से प्रमुख शक्ति है पर भावना और विवेक भी उससे कम महत्वपूर्ण शक्तियाँ नहीं। विकसित और परिष्कृत भावना के बिना मनुष्य संसार के सारे कार्य सुचारु रूप से करते हुए भी एक यन्त्र या मशीन की तरह ही रहता है। मनुष्य में व्यक्तित्व विकसित करने के लिये भावना की बहुत आवश्यकता होती है। संसार के बड़े से बड़े दार्शनिक, विचारक या विद्वान यदि दूसरों के सुख में सुखी और दूसरों के दुख में दुःखी होने की क्षमता नहीं रखते तो उनके दर्शन, ज्ञान और विचारों की उपयोगिता के विषय में सन्देह होने लगता है। बालगीत भावप्रवणता के आधार पर ही लिखे जाते हैं। जो कवि आकाश में चन्द्रमा को चमकते हुए देखकर बच्चों के कौतूहल, जिज्ञासा के साथ-साथ प्रसन्न होकर उसे अपने पास पकड़ बुलाने की भावना का अनुभव नहीं कर सकता वह चन्द्रमा पर बच्चों का मनोरंजन करने वाला बालगीत लिख ही नहीं सकता। अतएव बालगीतों की शिक्षा का उद्देश्य उनमें उसी भावप्रवणता को उत्पन्न करना भी है जिसके आधार पर बालगीत लिखे जाते हैं। बालगीत पढ़ते समय बच्चे कवि की भावनाओं के साथ-साथ बहने लगते हैं और उतनी देर के लिए वह अपने वास्तविक जीवन की सारी दूसरी बातों को भूल जाते हैं। पर वह उन्हीं भावनाओं के साथ बह सकते हैं जो उनकी जानी-पहचानी या समझ में आ सकने वाली होती हैं। इन भावनाओं के साथ में बहने से बच्चों की भावनायें परिष्कृत होती हैं। वह सुख-दुख, आशा-निराशा के भार को उठाना सीख जाते हैं। उनके मन मजबूत हो जाते हैं और फिर कठिन परिस्थितियों में से निकलना भी उन्हें आसान लगने लगता है। वह अपने वातावरण से समुचित भावात्मक सम्बन्ध स्थापित कर लेने में सफल होते हैं जिससे वह असन्तुलन

उनके जीवन में नहीं आ पाता जो कभी-कभी भयंकर मानसिक विक्षोभ उत्पन्न करने का कारण होता है। संसार की विभिन्न वस्तुओं और समाज के विभिन्न मनुष्यों से भावनात्मक सम्बन्ध पैदा करके ही बालक अपने में उस व्यक्तित्व का उदय करता है जिसके बिना आत्मविश्वास और स्वाभिमान जैसे गुण उसमें आ ही नहीं सकते। अतएव भावनात्मक सम्बन्ध उत्पन्न करके बच्चों के व्यक्तित्व का विकास करना भी बाल गीतों की शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य है।

ज्ञानार्जन भी बालगीतों की शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य होता है। शिशु शिक्षा के क्षेत्र में तो गीतों का बड़ा महत्त्व है। शिशु सब से पहले गीतों की ओर ही आकर्षित होता है। उन्हीं के माध्यम से वह वातावरण से अपनी पहचान बनाता और स्वर व्यंजनों का ज्ञान प्राप्त करना प्रारम्भ करता है। आगे चलकर वस्तुओं और पशु पक्षियों आदि से पहचान बनाने और भाषा का ज्ञान प्राप्त करने में शिशु गीत बहुत सहायक होते हैं। बालगीतों की शिक्षा से तो वर्णित विषयों और वस्तु स्थितियों के विषय में उनका ज्ञान बढ़ता ही है।

उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति की दृष्टि से शिक्षा में बालगीतों की इतनी उपयोगिता होते हुए भी उसका लाभ बहुत कुछ अध्यापक के पढ़ाने के ढंग पर अवलम्बित होता है। अध्यापक यदि कुशल पढ़ाने वाला है तो वह कविता के लिए बच्चों में एक ऐसी रुचि उत्पन्न कर देता है कि वे जीवन भर उससे अलग नहीं हो सकते। दूसरी ओर ऐसे भी अध्यापक होते हैं जो कविता और अंकगणित पढ़ाने के ढंग में कोई अन्तर ही नहीं समझते और कविता में रुचि उत्पन्न करने के बजाय एक ऐसी अरुचि पढ़ाने के ढंग से उत्पन्न कर देते हैं फिर बच्चों को कविता में रस प्राप्त कर सकना कठिन हो जाता है। बालगीतों के अध्यापक का सबसे प्रमुख गुण यह है कि वह सहृदय हो। फिर, उसे अपना स्वभाव कवि की तरह बच्चों जैसा ही बना लेने का अभ्यासी होना पड़ता है। जब तक वह बालकों की दृष्टि से ही किसी वस्तु को नहीं देख सकता तब तक न वह उसे ठीक से समझ सकता है न बच्चों को समझाने में समर्थ हो सकता है। अतएव अध्यापक को बालगीत पढ़ाना प्रारम्भ करने से पूर्व ही अपने सारे ज्ञान-भण्डार और शब्दागार का भार सिर से उतार कर अलग रख देना चाहिए। बिना ऐसा किए वह बालकों में से एक नहीं हो सकता और बच्चे ज्ञान-विज्ञान के दूसरे विषय भले ही अपने से अधिक किसी ज्ञानवान से पढ़ने को तैयार हो जायें, बालगीत हर किसी से पढ़ने को तैयार नहीं हो सकते। बालगीतों का अध्यापक जितना ही अबोध और अनजान बन कर पढ़ाने का उपक्रम करेगा उतना ही अधिक सफलता उसे प्राप्त होगी। यही नहीं, बालगीतों की शिक्षा की बहुत बड़ी सफलता बालगीतों के चुनाव पर निर्भर होती है।

शिक्षा शास्त्रियों का यह भी कहना है कि अध्यापक द्वारा आदर्श पाठ पर बालगीत अध्यापन की आधी सफलता निर्भर होती है। अध्यापक भाव प्रदर्शन के साथ सस्वर बालगीत का पाठ करे तो आधा रस तो वह अपने बाल विद्यार्थियों के मन में उसी समय उंडेल सकता है। विद्यार्थी स्वयं अपनी पुस्तकों में देखने के बजाय अध्यापक के मुंह की ओर देखते रहें तो बालगीत के भाव तुरन्त हृदयंगम कर सकते हैं।

बालगीतों को पढ़ाने की कोई निश्चित प्रणाली नहीं बताई जा सकती। यह सदा पढ़ाने वाले के व्यक्तित्व पर निर्भर रहती है। संसार में जितने अध्यापक हैं उतनी ही बालगीतों को पढ़ाने की प्रणालियां हो सकती हैं। हैडो का कथन है There is no definite method that ought to be employed.......... It (poetry teaching) is like love making.......and each must do in his own way. (कोई निश्चित प्रणाली नहीं है जिसे प्रयोग में लाया जाये-कविता पढ़ाना किसी को प्रेम करने की तरह है और प्रत्येक व्यक्ति को अपने ढंग से ही करना चाहिए)। फिर भी मोटे तौर से कुछ प्रणालियों की ओर संकेत किया जा सकता है। उनमें से प्रमुख निम्न लिखित हैं :

१. गीत तथा अभिनय प्रणाली -- इसके अनुसार अध्यापक एक ही गीत को अपनी मुखाकृतियों, चेष्टाओं और अभिनय के द्वारा भाव प्रदर्शन करते हुए बार-बार पढ़ता है और इन सब के द्वारा वह शब्दों के संगीत, ध्वनि और अर्थ से बालकों को परिचित कराता चलता है। बालक स्वयं उनके पारस्परिक सम्बन्धों तथा उनके कारण पड़े प्रभावों को अपने मन में बैठाते जाते हैं। उदाहरण के लिए यदि एक बालगीत की यह दो पंक्तियां बच्चों को पढ़ाता हैं :

आ, मेरे संग बैठ, बिलैया
ले मुंह बा, खा दूध मलैया

तो अध्यापक को इस प्रकार भाव प्रदर्शन करना होगा :

1. आ-दाहिने हाथ से तथा गर्दन से बुलाने का भाव दिखा कर
2. मेरे संग-दाहिने हाथ को छाती से लगा कर
3. बैठ बिलैया-बायें हाथ की हथेली से पास में बिठाने का अभिनय करके।
4. ले-दाहिने हाथ का अँगूठा हथेली के बीच में रख कर कुछ देते हुए का भाव दिखा कर।
5. मुंह बा-दोनों हाथों से इस प्रकार का अभिनय करना मानो बिल्ली

6. खा दूध मलैया-दाहिने हाथ को इस प्रकार आगे बढ़ा कर मानो बिल्ली के मुंह में कुछ खाने को रख रहे हों।

अध्यापक इसके बाद अपनी ही तरह बालकों में बारी-बारी से अभिनय करते हुए - सस्वर पाठ कराये। ऐसा करने में बच्चों को खेल जैसा आनन्द आने लगेगा और उनकी रुचि बालगीतों को पढ़ने में जागृत होगी।

२. अर्थ बोध प्रणाली -- यह पुरानी प्रणाली श्लोक को पढ़ा कर उसका शब्दार्थ और भावार्थ बालकों को बता देने भर की है। इससे बच्चों को अर्थ तो मालूम हो जाते हैं पर किसी प्रकार रस की निष्पत्ति उनके मन में नहीं होती। बड़े-बड़े व्याकरण पण्डित इसी प्रणाली को अपनाते रहे हैं।

३. व्याख्या प्रणाली -- व्याख्या प्रणाली और अर्थ बोध प्रणाली में थोड़ा ही अन्तर है। इस प्रणाली के अनुसार अर्थ बोध के साथ-साथ भावार्थ की व्याख्या कुछ विस्तार से कर दी जाती है। इससे अध्यापक कथा प्रसंग और उसी तरह की दूसरी बातें भी बालकों के समक्ष प्रस्तुत करता चलता है। व्याकरण पिंगल छन्द रस और अलंकार सम्बन्धी व्याख्यायें भी इसी प्रणाली के अन्तर्गत आती हैं पर यह प्रणाली बालगीत के मूलाधार रस के चारों ओर चक्कर लगाने की प्रणाली के समान है। इसलिए व्याख्या द्वारा सब तत्व जान लेने के बाद भी जब तक अभिनयात्मक ढंग से सस्वर बालगीत पाठ नहीं होता तब तक उन्हें रसानुभूति नहीं हो सकती।

पर यह निर्विवाद सत्य है कि प्रत्येक शिक्षक को अपने बाल विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए स्वयं अपनी समझ से अपनी अलग प्रणाली बालगीतों की शिक्षा के लिये निश्चित करनी पड़ती है। वह कई प्रणालियों का सम्मिश्रण भी हो सकती है। और उन सबसे भिन्न अपनी अलग प्रणाली भी हो सकती है। प्रारम्भ में बहुत छोटे बच्चों को उनकी समझ में आ सकने वाले मधुर बालगीत केवल हाव-भाव के साथ सस्वर सुनाये जाया करें। बार-बार ऐसा करने से वह उन्हें आसानी से याद हो जाते हैं। टेप रिकार्डर और ग्रामोफोन से भी इस कार्य में सहायता ली जा सकती है।

बच्चों को कविता-कहानी लिखने की शिक्षा देने पर भी यहाँ विचार करना जरूरी है। शकुन्तला सिरोठिया ने तो बच्चों को चित्रकला सिखाने के लिए 'शिशु कला' नाम की एक पुस्तक ही लिख दी है जिससे स्कूलों में बच्चों को चित्र कला सिखाने वाले बहुत कुछ सीख सकते हैं। हिन्दी में कदाचित यह इस विषय की पहली पुस्तक है। कविता लेखन सिखाने के लिए बच्चों को पहले एक विषय दें। उदाहरण के लिए, 'बिल्ली'। किसी बच्चे ने एक पंक्ति बनाई - बिल्ली आई, बिल्ली आई।

फिर सब बच्चों से इसी विषय पर कम से कम तीन-तीन और पंक्तियाँ लिखने को कहें तो कोई बच्चा कहेगा –

भागो भाई, भागो भाई
यह चूहों को पकड़ गिराती

चौथी पंक्ति बनाने में यदि बच्चा सोच में पड़ जाये तो उससे प्रश्न करिये "बिल्ली चूहों को पकड़कर उनका क्या करती है।" उत्तर मिलेगा "खा जाती है।" तभी चौथी पंक्ति भी वह स्वयं बना लेगा –

बैठ मजे से उनको खाती।

इस प्रकार बिल्ली पर यह चार पंक्तियों की कविता बन गई –

बिल्ली आई! बिल्ली आई
भागो भाई! भागो भाई
यह चूहों को पकड़ गिराती
बैठ मजे से उनको खाती।

सम्भव है कोई दूसरा बालक इस प्रकार की पंक्तियाँ बना दे –

बिल्ली आई बिल्ली आई
खा जायेगी दूध मलाई
अम्मा अम्मा जल्दी आओ
इसे यहाँ से मार भगाओ।

कोई तीसरा बालक जो यह जानता है कि बिल्ली को शेर बबर की मौसी कहते हैं इस विषय पर इस प्रकार की पंक्तियां भी बना सकता है –

बिल्ली आई बिल्ली आई
बबर शेर की मौसी ताई
मुझे नहीं लगता इससे डर
मारूंगा मैं इसके पत्थर।

इस प्रकार एक ही विषय पर अलग-अलग ढंग से लिखी इन तुकबन्दियों के सहारे वे अपनी मनोभावनाओं को भी व्यक्त करने लगेंगे और अभ्यास यदि चलता रहा तो लम्बी-लम्बी रचनायें भी लिख सकते हैं।

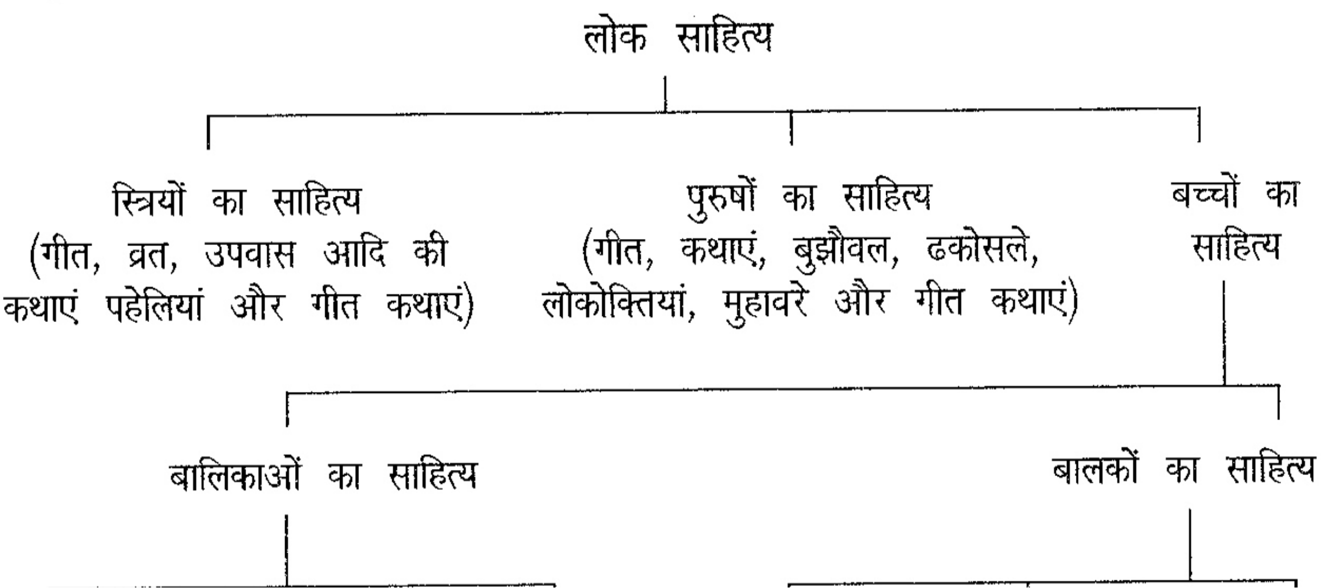
बिना पिंगल और छन्द के शास्त्रीय ज्ञान की शिक्षा के बच्चों को काव्य रचना की शिक्षा देने के प्रयोग में मात्राओं को साध कर तुकें जोड़ने के इस खेल में कुछ नियम भी निश्चित किये जा सकते हैं। जिससे अभ्यास और भी सरलतापूर्वक कराया जा सके। काव्य रचना की यह शिक्षा एक और दृष्टि से भी बच्चों के लिए

बहुत उपयोगी हो सकती है। बच्चों की रुचि तो बालगीतों में होती ही है। उनके लिए बालगीत साहित्य के भण्डार की जितनी आवश्यकता है उतनी बड़ों के लिये नहीं। बड़ों में कुछ गिने हुए व्यक्ति ही कविता में रुचि लेने वाले होते हैं। बच्चे प्रायः सभी तुकबन्दियाँ और बालगीत रुचि से पढ़ते और सुनते हैं। वह उन्हें प्रायः कण्ठस्थ भी कर लेते हैं। पर बड़ों द्वारा लिखी जाने के कारण बच्चों को स्वयं उनकी अपनी भावनाओं को व्यक्त करने वाला सरल बालगीत साहित्य आवश्यकतानुसार पढ़ने को मिल ही नहीं पाता। इसलिए बच्चे यदि काव्य रचना के अभ्यास से स्वयं अपने लिए उपयुक्त तुकबन्दियां जोड़-जोड़ कर छोटी-छोटी कवितायें लिखने में समर्थ हो सकें तो उन्हें बालगीत साहित्य का अभाव कभी अनुभव ही न हो। यदि हम अपने बच्चों को उनके अपने सुख-दुख, सफलता-असफलता, आशा-निराशा और कल्पनाओं को व्यक्त करने वाला बालगीत साहित्य देना चाहते हैं तो हमें चित्रकला, संगीत, आदि की शिक्षा की तरह काव्य रचना की शिक्षा भी बचपन में ही देना चाहिए। हम बड़ों का बच्चों के लिए बाल साहित्य लिख कर देना तो वास्तव में हमारी अनधिकार चेष्टा है।

12 : लोकगीतों में बालगीत

प्रत्येक मानव समाज के साहित्य में लोकगीतों का अपना एक विशेष स्थान होता है। मनुष्यों के मन के भाव, कल्पनायें, आदर्श और आस्था-विश्वास जितने स्वाभाविक रूप में लोकगीतों में चित्रित मिलते हैं उतने लिखित काव्य साहित्य में नहीं। लिखित काव्य साहित्य की भाषा शैली में तीव्रता से परिवर्तन होते रहते हैं और पुराने रूप नयों के आगे पिछड़ते रहते हैं। पर लोकगीत साहित्य प्रायः अपने एक ही रूप में सैकड़ों हजारों वर्ष तक चलता रहता है। ब्रजभाषा आज लिखित साहित्य के क्षेत्र में अपने उच्च आसन से उतार दी गई है पर इससे ब्रजभाषा के लोकसाहित्य के माधुर्य और महत्ता में कोई अन्तर नहीं आया। ब्रज की ही भांति भारतवर्ष की सभी भाषाओं में लोकगीत साहित्य प्रचुर मात्रा में बिखरा पड़ा है। उसके संकलन और प्रकाशन की दिशा में भी अब प्रयास होने लगे हैं। पर उसे तो जितना खोजा जायेगा उतने ही अधिक रत्न हाथ लगने की आशा सदा बनी रहेगी।

लोकगीत साहित्य के रचयिताओं या रचना काल के विषय में किसी को कुछ ज्ञात नहीं होता। वह स्वयं सिद्ध और वेदों की ऋचाओं के समान अपौरुषेय होता है। जन-जीवन से उसकी उत्पत्ति होती है और परम्परा उसका श्रृंगार करती है। इसलिए पं. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने उसे 'आर्येतर सभ्यता का वेद' और पंडित रामनरेश त्रिपाठी ने 'प्रकृति के उद्गार' कहा है। बच्चों का साहित्य भी लोकसाहित्य का एक प्रधान अंग होता है। और वह भी बाल समाज में उसी प्रकार प्रचलित रहता है जैसे बड़ों के समाज में बड़ों का लोक साहित्य। हिन्दी में लोक साहित्य के प्रमुख व्याख्याता श्री श्याम परमार ने लोक साहित्य को निम्नलिखित तालिका के अनुसार विभाजित किया है –



श्याम परमार के इस विभाजन से यह स्पष्ट है कि लोक साहित्य के अन्तर्गत बालक बालिकाओं के उपयोग में आने वाले सरल गीतों का एक अलग महत्वपूर्ण स्थान है। पर अभी तक बाल साहित्य की दृष्टि से हिन्दी ही नहीं बहुत कम भारतीय भाषाओं में लोक साहित्य का संचयन किया गया है। विद्वान विचारकों का ध्यान बड़ों के साहित्य की ओर तो गया पर बच्चे उनके प्यार से वंचित ही रहे हैं।

संस्कृत को छोड़ कर भारतीय भाषाओं के लिखित साहित्य के प्राचीन इतिहास पर यदि विचार किया जाये तो किसी में भी हम ऐसा कोई भी साहित्य नहीं पाते जो विशेष रूप से बच्चों के लिए लिखा गया हो। संस्कृत में पंचतन्त्र, कथासरित्सागर और हितोपदेश आदि कुछ ऐसी पुस्तकें हैं जिनकी कहानियां और उनके बीच-बीच में आये पद्य (श्लोक) किशोर राजकुमारों को शिक्षित बनाने के लिए लिखे गये थे। पर आधुनिक तमिल, तेलगु, मराठी, गुजराती, हिन्दी, बंगाली, आसामी, पंजाबी, उर्दू आदि भाषाओं में जो भी बालसाहित्य लिखा गया उसका इतिहास सौ-डेढ़ सौ वर्ष से अधिक पुराना नहीं है। तब क्या इससे पूर्व हमारे देश के बच्चों के लिए अलग कोई ऐसा साहित्य था ही नहीं जिससे बच्चे अपना मनोरंजन कर सकें? इस प्रश्न का उत्तर हम लोकसाहित्य के अध्ययन से ही ठीक-ठीक प्राप्त कर सकते हैं। किसी भी अपने को सभ्य कहने वाले मानव समाज में ऐसा कभी नहीं हो सकता कि बड़े तो अपने लिए साहित्य सृजन कर उससे निरन्तर मनोरंजन करते रहें और बच्चों के लिए कोई भी साहित्य रच कर न दें जो उनका मनोरंजन कर सके। महान साहित्यिकों का दम्भ उन्हें सदा बड़ों के लिए ही लिखने को विवश कर सकता है पर जनता के उन अनपढ़ सीधे-सादे मनुष्यों का मोह जो अपनी सरल भावनाओं को लोकसाहित्य के रूप में व्यक्त करके सुख प्राप्त कर लिया करते हैं, कभी अपने परिवार के बालकों की उपेक्षा नहीं कर सकता। इसलिये किसी भी भाषा में जहां हमें लोकसाहित्य देखने को मिलता है वहां कुछ न कुछ साहित्य बच्चों के लिए भी अवश्य ही रचा जाता रहा होगा। आवश्यकता इस बात की है कि उसका समुचित मूल्याँकन और संकलन किया जाये। ऐसा करने से न केवल इतिहास के वह पृष्ठ खुलकर हमारे सामने आयेंगे जो इससे पहिले पलट कर कभी नहीं देखे गये थे। बल्कि हमारे आधुनिक बालसाहित्य के विकास को भी एक ऐसी प्रेरणा और गति मिलेगी जो उसके लिए बहुत सहायक और उपयोगी सिद्ध होगी।

भारतीय बालोपयोगी लोकगीत साहित्य के अन्तर्गत लोरियां सभी भाषाओं में पाई जाती है। बंगाल के सुप्रसिद्ध कलाविद विचारक श्री अवनीन्द्र नाथ ठाकुर

ने लोरियों के विषय में कहा है- 'कोन कालेर आलोते प्रथम फुटले एर सुर उठ लो, एवं कोन घूमन्त छेलेर कान आर प्राणे गिये बाज लो ता जानवार कोनो उपाय नेई।' (किस समय के प्रकाश में यह सब बिखरी तसवीरों की सी लोरियाँ, यह सब छोटे-छोटे भावों की कलियाँ खिल उठी थीं, किसके कंठ से पहले पहल उनके स्वर निकले थे और किस निद्रित शिशु के कान और प्राण में गूंजे थे यह जानने का हमारे पास कोई उपाय नहीं है)। किसी विद्वान लेखक ने इसी सम्बन्ध में यह भी ठीक ही कहा है - 'लोरियों की परम्परा उतनी ही पुरातन है जितनी पुरातन स्वयं माँ है।'

लोरियाँ वह बालगीत कहलाते हैं जिन्हें मातायें अपने नन्हें मुन्नों को सुलाने या सोने से पहिले रोते समय चुपाने के लिए गाती हैं योरुपीय विचारक बालजक के शब्दों में - 'दुनिया का सबसे मीठा गीत लोरी है जिसे हम बचपन के प्रभात काल में अपनी माँ के सुख से सुनते हैं।' लोक साहित्य के प्रसिद्ध संकलनकर्त्ता श्री देवेन्द्र सत्यार्थी का कहना है- 'सभ्य असभ्य सभी जातियों की मातायें लोरियाँ गा गाकर आनन्द प्राप्त करती हैं। वे यह नहीं देखतीं कि उनकी आवाज सुरीली है या नहीं। उन्हें तो अपने शिशुओं को रिझाने से मतलब रहता है। झूला हिलाती हुई या शिशु की पीठ पर थपकियां देती हुई जब वे लोरियाँ गाती हैं तो उनकी सूखी तथा खुरदरी वाणी में भी अलौकिक मिठास आ जाती है।' लोरियाँ अधिकतर उन बच्चों को सुनाने के लिए गाई जाती हैं जो भाषा भी ठीक-ठीक नहीं समझ सकते। इसलिए उनमें शब्द और अर्थ के लालित्य की अपेक्षा स्वर लय का ही महत्त्व अधिक रहता है। फिर भी माँ की बच्चे के प्रति होने वाली ममता से प्रसूत होने के कारण उनके भावों में एक ऐसा लालित्य अपने आप आ जाता है जो यत्न से साज संवार कर लिखे गये बड़ों के काव्य साहित्य में प्रायः देखने को नहीं मिलता।

भारतवर्ष की सभी भाषाओं के लोकगीतों में लोरियां बहुतायत से उपलब्ध हैं। गुजराती में लोरियों को 'होलरडाँ' भी कहते हैं। गुजराती माँ अपने बच्चे को देवताओं का प्रसाद मानकर उसके अमर होकर जीने की कामना करती हुई महादेव को मनाती है -

तमे माराँ देवना दिधेल छो।
तमे माराँ मागीली धेल छो।।
आव्याँ त्योंर अम्मर रई ने थै।
मा देव जायो उतावली ते गई चढ़ावू झूल।
मा देव जी परसन छये आव्याँ तने अण मूल।।

तमे माराँ नगद नाणु छो।
तमे माराँ फूल बसाणु छो।।
आव्याँ त्योर अम्मर रई ने थै।।

(तू मेरे देवताओं का दिया हुआ धन है। तू मेरा उधार लिया हुआ धन है। जब तूने जनम ले लिया है, अमर होकर जीवन धारण कर। मैं दौड़ती हुई महादेव को फूल चढ़ाने गई। तू मेरा नकद धन है। तू मेरा सुगन्धित फूल है। जब तूने जनम ले लिया है, अमर होकर जीवन धारण कर।)

इसी प्रकार यह दूसरी गुजराती लोरी भी बहुत मधुर है –

नीदर डी तू आव जो आवे जो।
मीरा बच्चु सास लावे लावे जो।।
तू बदाम मिसरी लावे जो।
तू खोरवा टोपरू लावे जो।।

(आ हे नींद आ। हमारे बच्चे के लिए ला। तू बादाम, मिसरी ला। छुहारे ला।)

आंध्र प्रदेश में लोरी का पर्यायवाची शब्द 'जौल पाटा' है। शिशु चन्द्रमा को पकड़ना चाहता है इसी भाव को तेलुगु माँ लोरी में व्यक्त करती है –

चन्दा मामा रावे। जा बिल्ली रावे।
कण्डे कि रावे। कोटि फूलू तेवे।।
बेडि मीदा रावे। बन्ती पूलू तेवे।।

(हे चन्दा मामा आ। गाड़ी पर चढ़कर आ। फूल लेकर आ। पीले-पीले फूल देकर चला जा।)

उड़िया में लोरियों को 'बिल्ली खेला गीतों' कहते हैं। उड़िया माँ लोरी में चन्द्रमा से उपहास करती हुई कहती है –

जन्हां मामू रे जन्हां मामू,
मो कथा ही सुनो।
बिल-र माछ चील खाई गला,
खई ची खंडिये बुणो।।

(चन्दा मामा, ओ चन्दा मामा, मेरी बात सुनो। खेत की मछली को चील खा गईं तुम जाल तैयार करो।)

असमिया भाषा में लोरी का पर्यायवाची शब्द 'आई नाम' है। उसमें लोरियों का बहुत बड़ा भंडार है। एक असमी माँ कहती है –

बापा ए! न लावी राती।

बाट-ते जल दे खोटा बाती।।
छाती जलक वन्ती जलक,
पोहर न होये भाल।
बियार समय महला दीले,
पोहर हवे भाल।।

(हे शिशु रात के समय बाहर न जा, पथ में सोलह दीप जल रहे हैं। उनका प्रकाश अच्छा नहीं है। तेरे विवाह के समय मैं दीपक जलाऊंगी। उनका प्रकाश अच्छा होगा।)

एक पंजाबी मां कहती है -

खांडा खीर मिट्ठी ए।
बीर बहूटी डिट्ठी ए डिट्ठी ए।।
चौला नालों चिट्ठी ए चिट्ठी ए।
जलेबी नालों मिट्ठी ए मिट्ठी ए।।

(खांड मिली खीर मीठी है, मीठी है। भाई की बहू को मैंने देख लिया, देख लिया। वह चावलों से अधिक गोरी है, गोरी है। जलेबी से अधिक मीठी है, मीठी है।)

बंगाली माँ कहती है -

खोका आमार घूम ना जाय।
मिटिर मिटिर चक्खू चाय।।
घूमेर मासी के मेर पिसी।
घूम कि ले भालो बासी।।

(मेरा बच्चा सोता नहीं है। अधमिची आंखों से देख रहा है। नींद की मौसी, नींद की बुआ, उसे सुला दें तो मैं उनसे बहुत प्यार करूँ।)

एक मराठी माँ कहती है -

रडुन को रडुन को।
माझा वाला रडुन को।।
हसुन हसुन झोप।
गाउन गाउन झोप।।
झोप झोप माम्मा बाला।
झोप झोप मधु गोड वाला।।

(रो मत, रो मत, मेरे प्यारे शिशु रो मत। हँसते-हँसते सो जा, गाते-गाते सो जा। सो जा मेरे बच्चे सो जा, हे मेरे शहद के छत्ते के से बच्चे सो जा।)

एक तेलुगु माँ कहती है -

इन्‌ तन्ता दीपम्मु इलू लल्ला वेलगु।
ईश्वर ड़ी चन्द मामा जग मल्ला वेलगु।।
माड़न्ता दीपम्मु जग मल्ला वेलगु।
इन्‌ तन्ता मा अब्बाई मा कड़ला वेलगु।।

(छोटा-सा दीपक सारे घर को प्रकाशित कर देता है। चन्दा मामा सारे जगत को प्रकाशित कर देता है। छोटा-सा दीपक सारे राज महल को प्रकाशित कर देता है। छोटा-सा मेरा बच्चा मेरी आँखो को प्रकाशित कर देता है।)

काश्मीरी माँ कहती है -

वारे वारे चन्द्रे वारे,
वारे अज छुई मुबारिक।
बाजो बाजो बुर्रुछु ताजो,
रणु बुतताजो रोगन जोश।।

(आज सोमवार का दिन है। आज का दिन मुबारिक है। हे रसोई बनाने वालो! नई भट्टी बनाओ। और घी चढ़ाकर ताजा पुलाव तैयार करो।)

एक पठानी माँ कहती है -

मालियारा पूलार के गुलेना उगवला।
जमा तिफल पे मुसाफेर जी।।
राना केनवी मालियारा गुलेना उगलवां।
जमा तिफल पे मुसाफेर जी।।

(हे माली रास्ते में फूल बिछा दो, मेरा बच्चा आज से मुसाफिर बन रहा है। फूल ही फूल बिछाना काँटा एक भी न रहने देना। मेरा बच्चा आज से मुसाफिर बन रहा है।)

इस प्रकार पंजाबी, बंगाली, गुजराती, मराठी, असमिया, उड़िया, ब्रज, अवधी, भोजपुरी आदि सभी भाषाओं के लोक साहित्य में माँ की बच्चे के प्रति ममता, मधुर भावनाओं और कल्पनाओं से पूर्ण ऐसी लोरियाँ भरी पड़ी हैं जो बड़े-बड़े साहित्यकार और कवियों द्वारा यत्न करके नहीं लिखी जा सकतीं।

लोरियों के अतिरिक्त लोकगीतों में और भी बहुत से गीत ऐसे हैं जो श्रेष्ठ बालगीतों की श्रेणी में रक्खे जा सकते हैं। उनमें बच्चों की मनोभावनायें और कल्पनायें बड़े सुन्दर ढंग से व्यक्त हुई हैं। छोटे-छोटे बच्चे उन्हें अपने बड़ों या समवयस्क साथियों से सुनकर प्रायः गाते दुहराते पाये जाते हैं। इन गीतों में उनके मन की सारी बातें मौजूद रहती हैं। उनमें बहुत से प्रथाओं और परम्पराओं के गीत हैं जिन्हें

बच्चे किसी विशेष मौसम, उत्सव या त्योहार के अवसर पर गाते हैं। टेसू, झांझी, छल्ला, घड़ल्ला, छतोद या गोगों के गीत इसी प्रकार के है। उनमें लयबद्धता के साथ-साथ ऐसे अकल्पित संयोगों का वर्णन रहता है कि वह बच्चों को बहुत रुचिकर प्रतीत होते हैं। टेसू के गीत ब्रज में क्वांर की दशमी से शुरू होते हैं और पूर्णमासी तक गाये जाते हैं। बांस की खपच्चियों को बांध कर उस पर कागज पन्नी मढ़ कर और एक मिट्टी का चेहरा ऊपर रखकर टेसू बना लिया जाता है। एक हाथ में हुक्का और दूसरे में फूल होता है। और टोंड़ी पर जलता हुआ दिया रखने की जगह होती है। बच्चे उसी को हाथ में लिए मुहल्ले में घर-घर जाकर सामूहिक रूप से टेसू के गीतों को गाते फिरते हैं। ब्रज का एक प्रसिद्ध टेसू का गीत है -

इमली की जड़ में निकरी पतंग।
नौ सै मोती नौ सै रंग।।
एक रंग मैंने माँग लिया।
चढ़ घोड़े असवार किया।
किया है भाई किया है।
दिल्ली जाय पुकारा है।।
दिल्ली का है आला चोर।
मार सिकन्दर पहिली चोट।
चोट गई चूल्हे की ओट।
चूल्हो मांगै सौ सौ रोट।
एक रोट घटि गौ।
चूल्हा बेटा लटि गौ।
चूल्हे में मारौ ढक्का।
जाय परो कलकत्ता।।
फिरंगी मेरौ बच्चा।
मैं बाकौ चच्चा।
फिरंगी बैठो आँगन में।
दै सारे की टाँगन में।।

इस गीत में किसी युक्तिसंगत बात का आदि से अन्त तक निर्वाह नहीं किया गया है। कहीं-कहीं तो कोई दो पंक्तियाँ एक भाव को ढंग से व्यक्त करने वाली भी नहीं मिलतीं। ढक्का की तुक मिलाने के लिए अनावश्यक रूप से कलकत्ता को ला बैठाया गया और उसके आते ही वहां रहने बसने वाले फिरंगी की याद

हो आना स्वाभाविक है। फिरंगी हमारा शोषण करता है इसलिए उस पर क्रोध दिखाना भी आवश्यक हो गया इसीलिए टाँगों में मारने की बात कही गई है। इस प्रकार इसे हम राष्ट्रीय भावना का गीत भी कह सकते हैं। बच्चे किसी एक भाव या विचार पर बहुत अधिक देर तक अपने ध्यान को केन्द्रित नहीं कर सकते। इसलिए इन विचित्र कल्पनाओं में भी वह वैसा ही रस लेते हैं जैसा बड़े लोग बड़ी-बड़ी युक्तिसंगत बातों में लिया करते हैं। इस गीत में इमली की जड़ से पतंग निकलने की कल्पना अद्भुत है। और फिर वह पतंग भी साधारण नहीं उसमें एक दो चार नहीं नौ सौ मोतियों के जड़े होने की कल्पना की गई है। बड़ों को ऐसी असंगत कल्पनायें निरर्थक और बच्चों की रुचि को बिगाड़ने वाली भी लग सकती हैं। पर बच्चों को उनमें आनन्द ही नहीं आता उनसे ज्ञान भी प्राप्त होता है।

टेसू का एक और गीत है -

टेसूरा घंटार बजइयौ।
नौ नगरी नौ गाँव बसइयौ।
बसि गये तीतुर बसि गये मोर।
पकड़ चमरिया लै गये चोर।
चोरन के घर खेती।
खाय चमरिया मोटी।
मोटी है के गई बजार,
बजार से लाई धनियो।
पाछे परिगो बनियो।

इस गीत में टेसू के घंटा बजाने और नौ नगर और नौ ग्राम बस जाने की बातों का आपस में कोई तारतम्य नहीं है। और न उनमें तीतर और मोरों के बस जाने और चमरिया को चोरों द्वारा पकड़ कर लाने की बातों का कोई आपसी तारतम्य है। पर यदि कल्पना की जाये कि टेसू एक राजा थे और वह इतने प्रतापी और प्रभावशाली थे कि उनके घंटा बजा देने भर से नौ नगर और नौ ग्राम बस गये तो यह कल्पना की जा सकती है कि उनकी शोभा बढ़ाने के लिए उनमें तीतर और मोर भी रहने लगे। तीतर और मोर पालना गरीबों का नहीं धनवान आदमियों का ही शौक होता है। जब धनवान लोग होंगे तो चोर भी वहां आयेंगे ही। और वह किसी धनवान चमार की स्त्री को भी पकड़ कर ले ही जा सकते हैं। बड़ों की कल्पना में यह सब बातें इतनी कम पंक्तियों में नहीं आ सकतीं। वह उन्हें कविता में लिखते समय उनके भावों की तारतम्यता पर ध्यान रक्खेंगे। पर बच्चों

की कल्पना की गति बहुत तीव्र होती है इसलिए उनके किसी गीत की रचना में यदि इतनी सारी बातें एक साथ आ जायें तो कोई आश्चर्य नहीं।

टेसू का एक और लोकप्रिय गीत है जो ब्रज में गाया जाता है –

पातरिया री पातरिया तेरी पतरी कमान।
तीर में झटोका मारौ दिल्ली आसमान।।
दिल्ली ते तौ गाय आई, भैंस आई, भैंसा चौं नहीं आया है।
आधी रात नगाड़ौ बाजौ भैसा रेंकतु आया है।
जंगी मोर में सांटा मारा, ताल-सा भिन्नाया है।।
ताल गई रेत में, बन्दूक मारी पेट में।।

टेसू के गीत जिस प्रकार बालकों में प्रचलित हैं उसी प्रकार झांझी के गीत ब्रज की बालिकाओं में प्रचलित हैं। बालिकायें मिट्टी के एक बरतन में बहुत से छेद कर लेती हैं। उनमें एक दीपक जलाकर रख लेती हैं। इसी को झांझी कहते हैं। झांझी को लिए हुए बालिकायें सामूहिक रूप से गीत गाती फिरती हैं। ब्रज में इन गीतों का बहुत प्रचार है। हम यहां कुछ झांझी के गीत प्रस्तुत करते हैं –

(1)

झांझी आई, झांझी आई, आंगन बुहारौ जी।
आंगन बुहारत द्वै मोतीरा पाये जी।

. . . .

तखरी को पौधा मेरो मामा कहिये।
भ्हौं मट कनियाँ माई जी।
कारे कारे देवर कहिए कंजरिया दौरानी जी।
सोने की लठिया भैया कहिए कमल फूल भौजाई जी।।

(2)

'मां, भाभी कौ मुहड़ो कैसो?'
'नाक चना-सी, मूँह बटुआ-सो, घूंघट में मन लाई।
थोरौ खानी, बहुत कमानी, जे जुग जीनी आई।।'
'माँ, रोटी कितनी खावै, पारेवरिया?'
'माँ, चट्टी की चट्टी उड़ावै, पारेवरिया।।'

(3)

फूहर पीसैं पीसनौ मेरी रावरिया।
जैसे गिरियारे को रेत भली मेरी रावरिया।।

....

फूहर मांड़ै मांड़नी मेरी रावरिया।
जैसे भादौं की कीच भली मेरी रावरिया।

(4)

बाबा जी के चेली चेला भिच्छा मांगन आये जी।
भरि चुटकी मैंने भिच्छा डारी, चूंदरिया रंग लाये जी।।
चूंदरिया की डरकन मुरकन द्वै मोती मोय पाये जी।
वे मोती मैंने सासुए दिखाये जी।।
सासु निपूती ने धरि पत्थर पै फोरे जी।।

(5)

चाकी तर मैंने धनियो बोयो। हाँ सहेली धनियो बोयो।।
धनिये ने जब कुल्ला फोरे। हाँ सहेली कुल्ला फोरे।।
कुल्ला ते मैंने गऊ चराई। हाँ सहेली गऊ चराई।
गऊअन ने मोई दुधवा दीनो। हाँ सहेली दुधवा दीनो।।
दुधवा की मैंने खीर पकाई। हाँ सहेली बिरन जिमाई।।

इन झांझी के गीतों में भावों का तारतम्य टेसू के गीतों की अपेक्षा कुछ अधिक युक्तिसंगत रूप में मिलता है। बालिकायें कितनी ही चंचल क्यों न हों साधारणतया उनकी कल्पना उतनी उच्छृंखल नहीं होती जितनी नटखट बालकों की। बालिकाओं की दृष्टि भी सीमित होती है। इसलिए झाँझी के गीतों में अधिकतर घरेलू कामकाज और सगे सम्बन्धियों की बातों का ही उल्लेख रहता है। ब्रज में बाल विवाह की प्रथा भारत के अन्य अनेक भू-भागों की तरह अत्यन्त प्राचीन काल से चली आई है। कम आयु की विवाहित बालिकायें भी झांझी के गीतों से उसी प्रकार मनोरंजन करती हैं जैसे अविवाहित बालिकायें। उपर्युक्त पहिले और चौथे गीत उसी के भाव हैं। पहिले गीत में विवाहित बालिका अपने भैया को सोने की लाठी की तरह सुन्दर और भाभी को कमल के फूल की तरह सुन्दर बताने के लिए परिवार के सभी लोगों का वर्णन करते हुए देवर को काला और देवरानी को कंजरिया तक कह देती है। चौथे गीत में वह सास के ऊपर तीखा व्यंग बड़े स्वाभाविक ढंग से करती है। भिखारी को चुटकी भर भीख देने से जो दो मोती उसने चुँदरिया में पाये थे वह जब उसने ले जाकर अपनी सास को दिखाये तो वह जल-भुन कर राख हो गई। और उनको पत्थर पर रखकर फोड़ दिया। विवाहित जीवन में व्यंग-विनोद के यह गीत आज के सामाजिक जीवन में बालक बालिकाओं के लिए सर्वथा अनुपयुक्त हैं।

बाल विवाह की प्रथा अब हमारे समाज से उठ गई है। इसलिए झांझी के गीत मनोरंजक होते हुए भी बालगीतों की तरह उपयोगी नहीं हो सकते। उनमें से कुछ ऐसे भी हैं जिनका वैवाहिक जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं। उनमें परिवारिक जीवन के मनोविनोद के चित्र हैं। उन्हें बालिकाओं के लिए उपयुक्त बालगीतों के रूप में अपनाया जा सकता है।

टेसू और झांझी के इन गीतों के अतिरिक्त चट्टा के गीत भी बच्चों में प्रचलित हैं। भादों की शुक्ल पक्ष की चौथ या द्वादशी को चट्टे निकलते हैं। अलीगढ़ जिले के कुछ गाँव जो ब्रज के अन्तर्गत हैं उनमें 'इन्द्र द्वादशी' के नाम से एक उत्सव मनाया जाता है। चट्टा का सम्बन्ध चटशाला से है। उस दिन पाटशाला के सारे बच्चे अच्छे-अच्छे कपड़े पहनकर अध्यापक के साथ हर बच्चे के घर जाते हैं। माता-पिता अध्यापक को दक्षिणा देते हैं और बच्चों को बताशे बांटते हैं। यह गीत वास्तव में ऐसे हैं जिनमें बच्चों के मन की अपनी ही भावनायें व्यक्त मिलती हैं। उन्हें श्रेष्ट बालगीतों की श्रेणी में लिया जा सकता है। ब्रज का एक चट्टा गीत है –

उठ उठ री गोविंद की माँ।
भीतर से तू बाहिर आ।।
गढ़े गढ़ाये रुपया ला।
पण्डिज्जी कूँ बागौ ला।।
मिसरानी कूँ तीहर ला।।
चट्टनु कूँ बतासे ला।।
चट्टा दिंगे भौति असीस।
बेटा हुंगे नौ से तीस।।
इन बेटनु की भई सगाई।
इनकी नाचैं चाची ताई।
नाँचि नूंचि के लै बलैया।
देरि होति है लाओ रुपैया।।

इस गीत का भाव कुछ उसी प्रकार का है जैसा 'हर गंगा' गाने वालों के गीतों में होता है। (बहुत रोज बीते जिजमान। अब तौ करौ दच्छिना दान)। पर हरगंगा और चट्टा के गीतों का मूल भावनाओं में बहुत अन्तर होता है। हरगंगा का उद्देश्य पैसे मांगना होता है चट्टा के गीतों का उद्देश्य केवल मनोरंजन होता है।

ब्रज में गाया जाने वाला एक और चट्टे का गीत है –

एक नाऊ की नाहन खोटी।
एक चना मैं सोलह रोटी।।
नाऊ गया गूलर खान।
पकरि लिये चींटी ने कान।।
छोड़ि-छोड़ि मेरे जिजमान।
अब ना आऊँ गूलर खान।।

सब जानते हैं कि एक चने से सोलह रोटी नहीं बन सकतीं। पर बच्चे हंसी-हंसी में ऐसी कल्पना करके भी प्रसन्न हो सकते हैं। स्कूलों के बच्चे प्रायः आम, अमरूद या जामुन के पेड़ों पर चढ़कर फल खाने का प्रयत्न किया करते हैं। इसलिए वह यह कल्पना भी आसानी से कर सकते हैं कि नाई गूलर खाने के लिए पेड़ पर चढ़ गया। साथ ही वह कल्पना करने में उन्हें बहुत आनन्द आता है कि पेड़ पर चढ़कर भी उसे गूलर खाने को नहीं मिले। इस भाव को उन्होंने 'चींटी ने कान पकड़ लिए' कहकर बहुत रोचक ढंग से व्यक्त किया है। गूलर के पेड़ पर चींटियाँ बहुत होती हैं। और वह जब किसी के चिपट जाती हैं तो काटती भी जोर से हैं। दूसरे जब बच्चे कोई शरारत करते हैं तो उनके कान भी पकड़े जाते हैं। इसलिए बच्चों की यह कल्पना बहुत स्वाभाविक है कि चींटी ने नाई के कान पकड़ लिए। कान पकड़ लिए जाने के बाद जैसे बच्चे उस काम को करना छोड़ देते हैं जिसके कारण कान पकड़े गये थे वैसे ही नाई भी प्रतिज्ञा कर लेता है कि अब गूलर खाने नहीं जायेगा। चट्टा के इस गीत की तुलना किसी भी श्रेष्ठ बालगीत से की जा सकती है।

इसी प्रकार यह चट्टा का गीत भी किसी श्रेष्ठ बालगीत के समकक्ष रक्खा जा सकता है -

एक चूही न मन में डरी।
उछरि सेठ की धोती परी।।
चूँ चूँ चूँ चूँ धोती करै।
बनिया धोती पकरे फिरै।।
जब बनिये ने दई दुहाई।
धर तें दौड़ बनेनी आई।।
हुआ सोर कोलाहल भारी।
भीर भई बनियन की सारी।।

कोई ले पक्की पंसेरी।।
कोई देवता सुमिरन लागे।

....

सबने मिल पंचायत कीनी।
बार फेर चूही कूं दीनी।।
आ चूही तू बाहर आ।
घी शक्कर का भोग लगा।।
जब चूही ने दाँत दिखाये।
सात पाँच बनिया लुढ़िकाये।।
जब चूही ने दयो झटोका।
खुल गई धोतीं चले पिटोका।।
कूद फाँद बिल मैं गई चूही।
कहन लगे अब हारी तू ही।।

पर चट्टा के सभी बालगीत ऐसे ही मनोरंजक और बालोपयोगी नहीं हैं। उनमें कुछ ऐसे भी हैं जिनका बच्चों से कोई सम्बन्ध नहीं है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित बालगीत में बांझ स्त्रियों को यह सीख दी गई है कि वह अपने दुख के निवारणार्थ गनपति की पूजा करें। इसे बालगीतों की श्रेणी में नहीं लिया जा सकता -

बड़ भागिन जो होवै नारि।
चट्टा आये ताके द्वार।।
हंसि मुस्काई सबन तें बोलै।
रहसी फूली आँगन डोलै।।
हमरे धन्य भाग त्रिपुरारी।
पूरन आसा भई हमारी।।
ऐसे चट्टा नित नित आयें।
मनहमारे की कली खिलायें।।
सेवा सब की करूँ बनाइ।
चिर जीवौ सबके लरिकाइ।।
मन विचार हिय में अस बोलै।
पुत्र खुसी में सब तिय डोलै।।

ताकी गति प्रभु जाने सोय।।
सो तिय गनपति पूजन करै।
ताके सब दुख गनपति हरै।।

विशेष उत्सवों पर गाये जाने वाले इन गीतों के अतिरिक्त लोकगीतों में बहुत से गीत ऐसे हैं जो लोक जीवन से सम्बन्धित हैं। बच्चे जिस वातावरण में रहते हैं उसकी भी कुछ न कुछ प्रतिक्रियायें उनके मन पर होती हैं। ब्रज में बनिया सदा से किसानों का शोषक रहा है। वह एक के बजाय दस पैसे सूद लेकर ऋणग्रस्त किसानों का शोषण करता है। अपने बड़ों के इस दुख को देखकर बच्चों के मन में बनिये के प्रति घृणा के भाव उठना स्वाभाविक है। ब्रज के कई बालगीतों में यह भाव व्यक्त हुए हैं। उनकी कुछ पंक्तियां यह हैं -

बरसौ राम बचै दुनिया।
खाय किसान मरै बनिया।।

....

मंगल बारी पैर दिवारी।
खाय किसान मरै व्यापारी।।

....

बनिया बनैटा, गुर मैं चैंटा।
गुर न होय तौ मेरोई बेटा।।

लोकगीतों की ऐसी पंक्तियों को भी बच्चे गली-गली दुहराते फिरते हैं। और उनसे भी बच्चों का मनोरंजन होता है। शिक्षा की दृष्टि से ऐसे गीतों को बच्चों के लिए श्रेयस्कर नहीं कहा जा सकता। पर अपने रोष को इस प्रकार व्यक्त करके उनकी भावनाओं का परिष्कार अवश्य हो जाता होगा।

पारिवारिक जीवन की बहुत सी आशा निराशायें आकाँक्षायें और आमोद प्रमोद की बातें भी बालोपयोगी लोकगीतों में बड़े सुन्दर ढंग से व्यक्त मिलती हैं। निम्नलिखित भोजपुरी लोकगीत इसका उदाहरण है -

चाँद मामू चांद मामू हंसुआ दे, काहे ला?
खरिया कटावेला से खरिया काहे ला,
अंगना छवावेला से अंगना काहे ला?
गेहुंआ सुखावेला से गेहुंआ काहे ला,
पूड़िया पकावेला से पूड़िया काहे ला?
भौजी के खियावेला से भौजी काहे ला?

बेटवा जनमावे ला, से बेटवा काहे ला?
गुल्ली डंडा टूट गेल, बऊआ रूस गेल।

चांदनी रात में बच्चे आंगन में बैठकर इस गीत की पंक्तियों को झूम-झूम कर गाते हैं। वह चांद से हंसिया मांगते हुए इशारा भी करते जातें हैं। इस गीत में खरिया कटाने, छप्पर छवाने, गेहूँ सुखाने, पूरी पकवाने, भौजी को खिलाने तथा पुत्र पैदा होने की पूरी कथा कहकर खेत से लेकर परिवार बसाने तक की कल्पना की गई है। प्रश्नोत्तर शैली में होने के कारण इसकी रोचकता और भी बढ़ गई है।

इसी प्रकार पारिवारिक जीवन में आमोद-प्रमोद के विषय पर ब्रज में भी अनेक लोकगीत बच्चों में प्रचलित हैं। बच्चों के सारे सम्बन्धियों में मौसी ही ऐसी होती है जिसके सामने वह सबसे अधिक खुलकर बात करते हैं। वह मौसी को अपनी माँ की ही तरह प्यार करते हैं। रोब के कारण मां के सामने उन्हें कुछ संकोच भी हो सकता है पर मौसी यदि उन्हें प्यार करती है तो वह उसके सामने सारी बातें खुलकर कह-सुन सकते हैं। मौसी को वह अपना मित्र भी समझ लेते हैं इसलिए उससे व्यंग्य विनोद की बातें करने में भी नहीं चूकते। बिल्ली को मौसी भी किसी ऐसे ही विनोद के समय में कहा गया होगा। मौसी से सम्बन्धित ब्रज का एक लोकगीत है –

मौसी मौसी, कुत्तन खौंसी,
आये मौसा दै गये लात।
बताये दे मौसी परू की बात।।
बात गई कूआ मैं।
मौसी जुरि गई जूआ मैं।।

बच्चे जब इसे परिवार में गा-गाकर सुनाते होंगे तो सबको कितना आनन्द आता होगा और मौसी बेचारी को कैसा लगता होगा।

सामाजिक और पारिवारिक वातावरण के अतिरिक्त प्राकृतिक दृश्य और ऋतुओं का प्रभाव भी बच्चों के कोमल मन पर बहुत पड़ता है। बहुत से बालोपयोगी लोकगीत उनकी प्रेरणा से लिखे हुए मिलते हैं। आकाश में जब जोर की आंधी आती है, सब कुछ तेज हवा में उड़ा जाता-सा दिखाई देता है तब ब्रज में बच्चों की टोली उस आंधी में बाहर निकल पड़ती है और निम्नलिखित गीत की पंक्तियां जोर-जोर से गाकर उस चढ़ी आँधी को उतार फेंकती है –

आंधी आई मेउ आयो।
बड़ी बऊ को जेठु आयो।।

चब्बे कुं चबेना लायो।
मारिबे कुं पैना लायो।।

इसी प्रकार जब कठिन शीतकाल में सवेरे के समय लोग यह इच्छा करते हैं कि धूप निकले तो ब्रज के बच्चे निम्नलिखित पंक्तियाँ जोर-जोर से गाकर धूप को खींच कर बाहर निकाल ही लेते हैं –

सूज्ज सूज्ज धाम निकारौ।
अपनी डुकरिया जाड़े मारौ।।

शरत काल में सूरज की तरह ही बच्चों को चन्द्रमा बहुत प्यारा होता है। संसार की प्रत्येक भाषा में चन्द्रमा से प्रेरित होकर लिखे गए बालगीत मिलते हैं। लोकगीतों में भी बहुत सों में चन्द्रमा और चाँदनी का वर्णन है। उनमें बच्चों और चन्द्रमा को लेकर भांति-भांति की कल्पनायें भी की गई हैं। निम्नलिखित भोजपुरी लोकगीत की कल्पना बड़ी स्वभावोचित और मधुर है –

चाँद मामू ओर आव बोर आव।
नदिया किनारे आव।।
सोना के कटोरिया में,
दूध भात ले ले आव।
बऊआ के मुँह में घुटुक।।

बच्चे इस गीत को बहुत प्रसन्न होकर गाते हैं। खड़ी बोली हिन्दी में एक बिल्कुल ऐसा ही बालगीत पं. अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध का लिखा हुआ मिलता है। उसकी कुछ पंक्तियां हैं –

चन्दा मामा दौड़े आओ।
दूध कटोरा भरकर लाओ।।
उसे प्यार से मुझे पिलाओ।
मुझपर छिड़क चाँदनी जाओ।

....

....

तू है मेरा चन्द खिलौना।
मैं हूं तेरा छुन्ना मुन्ना।।

लोकगीतों में जितने बालगीत बच्चों के खेल-कूद या पाठशाला से सम्बन्धित मिलते हैं उतने अन्य किसी विषय पर नहीं। इसी से यह समझा जा सकता

है कि समय-समय पर अनेक बच्चों के प्रयास से उन्हें वह रूप प्राप्त हो गया हो। बहुत से बच्चों को पाठशाला अपने घर से भी अधिक अच्छी मालूम होती है। वहां उन्हें साथ खेलने और मनमानी बातें करने के लिए बहुत से समवयस्क साथी मिलते हैं। मुहल्ले के बच्चों से भी उनका वैसा ही अपनापन होता है। इसलिए खेल-कूद और पाठशाला के गीतों में बच्चों के मनोभाव बहुत खुलकर व्यक्त होते हैं। और इस दृष्टि से उन्हें ही बच्चों के सबसे प्रिय बालगीत कहा जा सकता है। ब्रज के बालकों में निम्नलिखत बालोपयोगी लोकगीत बहुत प्रचलित रहा है। बच्चे इसे पाठशाला में पट्टियां (तख्तियां) सुखाते हुए जोर-जोर से चिल्लाकर गाते हैं –

सूखसूख पट्टी चन्दन गट्टी,
राजा आयौ महल चुनायौ।
महल के ऊपर झंडा गाड़ो,
झंडा गयो टूट, पट्टी गई सूख।।

बच्चों के मन में जब आपस में मिलकर खेलने की उमंग उठती है तो वह उसे किस प्रकार व्यक्त करते हैं यह एक लोकगीत की इन पंक्तियों में देखने योग्य है –

चलौ बालिकौ खोलेंगे,
कूआ मैं ढकेलेंगे।
गुड़ की भेली फोरेंगे।।

इन तीनों पंक्तियों के भावों में कोई पारस्परिक तारतम्य नहीं है। केवल यह भाव प्रकट होता है कि वह कुछ करना चाहते हैं। इसी प्रकार कबड्डी खेलते समय गाये जाने वाले एक लोकगीत की पंक्ति है-'अंगाछै-अंगाछै पानी में बबूला है।' इसका भाव भी सर्वथा अस्पष्ट है। एक दूसरे खेल के लोकगीत पंक्तियां हैं –

झूंझुना झौराती पाती।
मारूं लात झुकाय दऊं हाथी।।

इसमें लात मार कर हाथी को झुका देने की जो कल्पना की गई है वह बच्चे ही कर सकते हैं।

ब्रज के बालक-बालिकाओं का एक प्यारा लोकगीत 'अटकन बटकन' है। इसे बहुत बच्चे मिल बैठकर गाते हैं। सब बच्चे एक घेरे में अपने-अपने हाथ पोरों के बल जमीन पर रखकर बैठ जाते हैं। और एक बच्चा बारी-बारी से अपनी एक उंगली सबके हाथों पर छुआता हुआ यह गीत गाता है। छोटे बालक बालिकायें इस गाने में सम्मिलित होते हैं –

अटकन बटकन दही चटाके,
मन फूले बंगाले।
तुरई को मास मकोई का डंका।।
....
....
मामा लाये सात कटोरी,
एक कटोरी फूटी।
मामा की बऊ रूठी।
काहे बात पै रूठी।।
दही दूध भौतेरो।
खायबे कूं मुंह टेढ़ौ।।

इसी प्रकार एक भोजपुरी गीत भी बच्चों में बहुत लोकप्रिय है। इसे बच्चे चौथ चन्दे में गाते हैं। एक लड़के की आंखे बन्द कर दी जाती हैं। उसके मां बाप सामने खड़े होते हैं। सब बच्चे गीत गाते हैं और गीत समाप्त होने पर माता-पिता खुश होकर उन्हें ईनाम देकर अपने बच्चे की पट्टी खुलवा देते हैं -

अंखियां लाल हो लौ रे बउआ।
कोठी पर के ढेबुआ उतार लाव बबुआ।।
अपना माई के चोरिका उखाड़ लाव बबुआ।
माई तोरी बहुत कठोर बाड़ी बबुआ।।
तोरा दादी के दया न लागे हो बबुआ।
काहे अतना देरी लगावल हो बबुआ।।
खड़े खड़े पइयां पिराय हो बबुआ।
कई जगह घूमे के बाटे हो बबुआ।।
दोनों आंख के अच्छे हो बबुआ।
बुद्धिमान खूब होक हो बबुआ।।

लोकगीतों में बच्चों के इन खेल-कूद के गीतों में कुछ गीत ऐसे हैं जिन्हें बच्चे केवल आपस में एक दूसरे के सामने गाते हैं -

'बुआ पै चक्कू' 'मै तेरौ कक्कू।'
'बुआ पै चटनी' 'तेरी मां नटनी।।'
या
पट्टी पे पट्टी पट्टी पे नोंनु।

पंडिज्जी मरि गै पढ़ावैगौ कौनु?

या

'राम-राम' 'तुम्हरी बऊ हमारे गाम।'

इस प्रकार के गीत शिक्षा की दृष्टि से अनुपयोगी होते हैं। पर बच्चों का मनोरंजन करने के कारण बच्चों में प्रचलित बहुत जल्दी हो जाते हैं।

बच्चों को खेल खिलाकर प्रसन्न करने वाला एक अवधी लोकगीत भी अवध में बहुत प्रचलित रहा है। कोई वयस्क घर में या बाहर किसी खाट पर चित लेटकर दोनों घुटनों को बराबर मोड़ लेता है। और टाँगों पर छोटे बच्चे को बैठाकर उसे झुलाते हुए इस गीत को गाता है -

खान्ता मन्ता लेई थौ,
एक कौड़िया पाई थौ।
गंगा में बहाई थौ।।
गंगा माई बालू दिहिन,
ऊ बालू हम भुजवाक दीन।
भुजवा हम्मैं लाई दिहेस,
ऊ लाई घस यरवै दीन।
घसि यरवा हम्मैं घास दिहेस,
ऊ घसिया हम गैया दीन।
गैया हम्मैं दूध दिहिसि,
वहि दुधवा का खीर पकायऊँ।
खिरिया गै जुड़ाइ,
भैया गै कोहाँइ।
बहिनी गै मनावै,
चला भइया खाय ला,
भैया मारेन दुइ लात।

गीत के अन्त में खिलाने वाला 'पु लु लु लु लु' कहकर टाँगों को ऊपर उठाकर बालक को अपने ऊपर गिराता है और उसका मुँह चूम लेता है। बड़े और बच्चे दोनों को एक साथ इस खेल में बहुत आनन्द आता है और यह गीत उस आनन्द को सौ गुना कर देता है।

लोकगीतों में बालगीतों के इस प्रसंग को उन पहेलियों, ढकोसलों, कहावतों और मुकरियों के विषय में विचार किये बिना समाप्त नहीं किया जा सकता जो

प्राचीन काल से बड़ों की तरह बाल समाज में प्रचलित रहकर बच्चों का मनोरंजन और ज्ञानवर्द्धन करती आई हैं। उनमें भावों का ऐसा चमत्कार देखने को मिलता है कि बच्चे उन्हें सुनकर एकाएक खिल उठते हैं और तुरन्त याद कर लेते हैं। इनमें से पहेलियाँ बच्चों में सबसे अधिक प्रचलित हैं। यहाँ हम कुछ ऐसी पहेलियाँ प्रस्तुत करते हैं जो प्राचीन काल से बाल समाज में प्रचलित चली आई हैं -

सरर सरर सतरी सरकाने वाला कौन?
सीता चली सासरे, मनाने वाला कौन?

इस पहेली का उत्तर है 'नदी'। अनुप्रास का सहारा और सीता का रूप देकर इसे कितना सुन्दर बना दिया है। इसी प्रकार की और भी कुछ पहेलियाँ हैं -

आस कस बार कस खदर को खूठो।
गाय छ मारकणी दूध छ मिठो।।

(शहद का छत्ता)

दिल्ली ढूंढ़ा मेरठ ढूंढ़ा और ढूंढ़ा कलकत्ता।
एक अचम्भा ऐसा देखा फल के ऊपर पत्ता।।

(मक्का)

कटोरे पै कटोरा।
बेटा बाप से भी गोरा।।

(नारियल)।

एक खेत में ऐसा हुआ।
आधा बगला आधा सुआ।

(मूली)

संध्या को पैदा हुई आधी रात जवान
बड़े सबेरे मर गई घर हो गया मसान।।

(ओस)

यह पहेलियाँ प्रायः दो-दो पंक्तियों की होती हैं। पर उनमें से कुछ ऐसी भी हैं जो विस्तार से कही जाने के कारण बालगीत का सा आनन्द देती हैं -

पक गिरा पट। दो दौड़े झट।
पाँच ने उठाया। बत्तिस ने खाया।।
एक को भाया। चूस कर बहाया।।
एक भर पाया। तो बैठ के गाया।।

(आम)

तीन अक्षर का नाम हमारा।
रहूं गांव में सबसे न्यारा।।
पहला अक्षर जभी हटाओ।
ब्राह्मण के हाथों में पाओ।।
तिसरा अक्षर जभी हटाओ।
हलवाई के घर में पाओ।।
दुसरा अक्षर जभी हटाओ।
साहब का बैरा बन जाओ।।

(मैदान)

पैर नहीं पर चलती है।
नाप नाप कर चलती है।।
कभी न राह बदलती है।
कभी न घर से टलती है।।
दिन की उमर बिताती है।।
दिन को खाती जाती है।।
समय काटती चलती है।
काम बांटती चलती है।।
चेत कराती चलती है।
कभी न कहीं मचलती है।।

(घड़ी)

जब से जनमे जब तक मरे।
सब के सिर पर आसन करे।।
चाहे दिन हो चाहे रात।
गरमी जाड़ा या बरसात।।
ओला गिरे कि आंधी चले।
कभी न उतरे सिर के तले।।
लम्बा लम्बा होता चले।
रहे जागता सोता चले।।
लोहे से जब चांदी बने।।
तब फिर दाम न कोई गने।
जब से जनमे जब तक मरे।

सबके सिर पर आसन करे।।

(बाल)

पहेलियों में बहुत-सी ऐसी हैं जिनके द्वारा ज्ञान विज्ञान की बातें बड़े सुन्दर ढंग से बच्चों को बता दी गई हैं। कुछ पहेलियाँ गणित सम्बन्धी भी हैं। जिन्हें सुनकर बच्चों को कुछ सोचना पड़ जाता है पर उनकी गणित सम्बन्धी बुद्धि प्रखर अवश्य होती है। जैसे एक पहेली है –

लाख टका की सेर भर,
पैसे की कितनी?

या एक दूसरी पहेली है –

तीतर के आगे दो तीतर।
तीतर के दो पीछे तीतर।।
आगे तीतर पीछे तीतर।
तो बतलाओ कितने तीतर।

इसे सुनकर साधारणतया प्रत्येक बच्चा सब तीतरों की संख्या जोड़ने में लग जायेगा। पर कुशाग्रबुद्धि बालक तुरन्त उत्तर देगा 'तीन तीतर'।

पहेलियों, मुकरियों, कहावतों, ढकोसलों में से बहुतों में रोगों की दवायें, ऋतुओं में उपयोग की वस्तुयें, पशु-पक्षियों की विशेषतायें और ज्योतिष सम्बन्धी बातें भी बताई गई हैं। उनमें से कुछ ऐसी भी हैं जिनके रचयिताओं के विषय में हमें थोड़ा बहुत इतिहास से ज्ञात हो सकता है। उनमें अमीर खुसरो सबसे अधिक प्रसिद्ध हुए थे। उनके अतिरिक्त खवासी खेरा के घासीराम, विगह पुर के पंडित, बासू की खगीनिया, घाघ, भड्डरी और लाल बुझक्कड़ के नाम भी ज्ञात हो सके हैं।

लोकगीतों में और भी बहुत सी ऐसी कवितायें हैं जिनसे बच्चों का पर्याप्त मनोरंजन होता रहा हैं। बच्चों को उनसे सोचने, समझने और कल्पना करने के लिए पर्याप्त सामग्री मिल सकती है। हम उन्हें मुकरियाँ, पहेलियाँ या गीतों की श्रेणी में नहीं रख सकते पर वह उन्हीं की तरह रोचक मालूम होती हैं। उन्हीं में से एक है –

सत्तूं मन मत्तू जब घोरे तब खाये
धान विचारा भल्ला कूटा खाया चल्ला।

सब जानते हैं कि धान यदि किसी के पास हो तो वह उन्हें खाकर अपना पेट नहीं भर सकता। उन्हें कूट छानकर साफ करना और पका भून कर खाना होता है। उन्हीं धानों से बने हुए सत्तू यदि पास हों तो उन्हें पानी में घोलकर तुरन्त

खाया जा सकता है। पर कुशल जनकवि ने बात कहने के विचित्र ढंग मात्र से इन पंक्तियों में वह चमत्कार उत्पन्न किया है कि लगता है सत्तू खाने में बहुत देर लगती है और धान को तुरन्त खाकर चल दिया जा सकता है।

लोकगीत साहित्य पर विचार करने से ज्ञात होता है कि बाल साहित्य का बहुत बड़ा भण्डार उसमें भरा पड़ा है। उसका समुचित चयन और मूल्यांकन अभी तक नहीं हो पाया है। बड़ों ने बड़ों के उपयोग में आने वाले लोकगीतों के तो बड़े बड़े संकलन किये हैं और उनपर बहुत कुछ लिखा है। पर बालोपयोगी लोकगीतों पर कुछ लिखा ही नहीं गया। उन लोकगीतों में नया बाल साहित्य लिखने की प्रेरणा देने के लिए अमूल्य खजाना छिपा है। सारे हिन्दी भाषी क्षेत्रों में घूम-घूमकर यदि उन बालोपयोगी लोकगीतों को एकत्र किया जाये तो वह किसी विश्वविद्यालय से शोध कार्य के लिए अच्छा विषय बन सकते हैं और इस युग में उपेक्षित बालगीत साहित्य की परम्परा को प्राचीन इतिहास से जोड़ा जा सकता है।

13 : हिन्दी और अंग्रेजी बालगीत

बालगीत किसी जीवन दर्शन की प्रेरणा से या किसी विशेष प्रकार की विचार धारा में बहकर नहीं लिखे जाते। जिन बच्चों की भावनायें उनमें व्यक्त होती हैं, जिनके मन को छूकर वह प्रभावित करते हैं या जिनका उनसे मनोरंजन होता है वह सारे संसार में एक से होते हैं। मनुष्य की जन्मजात प्रवृत्तियां सब बच्चों में एक समान पाई जाती हैं। आकाश में सूर्य, चांद या तारों को देखकर जैसा कौतूहल, जिज्ञासा चीन के बच्चों को होती है वैसी ही जापान, जर्मनी, इंगलैंड, भारत या फाकलैंड के बच्चों को। मिश्र देश में अब से चार हजार वर्ष पहले जीवन में पहली बार उदय होते हुए सूर्य को देखकर बालक इखनातन को जैसी प्रसन्नता हुई थी वैसी ही आज भी संसार का प्रत्येक बालक अनुभव करता है। इस दृष्टि से अच्छे बालगीत, वह संसार की किसी भी भाषा में लिखे जायें देश कालातीत होते हैं। भाषा का बंधन न हो तो अंग्रेजी के 'बाबा ब्लैक शीप', 'जैक एण्ड जिल वेन्ट अप ए हिल', 'पूसी कैट! पूसी कैट' आदि बालगीत जैसे भारतीय बच्चों का मनोरंजन करते हैं वैसे ही हिन्दी के 'अगर मगर', 'लाल टमाटर! लाल टमाटर' आदि बालगीत इंग्लैंड या किसी भी दूसरे देश के बच्चों का मनोरंजन कर सकते हैं।

जिज्ञासा और अधिकाधिक स्वतंत्रता प्राप्त करते हुए विकसित होने की प्रवृत्ति संसार के सब बच्चों में समान रूप से एक सी पाई जाती है। पर वह प्राकृतिक परिस्थितियां और सामाजिक परिवेश जिनमें बच्चों का मानसिक और शारीरिक विकास होता है प्रत्येक देश के अपने अलग अलग होते हैं। और कभी-कभी तो एक ही देश के दो विभिन्न भू-भागों की परिस्थितियों और परिवेशों में इतना अन्तर होता है कि एक दूसरे से भिन्न दो देश ही मालूम होने लगते है। केरल के निवासी अपने राज्य को देश के अन्य भागों से इतना भिन्न समझते हैं कि जब वह 'अपना देश' कहते हैं तो उनका तात्पर्य होता है 'केरल राज्य'।

अंग्रेजी भाषा इंग्लैंड, अमरीका, फाकलैंड और आस्ट्रेलिया ही नहीं संसार के और भी अनेक देशों में विगत सैकड़ों वर्षों से बोली जाती रही है। उसका अधिकांश बालगीत साहित्य इंग्लैंड में ही लिखा गया, पर संसार के अन्य अनेक देशों में भी कई ऐसे कवि हुए है जिन्होंने अपनी मातृभाषा के बजाय अंग्रेजी में ही बालगीत लिखे। अपने देश भारत में ही हरीन्द्र नाथ चट्टोपाध्याय जैसे कवि विद्यमान हैं जिनके बालगीतों के अनेक संकलन 'दि फीस्ट यूथ', 'दि चिल्ड्रन्स गार्डन आफ वर्सेस', 'परागण आफ अर्थ', 'ए ट्रैजरी आफ पोएम्स' आदि प्रकाशित हो चुके हैं।

संसार के अनेक देशों में बोली जाने के कारण अंग्रेज़ी के बालगीतों में ऐसे प्रसंग और उन बातों का उल्लेख मिलता है जिनका इंग्लैंड या अमेरिका से कोई सम्बन्ध नहीं है। जैसे अंग्रेजी का यह बालगीत बंबई के किसी मोटे व्यापारी के सम्बन्ध में लिखा गया है -

There was a fat man of Bombay
Who was smoking one sunshiny day
When a bird called a snipe
Flew away with his pipe
Which vexed the fat man of Bombay.

(बंबई में एक मोटा आदमी था। वह एक दिन चमकदार घूप में बैठा पाइप पी रहा था। एक भोली चिड़िया आई और उसका पाइप छीन कर उड़ गई। बंबई का मोटा आदमी हक्का-बक्का झुंझला कर रह गया।)

हिन्दी भी फीजी, मारीशस आदि कई देशों में बोली जाती है। संसार के कई देशों के विद्यालयों में वह पढ़ाई जाने लगी है। उसे बोलने और समझने वाले अनेक देशों में मौजूद हैं। पर हांगकांग, सिंगापुर, ट्रिनिडाड, बैंकाक आदि किसी स्थान के किसी प्रसंग को लेकर वैसा कोई बालगीत अभी तक हिन्दी में नहीं लिखा गया और न भारत से बाहर कोई ऐसा विदेशी कवि हुआ जिसने हिन्दी में बालगीत लिखे हों। हिन्दी बालगीत का भावलोक हिन्दी भाषी राज्यों - उ.प्र., बिहार, म.प्र., राजस्थान आदि के निवासियों के भावलोक या अधिक से अधिक अपने देश भारत की सीमाओं में रहने वाले लोगों के भावलोक तक ही सीमित रहा है। लन्दन, जर्मनी, जापान, ईरान, पाकिस्तान आदि कुछ नगरों या देशों का नामोल्लेख कुछ हिन्दी बालगीतों में अवश्य हो गया है, पर उपर्युक्त अंग्रेजी बालगीत जैसे बम्बई के सुनहले दिन की किसी घटना का वर्णन उनमें नहीं है।

इंग्लैंड और भारत में रहने वाले बच्चों की प्राकृतिक परिस्थितियों और सामाजिक परिवेश में बहुत अन्तर है। इंग्लैंड सब ओर समुद्र से घिरा हुआ एक छोटा-सा देश है। वहां की छोटी-छोटी पहाड़ियों और छोटी-छोटी नदियों की कोई तुलना भारत के हिमालय जैसे गगनचुम्बी पहाड़ और गंगा, ब्रह्मपुत्र, महानदी, नर्मदा आदि गहरी और बड़ी नदियों से नहीं की जा सकती। वहां गंगा के विस्तृत समतल और हरे भरे मैदान जैसा कोई मैदान भी नहीं है। बरसात के दिनों में वहां महीनों सूरज, चांद, सितारों के दर्शन नहीं होते। बर्फ गिरने से ठंड इतनी अधिक हो जाती है कि बाहर घूमने फिरने का आनन्द समाप्त हो जाता है और लोग अपने घरों में अंगीठी के सामने भीगी बिल्ली की तरह दुबके बैठे रहते हैं। भारत में बरसात के

आनन्द का अनुभव करते हैं। वर्ष के अधिकतर महीनों में आकाश स्वच्छ और खुला हुआ रहता है। सूरज, चांद, तारे सब हमेशा साफ दिखाई देते रहते हैं। खुले आकाश में पतंग और कबूतर उड़ाने का जैसा रिवाज भारत में है वैसा इंग्लैंड में नहीं।

भारत एक कृषि प्रधान देश है। खेती यहाँ का मुख्य व्यवसाय है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद अभूतपूर्व औद्योगिक विकास हो जाने के बाद भी यहां की अधिकांश जनता गांवों में ही रहती है। गांवों में कुछ कच्चे-पक्के खपरैलों-छप्परों के घर एक ही स्थान पर बने होते हैं और उनके चारों ओर दूर-दूर तक खेत और बाग फैले होते हैं। इंग्लैंड एक उद्योग प्रधान देश है। वहां का मुख्य व्यवसाय उपयोगी वस्तुओं का उत्पादन और विदेशों में उसकी खपत करना रहा है। उसी के आधार पर वहां के व्यवसायियों ने दूर-दूर देशों में जाकर साम्राज्य स्थापित कर लिये थे। वहां का बच्चा-बच्चा अपने घर में बैठा जहाजरानी और दूर-दूर की यात्राओं के बारे में जानता है। इंग्लैंड में भारत जैसे गांव भी नहीं होते। वहां प्रत्येक किसान अपने-अपने खेत में अलग अपना घर बनाकर अकेला रहता है। भारतीय गांवों के सामूहिक जीवन का वहां अभाव सा है। लोग अपने पारिवारिक जीवन में ही मगन दिखाई देते हैं। आर्थिक सुख-सम्पन्नता भी वहां के निवासियों के जीवन में अधिक दिखाई देती रही है। इसका यह अर्थ नहीं कि वहां निर्धन लोग हैं ही नहीं। पर भारत जैसी विपन्नता और आर्थिक विषमता वहां देखने को कम ही मिलती है।

भारत और इंग्लैंड के लोगों की सामाजिक परम्पराओं और धार्मिक विश्वासों में भी बहुत अन्तर है। इंग्लैंड में नाम के लिए एक राजा का शासन होते हुए भी जनतांत्रिक शासन की पुरानी परम्परा है। लोग अपने अधिकारों के लिए सजग और आत्मानुशासित हैं। भारत में अंग्रेजों से पहले राजा-महाराजाओं का एक-छत्र शासन था। अंग्रेजों ने भारतीय जनता को दासता में जकड़े रखने वाले नियमों का शासन दिया, पर स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी यहां के लोग राजाओं के शासन वाली पुरानी मनोवृत्ति से पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाये। यहां के अधिकतर परिवारों में अब भी घर का बड़ा-बूढ़ा मुखिया होता है और उसका मनमाना शासन सब पर चलता है। धर्म के क्षेत्र में भारतीय परम्परा से ही अध्यात्म-विद्या और चमत्कार पर विश्वास करने वाले रहे हैं। पुनर्जन्म पर उनका अटूट विश्वास है और वह इस पर भी विश्वास करते हैं कि जब-जब धर्म की हानि होती है भगवान स्वयं किसी महापुरुष के रूप में अवतार लेकर पृथ्वी पर रहने वालों के दुख-कष्टों को दूर कर देते हैं। ऐसे ही परम्परागत आस्था-विश्वासों से उनके दृष्टिकोण और मानसिकता बने हैं। इंग्लैंड के लोगों ने जनतांत्रिक शासन की स्थापना के लिए धर्म गुरुओं के

विरुद्ध भी संघर्ष किया था। बर्नाड शा के शब्दों में वहां के निवासियों का ईसाई धर्म इतवार को चर्च में ही आने तक सीमित होकर रह गया है। वह अपने रहन-सहन और खान-पान में बहुत कुछ भौतिकतावादी वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखते हैं।

दोनों देशों की इन भिन्न सामाजिक और प्राकृतिक परिस्थितियों का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव वहाँ के बालगीत साहित्य पर देखने को मिलता है। उद्योग प्रधान देश इंग्लैंड में वर्षा का कोई विशेष महत्व नहीं माना जाता। मौसम ठंडा होने के कारण वहाँ के लोग वर्षा से घबराते हैं। वर्षा के कारण बच्चों का खुले में बाहर खेलना बन्द हो जाता है उनके माता-पिता उन्हें सर्दी से बचाने के लिए बाहर नहीं जाने देते। इसलिए वह वर्षा होना अच्छा नहीं समझते। वह स्वभाव से चंचल तो होते ही हैं। घर के अन्दर उनकी हर बात को बड़ों द्वारा शैतानी समझ लिया जाता है। इसलिए उन्हें खिड़की के सामने बैठकर वर्षा की बूंदों को चुपचाप देखते रहना पड़ता है। बूंदें उन्हें अच्छी लगती हैं और वह उनके ही साथ खेलने की इच्छा करते हैं। बच्चों के इसी प्रकार के मनोभावों को इस अंग्रेजी बालगीत में बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से व्यक्त किया गया है -

Where do you come from
You little drops of rain
Pitter Patter, Pitter Patter
Down the window pane.
They won't let me walk
And they won't let me play
And they won't let me go
Out of door all the day
They say I am very naughty
But I have nothing to do
But sit here at the window,
I should like to play with you.

(नन्हीं वर्षा की बूंदो! तुम पिटर पैटर पिटर पैटर करती हुई खिड़की के शीशे के नीचे कहां से आ जाती हो। वह अब मुझे घूमने और खेलने नहीं देंगे। वह मुझे सारे दिन घर से बाहर नहीं जाने देंगे। वह कहते हैं मैं बड़ा नटखट हूं। लेकिन मेरे पास कुछ करने को है ही नहीं तो मैं क्या करूं? सिवाय इसके कि मैं खिड़की पर बैठा रहूँ। मेरी इच्छा तो तुम्हारे साथ खेलने की होती है।)

इसी प्रकार एक दूसरा बालक तो बादलों को देखते ही उन्हें दूर भगाने की बात करता है। वह चाहता है कि वर्षा आज न हो जिससे उसके खेल में कोई व्याघात न होने पाये -

Come again another day
Little Johny wants to play.

(बादल! बादल! चले जाओ, दूर। तुम फिर किसी दिन आना। आज तो छोटा जानी खेलना चाहता है।)

भारतवर्ष में बादलों का ऐसा तिरस्कार कोई नहीं करता। यहां तो जब गर्मी की तपन से सूख कर धरती बंजर बन जाती है, पशुओं तक के खाने के लिए कहीं कुछ हरा नहीं दिखाई देता, धरती पर कुछ न बो पाने से अकाल का डर पैदा हो जाता है तब सब की आंखें आकाश पर टकटकी लगाकर बादलों के आने और जल बरसाने की प्रतीक्षा करने लगती हैं। यहाँ के लोगों का जीवन ही वर्षा पर निर्भर होता है। वर्षा होने पर बालक वर्षा में भीगते उछलते-कूदते फिरते हैं। उन्हें कोई घर के अन्दर कैद करके नहीं बैठाता। यहाँ के बच्चे तो बादलों को अपने पास बुलाते हैं और तरह-तरह से आग्रह करते हैं कि वह जल बरसायें। हिन्दी में बादल और वर्षा संबन्धी अनेक गीतों में बरसात में पृथ्वी पर हरियाली और खुशहाली छा जाने के रोचक वर्णन किए गये हैं। गर्मी की तपन से ऊब कर बादलों से जल बरसाने के आग्रह का वर्णन इस बालगीत में किया गया है -

बरसो राम धड़ाके से
बुढ़िया मर गई फाके से।
गर्मी पड़ी कड़ाके कीं
नानी मर गई नाके की।
घबराई मछली रानी
देख नदी में कम पानी।
पेड़ों के पत्ते सूखे
धोबी के लत्ते सूखे।
जब सब मिलकर चिल्लाये
उमड़ घुमड़ मेघा आये।
ओले बरसे टप टप टप
हमने खाये गप गप गप।

भारत और इंगलैंड के अलग अलग खान-पान और रहन-सहन के तरीकों का प्रभाव भी दोनों देशों के बालगीतों में स्पष्ट दिखाई देता है। प्राचीन भारतीय वैदिक साहित्य में आर्यों द्वारा माँस खाने का वर्णन भले ही मिलता हो पर बौद्ध धर्म की अहिंसा के सिद्धाँत के प्रचार और फिर सनातनधर्म और आर्यसमाज के

प्रभाव से साधारणतया हिन्दू परिवारों में मांस नहीं खाया जाता या समाज में मांस खाने को अच्छा नहीं समझा जाता। इसलिए हिन्दी के अधिकांश बालगीतों में दूध-जलेबी, माखन-मिसरी, लडडू-पेड़ा, रसगुल्ला, मलाई, खीर आदि खाने की वस्तुओं का उल्लेख तो मिलता है पर मांस खाने का नहीं। जैसे एक बालगीत है -

अम्मा से पैसे ले आओ आया है हलवाई
धरे खोनचे में वह अपने ताजी भरी मिठाई
रस से भरी जलेबी लाया, लाया मोती चूर
पैसे देकर उसको बच्चो खाओ तुम भरपूर।
कैसी सुन्दर टिकियां काटीं बरफी खूब जमाई
जिस जिसने लेकर वह खाई करता बहुत बड़ाई।

इंगलैंड में मांस खाना बुरा नहीं माना जाता। वहां के निवासी मांस, मछली, मुर्गा, अंडा आदि बहुतायत से खाते हैं। इसलिए अनेक बालगीतों में उन चीजों के खाने का वर्णन मिलता है। एक अंग्रेजी बालगीत है -

Sing a song of six pence
a pocket full of rye,
Four and twenty black birds
baked in a pie
When the pie was opened
the birds began to sing
wasn't that a dainty dish
to set before a king.

(गाओ, छः पाई का गीत। एक जेब जौ से भरी हुई। चौबीस काली चिड़ियाँ एक तन्दूर में भूनी हुई। जब तन्दूर खोला गया तो चिड़ियाँ गाने लगीं। वह क्या राजा के सामने रखने योग्य एक स्वादिष्ट खाने की प्लेट नहीं होगी)। इसी प्रकार एक अन्य बालगीत में एक बत्तख को मार कर पकाने-खाने का वर्णन है -

There was a little man
And he had a little gun
And his bullet was made of
lead, lead, lead.
He went to the brook
And saw a litte duck
And he shot it right through
head, head, head.
He carried it home
To his old wife Joan
And bid her a fire to
make, make, make.
To roast the little duck

He had shot in the brook
And he would go and fetch her
a drake, drake, drake.

(एक छोटा आदमी था। उसके पास एक बन्दूक थी। और उसकी गोली जस्ते की बनी हुई थी। वह नदी पर गया और उसने एक बत्तख देखी और उसके सिर में निशाना दाग कर मार दिया। वह बत्तख को अपनी पत्नी जोन के पास लाया। और उसे पकाने के लिए आग मंगाई। उसने नदी से लाई बत्तख को आग पर भूना।)

भारतीय संस्कृति के दृष्टिकोण से देखें तो एक सुन्दर दिखाई देने वाली चिड़िया को मार देने और फिर उसे भूनने-पकाने या खाने के दृश्य बालगीतों में वर्जित माने जायेंगे। मांस न खाने वाले बच्चों को बत्तख को उठाकर आग पर लटकाकर सेंकने का दृश्य बड़ा वीभत्स लगेगा। भारत एक दया-धर्म की भावना प्रधान देश है। यहां तो चूहा जिसका खाद्य ही है उस बिल्ली की भर्त्सना करते हुए नौसौ चूहेखानी कहा जाता है। चूहा मारते हुए नहीं दिखाया जाता बल्कि कहा यही जाता है... चूहे भाग बिल्ली आई। यह हिन्दी पर अंग्रेजी का प्रभाव ही कहा जायेगा कि निम्न बालगीत में रोटी पर बोटी रखकर बच्चे को खाने को देने का वर्णन किया है –

बिल्ली चला रही है चक्की
पीस रही है आटा
पास वहीं पर खेल रहा है
उसका बच्चा नाटा।
कब रोटी सेंकी जायेगी
बच्चा आस लगाये,
भूख लगी है बिल्ली को भी
इसीलिए वह गाये।
बिल्ली आटा पीस पकायेगी
दो रोटी मोटी
बच्चे को देगी आधी पर
रख चूहे की बोटी।

अंग्रेजी के सब बालगीतों में खाने की चीजों में मॉस, मछली आदि का ही वर्णन किया गया हो ऐसा भी नहीं है। बहुत से बालगीतों में मक्खन, रोटी, फलों और मेवों का उल्लेख मिलता है जैसे –

Little Tom Tucker
Sing for his super

What shall we give him
Brown bread and butter.
How shall he cut it
Without any knife
How shall he marry
Without any wife.

(छोटा टाम टकर खाने के लिए गाना गाता है। हम उसे क्या खाने को दें। भूरी रोटी और मक्खन। लेकिन वह बिना छुरी के उसे काटेगा कैसे। या बिना वधू के विवाह कैसे करेगा।)

हिन्दी के अधिकांश बालगीतों में बिल्ली का उल्लेख चूहे मारने या खाने वाली के रूप में किया गया है। पर अंग्रेजी के इस अत्यन्त लोकप्रिय शिशु गीत में उसके द्वारा चूहों को केवल डराने की बात ही कही गई है। अन्य किसी गीत में भी उसके चूहाखानी होने का उल्लेख नहीं किया गया। बिल्ली के लिए चूहे खाना वहां इतनी साधारण बात समझी जाती है कि उसका कहना ही क्या। उससे चूहे डर जाते हैं इतना कहना अधिक रोचक समझ लिया गया –

Pussy Cat! Pussy Cat! where have you been
I have been to London to visit the Queen
Pussy Cat! Pussy Cat! what did you there
I frightened a little mouse under the chair.

('पूसी कैट! पूसी कैट! तुम कहां गई थीं?' 'मैं लन्दन गई थी रानी के पास।' 'पूसी कैट! पूसी कैट! तुम वहां क्या कर आई?' 'मैंने कुर्सी के नीचे एक चूहे को डरा दिया।')

इंगलैंड प्राचीन काल से ही नाविकों का देश होने के कारण वहां बहुत से बालगीत जहाज, सागर आदि विषयों पर लिखे हुए मिलते हैं। वहां का बच्चा-बच्चा जहाजरानी, सागर और उनके संबंध में रची गई कहानियों और यात्रा वर्णनों से परिचित होता है। अंग्रेजी के इस बालगीत में पानी पर तैरने वाले जहाज और उसके विषय में बच्चे की कल्पना का कितना रोचक चित्रण किया गया है। और अन्त में उसके कप्तान को एक बत्तख बताकर उसे और भी मनोरंजक बना दिया गया है –

I saw a ship a sailing
A sailing on the sea
And oh! it was laden
with pretty things for thee.
There were comfits in the cabin
And applis in the hold
The sails were made of silk
And the mast was of gold.

The captain was a duck
With a packet on his back
And when the ship began to move
The captain said 'Quack, Quack.'

(मैंने एक जहाज सागर में तैरते हुए देखा। और वह तुम्हारे लिए सुन्दर सुन्दर वस्तुओं से भरा हुआ था। उसके केबिन में मिठाइयां थीं और पेंदी के कमरे में सेब भरे हुए थे। उसके पाल सिल्क के थे और मस्तूल सोने का बना था। उसका कैप्टन एक बत्तख था। वह अपनी पीठ पर एक पैकेट लिए था। जब वह जहाज चलने लगा तो कैप्टन ने जोर से क्वेक-क्वेक कहा।)

भारत के हिन्दी भाषा-भाषी प्रदेश सागर तट से बहुत दूर हैं। उसके दक्षिणी भाग के जो प्रदेश सागर तटवर्ती हैं उनके निवासी तमिल, तेलुगु, मलयालय भाषायें बोलते हैं। हिन्दी-भाषी क्षेत्रों के सागर तट से बहुत दूर होने के कारण वहां के निवासी बच्चे तो क्या बड़ों में से भी बहुतों ने अपने जीवन में सागर कभी देखा ही न होगा। वह उसके निस्सीम फैलाव, चंचल लहरों और उन पर तैरने वाले जहाजों की कल्पना ही नहीं कर सकते। शायद इसीलिए हिन्दी में सागर या जहाज पर लिखे हुए बालगीत मिलते ही नहीं। ले देकर एक बालगीत रामावतार चेतन का उदाहरण के लिए मिलता है। और वह भी उन्होंने शायद इसलिए लिखा होगा कि वह सागर तट पर बसे बंबई नगर में रहते हैं। उनके उस बालगीत में सागर का कोई चित्र उभर कर सामने नहीं आता। उसमें सागर के बहाने सभी प्रकार के जलाशयों का उल्लेख कर दिया गया है। वह बालगीत है –

सागर दादा! सागर दादा
नदियों झीलों के पर दादा।
तुम नदियों को पास बुलाते
ले गोदी में उन्हें खिलाते।
झीलों पर भी नेह तुम्हारा
हर तालाब तुम्हें है प्यारा।
जब जब यह दुर्बल हो जाते
तुम इनको जीवन पहुंचाते। इत्यादि।

जो पशु-पक्षी, फल-पौधे आदि इंगलैंड या भारतवर्ष में होते ही नहीं और जिनसे बच्चों का कोई भावनात्मक संबंध कभी जुड़ ही नहीं पाता उन पर वहां कोई बालगीत लिखे जाने का प्रश्न ही नहीं उठता। अंग्रेजी बालगीतों में पाम, सेब और चेरी इत्यादि कुछ फलों का उल्लेख तो है पर आम या जामुन का नामोल्लेख करने

वाला कोई बालगीत नहीं मिलता। लिली और डैफौडिल या सनफ्लावर (सूर्यमुखी) या रोज़ (गुलाब) पर कुछ कवितायें वहां मिल जायेंगी पर केतकी, कमल, टेसू पर एक भी कविता नहीं। हिन्दी में आम और जामुन पर लिखे गये बालगीतों की भरमार है। यह दोनों भारत के दो विशेष फल हैं और उनका वर्णन प्राचीन काल से साहित्य में होता आया है। मन्नन द्विवेदी गजपुरी जिन्होंने बच्चों के लिए थोड़ी ही कवितायें लिखी हैं उनके ही दो बालगीत हमें आम और जामुन पर लिखे हुए मिलते हैं -

आम

पके पके क्या आम रसीले
हरे लाल हैं नीले पीले।
आंधी अगर कभी आ जाती
आम हजारों पीट गिराती।
इनको लेकर चलो ताल पर
वहां खूब पानी से धोकर
सौ पचास तक खायेंगे हम
आज न भोजन पायेंगे हम।

जामुन

जामुन क्या काली काली है
मीठी कैसी रस वाली है।
फल से काली डाल हुई है।
कहीं कहीं पर लाल हुई है।
ऊपर चढ़कर जाना होगा
डालें पकड़ हिलाना होगा।
खूब पेट भर खायेंगे हम
घर को भी ले जायेंगे हम।
लेकिन बहुत संभल कर चढ़ना
डाल न टूटे गिर मत पड़ना।

सेब या चेरी पर ऐसे कोई भाव भरे गीत अंग्रेजी बालगीत साहित्य में कहीं ढूंढ़ने से नहीं मिलते। 'ए' से एपिल का बोध कराने वाली कई नर्सरी राइम्स हैं। और सेब के विषय में यह दो पंक्तियां तो बहुत प्रसिद्ध हैं -

An apple a day
Keeps the Doctor away.

(प्रतिदिन एक सेब खाने से डाक्टर दूर रहता है। अर्थात मनुष्य निरोग रहता है।)
इसी प्रकार घोड़ा, गाय, भैंस आदि कुछ पशुओं से सम्बन्धित गीत अंग्रेजी में मिलते हैं जैसे –

I had a little pony
His name was Dapple-Grey.
I lent him to a lady
To ride a mile away.
She whipped him, she lashed him
She rode him through the mire
I would not lend my pony now
For all the lady's hire.

(मेरे पास एक घोड़ा था। उसका नाम डैपिल ग्रे था। मैंने उसे एक महिला को एक मील चढ़कर जाने के लिए किराये पर दे दिया। उसने उसके कोड़े और चाबुक मारे और उस पर चढ़कर फिसलने वाली कीचड़ में चली गई। मैं अब अपने घोड़े को वह महिला कितना ही किराया दे, नहीं दूंगा।)
हिन्दी में भी घोड़ा, गाय, भालू, बन्दर आदि पर बहुत से बालगीत लिखे गये हैं। पर विशेष रूप से हाथी पर लिखे गये 'झूम हाथी, घूम हाथी', 'हाथी चल्लम-चल्लम' तथा 'हाथी राजा कहां चले' जैसा रोचक बालगीत अंग्रेजी में एक भी नहीं है। पशु पक्षियों, कीड़ों मकोड़ों, फूल पौधों इत्यादि पर दोनों भाषाओं में लिखे गये बालगीतों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाये तो ज्ञात होगा कि हिन्दी के बालगीत अंग्रेजी के बालगीतों से किसी भी प्रकार कम भावपूर्ण या कम रोचक नहीं हैं। यहाँ हम मधुमक्खी पर लिखे हिन्दी और अंग्रेजी के दो बालगीतों को तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से देखते हैं। अंग्रेजी में एक बालगीत है –

Busy Bee
How doth the litle busy bee
Improve each shining hour,
And gather honey all the day
From every opening flower.
How skillfully she buirds her cell
How neat she spread the wax
And labours hard to store it well
With the sweet food she makes.
In works of labour or of skill
I would be busy, too
For satan finds some mischief still
For idle hands to do

है। और हर खिलने वाले फूल से सारे दिन शहद इकट्ठा करती रहती है। वह अपने घर को कैसी कारीगरी से बनाती है। और कितनी अच्छी तरह से मोम को फैलाती है। वह जो मीठा मीठा भोजन बनाती है उसके साथ मोम को कैसे जमा रखने के लिए कठिन श्रम करती है। मेहनत और कारीगरी के कामों में मैं व्यस्त रहा करूंगा। क्योंकि खाली हाथों के लिए शैतान कोई न कोई शैतानी खोजकर करने के लिए दे ही देता है।)

यह एक अत्यन्त शिक्षाप्रद गीत है। बच्चे के मन के कौतूहल का इसमें अच्छा चित्रण किया गया है। और यह जानकारी बच्चे को दी गई है कि मधुमक्खी शहद और मोम जमा करती है और अपना घर बनाने में बड़ी कुशल होती है। इससे बच्चे के मन में मधुमक्खी का कार्यकलाप देखने की जिज्ञासा तो उत्पन्न होती ही है साथ ही शिक्षा भी मिलती है कि उसे आलसी बनकर नहीं बैठे रहना चाहिए। पर इस गीत को पढ़ या सुनकर बच्चा मधुमक्खी से अपना कोई रागात्मक संबंध नहीं बना पाता। फूल फूल पर जाकर मंडराती हुई मधुमक्खी को देखकर बच्चे का उससे यह प्रश्न करना कि तुम यह रस पराग क्यों चुराती फिरती हो? और मधु मक्खी का इसे बताना कि मैं इस प्रकार से जो शहद बनाती हूँ, वह मेरे अपने नहीं दूसरों के खाने के लिए होता है। कितना स्वाभाविक है जिसका वर्णन हिन्दी के इस बालगीत में किया गया है -

भुन भुन भुन भुन मधु मक्खी
नन्हीं बी! अल्ला रक्खी।
तुम फूलों पर आई क्यों।
देख रहीं ललचाई क्यों?
रस पराग ले जाओगी
चोर नहीं कहलाओगी?
जिसने बाग लगाया है
सुन्दर फूल खिलाया है
तुम्हें बेंत से मारेगा
पकड़ पुलिस में दे देगा।
जेल चली तुम जाओगी
वहां बहुत दुख पाओगी।
यह सुन मधु मक्खी बोली
ओ नन्हीं मुन्नी भोली!

मैं चोरी कब करती हूं।
नहीं पुलिस से डरती हूं।
रस पराग ले जाती मैं
उसे नहीं खुद खाती मैं
सबको खूब खिलाती मैं
तुम भी आना मेरे घर
शहद उठा लाना मन भर।

चूहा, बिल्ली, कुत्ता, भेड़, भालू, बन्दर, चिड़िया, तोता, बत्तख, मुर्गा, गिलहरी, मछली, आदि बच्चों के सुपरिचित विषयों पर या उनके प्रति बच्चों के मनोभावों और कल्पनाओं को व्यक्त करने वाले अनेकानेक बाल और शिशु गीत हिन्दी और अंग्रेजी में लिखे गये हैं और बच्चों को उन्हें संबोधित करते हुए दिखाया गया है। कहीं तो बच्चों ने उन्हें अंग्रेजी में मदर गूज, मिस्टर बर्ड, पूसी कैट, काक राबिन और हिन्दी में बिल्लो मौसी, मिस्टर चूहा, चिड़िया रानी आदि कहकर संबोधित किया है। जैसे –

The little boy said, Mr. Bird,
Pray tell me who are you?
And all the answer that he heard
was, 'Cock-a doodle-do'

(छोटे लड़के ने कहा–'मिस्टर बर्ड! बुझे बताओ कि तुम कौन हो?' और उसे केवल यह उत्तर मिला–'काक ए डूडिल डू'।) या हिन्दी में जैसे –

चूहिया रानी! कहां चली
कोने कोने गली गली
तुम लगती हो बहुत भली
चलती फिरती मूंगफली।

निर्जीव पदार्थों या न बोल सकने वाले जीव जन्तुओं में अपनी ही तरह जान होने और उनके बोल सकने की कल्पना बच्चे अपनी तीव्र जिज्ञासा के कारण बहुत आसानी से कर लेते हैं। थोड़ी देर के लिए वह उन्हें भी अपनी तरह बातचीत करने वाला मनुष्य समझ लेते हैं। निर्जीव पदार्थों को मनुष्य समझ कर उनका वर्णन करने में एक अलंकार पाया जाता है जिसे अंग्रेजी में Personification (व्यक्तित्वीकरण या मानवीकरण) कहते हैं। हिन्दी काव्यशास्त्र के अन्तर्गत ऐसा कोई अलंकार नहीं होता। व्यतिरेक या वक्रोक्ति में वह बात नहीं जो मानवीकरण अलंकार में है। भारतीय साहित्य के पीछे तो दार्शनिक दृष्टिकोण ही यह रहा है कि संसार के सब जीव जन्तुओं में

एक ही प्रकार की जीवात्मा होती है। और हमारा प्राचीन साहित्य तो जीव-जन्तुओं, पर्वत-नदियों, चाँद-तारों आदि को जीवित मनुष्यों जैसा समझने वाला और उनके बातचीत के वर्णनों से भरा पूरा इतना समृद्ध है जितना शायद ही किसी अन्य देश का प्राचीन साहित्य हो। पंचतन्त्र की सारी कहानियाँ शेर और गीदड़, कबूतर, मेढक, कौआ, हिरन, खरगोश आदि को आपस में मनुष्यों की तरह बातचीत करते हुए दिखाकर लिखी गई हैं। महाभारत और रामायण में स्थान-स्थान पर ऐसे कथा-प्रसंग आये हैं जहां पशु मनुष्यों से मनुष्यों की तरह बोलते हैं। जातक कथाओं में भी इसी प्रकार पशु-पक्षियों के बोलने, बात करने के वर्णन हैं। हिन्दी को विशेष रूप से पशु-पक्षियों और निर्जीव पदार्थों तक को मनुष्यों की तरह बोलते हुए वर्णन करने की यह शैली देश के उसी प्राचीन साहित्य से मिली है। इसलिए अंग्रेजी में जिसे 'मानवीकरण' अलंकार कहा जाता है वह तो हिन्दी में कविता की एक शैली ही है। हिन्दी बालगीत साहित्य में ऐसे गीतों की बहुतायत मिलती है जिनमें पशु-पक्षियों को बच्चों से मनुष्यों की तरह बोलते हुए दिखाया गया है।

बच्चों का यह स्वभाव ही होता है कि वह अपने मन में एक प्रश्न उठाते हैं और उसका उत्तर न मिले तो स्वयं अपने मन से ही उत्तर देकर शंका का समाधान कर लेते हैं। उनके अपने मन की सारी बात यदि कोई बड़ा मनुष्य ही उन्हें बताये तो उन्हें उतनी प्रसन्नता नहीं होती, पर वह जब अपने किसी प्रश्न का उत्तर खोजकर किसी निर्जीव पदार्थ या पशु-पक्षी के मुंह से पा लेने की कल्पना कर लेते हैं तो उन्हें बड़ा कौतूहल होता है और वह खुशी से उछल पड़ते हैं। अंग्रेजी के इस बालगीत में एक चिड़िया और उसके बच्चे की बातचीत की कल्पना की गई –

What does little birdie say
In her nest at peep of day?
Let me fly, says little birdie
Mother! let me fly away.
Birdie, rest a little longer
Till the little wings are stronger.
So she rests a little longer
Then she flies away.

(छोटी चिड़िया अपने घोंसले में प्रातःकाल क्या कहती है? वह कहती है मुझे उड़ जाने दो, मां! मुझे उड़कर जाने दो।
छोटी चिड़िया थोड़ा ठहरो। तुम्हारे पर थोड़े और मजबूत हो जायें। इसलिए वह ठहर जाती है। उसके बाद उड़ जाती है।)

अंग्रेजी के इस बालगीत में छोटे बच्चों को यह सीख अप्रत्यक्ष रूप से दी गई कि तुम जब और बड़े और मजबूत हो जाओ तभी घर से बाहर कहीं जाना। और यह बड़ों को अच्छा इसलिए लगता है कि घर-घर बड़े-बूढ़े कुछ इसी प्रकार की सीख अपने बच्चों को देते आये हैं। हिन्दुस्तानी घरों में अक्सर बड़ी-बूढ़ियां अपने नन्हें मुन्नों के बड़े होने पर शादी ब्याह होने की कल्पना किया करती हैं। छोटे बच्चों से शादी ब्याह की बातें करने में उन्हें आनन्द आता है। दो चिड़ियों को पास-पास बैठे हुए देखकर एक बच्चा उनकी बातचीत के विषय में क्या कल्पना करता है यह इस बालगीत में दर्शाया गया है -

एक बार दो चिड़ियाँ आकर
बैठ गई छत की मुँढेर पर
उनके पर थे नीले पीले
हरे बैंजनी रंग रंगीले।
कहा एक ने पूंछ हिलाकर
कितना अच्छा यह छोटा घर।
बच्चा एक बहुत ही सुन्दर
रहता है इस घर के अन्दर।
मुझे बड़ा प्यारा लगता है
नाम न जाने उसका क्या है?
मैं तो उससे ब्याह करूंगी
उसको टाफी बिस्कुट दूँगी।
कहा दूसरी ने मुस्का कर
यह घर अच्छा तो लगता पर।
चिड़ियाँ कहीं ब्याह करती हैं
वह तो बच्चों से डरती हैं।

आकाश में चमकने वाले तारे, चाँद सूरज संसार में सबको एक से दिखाई देते हैं। इंगलैंड में वर्ष के अधिकांश महीनों में आकाश मेघाछन्न रहने और वहां मौसम अपेक्षाकृत अधिक ठंडा रहने के कारण मनुष्य खुले आकाश के नीचे रहने का उतना सुख नहीं पाते जितना भारत के लोग। यहां तो कुछ महीनों को छोड़कर मनुष्य वर्ष भर चांद तारों से भरे खुले आकाश के नीचे ही रहते हैं। यहां की एक बहुत पुरानी कविता है - 'एक थाल मोती से भरा। सबके सिर पर उलटा धरा।' सूरज चांद तारों को आकाश में देखकर बच्चों को बड़ा कौतूहल होता है।

वह उनके विषय में तरह-तरह की कल्पनायें अनादि काल से करते आये हैं। हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का साहित्य उनकी कल्पनाओं के वर्णन से भरा पड़ा है। पूर्ण चन्द्र में कभी उन्हें एक चर्खा चलाती बुढ़िया दिखाई देती है, कभी खरगोश, कभी हिरन। उनका उल्लेख उनके लिए लिखे साहित्य में मिलता है। पर अब बड़ों के साथ-साथ बच्चों का ज्ञान भी चाँद तारों के विषय में बढ़ता जा रहा है। अब वह राकेट में बैठकर चाँद तक पहुँचने की बात भी सोचने लगे है। उनके साहित्य में वर्णित बहुत सी कल्पनायें निस्सार होती जा रही हैं। फिर भी यह कहना कठिन है कि निकट भविष्य में वह सर्वथा भुला दी जायेंगी और उनके साहित्य में उनके लिए कोई स्थान ही नहीं रह जायेगा। चाँद, तारे और सूर्य बच्चों के लिए सदा कौतूहल और जिज्ञासा के विषय बने ही रहेंगे।

चाँद-तारों पर लिखे गये जितने बालगीत हिन्दी में मिलते हैं उतने अंग्रेजी में नहीं। बच्चों को यह देखकर बड़ा कौतूहल होता है कि जो चाँद कल छोटा सा था वह आज बढ़कर इतना बड़ा हो गया। और फिर वह बड़े से इतना छोटा क्यों हो जाता है। एक अंग्रेजी बालगीत में इसका उल्लेख इस प्रकार से किया गया है -

Oh! Look at the Moon
She is shining up there.
Oh! Mother she looks like a lamp in the air
Last week she was smaller
And shaped like a bow.
But now she is grown bigger
And round as an O.
Pretty Moon! Pretty Moon
How you shine on the door
And make it all bright.
On my nursery floor
You play on my play things
And show me their place.
Your pretty bright face.
And there is a star
Nearby you and may be
That twinkling star
Is your little baby.

(अरे चाँद को देखो। वह वहां कैसी चमक रही है। अरी माँ! वह आकाश में एक लैंप की तरह मालूम होती है पिछले सप्ताह वह छोटी सी थी और एक धनुष के

चाँद! सुन्दर चाँद! तुम द्वार पर कैसी चमकती हो। और मेरी 'नर्सरी' के फर्श को कैसा चमका देती हो। तुम मेरे खिलौनों को चमका देती हो और मैं देख लेता हूँ, कि वह कहाँ हैं। और मैं तुम्हारे सुन्दर चेहरे को देखना पसन्द करता हूँ। तुम्हारे पास में ही एक तारा है और हो सकता है कि वह झिलमिलाता हुआ तारा तुम्हारा बेबी हो।)

चाँद को अंग्रेजी में स्त्री लिंग माना जाता हैं इसी से प्रेरित होकर बच्चे ने इस बालगीत में तारे को उसका बच्चा मानने की कल्पना की है।

चांद के विषय में इस बालगीत में ऐसी कोई भी बात नहीं जिसे किसी विशेष देश या परिस्थितियों में रहने वाले बच्चे ही कह सकें। संसार के सब देशों के बच्चे चाँद को देखकर ऐसी ही कल्पनायें कर सकते और ऐसी ही बातें कह सकते हैं। उसके कभी धनुषाकार छोटा लगने और कभी गोलाकार बड़ा दिखाई देने के भाव को लेकर हिन्दी में जो एक कविता 'चन्द्रमा का कुर्त्ता' नाम से मिलती है उसके जोड़ की कोई दूसरी कविता किसी अन्य भाषा के साहित्य में मिलना कठिन है।

उसमें बच्चा यह कल्पना करता है कि चन्द्रमा भी एक बच्चा है और उसकी भी अपनी माँ होगी। चाँद अपनी माँ से कहता है कि मैं गर्मी, वर्षा, जाड़े में बिना कोई कपड़ा पहने नंगे बदन रहता हूँ तू मुझें एक कुर्त्ता सिलवा दे –

एक बार की बात चन्द्रमा
बोला अपनी मां से,
'कुर्त्ता एक नाप का मेरी
माँ! मुझको सिलवा दे।
नंगे तन बारहों मास मैं
यों ही फिरता रहता
गर्मी वर्षा जाड़ा हरदम
बड़े कष्ट से सहता।'

माँ हंस कर उत्तर देती है –

मां हंस कर बोली सिर पर रख
हाथ, चूमकर मुखड़ा
'बेटा! खूब समझती हूं मैं
तेरा सारा दुखड़ा।
लेकिन तू तो एक नाप में

कभी नहीं रहता है
पूरा कभी, कभी आधा
बिल्कुल न कभी दिखता है।'

बच्चा माँ के यह कहने से निरुत्तर नहीं होता। उसका यह कहना कितना स्वाभाविक और तर्कसम्मत है –

आ हा हा! फिर तो हर दिन की
मेरी नाप लिवा दे
एक नहीं पूरे पन्द्रह तू
कुर्ते मुझे सिला दे।

चाँद की तरह तारों पर भी हिन्दी में अनगिनत गीत रचे गये हैं। अंग्रेजी का यह गीत तो संसार में जहां-जहां अंग्रेजी भाषा पढ़ी, सुनी या बोली जाती है बच्चों की जुबान पर चढ़ गया है –

Twinkle, Twinkle little star
How I wonder what you are
up above the world so high
Like a diamond in the sky
When the blazing sun is gone
When he nothing shines upon
Then you show your little light
Twinkle Twinkle all the night.

(नन्हें तारे चमको! चमको! मुझे आश्चर्य है कि तुम हो क्या? तुम पृथ्वी से इतने ऊपर आकाश में एक हीरे के समान चमक रहे हो। जब सूरज की रोशनी समाप्त हो जाती है और वह किसी चीज को नहीं चमकाता है तब भी तुम अपनी हलकी रोशनी दिखाते रहते हो और रातभर चमकते रहते हो।)

इस गीत की इतनी लोकप्रियता का रहस्य बच्चे के सरल कौतूहल की भावना की अभिव्यक्ति अत्यन्त सीधे सादे ढंग से होने में है। एक तारे को चमकता हुआ देखकर बच्चे के मन में स्वाभाविक रूप से जो भाव उत्पन्न हो सकते हैं उनकी अभिव्यक्ति बड़े सीधे-सच्चे ढंग से इस गीत में हो गई है।

हिन्दी के एक गीत में यह कल्पना की गई है कि आकाश के यह तारे मीठे दही के छींटे हैं या यह बिखरे हुए अनार के दाने हैं –

ओ किसने गिरा दिये हैं यह मधुर दही के छींटे
धो अम्मा इन्हें नहीं तो आते ही होंगे चींटें।

....

किसने बिखेर डाले ये मेरे अनार के दाने
चिड़ियों ने यदि देखा तो वह आ जायेंगी खाने।

इसी प्रकार की और भी बहुत सी कल्पनायें तारों के विषय में इस लंबी कविता में की गई हैं। पर उनमें से अधिकांश बाल सुलभ नहीं लगतीं। वह एक प्रतिभावान कवि की सर्वथा नई कल्पनायें हो सकती हैं और इसलिए रोचक भी लग सकती हैं पर बच्चे उन्हें सर्वथा अपनी कल्पनायें नहीं समझ सकते।

हिन्दी के एक दूसरे बालगीत में कोई बच्चा तारों की चमक से अभिभूत होकर उनसे जहां-वहाँ, इधर-उधर सब जगह चमकने के लिए आग्रह करता है। यह सर्वथा स्वाभाविक ही है। पर तारों से दुनिया के अंधकार को दूर करने के लिए कहने में जो भाव है वह शायद सूरज की तरह अंधकार दूर करने के लिए कहने का नहीं। कवि बच्चों को यशस्वी बनने की प्रेरणा देने के लिए उनसे दुनिया का अंधकार दूर करने की बात कहता है। दूसरे इसमें तारों के बहाने बच्चों को चमकने का जो आदेश दिया गया है उसे समझते ही बच्चे उसकी ओर से उदासीन भी हो सकते हैं। बच्चों के लिए तो 'मैं' या 'हम' शैली में रची हुई कवितायें ही अधिक रोचक लगती हैं।

प्यारे प्यारे तारे चमको
नीचे चमको ऊपर चमको
नभ पर चमको भू पर चमको
नदी और नहरों में चमको।
तुम लहरों लहरों में चमको।
दूर करो दुनिया के तम को।

ऐसा प्रतीत होता है इस कविता में कवि ने अपने मन की इच्छा बच्चों से कही है जिससे वह बड़े होकर खूब अच्छे-अच्छे काम करें, खूब यश कमायें और उनके अच्छे कामों से संसार में फैली हुई बुराई या अज्ञान का अंधकार दूर हो।

बच्चों के मन में प्रिय लगने वाली वस्तु को प्राप्त करके अपने अधिकार में कर लेने की भावना स्वाभाविक रूप से बड़ी प्रबल होती है। वह यह इच्छा कर सकते हैं कि किसी तरह आकाश में तारों के पास पहुंच जायें और कंचों की तरह बीन बटोर कर अपने घर उठा लायें। उनकी इसी इच्छा की अभिव्यक्ति एक बालगीत की इन पंक्तियों में की गई है –

....

उनके पास पहुंच जाते हम

उन्हें उठाकर जेबों में भर
हम सबके सब ले जाते घर
लाकर अम्मा को दिखलाते
नहीं रात में लैंप जलाते।
तारों के उजियाले में पढ़
हम सबसे आगे जाते बढ़
सारा पाठ याद हो जाता
हमें कौन तब डांट बताता।
प्यार हमें करते टीचर जी
जिनका नाम सुभाष मुकर जी।

चांदनी रात में जब कोई बालक धरती पर चलता है तो उसे चाँद तारे, सब आकाश में अपने साथ चलते हुए मालूम होते हैं। इंगलैंड में बहुत अधिक ठंडा होने के कारण चांदनी रात में घूमने फिरने का अधिक अनुभव बच्चों को नहीं होता। पर वहां के बच्चे चलते समय चांद के साथ-साथ चलने के इस अनुभव से अपरिचित हों यह भी नहीं कहा जा सकता। उसके आधार पर लिखा गया एक भी बालगीत अंग्रेजी में नहीं है। हिन्दी के इस बालगीत में बच्चों के उस अनुभव का बड़ा सुन्दर चित्रण हुआ है –

हमारे साथ देखो तो अरी मां चाँद चलता है।
जिधर जाते उधर ही हम उसे हंसता खड़ा पाते
लजाता है नहीं वह तो तनिक भी सामने आते
न देखा था कभी ऐसा विनोदी ढीठ सा बालक
अरे वह मांगता इससे कलम पेंसिल घड़ी पुस्तक
तनिक भी हम जहाँ उछले वहां यह भी उछलता है।

अंग्रेजी के बहुत से बालगीत अपने समय की कुछ प्रमुख राजनीतिक या सामाजिक घटनाओं से संबंधित हैं या परम्पराओं, अंधविश्वासों से प्रेरित होकर लिखे गये हैं। जैसे लंदनवासियों में प्रचलित एक अंधविश्वास था कि किसी भवन को बनाने के लिए उसकी नींव में यदि रक्त मिला दिया जाये तो वह मजबूत बनेगा अन्यथा नहीं। इसी आधार पर कभी किसी कवि ने लंदन ब्रिज के गिरने की कल्पना करके यह बालगीत रच दिया था –

London Bridge is falling down
Falling down, falling down

London Bridge is falling down
My fair lady.
We must build it up again
Up again, up again
We must build it up again
My fair lady.
Build it up with cotton thread
Cotton thread, Cotton thread
Build it up with cotton thread
My fair lady.
Cotton thread will not hold fast
Not hold fast, not hold fast
Cotton thread will not hold fast
My fair lady.

(लंदन का पुल गिर रहा है, गिर रहा है, मेरी प्रिये। हमें उसे फिर से बनाना चाहिए। फिर से बनाना चाहिए, मेरी प्रिये। हम उसे सूत के धागे से बनायेंगे, बनायेंगे, मेरी प्रिये। सूत के धागे से मजबूत नहीं बनेगा, नहीं बनेगा, मेरी प्रिये।)

इस प्रकार निम्नलिखित अंग्रेजी गीत के बारे में कहा जाता है कि वह सत्रहवीं शताब्दि में इंगलैंड के प्रधानमन्त्री क्रामवेल के लड़के रिचर्ड के विषय में रचा गया था। उसे इंगलैंड का 'रक्षक' बना दिया था। किन्तु साल भर बाद ही जब क्रोमवेल का प्रभाव समाप्त हो गया तो उसे जेनरल मांक ने पदच्युत कर दिया था-

Hickory, dickory, dock!
The mouse ran up the clock;
The clock struck one
The mouse came down,
Hickory, dickory, dock!

(हिकरी, डिकरी डाक, एक चूहा एक घड़ी पर चढ़ गया। घड़ी ने एक का घंटा बजाया तभी चूहा फौरन नीचे आ गया। हिकरी, डिकरी डाक।) इस गीत का चूहा रिचर्ड ही था।

अंग्रेजी के अन्य लोकप्रिय बालगीत के विषय में यह कहा जाता है कि वह इंगलैंड के राजा रिचर्ड तृतीय की हंसी बनाने के लिए लिख दिया गया था। जब वह सत्ताच्युत हो गया तो योरुप के अनेक शासकों ने यह प्रयत्न किया कि वह फिर सत्ता प्राप्त करले पर ऐसा हो नहीं सका। वह इस प्रकार है -

Humpty Dumpty sat on a wall
Humpty Dumpty had a great fall
All the kings horses and all the kings men
Could'nt put Humpty Dumpty togather again.

(हम्टी डम्टी एक दीवार पर बैठा था वह बड़े जोर से गिर पड़ा। सारे राजाओं के घोड़ों और मनुष्यों ने पूरा जोर लगाया पर हम्टी डम्टी को वहां नहीं बैठा सके।) आज के बच्चों को हम्टी डम्टी का अर्थ अंडा बताया जाता है। जो दीवार पर से गिर कर टूट जाता है और फिर उसको जोड़ कर एक नहीं बनाया जा सकता पर इसमें सारे राजाओं के घोड़ों और मनुष्यों का उल्लेख होने से ऐसा लगता है यह राजा रिचर्ड तृतीय के पतन के समय ही रचा गया होगा।

अंग्रेजी का एक और बालगीत 'ओल्ड मदर हवर्ड' अमरीका और इंग्लैंड दोनों में बहुत मशहूर है –

Old mother Hubbard
Went to the cupboard
To get her poor dog a bone
But when she got there
The cupboard was bare
And so the poor dog got none.
She went to the bakers
To buy him some bread,
But when she came back
The poor dog was dead,
She went to the fishmongers
To buy him some fish
And when she came back
He was licking the dish.
she went to the fruiterers
To buy him some fruit
But when she came back
He was playing the flute.
This wonderful dog
Was Dame Hubbord's delight
He could sing, he could dance
He could read,he could write.

(बुढ़िया हबर्ड अपनी अलमारी के पास गई कि अपने कुत्ते के लिए एक हड्डी ले आये। पर जब वह वहाँ पहुँची तो अलमारी खाली थी। इसलिए कुत्ते को कुछ नहीं मिला। वह रोटी वाले के पास गई कि रोटी खरीद लाये। लेकिन जब वह वापिस लौट कर आई तो कुत्ता मर गया था। वह मछली वाले के पास गई कि कुछ मछली खरीद लाये पर जब वह वापिस लौट कर आई तो कुत्ता प्याली चाट रहा था। वह फल वाले के पास गई कि कुछ फल ले आये। पर जब वह लौट कर आई तो कुत्ता बाजा बजा रहा था। यह विचित्र कुत्ता श्रीमती हबर्ड की प्रसन्नता का कारण

था। वह गा सकता था, नाच सकता था, पढ़ सकता था और लिख सकता था।) इस बालगीत के विषय में कहा जाता है, कि यह उस समय लिखा गया था जब इंगलैंड के राजा हेनरी अष्टम ने अपने मन्त्री वूलजे को चांसलर (धर्मगुरु) के पद से हटा दिया था। वूलजे रोम के पोप का चहेता था। वह चाहता था कि वूलजे उस पद पर बना रहे। इंगलैंड का राजा उसके कहे में नहीं था इसलिये वह योरुप के कई राजाओं के पास दौड़ता फिरा कि वह वूलजे को धर्मगुरु बनाये रखने में सहायता करें।

हिन्दी में भी सम्भव है कुछ इस प्रकार के गीत लिखे गये हों जिनका अप्रत्यक्ष रूप से अपने समय की किसी विशेष महत्वपूर्ण राजनीतिक या सामाजिक घटना से संबंध हो। पर इस दृष्टि से अभी तक कोई अध्ययन ही नहीं किया गया है। यदि गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया जाये तो कुछ गीत ऐसे अवश्य मिलेंगे जो ऊपर से देखने में बाल सुलभ कल्पना वाले सरल बालगीत लगते हों पर जिनमें किसी घटना की बात छिपी हुई हो। जैसे जब देश में आपात्कालीन स्थिति की घोषणा कर सारी राजनीतिक शक्तियों का केन्द्रीकरण करके तानाशाही की ओर ले जाये जाने की शंका हो गई थी और सबको बताया यह जा रहा था कि यही प्रजातन्त्र है तो यह बालगीत रचा गया था –

पंडित मोहन लाल तिवारी
हिन्दी हमें पढ़ाते हैं
लेकिन वह सीधे शब्दों के
उलटे अर्थ बताते हैं।
मैं जब कहता--इन शब्दों का
यह तो अर्थ नहीं होता
तब वह कहते हैं तेरी क्या
तू तो है रट्टू तोता।
तुझको वही याद करना है
जो हम अर्थ बताते हैं
समय समय के साथ शब्द के
अर्थ बदलते जाते हैं।

या जब केन्द्रीय सरकार ने सारे देश में पैदा हुए सब गेहूँ को खरीदकर उसके वितरण की व्यवस्था स्वयं अपने हाथ में ले लेने की घोषणा की थी तब एक यह बालगीत रचा गया था –

आज खबर आई है नन्हें मुन्नों के अखबार में
चूहे चौकीदार बनेंगे गेहूं के भंडार में

सन् 1977 के आम चुनावों में सत्ताच्युत हो जाने के बाद जब श्रीमती गांधी लोकसभा के लिए चुनाव में कर्नाटक के चिकमंगलूर चुनाव क्षेत्र से चुनाव लड़ीं और जीत गई थीं तो एक यह बालगीत रच दिया गया था -

एक नगर है चिकमंगलूर
वहां बहुत से हैं लंगूर।
एक बार जब मियाँ गफूर
खाने गये वहां अंगूर।
बिल्ली एक निकल आई
वह तो थी उनकी ताई
टांग पकड़ कर पटकी दी
जय हो बिल्ली बाई की।

इस बालगीत में मियाँ गफूर से संकेत उन जार्ज फर्नाडीस की ओर है जो यह प्रतिज्ञा करके वहां गये थे कि इन्दिरा गांधी को जीतने नहीं देंगे।

हिन्दी और अंग्रेजी बालगीतों के तुलनात्मक अध्ययन से ज्ञात होता है कि अंग्रेजी में बालगीत लेखन की परम्परा सैकड़ों साल पुरानी है। अंग्रेजी के अनेक प्रसिद्ध कवियों - वर्ड्सवर्थ, कीट्स, शेली, टेनिसन, क्रिस्टीना राजेटी, जेन टेलर, स्टीवेन्सन, ब्राउनिंग ब्लेक, स्विनबर्न आदि सभी ने बड़ों के लिए कवितायें लिखने के साथ-साथ बच्चों के लिए भी बालगीत लिखे हैं। हिन्दी में बालगीतों का इतिहास अधिक से अधिक एक सौ वर्ष पुराना है और इस काल में जो भी महान कवि हुए - जयशंकर प्रसाद, निराला, महादेवी, सुमित्रानन्दन पन्त आदि ने बालगीत लिखने की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। इसलिए हिन्दी में अभी तक बालगीत साहित्य का लेखन एक द्वितीय श्रेणी का लेखन कार्य समझा जाता रहा। इंगलैंड में सदियों से बालगीत घर-घर बच्चों को सुनाये और सिखाये जाते रहे हैं। वहां बच्चों का कोई भी स्कूल ऐसा नहीं मिलेगा जिसमें प्रारम्भिक शिक्षा के साथ-साथ कुछ बालगीत भी बच्चों को न सिखाये जाते हों। बह बच्चों की शिक्षा में बालगीतों के महत्व को समझ गये हैं और बच्चे के व्यक्तित्व की स्वतन्त्रता को मान्यता दी गई है। हमारे देश में घर-घर बच्चों को बालगीत सुनाने या सिखाने की कोई परम्परा नहीं है और न स्कूलों में ही बच्चों को बालगीत सिखाये जाते हैं। बल्कि शिक्षाप्रद या राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत जो कोई गीत बड़ों द्वारा बच्चों को दिये भी जाते हैं वह उनका मनोरंजन करने के

बजाय उनके मन पर भार हो जाते हैं। हमारे भारतीय समाज में बड़ों द्वारा बच्चे के स्वतन्त्र व्यक्तित्व को अभी तक कोई मान्यता प्रदान नहीं की गई है और उसे बालगीतों के माध्यम से भी मार-मार कर वैसा बनाने का जबरदस्ती प्रयास किया जाता रहा है जैसा वह उसे बना देना अपना अधिकार समझते हैं।

हिन्दी में देशभक्ति और वीर पूजा की भावना से लिखे गये बालगीत बहुत मिलते हैं जैसे -

जहाँ जन्म देता है विधाता
उसी ठौर में चित्त है मोद पाता।

या

जन्म दिया माता सा जिसने
किया सदा लालन पालन।

या

जय जय भारत माता
तेरा बाहर भी घर जैसा रहा प्यार ही पाता।

या

वह मातृ भूमि मेरी। वह पितृ भूमि मेरी
वह पुण्य भूमि मेरी। वह स्वर्ग भूमि मेरी

या फिर ईश विनय या शिक्षा उपदेशप्रद गीतों की भरमार है जैसे -

विनती सुन लो हे भगवान

या

हे प्रभो आनन्द दाता ज्ञान हमको दीजिये।

या

खेलोगे तुम अगर धूल से तो गन्दे हो जाओगे

या

वह शक्ति हमें दो दयानिधे कर्तव्य मार्ग पर डट जायें।

और ऐसे ही बालगीत बड़े लोग बच्चों को सिखाना या पढ़ाना पसन्द करते हैं। अंग्रेजी बालगीत साहित्य में देश प्रेम के उतने अधिक गीत हमें नहीं मिलते। ईश्वर प्रार्थना के कुछ गीत अवश्य हैं पर बच्चों को सिखाने के लिए उनका उतना प्रयोग नहीं किया जाता। और जिन बालगीतों के माध्यम से कोई शिक्षा या ज्ञान की बात बच्चों से कही भी गई है वह इस प्रकार से और इतने प्रच्छन्न रूप से कि बच्चों को उससे अरुचि उत्पन्न नहीं होती बल्कि मनोरंजन ही होता है जैसे इस बालगीत में

बच्चों को पर्वत और गिलहरी की बातचीत के माध्यम से ऐसी बात बताई गई है जिसको ग्रहण कर लेने से वह कभी आत्महीनता की भावना के शिकार नहीं हो सकते। सृष्टि में छोटे और बड़े सबकी महत्ता को वह समझ जाते हैं और उनमें एक ऐसा आत्मविश्वास उत्पन्न होता है जो जीवन भर उनका साथ दे सकता है –

The mountain and the squirrel
Had a quarrel,
And the former called the latter
'Little prig'
Bun replied,
'You are doubtless very big
But all sorts of things and weather
Must be taken in together
To make up a year,
And a sphere,
And I think it no disgrace
To occupy my place.
If I am not so large as you,
You are not so small as I
And not half so spry,
I'll not deny you make
A very pretty squirrel track.
Talents differ; all is well and wisely put;
If I can not carry forests on my back,
Neither can you crack a nut."

(पर्वत और गिलहरी में झगड़ा हो गया। और पर्वत ने गिलहरी को एक क्षुद्र मिथ्या दम्भी कह कर पुकारा। गिलहरी ने कहा – तुम निस्संदेह बड़े हो। लेकिन सब वस्तुओं और मौसम को एक साथ रखकर देखना चाहिए उनसे ही वर्ष और दुनिया बनती है। और मुझे अपनी स्थिति पर कोई लज्जा नहीं है। यदि मैं तुम्हारे बराबर बड़ी नहीं हूँ तो तुम भी मेरे बराबर छोटे नहीं हो। और मुझ से आधे भी फुर्तीले नहीं हो। यह ठीक है कि तुम गिलहरियों के लिए बहुत अच्छा रास्ता बना लेते हो। प्रतिभायें अलग-अलग होती हैं। संसार में सब अपने-अपने स्थान पर ठीक हैं। यदि मैं अपनी पीठ पर जगलों को नहीं ले जा सकता तो तुम भी एक अखरोट नहीं तोड़ सकते।)

हिन्दी में ऐसी मनोरंजक और प्रच्छन्न रूप से शिक्षाप्रद बालगीतों का अभाव है ऐसा नहीं कहा जा सकता। पर अंग्रेजी की अपेक्षा उनकी संख्या कम है। यहां प्राचीन साहित्य से लेकर छोटी-छोटी शिक्षाप्रद और प्रेरक कहानियाँ तो बहुत लिखी

गई। उन्हें पद्यबद्ध भी किया गया। सुभाषित और सूक्तियाँ लिखने की परम्परा भी प्राचीनकाल से चलती रही। बच्चों के लिए उनकी सरल भावनाओं, कौतूहल, जिज्ञासाओं और कल्पनाओं को व्यक्त करने वाले बालगीत लिखने की परम्परा विगत एक सौ वर्ष से अधिक पुरानी नहीं है।

किसी भाषा में अच्छे बालगीत तभी रचे जा सकते हैं जब उसे बोलने वाले लोग बच्चों को प्यार और उनके व्यक्तित्व के स्वतन्त्र विकास में विश्वास करने वाले हों। बालसाहित्य के पठन-पाठन में उनकी रुचि हो और वह अच्छे बालसाहित्य को बच्चों तक पहुँचाना अपना कर्त्तव्य समझते हों। हमारे देश में विगत वर्षों में बालसाहित्य में लोगों की जैसी रुचि विकसित हुई है उससे आशा की जा सकती है कि हमारा बालसाहित्य संसार के किसी भी विकसित देश के बालसाहित्य से पीछे नहीं रहेगा।

14 : भारतीय भाषाओं में बालगीत साहित्य

भारतीय भाषाओं में बालगीत साहित्य के विकास का इतिहास लगभग उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से प्रारम्भ होता है। इससे पूर्व देश के बच्चे अपनी-अपनी भाषाओं के कुछ महाकवियों की कविताओं के अंशों को लेकर अपना काम चला लिया करते थे। यह कवितायें वही होती थीं जिन्हें बड़े लोग घरो में प्रायः गाया सुनाया करते थे। आसाम में शंकर देव के 'शिशु लीला पद' बच्चों को भी कंठस्थ हो जाते थे। गुजरात में नरसी मेहता, राजस्थान में मीराबाई और ब्रज में सूरदास के पदों से बच्चों का मनोरंजन होता था। पंजाब में नानक की बानी बच्चों के साहित्य का एक अंग बनी हुई थी। तमिलनाडु में अवैय्यार के आत्तिचचूडि (नीति के पदों) से बाल साहित्य का काम ले लिया जाता था और हिन्दी में अमीर खुसरो की पहेलियाँ और जगनिक के आल्हखण्ड के कुछ अंशों से बच्चों का मनोरंजन हो जाता था। इन सबके अतिरिक्त बच्चों के परम्परागत मौखिक गीत भी प्रचुर मात्रा में प्रत्येक भाषा के साहित्य में उपलब्ध थे। जैसे काश्मीर में दादी, नानी या माताओं द्वारा सुनाई जाने वाली बहुत सी लोरियां और कविताओं की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आयी थी। इसी प्रकार तेलुगु भाषाभाषी आंध्र प्रदेश में बहुत सी लोरियां और पद्य ऐसे थे जो मातायें बच्चों को बचपन में ही सुनाया और याद करा दिया करती थीं। इन कविताओं से बच्चों का केवल मनोरंजन ही नहीं होता था उन्हें अनेक विषयों का ज्ञान और सीख की बातें भी मिल जाती थीं। उड़िया में कोयली और चौंतीसे जाने कब से बच्चों के सुनाने के लिए प्रयोग में लाये जाते थे। कोयली का अर्थ है कोयल और कोयली उन गीतों को कहते थे जो वर्णमाला के अक्षरों से प्रारम्भ करके कोयल की ओर से अपने को सम्बोधित करके रच लिए जाते थे। केशव और बेरमा की कोयलियां आज भी उड़ीसा में बच्चों का मनोरंजन करती पायी जाती हैं। हिन्दी भाषी क्षेत्रों में लोक साहित्य में पाये जाने वाले बालगीतों के अतिरिक्त बहुत से गीत ऐसे हुआ करते थे जिन्हें बच्चे स्वयं या बड़ों की सहायता से अपने लिए गढ़ लिया करते थे। टेसू, चट्टा और सांझी के गीत उसी प्रकार के हैं। हिन्दी के अतिरिक्त और भी भारतीय भाषाओं में खोजने पर बहुत से बालगीत ऐसे मिलते हैं जिन्हें बच्चों ने किसी न किसी समय खेलते-कूदते या मनोविनोद के क्षणों में स्वयं प्रेरित होकर सरल तुकबन्दियों के रूप में अपने लिए गढ़ लिया होगा।

उन्नीसवीं शताब्दी के तीसरे या चौथे दशक में बड़े शिक्षित लोगों का ध्यान इस ओर जाना प्रारम्भ हो गया था कि बच्चों को अपनी मातृभाषा के

माध्यम से शिक्षित करने का प्रबन्ध किया जाये। उड़िया में यह कार्य राधानाथ, मधुसूदन, फकीरमोहन सेनापति तथा गोविन्द रथ आदि बड़ों के लेखकों ने किया। गोविन्द रथ और मधुसूदन राव ने 'वर्णबोधक' तथा 'वर्णबोध' पुस्तकें लिखीं। इनमें से मधुसूदन राव कृत 'वर्णबोध' पुस्तक तो बहुत लोकप्रिय हुई और आज भी प्रचलित है। बंगाल में 1817 में एक स्कूल बुक सोसायटी नामक संस्था ने बच्चों के लिए पाठ्य पुस्तकों के निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया था। 1851 में इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए ईश्वरचन्द्र विद्यासागर तथा राधाकांतदेव आदि ने वर्नाकुलर लिटरेचर कमेटी बनाई। आसाम में 1836 के बाद बैप्टिस्ट मिशनरियों द्वारा बच्चों के लिए पाठ्य पुस्तकें तैयार करने का काम किया गया। तमिलनाडु में 1840 के बाद ईसाई पादरियों ने बच्चों के लिए पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारम्भ किया। उनमें से कुछ 'बाला दीपिकै', 'सीरू पिल्लैय्यन नेसा व्होज्जन' तथा 'वालियार नेसा' नाम की पत्रिकायें थीं। तेलुगु में कंडुकुरि वीरासिलिंगम पांतुल (1848-1919) ने बच्चों का मानसिक विकास करने के उद्देश्य से 'नीति दीपिका' नाम से चरित्र निर्माण सम्बन्धी पद्यों का संकलन प्रकाशित कराया। हिन्दी में फोर्ट विलियम कालेज कलकत्ता के प्रोफेसर गिलक्राइस्ट ने मुंशी सदासुखलाल, सैयद इंशाअल्ला खाँ, लल्लू लाल और सदल मिश्र से बच्चों के लिए पुस्तकें लिखवायीं और सन् 1833 में मिशिनरी पादरियों ने एक स्कूल बुक सोसायटी की स्थापना करके उसके द्वारा बच्चों के लिए पुस्तकों के प्रकाशन के कार्य को आगे बढ़ाया। बनारस के राजा शिवप्रसादसितारेहिन्द जो एक इन्सपेक्टर ऑफ स्कूल थे, उनका भी इस काम को आगे बढ़ाने में काफी योगदान रहा।

इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी के मध्यकाल से देश में एक ऐसा वातावरण बनने लगा था जिससे विशेष रूप से बच्चों के लिए भी कुछ न कुछ लिखना आवश्यक समझा जाने लगा था। पर उसे लिखने का उद्देश्य बच्चों को शिक्षित करना या चरित्र निर्माण की बातें बताना ही होता था और उनके विषय प्राचीनसाहित्य की पुस्तकों, लोकसाहित्य या उस मौखिक गद्य या पद्य साहित्य से ही लिये जाते थे जो दादी नानियों के द्वारा बच्चों में प्रचारित किया जाता था। मनोरंजन के उद्देश्य से बच्चों के लिए गीत लिखने की ओर बहुत कम लेखकों ने ध्यान दिया था।

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों से ही विभिन्न भारतीय भाषाओं के सुधी लेखकों का ध्यान इस ओर जाने लगा था कि बच्चों के लिए पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त भी कुछ मनोरंजक और ज्ञानवर्द्धक साहित्य लिखा जाना चाहिए। सभी भाषाओं में अनेक विद्वान लेखक ऐसे थे जिन्होंने अपने देश के संस्कृत साहित्य में

पाये जाने वाले पंचतंत्र, कथासरित्सागर, हितोपदेश आदि ग्रन्थों का अध्ययन किया था और अंग्रेजी में उपलब्ध बालसाहित्य से भी परिचित थे। अतएव उनका ध्यान बच्चों के लिए विशेष रूप से मनोरंजक साहित्य लिखने और उसे पुस्तकों और पत्र पत्रिकाओं के रूप में प्रकाशित करने की ओर गया। पर उस समय हमारा देश पराधीन था और प्रकाशन की वैसी सुविधायें उपलब्ध नहीं थीं कि बाल साहित्य को आकर्षक रूप में प्रकाशित करके बच्चों को दिया जा सके।

बीसवीं शताब्दी के चौथे दशक के प्रारम्भ से ही यूरोप के देशों पर युद्ध के बादल मंडराने लगे थे और अपने देश में राष्ट्रीय चेतना का विकास और विदेशी शासन से स्वतन्त्रता प्राप्त करने की भावना अपनी पराकाष्ठा को पहुंच चुकी थी। सन् 1939 में जब द्वितीय विश्व महायुद्ध प्रारम्भ हो गया तो संसार के सारे जनतान्त्रिक व्यवस्था वाले देशों को अधिनायकवादी या तानाशाही शक्तियों के विरूद्ध संघर्ष करके मनुष्यों के जनतान्त्रिक स्वाधीनता के अधिकारों की सुरक्षा की चिन्ता होने लगी। फासिस्ट शक्तियों का प्रतिनिधित्व जर्मनी, जापान और इटली कर रहे थे और अमरीका, ब्रिटेन और रूस जनवादी शक्तियों के पक्षधर थे। भारत उस समय ब्रिटेन के आधीन था। इसलिए उसे भी जनवादी शक्तियों के साथ मिलकर ही उस संघर्ष में शामिल होना पड़ा। इससे वह संसार के अनेक विकसित और स्वतन्त्र देशों की सभ्यता, संस्कृति और साहित्य के सम्पर्क में आया। इससे होने वाले विचारों के आदान प्रदान से भारत का प्रबुद्ध लेखक वर्ग सर्वथा अप्रभावित न रह सका और सन् 1947 में जब हमारे देश को राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई तब तो सारे भारतीय साहित्य के क्षेत्र में विकास के नये-नये आयाम खुलने लगे। अनेक लेखक और कवि बालसाहित्य को भी समृद्ध और समुन्नत करने के कार्य में जुट गये। अब उनका कार्य बच्चों के लिए पाठ्य पुस्तकें या सीख भरी पुस्तकें लिखना ही नहीं रह गया। वह ऐसा बालसाहित्य लिखने की दिशा में तेजी से अग्रसर होने लगे जो बच्चों के लिए ज्ञानवर्द्धक, प्रेरणादायक होने के साथ-साथ मनोरंजक भी हो। समाज में बच्चों के स्वतन्त्र व्यक्तित्व और उसे विकसित करने के उनके अपने अधिकार को पहचाना जाने लगा। लेखकों का एक बहुत बड़ा वर्ग इन बच्चों के लेखन कार्य में जुट गयाऔर बहुत से प्रकाशक मैदान में आकर बालसाहित्य की पुस्तकों को आकर्षक ढंग से प्रकाशित करने लगे। विदेशों से आयात की गई मशीनों से ऐसे प्रेस लगाये जाने लगे जिनसे बच्चों के लिए लिखी पुस्तकों को सुन्दर सचित्र छापा जा सके। वास्तव में देखा जाये तो भारतीय भाषाओं में बालसाहित्य के लेखन और प्रकाशन के रूप में एक अलग विधा के रूप में विकसित होने का यही काल है।

भारतीय भाषाओं में बालगीतों के लेखन के प्रेरणा स्त्रोत और सामाजिक परिस्थितियां सारे देश में लगभग एक सी रही है। विभिन्न भाषा-भाषी क्षेत्रों की भौगोलिक और प्राकृतिक परिस्थितियों में अवश्य अन्तर रहा है। जैसे राजस्थान की भूमि रेतीली है वहां वर्षा बहुत कम होती है, काश्मीर और हिमाचल प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश का कुछ भाग बहुत ऊंचे पर्वतों पर है और वहां पूरे वर्ष जाड़े का मौसम रहता है। उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, बंगाल और मध्य प्रदेश में अनेक नदियां बहती हैं और यहाँ के मैदान कृषि की दृष्टि से हमेशा हरे भरे रहते हैं। केरल छोटी पहाड़ियों और बड़ी-बड़ी झीलों का प्रदेश है। इस देश के अनेक प्रदेश समुद्र से मिले हुए और अनेक प्रदेश समुद्र तट से इतनी दूर हैं कि वहां के बहुत से निवासियों ने समुद्र का विराट रूप कभी देखा भी न होगा। इन प्राकृतिक परिस्थितियों और रहन-सहन, रीति-रिवाज और खान-पान की विभिन्नताओं का प्रभाव प्रत्येक प्रदेश के साहित्य पर पड़ना स्वाभाविक है और बालगीत साहित्य भी उससे सर्वथा अछूता नहीं रह सका। पर विभिन्न भारतीय भाषाओं में लिखे गये बालगीतों का तुलनात्मक अध्ययन एक अलग विषय है। उनमें जो बालगीत लिखे जाते रहे हैं उनका अभी गंभीरतापूर्वक अध्ययन भी नहीं हुआ है। उनको बच्चों की दृष्टि से देखकर समुचित मूल्यांकन करने की आवश्यकता है। यह तो समय ही बतायेगा कि भारतीय भाषाओं में जितना बालगीत साहित्य अभी तक लिखा गया है उसमें से कितना चिरस्थायी महत्व का है और कितना आगे चलकर बच्चों द्वारा भुला दिया जायेगा।

बंगला बालगीत -- बंगाली भाषा में आधुनिक अर्थ में बालगीतों की रचना का प्रारम्भ बीसवीं शताब्दी में हुआ और उसका प्रथम चतुर्थांश बालसाहित्य की दृष्टि से स्वर्ण युग कहलाता है। उस काल में 'बालक बन्धु', 'सखा', 'बालक', 'साथी', 'मुकुट' आदि अनेक बालोपयोगी पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ। उनमें लिखने वाले रवीन्द्रनाथ ठाकुर, जोगेन्द्रनाथ सरकार, द्विजेन्द्रनाथ बोस, नवकृष्ण भट्टाचार्य जैसे सुप्रसिद्ध लेखक और कवि थे। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'शिशु' और 'मुकुट' पुस्तकें बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में ही प्रकाशित हुई थीं। उनकी 'छेले-वेला', 'शिशु भोला नाथ' आदि और भी कई पुस्तकें तथा जोगेन्द्रनाथ सरकार की 'हंसी खुशी' पुस्तकें जो बाद में प्रकाशित हुई बच्चों ने बहुत पसन्द कीं। दूसरे दशक में 'शिशु' और 'सन्देश' नामक पत्रों ने लेखकों का एक ऐसा वर्ग तैयार किया जिनमें से कई ने बच्चों के लिए बड़े सुन्दर बालगीत लिखे। बंगाली के सर्वाधिक लोकप्रिय बाल साहित्यकार सुकुमार राय

भी बंगाली बच्चों में उतनी ही लोकप्रिय है जितनी अपने प्रथम प्रकाशन के समय थी। तीसरे दशक के बालगीतकारों में सुनिर्मल बसु का नाम उभर कर सामने आया उन्होंने बच्चों के लिए हास्य व्यंग्य के बहुत से बालगीत लिखे हैं। बंगाली में बहुत छोटी आयु के बच्चों के लिये लिखे गीतों को 'छड़ा गीत' कहते हैं।

बंगला में छड़ा गीत लिखने की परम्परा बहुत पुरानी है। उसका निर्वाह आज तक उसी रूप में होता चला आ रहा है। छड़ा गीतों में पारिवारिक, सामाजिक या प्राकृतिक दृश्यों को इस प्रकार सजीव बनाकर प्रस्तुत कर दिया जाता है कि उसकी एक छाप बच्चों के मन पर पड़कर उसे प्रमुदित कर देती है या उनमें बच्चे को गुदगुदाने-हंसाने के लिए कोई ऐसी बात कह दी जाती है जिससे वह प्रसन्न हो उठे। संगीतात्मकता उन गीतों में विशेष रूप से पाई जाती है। निम्न छड़ा गीत में विवाह करके बहू को लेकर लौटते समय का दृश्य है -

भाइ आसबे बियें करे / टग बगिये घोड़ाय चढ़े
बौ आसिबे पाल किटकिटाते / शानाइ शिंगा बाजबे साथे

अर्थात् (ब्याह रचा टिक-टिक घोड़े पर / आयेगा मेरा भाई
बहू पालकी में आयेगी / खूब बजेगी शइनाई।)

इस प्रकार के शिशुगीत बच्चे इसलिये पसंद करते हैं, क्योंकि उनमें वर्णित दृश्य उनके जाने-पहचाने होते हैं।

इसी प्रकार इन दो गीतों में पारिवारिक व प्राकृतिक दृश्यों के चित्र हैं, जो बच्चों का मन मोहने वाले हैं -

चाँदा मामा भाजेन बड़ा
आमरा सेथाय गेलाम खेते
चाँदा मामार मेजाज कड़ा
बसेन तिनी तिनी मोड़ा पेते
थालाय निजे खान ने खाबार
मोदेर दिलेन पेया लेते
जेइ पेयाला भांगलो मामार
आगुन हये उढेल ताते

अर्थात (दाल पकौड़ी बना रहे हैं चंदा मामा
खाने पहुंचे राघव रंजन शंकर स्यामा
मामा मूढ़े पर बैठे हैं
वह सबसे रहते ऐंठे हैं

खुद खाते हैं थाली में
हमको देते प्याली में
प्याली टूट गई गिरकर
वह नाराज हुए हम पर।)

तथा - किचरि मिचिर आउयान जूड़े
ऐ जे पारवी आसहे उड़े
ठोटे आने झूम झूमिता
पाताय आने गुड़ जे मिठा
देवे तारा खुकूर हाते
भाव करवे खुकूर साथे

अर्थात् (किचिर मिचिर कर वह जो पंछी
हैं उड़ उड़ कर आ रहे
दबा चोंच में खेल-खिलौने
पत्ते में गुड़ ला रहे।
लाकर गुड़ मुन्नी को देंगे
उसके साथ हंसे खेलेंगे।)

सुनिर्मल बसु के इस प्रकार के छड़ा गीत बंगाल के बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुए हैं।

एक फूली हुई कचौड़ी को देखकर खाने के लिए लालायित बच्चों की जो भावना होती है, उसका बड़ा स्वाभाविक चित्रण मोहित घोष ने अपने इस गीत में किया है -

फूलको लूची फूलको लूची / पेट्टा फूले डाक
फूलको लूची फूलको लूची / पेटेर भीतर फाक
फूलको लूची एकटु सूजी / एकटु आलुर दम
केल्ला पाते तार सवेते / पाइ जाति चमचम

(फूली हुई कचौड़ी, फूली हुई कचौड़ी! तुम्हारा पेट ढोलक की तरह फूला हुआ है। फूली हुई कचौड़ी, फूली हुई कचौड़ी! तुम्हारे पेट में एक फाक है। एक तो फूली हुई कचौड़ी सूजी की बनी है, दूसरे उसमें आलू भरा है। यदि इसके साथ हम चमचम भी पाते तो कितना अच्छा होता!)

सुकमलदास गुप्ता भी बंगाली में छड़ा गीतों के एक सुप्रसिद्ध कवि हैं। बंगाल में दसवीं के दिन दुर्गा पूजा का बड़ा महत्व है। बच्चों और बूढों पर उस दिन

उल्लास का एक नशा-सा छा जाता है। उस दिन के उत्सव की समाप्ति से बच्चों की पहचान कराने वाला उनका एक छड़ा गीत है –

डूम डूम डाकुर डुकुर डूम डूम डूम डूम
दशिमतै भाँगा डासर भांगलो पूजोर धूम
दुर्गा तेइतो मर्त्य धामें दुर्गा गेछेन फिरे
सवार चोखे हल हलिये मेघे ऐसेह छे घिरे
दुर्गा नेइगो मर्त्य धामे स्वर्गे गेछेन डइ
नन्दी नाचे, भृंगी नाचे भा ऐसे छेन कइ।
भूतनाथे रइ ध्यान भंगेछे भूत गुलोरइ धूम
डूम डूम डूम डाकुर डुकुर भाँगलो गुलोरइ धूम।

(डूम डूम डाकुर डुकुर दसवीं के दिन टूटे घंटे के शब्द से पूजा का आनंद समाप्त हुआ। दुर्गा अब मर्त्यलोक में नहीं है। वह लौट गई है। सबकी आंखों में अब पानी से भरे मेघ आ गये हैं। दुर्गा अब मर्त्यलोक में नहीं है। वह स्वर्ग को चली गई है। नन्दी और भृंगी नृत्य करते हैं और कहते हैं, मां तो आई थी, वह कहाँ है? भूतनाथ का ध्यान टूट चुका है। भूतों की निद्रा भी टूट चुकी है। डूम डूम डाकुर डुकुर।)

हिन्दी में छड़ा गीतों की तरह शिशुगीत लिखने की कोई प्राचीन परम्परा नहीं रही। पुराने कवियों में सबसे पहले डॉ. विद्याभूषण विभु (1894-1965) ने कुछ शिशुगीत लिखे थे। स्वर्णसहोदर के शिशुगीतों की दो पुस्तकें 'चगन मगन' और 'गिनती के गीत' सन् 1950 में प्रकाशित हुई। रामकृष्ण शर्मा खद्दर जी ने बच्चों के लिए केवल शिशुगीत ही लिखे हैं। सेवकजी की 'दूध जलेबी' सन् 1959 में प्रकाशित हुई। सन् 1960 के बाद तो हिंदी में बहुतायत से शिशुगीत लिखे जाने लगे। पर उनमें कोई रूढ़िबद्धता न रहकर विषय-वैविध्य दिखाई दिया। भाव और शैली की दृष्टि से हिंदी शिशुगीतों का क्षेत्र बंगला छड़ा गीतों से कहीं अधिक व्यापक है। हिंदी में बंगला छड़ा गीतों की शैली पर बहुत से शिशुगीत लिखे गये हैं। डॉ. श्रीप्रसाद के इस शिशुगीत में अक्सर घरों में संपन्न होने वाली नृत्य- संगीत गोष्ठी की झलक है –

कान हिलाता कुत्ता आता
मुंह लटकाता शेर
हाथी आता झूम-झूम कर

लगी नाचने तुरत मुटल्ली
बिल्ली पहने फ्राक
बंदर लगा बजाने बाजा
ताक धिना धिन ताक।

रामकृष्ण शर्मा खद्दरजी के निम्न लिखित शिशुगीत में मोहित घोष के छड़ा गीत जैसा ही उल्लास का भाव है। स्कूल के भोजनावकाश में बच्चे भागकर गुलगुले बेचने वाले के पास पहुंच जाते हैं और कितने प्रसन्न होते हैं, देखिए -

छुट्टी हुई खेल की
चढ़ी कढ़ाई तेल की
सुर सुर उठता बुलबुला
छुन छुन सिकता गुलगुला।
भुलभुला और पुलपुला
मीठा-मीठा गुलगुला।

विष्णुकांत पांडेय की 'वीणा गाये हंसे विनोद', 'मीठे मीठे प्यारे गीत' आदि शिशुगीतों की चार पुस्तकें बड़ी सुंदर सचित्र प्रकाशित हुई हैं। उनके अधिकांश शिशुगीत बंगला छड़ा शैली के हैं। चंद्रपालसिंह यादव 'मयंक' की 'शिशुगीत' (भाग 1-2) सुंदर शिशुगीत संकलन है। 'मिस्टर पॉल' तो बच्चों को गुदगुदाने में अत्यंत सक्षम है -

मिस्टर पॉल मिस्टर पॉल
गए खेलने को फुटबॉल
नाटे-मोटे मिस्टर पॉल
उस दिन दिखला गए कमाल
मारी शॉट, उड़ा फुटबॉल
खुद भी गिरे उछल कर पॉल।

इसी तरह मंयकजी के 'चिड़िया रानी' में बंगला छड़ा गीतों जैसा उल्लास का भाव है -

चिड़िया रानी चिड़िया रानी
खा लो दाना, पी लो पानी
खा-पीकर तुम मत उड़ जाना
अपना मीठा गीत सुनाना
ऊपर जातीं नीचे आतीं
मेरे मन को बेहद भातीं।

प्रयाग शुक्ल और शेरजंग गर्ग की 'सरस्वती' और 'सुमन बालगीत' पुस्तकें भी वास्तव में शिशुगीत की ही पुस्तकें हैं। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना और आचार्य अज्ञात ने नानसेंस राइम्स के ढंग के कुछ अच्छे प्रयोग किये हैं। सर्वेश्वर का शिशुगीत 'बतूता का जूता' बेहद चर्चित है। आचार्य अज्ञात का यह शिशुगीत भी बंगला छड़ा गीत से किसी मायने में कम नहीं -

हरी मिर्च का किला बनाया
धनिये का दरवाजा
बैंगन की झट तोप लगाई
लड़े नकलची राजा।

हिन्दी बालगीतों और बंगला की शिशु कविताओं में भावभूमि लगभग एक-सी रही है, क्योंकि बंगला और हिन्दी भाषी क्षेत्र बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश आदि के प्राकृतिक दृश्यों और सामाजिक जीवन में कोई विशेष अंतर नहीं है। हिन्दी में राष्ट्रीय बालगीत बहुत लिखे गये, बंगला में इतने अधिक नहीं। पर हिन्दी का कोई भी राष्ट्रीय गीत बंगला के 'जन गण मन अधिनायक जय हे' तथा 'वन्दे मातरम' की तरह देश भर में मान्यता प्राप्त न कर सका। बंगला के बालगीतकार राजनीति के क्षेत्र में हिन्दी कवियों की तरह वीरपूजा की भावना से प्रेरित नहीं रहे हैं। बंगला की एक शिशु कविता 'तेलेर शीशी' में राजनीति और नेताओं पर ऐसा प्रच्छन्न व्यंग्य है कि बच्चों के लिए वह एक मनोरंजक कविता बन जाती है -

तेलेर शीशी भांगल व ले खूकुर परे राग करो
तोमार ये सब बूड़े खोका बांगला भेंगे भाग करो।
तार बेला?

(अगर तेल की शीशी टूटे, तो तुम उस छोटी-सी बच्ची पर बहुत बिगड़ते हो, लेकिन तुम सब बूढ़े जब बंगाल के टुकड़े कर देते हो, तो क्या होता है?)

हिन्दी में रवीन्द्रनाथ टैगोर की 'यदि खोका न हये आमि हतेम कूकुर खाना' जैसे कई बालगीत लिखे गये हैं, जिनमें बच्चे चिड़िया, तोता आदि बनने की कल्पना करते हैं। उदाहरण के लिए पं. सोहनलाल द्विवेदी के दो बालगीत - 'अगर कहीं मैं तोता होता' या 'जी होता चिड़िया बन जाऊं।' पर टैगोर जैसी भावप्रवणता उनमें नहीं है। सुकुमार राय के छड़ा गीत 'बाबूराम सापुड़े' में एक बच्चे के मनोभावों की सुंदर झांकी है -

बाबूराम सापुड़े / कोधा जाय बापू रे
आये बाबा देखे या / दू टो सांप देखे या

ये सापेर चोख नेइ / शिर नेइ नख नेइ
छोटे ना कि हांटे न / काउ के ये काटे न
करे न को टूंश टांश / नेइ कोन उत्पात
खाये शुधू दूध-भात।
सेइ साप ज्यानतो / गोटा दुई आनतो
तेड़े मेरे डांडा / करे दिई ठांडा।

यहाँ बच्चा बाबूराम सपेरे से कहता है कि यहाँ दो सांप रख दो। ये सांप तो अच्छे नहीं हैं, क्योंकि न फुंकारते हैं और न काटते हैं। मुझे ऐसे जिंदा सांप दो, जिन्हें मैं डंडा मारकर ठंडा कर दूं।

हिन्दी में बालस्वभाव की इतनी गहराई से परख करने वाले बालगीत कम ही मिलेंगे। पर अब बालगीतकार नई-नई शैलियों में प्रयोग करने लगे हैं। अतुकांत शैली में भी कविता लिखी जाने लगी है। भवानीप्रसाद मिश्र की 'तुकों का खेल' इसी कोटि की है।

हिन्दी और बंगला में बालस्वभाव और माता के वात्सल्य को चित्रित करने वाले गीत भी हैं। सुभद्राकुमारी चौहान की 'मेरा बचपन' में मां-बेटी का संवाद देखिए-

'मां ओ' कहकर बुला रही थी / मिट्टी खाकर आई थी
कुछ मुंह में कुछ लिए हाथ में / मुझे खिलाने लाई थी
मैंने पूछा, 'यह क्या लाई?' / बोल उठी वह 'मां काओ'
फूल फूल में उठी खुशी से / मैंने कहा तुम्हीं खाओ।

बंगला बालगीत है -

जड़ाये मायेर गला शिशु को मासि
मां! मां! तो मोर कत भाल वासि?
कत भाल वास घन? जननी शुधाय
'ऐत' बलि दुई हात प्रसारि देखाय
'तुमि का आमारे भाल वास कत खानि?'
का बलेन, 'माप तार आमि नाहि जानि?'
'तबू कत खानि बल' यत खान घरे
तोमार मायेर बूके 'ने हे तार परे'
तार बाड़ा भाल बासा पारि ना वासिते
'आमि पार' बले शिशु हासिते हासिते।
लिपट गले से अपनी मां के छोटा बच्चा बोला

कितना प्यार तुम्हे करता हूं मां मैं सचमुच भोला
प्यार मुझे करते हो, अच्छा, मां ने पूछा 'कितना?'
दोनों हाथों को फैलाकर बच्चा बोला, 'इतना।'
फिर उसने पूछा बतलाओ, 'मां मुझको तुम भी तो
मेरी प्यारी मां तुम कितना प्यार मुझे करती हो?'
मां बोली, 'इसका तो मुझको कुछ अंदाज नहीं है
मां के प्यार सिंधु की बच्चा पाता थाह नहीं है?'
फिर भी कहो कहो मां, बच्चा बोला, 'कितना? कितना?'
'कोई मां अपने बच्चे को कर सकती है जितना'
उससे अधिक प्यार करने को मेरे पास नहीं है
पर मेरे तो पास प्यार है बहुत अधिक उससे मां
अब तो तू समझी कितना है प्यार मुझे तुझसे मां?

इन दोनों में पहली कविता में मां और बेटी के स्वाभाविक प्रेम का चित्रण है, पर दूसरी में बच्चे का मां के प्रेम से होड़ करके खुद को ज्यादा बड़ा साबित करना कविता को अधिक रोचक बना गया है।

किसी भी कल्पित कथा को आधार बनाकर हिंदी और बंगला में वार्तालाप शैली में बालगीत लिखे गये हैं। पर किसी कथा को पद्यबद्ध कर देने से ही वह बालगीत नहीं बन पाती। बंगला में लंबी पद्यकथाओं को शिशु कविता के अंतर्गत नहीं माना जाता।

हिन्दी और बंगला के बालगीतों के इस तुलनात्मक विवेचना से स्पष्ट है कि इन दोनों भाषाओं में शिशु और बालगीत साहित्य समान रूप से समृद्ध है। बंगला में उसका विकास बीसवीं शताब्दी के प्रथम चतुर्थांश में ही बहुत तेजी से हो चुका था, पर हिंदी में वह स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही विशेष रूप से 1960 के बाद ही समृद्ध हुआ। सुकुमार राय, जोगेंद्रनाथ सरकार, सुनिर्मल वसु, सुखलता राय आदि के बालगीत लेखन की परम्परा का निर्वाह आगे चलकर कालिदास राय, कुमुदरंजन मल्लिक, वेणु गांगुली, अजित कृष्ण दोष, सतीन्द्रनाथ लाहा, ननुगोपाल सेन गुप्ता, मनोजीत बोस, धीरेन बल, हरेन घटक, शैला चक्रवर्ती, उपेन्द्रचन्द्र मलिक, आशा देवी, रविदास साहा, रामेनदास आदि कवियों ने किया। उसके कुछ समय बाद मोहित घोष ने 'टापुर टुपुर' लिखकर बंगला बालगीतों के इतिहास में एक कीर्तिमान स्थापित किया। उनकी यह पुस्तक भाव, भाषा और छंदों की दृष्टि से एक अनूठी कृति है और बच्चों में सुकुमार राय की 'अबोल तबोल' की तरह ही लोकप्रिय हुई। सन्

60-61 में उसे केन्द्रीय सरकार ने पुरस्कार देकर सम्मानित किया। इसके बाद सन् 62-63 में निर्मलेन्दु गौतम की 'खेलार राज्य' पुस्तक को भी राष्ट्रीय पुरस्कार मिला। मंजुल सेन की 'पडुआ' भी शिशु चित्त को प्रफुल्लित करने वाली बालगीतों की सुन्दर-सचित्र पुस्तक है। सुकमलदासगुप्ता की 'छड़ा दिलाये छाड़िये', 'मिलित छड़ा' और 'धूम मांगानो छड़ा' की गीतों की बड़ी अच्छी पुस्तकें हैं। शिप्रा पुरकायस्थ कृत 'चिड़ियाखाना देखे एलाम' (दो भाग) भी पशु-पक्षियों से परिचित कराने वाले बालगीतों की अच्छी पुस्तकें हैं। आज भी बंगला बालगीतों के क्षेत्र में उत्कृष्ट लेखन हो रहा है।

तमिल बालगीत -- प्राचीन काल में तमिल की प्रसिद्ध कवयित्री अब्बैयार ने गीति शैली में बहुत ही रोचक पुस्तकें दीं। सच पूछो तो वही तमिल बाल साहित्य की जन्मदात्री हैं। अकार से लेकर सभी स्वराक्षरों को क्रम से रखकर उन्होंने नीति का पाठ भी पढ़ाया और अक्षरों का अभ्यास भी कराया। जैसे 'अंरचेय विरुम्बु' (धर्म करना चाहो), 'इगववदु करवेल' (निंदा न करना), 'ईवदु विलक्केल' (दान देना न छोड़ो), 'आरुवदु शिन्नं' (गुस्सा ठंडा कर दो) आदि। बच्चे उन्हें घेर लेते थे और परस्पर सवाल जवाब द्वारा धनोपार्जन की जरूरत, सत्संग की महिमा, भक्ति का महत्व जैसे विषय सरल कविताओं द्वारा समझाई जाती थी। ये प्रश्नोत्तरपरक, नीति वचनों से सजी हुई छोटी-छोटी कविताएं ही तमिल बालकविता का उद्भव मानी जा सकती हैं।

शिशुओं के भोलेपन और उनसे मिलने वाले स्वर्गिक आनंद का वर्णन तिरुवल्लुवर जैसे कवियों ने भी किया है। बाद में भक्तिकाल में 'पिल्लैत् तमिष' नाम से एक साहित्यिक विधा का ही जन्म हो गया, जिसमें शिशु के तीसरे महीने से लेकर इक्कीसवें महीने तक के विकास और बाल लीलाओं की मनोरम झांकी होती थी। कुछ कवियों ने इसमें उम्र सीमा बढ़ा दी। लड़की के विकास-क्रम को उसके सयानी होने तक चित्रित किया, तो लड़के के सोलह वर्ष का होने तक की घटनाएं समाहित की। इसमें वात्सल्य तथा अद्भुत रसों की प्रधानता होती थी। विघ्नेश्वर, सुब्रह्मण्य, महाविष्णु, उमा, हनुमान आदि देवी-देवताओं की बाललीला के मनोरम वर्णन से इन्होंने बालक-बालिकाओं का मनोरंजन किया। बाद में इस विधा में राजाओं, दानियों एवं नेताओं के जीवन भी समाहित हो गये। इनमें मदुरै मीनाक्षियम्यन् पिल्लैत् तमिष और कुलोत्तुंग चोल पिल्लैत् तमिष बहुत प्रसिद्ध हैं।

आधुनिक काल में महाकवि सुब्रह्मण्य भारती और कविमणि देशिक विनायक पिल्लै ने बालोपयोगी गीत लिखे। भारती ने 'नई आत्तिच्च चुडि' नामक पुस्तक की

रचना की। तमिल साहित्य में नवयुग का प्रारंभ भारती से ही माना जाता है। उनकी बच्चों के लिए नीतिपदों की इस पुस्तक के अतिरिक्त 'पाप्पा पाटटु' नामक पुस्तक भी है, जिसके सरल छन्दों में लिखे बालगीत बच्चों को खेल-खेल में शिक्षा भी देते हैं। उनके वह बालगीत इतने सरल है कि बच्चों को बहुत जल्दी याद हो जाते हैं। भारती के अतिरिक्त का. नम सिवाय मुदालियर ने भी सरल भाषा-शैली में सानुप्रास पदों की रचना की है, जो बच्चों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। उनके बहुत से पद पाठ्य पुस्तकों में भी संकलित हैं। कवि मणिदेशिक विनायकम पिल्लै के पदों का संकलन 'मलरुम मालैक्कुम' बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुआ है। उनके 'इव मथि उरल', 'बोम्मै कल्याणाम' और 'कुलंदै चेतवम' काव्य संग्रहों की रचनाएं भी बच्चों के लिए बड़ी रोचक बन पड़ी हैं। 'कुलंदै चेतवम' को सन् 1957 में मद्रास (वर्तमान चेन्ने) राज्य सरकार ने पुरस्कृत किया था। तमिल के आधुनिक बालगीतकारों में कनक सुब्बु रत्नम, मइयाली सिवामूर्ति, परियस्वामी तूरन, अलवलियप्पा ने अच्छी ख्याति अर्जित की है। इनमें अलवलियप्पा तो बच्चों में अपनी लोकप्रियता के कारण 'कुलन्दै कविजर' (बच्चों के कवि) कहलाते हैं। उनका 'मलरुम उल्लम' नामक बालगीत संग्रह बहुत प्रसिद्ध हुआ है। उसमें बच्चों की आयुवर्ग के हिसाब से बालगीत संकलित किये गये हैं। उनकी 'लड्डू' शीर्षक कविता रोचक ढंग से गणित सिखा देने के कारण बहुत पसंद की गई है। उनकी इस पुस्तक पर उन्हें राज्य और केन्द्र सरकार द्वारा पुरस्कार भी प्राप्त हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने ईसप की कथाओं और गांधी के जीवन की घटनाओं को भी पद्य में लिखा है। उनकी वह पुस्तकें भी अपनी सरल छंद शैली और गेयता के कारण बच्चों द्वारा बहुत पसंद की गई हैं। मइलै शिवमंतू और परियस्वामी तूरन भी इसी प्रकार बालगीत साहित्य का भंडार भरने में लगे रहे हैं। मइलै शिवमंतू का 'मुन्तू पाडल कल' और परियस्वामी तूरन का 'आनैयुम पूनैयुम' नामक बालगीत संग्रह बड़े सुंदर सचित्र प्रकाशित हुए हैं। 'मुन्तू पाडल कल' केन्द्रीय सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हो चुका है। तमिल का बालगीत साहित्य का भंडार भरने वाले अन्य कवियों में पी.आर.चूड़ामणि, श्री ताणिकै उलकनाथन, सुरभिं, कुयिलत कोत्त मंगलम सुब्बु, नाग मुत्थैया, नारा माच्चियप्पन, भारतन, तांबि श्रीनिवासन तमिल्लकन, त्रिची वासुदेवन के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। श्रीलंका के तमिल कवियों में नवालियूर श्री सोमसुन्दर पुलवर, यालपाणन, तिमिलै तुमिलन आदि ने भी अच्छी ख्याति अर्जित की है। श्री के.एन. अरुणन्दि के अथक परिश्रम से श्रीलंका के बालकवियों की बालोपयोगी कविताओं का एक सुंदर संकलन 'पिल्लै पाडु' नाम से प्रकाशित हुआ है।

तेलुगु बालगीत -- तेलुगु के बालगीतों का प्रारम्भ कुन्डकूड़ि वीरासिलिगम (1848-1919) से माना जा सकता है। उन्होंने 'नीति दीपिका' नाम से बच्चों के लिए नैतिक शिक्षा देने वाले पद्यों का एक संकलन प्रकाशित कराया था। एम.एन. व्यंकटास्वामी ने इंडियन एंटीक्यूटी भाग 35 में 1906 में तेलंगाना के लोकगीतों पर एक लेख लिखा है, जिसमें बाल लोकगीतों का भी उल्लेख है। उसके बाद तो स्वतंत्रतापूर्व तक बी.बी. रंगैटया शेट्टी का 'बालिके भूषणमु' (1916), एन. गंगाघरन कृत 'सोला येरु' हरि अउदी सिसु कृत 'जनपद वाङ्मय', योल्लेरे कृत 'मधूरे कवितालु', वेडुले सत्यनारायण शर्मा कृत 'चिल्लाना पटाला' (1938), वेंटुरि प्रभाकरे शास्त्री कृत 'पाटा पाटालु' (1941) तथा गौड़ेपति व्यंकट सुब्बैय्या कृत 'नव्वुलु पुव्वलू' (1942) आदि कई संकलन प्रकाशित हुए। तेलुगु में लोरियों का प्रारंभ पंद्रहवीं शताब्दी के 'तल्लापाका अन्नामाचार्या' से माना जाता है। बाद के कवियों ने उनका परिमार्जन किया। उनमें से लाली बांगारुमामा, लालि माअम्मा, चंदामामारावे जाबिल्ली रावे, राआमा लालि मेघा स्यामा लालि आदि लोरियां तो बहुत लोकप्रिय हुई। लेकिन 1900 के बाद बाल साहित्यकारों में व्यंकट प्रवीतीश्वरा कावुलु और डॉ. गिडुगु सीतापति के नाम विशेष आदर के साथ लिये जाते हैं। व्यंकट प्रवीतीश्वरा काबुलु ने बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही 'बाल कवितावली' नामक एक संकलन प्रकाशित किया था, जिसमें कौआ, पतंग, टीला आदि बच्चों के सुपरिचित विषयों पर सरल कविताएं थी। डॉ. गुडुगु सीतापति की गद्य और पद्य रचनाओं की एक पुस्तक 'बालानन्दम्' नाम से प्रकाशित हुई थी। उनकी 'चिलुकम्प पेण्डिल', 'रैलु बण्डि', 'मा बाला' आदि गेय रचनाएं विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। 'बालानन्दम्' तेलुगु बालसाहित्य की केन्द्र सरकार द्वारा पुरस्कृत प्रथम पुस्तक है। बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में चिन्ता दीक्षितुलु नामक एक बड़े प्रभावशाली बालसाहित्यकार हुए। उन्होंने बच्चों की कविताओं के कई संकलन ही प्रकाशित नहीं किये, स्वयं भी सभी आयु वर्ग के बच्चों के लिए मनोरंजक कविताएं लिखीं। बच्चों के एक और मधुर कवि बी. वी. नरसिंह राव ने दो पुस्तकें 'बालरसालु' तथा 'पालवडि पाटलु' लिखी हैं। इनमें से 'पालवडि पाटलु' की प्रत्येक कविता एक मधुर मिठाई है। यह पुस्तक केन्द्रीय सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हो चुकी है। उनके 'वडि वन्दिखाना' तथा 'मल्लि बाबू अल्लरि' बालगीत बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुए हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने कुछ पद्य कथायें भी लिखी हैं, जिनमें 'बोम्मरिल्लु' और 'गेय कथालु' विशेष उल्लेखनीय हैं। नार्ल चिरंजीवी और वेजेंड संबा सिवा राव के रचे बालगीत भी तेलुगु भाषी बच्चों ने बहुत पसंद किये हैं। आधुनिक काल में वेंकटा पार्वती स्वराकुवलू कृत 'बाल

लोकप्रिय बालगीतों की पुस्तकों में 'प्रियदर्शी', 'बाललोक', 'बाल रसालु', 'पिल्लल पाटलु', 'पिल्लल ग्रोवि', 'वेणु विलासम्', 'बालभारती', 'बालानन्दगयालु', 'चंदामामा', 'जेजि सामय्य पाटलु', 'गज्जेलु घंटलु' विशेष उल्लेखनीय हैं। तेलुगु में त्योहार गीत, हास्य गीत, पहेली गीत, शिक्षा गीत, खेल गीत, संस्कृति गीत भी खूब लिखे गये हैं।

कन्नड़ बालगीत -- कर्नाटक प्रदेश की भाषा कन्नड़ में बालसाहित्य लेखन का प्रारंभ बीसवीं शताब्दी से ही माना जाना चाहिए। इससे पूर्व वहाँ जो भी पद बच्चों के लिए उपलब्ध थे, वह मौखिक रूप में ही थे। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में मैसूर निवासी च. वासुदेवय्या तथा श्रीनिवास राव ने 'बालबोध' नामक पुस्तकें लिखीं, जिनके कुछ अंश पद्य के भी थे। उसके बाद आयु में कुछ अधिक बड़े बच्चों के लिए रीडर्स लिखी जाने लगीं, जिनमें कुछ पद्य रचनायें भी होती थीं। ए.एस. पुट्टण्णाजी ने 'नीति चिन्तामणि' लिखा और शांत कवि, व्यंकटरंगी कट्टी, यंप्युटि चेन्नबसप्प, पंजे मंगेश राय, ए.एस. कामत आदि ने भी बालसाहित्य की श्रीवृद्धि में विशेष योगदान दिया। इस समय के प्रकाशित पद्य संग्रहों में 'धारणी माल मध्य दोलगै', 'इट्टरे स गणेयदि', 'नौगव नैलिन', 'कोरलेविड्डुव पाडिला' के नाम उल्लेखनीय हैं। श्री एस. जी. नरसिंहाचार्य ने सरल, सुबोध, गेय छंदों में अनेक पद्य बच्चों के लिए लिखे हैं और कालिदास के रघुवंश काव्य के राजा दलीप और अज की कथाओं को पद्यबद्ध किया। पंजे मंगेशराव की 'नागर हावे हाबोल हूबे' आज भी मैसूर राज्य भर के बच्चों की जुबान पर है। डॉ. शिवराम कारंत ने 'मक्कल कूटि' नामक बालसंस्था की स्थापना करके छोटे बच्चों के लिए बहुत से शिशुगीतों की रचना की। उनके 'ढ़ ढ़ ढोलु' आदि शिशुगीत बहुत लोकप्रिय हुए। उसी काल में होयसलजी की 'मगुविन कुगू' तथा 'बंदबंदा संतमण्ण' आदि रचनाएं भी बच्चों ने बहुत पसंद कीं।

स्वतंत्रता के बाद कन्नड़ में बालकविताओं की जो पुस्तकें प्रकाश में आई, उनमें प्रा. डि.एल. नरसिंहाचार कृत 'गौबिन हाडु', म.ब. जहांगीरदार कृत 'गीत लीले' तथा 'मक्कल गीत गलु', होयसलु कृत 'चंदमामु' और कोल कुदरे कवेपुंजी कृत 'विंदरजोगी' और 'हालूरु', वि.वि. सनादि कृत 'गृहपंचमी', 'गुलाबी गोंचलु' और 'जिलेवी झुण झुण', अजित कुमार कृत 'कारंजी', काव्यानन्द कृत 'तुप्पा रोट्टि गेगेगे', शै. गु. विरादर कृत 'नन्न हाडु' श्याम भट्ट कृत 'मंगल ग्रहिके' आदि पुस्तकें विशेष प्रसिद्ध हुई है, इनके अतिरिक्त 'मुददु पददु', 'कलेंद कडेले' आदि पुस्तकें भी उल्लेखनीय हैं। कन्नड़ के बालगीतकारों में पुत्तपा, बेन्द्रे, कैलाशम, एम.आर. तथा श्रीनिवास मूर्ति ने भी अपनी रचनाओं द्वारा पर्याप्त ख्याति अर्जित की है।

स्वतंत्रता से पूर्व कन्नड़ बालकविता के विषय सीमित थे। राष्ट्रीयता, ईशप्रार्थना, प्रकृति और पशु-पक्षी जगत तक ही बालकवियों की दृष्टि रहती थी। आधुनिक युग में नये विषयों पर बच्चों के लिए कविताएं लिखी गई। जि.पी. राजरत्नम् के बीस काव्य संग्रह हैं। इनमें 'तुत्नूरि' 'नायीमरि' बहुत प्रसिद्ध हैं। कुवेंपु की 'विंदरजोगी', 'कथन कवन', 'हावाउगित्ती', 'हुवाउगित्ती', सिद्दव्या पुराणिक की 'अज्जन कोन्निदुनन्नय कुदुरें' भी कन्नड़ बालकविता के कीर्तिस्तम्भ हैं। पन्नकल सीताराम भट्ट की 'चिण्णन चील' सिसु संगमेश की 'नन्न', एस. नागराज शेट्टी की नविलुगरी, ए. के. रामेश्वर की 'नन्न' भी उल्लेखनीय कृतियां हैं। अन्य बालकवियों में पा.भी. पाटील, डॉ. एच. एस. वेंकटेशमूर्ति, डॉ. लक्ष्मीनारायण भट्ट, राजेन्द्र गडाद, कविताकृष्ण, प्रदीपकुमार हेवि, आनंद पाटील, चंद्रगौड कुलकर्णी, राजशेखर कृक्कुंदा, जंबुनाथ कच्याणी प्रसिद्ध हैं।

मलयालम बालगीत -- मलयालम उस केरल प्रदेश की भाषा है, जो एक ओर अपनी पूरी लंबी सीमा तक विस्तृत अरबसागर से घिरा हुआ है और जिसमें पश्चिमी घाट की छोटी-छोटी पहाड़ियां चारों ओर झीलों के जल से घिरी हुई हैं। वहाँ बालगीतों की उत्पत्ति मल्लाहों के उन अर्थहीन स्वरों से हुई, जो वह नाव चलाने में जोर लगाते हुए उच्चारित किया करते थे। बच्चे उन्हीं स्वरों के आधार पर अपने लिए अर्थहीन तुकबंदियां गढ़ लिया करते थे और बड़े भी उन्हीं के आधार पर अर्थहीन शिशुगीत उन्हें रचकर दे दिया करते थे। मलयालम में विशेष रुप से बच्चों के लिए लिखने का काम उन प्रार्थना गीतों से प्रारंभ हुआ, जो वहाँ के महान साहित्यकार केरल वर्मा ने सबसे पहले पाठ्यपुस्तकों के लिए लिखे थे। उन्होंने ताड़, फूल, कुत्ता, बिल्ली आदि बच्चों के सुपरिचित विषयों पर भावपूर्ण सरल गीत भी लिखे हैं। उन्हीं से प्रेरित होकर आशान, उल्लूर और वल्लतोल आदि महाकवियों ने भी बच्चों के लिए छोटी-छोटी कविताएं लिखीं। आशान की 'मणिमाला', 'पुष्प बाड़ी', उल्लूर की 'दीपावली', और वल्लतोल की 'साहित्यमंजरी' की कविताएं भावों की सुकुमारता और भाषा की सरलता के कारण बच्चों की भावनाओं के सर्वथा अनुकूल हैं। उल्लूर की 'बालांकुर', 'तुम्यपूवं', 'तम्मिलटी', 'रग्डप्पम', 'अम्मयुम मकनुमा', 'मूंपाट मोड', 'माव', 'ओरू कुट्टियुम ओरू प्रावमं तथा कुमारन आशान की 'वसन्त काल', 'जुगनू', 'छोटी चिड़िया', 'प्रभात बच्चा' और 'माता' आदि रचनाएं मलयालम में उच्चकोटि का बालसाहित्य मानी जाती हैं। बल्लातोल की 'किलिक्कोंचल' कविता भी बहुत प्रसिद्ध है। इन तीन

लिख चुके थे। उन्हीं की परम्परा में वर्तमान काल के सुप्रसिद्ध महान कवि जी. शंकर कुरूप ने बच्चों के लिए भी गीत लिखे हैं। जी. शंकर कुरूप के 'ओलप्पीपि' और 'इलंचुष्टकलु' नामक बालगीत संग्रहों की रचनाएं बच्चों के मन को झंकृत करती हैं और बहुत लोकप्रिय हुई हैं। वैलोप्पिल्लिल श्रीधर मेनन का 'कुन्नि मणिकल' बीस सरल-सुबोध बालगीतों का सुंदर संकलन है। उनकी 'चंडाली प्राव' कविता बच्चों ने बहुत पसंद की है। पाला नारायणन नायर ने बच्चों में देश और मानव प्रेम जगाने की भावना से प्रेरित होकर बहुत से बालगीत लिखे हैं। उनकी सरल-गीतात्मक शैली में लिखी कविताओं के संकलन 'अभिनय गानंगल', 'शिशु गानंगल', 'अंशु' और 'मालि' बहुत प्रसिद्ध हुए है। एम.पी. अप्पन की 'किलिक्कोंचल' में बच्चों की कल्पना शक्ति को जगाने वाली तीस मनोहर कविताएं है। के.जी. सेतुनाथ का 'मृष विल्लु', 'कलकच्चिंका', 'तलिरूकल', 'तालप्पोलि', 'नल्ललोक' छोटी-छोटी बालकविताओं के संकलन हैं जो बच्चों में काफी लोकप्रिय हुए हैं। उनकी पुस्तकें केन्द्रीय सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हो चुकी हैं। तरुण पीढ़ी के कवियों में कारूर, गोपाल कृणन कौलषि, टी.वी. जोण, एंवर परमेशरन ऊक्किंकत अच्युतन नपूतरि, सी.जे. मण्णुम्पटुं वेल्लायणि अर्जुनन ने भी अपने बाल और शिशुगीतों के कारण अच्छी ख्याति अर्जित की है। मलयालम के नये कवियों में कुंजि रामन नायर वेण्णिकुलम गोपाल कुरूप, चङ्पुषा कृष्ण पिल्लै, बालकृष्णन, ओ.राज.वी. कुरूप, पाला के राममात्यु आदि हैं। कुंजुणि के नर्सरी गीत तो बच्चों को मिठाइयों की तरह मीठे लगते हैं। इनके अतिरिक्त बालगीतकारों में पी.ए. शंकर नारायण सिप्पि, पल्लिपुरम, ईश्वरन नंबूतिरि, कापिल गोपीनाथ, शूरनाट रवि तथा वी.के. विश्वम्भरन के नाम भी उल्लेखनीय हैं।

असमिया बालगीत -- असमिया भाषा में बालगीत साहित्य बंगला, गुजराती, हिन्दी आदि भाषाओं की भांति समृद्ध नहीं है। उसके लेखकों का ध्यान बालसाहित्य की अन्य विधाओं की ओर अपेक्षाकृत अधिक रहा। 1888 से प्रारम्भ होने वाले जोनाकी युग में बच्चों के लिए लेखन शुरु हुआ। बच्चों के लिए सरल भाषा में कविताएं लिखी जाने लगीं। बलदेव महन्त, रत्नेश्वर महन्त, दुर्गाप्रसाद, मौजिन्दर बरूआ, मौहम्मद सुलेमान खां, धनाई पोरा कुछ ऐसे लेखक थे, जिनकी किसी न किसी कविता की कोई न कोई पंक्ति उस काल के शिक्षित व्यक्तियों के मुख से अवश्य ही सुनाई पड़ती थी। इसके बाद ही विस्यचन्द्र विस्वासी ने पौराणिक और ऐतिहासिक कथाओं की घटनाओं को ही नहीं, इंगलैंड के इतिहास तक की कुछ घटनाओं को सरल भाषा में पद्यबद्ध किया। आनन्दचन्द्र आगखाला (1874-1940) ने अनेक अंग्रेजी और संस्कृत

कविताओं के अनुवाद सरल भाषा में इतने रोचक ढंग से पद्य में प्रस्तुत किये कि बहुत पसंद किये गये। उनका लांगफेलो की एक कविता का अनुवाद 'जीवन संगीत' तो बहुत लोकप्रिय हुआ। कीर्तिनाथ बोरदलै तथा मुक्तिनाथ बोरदलै के 'लुइन कोंचर', 'वसन्तिर अभिषेक' तथा 'मेघावली' गीतनाट्य अभिनय की दृष्टि से अधिक सफल न होते हुए भी बाल पाठकों ने पसंद किये। बालोपयोगी गीति नाट्य लिखने वालों में लक्ष हीरादास तथा आनन्दी रामदास के नाम भी उल्लेखनीय हैं। आधुनिक असमिया लेखकों में निर्मल प्रभा वरदलै तथा नवकांत बरुआ बालमनोविज्ञान को ध्यान में रखकर बालगीत लिखने वालों में प्रमुख हैं। नवकांत बरुआ की बच्चों के लिए लिखी अर्थहीन तुकबंदियां (नानसेंस राइम्स) तो बच्चों में खूब लोकप्रिय हुई हैं।

उड़िया बालगीत -- उड़िया में बालगीत सृजन की परम्परा अन्य भारतीय भाषाओं की अपेक्षा प्राचीन है। वहाँ बच्चों को कोयलिया और चौंतीसा रच रचकर देते रहने की जो परम्परा थी, उसी के अंतर्गत अठारहवीं शताब्दी में भक्त चरनदास नामक एक कवि ने 'मनबोध चौतीसा' नामक एक पुस्तक लिखी थी। उसके गीत उड़ीसा के सुदूरवर्ती के बच्चों में आज भी लोकप्रिय हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में मधुसूदनराय और फकीरमोहन सेनापति ने जहाँ बच्चों के लिए पाठ्य पुस्तकें लिखने का काम किया था, वहाँ उनका ध्यान बच्चों के लिए अलग से भी कविताएं लिखने की ओर गया था। मधुसूदनराय की प्रभात, संध्या, सुंदर संसार, प्रार्थना, ग्रीष्म आदि बालकविताएं वर्षों तक बहुत प्रसिद्ध रहीं। इसी प्रकार फकीरमोहनसेनापति की 'अवसर बाखरे' नामक पुस्तक की वेंगाभाई, कोइली नानी, दाहानी आलुआ, साखी बिराडी, बानी चड़ाई, सहद गाछ, काला काकुरा आदि भाव-भाषा की दृष्टि से बालगीत साहित्य की अमूल्य निधि रही हैं। बीसवीं शताब्दी में उड़िया में नंदकिशोर बल ने बच्चों के लिए शिशु गीतों की रचना की। वह बाल स्वभाव से भलीभांति परिचित और बच्चों के एक अद्वितीय कवि माने जाते है। उनकी 'नींद चाची', 'बहन बिल्ली', 'काला कौआ' आदि कविताएं खूब लोकप्रिय हुई। उनकी 'नानी बायागीत' नामक पुस्तक उड़िया बालगीत साहित्य की एक अद्वितीय निधि है। उन्होंने इसका स्वयं अंग्रेजी में अनुवाद 'उड़िया लोरियो के गीत' शीर्षक से किया। 'निर्झरिणी' तथा 'पल्लीगीत' भी उनकी पद्य पुस्तकें है। पं. गोदावरीश तथा पं. नीलकंठदास भी चर्चित बालकवि है। इनके अतिरिक्त मृत्युंजय रथ की 'रसावली' चन्द्रशेखर नन्द की 'नुआ सिसुगीत' तथा हरेकृष्णदास की 'सिसुरंजनगीतिका', मणिचरण महापात्र की 'शिशु खेलगीत' तथा गोपाल प्रहराज की 'धोरे बाया घी' आदि पुस्तकें स्वतंत्रतापूर्व किये गये बालगीतों की प्रसिद्ध पुस्तकें

स्वतंत्रता के बाद तो उड़िया में बालसाहित्य की सभी विधाओं में प्रगति के साथ साथ बालगीत साहित्य भी पर्याप्त समृद्ध हुआ। पं. उपेन्द्रनाथ त्रिपाठी की 'घटिया घुड़ि' को सन् 1954-55 में तथा 'जिलाक पशु पक्षी पुराण' को सन् 1963-64 में केन्द्रीय सरकार ने पुरस्कृत किया। यह दोनों पद्य कथा की पुस्तकें है। इसके अतिरिक्त उनकी 'निशा राक्षसी' और 'चित्रा' भी उड़ीसा सरकार द्वारा पुरस्कृत हो चुकी हैं। पुण्य प्रभादेवी के 'शिशुसैनिक' नामक बालगीत संग्रह में शिशु मन की स्वाभाविक जिज्ञासा चित्रित है। इनकी 'मास्टर लोलु' कविता तो बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुई। विद्युत प्रभादेवी की 'आहा कुंजिये' में शिशु मन को छूने वाले शिशु गीत है और सन् 1955-56 में यह पुस्तक केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय द्वारा पुरस्कृत हो चुकी है। इनके अतिरिक्त रामप्रसाद मोहन्ती की 'मन पवन', गोदावरी महापात्र की 'छविर कविता', 'मोखेल साथी', निकुंज कानूनगो की 'इन्द्रधनु', अक्षय कुमार घोष की 'बाइश मजा', कवि चन्द्रकालिचरण पट्टनायक की 'पिलांक कर्मगीत', उपेन्द्रकुमार दास की 'भारतीय संगीत', ढवरुधर पटिडा की 'प्रदीप', वामनचरण मिश्र की 'शिशु संगीत', मुक्तिकांतराय की 'बणपूल', विश्वनाथ पाइक राय की 'राष्ट्रीय जीवन संगीत', बांछा निधिदास की 'आम कोणार्क', 'आम बड़ देउल' आदि कविता पुस्तकों का भी बालजगत में अच्छा स्वागत हुआ है। बालगीत साहित्य के विकास में उदयनाथ सारंगी, जगन्नाथ मोहन्ती, लक्ष्मीकान्त महापात्र, वीर किशोरदास, कुंजबिहारी त्रिपाठी, खिरीशचन्द्र पोयल आदि कवियों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

मराठी बालगीत -- बालगीतों की दृष्टि से मराठी किसी भी दूसरी भारतीय भाषा से कम समृद्ध नहीं है। बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक से पूर्व मराठी में बड़े बड़े कवियों की कविताओं के ही कुछ अंश बच्चों के मनोरंजन के लिए उपलब्ध थे। ढिलक, दत्त, बालकवि, ताँबे आदि ने ही कुछ ऐसी भावपूर्ण कविताएं लिखी थीं, जो बच्चों का भी मनोरंजन करती थी। सन् 1932 में बा.गो. मायादेव का बालगीत संग्रह 'अभिनयगीत' प्रकाशित हुआ। उसमें बच्चों की मनोभावनाओं के अनुसार उनकी क्रीड़ा प्रवृत्ति को तृप्त करने वाली ऐसी स्वर ताल बद्ध रचनाएं थीं कि बच्चों ने उन्हें बहुत पसंद किया। उसकी कविताओं की शैली इतनी लोकप्रिय हुई कि वह आगामी कवियों के लिए अनुकरणीय बन गई। उसके बाद वा. गो. मायादेव की कविताओं के अन्य संकलन छपे, जिनके नाम है - शिशुगीत (1936), बाल विहार (1939), किल बिल (1944), क्रीड़ा गीत (1952) और छन्दगीत (1952)। इन पुस्तकों के बालगीत भी बच्चों के परिचित विषयों पर लिखे गये थे। इनके अतिरिक्त इसी काल

में भ. श्री पंडित का माला वाटवे पौलिस व्यावे (1940), वि.म. कुलकर्णी का 'झालो' तथा 'सिंचाई गाड़ी' (1955), लीला भागवत का 'नकलाकार' (1959), राजमंगल वेढेकर का 'कोण होराण' (1960) आदि बालगीत संग्रह भी प्रकाश में आये। ना. गो. शुक्ल, आशा गवाणकर, ग. ह. पाटिल, तारा वैशम्पायन, संजीवनी मराठे, सुमति पाय गावकर, सरला देवघर वृ. मु. कुजलंकर, शान्ता शोलके, निर्मला देशपाण्डे, कृ.व. निकुंज और सहानन्द रेगे आदि भी इस काल के प्रमुख गीतकार रहे हैं। इनमें से कृ.व. निकुंज का 'साय सारवर' (1954), सदानन्द रेगे का 'चांदौवा' (1959) और निर्मला देशपाण्डे के 'माताजी गाय' और 'आला विदुषक आला' बालगीत संग्रह बहुत लोकप्रिय हुए। निर्मला देशपाण्डे की पुस्तक 'माताजी गाय' प्रकाशन और सजावट की दृष्टि से भी एक अद्वितीय पुस्तक है। उनकी 'आला विदुषक आला' (1959) पुस्तक पर बम्बई राज्य सरकार से पुरस्कार भी मिल चुका है। विंदा करंदीकर इस काल में बच्चों के अत्यंत लोकप्रिय कवि रहे। उनके बालगीत संग्रह 'राणी ची बाग' और 'परीग परी' प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त सरिता पादकी का 'नाच पोटी नाच' घृचा गोडबोले का 'चिडवा चिडवी', शिरीप पै का 'आई.ची.गाणी' और मंगेश पाडगांवकर का 'बबलूगम' गीतसंग्रह भी बच्चों में लोकप्रिय हुए हैं। ग.दी. भाडगूलकर के कवितासंग्रह 'धे टाली दे टाली' पर महाराष्ट्र सरकार द्वारा पुरस्कार मिल चुका है। 'आनंद' मासिक पत्र का 'फूलो का बगीचा' नामक बालकविता का स्तम्भ भी बच्चों द्वारा बहुत पसंद किया गया। मराठी बालसाहित्य में माधुरी पारस नीस ने 6 वर्ष की आयु में अपनी बालकविताओं की पुस्तक प्रकाशित कराई। माधुरी राजे ने 6 से 11 वर्ष की आयु तक प्रतिवर्ष 'साधना' मासिक पत्रिका द्वारा आयोजित बालकविता प्रतियोगिता में भाग लेकर प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया। ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता कुसुमाग्रज ने भी बालगीत लिखे हैं। वृंदा लिमये, वृंदा करंदीकर, बी.सी. मर्ढेकर, अनिलय, गोपीनाथ इस क्षेत्र में अन्य चर्चित नाम हैं।

गुजराती बालगीत -- गुजराती में 18वीं शताब्दी के कवि दलपतिराव को बच्चों का पहला कवि माना जाता है। उन्होंने स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों के लिए कुछ कविताएं लिखी थीं। किंतु वह उनके बड़प्पन के प्रभाव से बचकर नहीं रह सकीं। फिर भी उनमें कुछ कविताएं जैसे 'बापनी पिपर', 'मार्दव नो भीजे' आदि कालातीत सिद्ध हुई। इलपतराम के समकालीन कवि नर्मद की 'कविर बद', 'गुजरात नाशूर वीरों' आदि कुछ कविताएं भी उसी श्रेणी की हैं। पर अन्य भारतीय भाषाओं की तरह गुजराती बालगीत साहित्य के लेखन का इतिहास भी बीसवीं शताब्दी में ही प्रारम्भ होता है।

सन् 1915 में हिम्मतलाल गणेश अंजरिया ने 'मधु बिन्दु' नाम से एक संकलन प्रकाशित किया, जिसमें नावल राम की 'इतिहास नि आरसी', नरसिंह राव की 'अज शिशु', वी.के. ठाकुर की 'असर नीर ना नूर', कलापी की 'सरसी' तथा 'ग्राम माता', खबरदार की 'मेघने', 'बादलवीर', 'हल्दीघाटी' तथा ललितकांत आदि कवियों की बालोपयोगी कवितायें संग्रहीत थीं। सन् 1971 में जुगत राम दवे ने गुजरात विद्यापीठ की ओर से 'चरणी बोर' और 'रावण' नामक दो काव्य संग्रह प्रकाशित किये जिनमें मीरा बाई, श्याम भट्ट, नबल राम, खबरदार आदि की सरल सुबोध कवितायें चुनकर संकलित की गई थी। 'रावण' के प्रकाशन से पूर्व कल्याण जी बिट्ठल भाई की एक पुस्तक 'बाल प्रार्थना' भी प्रकाशित हो चुकी थी जिसकी कवितायें बच्चों को रटा-रटा कर याद कराई जाती थीं। चन्दूलाल दवे तथा गोविन्द राम की 'बाल भजन संग्रह' भी एक वैसी ही पुस्तक उस समय बच्चों के लिए उपलब्ध थी। गुजराती के सुप्रसिद्ध कवि नानालाल ने भी अपनी बालोपयोगी कविताओं के दो संकलन प्रकाशित कराये थे, उनमें से 'सच नौ स्थियायी' प्रसिद्ध हुआ। उनका कहना था बालक पृथ्वी पर भगवान का दूत होता है। किन्तु गिजू भाई ने गुजराती में सबसे पहले बच्चे के स्वतंत्र व्यक्तित्व और उसके अपना विकास करने के अधिकार को मान्यता दिलाई। उन्होंने घरेलू विषयों और फूल-पत्तों, पशु पक्षियों पर रचे सौ से अधिक लोक गीतों का संकलन करके उन्हें 'बाल लोक गीत संग्रह' नाम से दो भागों में प्रकाशित कराया। त्रिभुवन गौरी शंकर व्यास ने अपनी 'नव गीतों' पुस्तक में बच्चों के सुपरिचित विषयों पर ऐसी सरल और बाल मनोभावों के अनुरूप छोटी-छोटी कवितायें लिखीं हैं जो पढ़ते ही बच्चों को याद हो जाती थी। उसके 'संध्या', 'वापर', 'वर्षा', 'सागर' 'गिरना', 'जंगल' बालगीत आज भी बच्चों का मनोरंजन करते हैं। उनके 'ट्रेननुं' तथा 'गोरों' काव्य भी बच्चों में खूब लोक प्रिय हूये। गिजू भाई के बालगीत लेखन को परम्परागत बंधनों से मुक्ति दिलाने के आन्दोलन से प्रभावित कवियों में त्रिभुवन नाथ गौरीशंकर व्यास के अतिरिक्त करसन दास मानिक, सुन्दरम्, झे झवेर मेघारणी, चन्द्र वदन मेहता, उमाशंकर जोशी, देशल जी परमार, रमण लाल सोनी आदि अनेक कवि हुए। सुन्दरम् ने बच्चों के मन में जिज्ञासा' उत्पन्न करने वाले बहुत से बालगीतों की रचना की। उनकी 'रंग-रंग वादालय' नामक पुस्तक बहुत प्रसिद्ध हुई। उमाशंकर जोशी ने 'सबर नो गोथियों', 'इनाम नो व्हेचनार' आदि पुस्तकें लिखी हैं। चन्द्रवदन मेहता जिन्हें चन्दामामा कहा जाता है उनकी 'चन्दरना', 'दादा', 'इलकाव्यो', 'रूगे', 'खाड़ी', 'करिव किदि' आदि बच्चों के लिए लिखी कई पुस्तकें हैं। झबेरचन्द्र मेघाणी ने 'किल्लोल' और

ने विशेष रूप से बच्चियों के लिए एक पुस्तक 'गौरी ना गीतों' लिखी हैं। वह और चन्द्रवदन मेहता गुजरात में ईलो काव्य (नर्सरी राइम्स) के प्रमुख कवि माने जाते हैं। रमणलाल सोनी के बालगीतों की 'काशी नो पंडित', 'गलगलियाँ' तथा 'पगलन' बच्चों ने बहुत पसन्द की हैं। धीरूब्हेन पटेल की 'मित्रा ना जोडाकाना' शिशु गीतों की एक अच्छी पुस्तक है। बालमुकुन्द दवे और सुरेश दलाल ने भी बच्चों के लिये बहुत सी प्रेरणादायक और मनोरंजक कवितायें लिखी हैं। वर्तमान काल में प्रमुख बालगीतकार कवियों में राजेन्द्र शाह, प्रहलाद पारिख, मकरन्द दवे, श्रीधराणी, बसन्त नायक, सोमा भाई भावसर, रामनिक आगरवाला, पिनाकिन त्रिवेदी, मुलजी भाई भक्त, पंजालाल, नटवरलाल मालवी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। स्नेह रश्मि, रमणलाल सोनी, चंद्रवदन मेहता, चंद्रकांत सेठ, सुरेश हलाल, एनी बहन सरैया भी इस विधा के चर्चित नाम हैं। गुजराती बालगीत साहित्य का उल्लेख करते हुए जुगतराम दवे के सम्पादन में गुजरात नई तालीम संघ द्वारा प्रकाशित 'पंखीडा' पुस्तक को विस्मृत नहीं किया जा सकता जिसमें बच्चों के लिए छोटे-छोटे 57 गीत संकलित हैं।

सिंधी बालगीत -- सन् 1853 से पहले सिंधी भाषा के लिए कोई निश्चित लिपि न थी। देवनागरी, गुरुमुखी तथा अरबी फारसी आदि लिपियों का ही सिंधी भाषी लोग प्रयोग करते थे। सन् 1853 में सिंधी भाषा में साहित्य सृजन शुरू हुआ और तभी बालसाहित्य भी प्रकाश में आया। मुंशी उधादास थांवरदास ने 'खेन्हूं' (बालक) के लिए गीत लिखे। कौड़ोमल चंदनमल ने बच्चों के लिए सिंधी में हास्य गीत लिखे। उनके एक सुप्रसिद्ध बालगीत में 'फुल्लू' नामक पात्र को लेकर मजेदार कल्पनाएं हैं। भेरुमल महिरचंद आडवाणी का एक लोकप्रिय बालगीत इस प्रकार है -

मूंखे कंहिं थे खीर पियारियो
प्यार मंफां थे गोद विहारियो
खुश थी हर-हर मुंडे चिहारियो
मुंहिंजी अमड़ि, मुंहिंजी अमड़ि।

अर्थात् मुझे किसने दूध पिलाया था? मुझे किसने प्यार से गोद में बिठाया था? मुझे किसने प्यार से बार-बार निहारा था? वह मेरी माता ही थी, वह मेरी माता ही थी।

सहिजराम टहिलराम राघाणी के प्रसिद्ध बालगीत हैं - 'राजा कंहिं थे अंबु छित्यो' तथा 'वाह ड़े तारा, गोल तारा।' किशिनचंद बेवल सिंधी के ऐसे पहले बालकवि थे, जिन्होंने जीवन, बाल संसार और बालकल्पनाओं को चित्रित किया। चूंकि उनके

गीत बच्चों के चतुर्दिक परिव्याप्त परिवेश से उठाये गये थे, इसलिए बच्चों को बड़े अपने-से लगते है। चांद, तारे, आकाश, बादल, पशु-पक्षी, के साथ-साथ रेलगाड़ी, रेत का घरौंदा और कागज की नाव पर भी उन्होंने सुंदर बालगीत लिखे है। तारोंभरी रात पर उनका वह सुंदर शिशुगीत देखिए -

अखि बूटे अखि खोले तारा,
डियन था हिक बिए डांहु इशारा,
कनि प्या भुणि-भुणि में का बात,
टिमक-टिमक तारेली रात।

अर्थात् तारों भरी रात में ये तारे आंखें बंद करके व आखें खोलकर परस्पर संकेतों में बात करते हैं। बेवस जी ने बच्चों के लिए उपदेशपरक कविताएं भी लिखीं, जो प्रायः पाठ्य पुस्तकों में संकलित रहीं। निश्चित रूप से बेवस जी ने बालगीतों को जो दिशा दृष्टि और नव्यताबोध दिया, वह आगे चलकर और विस्तीर्ण हुआ। गोवर्धन भारती के 'लातियूँ' (कलवर) में बच्चों की पूरी दुनिया ही समाहित है। इसमें बच्चों के मनपसंद खेल खिलौने हैं, तो पशु-पक्षी, प्रकृति की भी मनोरम झांकी है। तितली पर लिखी उनकी बालकविता की ही पंक्तियां देखिए, जिसमें बच्चा आकाश में उड़ने के लिए तितली से पंखों की याचना करता है -

मूंखे पर डे ओ पोपटड़ी!
अर्श उडां मां परिड़ा पाए।

'लातियूँ' के बाद बच्चों का एक अन्य लोकप्रिय गीत संकलन 'बाग बहार' नाम से आया, जिसके रचनाकार परसराम जिया थे। इसमें शिशुओं के लिए सरल भाषा में सुंदर गीत हैं। एक गीत में बच्चा कुत्ते से भौंकना बंद करने के लिए कहता है क्योंकि कुत्ते ने भौंक-भौंक कर पूरा चौक सिर पर उठा रखा है-

भौंक न कुत्ता भौंक
खणु न मथे ते चौंक।

इसी प्रकार हरि दिलनीर के एक बालगीत में तोते से बात करता हुआ बालक कहता है कि सुबह उठने पर मैं खिड़की पर बैठा हुआ एक तोता देखता हूँ। मैं उसे मीठे मीठे फल देता हूँ। इसके बाद जब उड़ने के लिए कहता हूँ तो तोताराम उड़ जाता है -

जडहिं चवांसि त मथे उडाम

दयाज आशा के एक गीत में कौए से बात करता हुआ बालक उसे मीठी रोटी खाने के लिए बुलाता है -

आव कांव तू आउ
तूं मिठी लोलो खाउ।

रोचो ख्वाबी के एक बालगीत में बंदरिया से नाचने का आग्रह है -

बजे थी ढोलक डम डम डम
नचु री बंदरिया छम छम छम।

सिंधी बालगीतों में अधिकांशतः प्रकृति, खेल, पशु-पक्षी जगत, राष्ट्रीयता, पर्व-त्यौहार आदि विषय ग्रहीत है, पर अब विज्ञान भी चित्रित होने लगा है, यथा खीमन मूलाणी के इस बालगीत में कम्प्यूटर को जादूगर कहा गया है -

कम्प्यूटर रे कम्प्यूटर
आहे सच पच जादूगर।

हरि दिलगीर ने बच्चों के लिए कविता में पहेलियां लिखी हैं। कुछ अन्य सिंधी बालगीतकार तथा उनकी रचनाएं इस प्रकार हैं, जिन्हें डा. हूंदराज बलवाणी ने बड़े श्रम से अपनी पुस्तक 'सिंधी बाल साहित्य' में प्रस्तुत किया है - हरि दिलगीर के 'मजेदार गीत' (1983), तथा 'गीत गुलाबी' (1987), दयाल आशा के 'महिंकदड़ मुखिड़िचूँ' (1974) तथा 'बारो! अचो त गायूँ' (1990), भगवान निर्दोष के 'रंगबिरंगी फूकिणां' (1981) तथा 'रिमझिम रिमझिम' (1990), कमल प्यासी के 'टिमिकंदड़ तारा' (1965), 'पंखड़ियूं गुलाब जूं' (1984) तथा 'दीप ललित' (1996), हिंदी भाषा के अन्य बालगीतकारों में मनोहर बेदी, रूपकुमार घायल, घनश्याम सागर, बसंतकुमार त्यागी, सुभाष शर्मा, सतरामदास सायल, सोभो रामचंदानी उल्लेखनीय हैं। हूंदराज बलवाणी के कुछ संग्रह हैं - 'बांसुरी' (1967), 'हीरा मोती' (1967), और खटमिठड़ा (1977) आदि। सूचना प्रोद्योगिकी और संचार क्रांति के वर्तमान युग में कोशी लालवाणी का 'गुलिड़न जा गीत' बच्चों के गीतों का एक श्रृव्य कैसेट है, जिसका बाल जगत में सोत्साह स्वागत हुआ है। निश्चय ही सिंधी बालकविता पर्याप्त समृद्ध है।

पंजाबी बालगीत -- पंजाबी बालगीतों की शुरुआत हमें खेलगीतों से दिखाई देती है। 'किकली' और 'थल' जैसे खेलगीत आज भी प्रसिद्ध हैं। 'किकली' में दो लड़कियाँ एक दूसरे के दोनों हाथों को उलटा पकड़कर लट्टू की तरह घूमती हुई गाती हैं-

किकली कबीर दी
पग मेरे वीर दी

दुपट्टा मेरे भाई दा
सूरा जो लड़ाई दा।

अंतिम पंक्ति की जगह कभी-कभी 'फिट्टे मुंह जवाई दा' भी मिलता है। 20 वीं सदी के प्रारंभ में एक अज्ञात लेखक की पुस्तक 'बालां दी सुगात' (1911) में कविता कहानी का समन्वय है। पंजाबी बाल कविता के उल्लेखनीय हस्ताक्षर हैं- अजायब चित्रकार, दर्शन सिंह आवारा, मनमोहन सिंह दाऊं, मानसिंह हकीर, इंद्रजीत हसनपुरी, महेंद्र मानूपुरी, चवराही घुगिआणवी, सुखदेव सिंह ग्रेवाल, आत्मा सिंह चिट्टी, पैदल ध्यानपुरी, कमलजीत नीलों आदि। इधर पंजाबी में नर्सरी राइम्स का प्रचलन भी बढ़ा है। मानसिंह हकीर का एक नर्सरी गीत देखें -

शहरों पढ़ के आया रैट
पैरीं बूट ते सिर ते हैट
रौब जमांदा फड़के बैट
निकली फूक जो देखी कैट।

पंजाबी बालकाव्य के सशक्त हस्ताक्षरों में धनवंत सिंह सीतल की गणना होती है। उन्होंने बच्चों के लिए छोटी-छोटी हास्य कविताओं से लेकर गुरु साहबान के जीवन प्रसंगों को लिखा। उनकी बालकविताओं की पुस्तकों में 'सीतल खिडोनई', 'प्यारे बच्चियां कौन हैं', 'बूझो' तथा 'प्यारे बच्चियां कौन बनेगा' प्रमुख हैं। अजायब चित्रकार ने छः से ग्यारह वर्ष तक के बच्चों के लिए सरल कविताओं की कई पुस्तकें लिखी हैं। उनकी 'झांसी की रानी' पुस्तक बच्चों में देशभक्ति के भाव भरने वाली है और 'मनुक्खबीती' में मनुष्य की उत्पत्ति से लेकर विकास तक की गाथा है। इसके अतिरिक्त सोहन सिंह, भगवंत और सज्जन ग्रेवाल भी बच्चों के श्रेष्ठ गीतकार रहे हैं। निश्चय ही पंजाबी बालकाव्य विकास के पथ पर अग्रसर है।

राजस्थानी बालगीत -- हिन्दी और राजस्थानी के कवि कन्हैयालाल सेठिया ने अनेक बालकविताएं व गीत लिखे हैं, जिनमें 'टमरकटूं टमरकटूं', 'अरी घास री रोटी ही जद बनबिलावड़ो ले भाग्यो' आदि रचनाएं बालकों को कंठस्थ तक हैं। डॉ. मनोहर शर्मा के कविता संग्रह 'म्हारो गांव' में बच्चों को देश की माटी से जोड़ने वाले भावभरे गीत हैं। मोहन मण्डेला के बालकाव्य संग्रह 'बाड्या रा फूल' में भी धरती की सोंधी महक समाहित है। नाथूराम संस्कर्ता की काव्यकृति 'बालकों हेत सीख' में बच्चों

अत्यन्त प्रभावशाली हैं। उनका 'उजियालैरा गीत' बच्चों को साहस के साथ विषम परिस्थितियों का सामना करना सिखाता है। नवनीत पांडे के 'लुकमीचणी' तथा 'लाडेसर' सुंदर बालकाव्य हैं। सत्यदेव सवितेन्द्र, डॉ. भैरुंलाल गर्ग, भानसिंह शेखावत, राजेश कुमार व्यास, ओम पुरोहित 'कागद', डॉ. सुमन बिस्सा का बालकाव्य भी उल्लेखनीय है। बालकविता के क्षेत्र मे 'डांखलो' और 'डूक' के नाम से भी नवीन प्रयोग हुए है।

कश्मीरी बालगीत -- कश्मीरी भाषा में मौखिक रूप से उपलब्ध साहित्य की कोई कमी नहीं है। पर स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले और बाद भी चलते रहने वाले लिपि विवाद के कारण लिखित रूप में बालगीत साहित्य का अधिक विकास न हो सका। बहुत समय तक कश्मीरी भाषा शारदा लिपि में लिखी जाती रही, उसके बाद रोमन लिपि में लिखी गई। सन् 57 तक फारसी लिपि में और उसके बाद सरकार ने उसके लिए एक कमेटी नियुक्त करके एक नई लिपि निश्चित की है। लिपि संबंधी इस अस्थिरता के कारण कश्मीरी भाषा में लिखित रूप में बाल साहित्य का उतना विकास नहीं हो सका, जितना होना चाहिए था। इसीलिए कश्मीरी में बालगीत साहित्य की बहुत कम पुस्तकें मिलती हैं। सन् 1949 में रेडियो श्रीनगर अपने साहित्यिक और सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अंतर्गत बालगीतों का प्रसारण कर इस दिशा में सराहनीय कार्य करता रहा। शम्भूनाथ भट्ट, जो हलीम कश्मीरी के नाम से प्रसिद्ध हैं, बच्चों के प्रमुख कवि रहे। उन्होंने बहुत सी बालोपयोगी कविताएं लिखीं। उनकी 'बालयार' पुस्तक पर केंद्रीय सरकार द्वारा पुरस्कार भी मिल चुका है। कश्मीर में बच्चों के दूसरे कवि फाजिल कश्मीरी हैं। उन्होंने विशेष रूप से बच्चों के लिए लिखने में काफी ख्याति अर्जित की है। 'शमाइवतन' नाम से उनकी कविताओं का एक संकलन प्रकाशित हुआ है। उसकी कई कविताएं समूह गान के रूप में गाई जा सकती हैं। इनके अतिरिक्त नाजी और वोजुल गुलाआब भी बच्चों के प्रतिष्ठित कवि हैं।

डोगरी बालगीत -- जम्मू-कश्मीर ललितकला, संस्कृति एवं साहित्य अकादमी द्वारा 'शीराजा' द्वैमासिक पत्रिका का 1979 में प्रकाशित बालगीत विशेषांक ओमस्वामी के संपादन में छपा और इसमें लेखों व कहानियों के साथ-साथ पंद्रह बाल कविताएं भी प्रकाशित हुई। डोगरी बाल साहित्य लगभग अर्धशती की यात्रा तय कर चुका है, तथापि अभी भी बालवय में है। दीनूभाई पंत का डोगरी बालकविता में अप्रतिम

'गुत्तलूं'। ये अनुपलब्ध पुस्तकें 'त्रिसंगम' नाम से सन् 1985 में पुनः प्रकाशित हुईं। 'गुत्तलूं' का अर्थ है, गुदगुदी करके हंसाना। आज भी बच्चों की इनमें बड़ी रुचि है। निर्मल विनोद की 'आपूं राजा' (1990 में प्रकाशित) में बच्चों के लिए बहुत सी कविताएं हैं। यह कविता संकलन मुख्यतः शिशु आयु वर्ग के बच्चों को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है। कविताओं के वर्ण्यविषय को प्रभावशाली बनाने के लिए उनके साथ चित्र भी दिये गये हैं। ज्यादातर शिशुगीत चार, छः या आठ पंक्तियों के हैं, जिन्हें शैशवावस्था के बच्चे सहज ही कंठस्थ कर सकते है। गीतों के विषय चूरी, मोर, मूंगफली, मिट्ठू तोता, तितली आदि बच्चों के बेहद जाने-पहचाने हैं।

मास्टर ध्यान सिंह का कविता संग्रह 'पढ़दे गुढ़दे रौहना' भी शिशुओं के लिए है। इसका वैशिष्ट्य यह है कि ये कविताएं गांव के बच्चों को ध्यान में रखकर लिखी गई हैं। आम तौर पर शहरी बच्चों के लिए ही कतिवा लिखने में कविगण रुचि लेते हैं। पर इस पुस्तक में ग्रामीण परिवेश ग्रहीत है। शब्दावली भी शहर के बच्चों को भले ही पूरी तरह समझ न आये, पर ग्रामीण इलाकों के बच्चों के लिए सहज रूप से बोधगम्य है।

संतोष खजूरिया की 'भोले भाव' एक अन्य महत्वपूर्ण काव्यकृति है, जो बच्चों के लिए 56 कविताएं लेकर सामने आई है। इसकी रचना 1991-92 में हुई है। इस संग्रह की कविताएं शिशुमन, बालमन और किशोरमन, यानी बालक के विकास-क्रम की सभी अवस्थाओं के अनुरूप हैं। डोगरी कवि शिवराम दीप के बालकविता संकलन 'इक बारी दी गल्ल' में पशु-पक्षियों पर आधृत बाल मनोरंजन की एक पूरी दुनिया ही कविता में सिरज दी गई है। श्यामदत्त पराग ने बच्चों के लिए अनेक विधाओं में लिखा है। उनके प्रमुख बालगीत संकलन हैं - 'पराग बालगीत' तथा 'रिमझिम बालगीत'। उनकी 'पराग दिया पौंगरा' में संग्रहीत बाल कविताओं के साथ उनका अंग्रेजी अनुवाद भी दिया गया है। इस तरह स्पष्ट है कि डोगरी बालगीत भी अपनी मद्धिम गति के साथ आगे बढ़ रहा है।

बोडो बालगीत -- बोडो भाषा में भी बाल साहित्य बहुत ही सीमित मात्रा में लिखा गया है। बालगीतों की चर्चा की जाये, तो वे हमें पालने के गीत, खेल गीत आदि के रूप में ही मिलते हैं। बोडो भाषा में चांद को दुदु कहा जाता है और निम्न गीत में एक दीदी के रूप में उसकी कल्पना की गई है -

से दुदु फै फै

नौं फैयाबोला यालिर बाइचे हर
यालिर बाइचे हराबौला
यालिर खाइनै हर
ऐ दुदु फै फै।

अर्थात् ओ चांद दीदी आओ। यदि तुम नहीं आती हो, तो एक केला ही दे दो। तोता, बगुला, मछली आदि को लेकर भी बोडो भाषा में लोरियां मिलती हैं।

कोंकणी बालगीत -- देवनागरी, रोमी, कन्नड़ और मलयालम, चार अलग-अलग लिपियों में कोंकणी साहित्य रचा जा रहा है। बालसाहित्य को कोंकणी में 'मुएयांचे साहित्य' कहते हैं। नागरीलिपि में ही यह सबसे ज्यादा पनपा है। डॉ. मनोहरराय सरदेसाय ने बच्चों के लिए मधुर गीतों की सर्जना की। उनकी 'भांगराची कुराड' (सोने की कुल्हाड़ी) एक पद्यकथा है। 'मांणकुला गीता' (नन्हे नन्हे गीत), 'गोड गोड गीता' (मीठे-मीठे गीत, तीन भाग), 'कुकुली कवनां' (छोटे-छोटे गीत) उनकी लोकप्रिय पुस्तकें हैं। तॉमास स्टीवंस कोंकणी केन्द्र ने 'हांसून खेलून शिकूया' (हंसते-हंसते खेलना) पुस्तक रूप में व ऑडियो कैसेट रूप कोंकणी बालगीतों का संकलन किया है।

मणिपुरी बालगीत -- उत्तर पूर्व की भाषाओं में मणिपुरी का स्थान काफी महत्वपूर्ण है। उपलब्ध ऐतिहासिक सामग्री के अनुसार मणिपुरी भाषा में बालसाहित्य लेखन की शुरुआत सन् 1959 में प्रकाशित 'इबेनूपोक्की वारि' से हुई, जिसके रचनाकार वांखेमयुम तोमचौ थे। इसमें मणिपुर की लोककथाएं संग्रहीत थी। मणिपुर बालकाव्य की शुरुआत काफी देर से हुई। सन् 1999 में प्रकाशित 'सनाकैथेलगी लाइफटिबी बाइ तानू देवी' के रचनाकार लाइश्रम समरेन्द्र थे। इसमें गुड़िया बनाने में दक्ष एक मणिपुरी महिला तोनू देवी के मुंह से चार खण्डों में कथक्कड़ शैली में गुड़िया निर्माण के विविध पक्ष चित्रित हैं। मणिपुरी शैली की गुड़िया का मुख्य चित्र होने के कारण समरेन्द्र का यह बालकाव्य एक उल्लेखनीय कृति बन गया है। वस्तुतः मणिपुरी बालकविता को अपने उन्नयन की अभी भी प्रतीक्षा है।

उर्दू बालगीत -- उर्दू में बालगीत साहित्य का इतिहास बहुत पुराना है। उसका प्रारम्भ नजीर अकबरावादी (1716-1830) से माना जाता है। उन्होंने रोटी, आदमी जैसे सुपरिचित विषयों पर अत्यंत सरल भाषा में कुछ ऐसी कविताएं लिखी थीं, जो बच्चों

छः सरल कविताओं का एक संकलन 'तिल के लड्डू' नाम से छपा था। उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम चरण में मौलाना मुहम्मद हुसैन आजाद और ख्वाजा अलताफ हुसैन हाली ने उर्दू कवियों का ध्यान बच्चों के लिए भी लिखने की ओर दिलाया। मौलाना आजाद की 'हुब्बे वतन', 'अबरे करम', 'सुबहे उम्मीद' और हाली की 'बरखारुत', 'उम्मीद' और 'हुब्बे वतन' कविताएं बच्चों ने पंसद की। लेकिन सही अर्थो में बच्चों के लिए कविता लिखने का प्रारम्भ गैलाना इस्माइल मेरठी (1844-1917) से माना जाना चाहिए।

उन्होंने कई रीडरें लिखी, जिनमें उनकी बालकविताएँ हैं। उनमें 'थोड़ा-थोड़ा', 'रेलगाड़ी', 'पनचक्की', आदि अनेक बालकविताएं बालभावनाओं के सर्वथा अनुरुप और उर्दू बालगीतसाहित्य की अमूल्य निधि हैं। 'गाय' पर भी उन्होंने एक कविता लिखी है। इस विषय पर इतनी सुंदर कविता हिन्दी या किसी अन्य भारतीय भाषा के बालगीत साहित्य में नहीं मिलती। सर मुहम्मद इकबाल की 'हिन्दोस्तां हमारा', 'जुगनू', 'हिमालय' और 'नया हिमाला' कविताएं भी बालगीत साहित्य के अंतर्गत हैं। हफीज जालन्धरी की 'कबड्डी' कविता बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुई। तिलोकचंद महरुम (1877-1966) ने बहुत सी अंग्रेजी कविताओं का अनुवाद उर्दू में बच्चों के लिए किया। उनका बालगीत संकलन 'बहार तिफली' नाम से प्रकाशित हुआ। शफीउद्दीन हैदर ने तो अपना सारा जीवन ही बालसाहित्य के लिए समर्पित कर दिया। उनकी बालोपयोगी कविताओं के एक संकलन 'गांव सुधार गीत' की भूमिका राष्ट्रपति डॉ. जाकिर हुसैन ने लिखी थी। हामिदुल्ला अफसर मेरठी ने भी बच्चों के लिए कई लोकप्रिय कविताएं लिखीं। उनकी 'चांद' कविता तो बहुत प्रसिद्ध हुई। नजूमी सद्दीकी लखनवी (1891-1945) भी बच्चों के अच्छे कवि थे। उनकी बालोपयोगी कविताओं का संकलन 'बालक बाग' नाम से छपा। सैयद महजूम आलम माहरहरबी ने 'आगोशे मादर' नाम से अपनी लोरियों की पुस्तक छपवाई। कैसर कृत अंग्रेजी कविताओं के अनुवाद की एक बालोपयोगी पुस्तक 'बयाने गुल' नाम से भोपाल से छपी।

उर्दू में बालसाहित्यकारों का इतना आधिक्य होते हुए भी बालगीत साहित्य का वैसा विकास नहीं हुआ, जैसा हिन्दी, मराठी, बंगला, गुजराती आदि भाषाओं में हुआ है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उर्दू के मुख्य क्षेत्र उत्तरप्रदेश और बिहार में उसका पहले जैसा बोलबाला न रहा।

हिन्दी बालगीत -- हिन्दी में लिखित बालगीत साहित्य में अमीर खुसरो (1283-1328) को पहला कवि माना जा सकता है। उनकी लिखी बहुत सी पहेलियां और मुकरियां

बच्चों में इतनी अधिक लोकप्रिय हुई कि आज भी बच्चों की जुबान पर चढ़ी हैं। सूरदास (1483-1563) संसार में वात्सल्य रस के सिरमौर कवि कहे जाते हैं। ब्रजभाषा में लिखित उनके बहुत से पदों में बालस्वभाव और बाल लीलाओं का मनोरम चित्रण है। उनके बाद घाघ, लाल, गिरधर, रहीम आदि और भी अनेक कवि हुए, जिनकी बहुत सी रचनाओं को बालगीत साहित्य के अंतर्गत लिया जा सकता है। आधुनिक काल में भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने विशेष रूप से बच्चों के लिए लिखा तो कुछ नहीं पर उनके नाटकों के बीच में आने वाली कई कविताओं से बच्चों का पर्याप्त मनोरंजन हुआ। भारतेन्दु के बाद बच्चों के लिए विशेष रूप से लिखने वाले कवियों में श्रीधर पाठक (1860-1928) अग्रगण्य थे। उन्होंने तोता, मैना, मोर, बिल्ली, कुत्ता आदि सरल और बच्चों के सुपरिचित विषयों पर छोटी-छोटी कविताएँ लिखीं। उनकी पुस्तक 'मनोविनोद' (प्रकाशन काल 1917) के 'बालविकास' खंड में उनकी बालोपयोगी कविताएं संकलित हैं। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक तीन दशकों में पाठक जी के अतिरिक्त पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय, मैथिलीशरण गुप्त, कामताप्रसाद गुरु, सुखराम चौबे गुणाकर, डा. विद्याभूषण विभु, मन्नन द्विवेदी गजपुरी, रामजीलाल शर्मा, रामनरेश त्रिपाठी, मनोरंजन प्रसाद सिन्हा, श्रीनाथ सिंह, स्वर्ण सहोदर, शम्भूदयाल सक्सेना, गिरजादत्त शुक्ल 'गिरीश', देवीप्रसाद गुप्त 'कुसुमाकर' आदि अनेक कवि हुए, जिन्होंने बच्चों को अपनी लेखनी का प्रसाद दिया। इनमें से कामताप्रसाद गुरु, विद्याभूषण विभु, रामनरेश त्रिपाठी, स्वर्णसहोदर आदि तो बच्चों के लिए समर्पित साहित्यकार रहे। अयोध्यासिंह उपाध्याय के 'चंद्र खिलौना', 'खेल तमाशा', 'फूल पत्ते', 'बाल विभव', रामनरेश त्रिपाठी के 'वानर संगीत', 'मोहनमाला', श्रीनाथ सिंह के 'पिपहरी', 'खेलघर', विद्याभूषण विभु के 'पंख शंख', 'ता', 'बबुआ', 'गोबर गनेश', स्वर्णसहोदर के 'चगन मगन', 'गिनती के गीत', 'नटखट हम' आदि बालगीत संकलन हैं। स्वर्णसहोदर को उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान ने पांच हजार रुपये का पुरस्कार देकर सम्मानित भी किया था। उसके बाद स्वतंत्रतापूर्व तक के बालगीतकारों में पं. सोहनलाल द्विवेदी सबसे प्रमुख हैं। एक राष्ट्रीय कवि के रूप में प्रतिष्ठित होते हुए भी उन्होंने बच्चों के लिए बहुत सी प्रेरक, शिक्षाप्रद और मनोरंजक कविताएं लिखीं। उनके प्रमुख बालकाव्य संकलन 'बालभारती', 'शिशुभारती', 'दूध बताशा', 'बिगुल', 'बच्चों के बापू' आदि हैं। उन्हें उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने पुरस्कृत व सम्मानित भी किया। इस काल के अन्य अग्रगण्य कवियों में रामसिंहासन सहाय 'मधुर' की 'बच्चों के गीत', सुभद्राकुमारी चौहान की 'सभा का खेल', देवेन्द्रदत्त तिवारी की 'फुलझड़ी', 'नया फूल', रमापति शुक्ल की 'अंगूरों का गुच्छा', 'हुआ सवेरा', आरसीप्रसाद सिंह की 'चंदा मामा', 'जादू की वंशी', रामेश्वरदयाल दुबे की 'मां, यह

कौन', गौरीशंकर लहरी की 'तितली के पंख', बलभद्र प्रसाद गुप्त रसिक की 'मणिमाला', देवीदयाल चतुर्वेदी मस्त की 'मीठी तानें', महत्वपूर्ण पुस्तकें हैं। इनके अतिरिक्त अब्दुल रहमान सागरी, सत्य प्रकाश कुलश्रेष्ठ, रामकृष्ण शर्मा खद्दरजी आदि के बालगीत भी बहुत लोकप्रिय रहे।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद तो हिन्दी में बहुत से कवि बालगीत साहित्य के भंडार को भरने में लग गये। उनमें शकुन्तला सिरोठिया की 'गा ले मुन्ना', 'सोन चिरैया', द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी की 'बालगीतायन', कमला चौधरी की 'लोरियां', ब्रजकिशोर नारायण की 'हंसी खुशी', 'ताकधिनाधिन', शान्ति अग्रवाल की 'बालवीणा', अशोक एम.ए. की 'तितली', कृष्णकांत तैलंग की 'मौज-मजे' चंद्रपालसिंह यादव 'मयंक' की 'राजा बेटा', 'हिम्मत वाले', 'साहसी सेठानी', 'परियों का नाच', 'देश हमारा', 'दूध मलाई' सहित लगभग 34 पुस्तकें, प्रेमनारायण गौड़ की 'चम चम चंदा', राधेश्याम सक्सेना 'रसिकेश', की 'ठठोली' चिरंजीत की 'नटखट के गीत', 'बच्चो गाओ गीत', रामवचन सिंह आनंद की 'फूल और कलियाँ', 'दीपक और तारा', विष्णुकांत पाण्डेय की 'मीठे-मीठे प्यारे गीत', 'सब गीतों से न्यारे गीत', श्रीप्रसाद की 'फूलों के गीत', 'झिलमिल तारे', राष्ट्रबंधु की 'बालभूषण', 'कंतक थैयां घुनूं मनैयां', विनोद चंद्र पाण्डेय की 'गिलहरी', 'बच्चों के गीत', धर्मपाल शास्त्री की 'मेरी गुड़िया कुछ तो बोल' तथा 'खेलें-कूदें नाचे गायें' महत्वपूर्ण पुस्तकें हैं। सेवकजी की भी लगभग तीस बाल गीतों व पद्य कथाओं की पुस्तकें प्रकाशित हुईं। द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी और उन्हें उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने पुरस्कृत व सम्मानित भी किया।

सन् 1970 के बाद बालस्वरूप राही, शेरजंग गर्ग, सूर्यकुमार पाण्डेय, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, सूर्यभानु गुप्त, उमाकांत मालवीय, नवीन रश्मि, शिक्षार्थी, विष्णु कुमार त्रिपाठी, नारायण लाल परमार, प्रयाग शुक्ल, बालकृष्ण गर्ग, बच्चन, जय प्रकाश भारती, भवानीप्रसाद मिश्र आदि ने भी बहुत से श्रेष्ठ बालगीतों की सर्जना की। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का 'बतूता का जूता', शेरजंग गर्ग का 'सुमन बालगीत', जयप्रकाश भारती का 'झुनझुना', सूर्यकुमार पाण्डेय का 'गीत तुम्हारे', बालस्वरूप राही का 'हम जब बड़े होंगे', बच्चन का 'जन्मदिन की भेंट' बच्चों ने बहुत पसंद किये हैं।

अद्यतन युग में बालगीत विधा ने अपनी विकास-यात्रा में नये चरण तय किये हैं। पारम्परिक बालकविता के साथ नव्यताबोध के प्रति आकर्षण इस काल की विशेषता है। हिन्दी बालकविता ने चिंतन के नये धरातल छुए हैं और संवेदना से भी गहन रूप से जुड़ी है। पुराने विषयों को भी समकालीन संदर्भ में नये रंग में प्रस्तुत किया गया है। बालकवियों की समकालीन सृजनरत पीढ़ी के कुछ महत्वपूर्ण

नाम हैं – जगदीशचंद्र शर्मा, दिविक रमेश, हरीश निगम, देवेन्द्र कुमार, शेरजंग गर्ग, भगवतीप्रसाद द्विवेदी, शंभुनाथ तिवारी, उषा यादव, सुरेन्द्र विक्रम, रमेशचंद्र पंत, अश्वघोष, रमेश तैलंग, प्रकाश मनु, राजनारायण चौधरी, कृष्ण शलभ, अनंतप्रसाद रामभरोसे, परशुराम शुक्ल, शकुन्तला कालरा, शिवचरण चौहान, रामनिवास मानव, अजय जनमेजय, नागेश पाण्डेय 'संजय', मौ. फहीम, मौ. अरशद खान, मौ. साजिद खान, श्याम सुशील, ओमप्रकाश कश्यप, जाकिरअली रजनीश, कृष्ण कुमार यादव, कामना सिंह, अंशु शुक्ल, आकांक्षा यादव आदि। सूचना प्रौद्योगिकी और तकनीकी विकास के वर्तमान युग में इंटरनेट के माध्यम से भी बालगीत विधा में नये आयाम जुड़े हैं। बालगीतों का न सिर्फ पुस्तकाकार प्रकाशन हुआ है, बल्कि सी.डी., कैसेट आदि श्रव्य माध्यम से भी उनके विकास को गति मिली है। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान से बालसाहित्य का सर्वोच्च सम्मान 'बाल साहित्य भारती' प्राप्त करने वाले बाल साहित्यकारों की श्रृंखला के नाम हैं – डॉ. श्रीप्रसाद, श्रीमती सरोजिनी कुलश्रेष्ठ, श्रीमती शकुन्तला सिरोठिया, चन्द्रपालसिंह यादव 'मयंक', डॉ. राष्ट्रबंधु, उषा यादव, रोहिताश्व अस्थाना, हरिकृष्ण देवसरे, जयप्रकाश भारती, कृष्ण शलभ आदि। बालकाव्य के और अधिक उज्ज्वल भविष्य के प्रति हम आशान्वित हैं।